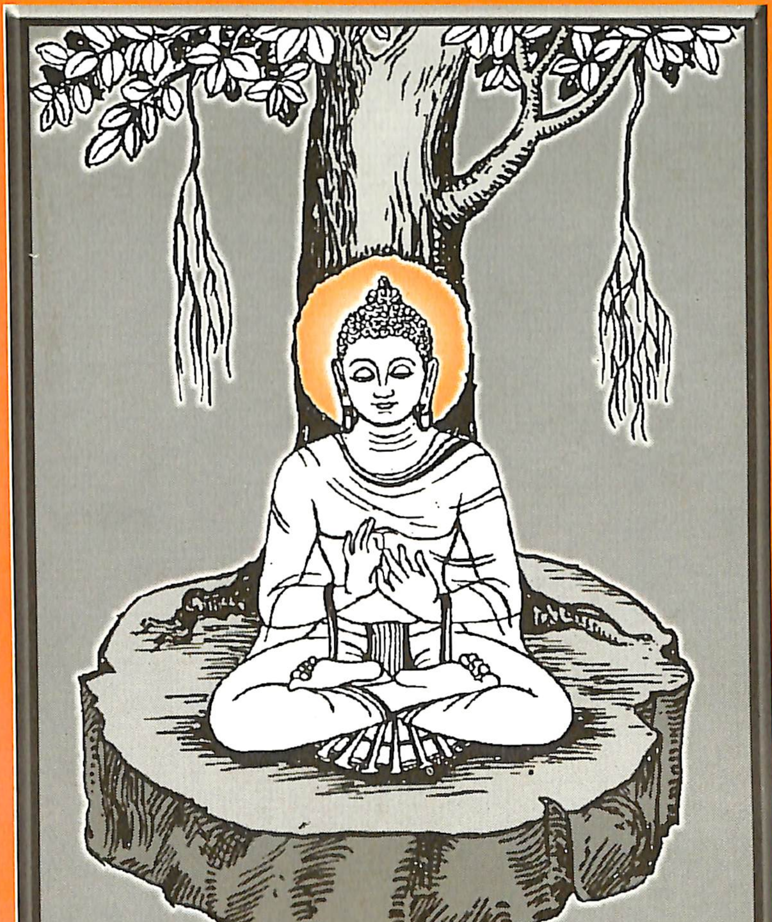
बौद्धभारतीग्रन्थमाला-48

सुत्तपिटके

अङ्गुत्तरनिकायपालि

[हिन्दी-अनुवादसहिता]

(नवक-दसक-एकादसकनिपाता)



प्रधान सम्पादक

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

बौद्धभारतीग्रन्थमाला—४८
Bauddha Bharati Series—48

सुत्तपिटक

अङ्गुत्तरनिकायपालि

[हिन्दी अनुवाद सहित]

(नवक-दसक-एकादसकनिपात)

(चतुर्थ भाग)

बौद्धभारती

प्रधानसम्पादक

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

बौद्धभारतीग्रन्थमाला-४८

Bauddha Bharati Series-48

सुत्तपिटके

अङ्गुत्तरनिकायपालि

[हिन्दी-अनुवादसहिता]

(नवक-दसक-एकादसकनिपाता)

4

प्रधानसम्पादक

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

Bauddha Bharati Series-48

The

AṄGUTTARANIKĀYAPĀLI

(Navaka-Dasaka-Ekādasaka Nipāta)

with

HINDI TRANSLATION

Vol. - 4

Edited & Translated By

Swāmī Dwārikādās Śāstrī

BAUDDHA BHARATI

Varanasi

B. 2545] 2002 [V. 2058

बौद्धभारतीग्रन्थमाला-४८

सुत्तपिटक

अङ्गुत्तरनिकायपालि

[हिन्दी अनुवादसहित]

(नवक-दशक-एकादशक निपात)

चतुर्थ भाग

सम्पादक एवं अनुवादक

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

बौद्धभारती

वाराणसी

बु० २५४५] सन् २००२ ई० [वि० २०५८

प्रकाशक :
बौद्धभारती
पोस्ट बाक्स नं. : १०४९,
वाराणसी–२२१ ००१. (भारत)

Publisher by :
Bauddha Bharati
Post Box No. : 1049,
Varanasi-221 001 (India)

E-mali : bauddhabhrti@satyam.net.in

सहसम्पादक :
धर्मकीर्तिशास्त्री
चन्द्रकीर्तिशास्त्री

प्रथम संस्करण : २००२ ई.

First Edition : 2002 E.

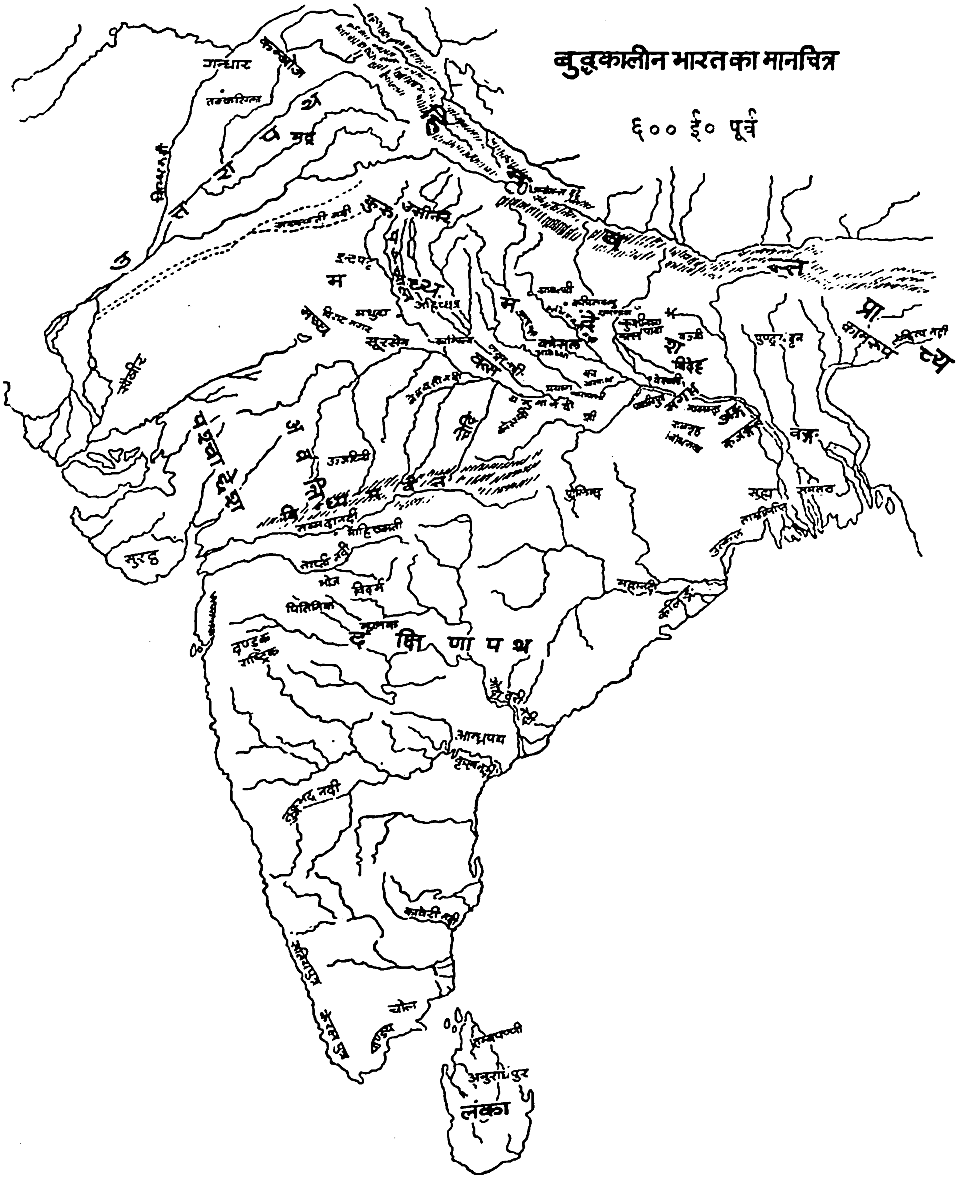
Price Rs. 2250/- (In 4 Vol's set)

मुद्रक :
साधना प्रेस
वाराणसी–२२१ ००२

Printed By :
Sadhana Press
Varanasi- 221 002



"एसोहं, भन्ते, भगवन्तं सरणं गच्छामि, धम्मं च, भिक्खुसङ्घं च।
उपासकं मं, भन्ते, भगवा धारेतु, अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणङ्गतं" ति॥


बुद्धकालीन भारत का मानचित्र
६०० ई० पूर्व
गन्धार
कम्बोज
मद्र
इन्द्रप्रस्थ
मथुरा
सूरसेन
सोवीर
उज्जैनी
माहिष्मती
सुरट्ठ
भोज
विदर्भ
कोसल
विदेह
वज्जी
राजगृह
महानदी
कावेरी नदी
चोल
अनुराधपुर
लंका

प्रकाशकीय वक्तव्य

"अनुजानामि, भिक्खवे, सकाय निरुत्तिया परियापुणितुं" ति

—विनयपिटके, भगवा बुद्धो।

सन् १९५८-१९६१ ई० में पालित्रिपिटकप्रकाशनसमिति, नालन्दा द्वारा सम्पूर्ण त्रिपिटक प्रकाशन में कार्य करते समय से ही हमारा यह सङ्कल्प था कि समस्त त्रिपिटक (बुद्धवचन) का हिन्दी-रूपान्तर (अनुवाद) के साथ भी प्रकाशन होना चाहिये, जिससे वह अन्य भाषाओं के विद्वानों के लिये भी उपयोगी हो सके।

एतदर्थ, हमने विगत पन्द्रह वर्षों में अत्यधिक प्रयास किया; भारत के अनेक साधनसम्पन्न प्रकाशकों तथा धनपतियों एवं बुद्धिजीवियों से इस कार्य के लिये आर्थिक साधन संगृहीत कराने हेतु निवेदन किथा; परन्तु किसी ने भी, इस कार्यहेतु, हमारा उत्साहवर्धन नहीं किया।

अन्त में, हमने विवश होकर, अपने अल्प साधनों के बल पर ही इस कार्य को आगे बढ़ाने का निश्चय किया। तदनुसार, सर्वप्रथम सुत्तपिटक का **मज्झिमनिकाय** (सम्पूर्ण) हिन्दी अनुवाद के साथ पाँच भागों में प्रकाशित किया, जो कि पाँच वर्ष में पूर्ण हुआ।

तदनन्तर, हमने सुत्तपिटक का **दीघनिकाय** (सम्पूर्ण) (हिन्दी अनुवाद के साथ) तीन भागों में प्रकाशित किया।

इसी क्रम में हमने समस्त **संयुत्तनिकायपालि** का हिन्दी अनुवाद के साथ चार भागों में दो वर्ष के कठिन परिश्रम एवं प्रयास के बाद, (चार भागों में सम्पूर्ण) आप के सम्मुख प्रस्तुत किया। यह ग्रन्थ २२५० पृष्ठों में पूर्ण हो पाया, अत: ग्रन्थ का कलेवर कुछ विशाल हो गया। परन्तु हमें इस बात की प्रसन्नता है कि यह ग्रन्थ पालि एवं हिन्दी-दोनों भाषाओं में एक साथ सुलभ हो गया है।

अब, इसी क्रम में सुत्तपिटक का यह चतुर्थ विशालकाय **अङ्गुत्तरनिकायपालि** ग्रन्थ (चार भागों में) प्रस्तुत किया जा रहा है। इस के, इस **चतुर्थ भाग** में केवल **नवक, दशक** एवं **एकादशक निपात** दिये जा रहे हैं। पूर्व ग्रन्थों के समान ही इसमें भी हमने पालि-पाठ के लिये बर्मा में हुए छट्ठ सङ्गायन पर आधृत, और श्रीलंका, स्याम (थाईलैण्ड) तथा पालि टैक्स्ट सोसाइटी, लन्दन के संस्करणों का सहयोग लेकर १९६० में 'पालि त्रिपिटक प्रकाशन बोर्ड' नालन्दा से प्रकाशित एवं आदरणीय भिक्षु जगदीश काश्यप द्वारा सम्पादित देवनागरी-संस्करण को आदर्श रूप में रखा है। इसमें हमने कहीं कहीं मुद्रणाशुद्धियों के संशोधन के अतिरिक्त अधिक कुछ नहीं किया है।

साथ ही हमने उक्त बर्मा, नालन्दा एवं रोमन संस्करणों की पृष्ठ-संख्या भी रोमन अक्षरों में क्रमशः यथास्थान दे दी है। अनुसन्धाता इससे भी लाभान्वित होंगे।

इसमें हमने, आचार्य बुद्धघोष की अट्ठकथा को प्रमाण मान कर, अपना स्वतन्त्र **हिन्दी अनुवाद** सम्पन्न करते हुए, उसे पालि-पाठ के साथ नीचे दिया है।

यहाँ हमें एक निवेदन अवश्य करना है कि विषय-वैशद्य (बात को समझाने) के लिये त्रिपिटक में विषय का अनुकूल-प्रतिकूल, या आरोह-अवरोह दोनों क्रमों से विस्तृत (अक्षरशः) वर्णन किया जाता है। इस शैली में भाषाच्छटा तो अवश्य आ जाती है, परन्तु इस शब्द-समूह में फँस कर पाठक से मूल विषय दूर दूर सा होने लगता है। इसके लिये पालि-संग्रहकारों ने ऐसे विशेष स्थानों (जहाँ पाठ पुनः पुनः आवृत्त हो) के लिये '...पे०...' की परम्परा रखी है। इसे हमने भी अपने हिन्दी-अनुवाद में स्वीकार किया है। परन्तु '...पे०...' का अनुवाद हमने '...पूर्ववत्...' करके दिया है, या प्रायः '...' इस चिह्न का प्रयोग किया है, जिससे पाठक प्रसङ्ग के प्रधान विषय से दूर न हो जाय।

ग्रन्थ में वर्णित सूत्रों का संक्षेप हिन्दी, अंग्रेजी दोनों भाषाओं में ग्रन्थ के प्रारम्भ में दे दिया है, जिससे पाठकों को सूत्रों का वर्ण्य विषय एक ही दृष्टि में हृदयङ्गम हो जाय।

यों हमने एक अभिनव पद्धति में बुद्ध-वचन (त्रिपिटक) का प्रकाशन प्रारम्भ किया है। यदि विद्वानों को यह पद्धति रुचिकर व अनुकूल प्रतीत हुई तो हम आगामी काल में त्रिपिटक के अवशिष्ट ग्रन्थों का प्रकाशन भी इसी पद्धति से करेंगे।

अन्ते च, इस पवित्र ग्रन्थ का यह अनुवाद हमने स्वकीय ज्ञानवृद्धिहेतु लिखा था, लिखने के बाद यह ध्यान में आया कि यह हमारे समानधर्मा अन्य जिज्ञासुओं का भी प्रयोजन सिद्ध कर सकता है। इसी उद्देश्य से यह प्रकाशित किया जा रहा है।

इतने विस्तृत अनुवाद में, हो सकता है हम से कहीं परम्परा का निर्वाह न हो पाया हो, एतदर्थ हमारा विज्ञ जनों से विनम्र निवेदन है कि इस प्रमाद को क्षमा करते हुए हमें सूचित करने का कष्ट करें; जिससे आगामी संस्करण में उस का परिहार किया जा सके।

वसन्तपञ्चमी, २०५८ वि०
वाराणसी.

विद्वद्वशंवद

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री
अध्यक्ष, बौद्धभारती

अङ्गुत्तरनिकायपालि

नवक-दसक-एकादसकनिपातानं

सुत्तसूची

	पिट्ठङ्का
९. नवकनिपातो	
१. सम्बोधिवग्गो	३
१. सम्बोधिसुत्तं	३
२. निस्सयसुत्तं	६
३. मेघियसुत्तं	७
४. नन्दकसुत्तं	११
५. बलसुत्तं	१५
६. सेवनासुत्तं	१७
७. सुतवासुत्तं	२१
८. सज्झसुत्तं	२२
९. पुग्गलसुत्तं	२४
१०. आहुनेय्यसुत्तं	२४
तस्सुद्दानं	२४
२. सीहनादवग्गो	२५
१. सीहनादसुत्तं	२५
२. सउपादिसेससुत्तं	२९
३. कोट्ठिकसुत्तं	३३
४. समिद्धिसुत्तं	३६
५. गण्डसुत्तं	३८
६. सञ्ञासुत्तं	३८
७. कुलसुत्तं	३९
८. नवङ्गुपोसथसुत्तं	३९
९. देवतासुत्तं	४१
१०. वेलामसुत्तं	४२
तस्सुद्दानं	४६
३. सत्तावासवग्गो	४६
१. तिठानसुत्तं	४६
२. अस्सखळुङ्कसुत्तं	४७
३. तण्हामूलकसुत्तं	४८
४. सत्तावाससुत्तं	५०
५. पञ्ञासुत्तं	५१
६. सिलायूपसुत्तं	५२
७. पठमवेरसुत्तं	५५
८. दुतियवेरसुत्तं	५७
९. आघातवत्थुसुत्तं	५८
१०. आघातपटिविनयसुत्तं	५८
११. अनुपुब्बनिरोधसुत्तं	५९
तस्सुद्दानं	५९
४. महावग्गो	६०
१. अनुपुब्बविहारसुत्तं	६०
२. अनुपुब्बविहारसमापत्तिसुत्तं	६०
३. निब्बानसुखसुत्तं	६५
४. गावीउपमासुत्तं	६८
५. झानसुत्तं	७४
६. आनन्दसुत्तं	७८
७. लोकायतिकसुत्तं	८१
८. देवासुरसङ्गामसुत्तं	८४
९. नागसुत्तं	८७
१०. तपुस्ससुत्तं	९०
तस्सुद्दानं	९९
५. सामञ्ञवग्गो	९९
१. सम्बाधसुत्तं	९९
२. कायसक्खिसुत्तं	१०२

	पिट्ठङ्का
३. पञ्ञाविमुत्तसुत्तं	१०३
४. उभतोभागविमुत्तसुत्तं	१०४
५. सन्दिट्ठिकधम्मसुत्तं	१०४
६. सन्दिट्ठिकनिब्बानसुत्तं	१०४
७. निब्बानसुत्तं	१०५
८. परिनिब्बानसुत्तं	१०५
९. तदङ्गनिब्बानसुत्तं	१०५
१०. दिट्ठधम्मनिब्बानसुत्तं	१०५
तस्सुद्दानं	१०६
६. खेमवग्गो	१०६
१. खेमसुत्तं	१०६
२. खेमप्पत्तसुत्तं	१०७
३. अमतसुत्तं	१०७
४. अमतप्पत्तसुत्तं	१०७
५. अभयसुत्तं	१०७
६. अभयप्पत्तसुत्तं	१०७
७. पस्सद्धिसुत्तं	१०७
८. अनुपुब्बपस्सद्धिसुत्तं	१०७
९. निरोधसुत्तं	१०७
१०. अनुपुब्बनिरोधसुत्तं	१०७
११. अभब्बसुत्तं	१०८
तस्सुद्दानं	१०८
७. सतिपट्ठानवग्गो	१०९
१. सिक्खादुब्बल्यसुत्तं	१०९
२. नीवरणसुत्तं	१०९
३. कामगुणसुत्तं	११०
४. उपादानक्खन्धसुत्तं	११०
५. ओरम्भागियसुत्तं	११०
६. गतिसुत्तं	१११
७. मच्छरियसुत्तं	१११
८. उद्धम्भागियसुत्तं	१११
९. चेतोखीलसुत्तं	११२
१०. चेतसोविनिबन्धसुत्तं	११२
तस्सुद्दानं	११४
८. सम्मप्पधानवग्गो	११४
१. सिक्खादुब्बल्यसुत्तं	११४
१०. चेतसोविनिबन्धसुत्तं	११५
९. इद्धिपादवग्गो	११६
१. सिक्खादुब्बल्यसुत्तं	११६
१०. चेतसोविनिबन्धसुत्तं	११६
तस्सुद्दानं	११७
१०. रागपेय्यालं	११७
१०. दसकनिपातो	**११९**
१. आनिसंसवग्गो	११९
१. किमत्थियसुत्तं	११९
२. चेतनाकरणीयसुत्तं	१२१
३. पठमउपनिससुत्तं	१२२
४. दुतियउपनिससुत्तं	१२४
५. ततियउपनिससुत्तं	१२४
६. समाधिसुत्तं	१२५
७. सारिपुत्तसुत्तं	१२६
८. झानसुत्तं	१२८
९. सन्तविमोक्खसुत्तं	१२९
१०. विज्जासुत्तं	१३०
तस्सुद्दानं	१३१
२. नाथवग्गो	१३२
१. सेनासनसुत्तं	१३२
२. पञ्चङ्गसुत्तं	१३३
३. संयोजनसुत्तं	१३४
४. चेतोखीलसुत्तं	१३५
५. अप्पमादसुत्तं	१३८
६. आहुनेय्यसुत्तं	१४०
७. पठमनाथसुत्तं	१४१

	पिट्ठङ्का
८. दुतियनाथसुत्तं	१४३
९. पठमअरियावाससुत्तं	१४६
१०. दुतियअरियावाससुत्तं	१४६
तस्सुद्दानं	१४९
३. महावग्गो	१५०
१. सीहनादसुत्तं	१५०
२. अधिवुत्तिपदसुत्तं	१५३
३. कायसुत्तं	१५५
४. महाचुन्दसुत्तं	१५८
५. कसिणसुत्तं	१६२
६. काळीसुत्तं	१६२
७. पठममहापञ्हासुत्तं	१६४
८. दुतियमहापञ्हासुत्तं	१७०
९. पठमकोसलसुत्तं	१७३
१०. दुतियकोसलसुत्तं	१८०
तस्सुद्दानं	१८४
४. उपालिवग्गो	१८५
१. उपालिसुत्तं	१८५
२. पातिमोक्खट्ठपनासुत्तं	१८५
३. उब्बाहिकासुत्तं	१८६
४. उपसम्पदासुत्तं	१८७
५. निस्सयसुत्तं	१८८
६. सामणेरसुत्तं	१८८
७. सङ्घभेदसुत्तं	१८९
८. सङ्घसामग्गीसुत्तं	१८९
९. पठमआनन्दसुत्तं	१९०
१०. दुतियआनन्दसुत्तं	१९५
तस्सुद्दानं	१९२
५. अक्कोसवग्गो	१९२
१. विवादसुत्तं	१९२
२. पठमविवादमूलसुत्तं	१९३
३. दुतियविवादमूलसुत्तं	१९३
४. कुसिनारसुत्तं	१९४
५. राजन्तेपुरप्पवेसनसुत्तं	१९६
६. सक्कसुत्तं	१९९
७. महालिसुत्तं	२०२
८. पब्बजितअभिण्हसुत्तं	२०३
९. सरीरट्ठधम्मसुत्तं	२०४
१०. भण्डनसुत्तं	२०४
तस्सुद्दानं	२०७
६. सचित्तवग्गो	२०८
१. सचित्तसुत्तं	२०८
२. सारिपुत्तसुत्तं	२१०
३. ठितिसुत्तं	२११
४. समथसुत्तं	२१३
५. परिहानसुत्तं	२१७
६. पठमसञ्ञासुत्तं	२२०
७. दुतियसञ्ञासुत्तं	२२०
८. मूलकसुत्तं	२२१
९. पब्बज्जासुत्तं	२२१
१०. गिरिमानन्दसुत्तं	२२२
तस्सुद्दानं	२२७
७. यमकवग्गो	२२८
१. अविज्जासुत्तं	२२८
२. तण्हासुत्तं	२३१
३. निट्ठङ्गतसुत्तं	२३४
४. अवेच्चप्पसन्नसुत्तं	२३४
५. पठमसुखसुत्तं	२३५
६. दुतियसुखसुत्तं	२३५
७. पठमनळकपानसुत्तं	२३६
८. दुतियनळकपानसुत्तं	२३९
९. पठमकथावत्थुसुत्तं	२३९
१०. दुतियकथावत्थुसुत्तं	२४२
तस्सुद्दानं	२४४

	पिट्ठङ्का
८. आकङ्खवग्गो	२४५
१. आकङ्खसुत्तं	२४५
२. कण्टकसुत्तं	२४७
३. इट्ठधम्मसुत्तं	२४९
४. वड्ढिसुत्तं	२५०
५. मिगसालासुत्तं	२५१
६. तयोधम्मसुत्तं	२५७
७. काकसुत्तं	२६२
८. निगण्ठसुत्तं	२६३
९. आघातवत्थुसुत्तं	२६३
१०. आघातपटिविनयसुत्तं	२६४
तस्सुद्दानं	२६४
९. थेरवग्गो	२६५
१. वाहनसुत्तं	२६५
२. आनन्दसुत्तं	२६६
३. पुण्णियसुत्तं	२६८
४. ब्याकरणसुत्तं	२६९
५. कत्थीसुत्तं	२७२
६. अधिमानसुत्तं	२७५
७. नप्पियसुत्तं	२७८
८. अक्कोसकसुत्तं	२८३
९. कोकालिकसुत्तं	२८४
१०. खीणासवबलसुत्तं	२८८
तस्सुद्दानं	२९०
१०. उपालिवग्गो	२९१
१. कामभोगीसुत्तं	२९१
२. भयसुत्तं	२९७
३. किंदिट्ठिकसुत्तं	३००
४. वज्जियमाहितसुत्तं	३०५
५. उत्तियसुत्तं	३०८
६. कोकनुदसुत्तं	३११
७. आहुनेय्यसुत्तं	३१४
८. थेरसुत्तं	३१६
९. उपालिसुत्तं	३१७
१०. अभब्बसुत्तं	३२६
तस्सुद्दानं	३२६
११. समणसञ्ञावग्गो	३२७
१. समणसञ्ञासुत्तं	३२७
२. बोज्झङ्गसुत्तं	३२७
३. मिच्छत्तसुत्तं	३२८
४. बीजसुत्तं	३२९
५. विज्जासुत्तं	३३०
६. निज्जरसुत्तं	३३१
७. धोवनसुत्तं	३३२
८. तिकिच्छकसुत्तं	३३४
९. वमनसुत्तं	३३६
१०. निद्धमनीयसुत्तं	३३६
११. पठमअसेखसुत्तं	३३७
१२. दुतियअसेखसुत्तं	३३८
तस्सुद्दानं	३३८
१२. पच्चोरोहणिवग्गो	३३८
१. पठमअधम्मसुत्तं	३३८
२. दुतियअधम्मसुत्तं	३३९
३. ततियअधम्मसुत्तं	३४१
४. अजितसुत्तं	३४६
५. सङ्गारवसुत्तं	३४८
६. ओरिमतीरसुत्तं	३४९
७. पठमपच्चोरोहणीसुत्तं	३५०
८. दुतियपच्चोरोहणीसुत्तं	३५३
९. पुब्बङ्गमसुत्तं	३५३
१०. आसवक्खयसुत्तं	३५४
तस्सुद्दानं	३५४
१३. परिसुद्धवग्गो	३५५
१. पठमसुत्तं	३५५

	पिट्ठङ्का
२. दुतियसुत्तं	३५५
३. ततियसुत्तं	३५५
४. चतुत्थसुत्तं	३५५
५. पञ्चमसुत्तं	३५६
६. छट्ठसुत्तं	३५६
७. सत्तमसुत्तं	३५६
८. अट्ठमसुत्तं	३५६
९. नवमसुत्तं	३५७
१०. दसमसुत्तं	३५७
११. एकादसमसुत्तं	३५७
१४. साधुवग्गो	३५८
१. साधुसुत्तं	३५८
२. अरियधम्मसुत्तं	३५८
३. अकुसलसुत्तं	३५८
४. अत्थसुत्तं	३५९
५. धम्मसुत्तं	३५९
६. सासवसुत्तं	३५९
७. सावज्जसुत्तं	३५९
८. तपनीयसुत्तं	३६०
९. आचयगामिसुत्तं	३६०
१०. दुक्खुद्रयसुत्तं	३६०
११. दुक्खविपाकसुत्तं	३६१
१५. अरियवग्गो	३६१
१. अरियमग्गसुत्तं	३६१
२. कण्हमग्गसुत्तं	३६२
३. सद्धम्मसुत्तं	३६२
४. सप्पुरिसधम्मसुत्तं	३६२
५. उप्पादेतब्बसुत्तं	३६२
६. आसेवितब्बसुत्तं	३६३
७. भावेतब्बसुत्तं	३६३
८. बहुलीकातब्बसुत्तं	३६३
९. अनुस्सरितब्बसुत्तं	३६४

	पिट्ठङ्का
१०. सच्छिकातब्बसुत्तं	३६४
१६. पुग्गलवग्गो	३६५
१. सेवितब्बसुत्तं	३६५
२-१२. भजितब्बादिसुत्तानि	३६५
१७. जाणुस्सोणिवग्गो	३६५
१. ब्राह्मणपच्चोरोहणीसुत्तं	३६६
२. अरियपच्चोरोहणीसुत्तं	३६८
३. सङ्गारवसुत्तं	३६९
४. ओरिमसुत्तं	३७०
५. पठमअधम्मसुत्तं	३७१
६. दुतियअधम्मसुत्तं	३७२
७. ततियअधम्मसुत्तं	३७६
८. कम्मनिदानसुत्तं	३७८
९. परिक्कमनसुत्तं	३७९
१०. चुन्दसुत्तं	३७९
११. जाणुस्सोणिसुत्तं	३८७
१८. साधुवग्गो	३९२
१. साधुसुत्तं	३९२
२. अरियधम्मसुत्तं	३९३
३. कुसलसुत्तं	३९३
४. अत्थसुत्तं	३९३
५. धम्मसुत्तं	३९३
६. आसवसुत्तं	३९४
७. वज्जसुत्तं	३९४
८. तपनीयसुत्तं	३९४
९. आचयगामिसुत्तं	३९५
१०. दुक्खुद्रयसुत्तं	३९५
११. विपाकसुत्तं	३९५
१९. अरियमग्गवग्गो	३९६
१. अरियमग्गसुत्तं	३९६
२. कण्हमग्गसुत्तं	३९६
३. सद्धम्मसुत्तं	३९७

	पिट्ठङ्का
४. सप्पुरिसधम्मसुत्तं	३९७
५. उप्पादेतब्बधम्मसुत्तं	३९७
६. आसेवितब्बधम्मसुत्तं	३९८
७. भावेतब्बधम्मसुत्तं	३९८
८. बहुलीकातब्बसुत्तं	३९९
९. अनुस्सरितब्बसुत्तं	३९९
१०. सच्छिकातब्बसुत्तं	३९९
२०. अपरपुग्गलवग्गो	४००
१-१२. नसेवितब्बादिसुत्तानि	४००
२१. करजकायवग्गो	४०१
१. पठमनिरयसग्गसुत्तं	४०१
२. दुतियनिरयसग्गसुत्तं	४०५
३. मातुगामसुत्तं	४०६
४. उपासिकासुत्तं	४०७
५. विसारदसुत्तं	४०७
६. संसप्पनीयसुत्तं	४०७
७. पठमसञ्चेतनिकसुत्तं	४१०
८. दुतियसञ्चेतनिकसुत्तं	४१५
९. करजकायसुत्तं	४१७
१०. अधम्मचरियासुत्तं	४१९
२२. सामञ्ञवग्गो	४२१
१. सतिसम्पजञ्ञसुत्तं	४२१
२३. रागपेय्यालं	४२१
११. एकादसकनिपातो	**४२८**
१. निस्सयवग्गो	४२८
१. किमत्थियसुत्तं	४२८
२. चेतनाकरणीयसुत्तं	४३१
३. पठमउपनिसासुत्तं	४३३
४. दुतियउपनिसासुत्तं	४३४
५. ततियउपनिसासुत्तं	४३५
६. ब्यसनसुत्तं	४३६
७. सञ्ञासुत्तं	४३७
८. मनसिकारसुत्तं	४३९
९. सद्धसुत्तं	४४१
१०. मोरनिवापसुत्तं	४४४
तस्सुद्दानं	४४६
२. अनुस्सतिवग्गो	४४६
१. पठममहानामसुत्तं	४४६
२. दुतियमहानामसुत्तं	४५०
३. नन्दियसुत्तं	४५२
४. सुभूतिसुत्तं	४५५
५. मेत्तासुत्तं	४६०
६. अट्ठकनागरसुत्तं	४६०
७. गोपालसुत्तं	४६५
८. पठमसमाधिसुत्तं	४७२
९. दुतियसमाधिसुत्तं	४७३
१०. ततियसमाधिसुत्तं	४७४
११. चतुत्थसमाधिसुत्तं	४७५
तस्सुद्दानं	४७६
३. सामञ्ञवग्गो	४७७
४. रागपेय्यालं	४७९

सुत्तपिटक

अङ्गुत्तरनिकायपालि

[हिन्दीअनुवादसहित]

(नवक, दसक एकादसनिपात)

✿ नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स ✿

अङ्गुत्तरनिकायपालि

९. नवकनिपातो

१. सम्बोधिवग्गो

पठमो पण्णासको

१. सम्बोधिसुत्तं :१. एवं मे सुतं। [N. Vol.IV. 1, B. Vol. III, 163, R. Vol. IV, 351] एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—

"सचे, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—'सम्बोधिपक्खिकानं आवुसो, धम्मानं का उपनिसा भावनाया' ति, एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं किन्ति ब्याकरेय्याथा" ति?

"भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा ...पे०... भगवतो सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती" ति।

"तेन हि, भिक्खवे, सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति।

"एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

✿ उन भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध को प्रणाम ✿

अङ्गोत्तरनिकायपालि

९. नवक निपात

१. सम्बोधिवर्ग

प्रथम पञ्चाशत्क

१. सम्बोधिसूत्र : : **बोधिपक्षीय धर्मसाधना की नौ स्थितियाँ**

१. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती स्थित अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ कभी भगवान् ने भिक्षुओं से पूछा—

"यदि भिक्षुओ! तुम से कोई अन्य धर्मावलम्बी परिव्राजक यह पूछे—'आयुष्मानो! सम्बोधिपाक्षिक धर्मों की साधना (अभ्यास) का क्या साधन (कारण) है?' तो, भिक्षुओ! उन परिव्राजकों को क्या उत्तर दोगे?"

"भन्ते! धर्मनिर्णय के विषय में तो आप ही हमारे लिये प्रमाणभूत हैं ...पूर्ववत्...। आप जैसा उपदेश करेंगे उसको ही हम भिक्षुजन प्रमाण मानकर धारण करेंगे।"

"तो भिक्षुओ! सुनो। ...उसको अपने मन मैं बैठा लो। बताता हूँ।"

"अच्छा, भन्ते! "कह कर भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। भगवान् ने यह देशना की—

२. "सचे, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—'सम्बोधिपक्खिकानं, आवुसो, धम्मानं का उपनिसा भावनाया' ति, एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं [B.164] अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथ—'इधावुसो, भिक्खु कल्याण- [R.352] मित्तो होति कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को। सम्बोधिपक्खिकानं, आवुसो, धम्मानं अयं पठमा उपनिसा भावनाय।

'पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सीलवा होति, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति [N.4] आचारगोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु। सम्बोधिपक्खिकानं, आवुसो, धम्मानं अयं दुतिया उपनिसा भावनाय।

'पुन च परं, आवुसो, भिक्खु यायं कथा अभिसल्लेखिका चेतोविवरणसप्पाया, सेय्यथीदं—अप्पिच्छकथा सन्तुट्ठिकथा पविवेककथा असंसग्गकथा विरियारम्भकथा सीलकथा समाधिकथा पञ्ञाकथा विमुत्तिकथा विमुत्तिञाणदस्सनकथा, एवरूपिया कथाय निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। सम्बोधिपक्खिकानं, आवुसो, धम्मानं अयं ततिया उपनिसा भावनाय।

'पुन च परं, आवुसो, भिक्खु आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु। सम्बोधिपक्खिकानं, आवुसो, धम्मानं अयं चतुत्थी उपनिसा भावनाय।

'पुन च परं, आवुसो, भिक्खु पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। सम्बोधिपक्खिकानं, आवुसो, धम्मानं अयं पञ्चमी उपनिसा भावनाय'।

---

२. "यदि, भिक्षुओ! तुम से कोई अन्य धर्मावलम्बी ...पूर्ववत्...। उनके द्वारा तुमसे ऐसा पूछे जाने पर तुमको यह उत्तर देना चाहिये—'आयुष्मानो! यहाँ किसी भिक्षु का कल्याणमित्र, कल्याणेच्छुक होना ही सम्बोधिपक्षीय धर्मों की साधना का प्रथम कारण है। (१)

"पुनः, भिक्षुओ! उस भिक्षु को शीलवान् होना चाहिये, प्रातिमोक्षसंवर से संवृत होना चाहिये ...पूर्ववत्...। सम्बोधिपक्षीय धर्मों की साधना का यह द्वितीय कारण है। (२)

"पुनः, आयुष्मानो! वह ऐसी कथाओं के सुनने में उत्सुक हो, जो उसकी इन्द्रियों को संयम की ओर बढाने वाली हो, चित्तनिरोध की ओर ले जाने वाली हो, जैसे—अल्पेच्छकथा, सन्तोषकथा, एकान्तसाधनाकथा, जनता से असंसर्ग (असम्पर्क) वाली कथा, शुभकर्मविषयक उद्योगकथा, शीलकथा, समाधिकथा, प्रज्ञाकथा, विमुक्तिकथा एवं विमुक्तिज्ञानदर्शनकथा—ऐसी कथाओं के श्रवण का अतिशय इच्छुक हो। आयुष्मानो! सम्बोधिपक्षीय धर्मों के अभ्यास के लिये यह तृतीय कारण है। (३)

"पुनः, भिक्षुओ! जो भिक्षु अपने अकुशल धर्मों के नाश के लिये तथा कुशल धर्मों के उत्पाद हेतु प्रयत्न आरम्भ करता है, तदर्थ दृढता से पराक्रम (बल) दिखाता है, इस क्रम में कुछ समय बाद ही उत्साहविहीन नहीं हो जाता। आयुष्मानो! ...पूर्ववत्... यह चतुर्थ कारण है। (४)

३. "कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं कल्याणसहायस्स कल्याणसम्पवङ्कस्स—सीलवा भविस्सति, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरिस्सति आचार-गोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खिस्सति सिक्खापदेसु।

४. "कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं कल्याणसहायस्स कल्याणसम्पवङ्कस्स—यायं कथा अभिसल्लेखिका चेतोविवरणसप्पाया, सेय्यथीदं—अप्पिच्छकथा सन्तुट्ठिकथा पविवेककथा असंसग्गकथा विरियारम्भकथा सील- [B.165] कथा समाधिकथा पञ्ञाकथा विमुत्तिकथा विमुत्तिञाणदस्सनकथा, एवरूपिया कथाय निकामलाभी भविस्सति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी।

५. "कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं कल्याणसहायस्स [R.353] कल्याणसम्पवङ्कस्स—आरद्धविरियो विहरिस्सति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु।

६. "कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं कल्याणसहायस्स [N.5] कल्याणसम्पवङ्कस्स—पञ्ञवा भविस्सति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया।

७. "तेन च पन, भिक्खवे, भिक्खुना इमेसु पञ्चसु धम्मेसु पतिट्ठाय चत्तारो धम्मा उत्तरि भावेतब्बा—असुभा भावेतब्बा रागस्स पहानाय, मेत्ता भावेतब्बा ब्यापादस्स पहानाय, आनापानस्सति भावेतब्बा वितक्कुपच्छेदाय, अनिच्चसञ्ञा भावेतब्बा अस्मिमान-

---

"पुनः, भिक्षुओ! जो भिक्षु प्रज्ञावान् होता है, समस्त धर्मों के उत्पाद विनाश को जानने वाली प्रज्ञा से समन्वित होता है, वही श्रेष्ठ प्रज्ञा धर्मों के अन्तस्तल तक का ज्ञान रखने वाली तथा दुःखक्षय के अन्त (निर्वाण) तक पहुँचाने वाली होती है। आयुष्मानो! ...पूर्ववत्... यह पञ्चम कारण है। (५)

३. "पुनः भिक्षुओ! ऐसे कल्याणमित्र भिक्षु से यही आशा की जाती है कि वह शीलवान् होगा, प्रातिमोक्षसंवर से संवृत होगा, छोटे से छोटे पापकर्म से भय मानने वाला होगा...।

४. "पुनः भिक्षुओ! ऐसे कल्याणमित्र से यह भी आशा की जाती है कि वह ऐसी कथाओं के श्रवणहेतु सतत उत्सुक रहेगा; जैसे—अल्पेच्छकथा, सन्तोषकथा ...पूर्ववत्... विमुक्तिज्ञान-दर्शनकथा ऐसी कथाओं का इच्छुक होगा। ...।

५. "पुनः, भिक्षुओ! ऐसे कल्याणमित्र भिक्षु से यह भी आशा की जाती है कि वह अपने अकुशल धर्मों के प्रहाण के लिये प्रयत्न आरम्भ करेगा ...पूर्ववत्...।

६. "पुनः, भिक्षुओ! ऐसे कल्याणमित्र भिक्षु से यह भी आशा की जाती है कि वह प्रज्ञावान् होगा, समस्त धर्मों के उत्पाद एवं विनाश की ज्ञात्री प्रज्ञा से समन्वित होगा। ...।

७. "और, भिक्षुओ! इस भिक्षु को इन पाँच धर्मों पर प्रतिष्ठित रहते हुए इन चार धर्मों का भी अभ्यास (भावना) करना चाहिये। १. राग के प्रहाण के लिये अशुभ की भावना करनी चाहिये; २. हिंसा के प्रहाण के लिये मैत्रीभावना का अभ्यास करना चाहिये; ३. वितर्कों के नाश के लिये

समुग्घाताय। अनिच्चसञ्ञिनो, भिक्खवे, अनत्तसञ्ञा सण्ठाति। अनत्तसञ्ञी अस्मिमान-समुग्घातं पापुणाति दिट्ठेव धम्मे निब्बानं'' ति॥ ●

२. निस्सयसुत्तं : १. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं ...पे०... एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच— "'निस्सयसम्पन्नो निस्सयसम्पन्नो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, भिक्खु निस्सयसम्पन्नो होती'' ति?

''सद्धं चे, भिक्खु, भिक्खु निस्साय अकुसलं पजहति कुसलं भावेति, पहीनमेवस्स तं अकुसलं होति। हिरिं चे, भिक्खु, भिक्खु निस्साय ...पे०... ओत्तप्पं चे, भिक्खु, भिक्खु निस्साय ...पे०... विरियं चे, भिक्खु, भिक्खु निस्साय ...पे०... पञ्ञं [R.354] चे, भिक्खु, भिक्खु निस्साय अकुसलं पजहति कुसलं भावेति, पहीनमेवस्स तं अकुसलं होति। तं हिस्स भिक्खुनो अकुसलं पहीनं होति सुप्पहीनं, यं अरियाय पञ्ञाय दिस्वा पहीनं।

२. ''तेन च पन, भिक्खु, भिक्खुना इमेसु पञ्चसु धम्मेसु पतिट्ठाय चत्तारो [B.166] उपनिस्साय विहातब्बा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खु, भिक्खु सङ्खायेकं पटिसेवति, सङ्खायेकं अधिवासेति, सङ्खायेकं परिवज्जेति, सङ्खायेकं विनोदेति। एवं खो, भिक्खु, भिक्खु निस्सयसम्पन्नो होती'' ति॥ ●

आनापानस्मृति की भावना करनी चाहिये; ४. अस्मिता एवं अहङ्कार के नाश के लिये अनित्यता की भावना करनी चाहिये। अनित्यसंज्ञा का भावना करने वाले भिक्षु को अनात्मसंज्ञा उपस्थित हो जाती है। तब यह अनात्मसंज्ञाभ्यासी भिक्षु अपने अस्मिता एवं अभिमान का समुद्घात (नाश) कर इसी जन्म में निर्वाण प्राप्त कर लेता है॥'' (६-९) ●

१. निश्रयसूत्र : : नौ निश्रय धर्म

१. तब कोई भिक्षु भगवान् के सम्मुख आया ...पूर्ववत्... तथा उसने भगवान् से यह निवेदन किया—''भन्ते! (धर्मप्रवचन में) किसी भिक्षु को 'निश्रयसम्पन्न, निश्रयसम्पन्न'—ऐसा बार बार कहा जाता है। भन्ते! यह भिक्षु 'निश्रयसम्पन्न' कैसे होता है?''

''भिक्षु! यदि कोई भिक्षु श्रद्धा का सहारा लेकर अकुशल का त्याग करता है तथा कुशल की भावना करता है तो निश्चय ही एक समय आयगा कि उसका अकुशल प्रहीण हो जायगा। (१)

''भिक्षु! यदि कोई भिक्षु लज्जा का सहारा लेकर ...पूर्ववत्...। (२।

''भिक्षु! यदि कोई भिक्षु पापभीरुता का सहारा लेकर ...पूर्ववत्...। (३)

''भिक्षु! यदि कोई भिक्षु वीर्य (प्रयत्न) का सहारा लेकर ...पूर्ववत्...। (४)

''भिक्षु! यदि कोई भिक्षु प्रज्ञा का सहारा लेकर ...पूर्ववत्...। वस्तुतः, भिक्षु! उसी भिक्षु के अकुशल धर्म प्रहीण माने जाते हैं जो प्रज्ञा द्वारा सुविचारित कर प्रहीण किये जाते हैं। (५)

२. ''भिक्षु! पुनः उस भिक्षु द्वारा इन पाँच धर्मों में प्रतिष्ठित होकर, तदनन्तर, इन चार धर्मों को किसी अन्य साधन से प्रहीण करना चाहिये। कौन से चार? यहाँ, भिक्षु! कोई भिक्षु विचार कर एक

३. मेघियसुत्तं : १. एकं समयं भगवा चालिकायं विहरति चालिकापब्बते। [N.6] तेन खो पन समयेन आयस्मा मेघियो भगवतो उपट्ठाको होति। अथ खो आयस्मा मेघियो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठितो खो आयस्मा मेघियो भगवन्तं एतदवोच—"इच्छामहं, भन्ते, जन्तुगामं पिण्डाय पविसितुं" ति।

"यस्स दानि त्वं, मेघिय, कालं मञ्ञसी" ति।

२. अथ खो आयस्मा मेघियो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय जन्तुगामं पिण्डाय पाविसि। जन्तुगामे पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो येन किमिकाळाय नदिया तीरं तेनुपसङ्कमि। अद्दसा खो आयस्मा मेघियो किमिकाळाय नदिया तीरे जङ्घाविहारं अनुचङ्कममानो अनुविचरमानो अम्बवनं पासादिकं रमणीयं। [R.355] दिस्वानस्स एतदहोसि—"पासादिकं वतिदं अम्बवनं रमणीयं, अलं वतिदं कुलपुत्तस्स पधानत्थिकस्स पधानाय। सचे मं भगवा अनुजानेय्य, आगच्छेय्याहं इमं अम्बवनं पधानाया" ति।

३. अथ खो आयस्मा मेघियो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा मेघियो भगवन्तं एतदवोच—"इधाहं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय जन्तुगामं पिण्डाय पाविसिं। जन्तुगामे पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो येन किमिकाळाय

को सेवन (उपभोग) करता है, विचारकर एक को स्वीकार करता है, एक को दूर रखता है, तथा विचार कर एक को त्यागता है, भिक्षु! ऐसा साधक भिक्षु 'निश्रयसम्पन्न' कहलाता है॥"●

३. मेघियसूत्र : : **नौ धर्म**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) चालिका में चालिका पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् मेघिय भगवान् का वैयक्तिक परिचारक (उपस्थायक) था। तब कभी आयुष्मान् मेघिय भगवान् के सम्मुख आया... यह बोले—"भन्ते! मैं जन्तुग्राम में भिक्षाटन के लिये जाना चाहता हूँ।"

"ठीक है, मेघिय! जैसा तुम उचित समझते हो, वैसा करो!"

२. तब आयुष्मान् मेघिय प्रातः काल वस्त्र व्यवस्थित कर पात्रचीवर ले कर जन्तुग्राम में भिक्षाहेतु प्रविष्ट हुए और क्रमशः वहाँ भिक्षाटन कर भोजन कर्म से निवृत्त हो कर क्रिमिकाड़ा नदी के तीर पर पहुँचा। वह वहाँ पैदल ही घूमता हुआ, विचरण करता हुआ सुन्दर एवं मनोरम आम्रवन में पहुँचा। वहाँ का नयनाभिराम दृश्य देख कर उसको यह विचार हुआ—"यह आम्रवन अतिशय रमणीय है। यहाँ कोई भी प्रधानार्थी कुलपुत्र सरलता से प्रधान (योगभ्यास) कर सकता है। यदि भगवान् मुझको अनुज्ञा देंगे तो मैं भी यहाँ (आम्रवन में) आ कर प्रधान के लिये प्रयत्न करूँगा।"

३. तब आयुष्मान् मेघिय भगवान् के पास गया... वहाँ जा कर यह बोला—"भन्ते! अभी मैं प्रातः काल... मैं भी यहाँ आ कर प्रधान के लिये प्रयत्न करूँगा।"

नदिया तीरं तेनुपसङ्कमिं। अद्दसं खो अहं, भन्ते, किमिकाळाय नदिया तीरे जङ्घाविहारं अनुचङ्कममानो अनुविचरमानो अम्बवनं पासादिकं रमणीयं। दिस्वान मे एतदहोसि— [B.167] 'पासादिकं वतिदं अम्बवनं रमणीयं। अलं वतिदं कुलपुत्तस्स पधानत्थिकस्स पधानाय। सचे मं भगवा अनुजानेय्य, आगच्छेय्याहं इमं अम्बवनं पधानाया' ति। सचे मं भगवा अनुजानेय्य, गच्छेय्याहं तं अम्बवनं पधानाया'' ति।

''आगमेहि ताव, मेघिय! एककम्हि ताव याव अञ्ञो पि कोचि भिक्खु आगच्छती'' ति।

४. दुतियं पि खो आयस्मा मेघियो भगवन्तं एतदवोच—''भगवतो, भन्ते, नत्थि [N.7] किञ्चि उत्तरि करणीयं, नत्थि कतस्स पटिचयो। मय्हं खो पन, भन्ते, अत्थि उत्तरि करणीयं, अत्थि कतस्स पटिचयो। सचे मं भगवा अनुजानेय्य, गच्छेय्याहं तं अम्बवनं पधानाया'' ति। ''आगमेहि ताव, मेघिय! ...पूर्ववत्...''।

५. ततियं पि खो आयस्मा मेघियो भगवन्तं एतदवोच—''भगवतो, भन्ते, नत्थि [R.356] किञ्चि उत्तरि करणीयं, नत्थि कतस्स पटिचयो। मय्हं खो पन, भन्ते, अत्थि उत्तरि करणीयं, अत्थि कतस्स पटिचयो। सचे मं भगवा अनुजानेय्य, गच्छेय्याहं तं अम्बवनं पधानाया'' ति।

''पधानं ति खो, मेघिय, वदमानं किन्ति वेदय्याम! यस्स दानि त्वं, मेघियं, कालं मञ्ञसी'' ति।

६. अथ खो आयस्मा मेघियो उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा येन तं अम्बवनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा तं अम्बवनं अज्झोगाहेत्वा अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले दिवाविहारं निसीदि। अथ खो आयस्मतो मेघियस्स तस्मिं अम्बवने विहरन्तस्स

''मेघिय! तुम तब तक प्रतीक्षा करो, जब तक कोई भिक्षु मेरी परिचर्याहेतु न आ जाय।''

४. दूसरी बार भी आयुष्मान् मेघिय ने भगवान् से यह विवेदन किया—''भन्ते! आपका अन्य कोई कार्य अवशिष्ट नहीं है, और उनमें से कोई कार्य दुबारा नहीं करना है। परन्तु मुझ को यह कार्य अभी पूर्ण करना है, तथा समय मिला तो इसको दोहराना (अभ्यास) भी आवश्यक है। अत:, भन्ते! यदि आप मुझ को अनुमति दें तो मैं योगाभ्यास हेतु आम्रवन चला जाऊँ।''

''मेघिय! तुम तब तक प्रतीक्षा करो, जब तक कोई अन्य भिक्षु मेरी परिचर्या हेतु न आ जाय।''

५. तीसरी बार भी आयुष्मान् मेघिय ने ...पूर्ववत्... योगाभ्यास हेतु आम्रवन चला जाऊँ।''

''मेघिय! जब तुम योगाभ्यासहेतु आम्रवन जाने की अनुमति माँग रहे हो तो इस कुशल कर्म के लिये तुमको कैसे रोका जा सकता है! अत: तुम जैसा उचित समझते हो वैसा ही करो।''

६. तब आयुष्मान् मेघिय आसन से उठकर, भगवान् को प्रणाम प्रदक्षिणा कर, आम्रवन जा पहुँचा। तथा वहाँ वन के गहन स्थल में प्रविष्ट हो कर एकान्त स्थान में किसी वृक्ष के नीचे बैठ कर दैवसिक साधना में लग गया। इस साधना के समय उस के चित्त में ये तीन पापमय अकुशल वितर्क

येभुय्येन तयो पापका अकुसला वितक्का समुदाचरन्ति, सेय्यथीदं—कामवितक्को, ब्यापाद-वितक्को, विहिंसावितक्को। अथ खो आयस्मतो मेघियस्स एतदहोसि—"अच्छरियं वत भो, अब्भुतं वत भो! सद्धाय च वतम्हा अगारस्मा अनगारियं पब्बजिता; अथ च पनिमेहि तीहि पापकेहि अकुसलेहि वितक्केहि अन्वासत्ता—कामवितक्केन, ब्यापादवितक्केन, विहिंसावितक्केना" ति।

७. अथ खो आयस्मा मेघियो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा मेघियो भगवन्तं एतदवोच—

"इध मय्हं, भन्ते, तस्मिं अम्बवने विहरन्तस्स येभुय्येन तयो पापका अकुसला वितक्का समुदाचरन्ति, सेय्यथीदं—कामवितक्को, ब्यापादवितक्को, विहिंसावितक्को। [B.168] तस्स मय्हं, भन्ते, एतदहोसि—'अच्छरियं वत भो, अब्भुतं वत भो! सद्धाय च [N.8] वतम्हा अगारस्मा अनगारियं पब्बजिता; अथ च पनिमेहि तीहि पापकेहि [R.357] अकुसलेहि वितक्केहि अन्वासत्ता—कामवितक्केन, ब्यापादवितक्केन, विहिंसावितक्केना' ति"।

८. "अपरिपक्काय, मेघिय, चेतोविमुत्तिया पञ्च धम्मा परिपक्काय संवत्तन्ति। कतमे पञ्च? इध, मेघिय, भिक्खु कल्याणमित्तो होति कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को। अपरिपक्काय, मेघिय, चेतोविमुत्तिया अयं पठमो धम्मो परिपक्काय संवत्तति।

९. "पुन च परं, मेघिय, भिक्खु सीलवा होति, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति आचारगोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु। अपरिपक्काय, मेघिय, चेतोविमुत्तिया अयं दुतियो धम्मो परिपक्काय संवत्तति।

१०. "पुन च परं, मेघिय, यायं कथा अभिसल्लेखिका चेतोविवरणसप्पाया, सेय्यथीदं—अप्पिच्छकथा सन्तुट्ठिकथा पविवेककथा असंसग्गकथा विरियारम्भकथा

उत्पन्न हुए—कामवितर्क, व्यापादवितर्क एवं विहिंसावितर्क। तब आयुष्मान् मेघिय के यह ध्यान में आया—"अरे यह कैसी अद्भुत एवं आश्चर्यमयी बात है कि हम लोग श्रद्धापूर्वक इस धर्मविनय में प्रव्रजित हुए हैं, तब भी ये तीन पापमय अकुशल कामवितर्कादि हमारे चित्त को घेरे हुए हैं।"

७. तदनन्तर, आयुष्मान् मेघिय भगवान् के सम्मुख गया... यह बोला—"वहाँ, भन्ते! उस आम्रवन में साधना करते हुए मेरे चित्त को ये तीन पापमय कामवितर्कादि अकुशल घेर रहे थे ...पूर्ववत्...।"

८. "मेघिय! अपरिपक्व चेतोविमुक्ति के परिपाकहेतु ये पाँच धर्म अत्यावश्यक हैं। कौन से पाँच? यहाँ, मेघिय! साधक भिक्षु को कल्याणमित्र...होना आवश्यक है। यह प्रथम...। (१)

९. "उस कल्याणमित्र भिक्षु को, मेघिय! शीलवान्, प्रातिमोक्षसंवर से संवृत, एवं छोटे छोटे पापमय धर्मों से भी भय मानने वाला होना चाहिये। यह द्वितीय...। (२)

१०. "पुनः, मेघिय! उस कल्याणमित्र को ऐसी कथाओं को सुनने में निरन्तर उत्सुकता

सीलकथा समाधिकथा पञ्ञाकथा विमुत्तिकथा विमुत्तिञाणदस्सनकथा, एवरूपिया कथाय निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। अपरिपक्काय, मेघिय, चेतोविमुत्तिया अयं ततियो धम्मो परिपक्काय संवत्तति।

११. "पुन च परं, मेघिय, भिक्खु आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु। अपरिपक्काय, मेघिय, चेतोविमुत्तिया अयं चतुत्थो धम्मो परिपक्काय संवत्तति।

१२. "पुन च परं, मेघिय, भिक्खु पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। अपरिपक्काय, मेघिय, चेतोविमुत्तिया अयं पञ्चमो धम्मो परिपक्काय संवत्तति।

[B.169] १३. "कल्याणमित्तस्सेतं, मेघिय, भिक्खुनो पाटिकङ्खं कल्याणसहायस्स कल्याण-
[R.358] सम्पवङ्कस्स—'सीलवा भविस्सति ...पे०... समादाय सिक्खिस्सति सिक्खापदेसु'।
[N.9] १४. "कल्याणमित्तस्सेतं, मेघिय, भिक्खुनो पाटिकङ्खं कल्याणसहायस्स कल्याणसम्पवङ्कस्स—'यायं कथा अभिसल्लेखिका चेतोविवरणसप्पाया, सेय्यथीदं—अप्पिच्छकथा ...पे०... विमुत्तिञ्ञाणदस्सनकथा, एवरूपिया कथाय निकामलाभी भविस्सति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी'।

१५. "कल्याणमित्तस्सेतं, मेघिय, भिक्खुनो पाटिकङ्खं कल्याणसहायस्स कल्याणसम्पवङ्कस्स—'आरद्धविरियो विहरिस्सति ...पे०... अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु'।

१६. "कल्याणमित्तस्सेतं, मेघिय, भिक्खुनो पाटिकङ्खं कल्याणसहायस्स कल्याणसम्पवङ्कस्स—'पञ्ञवा भविस्सति ...पे०... सम्मादुक्खक्खयगामिनिया'।

रखनी चाहिये, जो उसकी इन्द्रियों की संयत रखने वाली हों तथा चित्तनिरोध की ओर ले जाने वाली हों। जैसे—अल्पेच्छकथा, सन्तुष्टिकथा ...पूर्ववत्... विमुक्तिज्ञानदर्शनकथा...। यह तृतीय...(३)

११. "पुनः, मेघिय! साधक भिक्षु को अपने अकुशल धर्मों के प्रहाण के लिये, कुशल धर्मों के उत्पाद, स्थिरता, पराक्रम तथा उनके प्राप्त्यर्थ सतत उत्साह के लिये प्रयत्नरत रहना चाहिये। यह चतुर्थ धर्म...। (४)

१२. "पुनः, मेघिय! साधकभिक्षु को धर्मों के उदय एवं अस्त तक पहुँचाने वाली प्रज्ञा से सम्पृक्त होना चाहिये, जो दुःखों के अन्त (निर्वाण) के मार्ग की बोधक है। यह पञ्चम धर्म...। (५)

१३. "मेघिय! कल्याणमित्र भिक्षु से यह आशा रखनी चाहिये कि वह शीलवान् होगा ही...।

१४. "मेघिय! कल्याणमित्र भिक्षु से यह आशा रखनी चाहिये कि वह ऐसी कथाओं के सुनने में निरन्तर उत्सुक रहेगा ...पूर्ववत्...।

१५. "मेघिय! कल्याणमित्र भिक्षु से यह आशा की जानी चाहिये कि वह अकुशल धर्मों के प्रहाण तथा कुशल धर्मों के उत्पाद के लिये ...पूर्ववत् निरन्तर उत्साही रहेगा।

१७. "तेन च पन, मेघिय, भिक्खुना इमेसु पञ्चसु धम्मेसु पतिट्ठाय चत्तारो धम्मा उत्तरि भावेतब्बा—असुभा भावेतब्बा रागस्स पहानाय, मेत्ता भावेतब्बा ब्यापादस्स पहानाय, आनापानस्सति भावेतब्बा वितक्कुपच्छेदाय, अनिच्चसञ्ञा भावेतब्बा अस्मिमान-समुग्घाताय। अनिच्चसञ्ञिनो, मेघिय, अनत्तसञ्ञा सण्ठाति। अनत्तसञ्ञी अस्मिमान-समुग्घातं पापुणाति दिट्ठेव धम्मे निब्बानं" ति॥ ●

४. नन्दकसुत्तं : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथ-पिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समयेन आयस्मा नन्दको उपट्ठानसालायं भिक्खू धम्मिया कथाय सन्दस्सेति समादपेति समुत्तेजेति सम्पहंसेति। अथ खो भगवा सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनुपट्ठानसाला तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा बहिद्वारकोट्ठके अट्ठासि कथापरियोसानं आगमयमानो। अथ खो भगवा कथापरियोसानं विदित्वा उक्कासेत्वा अग्गळं आकोटेसि। विवरिंसु खो ते भिक्खू भगवतो द्वारं। [R.359]

२. अथ खो भगवा उपट्ठानसालं पविसित्वा पञ्ञत्तासने निसीदि। निसज्ज खो भगवा आयस्मन्तं नन्दकं एतदवोच—"दीघो खो त्यायं, नन्दक, धम्मपरियायो [B.170] भिक्खूनं पटिभासि। अपि मे पिट्ठि आगिलायति बहिद्वारकोट्ठके ठितस्स [N.10] कथापरियोसानं आगमयमानस्सा" ति।

---

१६. "मेघिय! कल्याणमित्र भिक्षु से यह आशा रखी जानी चाहिये कि वह ऐसी प्रज्ञा से भी सम्पृक्त होगा जो ...पूर्ववत्... ।

"साथ ही, मेघिय! उस साधक भिक्षु को इन पाँच धर्मों में प्रतिष्ठित रहते हुए इन चार धर्मों की भी भावना करनी चाहिये—(१) राग के प्रहाण हेतु अशुभ भावना का; (२) व्यापाद (द्वेष) के प्रहाण के लिये मैत्री भावना का; (३) वितर्कों के क्षय के लिये आनापानस्मृति का; (४) तथा अस्मिता एवं अभिमान के नाश के लिये अनित्यसंज्ञा की भावना का अभ्यास करना चाहिये। इस अनित्यसंज्ञा की भावना करने वाले साधक की अनात्मसंज्ञा स्वयं स्थिर हो जायगी। तथा इस अनात्मसंज्ञा की भावना से परिपूर्ण साधक अपनी अस्मिता एवं अभिमान का नाशकर इसी जन्म में निर्वाण को प्राप्त कर लेगा॥" (६-९) ●

४. नन्दकसूत्र : : **नौ धर्म**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के ...पूर्ववत्... विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् नन्दक उपस्थानशाला (सभाभवन) में भिक्षुओं को धार्मिक कथा सुनाकर धर्म के प्रति समुत्तेजित एवं सम्प्रहृष्ट कर रहे थे। तब भगवान् सायङ्काल एकान्त साधना से उठ कर उपस्थानशाला में आये तथा उसके बहिर्द्वार पर तब तक प्रतीक्षा करते रहे, जब तक कि नन्दक की धार्मिक कथा सम्पन्न नहीं हुई। तब कथा सम्पन्न होने के बाद, जोर से खांस कर द्वार की सांकल खटखटायी। भिक्षुओं ने भगवान् के लिये प्रवेशद्वार खोल दिया।

२. तब भगवान् ने, उपस्थानशाला में प्रविष्ट हो कर प्रज्ञप्त आसन पर विराजते हुए, आयुष्मान् नन्दक से कहा—"नन्दक! तुम भिक्षुओं को दिया गया यह धर्मप्रवचन बहुत लम्बा खींच ले गये।

३. एवं वुत्ते आयस्मा नन्दको सारज्जमानरूपो भगवन्तं एतदवोच—''न खो पन मयं, भन्ते, जानाम 'भगवा बहिद्वारकोट्ठके ठितो' ति। सचे हि मयं, भन्ते, जानेय्याम 'भगवा बहिद्वारकोट्ठके ठितो' ति, एत्तकं पि धम्मं नो नप्पटिभासेय्या'' ति।

४. अथ खो भगवा आयस्मन्तं नन्दकं सारज्जमानरूपं विदित्वा आयस्मन्तं नन्दकं एतदवोच—''साधु, साधु, नन्दक! एतं खो, नन्दक, तुम्हाकं पतिरूपं कुलपुत्तानं सद्धाय अगारस्मा अनगारियं पब्बजितानं, यं तुम्हे धम्मिया कथाय सन्निसीदेय्याथ। सन्निपतितानं वो, नन्दक, द्वयं करणीयं—धम्मी वा कथा अरियो वा तुण्हीभावो। सद्धो च, नन्दक, [R.360] भिक्खु होति, नो च सीलवा। एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्सं सीलवा चा' ति। यतो च खो, नन्दक, भिक्खु सद्धो च होति सीलवा च, एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति।

५. ''सद्धो च, नन्दक, भिक्खु होति सीलवा च, नो च लाभी अज्झत्तं चेतोसमाधिस्स। एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्सं सीलवा च लाभी च अज्झत्तं चेतोसमाधिस्सा' ति। यतो च खो, नन्दक, भिक्खु सद्धो च होति सीलवा च लाभी च अज्झत्तं चेतोसमाधिस्स, एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति।

६. ''सद्धो च, नन्दक, भिक्खु होति सीलवा च लाभी च अज्झत्तं चेतो-

---

बाह्य द्वार पर, धर्मकथा की परिसमाप्ति की प्रतीक्षा में बहुत समय तक खड़े रहने से मेरी पीठ में वेदना (कष्ट) हो रही है।''

३. (भगवान् द्वारा) ऐसा कहे जाने पर, आयुष्मान् नन्दक, दुःख प्रकट करते हुए, भगवान् से यह निवेदन करने लगे—''भन्ते! हम को यह ज्ञात न हो सका था कि आप बाह्य द्वार पर खड़े हैं। यदि ऐसा ज्ञात होता तो हम ऐसा प्रमाद न करते; परन्तु हम इतना भी न जान पाये।''

४. तब भगवान् ने आयुष्मान् नन्दक को दुःखी एवं व्यथित देख कर यह कहा—''साधु नन्दक! साधु! तुम जैसे कुलपुत्रों के लिये, जो श्रद्धापूर्वक घर छोड़ कर प्रव्रजित हुए हैं, यही उचित है कि तुम लोग निरन्तर धार्मिक कथा में ही संलग्न रहो, धर्मश्रवण में लगे रहो। जब तुम लोग एकत्र होओ तो उस समय तुम्हारे दो ही कर्तव्य हैं—१. या तो धार्मिक कथा करो, या फिर २. मौन भाव (चुप रहना) रखो। नन्दक! यदि कोई भिक्षु श्रद्धालु है, परन्तु शीलवान् नहीं है, तो वह एक अङ्ग से अपरिपूर्ण है; अतः उसको अपना वह अङ्ग पूर्ण करना चाहिये कि क्यों न मैं श्रद्धा के साथ साथ शील का भी पालन करूँ! नन्दक! जब वह भिक्षु श्रद्धालु एवं शीलवान् हो जाता है तब वह उस अङ्ग से भी परिपूर्ण हो जाता है। (१)

५. ''नन्दक! जब कोई भिक्षु श्रद्धालु एवं शीलवान् ही हो, परन्तु वह आध्यात्मिक चेतःसमाधि से युक्त न हो तब उसको यह सोचना चाहिये कि क्यों न मैं इन तीनों अङ्गों से ही परिपूर्ण होऊँ! नन्दक! जब वह आध्यात्मिक चेतःसमाधि का भी लाभी हो जाता है तब वह इन तीनों अङ्गों से परिपूर्ण कहलाता है। (२)

६. ''और, नन्दक! कोई भिक्षु श्रद्धालु, शीलवान् तथा आध्यात्मिक चेतःसमाधि से सम्पन्न

समाधिस्स, न लाभी अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय। एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। सेय्यथापि, नन्दक, पाणको चतुप्पादको अस्स। तस्स एको पादो ओमको लामको। एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो अस्स। एवमेव खो, नन्दक, भिक्खु सद्धो च होति सीलवा च लाभी च अज्झत्तं चेतोसमाधिस्स, न लाभी अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय। एवं सो तेनङ्गेन [B.171] अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्स सीलवा च [N.11] लाभी च अज्झत्तं चेतोसमाधिस्स लाभी च अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाया' ति।

७. ''यतो च खो, नन्दक, भिक्खु सद्धो च होति सीलवा च लाभी च अज्झत्तं चेतोसमाधिस्स लाभी च अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय, एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होती'' ति।

८. इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो उट्ठायासना विहारं पाविसि। अथ खो आयस्मा नन्दको अचिरपक्कन्तस्स भगवतो भिक्खू आमन्तेसि—''इदानि, आवुसो, भगवा चतूहि पदेहि केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेत्वा उट्ठायासना विहारं [R.361] पविट्ठो—'सद्धो च, नन्दक, भिक्खु होति, नो च सीलवा। एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—किन्ताहं सद्धो च अस्सं सीलवा चा ति ...पे०... अज्झत्तं चेतोसमाधिस्स लाभी च अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय, एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होती' ति।

९. ''पञ्चिमे, आवुसो, आनिसंसा कालेन धम्मस्सवने कालेन धम्मसाकच्छाय। कतमे पञ्च? इधावुसो, भिक्खु भिक्खूनं धम्मं देसेति आदिकल्याणं मज्झेकल्याणं परियोसानकल्याणं सात्थं सब्यञ्जनं, केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेति। यथा यथा, आवुसो, भिक्खु भिक्खूनं धम्मं देसेति आदिकल्याणं मज्झेकल्याणं परियोसान-कल्याणं सात्थं सब्यञ्जनं, केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेति, तथा [B.172] तथा सो सत्थु पियो च होति मनापो च गरु च भावनीयो च। अयं, आवुसो, पठमो आनिसंसो कालेन धम्मस्सवने कालेन धम्मसाकच्छाय।

हो, परन्तु उसने अभी तक प्रज्ञाद्वारा धर्मविपश्यना न की हो; ऐसा भिक्षु भी एक अङ्ग से उसी प्रकार अपरिपूर्ण कहलाता है, जैसे, नन्दक! कोई चार पैरों वाला प्राणी एक अङ्ग से अपरिपूर्ण हो। अत: भिक्षुओ! उस भिक्षु को यह विचार करना चाहिये कि क्यों न मैं इस अङ्ग से भी परिपूर्ण हो जाऊँ!

७. ...तब वह प्रयत्न कर उस अङ्ग से भी परिपूर्ण हो जाता है।'' (४)

८. भगवान् ने यह उपदेश किया। यह उपदेश कर आसन से उठकर गन्धकुटी में पधार गये। भगवान् के वहाँ से पधारने के बाद, नन्दक ने भिक्षुओं को भगवान् के इस उपदेश का विस्तार यह बताया—''आयुष्मानो! भगवान् ने अभी इन चार पदों से यह महत्त्वपूर्ण उपदेश किया था कि कोई भिक्षु श्रद्धालु हो परन्तु शीलवान् न हो ...पूर्ववत्... वह प्रयत्न कर उस अङ्ग से परिपूर्ण हो जाता है।

९. ''भिक्षुओ! समय पर धर्मश्रवण एवं धर्मसाक्षात्कार के ये पाँच लाभ या माहात्म्य हैं। कौन से पाँच? यहाँ कोई भिक्षु भिक्षुओं को आदि मध्य एवं अन्त में भी कल्याण वाला ...पूर्ववत्...

१०. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु भिक्खूनं धम्मं देसेति आदिकल्याणं मज्झेकल्याणं परियोसानकल्याणं सात्थं सब्यञ्जनं, केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेति। यथा यथा, आवुसो, भिक्खु भिक्खूनं धम्मं देसेति आदिकल्याणं ...पे०... ब्रह्मचरियं पकासेति, तथा तथा सो तस्मिं धम्मे अत्थप्पटिसंवेदी च होति धम्मप्पटिसंवेदी च। अयं, आवुसो, दुतियो आनिसंसो कालेन धम्मस्सवने कालेन धम्मसाकच्छाय।

[N.12] ११. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु भिक्खूनं धम्मं देसेति आदिकल्याणं मज्झेकल्याणं परियोसानकल्याणं सात्थं सब्यञ्जनं, केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं [R.362] पकासेति। यथा यथा, आवुसो, भिक्खु भिक्खूनं धम्मं देसेति आदिकल्याणं ...पे०... ब्रह्मचरियं पकासेति, तथा तथा सो तस्मिं धम्मे गम्भीरं अत्थपदं पञ्ञाय अभिविज्झ पस्सति। अयं, आवुसो, ततियो आनिसंसो कालेन धम्मस्सवने कालेन धम्मसाकच्छाय।

१२. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु भिक्खूनं धम्मं देसेति आदिकल्याणं ...पे०... ब्रह्मचरियं पकासेति। यथा यथा, आवुसो, भिक्खु भिक्खूनं धम्मं देसेति आदिकल्याणं ...पे०... ब्रह्मचरियं पकासेति, तथा तथा नं सब्रह्मचारी उत्तरि सम्भावेन्ति—'अद्धा अयमायस्मा पत्तो वा पज्जति वा'। अयं, आवुसो, चतुत्थो आनिसंसो कालेन धम्मस्सवने कालेन धम्मसाकच्छाय।

१३. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु भिक्खूनं धम्मं देसेति आदिकल्याणं मज्झेकल्याणं परियोसानकल्याणं सात्थं सब्यञ्जनं, केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं

धर्मसाधना प्रकार बताता है। जैसे जैसे, आयुष्मानो! वह यह धर्मोपदेश ... धर्मसाधना बताता है; वैसे वैसे आयुष्मानो! वह भिक्षु शास्ता का प्रिय, स्नेहभाक् एवं माननीय होता जाता है। यह इस धर्मश्रवण का प्रथम माहात्म्य हुआ। (१)

१०. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु भिक्षुओं को ... धर्मोपदेश करता है। वह जैसे जैसे उनको धर्मोपदेश करता है; वैसे वैसे ही वह उस धर्म का अर्थज्ञान करता रहता है। भिक्षुओ! यह उस धर्म श्रवण का द्वितीय माहात्म्य हुआ। (२)

११. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु भिक्षुओं को ... धर्मोपदेश करता है। वह जैसे धर्मोपदेश करता है वैसे वैसे वह उसके अर्थज्ञान के साथ साथ उस के अन्तस्तल तक प्रवेश के साथ प्रज्ञा से साक्षात्कार करता रहता है। आयुष्मानो! यह उस धर्मश्रवण का तृतीय माहात्म्य हुआ। (३)

१२. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु भिक्षुओं को ... धर्मोपदेश करता है। वह जैसे जैसे धर्मोपदेश करता है वैसे वैसे उसके साथी उस के विषय में कल्पना करते रहते हैं—'यह या तो अर्हत्त्व प्राप्त कर चुका है या प्राप्त करने वाला है।' (४)

१३. ''पुनः, आयुष्मानो! जब कोई भिक्षु भिक्षुओं को धर्मोपदेश करता है वैसे वैसे वहाँ उपस्थित शैक्ष्य एवं मार्गारूढ भिक्षु उसका अनुकरण करते हुए, अपना अद्वितीय योग क्षेम चाहते

पकासेति। यथा यथा, आवुसो, भिक्खु भिक्खूनं धम्मं देसेति आदिकल्याणं मज्झेकल्याणं परियोसानकल्याणं सात्थं सब्यञ्जनं, केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेति, तत्थ ये खो भिक्खू सेखा अप्पत्तमानसा अनुत्तरं योगक्खेमं पत्थयमाना विहरन्ति, ते तं धम्मं सुत्वा विरियं आरभन्ति अप्पत्तस्स पत्तिया अनधिगतस्स अधिगमाय असच्छि-[B.173] कतस्स सच्छिकिरियाय। ये पन तत्थ भिक्खू अरहन्तो खीणासवा वुसितवन्तो कतकरणीया ओहितभारा अनुप्पत्तसदत्था परिक्खीणभवसंयोजना सम्मदञ्ञाविमुत्ता, ते तं धम्मं [R.363] सुत्वा दिट्ठधम्मसुखविहारंयेव अनुयुत्ता विहरन्ति। अयं, आवुसो, पञ्चमो आनिसंसो कालेन धम्मस्सवने कालेन धम्मसाकच्छाय। इमे खो, आवुसो, पञ्च आनिसंसा कालेन धम्मस्स-वने कालेन धम्मसाकच्छाया'' ति॥ ●

५. बलसुत्तं : १. ''चत्तारिमानि, भिक्खवे, बलानि। कतमानि चत्तारि? पञ्ञाबलं, विरियबलं, अनवज्जबलं, सङ्गाहबलं। कतमं च, भिक्खवे, पञ्ञाबलं? ये धम्मा कुसला कुसलसङ्खाता ये धम्मा अकुसला अकुसलसङ्खाता ये धम्मा सावज्जा [N.13] सावज्जसङ्खाता ये धम्मा अनवज्जा अनवज्जसङ्खाता ये धम्मा कण्हा कण्हसङ्खाता ये धम्मा सुक्का सुक्कसङ्खाता ये धम्मा सेवितब्बा सेवितब्बसङ्खाता ये धम्मा असेवितब्बा असेवितब्बसङ्खाता ये धम्मा नालमरिया नालमरियसङ्खाता ये धम्मा अलमरिया अलमरियसङ्खाता, त्यास्स धम्मा पञ्ञाय वोदिट्ठा होन्ति वोचरिता। इदं, वुच्चति, भिक्खवे, **पञ्ञाबलं**।

२. ''कतमं च, भिक्खवे, विरियबलं? ये धम्मा अकुसला अकुसलसङ्खाता ये धम्मा सावज्जा सावज्जसङ्खाता ये धम्मा कण्हा कण्सङ्खाता ये धम्मा असेवितब्बा असेवितब्बसङ्खाता ये धम्मा नालमरिया नालमरियसङ्खाता, तेसं धम्मानं पहानाय छन्दं

हुए, अनधिगत की प्राप्ति एवं अधिगत के साक्षात्कारहेतु प्रयासरत रहते हैं। तथा धर्मश्रवण करने वाले अर्हत्त्वप्राप्त भिक्षु उस धर्मश्रवण के आश्रयण से सुखपूर्वक धर्मसाधना में तत्पर रहते हैं। आयुष्मानो! यह धर्मश्रवण का पञ्चम माहात्म्य है॥ (५) (४ + ५ = ९) ●

५. बलसूत्र : : **९ बल**

१. ''भिक्षुओ! बल चार कहलाते हैं। कौन से चार? (१) प्रज्ञाबल, (२) वीर्यबल, (३) अनवद्यबल एवं (४) संग्राहबल। भिक्षुओ! यह प्रज्ञाबल कौन होता है? जो धर्म कुशल एवं कुशलों में पारिगणित, अकुशल एवं अकुशलों में परिगणित, सावद्य (सदोष) एवं सावद्यों में परिगणित, अनवद्य (निर्दोष) एवं निरवद्यों में परिगणित, कृष्ण एवं कृष्णों में परिगणित, शुक्ल एवं शुक्लों में परिगणित, सेव्य एवं सेव्यों में परिगणित, असेव्य एवं असेव्यों में परिगणित, आर्य एवं आर्य कहलाने योग्य, अनार्य एवं अनार्य कहलाने योग्य हैं उन सभी को प्रज्ञा के आश्रयण से विभाजन कर सूक्ष्मतया समझ लेता है। भिक्षुओ! यह कहलाता है—**प्रज्ञाबल**। (१)

२. भिक्षुओ! कौन कहलाता है वीर्यबल? भिक्षुओ! जो धर्म अकुशल एवं अकुशलों में परिगणित, सावद्य एवं सावद्यों में परिगणित, कृष्ण एवं कृष्णों में परिगणित, असेव्य एवं असेव्यों में परिगणित तथा जो अनार्य एवं अनार्यों में परिगणित धर्म हैं उन धर्मों के प्रहाण के लिये इच्छा

जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। ये धम्मा कुसला कुसलसङ्खाता ये धम्मा अनवज्जा अनवज्जसङ्खाता ये धम्मा सुक्का सुक्कसङ्खाता ये धम्मा सेवितब्बा [R.364] सेवितब्बसङ्खाता ये धम्मा अलमरिया अलमरियसङ्खाता, तेसं धम्मानं पटिलाभाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। इदं वुच्चति, भिक्खवे, **विरियबलं**।

३. ''कतमं च, भिक्खवे, अनवज्जबलं? इध, भिक्खवे, अरियसावको अनवज्जेन कायकम्मेन समन्नागतो होति, अनवज्जेन वचीकम्मेन समन्नागतो होति, अनवज्जेन मनोकम्मेन समन्नागतो होति। इदं वुच्चति, भिक्खवे, **अनवज्जबलं**।

४. ''कतमं च, भिक्खवे, सङ्गाहबलं? चत्तारिमानि, भिक्खवे, सङ्गहवत्थूनि— [B.174] सदानं, पेय्यवज्जं, अत्थचरिया, समानत्तता। एतदग्गं, भिक्खवे, दानानं यदिदं धम्मदानं। एतदग्गं, भिक्खवे, पेय्यवज्जानं यदिदं अत्थिकस्स ओहितसोतस्स पुनप्पुनं धम्मं देसेति। एतदग्गं, भिक्खवे, अत्थचरियानं यदिदं अस्सद्धं सद्धासम्पदाय समादपेति निवेसेति पतिट्ठापेति, दुस्सीलं सीलसम्पदाय... मच्छरिं चागसम्पदाय... दुप्पञ्ञं पञ्ञा-सम्पदाय समादपेति निवेसेति पतिट्ठापेति। एतदग्गं, भिक्खवे, समानत्ततानं यदिदं सोतापन्नो सोतापन्नस्स समानत्तो, सकदागामी सकदागामिस्स समानत्तो, अनागामी अनागामिस्स [N.14] समानत्तो, अरहा अरहतो समानत्तो। इदं वुच्चति, भिक्खवे, **सङ्गाहबलं**। इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि बलानि।

५. ''इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि बलेहि समन्नागतो अरियसावको **पञ्च भयानि**

करता है, प्रयत्न करता है, उद्योग करता है, चित्तनिग्रह करता है। या जो धर्म कुशल एवं कुशलों में परिगणित ...पूर्ववत्... आर्य एवं आर्य कहलाने योग्य हैं उनकी प्राप्ति के लिये इच्छा, प्रयत्न, उद्योग एवं चित्तनिग्रह करता है। भिक्षुओ! यह कहलाता है—**वीर्यबल**। (२)

३. भिक्षुओ! अनवद्य (निर्दोष) बल क्या कहलाता है? भिक्षुओ! जब यहाँ कोई आर्यश्रावक अनवद्य कायकर्म, वाक्कर्म एवं मन:कर्म से समन्वित होता है। भिक्षुओ! यह कहलाता है। **निरवद्य बल**। (३)

४. ''पुन:, भिक्षुओ! यह संग्राह (संग्रह) बल क्या कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! चार संग्रहवस्तु होती हैं—१. दान, २. प्रियवाणी, ३. अर्थचर्या एवं ४. समानात्मता। सभी दानों में भिक्षुओ! धर्मदान सर्वश्रेष्ठ है। २. भिक्षुओ! प्रियवाणी बोलने वालों में भी वही श्रेष्ठ है जो श्रवणार्थी एवं उत्कण्ठित को पुन: पुन: धर्मश्रवण कराता है। ३. इसी प्रकार, भिक्षुओ! अर्थचर्याओं में वही अर्थचर्या श्रेष्ठ है जिस का आश्रयण अश्रद्धालु में श्रद्धा उत्पन्न कर दे, दु:शील को शीलवान्...कञ्जूस को त्यागवृत्ति, दुष्प्रज्ञ को प्रज्ञावान् बना दे, या प्रज्ञा में प्रतिष्ठित कर दे। ४. समानात्मताओं में वही श्रेष्ठ समानात्मता है जो स्रोतआपन्न को स्रोतआपन्न के समान, सकृदागामी को सकृदागामी के समान, अनागामी को अनागामी के समान तथा अर्हत् को अर्हत् के समान बना दे। भिक्षुओ! यह कहलाता है—**संग्राहबल**। (४)

समतिक्कन्तो होति। कतमानि पञ्च? आजीविकभयं, असिलोकभयं, [R.365] परिससारज्जभयं, मरणभयं, दुग्गतिभयं। स खो सो, भिक्खवे, अरियसावको इति पटि-सञ्चिक्खति—'नाहं आजीविकभयस्स भायामि। किस्साहं, आजीविकभयस्स भायिस्सामि! अत्थि मे चत्तारि बलानि—पञ्ञाबलं, विरियबलं, अनवज्जबलं, सङ्गाहबलं दुप्पञ्ञो खो आजीविकभयस्स भायेय्य। कुसीतो आजीविकभयस्स भायेय्य। सावज्ज-कायकम्मन्तवचीकम्मन्तमनोकम्मन्तो आजीविकभयस्स भायेय्य। असङ्गाहको आजीवक-भयस्स भायेय्य। नाहं असिलोकभयस्स भायामि ...पे०... नाहं परिससारज्जभयस्स भायामि... नाहं मरणभयस्स भायामि ...पे०... नाहं दुग्गतिभयस्स भायामि। किस्साहं दुग्गतिभयस्स भायिस्सामि! अत्थि मे चत्तारि बलानि—पञ्ञाबलं, विरियबलं, अनवज्ज-बलं, सङ्गहबलं। दुप्पञ्ञो खो दुग्गतिभयस्स भायेय्य। कुसीतो दुग्गतिभयस्स भायेय्य। सावज्जकायकम्मन्तवचीकम्मन्तमनोकम्मन्तो दुग्गतिभयस्स भायेय्य। असङ्गाहको दुग्गतिभयस्स भायेय्य। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि बलेहि समन्नागतो अरियसावको इमानि पञ्च भयानि समतिक्कन्तो होती'' ति॥ ●

६. सेवनासुत्तं : १. तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि ...पे०... आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—

२. ''पुग्गलो पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि असेवि- [B.175]

''भिक्षुओ! इन चार बलों से युक्त आर्यश्रावक इन पञ्चविध भय से अतिक्रान्त (मुक्त) रहता है। कौन से पाँच भय? (१) आजीविकाभय, (२) अपयश (निन्दा) भय, (३) परिषदों में सारद्य (आसक्ति) भय, (४) मृत्युभय, एवं (५) दुर्गतिभय। भिक्षुओ! वह आर्यश्रावक यह सोचता है—'मैं अपनी आजीविका के विषय में अल्पमात्र भी भयभीत नहीं हूँ। मैं क्यों भयत्रस्त होऊँ? क्यों कि मैं प्रज्ञाबल, वीर्यबल, अनवद्यबल एवं संग्राहबल—इन चार बलों से युक्त हूँ। कोई मूर्ख (दुष्प्रज्ञ) ही अपनी आजीविका के विषय में भयाक्रान्त हो सकता है, कोई आलसी या जिस के काय-वाक्-मन: कर्म सदोष हों वही भय खाता है, या जो असंग्राहक हो वही आजीविकाभय से त्रस्त हो सकता है। (१)

''मैं अपने अपयश (लोकनिन्दा) से भी नहीं डरता...। (२)

''मैं परिपदों में सारद्य भय से भी आक्रान्त नहीं होता। ...। (३)

''न मैं मृत्युभय से ही आक्रान्त हूँ। ...। (४)

''और न मैं अपने किसी दुर्गति भय से ही आक्रान्त हूँ। मैं क्यों भयभीत होऊँ! क्योंकि मैं प्रज्ञाबल...से युक्त हूँ, कोई मूर्ख, आलसी...ही दुर्गतिभय से त्रस्त हो सकता है। (५)

भिक्षुओ! इन चार बलों से युक्त आर्यश्रावक इन पाँच भयों से मुक्त माना जाता है''॥ ●

६. सेवनासूत्र : : नौ धर्मों का विश्लेषण

१. ...वहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को बुलाया और उन से कहा—

२. ''आयुष्मानो! पुद्गल को भी दो प्रकार का जानना चाहिये। उन में कोई सेवनीय (संग)

तब्बो पि। चीवरं पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बं—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पि। पिण्डपातो पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि असेवितब्बो पि। सेनासनं पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बं—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पि। गामनिगमो पि, आवुसो, [N.15,R.366] दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि असेवितब्बो पि। जनपदपदेसो पि आवुसो, दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि असेवितब्बो पि।

३. '''पुग्गलो पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि असेवितब्बो पी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा पुग्गलं—'इमं खो मे पुग्गलं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ति; ये च खो मे पब्बजितेन जीवितपरिक्खारा समुदानेतब्बा चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्ज-परिक्खारा ते च कसिरेन समुदागच्छन्ति; यस्स चम्हि अत्थाय अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो सो च मे सामञ्ञत्थो न भावनापारिपूरिं गच्छती' ति, तेनावुसो, पुग्गलेन सो पुग्गलो रत्तिभागं वा दिवसभागं वा सङ्खा पि अनापुच्छा पक्कमितब्बं नानुबन्धितब्बो।

''तत्थ यं जञ्ञा पुग्गलं—'इमं खो मे पुग्गलं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ति; ये च खो मे पब्बजितेन जीवितपरिक्खारा समुदानेतब्बा चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारा ते च अप्पकसिरेन समुदागच्छन्ति; यस्स चम्हि अत्थाय अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो सो च मे सामञ्ञत्थो न भावनापारिपूरिं गच्छती' ति, तेनावुसो, पुग्गलेन सो पुग्गलो सङ्खा पि अनापुच्छा पक्कमितब्बं नानु-बन्धितब्बो।

करने योग्य होता है, कोई नहीं। चीवर भी दो प्रकार का होता है—कोई सेवनीय (पहनने योग्य) एवं कोई असेवनीय (न पहनने योग्य)। पिण्डपात (भोजन) भी दो प्रकार का होता है—कोई सेवनीय (खाने योग्य) होता है, कोई नहीं। शयनासन (शय्या) भी दो प्रकार का होता है—कोई सेवनीय (सोने योग्य) होता है, कोई नहीं। ग्राम या निगम भी दो प्रकार का होता है—कोई सेवनीय (रहने योग्य) होता है, कोई नहीं। कोई जनपदप्रदेश भी दो प्रकार का होता है—कोई सेवनीय (रहने योग्य) होता है, कोई नहीं।

३. '''आयुष्मानो! पुद्गल भी दो प्रकारका होता है—सेवनीय भी, असेवनीय भी'—यह जो कहा, यह किस कारण कहा? वहाँ जिस पुद्गल के विषय में यह निश्चय हो जाय कि इसके साथ रहनेसे अकुशल धर्मों में वृद्धि होगी, कुशल धर्म क्षीण होंगे, तथा प्रव्रजित को जिन जीवनोपयोगी चीवर पिण्डपात शयनाशन आदि वस्तुएँ भी सुलभता से प्राप्त नहीं होतीं, तथा जिस श्रामण्य की प्राप्ति के लिये घर छोड़ कर यह प्रव्रज्या (श्रामण्य) ली गयी है, उसकी साधना भी पूर्णता की ओर नहीं बढ पा रही है तो, भिक्षुओ! उस साधक पुद्गल को, विना कोई सोच विचार किये, दिन या रात में किसी भी समय उस दुर्वृत्त पुद्गल का साथ छोड़ देना चाहिये।

''जब किसी पुद्गल के विषय में यह निश्चय हो जाय कि इस के साथ रहने से अकुशल धर्म

"तत्थ यं जञ्ञा पुग्गलं—'इमं खो मे पुग्गलं सेवतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति; ये च खो मे पब्बजितेन जीवितपरिक्खारा समुदाने- [R.367] तब्बा चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारा ते च कसिरेन समुदागच्छन्ति; यस्स चम्हि अत्थाय अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो सो च मे सामञ्ञत्थो भावनापारिपूरिं गच्छती' ति, तेनावुसो, पुग्गलेन सो पुग्गलो सङ्खा पि अनुबन्धितब्बो न पक्कमितब्बं।

"तत्थ यं जञ्ञा पुग्गलं—'इमं खो मे पुग्गलं सेवतो अकुसला धम्मा [B.176] परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति; ये च खो मे पब्बजितेन जीवितपरिक्खारा समुदानेतब्बा चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारा ते च अप्प- [N.16] कसिरेन समुदागच्छन्ति; यस्स चम्हि अत्थाय अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो सो च मे सामञ्ञत्थो भावनापारिपूरिं गच्छती' ति, तेनावुसो, पुग्गलेन सो पुग्गलो यावजीवं अनुबन्धितब्बो न पक्कमितब्बं अपि पनुज्जमानेन। 'पुग्गलो पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि असेवितब्बो पी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

४. "'चीवरं पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बं—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा चीवरं—'इदं खो मे चीवरं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ती' ति, एवरूपं चीवरं न सेवितब्बं। तत्थ यं जञ्ञा चीवरं—'इदं खो मे चीवरं सेवतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ती' ति, एवरूपं चीवरं सेवितब्बं। 'चीवरं पि, आवुसो, [R.368] दुविधेन वेदितब्बं—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

बढेंगे, कुशल धर्म क्षीण होंगे ...पूर्ववत्... किसी भी समय उस दुर्वृत्त पुद्गल का साथ छोड़ देना चाहिये। (क)

"जब किसी पुद्गल के विषय में यह निश्चय हो जाय कि इस के साथ रहने से अकुशल धर्म क्षीण हो रहे हैं तथा कुशल धर्म क्षीण हो रहे हैं और जीवनोपयोगी चीवर पिण्डपात आदि परिश्रम करने पर मिल जाते हैं...पूर्ववत्... वैसे पुद्गल का कभी साथ नहीं छोड़ना चाहिये, उसके साथ ही लगे रहना चाहिये। (ख)

"जब किसी पुद्गल के विषय में ...पूर्ववत्... अल्पपरिश्रम से ही मिल जाते हैं ...पूर्ववत्... तो ऐसे पुद्गल का साथ, बलपूर्वक छुड़ाये जाने पर भी, नहीं छोड़ना चाहिये। (ग)

"आयुष्मानो! 'पुद्गल भी दो प्रकार का जानना चाहिये—सेवनीय एवं असेवनीय'—यह जो कहा था वह इसी अभिप्राय से कहा था। (१)

४. "'चीवर को भी, आयुष्मानो! दो प्रकार का जानना चाहिये—१. सेवनीय, तथा २. असेवनीय'—यह जो कहा था वह किस कारण कहा था? वहाँ जिस चीवर के विषय में साधक यह जान जाय कि इस चीवर को धारण करने से मेरे अकुशल धर्म बढते हैं तथा कुशल धर्म क्षीण होते हैं, तब ऐसे चीवर को नहीं धारण करना चाहिये; और जिस चीवर के धारण करने से अकुशल धर्म

५. '''पिण्डपातो पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि असेवितब्बो पी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा पिण्डपातं—'इमं खो मे पिण्डपातं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ती' ति, एवरूपो पिण्डपातो न सेवितब्बो। तत्थ यं जञ्ञा पिण्डपातं—'इमं खो मे पिण्डपातं सेवतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ती' ति, एवरूपो पिण्डपातो सेवितब्बो। 'पिण्डपातो पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि असेवितब्बो पी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

६. '''सेनासनं पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बं—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा पि सेनासनं—'इदं खो मे सेनासेनं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ती' ति, एवरूपं सेनासनं न सेवितब्बं। तत्थ यं जञ्ञा सेनासनं—'इदं खो मे सेनासनं सेवतो अकुसला [B.177] धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ती' ति, एवरूपं सेनासनं सेवितब्बं। 'सेनासनं पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बं—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

[N.16] ७. '''गामनिगमो पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि असेवितब्बो पी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा गामनिगमं—'इमं खो मे गामनिगमं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ती' ति, एवरूपो गामनिगमो न सेवितब्बो। तत्थ यं जञ्ञा गामनिगमं—'इमं खो, मे गामनिगमं

क्षीण होते हों तथा कुशल धर्मों की वृद्धि होती हो तो ऐसे चीवर धारण करने चाहियें। 'चीवर को भी आयुष्मानो! ...पूर्ववत्... असेवनीय'—यह जो कहा था वह इसी कारण से कहा था। (२)

५. '''पिण्डपात भी, आयुष्मानो! दो प्रकार का ...पूर्ववत्...'—यह जो कहा था किस कारण से कहा था? जिस पिण्डपात (भोजन) के खाने से अकुशल धर्म बढते हो, तथा कुशल धर्म क्षीण होते हों अकुशल धर्म बढते हों—ऐसे पिण्डपात का सेवन नहीं करना चाहिये तथा जिस पिण्डपात के सेवन से कुशल धर्म बढते हों तथा अकुशल धर्म क्षीण होते हों—ऐसे पिण्डपात का सेवन करना चाहिये। ...पूर्ववत्...। (३)

६. '''शयनासन भी, आयुष्मानो! दो प्रकार का ...पूर्ववत्...'—यह जो कहा था किस कारण से कहा था? ...जिस शयनासन के उपयोग से अकुशल धर्म बढते हों और कुशल धर्म क्षीण होते हों, ऐसे शयनासन का उपयोग नहीं करना चाहिये तथा जिस के उपयोग से अकुशल धर्म क्षीण होते हों और कुशल धर्म बढते हों ऐसे शयनासन का ही उपयोग करना चाहिये। ...पूर्ववत्...। (४)

७. '''ग्राम निगम भी, आयुष्मानो! दो प्रकार का ...पूर्ववत्...'—यह जो कहा था वह किस कारण कहा था? ...जिस ग्राम या निगम में रहने से अकुशल धर्म बढते हों तथा कुशल धर्म क्षीण होते हों ऐसे ग्रामनिगम में नहीं रहना चाहिये। और जिस ग्राम निगम में रहने से अकुशल धर्म क्षीण होते हों और कुशल धर्म बढते हों ऐसे ग्राम निगम में रहना चाहिये। ...पूर्ववत्...। (५)

सेवतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ती' ति, एवरूपो गामनिगमो सेवितब्बो। 'गामनिगमो पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि [R.369] असेवितब्बो पी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

८. "'जनपदपदेसो पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि असेवितब्बो पी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा जनपदपदेसं—'इमं खो मे जनपदपदेसं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ती' ति, एवरूपो जनपदपदेसो न सेवितब्बो। तत्थ यं जञ्ञा जनपदपदेसं—'इमं खो मे जनपदपदेसं सेवतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ती' ति, एवरूपो जनपदपदेसो सेवितब्बो। 'जनपदपदेसो पि, आवुसो, दुविधेन वेदितब्बो—सेवितब्बो पि असेवितब्बो पी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं'' ति॥ ●

७. सुतवासुत्तं : १. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति गिज्झकूटे पब्बते। अथ खो सुतवा परिब्बाजको येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सुतवा परिब्बाजको भगवन्तं एतदवोच—

२. "एकमिदाहं, भन्ते, समयं भगवा इधेव राजगहे विहरामि गिरिब्बजे। तत्र मे, भन्ते, भगवतो सम्मुखा पटिग्गहितं—'यो सो, सुतवा, भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो [B.178] सम्मदञ्ञा विमुत्तो, अभब्बो सो पञ्च ठानानि अज्झाचरितुं— अभब्बो खीणासवो [R.370]

---

८. "'जनपद प्रदेश भी, आयुष्मानो! दो प्रकार का ...पूर्ववत्...—यह जो कहा था वह किस कारण से कहा था? ...जिस जनपद में वास कहने से अकुशल धर्म बढते हों तथा कुशल धर्म क्षीण होते हों ऐरो जनपद में नहीं रहना चाहिये। और जिस जनपद में वास करने से कुशल धर्म बढते हों तथा अकुशल धर्म क्षीण होते हों ऐसे जनपद में वास करना चाहिये। ...पूर्ववत्... वह इसी कारण से कहा था।" (६) ●

७. श्रुतवान् सूत्र : : क्षीणाश्रव के अयोग्य नौ कर्म

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) राजगृह के गृध्रकूट पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। तब कोई श्रुतवान् नामक परिव्राजक भगवान् के सम्मुख आया। कुशल मङ्गल प्रश्नानन्तर वह एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उसने भगवान् से यह निवेदन किया—

२. "एक समय, भन्ते! मैं इसी राजगृह के गिरिव्रज में साधनाहेतु ठहरा हुआ था। उस समय, भन्ते! आपके ही श्रीमुख से सुना था ऐसा स्मरण हो रहा है—'श्रुतवन्! जो भिक्षु चित्त के सभी विकार क्षीण होने के बाद अर्हत्त्व प्राप्त कर धर्मसाधना में सफल हो चुका है, अपने सभी कर्तव्य पूर्ण कर चुका है, जिसने अपने कन्धों से समस्त सांसारिक भार उतार फेंका है, जिस के सांसारिक बन्धन (भवसंयोजन) क्षीण हो चुके हैं, जो सम्यग्ज्ञान प्राप्त कर विमुक्त हो चुका है, जो सदर्थ (निर्वाण) तक पहुँच चुका है, उसके द्वारा ये पाँच कर्म किये जाने सम्भव ही नहीं हैं—१. वह जान बूझ कर

[N.18] भिक्खु सञ्चिच्च पाणं जीविता वोरोपेतुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु अदिन्नं थेय्यसङ्खातं आदातुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु मेथुनं धम्मं पटिसेवितुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु सम्पजानमुसा भासितुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु सन्निधिकारकं कामे परिभुञ्जितुं सेय्यथापि पुब्बे अगारियभूतो' ति। कच्चि मेतं, भन्ते, भगवतो सुस्सुतं सुग्गहितं सुमनसि- कतं सूपधारितं'' ति?

३. ''तग्घ ते एतं, सुतवा, सुस्सुतं सुग्गहितं सुमनसिकतं सूपधारितं। पुब्बे चाहं, सुतवा, एतरहि च एवं वदामि—'यो सो भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञाविमुत्तो, अभब्बो सो नव ठानानि अज्झाचरितुं—अभब्बो खीणासवो भिक्खु सञ्चिच्च पाणं जीविता वोरोपेतुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु अदिन्नं थेय्यसङ्खातं आदातुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु मेथुनं धम्मं पटिसेवितुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु सम्पजानमुसा भासितुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु सन्निधिकारकं कामे परिभुञ्जितुं सेय्यथापि पुब्बे अगारियभूतो, अभब्बो खीणासवो [R.371] भिक्खु छन्दागतिं गन्तुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु दोसागतिं गन्तुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु मोहागतिं गन्तुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु भयागतिं गन्तुं'। पुब्बे चाहं, सुतवा, एतरहि च एवं वदामि—'यो सो भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञाविमुत्तो, अभब्बो सो इमानि नव ठानानि अज्झाचरितुं' '' ति॥ ●

८. **सज्झसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति गिज्झकूटे पब्बते। अथ खो सज्झो परिब्बाजको येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि।

किसी प्राणी की हत्या करे; २. किसी की अदत्त वस्तु को उठा (चोरी कर) ले; ३. किसी प्रकार के मैथुन धर्म का सेवन करे; ४. असत्य भाषण करे; या ५. किसी प्रकार के वैसे कर्म करे जो उसने गृहस्थ धर्म में रहते हुए किये हों। क्या, भन्ते! मैने यह सदुपदेश आप के ही श्रीमुख से सुना है, तथा मैंने इस का उचित स्मरण रखा है?''

३. ''श्रुतवन्! निश्चय ही तुमने मेरा यह उपदेश ठीक सुना है तथा ठीक तरह से मन में धारण भी किया है। मैने पहले भी बहुत बार यह कहा है और आज भी यही कहता हूँ—'जो भिक्षु चित्त के सभी विकार क्षीण होने के बाद ...पूर्ववत्... कोई क्षीणाश्रव ६. भिक्षु स्वेच्छाचारी नहीं हो सकता, ७. वह न किसी से द्वेष करता है, ८. न किसी से मोह (आसक्ति) रखता है और ९. न किसी वस्तु से भयाक्रान्त ही होता है।' श्रुतवन्! मैं पहले भी अनेक बार कह चुका हूँ और आज भी यही कहता हूँ कि जो भिक्षु चित्त के सभी विकार क्षीण होने के बाद अर्हत्त्व ...पूर्ववत्... निर्वाण तक पहुँच चुका है, उसके द्वारा ये (उपर्युक्त) नौ (९) कर्म किये जाने असम्भव ही हैं॥'' ●

क्षीणास्त्रव के लिये अयोग्य नौ कर्म

८. सज्झ सूत्र : :

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) राजगृह के गृध्रकूट पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। उस अवसर पर कोई सज्झ नामक परिव्राजक ...पूर्ववत्... उसने भगवान् से यह जिज्ञासा प्रकट की—

सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो [B.179] सज्झो परिब्बाजको भगवन्तं एतदवोच—

२. "एकमिदाहं, भन्ते, समयं भगवा इधेव राजगहे विहरामि गिरिब्बजे। [N.19] तत्र मे, भन्ते, भगवतो सम्मुखा सुतं सम्मुखा पटिग्गहितं—'यो सो, सज्झ, भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञाविमुत्तो, अभब्बो सो पञ्च ठानानि अज्झाचरितुं— अभब्बो खीणासवो भिक्खु अदिन्नं थेय्यसङ्खातं, आदातुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु मेथुनं धम्मं पटिसेवितुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु सम्पजानमुसा भासितुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु सन्निधिकारकं कामे परिभुञ्जितुं सेय्यथापि पुब्बे अगारियभूतो' ति। कच्चि मेतं, भन्ते, भगवतो सुस्सुतं सुग्गहितं सुमनसिकतं सूपधारितं" ति?

३. "तग्घ ते एतं, सज्झ, सुस्सुतं सुग्गहितं सुमनसिकतं सूपधारितं। पुब्बे [R.372] चाहं, सज्झ, एतरहि च एवं वदामि—'यो सो भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कत-करणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञाविमुत्तो, अभब्बो सो नव ठानानि अज्झाचरितुं—अभब्बो खीणासतो भिक्खु सञ्चिच्च पाणं जीविता वोरोपेतुं, ...पे०... अभब्बो खीणासवो भिक्खु सन्निधिकारकं कामे परिभुञ्जितुं सेय्यथापि पुब्बे अगारियभूतो, अभब्बो खीणासवो भिक्खु बुद्धं पच्चक्खातुं, ...धम्मं पच्चाक्खातुं, ...सङ्घं पच्चाक्खातुं, अभब्बो खीणासवो भिक्खु सिक्खं पच्चक्खातुं'। पुब्बे चाहं, सज्झ, एतरहि च एवं वदामि—'यो सो भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो

---

२. "एक समय, भन्ते! इसी राजगृह के गिरिव्रज ...पूर्ववत्... किसी प्रकार के वे कर्म करे जो उसने गृहस्थ धर्म में रहते हुए किये हों। क्या, भन्ते! मैने यह सदुपदेश आपके ही श्रीमुख से सुना है तथा ठीक से समझा है, अपने मन में बैठाया है?

३. "हाँ, सज्झ! तुमने मुझ से ठीक ही सुना है, अपने मन में ठीक से बैठाया भी है। सज्झ! मैं पहले भी अनेक बार कह चुका हूँ और अब भी यही कहता हूँ—'जो भिक्षु चित्त के सभी विकार क्षीण हो जाने के बाद ...पूर्ववत्... कोई भिक्षु बुद्ध की निन्दा नहीं कर सकता, धर्म की निन्दा नहीं कर सकता, सङ्घ की निन्दा नहीं कर सकता, तथा बुद्धोपदिष्ट शिक्षा का प्रत्याख्यान (निषेध) नहीं कर सकता।' सज्झ! मैं पहले भी अनेक बार कह चुका हूँ और अब भी यह कह रहा हूँ 'क्षीणाश्रव...भिक्षु द्वारा ये उपर्युक्त नौ (९) कर्म होने असम्भव हैं॥" ●

९. पुद्गल सूत्र : : लोक में नव विध पुद्गल

१. "भिक्षुओ! लोक में ये नौ (९) प्रकार के पुद्गल मिलते हैं। कौन से नौ? (१) अर्हत्, (२) अर्हत्त्व मार्ग पर आरूढ, (३) अनागामी, (४) अनागामिफल के साक्षात्कार में लगा हुआ, (५) सकृदागामी, (६) सकृदागामिफल के साक्षात्कार में लगा हुआ, (७) स्रोतआपन्न, (८) स्रोतआपत्तिफल के साक्षात्कार में लगा हुआ तथा (९) पृथग्जन—भिक्षुओ! ये नवविध पुद्गल लोक में विद्यमान हैं॥" ●

ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञाविमुत्तो, अभब्बो सो इमानि नव ठानानि अज्झाचरितुं' '' ति॥ ●

९. पुग्गलसुत्तं : १. ''नवयिमे, भिक्खवे, पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं। कतमे नव ? अरहा, अरहत्ताय पटिपन्नो, अनागामी, अनागामिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो, सकदागामी, सकदागामिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो, सोतापन्नो, सोतापत्तिफल- [N.20, B.180] सच्छिकिरियाय पटिपन्नो, पुथुज्जनो—इमे खो, भिक्खवे, नव पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं'' ति॥ ●

[R.373] **१०. आहुनेय्यसुत्तं :** १. ''नवयिमे, भिक्खवे, पुग्गला आहुनेय्या पाहुनेय्या दक्खिनेय्या अञ्जलिकरणीया अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमे नव ? अरहा, अरहत्ताय पटिपन्नो, अनागामी, अनागामिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो, सकदागामी, सकदागामिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो, सोतापन्नो, सोतापत्तिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो, गोत्रभू—इमे खो, भिक्खवे, नव पुग्गला आहुनेय्या ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

सम्बोधिवग्गो पठमो॥

तस्सुद्दानं

सम्बोधि निस्सयो चेव, मेघिय नन्दकं बलं।
सेवना सुतवा सञ्झो, पुग्गलो आहुनेय्येन चा ति॥ ●

---

१०. आह्वनीय सूत्र : : लोक में अन्य नवविध पुद्गल

१. ''भिक्षुओ! लोक में ये नवविध पुद्गल आह्वनीय, प्राह्वणीय, दक्षिणेय, अञ्जलिकरणीय (प्रणम्य) तथा लोक के लिये अद्वितीय पुण्यभूमि हैं। कौन से नौ ? (१) अर्हत्, (२) अर्हत्त्व मार्गारूढ, (३) अनागामी, (४) अनागामिफल के साक्षात्कार में लगा हुआ, (५) सकृदागामी, (६) सकृदागामिफल के साक्षात्कार में लगा हुआ, (७) स्रोतआपन्न, (८) स्रोतआपत्तिफल के साक्षात्कार में लगा हुआ, एवं (९) गोत्रभू—भिक्षुओ! ये नौ पुद्गल आहवनीय...पूर्ववत्... लोक के लिये अद्वितीय पुण्यभूमि हैं॥'' ●

सम्बोधिवर्ग प्रथम सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. सम्बोधिसूत्र, २. निश्रयसूत्र, ३. मेघियसूत्र, ४. नन्दकसूत्र, ५. बलसूत्र, ६. सेवनासूत्र, ७. श्रुतवान् सूत्र ८. सज्झसूत्र, ९. पुद्गलसूत्र एवं १०. आह्वनीय सूत्र॥

२. सीहनादवग्गो

१. सीहनादसुत्तं : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथ-पिण्डिकस्स आरामे। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—"वुत्थो मे, भन्ते, सावत्थियं वस्सावासो। इच्छामहं, भन्ते, जनपदचारिकं पक्कमितुं" ति।

"यस्सदानि त्वं, सारिपुत्त, कालं मञ्ञसी" ति।

२. अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि। अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु अचिरपक्कन्ते आयस्मन्ते सारिपुत्ते भगवन्तं [R.374] एतदवोच—"आयस्मा मं, भन्ते, सारिपुत्तो आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज चारिकं [N.21] पक्कन्तो" ति। अथ खो भगवा अञ्ञतरं भिक्खुं आमन्तेसि—"एहि त्वं, भिक्खु, [B.181] मम वचनेन सारिपुत्तं आमन्तेहि—'सत्था तं, आवुसो सारिपुत्त, आमन्तेती' " ति। "एवं, भन्ते" ति खो सो भिक्खु भगवतो पटिस्सुत्वा येनायस्मा सारिपुत्तो तेनुपसङ्कमि; उप-सङ्कमित्वा आयस्मन्तं सारिपुत्तं एतदवोच—"सत्था तं, आवुसो सारिपुत्त, आमन्तेती" ति। "एवमावुसो" ति खो आयस्मा सारिपुत्तो तस्स भिक्खुनो पच्चस्सोसि।

३. तेन खो पन समयेन आयस्मा च महामोग्गल्लानो आयस्मा च आनन्दो

---

२. सिंहनादवर्ग

१. सिंहनादसूत्र : : सारिपुत्र द्वारा स्वचरित्रवर्णन

१. एक समय भगवान् बुद्ध श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवनविहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस अवसर पर आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् के सम्मुख आये... भगवान् से यह निवेदन किया—"भन्ते! मैने श्रावस्ती में वर्षावास पूर्ण कर लिया है। अत: अब मैं जनपदचारिका (पदयात्रा) करना चाहता हूँ।"

"सारिपुत्र! जैसा तुम उचित समझते हो वैसा करो।"

२. तब आयुष्मान् सारिपुत्र वहाँ से उठ कर, भगवान् को प्रणाम प्रदक्षिणा कर चले गये। उन के जाने के कुछ ही समय बाद, कोई भिक्षु भगवान् से यह निवेदन करने लगा—"भन्ते! आयुष्मान् सारिपुत्र मुझको पहले अपनी मण्डली में मिला कर भी अन्त में (अकेला) छोड़ कर चले गये।" तब भगवान् ने एक भिक्षु को आदेश दिया—"जाओ, भिक्षु! मेरी आज्ञा से तुम सारिपुत्र को यह कह कर यहाँ बुला लाओ कि आयुष्मन् सारिपुत्र! शास्ता आप को बुला रहे हैं।" "अच्छा भन्ते!" कहते हुए उस भिक्षु ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य कर आयुष्मांन् सारिपुत्र के पास जाकर कहा—"आयुष्मन् सारिपुत्र! शास्ता आप को बुला रहे हैं।" "अच्छा, आयुष्मन्"—कहते हुए आयुष्मान् सारिपुत्र ने उस भिक्षु को उत्तर दिया।

३. उसी समय आयुष्मान् महामौद्गल्यायन एवं आयुष्मान् आनन्द चाभी हाथ में ले कर

अवापुरणं आदाय विहारे आहिण्डन्ति—''अभिक्कमथायस्मन्तो, अभिक्कमथायस्मन्तो! इदानायस्मा सारिपुत्तो भगवतो सम्मुखा सीहनादं नदिस्सती'' ति। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं सारिपुत्तं भगवा एतदवोच—''इध ते, सारिपुत्त, अञ्ञतरो सब्रह्मचारी खीयनधम्मं आपन्नो—'आयस्मा मं, भन्ते, सारिपुत्तो आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज-चारिकं पक्कन्तो' '' ति।

४. ''यस्स नून, भन्ते, काये कायगतासति अनुपट्ठिता अस्स, सो इध अञ्ञतरं सब्रह्मचारिं आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज चारिकं पक्कमेय्य।

५. ''सेय्यथापि, भन्ते, पथवियं सुचिं पि निक्खिपन्ति असुचिं पि निक्खिपन्ति गूथगतं पि निक्खिपन्ति मुत्तगतं पि निक्खिपन्ति खेळगतं पि निक्खिपन्ति पुब्बगतं पि निक्खिपन्ति लोहितगतं पि निक्खिपन्ति, न च तेन पथवी अट्टीयति वा हरायति वा [R.375] जिगुच्छति वा; एवमेव खो अहं, भन्ते, चेतसा विहरामि विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। यस्स नून, भन्ते, काये कायगतासति अनुपट्ठिता अस्स, सो इध अञ्ञतरं सब्रह्मचारिं आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज चारिकं पक्कमेय्य।

[N.22] ६. ''सेय्यथापि, भन्ते, आपस्मिं सुचिं पि धोवन्ति असुचिं पि धोवन्ति गूथगतं पि... मुत्तगतं पि... खेळगतं पि... पुब्बगतं पि... लोहितगतं पि धोवन्ति, न च तेन आपो अट्टीयति वा हरायति वा जिगुच्छति वा; एवमेव खो अहं, भन्ते, आपोसमेन चेतसा विहरामि विपुलेन

भिक्षुआवास में घूम घूम कर यह कहने लगे—''आओ, भिक्षुओ! आओ! आज आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् के सम्मुख सिंहनाद (दृढता) पूर्वक अपने चरित्र की वास्तविकता का वर्णन करेंगे।'' तदनन्तर आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् के सम्मुख आये ...पूर्ववत्... उन से भगवान् ने पूछा—''क्या, सारिपुत्र! तुमने अपने व्यवहार से किसी भिक्षु को दु:खी (अप्रसन्न) कर दिया! वह कह रहा है कि आयुष्मान् सारिपुत्र मुझ को पहले अपनी मण्डली में मिला कर भी अन्त में मुझे यहीं छोड़ कर चले गये?''

४. ''भन्ते! जिस के शरीर में कायगता स्मृति न रह गयी हो वही ऐसा प्रमाद कर सकता है कि वह पहले अपने किसी सब्रह्मचारी को अपनी मण्डली में मिला कर भी अन्त में (चारिका करते समय) उसको छोड़कर आगे (चारिका पर) चल दे।

५. ''जैसे, भन्ते! लोग पृथ्वी पर स्वच्छ या अस्वच्छ—सभी प्रकार की वस्तुएँ फेंकते हैं; वे वहाँ मल का भी उत्सर्जन करते हैं, मूत्र का भी; थूकते भी हैं और शरीर की रक्त, पूय आदि मलिन एवं घृणास्पद वस्तुएँ भी फेंकते रहते हैं; परन्तु इस सर्वविध प्रक्षेपण से पृथ्वी को न कोई जुगुप्सा होती है, न कोई ग्लानि। वैसे ही, भन्ते! मैं भी इस पृथ्वी के समान ही विपुल, महद्गत, अप्रमाण, निर्वैर एवं निर्द्वेष चित्त से यहाँ विचरण करता हूँ। अत: मेरा निवेदन यही है कि जिस के शरीर में कायगत स्मृति न रह गयी हो वही ऐसा प्रमाद कर सकता है कि वह अपने किसी सब्रह्मचारी को पहले अपनी मण्डली में मिला कर भी अन्त में उसको छोड़ कर आगे चारिकाहेतु चल दे।

महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। यस्स नून, भन्ते, काये कायगतासति [B.182] अनुपट्ठिता अस्स, सो इध अञ्ञतरं सब्रह्मचारिं आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज चारिकं पक्कमेय्य।

७. ''सेय्यथापि, भन्ते, तेजो सुचिं पि डहति असुचिं पि डहति गूथगतं पि... मुत्तगतं पि... खेळगतं पि... पुब्बगतं पि... लोहितगतं पि डहति, न च तेन तेजो अट्टीयति वा हरायति वा जिगुच्छति वा; एवमेव खो अहं, भन्ते, तेजोसमेन चेतसा विहरामि विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। यस्स नून, भन्ते, काये कायगतासति अनुपट्ठिता अस्स, सो इध अञ्ञतरं सब्रह्मचारिं आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज चारिकं पक्कमेय्य।

८. ''सेय्यथापि, भन्ते, वायो सुचिं पि उपवायति असुचिं पि उपवायति गूथगतं पि... मुत्तगतं पि... खेळगतं पि... पुब्बगतं पि... लोहितगतं पि उपवायति, न च तेन वायो अट्टीयति वा हरायति वा जिगुच्छति वा; एवमेव खो अहं, भन्ते, वायोसमेन चेतसा विहरामि विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। यस्स नून, भन्ते, काये कायगतासति अनुपट्ठिता अस्स, सो इध अञ्ञतरं सब्रह्मचारिं आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज चारिकं पक्कमेय्य।

९. ''सेय्यथापि, भन्ते, रजोहरणं सुचिं पि पुञ्छति असुचिं पि पुञ्छति [R.376] गूथगतं पि... मुत्तगतं पि... खेळगतं पि... पुब्बगतं पि... लोहितगतं पि पुञ्छति, न च तेन रजोहरणं अट्टीयति वा हरायति वा जिगुच्छति वा; एवमेव खो अहं, भन्ते, रजोहरणसमेन चेतसा विहरामि विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। यस्स नून, भन्ते, काये कायगतासति अनुपट्ठिता अस्स, सो इध अञ्ञतरं सब्रह्मचारिं आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज चारिकं पक्कमेय्य।

१०. ''सेय्यथापि, भन्ते, चण्डालकुमारको वा चण्डालकुमारिका वा कळोपिहत्थो नन्तकवासी गामं वा निगमं वा पविसन्तो नीचचित्तंयेव उपट्ठपेत्वा [N.23] पविसति; एवमेव खो अहं, भन्ते, चण्डालकुमारकचण्डालकुमारिकासमेन चेतसा विहरामि विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। यस्स नून, भन्ते, काये कायगतासति

---

६. ''जैसे, भन्ते! लोग जल में स्वच्छ या अस्वच्छ—सभी प्रकार की वस्तुएँ बहाते रहते हैं ...पूर्ववत्... आगे चारिका हेतु चल दे।

७. ''जैसे, भन्ते! लोग अग्नि में स्वच्छ या अस्वच्छ—सभी प्रकार की वस्तुएँ जलाते रहते हैं ...पूर्ववत्... आगे चारिका हेतु चल दे।

८. जैसे, भन्ते! लोग वायु में स्वच्छ या अस्वच्छ—सभी प्रकार की वस्तुएँ उडाते रहते हैं ...पूर्ववत्... आगे चारिकाहेतु चल दे।

९. ''जैसे, भन्ते! झाड़ू, स्वच्छता करते समय; स्वच्छ या अस्वच्छ—सभी प्रकार की वस्तुओं को बुहारती चलती है ...पूर्ववत्... आगे चारिका हेतु चल दे।

१०. ''जैसे कोई चाण्डालपुत्र या चाण्डालकुमारी हाथ में भिक्षापात्र ले कर ग्राम या निगम

[B.183] अनुपट्ठिता अस्स, सो इध अञ्ञतरं सब्रह्मचारिं आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज चारिकं पक्कमेय्य।

११. "सेय्यथापि, भन्ते, उसभो छिन्नविसाणो सूरतो सुदन्तो सुविनीतो रथियाय रथियं सिङ्घाटकेन सिङ्घाटकं अन्वाहिण्डन्तो न किञ्चि हिंसति पादेन वा विसाणेन वा; एवमेव खो अहं, भन्ते, उसभछिन्नविसाणसमेन चेतसा विहरामि विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। यस्स नून, भन्ते, काये कायगतासति अनुपट्ठिता अस्स, सो इध अञ्ञतरं सब्रह्मचारिं आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज चारिकं पक्कमेय्य।

१२. "सेय्यथापि, भन्ते, इत्थी वा पुरिसो वा दहरो युवा मण्डनकजातिको सीसं-[B.377] न्हातो अहिकुणपेन वा कुक्कुरकुणपेन वा मनुस्सकुणपेन वा कण्ठे आसत्तेन अट्टीयेय्य हरायेय्य जिगुच्छेय्य; एवमेव खो अहं, भन्ते, इमिना पूतिकायेन अट्टीयामि हरायामि जिगुच्छामि। यस्स नून, भन्ते, काये कायगतासति अनुपट्ठिता अस्स, सो इध अञ्ञतरं सब्रह्मचारिं आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज चारिकं पक्कमेय्य।

१३. "सेय्यथापि, भन्ते, पुरिसो मेदकथालिकं परिहरेय्य छिद्दावछिद्दं उग्घरन्तं पग्घरन्तं; एवमेव खो अहं, भन्ते, इमं कायं परिहरामि छिद्दावछिद्दं उग्घरन्तं पग्घरन्तं। यस्स नून, भन्ते, काये कायगतासति अनुपट्ठिता अस्स, सो इध अञ्ञतरं सब्रह्मचारिं आसज्ज अप्पटिनिस्सज्ज चारिकं पक्कमेय्या" ति।

१४. अथ खो सो भिक्खु उट्ठायासना एकंसं उत्तरासङ्गं करित्वा भगवतो पादेसु सिरसा निपतित्वा भगवन्तं एतदवोच—"अच्चयो मं, भन्ते, अच्चगमा यथाबालं यथामूळ्हं [N.24] यथाअकुसलं, यो अहं आयस्मन्तं सारिपुत्तं असता तुच्छा मुसा अभूतेन अब्भाचिक्खिं। तस्स मे, भन्ते, भगवा अच्चयं अच्चयतो पटिग्गण्हतु आयतिं संवराया" ति।

में प्रवेश करते समय नीचा शिर किये हुए ही चलते हैं, उसी प्रकार, भन्ते! मैं उक्त चण्डालपुत्र के समान ...पूर्ववत्... आगे चारिकाहेतु चल दे।

११. "जैसे, भन्ते! कोई सुशिक्षित, सुन्दर बैल, जिस के सींगों के अग्रभाग कटे हुए हों, गली गली, चौराहे चौराहे घूमता हुआ भी किसी को पैरों या सींगों से चोट नहीं पहुँचाता है; उसी प्रकार ... आगे चारिकाहेतु चल दे।

१२. "जैसे, भन्ते! कोई युवति स्त्री या पुरुष स्नान कर शरीर को सर्वथा अलंकृत कर गले में मरा हुआ साँप या मरे कुत्ते का शव डाल कर चलता हो तब उससे साथ चलने वाले लोग घृणा करते हैं, ग्लानि मानते हैं; उसी प्रकार मैं भी अपने इस अपवित्र काय को देखने से घृणा करता हूँ। ...पूर्ववत्... आगे चारिका हेतु चल दे।

१३. "जैसे, भन्ते! कोई सभ्य पुरुष चर्वी भूनने के पात्र को इधर उधर घुमा कर देखने से घृणा करता है, ग्लानि करता है, उसी प्रकार मैं भी अपने इस मलिन (गन्दे) शरीर से घृणा करता हूँ ...पूर्ववत्... आगे चारिकाहेतु चल दे"।

१४. तब (यह सुन कर) वह भिक्षु आसन से उठ कर अपने उत्तरासङ्ग को एक कन्धे पर

"तग्घ तं, भिक्खु, अच्चयो अच्चगमा यथाबालं यथामूळ्हं यथाअकुसलं, यो त्वं सारिपुत्तं असता तुच्छा मुसा अभूतेन अब्भाचिक्खि। यतो च खो त्वं, भिक्खु, अच्चयं अच्चयतो दिस्वा यथाधम्मं पटिकरोसि, तं ते मयं पटिग्गण्हाम। वुड्ढि हेसा, भिक्खु, [B.184] अरियस्स विनये यो अच्चयं अच्चयतो दिस्वा यथाधम्मं पटिकरोति आयतिं संवरं आपज्जती" ति।

१५. अथ खो भगवा आयस्मन्तं सारिपुत्तं आमन्तेसि—"खम, सारिपुत्त, [R.378] इमस्स मोघपुरिसस्स। पुरा तस्स तत्थेव सत्तधा मुद्धा फलती" ति।

"खमामहं, भन्ते, तस्स आयस्मतो सचे मं सो आयस्मा एवमाह—'खमतु च मे सो आयस्मा' " ति॥ ●

२. सउपादिसेससुत्तं : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्त-चीवरमादाय सावत्थिं पिण्डाय पाविसि। अथ खो आयस्मतो सारिपुत्तस्स एतदहोसि— "अतिप्पगो खो ताव सावत्थियं पिण्डाय चरितुं, यन्नूनाहं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यं" ति। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा तेहि अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि।

कर, भगवान् के चरणों में शिर टिका कर उनसे यह निवेदन करने लगा—"भन्ते! मुझ से वही प्रमाद हो गया जो एक मूर्ख या उन्मत्त किया करता है कि मैने आर्य सारिपुत्र पर यह असत्य और मिथ्या आरोप लगाया। भन्ते! मेरे इस कृत्य को अपराध समझ कर क्षमा कर दें। भविष्य में मैं ऐसा प्रमाद कभी नहीं करूँगा।"

"हाँ, भिक्षु! तुमने सारिपुत्र पर असत्य एवं अभूत आरोप लगा कर कार्य तो ऐसा ही किया है, जैसा कि कोई मूर्ख या पागल ही कर सकता है; परन्तु अब तुम उसके लिये स्वच्छ मन से क्षमा भी माँग रहे हो, इस को हम धर्मविनय के अनुसार स्वीकार कर लेते हैं; क्यों कि हमारे इस आर्य विनय में यह भी एक पवित्र कार्य ही माना जाता है कि जो अपने प्रमाद को प्रमाद मान कर उस के परिशोधहेतु क्षमायाच्ञा करे तो उस को क्षमा कर दिया जाय।

१५. तब भगवान् ने आयुष्मान् सारिपुत्र को आदेश दिया—"सारिपुत्र! इस मूर्ख अपराधी भिक्षु को क्षमा कर दो, जिसने तुम पर असत्य एवं अभूत आरोप लगाया है; अन्यथा (इस अपराध के फलस्वरूप) इसके शिर का सात विभाजन हो जायगा।"

"भन्ते! मैं इस आयुष्मान् को क्षमा कर सकता हूँ, यदि यह आयुष्मान् भी मुझ से कहे— 'आयुष्मन्! मुझको क्षमा कीजिये'"॥ ●

२. सोपधिशेषसूत्र : :

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के ... जेतवनविहार में साधनाहेतु विराजमान थे। तब कभी आयुष्मान् सारिपुत्र प्रातःकाल वस्त्र व्यवस्थित कर श्रावस्ती में भिक्षाटनहेतु प्रविष्ट हुए।

२. तेन खो पन समयेन तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं सन्निसिन्नानं सन्निपतितानं अयमन्तराकथा उदपादि—"यो हि कोचि, आवुसो, सउपादिसेसो कालं करोति, [N.25] सब्बो सो अपरिमुत्तो निरया अपरिमुत्तो तिरच्छानयोनिया अपरिमुत्तो पेत्तिविसया अपरिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता" ति। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं भासितं नेव अभिनन्दि नप्पटिक्कोसि। अनभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कामि—"भगवतो सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थं आजानिस्सामी" ति। [R.37] अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो सावत्थियं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो [B185] येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—

३. "इधाहं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थिं पिण्डाय पाविसिं। तस्स मय्हं, भन्ते, एतदहोसि—'अतिप्पगो खो ताव सावत्थियं पिण्डाय चरितुं; यन्नूनाहं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यं' ति। अथ खो अहं, भन्ते, येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमिं; उपसङ्कमित्वा तेहि अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं सम्मोदिं। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिं। तेन खो पन समयेन तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं सन्निसिन्नानं सन्निपतितानं अयमन्तराकथा उदपादि—'यो हि कोचि, आवुसो, सउपादिसेसो कालं करोति, सब्बो सो अपरिमुत्तो निरया अपरिमुत्तो तिरच्छानयोनिया अपरिमुत्तो पेत्तिविसया अपरिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता' ति। अथ खो अहं, भन्ते, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं भासितं नेव अभिनन्दिं नप्पटिक्कोसिं। अनभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कमिं—'भगवतो सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थं आजानिस्सामी' " ति।

परन्तु उस समय उन ने सोचा—"अभी तो भिक्षाकाल में कुछ विलम्ब है, क्यों न मैं इतना समय अन्य धर्मावलम्बी परिव्राजकों के यहाँ जा कर शास्त्रचर्चा में बिताऊँ।" तब आयुष्मान् सारिपुत्र अन्य मतावलम्बी परिव्राजकों के ...पूर्ववत्... एक ओर बैठ गये।

२. उस समय उस परिव्राजकाश्रम में उन परिव्राजकों के बीच यह प्रसङ्ग चल रहा था—"जो कोई सोपधिशेष (आसक्तिसहित) मृत्यु प्राप्त करता है वह मुक्त नहीं हो पाता; अपितु वह या तो नरक में जा गिरता है, या पशु-पक्षि योनि में उत्पन्न होता है, या प्रेतयोनि में उत्पन्न हो कर दुर्गतिमय जीवन ही भोगता है।" तब आयुष्मान् सारिपुत्र ने उन परिव्राजकों में से किसी के भी कथन का न अनुमोदन किया न कोई प्रतीकार ही। ऐसा कर वे आसन से उठकर यह सोचते हुए वहाँ से चल दिये कि भगवान् के पास जा कर उन से इस विषय की वास्तविकता समझूँगा।

तब आयुष्मान् सारिपुत्र श्रावस्ती में भिक्षाचर्या कर, भोजन के बाद, भगवान् के पास जा कर, उन को प्रणाम कर, एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सारिपुत्र ने भगवान् से यह निवेदन किया—

३. "भन्ते! आज मैं प्रातः काल ...पूर्ववत्... भगवान् से ही इसकी वास्तविकता समझूँगा।"

४. ''के च, सारिपुत्त, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका बाला अब्यत्ता, के च सउपादिसेसं वा 'सउपादिसेसो' ति जानिस्सन्ति, अनुपादिसेसं वा 'अनुपादिसेसो' ति जानिस्सन्ति!

५. ''नवयिमे, सारिपुत्त, पुग्गला सउपादिसेसा कालं कुरुमाना परिमुत्ता निरया परिमुत्ता तिरच्छानयोनिया परिमुत्ता पेत्तिविसया परिमुत्ता अपायदुग्गतिविनिपाता। [R.380] कतमे नव? इध, सारिपुत्त, एकच्चो पुग्गलो सीलेसु परिपूरकारी होति, समाधिस्मिं परिपूरकारी, पञ्ञाय मत्तसो कारी। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया [N.26] अन्तरापरिनिब्बायी होति। अयं, सारिपुत्त, पठमो पुग्गलो सउपादिसेसो कालं कुरुमानो परिमुत्तो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो [B.186] अपायदुग्गतिविनिपाता।

६. ''पुन च परं, सारिपुत्त, इधेकच्चो पुग्गलो सीलेसु परिपूरकारी होति, समाधिस्मिं परिपूरकारी, पञ्ञाय मत्तसो कारी। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया उपहच्चपरिनिब्बायी होति ...पे०... असङ्खारपरिनिब्बायी होति ...पे०... ससङ्खारपरिनिब्बायी होति ...पे०... उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी। अयं, सारिपुत्त, पञ्चमो पुग्गलो सउपादिसेसो कालं कुरुमानो परिमुत्तो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

७. ''पुन च परं, सारिपुत्त, इधेकच्चो पुग्गलो सीलेसु परिपूरकारी होति, समाधिस्मिं मत्तसो कारी, पञ्ञाय मत्तसो कारी। सो तिण्णं संयोजनानं परिक्खया

---

४. ''सारिपुत्र! कहाँ ये मूर्ख, मन्दमति अन्य मतावलम्बी परिव्राजक और कहाँ सोपधिशेष एवं निरुपधिशेष की विशेषता जानने वाले ज्ञानी जन!

५. ''सारिपुत्र! ये नौ पुद्गल, चित्त की सोपधिशेष स्थिति में रहते हुए भी मरणभाव को प्राप्त हो कर नरक पशुयोनि एवं प्रेतयोनि या किसी अन्य अपाय एवं दुर्गतियुक्त योनि में नहीं जाते, उन से मुक्त ही रहते हैं। कौन से नौ? यहाँ, सारिपुत्र! कोई साधक पुद्गल शील और समाधि में पूर्णता प्राप्त करके भी प्रज्ञा की पूर्णता तक नहीं पहुँचता। वह पाँच अवरभागीय संयोजनों के क्षय से **अन्तरापरिनिर्वायी** कहलाता है। सारिपुत्र! यह प्रथम प्रकार का पुद्गल है जो सोपधिशेष रहता हुआ भी मरणभाव को प्राप्त कर नरक, पशुयोनि या प्रेतयोनि आदि अपायभूत दुर्गतियों को नहीं प्राप्त करता। (१)

६. ''पुनः, सारिपुत्र! कोई साधक पुद्गल शील एवं समाधि में पूर्णता प्राप्त कर के भी प्रज्ञा की पूर्णता तक नहीं पहुँच पाता, इसमें वह अल्पमात्र ही साधना कर पाता है। वह पाँच अवरभागीय संयोजनों के क्षय से **उपहत्यपरिनिर्वायी** होती है ...पूर्ववत्... **असंस्कारपरिनिर्वायी** होता है ...पूर्ववत्... **ससंस्कारपरिनिर्वायी** होता है ...पूर्ववत्... **ऊर्ध्वस्त्रोत** एवं **अकनिष्ठगामी** होता है। सारिपुत्र! यह पाँचवां पुद्गल, सोपधिशेष रहता हुआ भी मरणभाव को प्राप्त कर नरक, पशुयोनि, या प्रेतयोनि आदि अपायभूत दुर्गतियों को नहीं प्राप्त करता। (२-५)

७. ''पुनः, सारिपुत्र! कोई साधक पुद्गल शील में परिपूर्णता परन्तु समाधि में कुछ कम पूर्णता

रागदोसमोहानं तनुत्ता सकदागामी होति, सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्तं करोति। अयं, सारिपुत्त, छट्ठो पुग्गलो सउपादिसेसो कालं कुरुमानो परिमुत्तो निरया ...पे०... परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

८. "पुन च परं, सारिपुत्त, इधेकच्चो पुग्गलो सीलेसु परिपूरकारी होति, समाधिस्मिं मत्तसो कारी, पञ्ञाय मत्तसो कारी। सो तिण्णं संयोजनानं परिक्खया एकबीजी [R.381] होति, एकंयेव मानुसकं भवं निब्बत्तेत्वा दुक्खस्सन्तं करोति। अयं, सारिपुत्त, सत्तमो पुग्गलो सउपादिसेसो कालं कुरुमानो परिमुत्तो निरया ...पे०... परिमुत्तो अपायदुग्गति-विनिपाता।

९. "पुन च परं, सारिपुत्त, इधेकच्चो पुग्गलो सीलेसु परिपूरकारी होति, समाधिस्मिं मत्तसो कारी, पञ्ञाय मत्तसो कारी। सो तिण्णं संयोजनानं परिक्खया कोलङ्कोलो होति, द्वे वा तीणि वा कुलानि सन्धावित्वा संसरित्वा दुक्खस्सन्तं करोति। अयं, [N.27] सारिपुत्त, अट्ठमो पुग्गलो सउपादिसेसो कालं कुरुमानो परिमुत्तो निरया ...पे०..: परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

१०. "पुन च परं, सारिपुत्त, इधेकच्चो पुग्गलो सीलेसु परिपूरकारी होति, [B.187] समाधिस्मिं मत्तसो कारी, पञ्ञाय मत्तसो कारी। सो तिण्णं संयोजनानं परिक्खया सत्तक्खत्तुपरमो होति, सत्तक्खत्तुपरमं देवे च मनुस्से च सन्धावित्वा संसरित्वा दुक्खस्सन्तं

प्राप्त कर के भी प्रज्ञा में पूर्णता नहीं प्राप्त कर पाता। उस में वह अल्पमात्र ही साधना किये रहता है। वह तीन संयोजनों के क्षीण होने से तथा राग द्वेष एवं मोह के दुर्बल होने से **सकृदागामी** होता है। वह एक ही बार इस लोक में आ कर अपने दुःखों का अन्त कर लेता है। सारिपुत्र! यह षष्ठ पुद्गल सोपधिशेष रहता हुआ भी ...पूर्ववत्... दुर्गतियों को प्राप्त नहीं करता। (६)

८. "पुनः, सारिपुत्र! कोई पुद्गल शीलों में परिपूर्णता पा कर भी समाधि एवं प्रज्ञा में अल्पमात्र ही साधना किये रहता है। वह तीन संयोजनों के क्षय से **एकबीजी** होता है। एक ही बार मनुष्य जन्म पा कर निर्वाण तक पहुँच कर अपने दुःखों का अन्त कर लेता है। सारिपुत्र! यह सप्तम पुद्गल सोपधिशेष रहता हुआ मरणभाव प्राप्त कर के भी ...पूर्ववत्... दुर्गतियों को प्राप्त नहीं करता। (७)

९. "पुनः, सारिपुत्र! कोई पुद्गल शील में परिपूर्णता पा कर भी समाधि एवं प्रज्ञा के प्रति अल्पमात्र ही साधना किये रहता है। वह तीन संयोजनों के क्षय से **कोलङ्कोल** कहलाता है। वह दो या तीन कुलों में (क्रमशः) जन्म लेता हुआ (साधना द्वारा) अपने दुःखों का अन्त कर लेता है। सारिपुत्र! यह अष्टम पुद्गल सोपधिशेष मरणभाव पा कर भी ... अपायभूत दुर्गति प्राप्त करने से मुक्त ही रहता है। (८)

१०. "पुनः, सारिपुत्र! कोई पुद्गल शील में पूर्णता पा कर भी समाधि एवं प्रज्ञा की भावना अल्पमात्र ही किये रहता है। अतः वह तीन संयोजनों को क्षीण कर अपनी जन्म-मरण की परम्परा को सात संख्या की सीमा में बाँध लेता है। अतः वह अधिक से अधिक **सात बार मनुष्य या**

करोति। अयं, सारिपुत्त, नवमो पुग्गलो सउपादिसेसो कालं कुरुमानो परिमुत्तो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

११. ''के च, सारिपुत्त, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका बाला अब्यत्ता, के च सउपादिसेसं वा 'सउपादिसेसो' ति जानिस्सन्ति, अनुपादिसेसं वा 'अनुपादिसेसो' ति जानिस्सन्ति! इमे खो, सारिपुत्त, नव पुग्गला सउपादिसेसा कालं कुरुमाना परिमुत्ता निरया परिमुत्ता तिरच्छानयोनिया परिमुत्ता पेत्तिविसया परिमुत्ता अपायदुग्गतिविनिपाता। न तावायं, सारिपुत्त, धम्मपरियायो पटिभासि भिक्खूनं भिक्खुनीनं उपासकानं उपासिकानं। तं किस्स हेतु? मायिमं धम्मपरियायं सुत्वा पमादं आहरिंसू ति। अपि च मया, सारिपुत्त, [R.382] धम्मपरियायो पञ्हाधिप्पायेन भासितो'' ति॥ ●

३. कोट्ठिकसुत्तं : १. अथ खो आयस्मा महाकोट्ठिको येनायस्मा सारिपुत्तो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मता सारिपुत्तेन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा महाकोट्ठिको आयस्मन्तं सारिपुत्तं एतदवोच—''किं नु खो, आवुसो सारिपुत्त, 'यं कम्मं दिट्ठधम्मवेदनीयं, तं मे कम्मं सम्परायवेदनीयं होतू' ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती'' ति?

''नो हिदं, आवुसो''।

२. ''किं पनावुसो सारिपुत्त, 'यं कम्मं सम्परायवेदनीयं, तं मे कम्मं [N.28] दिट्ठधम्मवेदनीयं होतू' ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती'' ति?

''नो हिदं, आवुसो''।

देवयोनि में जन्म ले कर साधना करता हुआ अपने दुःखों का अन्त कर लेता है। सारिपुत्र! यह नवम पुद्गल सोपधिशेष रहता हुआ मरणभाव प्राप्त कर भी ... अपायमय दुर्गतियाँ प्राप्त करने से मुक्त ही रहता है। (९)

११. ''अतः, सारिपुत्र! कहाँ ये मूर्ख, मन्दमति अन्य मतावलम्बी परिव्राजक और कहाँ सोपधिशेष या निरुपधिशेष विषयक गम्भीर ज्ञान! सारिपुत्र! वास्तविकता यह है कि उक्त नवविध साधक सोपधिशेष रहते हुए मरणभाव पा कर भी निरय में, पशुयोनि में, प्रेतयोनि में या ऐसी ही किसी अन्य अपायभूत दुर्गतिमय योनि में जाने से मुक्त ही रहते हैं।

''सारिपुत्र! आज तक मैंने यह धर्मोपदेश अपने भिक्षुओं, भिक्षुणियों, उपासकों या उपासिकाओं को नहीं किया। वह किस लिये? वह इस लिये कि वे लोग यह वास्तविकता जानकर प्रमाद न करने लगें। आज तुम ने यह प्रश्न किया तब मैंने तुम को यह बताना उचित समझा॥''●

३. कौष्ठिक सूत्र : : अज्ञात के ज्ञानहेतु साधना

१. तब आयुष्मान् महाकौष्ठिक, आयुष्मान् सारिपुत्र के पास गये। जा कर... आयुष्मान् सारिपुत्र से यों बोले—''आयुष्मान् सारिपुत्र! 'जो मेरा कर्म दृष्टधर्मवेदनीय है वह परलोकवेदनीय हो जाय'—इस उद्देश्य से आप भगवान् के संरक्षण में यह धर्मसाधना कर रहे हैं?''

''ऐसा नहीं है, आयुष्मन्!'' (१)

३. ''किं नु खो, आवुसो सारिपुत्त, 'यं कम्मं सुखवेदनियं, तं मे कम्मं दुक्खवेदनियं होतू' ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती'' ति? ''नो हिदं, आवुसो''।

[B.188] ४. ''किं पनावुसो सारिपुत्त, 'यं कम्मं दुक्खवेदनियं, तं मे कम्मं सुखवेदनियं होतू' ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती'' ति? ''नो हिदं, आवुसो''।

५. ''किं नु खो, आवुसो सारिपुत्त, 'यं कम्मं परिपक्कवेदनीयं, तं मे कम्मं अपरिपक्कवेदनीयं होतू' ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती'' ति?

''नो हिदं, आवुसो''।

६. ''किं पनावुसो सारिपुत्त, 'यं कम्मं अपरिपक्कवेदनीयं, तं मे कम्मं परिपक्कवेदनीयं होतू' ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती'' ति?

''नो हिदं, आवुसो''।

७. ''किं नु खो, आवुसो सारिपुत्त, 'यं कम्मं बहुवेदनीयं, तं मे कम्मं अप्पवेदनीयं होतू' ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती'' ति? ''नो हिदं, आवुसो''।

[R.383] ८. ''किं पनावुसो सारिपुत्त, 'यं कम्मं अप्पवेदनीयं, तं मे कम्मं बहुवेदनीयं होतू' ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती'' ति? ''नो हिदं, आवुसो''।

[N.29] ९. ''किं न खो, आवुसो सारिपुत्त, 'यं कम्मं वेदनीयं, तं मे कम्मं अवेदनीयं होतू' ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती'' ति? ''नो हिदं, आवुसो''।

---

२. ''क्या, आयुष्मन् सारिपुत्र! 'जो कर्म सम्परायवेदनीय है वह दृष्टधर्मवेदनीय हो जाय'—इस उद्देश्य से आप भगवान् के संरक्षण में यह धर्मसाधना कर रहे हैं?''

''ऐसा भी नहीं है, आयुष्मन्!''

३. ''तो क्या, आयुष्मन् सारिपुत्र! 'जो कर्म सुखवेदनीय है वह दुःखवेदनीय हो जाय'—इस उद्देश्य से ...पूर्ववत्... ?'' ''ऐसा भी नहीं है, आयुष्मन्!'' (२)

४. ''तो क्या आयुष्मन् सारिपुत्र! 'जो कर्मदुःखवेदनीय है वह सुखवेदनीय हो जाय'—इस उद्देश्य से ...पूर्ववत्... ?'' ''ऐसा भी नहीं है, आयुष्मन्!'' (३)

५. ''तो क्या, आयुष्मन् सारिपुत्र! 'जो कर्म परिपक्कवेदनीय है वह अपरिपक्कवेदनीय हो जाय'—इस उद्देश्य से ...पूर्ववत्... ?'' ''ऐसा भी नहीं है, आयुष्मन्!'' (४)

६. ''तो क्या, आयुष्मन् सारिपुत्र! 'जो कर्म अपरिपक्कवेदनीय है वह परिपक्कवेदनीय हो जाय'—इस उद्देश्य से ...पूर्ववत्... ?'' ''ऐसा भी नहीं है, आयुष्मन्!'' (५)

७. ''तो क्या, आयुष्मन् सारिपुत्र! 'जो कर्म बहुवेदनीय है वह अल्पवेदनीय हो जाय'—इस उद्देश्य से ...पूर्ववत्... ?'' ''ऐसा भी नहीं है, आयुष्मन्!'' (६)

८. ''तो क्या, आयुष्मन् सारिपुत्र! 'जो कर्म अल्पवेदनीय है वह बहुवेदनीय हो जाय'—इस उद्देश्य से ...पूर्ववत्... ?'' ''ऐसा भी नहीं है, आयुष्मन्!'' (७)

९. ''तो क्या, आयुष्मन् सारिपुत्र! 'जो कर्म वेदनीय है वह अवेदनीय हो जाय'—इस उद्देश्य से ...पूर्ववत्... ?'' ''ऐसा भी नहीं है, आयुष्मन्!'' (८)

१०. "किं पनावुसो सारिपुत्त, 'यं कम्मं अवेदनीयं, तं मे कम्मं वेदनीयं होतू' ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती" ति? "नो हिदं, आवुसो"।

११. "किं नु खो, आवुसो सारिपुत्त, 'यं कम्मं दिट्ठधम्मवेदनीयं, तं मे कम्मं सम्परायवेदनीयं होतू' ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती" ति, इति पुट्ठो समानो 'नो हिदं, आवुसो' ति वदेसि। 'किं पनावुसो सारिपुत्त, यं कम्मं सम्परायवेदनीयं तं मे कम्मं दिट्ठधम्मवेदनीयं होतू ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति, इति पुट्ठो समानो 'नो हिदं, आवुसो' ति वदेसि। 'किं नु खो, आवुसो सारिपुत्त, यं कम्मं सुखवेदनियं तं मे कम्मं दुक्खवेदनियं होतू ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति, [B.189] इति पुट्ठो समानो 'नो हिदं, आवुसो' ति वदेसि। 'किं पनावुसो सारिपुत्त, यं कम्मं दुक्खवेदनियं तं मे कम्मं सुखवेदनियं होतू ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति, इति पुट्ठो समानो 'नो हिदं, आवुसो' ति वदेसि। 'किं नु खो, आवुसो सारिपुत्त, यं कम्मं परिपक्कवेदनीयं तं मे कम्मं अपरिपक्कवदेनीयं होतू ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति, इति पुट्ठो समानो 'नो हिदं, आवुसो' ति वदेसि। 'किं पनावुसो सारिपुत्त, यं कम्मं अपरिपक्कवेदनीयं ते मे कम्मं परिपक्कवेदनीयं होतू ति, एतस्स अत्थाय [R.384] भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति, इति पुट्ठो समानो 'नो हिदं, आवुसो' ति वदेसि। 'किं नु खो, आवुसो सारिपुत्त, यं कम्मं बहुवेदनीयं तं मे कम्मं अप्पवेदनीयं होतू ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति, इति पुट्ठो समानो 'नो हिदं, आवुसो' ति वदेसि। 'किं पनावुसो सारिपुत्त, यं कम्मं अप्पवेदनीयं तं मे कम्मं बहुवेदनीयं होतू ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति, इति पुट्ठो समानो 'नो हिदं, आवुसो' ति वदेसि। 'किं नु खो आवुसो सारिपुत्तं, यं कम्मं वेदनीयं तं मे कम्मं अवेदनीयं होतू ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति, इति पुट्ठो समानो 'नो हिदं, आवुसो' ति वदेसि। 'किं पनावुसो सारिपुत्त, यं कम्मं अवेदनीयं तं मे कम्मं वेदनीयं होतू ति, एतस्स अत्थाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति, इति पुट्ठो समानो 'नो हिदं, आवुसो' ति वदेसि। अथ किमत्थं [N.30] चरहावुसो, भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती" ति?

---

१०. "तो क्या, आयुष्मन् सारिपुत्र! 'जो कर्म अवेदनीय है वह वेदनीय हो जाय'—इस उद्देश्य से भगवान् के संरक्षण में यह धर्मसाधना करते हैं?" "ऐसा भी नहीं है, आयुष्मन्!"

११. "'क्या, आयुष्मन् सारिपुत्र! जो कर्म दृष्ट धर्मवेदनीय है वह सम्परायवेदनीय हो जाय—इस उद्देश्य से आप भगवान् के संरक्षण में यह धर्मसाधना कर रहे हैं'—यह पूछने पर भी आपने 'ऐसा नहीं है, आयुष्मन्'—यही उत्तर दिया...पूर्ववत्...। 'क्या आयुष्मन् सारिपुत्र! जो कर्म अवेदनीय है वह कर्म वेदनीय हो जाय'—इस उद्देश्य से आप भगवान् की शरण में यह धर्मसाधना कर रहे हैं'—यह पूछे जाने पर भी आप 'ऐसा तो नहीं है, आयुष्मन्!—ऐसा ही उत्तर दे रहे हैं। तो, आयुष्मन्! आप किस उद्देश्य से भगवान् के संरक्षण में यह साधना कर रहे हैं?"

१२. "यं ख्वस्स, आवुसो, अञ्ञातं अदिट्ठं अप्पत्तं असच्छिकतं अनभिसमेतं, तस्स ञाणाय दस्सनाय पत्तिया सच्छिकिरियाय अभिसमयाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती" ति।

[B.190] "किं पनस्सावुसो, अञ्ञातं अदिट्ठं अप्पत्तं असच्छिकतं अनभिसमेतं, यस्स ञाणाय दस्सनाय पत्तिया सच्छिकिरियाय अभिसमयाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती" ति?

"'इदं दुक्खं' ति ख्वस्स, आवुसो, अञ्ञातं अदिट्ठं अप्पत्तं असच्छिकतं अनभि-
[R.385] समेतं। तस्स ञाणाय दस्सनाय पत्तिया सच्छिकिरियाय अभिसमयाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सति। अयं 'दुक्खसमुदयो' ति ख्वस्स आवुसो ...पे०... 'अयं दुक्खनिरोधो' ति ख्वस्स, आवुसो ...पे०..., 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति ख्वस्स, आवुसो अञ्ञातं अदिट्ठं अप्पत्तं असच्छिकतं अनभिसमेतं। तस्स ञाणाय दस्सनाय पत्तिया सच्छिकिरियाय अभिसमयाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सति। इदं ख्वस्स आवुसो अञ्ञातं अदिट्ठं अप्पत्तं असच्छिकतं अनभिसमेतं। तस्स ञाणाय दस्सनाय पत्तिया सच्छिकिरियाय अभिसमयाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती" ति॥ ●

४. **समिद्धिसुत्तं** : १. अथ खो आयस्मा समिद्धि येनायस्मा सारिपुत्तो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं सारिपुत्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं समिद्धिं आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—"किमारम्मणा, समिद्धि, पुरिसस्स सङ्कप्पवितक्का उप्पज्जन्ती" ति? "नामरूपारम्मणा, भन्ते" ति।

२. "ते पन, समिद्धि, क्व नानत्तं गच्छन्ती" ति? "धातूसु, भन्ते" ति।

---

१२. "आयुष्मन्! जो हमारे लिये अज्ञात है, अदृष्ट है, अप्राप्त है, असाक्षात्कृत है, नहीं समझा हुआ है, उसके ज्ञान तथा दर्शन की प्राप्ति के लिये, साक्षात्कार के लिये, अभिसमय (विशिष्ट ज्ञान) के लिये हम उन भगवान् के संरक्षण में यह धर्मसाधना कर रहे हैं।"

"आयुष्मन्! आप के लिये क्या अज्ञात है, अदृष्ट है ...पूर्ववत्... जिस की प्राप्ति के लिये आप भगवान् के संरक्षण में यह धर्मसाधना कर रहे हैं?"

"आयुष्मन्! 'यह दुःख है'—यह हमारे लिये अज्ञात है ...पूर्ववत्... 'यह दुःखसमुदय है'—यह हमारे लिये अज्ञात है, अदृष्ट है ...पूर्ववत्... 'यह दुःखनिरोध है'—यह हमारे लिये अज्ञात है, अदृष्ट है ...पूर्ववत्... 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—यह हमारे लिये अज्ञात है ...पूर्ववत्...। आयुष्मन्! जो हमारे लिये अज्ञात है, अदृष्ट है, अप्राप्त है, असाक्षात्कृत है, नहीं समझा हुआ है, उसके ज्ञान तथा दर्शन की प्राप्ति के लिये, साक्षात्कार के लिये, अच्छी तरह समझने (अभिसमय) के लिये हम उन भगवान् के संरक्षण में यह धर्मसाधना कर रहे हैं॥" ●

नौ धर्म

४. समृद्धिसूत्र : :

१. तब आयुष्मान् समृद्धि आयुष्मान् सारिपुत्र के पास गये। वहाँ जा कर उन को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। बैठे हुए आयुष्मान् समृद्धि से आयुष्मान् सारिपुत्र ने पूछा—"समृद्धि! पुरुष के सङ्कल्प एवं वितर्क किसका आश्रय ले कर उत्पन्न होते हैं?"

३. "ते पन, समिद्धि, किंसमुदया" ति? "फस्ससमुदया, भन्ते" ति।
४. "ते पन, समिद्धि, किंपमुखा" ति? [N.31]
"वेदनासमोसरणा, भन्ते" ति।
५. "ते पन, समिद्धि, किंपमुखा" ति? "समाधिप्पमुखा, भन्ते" ति।
६. "ते पन, समिद्धि, किंअधिपतेय्या" ति? "सताधिपतेय्या, भन्ते" ति।
७. "ते पन, समिद्धि, किंउत्तरा" ति? "पञ्ञुत्तरा, भन्ते" ति।
८. "ते पन, समिद्धि किंसारा" ति? "विमुत्तिसारा, भन्ते" ति।
९. "ते पन, समिद्धि, किंओगधा" ति? "अमतोगधा, भन्ते" ति।

१०. "'किमारम्मणा, समिद्धि, पुरिसस्स सङ्कप्पवितक्का उप्पज्जन्ती' ति, इति पुट्ठो समानो 'नामरूपारम्मणा, भन्ते' ति वदेसि। 'ते पन, समिद्धि, क्व नानत्तं गच्छन्ती' ति, इति पुट्ठो समानो 'धातूसु, भन्ते' ति वदेसि। 'ते पन, समिद्धि, किंसमुदया' ति, इति पुट्ठो समानो 'फस्ससमुदया, भन्ते' ति वदेसि। 'ते पन, समिद्धि, किंसमोसरणा' ति, इति [R.386] पुट्ठो समानो 'वेदनासमोसरणा, भन्ते' ति वदेसि। 'ते पन, समिद्धि, किंपमुखा' ति, [B.191] इति पुट्ठो समानो 'समाधिप्पमुखा, भन्ते' ति वदेसि। 'ते पन, समिद्धि, किंअधिपतेय्या' ति, इति पुट्ठो समानो 'सताधिपतेय्या, भन्ते' ति वदेसि। 'ते पन, समिद्धि, किंउत्तरा' ति, इति पुट्ठो समानो 'पञ्ञुत्तरा, भन्ते' ति वदेसि। 'ते पन, समिद्धि, किंसारा' ति, इति पुट्ठो समानो 'विमुत्तिसारा, भन्ते' ति वदेसि। 'ते पन, समिद्धि, किंओगधा' ति, इति पुट्ठो समानो

---

२. "भन्ते! नाम एवं रूप का आश्रय ले कर।" (१)
"वे (नाम एवं रूप) कहाँ (अनेकत्व) को प्राप्त होते हैं?"
"धातुओं में, भन्ते!" (२)
३. "वे (धातु) के कैसे उत्पन्न होती हैं?" "स्पर्श उनका जन्मदाता है, भन्ते!" (३)
४. "वे (धातु) कहाँ एकत्र होती हैं?" "वेदनाओं में, भन्ते!" (४)
५. "उन का प्रमुख कौन है?" "समाधि उन की प्रमुख है, भन्ते!" (५)
६. "उन (वेदनाओं) का अधिपति कौन है?"
"स्मृति उन की अधिपति है, भन्ते!" (६)
७. "उन के उत्तर (ऊपर) कौन है?" "प्रज्ञा उनके उत्तर (ऊपर) है, भन्ते!" (७)
८. "उन का सार (श्रेष्ठ) क्या है?" "विमुक्ति उन का सार है, भन्ते?" (८)
९. "वे कहाँ लीन हो जाती है?"
"अमृत (निर्वाण) में लीन हो जाती हैं, भन्ते!" (९)

१०. "समृद्धि! 'पुरुष के सङ्कल्प एवं वितर्क किसके आश्रय से उत्पन्न होते हैं?'—यह पूछे जाने पर तुमने उत्तर दिया—'नाम एवं रूप के आश्रय से, भन्ते!'। 'वे पुन: कहाँ नानात्व को प्राप्त होते हैं'—यह पूछे जाने पर ...पूर्ववत्...। 'वे कहाँ लीन हो जाते हैं?'—यह पूछे जाने पर तुमने उत्तर दिया—'अमृत में लीन हो जाते हैं, भन्ते!'। साधु! समृद्धि! साधु! मैने जैसा जैसा तुम से प्रश्न

'अमतोगधा, भन्ते' ति वदेसि। साधु साधु, समिद्धि! साधु खो त्वं, समिद्धि, पुट्ठो पुट्ठो विस्सज्जेसि, तेन च मा मञ्ञी'' ति॥ ●

[N.32] **५. गण्डसुत्तं :** १. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, गण्डो अनेकवस्सगणिको। तस्सस्सु गण्डस्स नव वणमुखानि नव अभेदनमुखानि। ततो यं किञ्चि पग्घरेय्य—असुचियेव पग्घरेय्य, दुग्गन्धंयेव पग्घरेय्य, जेगुच्छियंयेव पग्घरेय्य; यं किञ्चि पसवेय्य—असुचियेव पसवेय्य, दुग्गन्धंयेव पसवेय्य, जेगुच्छियंयेव पसवेय्य।

२. '''गण्डो' ति खो, भिक्खवे, इमस्सेतं चातुमहाभूतिकस्स कायस्स अधिवचनं मातापेत्तिकसम्भवस्स ओदनकुम्मासूपचयस्स अनिच्चुच्छादनपरिमद्दनभेदनविद्धंसनधम्मस्स। तस्सस्सु गण्डस्स नव वणमुखानि नव अभेदनमुखानि। ततो यं किञ्चि [R.387] पग्घरति—असुचियेव पग्घरति, दुग्गन्धंयेव पग्घरति, जेगुच्छियंयेव पसवति। तस्मातिह, भिक्खवे, इमस्मिं काये निब्बिन्दथा'' ति॥ ●

६. सञ्ञासुत्तं : १. ''नवयिमा, भिक्खवे, सञ्ञा भाविता बहुलीकता महप्फला [B.192] होन्ति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना। कतमा नव? असुभसञ्ञा, मरणसञ्ञा, आहारे पटिकूलसञ्ञा, सब्बलोके अनभिरतिसञ्ञा, अनिच्चसञ्ञा, अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, दुक्खे अनत्तसञ्ञा, पहानसञ्ञा, विरागसञ्ञा—इमा खो, भिक्खवे, नव

पूछा वैसा वैसा उसका तुमने उत्तर दिया। इस के लिये तुम को मेरा साधुवाद है। परन्तु इसी (उत्तर) को सब कुछ समझ कर साधना में कोई प्रमाद न करना। उसमें पूर्णत: दत्तचित्त रहना॥'' ●

५. गण्डसूत्र : : गण्ड (व्रण) के नौ मुख

१. ''जैसे, भिक्षुओ! किसी के शरीर में अनेक वर्ष पुराना कोई व्रण हो। उस व्रण के नौ मुख हों। उन में प्रत्येक मुख से मलिन दुर्गन्धयुक्त रक्त बह रहा हो। उन में से जो कुछ भी निकलेगा—अशुचि (गन्दा) द्रव्य ही निकलेगा, दुर्गन्धयुक्त ही निकलेगा, जुगुप्सा (घृणा) के योग्य ही निकलेगा। जो कुछ भी बहेगा—अशुचि ही बहेगा, दुर्गन्धयुक्त ही बहेगा।

२. ''भिक्षुओ! इस प्रसङ्ग में 'गण्ड'—यह शब्द इन चारों महाभूतों से उत्पन्न, माता एवं पिता से सम्भूत, दाल भात और कुल्माष खा कर बढे हुए, उत्सादन परिमर्दन भेदन विध्वंसन स्वभाव वाले शरीर का प्रतीकात्मक बोधक है। उस व्रण के नौ मुख होते हैं तथा उन सभी मुखों से मलिन एवं दुर्गन्धयुक्त पदार्थ बहता है। उसमें से जो कुछ भी निकलेगा ...पूर्ववत्...। अत: भिक्षुओ! इस काया (शरीर) के प्रति भी ऐसा भाव रखते हुए ग्लानि ही रखना चाहिये॥'' ●

६. संज्ञासूत्र : : नौ संज्ञाओं की साधना

१. भिक्षुओ! नौ संज्ञाओं की साधना करने से, अभ्यास करने से वे अतिशय फलदायिनी होती हैं, अमृत (निर्वाण) तक पहुँचाने वाली होती हैं, अमृत (निर्वाण) ही इन की सीमा है। कौन सी नौ? (१) अशुभसंज्ञा, (२) मरणसंज्ञा, (३) आहार में प्रतिकूलसंज्ञा, (४) समग्र संसार में अनासक्तिसंज्ञा, (५) अनित्यसंज्ञा, (६) अनित्य में दु:खसंज्ञा, (७) दु:ख में अनात्मसंज्ञा, (८) प्रहाणसंज्ञा एवं (९) विरागसंज्ञा—भिक्षुओ! ये नौ संज्ञाएँ साधना करने से, अभ्यास करने से

सञ्ञा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना'' ति॥ ●

७. कुलसुत्तं : १. ''नवहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतं कुलं अनुपगन्त्वा वा नालं उपगन्तुं, उपगन्त्वा वा नालं निसीदितुं। कतमेहि नवहि? न मनापेन पच्चुट्ठेन्ति, न मनापेन अभिवादेन्ति, न मानपेन आसनं देन्ति, सन्तमस्स परिगुहन्ति, बहुकं पि थोकं देन्ति, पणीतं पि लूखं देन्ति, असक्कच्चं देन्ति नो सक्कच्चं, न उपनिसीदन्ति धम्मस्सवनाय, [N.33] भासितमस्स न सुस्सूसन्ति। इमेहि खो, भिक्खवे, नवहङ्गेहि समन्नागतं कुलं अनुपगन्त्वा वा नालं उपगन्तुं, उपगन्त्वा वा नालं निसीदितुं।

२. ''नवहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतं कुलं अनुपगन्त्वा वा अलं उपगन्तुं, उपगन्त्वा वा अलं निसीदितुं। कतमेहि नवहि? मनापेन पच्चुट्ठेन्ति, मनापेन अभिवादेन्ति, मनापेन आसनं देन्ति, सन्तमस्स न परिगुहन्ति, ब्रहुकं पि बहुकं देन्ति, पणीतं पि पणीतं देन्ति, सक्कच्चं देन्ति नो असक्कच्चं, उपनिसीदन्ति धम्मस्सवनाय, भासितमस्स [R.388] सुस्सूसन्ति। इमेहि खो, भिक्खवे, नवहङ्गेहि समन्नागतं कुलं अनुपगन्त्वा वा अलं उपगन्तुं, उपगन्त्वा वा अलं निसीदितुं'' ति॥ ●

८. नवङ्गुपोसथसुत्तं : १. ''नवहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतो उपोसथो

अतिशय फलदायिनी होती हैं। ये अमृत तक पहुँचाने वाली होती हैं। अमृत (निर्वाण) ही इनकी सीमा है॥'' ●

७. कुलसूत्र : : **नौ कुल अगमनीय, तथा नौ गमनीय**

१. ''भिक्षुओ! नौ अङ्गों से युक्त कुलों (गृहस्थों के घरों) में यदि अभी तक न गये हो तो वहाँ न जाना ही उचित है, और यदि वहाँ चले गये हो तो वहाँ बैठना उचित नहीं। कौन से नौ अङ्ग? (१) जो जाने पर स्नेहपूर्वक आदर (प्रत्युत्थान) न दें, (२) न स्नेहपूर्वक अभिवादन करें, (३) न स्नेहपूर्वक बैठने के लिये आसन दें, (४) जो आवश्यक वस्तु के विद्यमान होने पर भी, उस को छिपावें, (५) बहुत होते हुए भी अल्पमात्रा में ही दें, (६) उत्तम वस्तु के रहने पर भी रूक्ष एवं शुष्क वस्तुएँ ही सम्मुख रखें, (७) निरादरपूर्वक दें, आदरपूर्वक नहीं, (८) धर्मश्रवण हेतु सम्मुख न बैठें, तथा (९) किये जाते हुए धर्मोपदेश को सुनने की इच्छा न करें। भिक्षुओ! इन नौ अङ्गों से युक्त कुलों में यदि जा चुके हो तो वहाँ ठहरना उचित नहीं और यदि उन कुलों में अभी तक न गये हो तो वहाँ अब न जाना ही उचित है। (क)

२. ''भिक्षुओ! (परन्तु) ऐसे नौ अङ्गों से युक्त कुलों में यदि अभी तक न गये हो तो वहाँ जाना चाहिये और यदि वहाँ पहुँच चुके हो तो वहाँ बैठना चाहिये। कौन से नौ अङ्गों से? (१) जो जाने पर स्नेहपूर्वक आदर करें, (२) जो स्नेहपूर्वक अभिवादन करें, (३) जो बैठने के लिये स्नेहपूर्वक कहें, (४) जो आवश्यक वस्तु के विद्यमान रहते हुए उस को अवश्य सम्मुख रखें, (५) जो बहुत होने पर बहुत देने का प्रयास करें, (६) उत्तम वस्तु के रहते उत्तम वस्तु ही दें, (७) सत्कारपूर्वक ही दें असत्कारपूर्वक नहीं, (८) धर्मश्रवणहेतु सम्मुख बैठें, तथा (९) जो किये जाते

उपवुत्थो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो। कथं उपवुत्थो च, भिक्खवे, नवहङ्गेहि समन्नागतो उपोसथो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो? इध, भिक्खवे, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'यावजीवं अरहन्तो पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरता निहितदण्डा निहितसत्था लज्जी दयापन्ना [B.193] सब्बपाणभूतहितानुकम्पिनो विहरन्ति; अहम्पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो निहितदण्डो निहितसत्थो लज्जी दयापन्नो सब्बपाणभूतहितानुकम्पी विहरामि। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि; उपोसथो च मे [R.389] उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना पठमेन अङ्गेन समन्नागतो होति ...पे०...। [R.390] 'यावजीवं अरहन्तो उच्चासयनमहासयनं पहाय उच्चासयनमहासयना पटिविरता नीचसेय्यं कप्पेन्ति—मञ्चके वा तिणसन्थारके वा; अहम्पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं उच्चासयनमहासयनं पहाय उच्चासयनमहासयना पटिविरतो नीचसेय्यं कप्पेमि—मञ्चके वा तिणसन्थारके वा। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि; उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना अट्ठमेन अङ्गेन समन्नागतो होति।

[N.34] २. "मेत्तासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति, तथा दुतियं तथा ततियं तथा चतुत्थं। इति उद्धमधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय सब्बावन्तं लोकं मेत्तासहगतेन चेतसा विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन फरित्वा विहरति। इमिना नवमेन अङ्गेन समन्नागतो होति। एवं उपवुत्थो खो, भिक्खवे, नवहङ्गेहि समन्नागतो उपोसथो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो" ति॥ ●

हुए धर्मोपदेश को सुनने की इच्छा करें। भिक्षुओ! इन नौ अङ्गों से युक्त कुलों में यदि अभी तक न हो गये हो तो जाना चाहिये, और यदि जा चुके हो तो वहाँ बैठना ही चाहिये॥" ●

८. नवाङ्ग उपोसथ सूत्र : : नौ अङ्गयुक्त उपोसथ अतिशय फलदायी

१. भिक्षुओ! नौ अङ्गों से युक्त उपोसथ व्रत का पालन अतिशय फलप्रद, विशेष माहात्म्यवाला, तीव्र आलोक वाला एवं महान् उत्तेजक वाला होता है। कैसे पालन किया गया उपोसथ व्रत अतिशय ... उत्तेजक होता है? यहाँ भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक यह विचार करता है— ...पूर्ववत्...[१] इस आठवें अङ्ग से युक्त उपोसथ व्रत ... होता है। (१-८)

२. "मैत्रीसहगत चित्त से पहले एक दिशा को व्याप्त कर साधना करता है, इसी प्रकार दूसरी, तीसरी एवं चौथी दिशा को व्याप्त कर साधना करता है। इस प्रकार ऊपर नीचे, आड़े तिरछे, सर्वत्र सभी लोकों को विपुल, महद्गत, अप्रमाण, निर्वैर, निर्द्वेष मैत्रीसहगत चित्त से व्याप्त कर साधना करता है। इस नवम अङ्ग से युक्त उपोसथव्रत का पालन अतिशय फलदायी, विशेष माहात्म्य वाला एवं महान् विस्तार वाला होता है। इस प्रकार, भिक्षुओ! किया गया उपोसथ व्रत अतिशय फलप्रद, विशेष माहात्म्य वाला एवं महान् उत्तेजक होता है॥" (९) ●

---

१. यह पाठ **अष्टकनिपात** में उपोसथवर्ग के अन्तर्गत संक्षिप्त **उपोसथ सूत्र** में भी आ चुका है। वहाँ इसका विस्तार देखें।—स०

९. देवतासुत्तं : १. "इमं च, भिक्खवे, रत्तिं सम्बहुला देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं जेतवनं ओभासेत्वा येनाहं तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठंसु। एकमन्तं ठिता खो, भिक्खवे, ता देवता मं एतदवोचुं— 'उपसङ्कमिंसु नो, भन्ते, पुब्बे मनुस्सभूतानं पब्बजिता अगारानि। ते मयं, भन्ते, पच्चुट्ठिम्ह, नो च खो अभिवादिम्ह। ता मयं, भन्ते, अपरिपुण्णकम्मन्ता विप्पटिसारिनियो पच्चानुतापिनियो हीनं कायं उपपन्ना' ति।

२. "अपरा पि मं, भिक्खवे, सम्बहुला देवता उपसङ्कमित्वा [B.194,R.391] एतदवोचुं—'उपसङ्कमिंसु नो, भन्ते, पुब्बे मनुस्सभूतानं पब्बजिता अगारानि। ते मयं, भन्ते, पच्चुट्ठिम्ह अभिवादिम्ह, नो च तेसं आसनं अदम्ह। ता मयं, भन्ते, अपरिपुण्णकम्मन्ता विप्पटि-सारिनियो पच्चानुतापिनियो हीन कायं उपपन्ना' ति।

३. "अपरा पि मं, भिक्खवे, सम्बहुला देवता उपसङ्कमित्वा एतदवोचुं— 'उपसङ्कमिंसु नो, भन्ते, पुब्बे मनुस्सभूतानं पब्बजिता अगारानि। ते मयं, भन्ते, पच्चुट्ठिम्ह अभिवादिम्ह आसनं अदम्ह, नो च खो यथासत्ति यथाबलं संविभजिम्ह ...पे०... यथासत्ति यथाबलं संविभजिम्ह, नो च खो उपनिसीदिम्ह धम्मस्सवनाय ...पे०... उपनिसीदिम्ह धम्मस्सवनाय, नो च खो ओहितसोता धम्मं सुणिम्ह ...पे०... ओहितसोता च धम्मं

---

९. देवतासूत्र : : नौ अङ्गों से हीन देवता

१. "भिक्षुओ! इस चाँदनी रात्रि में देदीप्यमान वर्ण वाले कुछ देवता, प्राय: समुज्वल जेतवन को पूर्वापेक्षया अधिक प्रकाशित करते हुए, मेरे पास आये। तथा वे मुझको प्रणाम कर एक ओर खड़े हो गये। भिक्षुओ! एक ओर खड़े वे देवता मुझ से यों बोले—'भन्ते! पहले जब हम मनुष्य शरीर में थे, तब कभी प्रव्रजित हमारे घरों में आते थे। वहाँ हम उनका आदर तो करते थे, परन्तु उनका अभिवादन नहीं करते थे। वे हम, भन्ते! इस अपरिपूर्ण कर्म के फलस्वरूप प्रायश्चित्त एवं पश्चात्ताप के भागी हो कर हीन शरीर में उत्पन्न हुए। (१)

२. "भिक्षुओ! कुछ अन्य बहुत से देवता मेरे पास आ कर यों बोले—'भन्ते! पहले हम जब कभी मानवशरीर में थे तब कभी प्रव्रजित जब हमारे घरों पर आते थे। वहाँ हम उन का सत्कार तथा अभिवादन ही करते थे, परन्तु उन को आसन नहीं देते थे। इस कर्महीनता के कारण हम प्रायश्चित एवं पश्चात्ताप करते हुए हीन शरीर वाली योनियों में उत्पन्न हुए'। (२)

३. "कुछ अन्य देवता भी ...पूर्ववत्... आसन देते थे, परन्तु उनको भोजन नहीं कराते थे। इस हीन कर्म के फलस्वरूप हम ...पूर्ववत्...। (३)

"...भोजन तो कराते थे, परन्तु उन के सम्मुख धर्मश्रवण हेतु नहीं बैठते थे ...पूर्ववत्...। (४)

"...धर्मश्रवण तो करते थे, परन्तु उस पर कान (ध्यान) नहीं देते थे ...पूर्ववत्...। (५)

"...धर्मश्रवण ध्यान से कर के भी उस धर्म को धारण नहीं करते थे। ...पूर्ववत्...। (६)

"...उस पर ध्यान भी देते थे, परन्तु उसका अर्थपरीक्षण नहीं करते थे ...पूर्ववत्...। (७)

सुणिम्ह, नो च खो सुत्वा धम्मं धारयिम्ह ...पे०... सुत्वा च धम्मं धारयिम्ह, नो च खो [N.35] धातानं धम्मानं अत्थ उपपरिक्खिम्ह ...पे०... धातानं च धम्मानं अत्थं उपपरिक्खिम्ह, नो च खो अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मं पटिपज्जिम्ह। ता मयं, भन्ते, अपरिपुण्णकम्मन्ता विप्पटिसारिनियो पच्चानुतापिनियो हीनं कायं उपपन्ना' ति।

४. ''अपरा पि मं, भिक्खवे, सम्बहुला देवता उपसङ्कमित्वा एतदवोचुं— 'उपसङ्कमिंसु नो, भन्ते, पुब्बे मनुस्सभूतानं पब्बजिता अगारानि। ते मयं, भन्ते, पच्चुट्ठिम्ह [R.392] अभिवादिम्ह आसनं अदम्ह, यथासत्ति यथाबलं संविभजिम्ह, उपनिसीदिम्ह धम्मस्सवनाय, ओहितसोता च धम्मं सुणिम्ह, सुत्वा च धम्मं धारयिम्ह, धातानं च धम्मानं अत्थं उपपरिक्खिम्ह, अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मं पटिपज्जिम्ह। ता मयं, भन्ते, परिपुण्णकम्मन्ता अविप्पटिसारिनियो अपच्चानुतापिनियो पणीतं कायं उपपन्ना' ति। एतानि, भिक्खवे, रुक्खमूलानि एतानि सुञ्ञागारानि। झायथ, भिक्खवे, मा पमादत्थ, मा पच्छा विप्पाटिसारिनो अहुवत्थ सेय्यथापि ता पुरिमिका देवता'' ति॥ ●

[B.195] **१०. वेलामसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो अनाथपिण्डिकं गहपतिं भगवा एतदवोच—

२. ''अपि नु ते, गहपति, कुले दानं दीयती'' ति?

''...उसका अर्थपरीक्षण भी करते थे, परन्तु उसका अर्थपरीक्षण कर धारण नहीं करते थे। ...पूर्ववत्...। (८)

''भिक्षुओ! कुछ अन्य बहुत से देवता ...पूर्ववत्... अर्थपरीक्षण करते हुए भी धारण कर के भी तदनुसार आचरण नहीं करते थे। अतः इस कर्महीनता के कारण प्रायश्चित एवं पश्चात्ताप के साथ हीन योनि में उत्पन्न हुए। (९) (क)

४. ''भिक्षुओ! कुछ अन्य देवता ...'आदर भी करते थे, अभिवादन भी करते थे, आसन भी देते थे, भोजन भी कराते थे, धर्मश्रवण भी करते थे, उस पर ध्यान देते थे, उस को सुन कर धारण भी करते थे, सुनकर उस का अर्थपरीक्षण भी करते थे, अर्थपरीक्षण कर धारण भी करते थे, तथा उस (धर्म) को धारण कर तदनुसार आचरण भी करते थे। इस पूर्णकर्मता के कारण हमको उस जन्म में न कभी कोई पश्चात्ताप हुआ, न कोई प्रायश्चित्त ही करना पड़ा। तथा अन्त में हमने यह उत्तम शरीर प्राप्त किया।' भिक्षुओ! ये शान्त वृक्षमूल हैं, शून्यागार हैं। यहाँ स्थिरचित्त बैठ कर साधना करो। साधना में कोई प्रमाद न होने पावे कि जिस के कारण तुम को बाद में कभी कोई पश्चात्ताप होने लगे। जैसाकि उन देवताओं को हुआ था॥'' (ख) ●

१०. वेलाम सूत्र : : दान के सत्फल

१. एक समय भगवान् श्रावस्ती के ...पूर्ववत्... अनाथपिण्डिक गृहपति से भगवान् ने यह पूछा—

"दीयति मे, भन्ते, कुले दानं; तं च खो लूखं कणाजकं बिळङ्गदुतियं" ति।

"लूखं चे पि, गहपति, दानं देति पणीतं वा; तं च असक्कच्चं देति, अचित्तीकत्वा देति, असहत्था देति, अपविद्धं देति, अनागमनदिट्ठिको देति। यत्थ यत्थ तस्स तस्स दानस्स विपाको निब्बत्तति, न उळाराय भत्तभोगाय चित्तं नमति, न उळाराय वत्थभोगाय चित्तं नमति, न उळाराय यानभोगाय चित्तं नमति, न उळारेसु पञ्चसु कामगुणेसु भोगाय चित्तं नमति। ये पिस्स ते होन्ति पुत्ता ति वा दारा ति वा दासा ति वा पेस्सा ति वा कम्म- [R.393] करा ति वा, ते पि न सुस्सूसन्ति न सोतं ओदहन्ति न अञ्ञा चित्तं उपट्ठपेन्ति। तं [N.36] किस्स हेतु? एवं हेतं, गहपति, होति असक्कच्चं कतानं कम्मानं विपाको।

३. "लूखं चे पि, गहपति, दानं देति पणीतं वा; तं च सक्कच्चं देति, चित्तीकत्वा देति, सहत्था देति, अनपविद्धं देति, आगमनदिट्ठिको देति। यत्थ यत्थ तस्स तस्स दानस्स विपाको निब्बत्तति, उळाराय भत्तभोगाय चित्तं नमति, उळाराय वत्थभोगाय चित्तं नमति, उळाराय यानभोगाय चित्तं नमति, उळारेसु पञ्चसु कामगुणेसु भोगाय चित्तं नमति। ये पिस्स ते होन्ति पुत्ता ति वा दारा ति वा दासा ति वा पेस्सा ति वा कम्मकरा ति वा, ते पि सुस्सूसन्ति सोतं ओदहन्ति अञ्ञा चित्तं उपट्ठपेन्ति। तं किस्स हेतु? एवं हेतं, गहपति, होति सक्कच्चं कतानं कम्मानं विपाको।

४. "भूतपुब्बं, गहपति, वेलामो नाम ब्राह्मणो अहोसि। सो एवरूपं दानं अदासि

---

२. "गृहपति! तुम्हारे कुल (घर) में (अन्न) दान किया जाता है?"

"भन्ते! दान तो किया जाता है, परन्तु उस दान में केवल मोटा अन्न होता है, साथ में कुछ सिरका भी।"

"गृहपति! अन्नदान में इस का महत्त्व नहीं है कि तुम उस में रूखा सूखा अन्न दे रहे हो या उत्तम एवं रुचिकर। जो दिया जाता है वह असत्कारपूर्वक दिया जाने पर, मन न लगा कर दिया जाने पर, अपने हाथ से न दिया जाने पर, फेंक कर (उपेक्षापूर्वक) दिये जाने पर, या 'यह दिया हुआ लौट कर नहीं आयगा'—यह सोच कर दिया जाने पर जब जब जहाँ जहाँ फल देता है वह कोई बहुत अच्छा फल नहीं होता। न उस दाता को उदार भोजन, उदार वस्त्र न उदार यान, न उदार पञ्च कामभोग ही उपलब्ध हो पाते हैं। इतना ही नहीं, उस के पुत्र पौत्रादि तथा स्त्री आदि पारिवारिक जन भी, उस के दास या कर्मकर भी इस कर्म के फलस्वरूप न धर्मश्रवण में चित्त लगाते हैं, न उस को जानने का ही मन बनाते हैं। वह किस लिये? वह इस लिये कि गृहपति! ऐसे उपेक्षापूर्वक किये दान का यही फल होता है।

३. 'गृहपति! अन्नदान भले ही रूखा सूखा हो या उत्तम—इस का महत्त्व तभी है जब वह सत्कारपूर्वक, मन लगाकर, अपने हाथ से दिया जाने पर, उपेक्षापूर्वक फेंक कर न दिया जाय या फिर, 'यह पुनः लौटेगा'—ऐसा सोच कर ही दिया जाय। तभी उस दान का अच्छा फल मिलता है। परिणामस्वरूप उसको भी अच्छा अन्न, अच्छा वस्त्र, अच्छा यान उपलब्ध होता है। उस को अधिक से अधिक पञ्चकामभोग उपलब्ध होते हैं। उसके पुत्र पौत्र, स्त्री आदि पारिवारिकजन या उस के

[B.196] महादानं—चतुरासीति सुवण्णपातिसहस्सानि अदासि रूपियपूरानि, चतुरासीति रूपियपातिसहस्सानि अदासि सुवण्णपूरानि, चतुरासीति कंसपातिसहस्सानि अदासि हिरञ्ञपूराणि, चतुरासीति हत्थिसहस्सानि अदासि सोवण्णालङ्कारानि सोवण्णधजानि हेमजालप्पटिच्छन्नानि, चतुरासीति रथसहस्सानि अदासि सीहचम्मपरिवारानि ब्यग्घचम्मपरिवारानि दीपिचम्मपरिवारानि पण्डुकम्बलपरिवारानि सोवण्णालङ्कारानि सोवण्णधजानि हेमजालप्पटिच्छन्नानि, चतुरासीति धेनुसहस्सानि अदासि दुकूलसन्धनानि कंसूपधारणानि, चतुरासीति कञ्ञासहस्सानि अदासि आमुत्तमणिकुण्डलायो, चतुरासीति [R.394] पल्लङ्कसहस्सानि अदासि गोनकत्थतानि पटिकत्थतानि पटलिकत्थतानि कदलिमिगपवरपच्चत्थरणानि सउत्तरच्छदानि उभतोलोहितकूपधानानि, चतुरासीति वत्थकोटिसहस्सानि अदासि खोमसुखुमानं कोसेय्यसुखुमानं कम्बलसुखुमानं कप्पासिकसुखुमानं, को पन वादो अन्नस्स पानस्स खज्जस्स भोज्जस्स लेय्यस्स पेय्यस्स, नज्जो मञ्ञे विस्सन्दन्ति।

५. ''सिया खो पन ते, गहपति, एवमस्स—'अञ्ञो नून तेन समयेन वेलामो ब्राह्मणो अहोसि, सो तं दानं अदासि महादानं' ति। न खो पनेतं, गहपति, एवं दट्ठब्बं। अहं तेन समयेन वेलामो ब्राह्मणो अहोसिं। अहं तं दानं अदासिं महादानं। तस्मिं खो पन, गहपति, दाने न कोचि दक्खिणेय्यो अहोसि, न तं कोचि दक्खिणं विसोधेति।

नौकर चाकर भी धर्मश्रवण में मन लगाते हैं, उस धर्म को जानने का मन बनाते हैं। वह किसलिये? वह इस लिये कि ऐसे सत्कारपूर्वक किये दान का यही फल होता है।

वेलामब्राह्मणकथा—४. ''पहले कभी, गृहपति! कोई वेलाम नामक ब्राह्मण हुआ था। उसने ऐसा महादान किया था—चाँदी से भरी हुई चौरासी हजार सोने की थालियाँ; सोने से भरी हुई चौरासी हजार चाँदी की थालियाँ; शुद्ध सोने से भरी हुई चौरासी हजार काँसे की थालियाँ; विविध सुवर्णालङ्कारों से मण्डित, सुवर्णध्वजायुक्त तथा सुवर्णजालनिर्मित लवादा से आच्छादित चौरासी हजार हाथी; सिंहचर्म एवं व्याघ्रचर्म तथा द्वीपिचर्म से आवृत और सुवर्ण जाल से आच्छादित, सुनहरी ध्वजाओं से युक्त चौरासी हजार रथ; स्वच्छ वस्त्र एवं कांस्य अलङ्कारों से युक्त चौरासी हजार गौएँ; मणिकुण्डल पहनी हुई चौरासी हजार कन्याएँ; चौरासी पलंग—जिन पर गोनक (ऊन का गलीचा) पट्टिक (रेशमी वस्त्र) पटलिक (ऊनी चादर) एवं कदली मृग के चर्म से आवृत, उत्तरच्छद (मसहरी) के साथ दोनों तरफ लाल तकिये लगे हुए थे; चौरासी हजार क्षौम, कौषेय कम्बल एवं कपास से बने वस्त्र सम्मिलित थे। खाद्य, पेय, लेह्य एवं चोष्य—आदि भोज्य पदार्थों की तो कोई कमी ही नहीं थी, मानो उनकी नदियाँ बह रही हों!

५. ''हो सकता है, गृहपति! तुमको यह विचार कि उस समय का यह वेलाम ब्राह्मण कोई अन्य ब्राह्मण ही था जिसने यह अनुपम महादान किया था; परन्तु, गृहपति! तुम को यह नहीं सोचना चाहिये; क्यों कि उस समय मैं ही वह वेलाम ब्राह्मण था, मैने ही वह महादान किया था। उस समय न कोई दान से रहित रह गया था, न कोई उस की दक्षिणा लेने वाला रह गया था।

"यं, गहपति, वेलामो ब्राह्मणो दानं अदासि महादानं, यो चेकं दिट्ठिसम्पन्नं भोजेय्य, इदं ततो महप्फलतरं।

"यो च सतं दिट्ठिसम्पन्नानं भोजेय्य, यो चेकं सकदागामिं भोजेय्य, इदं ततो महप्फलतरं।

"यो च सतं सकदागामीनं भोजेय्य, यो चेकं अनागामिं भोजेय्य ...पे०... यो च सतं अनागामीनं भोजेय्य, यो चेकं अरहन्तं भोजेय्य ...पे०... यो च सतं अरहन्तानं [B.197] भोजेय्य, यो चेकं पच्चेकबुद्धं भोजेय्य ...पे०... यो च सतं पच्चेकबुद्धानं भोजेय्य, [R.395] यो च तथागतं अरहन्तं सम्मासम्बुद्धं भोजेय्य ...पे०... यो च बुद्धप्पमुखं भिक्खुसङ्घं भोजेय्य ...पे०... यो च चातुद्दिसं सङ्घं उद्दिस्स विहारं कारापेय्य ...पे०... यो च पसन्नचित्तो बुद्धं च धम्मं च सङ्घं च सरणं गच्छेय्य ...पे०... यो च पसन्नचित्तो सिक्खापदानि समादियेय्य— पाणातिपाता वेरमणिं, अदिन्नादाना वेरमणिं, कामेसुमिच्छाचारा वेरमणिं, मुसावादा वेरमणिं, सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना वेरमणिं, यो च अन्तमसो गन्धोहनमत्तं पि मेत्तं चित्तं भावेय्य, इदं ततो महप्फलतरं।

"यं च, गहपति, वेलामो ब्राह्मणो दानं अदासि महादानं, यो चेकं दिट्ठिसम्पन्नं भोजेय्य... यो च सतं दिट्ठिसम्पन्नानं भोजय्य, यो चेकं सकदागामिं भोजेय्य... यो च सतं सकदागामीनं भोजेय्य, यो चेकं अनागामिं भोजेय्य... यो च सतं अनागामीनं भोजेय्य, यो

"गृहपति! एक ओर वह वेलाम ब्राह्मण का महादान और एक ओर किसी एक बार किसी दृष्टिसम्पन्न (साधक) को भोजन कराना—इन दोनों में से इस दृष्टिसम्पन्न को भोजन कराना ही अधिक फलप्रद है।

"तथा जो एक सौ दृष्टिसम्पन्न साधकों को भोजन करावे और दूसरा किसी सकृदागामी को भोजन करावे—इन में सकृदागामी को भोजन कराना ही श्रेयस्कर समझा जायगा।

"जो एक सौ सकृदागामियों को भोजन करावे तथा दूसरा एक अनागामी को ...पूर्ववत्...।

"जो सौ अनागामियों को भोजन करावे तथा दूसरा एक अर्हत् को भोजन करावे ...पूर्ववत्...।

"जो सौ अर्हतों को भोजन करावे तथा दूसरा एक प्रत्येकबुद्ध को भोजन करावे ...पूर्ववत्...।

"जो सौ प्रत्येकबुद्धों को भोजन करावे तथा दूसरा एक तथागत सम्यक्सम्बुद्ध को ...पूर्ववत्...।

"...जो बुद्धप्रमुख भिक्षुसङ्घ को भोजन करावे ...पूर्ववत्...।

"...जो चारों दिशाओं के सङ्घ के लिये विहार बनवावे ...पूर्ववत्...।

"...जो प्रसन्नचित्त हो कर बुद्ध धर्म एवं सङ्घ की शरण में जाय ...पूर्ववत्...।

"...जो प्रसन्नचित्त होकर इन पाँच शिक्षापदों को धारण करे—१. प्राणातिपात से दूर रहना; २. अदत्तादान (चौरी) से दूर रहना; ३. कामवासना के मिथ्याचार (व्यभिचार) से दूर रहना, ४.

चेकं अरहन्तं भोजेय्य... यो च सतं अरहन्तानं भोजेय्य, यो चेकं पच्चेकबुद्धं भोजेय्य... यो च सतं पच्चेकबुद्धानं भोजेय्य, यो च तथागतं अरहन्तं सम्मासम्बुद्धं भोजेय्य... यो च बुद्धप्पमुखं भिक्खुसङ्घं भोजेय्य, यो च चातुद्दिसं सङ्घं उद्दिस्स विहारं कारापेय्य... यो च पसन्नचित्तो बुद्धं च धम्मं च सङ्घं च सरणं गच्छेय्य, यो च पसन्नचित्तो सिक्खापदानि [N.38] समादियेय्य—पाणातिपाता वेरमणिं ...पे०... सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना वेरमणिं, यो [R.396] च अन्तमसो गन्धोहनमत्तं पि मेत्तचित्तं भावेय्य, यो च अच्छरासङ्घातमत्तं पि अनिच्चसञ्ञं भावेय्य, इदं ततो महप्फलतरं'' ति॥ ●

सीहनादवग्गो दुतियो॥

तस्सुद्दानं

नादो सउपादिसेसो च, कोट्ठिकेन समिद्धिना।
गण्डसञ्ञा कुलं मेत्ता, देवता वेलामेन चा ति॥ ●

३. सत्तावासवग्गो

[B.198] **१. तिठानसुत्तं** : १. ''तीहि, भिक्खवे, ठानेहि उत्तरकुरुका मनुस्सा देवे च तावतिंसे अधिग्गण्हन्ति, जम्बुदीपके च मनुस्से। कतमेहि तीहि? अममा, अपरिग्गहा,

---

मृषावाद (असत्य) से दूर रहना; एवं ५. मद्यपान से दूर रहना ...पूर्ववत्। ...जो गन्धमात्र भी मैत्रीचित्त की भावना करे—यह उसकी अपेक्षा अधिक फलप्रद है।

''और, गृहपति! वेलाम ब्राह्मण ने जो महादान किया था, उस के बदले में एक दृष्टिसम्पन्न को एक बार भोजन करा दिया जाय ...पूर्ववत्... जो गन्धमात्र भी मैत्रीचित्त की भावना करे या जो उससे भी आगे बढ कर एक चुटकी (अप्सरासङ्घात) बजाने जितने समय तक ही यदि अनित्यसंज्ञा की भावना करे तो वह उससे भी अधिक श्रेष्ठ फल पाता है''॥ ●

सिंहनादवर्ग द्वितीय सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. सिंहनादसूत्र, २. सोपधिशेषसूत्र, ३. कौष्ठिकसूत्र, ४. समृद्धिसूत्र, ५. गण्डसूत्र, ६. संज्ञासूत्र, ७. कुलसूत्र, ८. नवाङ्ग उपोसथसूत्र, ९. देवतासूत्र, १०. वेलामसूत्र॥ ●

३ सत्त्वावासवर्ग

१. त्रिस्थानसूत्र : : तीन तीन स्थानों से विशेष

१. भिक्षुओ! उत्तरकुरु देशवासी मनुष्य त्रायस्त्रिंशलोकवासी देवों तथा जम्बुद्वीपवासी मनुष्यों

नियतायुका, विसेसगुणा—इमेहि खो, भिक्खवे, तीहि ठानेहि उत्तरकुरुका मनुस्सा देवे च तावतिंसे अधिग्गण्हन्ति जम्बुदीपके च मनुस्से।

२. "तीहि, भिक्खवे, ठानेहि देवा तावतिंसा उत्तरकुरुके च मनुस्से अधिग्गण्हन्ति, जम्बुदीपके च मनुस्से। कतमेहि तीहि? दिब्बेन आयुना, दिब्बेन वण्णेन, दिब्बेन सुखेन— इमेहि खो, भिक्खवे, तीहि ठानेहि देवा तावतिंसा उत्तरकुरुके च मनुस्से अधिग्गण्हन्ति जम्बुदीपके च मनुस्से।

३. "तीहि, भिक्खवे, ठानेहि जम्बुदीपका मनुस्सा उत्तरकुरुके च मनुस्से अधिग्गण्हन्ति देवे च तावतिंसे। कतमेहि तीहि? सूरा, सतिमन्तो, इध ब्रह्मचरियवासो— इमेहि खो, भिक्खवे, तीहि ठानेहि जम्बुदीपका मनुस्सा उत्तरकुरुके च मनुस्से अधिग्गण्हन्ति देवे च तावतिंसे" ति॥ ●

२. अस्सखळुङ्कसुत्तं : १. "तयो च, भिक्खवे, अस्सखळुङ्के [N.39,R.397] देसेस्सामि तयो च पुरिसखळुङ्के तयो च अस्सपरस्से तयो च पुरिसपरस्से तयो च भद्दे अस्साजानीये तयो च भद्दे पुरिसाजानीये। तं सुणाथ ...पे०...।

२. "कतमे च, भिक्खवे, **तयो अस्सखळुङ्का**? इध, भिक्खवे, एकच्चो अस्स-

---

से तीन बातों में अधिक श्रेष्ठ होते हैं। किन तीन बातों में? (१) वे ममत्वरहित होते हैं, (२) वे अपरिग्रही होते हैं, तथा (३) उन की आयु निश्चित होती है—यही उन में विशेष गुण है। भिक्षुओ! इन तीन बातों में उत्तरकुरुदेशवासी मनुष्य त्रायस्त्रिंशवासी देवों तथा जम्बुद्वीपवासी मनुष्यों से श्रेष्ठ होते हैं। (३)

२. "भिक्षुओ! तीन स्थानों में विशेष के कारण त्रायस्त्रिंश देव उत्तरकुरुदेशवासी तथा जम्बुद्वीपवासी मनुष्यों से श्रेष्ठ होते हैं। किन तीन स्थानों से? (१) दिव्य आयु से, (२) दिव्य वर्ण से तथा (३) दिव्य सुख से। भिक्षुओ! त्रायस्त्रिंशदेव इन तीन स्थानों के कारण उत्तरकुरु एवं जम्बुद्वीपवासी मनुष्यों से श्रेष्ठ होते हैं। (३)

३. "और, भिक्षुओ! जम्बुद्वीपवासी मनुष्य इन तीन स्थानों के कारण उत्तरकुरुवासी मनुष्यों एवं त्रायस्त्रिंशवासी देवों से श्रेष्ठ होते हैं। कौन से तीन? (१) वे वीर होते हैं, (२) वे स्मृतिमान् होते हैं, तथा (३) वे यहाँ धर्मसाधना करने में समर्थ होते हैं। भिक्षुओ! इन तीन स्थानों के कारण जम्बुद्वीपवासी मनुष्य उत्तरकुरुवासी मनुष्यों एवं त्रायस्त्रिंशवासी देवों से अधिक श्रेष्ठ होते हैं॥" (३) (३ + ३ + ३ = ९) ●

२. अश्वखळुङ्कसूत्र : : नवविध अश्व एवं नवविध पुरुष

१. भिक्षुओ! अब मैं तुम्हें तीन हीन जाति के अश्वों तथा पुरुषों के विषय में तथा तीन उच्च जाति के अश्वों तथा पुरुषों के विषय में एवं तीन श्रेष्ठ जाति के अश्वों तथा पुरुषों के विषय में बताऊँगा, उसे ध्यानपूर्वक सुनो ...पूर्ववत्...[१]॥" ●

---

१. यह सूत्र इसी ग्रन्थ के **त्रिक निपात** (प्रथम भाग) के योधाजीववर्ग, में अश्वखळुङ्कसूत्र, अश्वपुरुषसूत्र एवं अश्वाजानेयसूत्र—इस प्रकार त्रिधा विभक्त कर पठित है। अतः इसका अविकल उसी प्रकरण में देख लें—स०।

खळुङ्को जवसम्पन्नो होति, न वण्णसम्पन्नो, न आरोहपरिणाहसम्पन्नो। इध पन, भिक्खवे, एकच्चो अस्सखळुङ्को जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च, न आरोहपरिणाहसम्पन्नो। इध पन, भिक्खवे, एकच्चो अस्सखळुङ्को जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च आरोह-परिणाहसम्पन्नो च। इमे खो, भिक्खवे, तयो अस्सखळुङ्का।

[B.199] ३. ''कतमे च, भिक्खवे, **तयो पुरिसखळुङ्का**? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुरिसखळुङ्को जवसम्पन्नो होति, न वण्णसम्पन्नो, न आरोहपरिणाहसम्पन्नो। इध पन, भिक्खवे, एकच्चो पुरिसखळुङ्को जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च, न आरोह-परिणाहसम्पन्नो। इध पन, भिक्खवे, एकच्चो पुरिसखळुङ्को जवसम्पन्नो च होति वण्ण-सम्पन्नो च आरोहपरिणाहसम्पन्नो च।

४. ''कथं च, भिक्खवे, पुरिसखळुङ्को जवसम्पन्नो होति, न वण्णसम्पन्नो न आरोहपरिणाहसम्पन्नो? इध, भिक्खवे, भिक्खु 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं [R.398] दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति। इदमस्स जवस्मिं वदामि। अभिधम्मे खो पन अभिविनये पञ्हं पुट्ठो संसादेति, नो विस्सज्जेति। इदमस्स न वण्णस्मिं वदामि। न खो पन लाभी होति चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं। इदमस्स न आरोहपरिणाहस्मिं वदामि। एवं खो, भिक्खवे, पुरिसखळुङ्को जवसम्पन्नो होति, न वण्णसम्पन्नो न आरोहपरिणाहसम्पन्नो।

५. ''कथं च, भिक्खवे, पुरिसखळुङ्को जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च, न [N.40] आरोहपरिणाहसम्पन्नो? इध, भिक्खवे, भिक्खु 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति ...पे०... 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति। इदमस्स जवस्मिं वदामि। अभिधम्मे खो पन अभिविनये पञ्हं पुट्ठो विस्सज्जेति, नो संसादेति। इदमस्स वण्णस्मिं वदामि। न खो पन लाभी होति चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चय-भेसज्जपरिक्खारानं। इदमस्स न आरोहपरिणाहस्मिं वदामि। एवं खो, भिक्खवे, पुरिसखळुङ्को जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च, न आरोहपरिणाहसम्पन्नो।

६. ''कथं च, भिक्खवे, पुरिसखळुङ्को जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च आरोहपरिणाहसम्पन्नो च? इध, भिक्खवे, भिक्खु 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति ...पे०... 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति। इदमस्स जवस्मिं वदामि। अभिधम्मे खो पन अभिविनये पञ्हं पुट्ठो विस्सज्जेति, नो संसादेति। इदमस्स [B.200,R.399] वण्णस्मिं वदामि। लाभी खो पन होति चीवरपिण्डपातसेनासन-गिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं। इदमस्स आरोहपरिणाहस्मिं वदामि। एवं खो, भिक्खवे, पुरिसखळुङ्को जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च आरोहपरिणाहसम्पन्नो च।

''इमे खो, भिक्खवे, तयो पुरिसखळुङ्का।

७. ''कतमे च, भिक्खवे, **तयो अस्सपरस्सा**? इध, भिक्खवे, एकच्चो अस्सपरस्सो ...पे०... जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च आरोहपरिणाहसम्पन्नो च। इमे खो, भिक्खवे, तयो अस्सपरस्सा।

८. ''कतमे च, भिक्खवे, **तयो पुरिसपरस्सा**? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुरिसपरस्सो ...पे०... जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च आरोहपरिणाहसम्पन्नो च।

९. ''कथं च, भिक्खवे, पुरिसपरस्सो ...पे०... जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च आरोहपरिणाहसम्पन्नो च? इध, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति, तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। इदमस्स जवस्मिं वदामि। अभिधम्मे खो पन अभिविनये पञ्हं पुट्ठो विस्सज्जेति, नो संसादेति। इदमस्स वण्णस्मिं वदामि। लाभी खो पन होति चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं। इदमस्स आरोहपरिणाहस्मिं वदामि। एवं खो, भिक्खवे, पुरिसपरस्सो जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च आरोहपरिणाहसम्पन्नो च। इमे खो, भिक्खवे, [N.41] तयो पुरिसपरस्सा।

१०. ''कतमे च, भिक्खवे, **तयो भद्दा अस्साजानीया**? इध, भिक्खवे, एकच्चो भद्दो अस्साजानीयो ...पे०... जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च आरोहपरिणाहसम्पन्नो च। इमे खो, भिक्खवे, तयो भद्दा अस्साजानीया। [R.400]

११. ''कतमे च, भिक्खवे, **तयो भद्दा पुरिसाजानीया**? इध, भिक्खवे, एकच्चो भद्दो पुरिसाजानीयो ...पे०... जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च आरोहपरिणाहसम्पन्नो च।

१२. ''कथं च, भिक्खवे, भद्दो पुरिसाजानीयो ...पे०... जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च आरोहपरिणाहसम्पन्नो च? इध, भिक्खवे, भिक्खु आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज [B.201] विहरति। इदमस्स जवस्मिं वदामि। अभिधम्मे खो पन अभिविनये पञ्हं पुट्ठो विस्सज्जेति, नो संसादेति। इदमस्स वण्णस्मिं वदामि। लाभी खो पन होति चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं। इदमस्स आरोहपरिणाहस्मिं वदामि। एवं खो, भिक्खवे, भद्दो पुरिसाजानीयो जवसम्पन्नो च होति वण्णसम्पन्नो च आरोहपरिणाहसम्पन्नो च।

इमे खो, भिक्खवे, तयो भद्दा पुरिसाजानीया'' ति॥ ●

३. तण्हामूलकसुत्तं : १. ''नव भिक्खवे, तण्हामूलके धम्मे देसेस्सामि, तं सुणाथ... कतमे च, भिक्खवे, नव तण्हामूलका धम्मा? तण्हं पटिच्च परियेसना, परियेसनं पटिच्च लाभो, लाभं पटिच्च विनिच्छयो, विनिच्छयं पटिच्च छन्दरागो, छन्दरागं पटिच्च

---

३. तृष्णामूलकसूत्र : : नौ तृष्णामूलक धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुम को तृष्णामूलक नौ धर्मों की देशना करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! ये तृष्णामूलक धर्म कौन से होते हैं? (१) तृष्णा की अपेक्षा कर पर्येषणा होती है, (२)

अज्झोसानं, अज्झोसानं पटिच्च परिग्गाहो, परिग्गहं पटिच्च मच्छरियं, मच्छरियं पटिच्च [R.401,N.42] आरक्खो, आरक्खाधिकरणं दण्डादानं सत्थादानं कलहविग्गहविवाद-तुवंतुवं-पेसुञ्ञमुसावादा अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति। इमे खो, भिक्खवे, नव तण्हामूलका धम्मा'' ति॥ ●

४. सत्तावाससुत्तं : १. ''नवयिमे, भिक्खवे, सत्तावासा। कतमे नव? सन्ति, भिक्खवे, सत्ता नानत्तकाया नानत्तसञ्ञिनो, सेय्यथापि मनुस्सा, एकच्चे च देवा, एकच्चे च विनिपातिका। अयं पठमो सत्तावासो।

२. ''सन्ति, भिक्खवे, सत्ता नानत्तकाया एकत्तसञ्ञिनो, सेय्यथापि देवा ब्रह्म-कायिका पठमाभिनिब्बत्ता। अयं दुतियो सत्तावासो।

३. ''सन्ति, भिक्खवे, सत्ता एकत्तकाया नानत्तसञ्ञिनो, सेय्यथापि देवा आभस्सरा। अयं ततियो सत्तावासो।

४. ''सन्ति, भिक्खवे, सत्ता एकत्तकाया एकत्तसञ्ञिनो, सेय्यथापि देवा सुभकिण्हा। अयं चतुत्थो सत्तावासो।

५. ''सन्ति, भिक्खवे, सत्ता असञ्ञिनो अप्पटिसंवेदिनो, सेय्यथापि देवा असञ्ञसत्ता। अयं पञ्चमो सत्तावासो।

[B.202] ६. ''सन्ति, भिक्खवे, सत्ता सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं

पर्येषणा की अपेक्षा कर लाभ, (३) लाभ की अपेक्षा कर विनिश्चय, (४) विनिश्चय की अपेक्षा कर छन्दराग, (५) छन्दराग की अपेक्षा कर अध्यवसान (आसक्ति), (६) अध्यवसान की अपेक्षा कर परिग्रह, (७) परिग्रह की अपेक्षा कर मात्सर्य (अभिमान), (८) मात्सर्य की अपेक्षा कर आरक्षा, और इस आरक्षा के कारण लोक में (९) दण्ड एवं शस्त्र उठाना, परस्पर कलह, विवाद, तूँ तूँ-मैं मैं, पैशुन्य (चुगली) एवं असत्यभाषण आदि अनेक पापमय अकुशल धर्म उत्पन्न होते हैं। भिक्षुओ! ये नौ तृष्णामूलक धर्म होते हैं॥'' ●

४. सत्त्वावाससूत्र : : नौ सत्त्वावास

१. ''भिक्षुओ! प्राणियों के ये नौ आवास होते हैं। कौन से नौ? यहाँ, भिक्षुओ! कुछ प्राणी विविध शरीरों एवं विविध संज्ञाओं वाले होते हैं; जैसे—मनुष्य, या देवता या कुछ नरक भोगने वाले प्राणी। यह प्रथम सत्त्वावास कहलाता है। (१)

२. ''भिक्षुओ! यहाँ कुछ ऐसे प्राणी भी होते हैं, जो शरीर से अनेक होते हुए भी संज्ञा (नाम) उनकी एक ही होती है। जैसे—ब्रह्मकायिक देवता, जो यहां सर्वप्रथम जन्मे थे। यह द्वितीय सत्त्वावास है। (२)

३. ''और भिक्षुओ! कुछ प्राणी ऐसे हैं, जो शरीर से एक हैं, परन्तु संज्ञाएँ उनकी अनेक हैं। जैसे—आभास्वर देव। यह तृतीय सत्त्वावास है। (३)

४. ''और, भिक्षुओ! कुछ प्राणी ऐसे हैं, जो शरीर एवं संज्ञा—दोनों से एक ही कहलाते हैं। जैसे—शुभकृत्स्न देव। यह चतुर्थ सत्त्वावास है। (४)

अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनूपगा। अयं छट्ठो सत्तावासो।

७. "सन्ति, भिक्खवे, सत्ता सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनूपगा। अयं सत्तमो सत्तावासो।

८. "सन्ति, भिक्खवे, सत्ता सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकञ्चञ्ञायतनूपगा। अयं अट्ठमो सत्तावासो।

९. "सन्ति, भिक्खवे, सत्ता सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतनूपगा। अयं नवमो सत्तावासो। इमे खो, भिक्खवे, नव सत्तावासा" ति॥ ●

५. पञ्ञासुत्तं : १. "यतो खो, भिक्खवे, भिक्खुनो पञ्ञाय चित्तं सुपरिचितं होति, तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो कल्लं वचनाय—'खीणा जाति, वुसितं [N.43, R.402] ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति।

२. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खुनो पञ्ञाय चित्तं सुपरिचितं होति? 'वीतरागं मे चित्तं' ति पञ्ञाय चित्तं सुपरिचितं होति; 'वीतमोहं मे चित्तं' ति पञ्ञाय चित्तं सुपरिचितं होति; 'असरागधम्मं मे चित्तं' ति पञ्ञाय चित्तं सुपरिचितं होति; 'असदोसधम्मं मे चित्तं' ति

---

५. "और, भिक्षुओ! कुछ प्राणी ऐसे हैं जो असंज्ञी एवं अप्रतिसंवेदी (अनुभवरहित) होते हैं। जैसे—असंज्ञ सत्त्व। यह पञ्चम सत्त्वावास है। (५)

६. "भिक्षुओ! कुछ प्राणी ऐसे भी होते हैं, जो रूपसंज्ञाओं का सर्वथा अतिक्रमण कर तथा प्रतिघसंज्ञाओं के अस्त हो जाने से और नानात्वसंज्ञाओं को मन में न करने से 'आकाश अनन्त है'—ऐसा मान कर आकाशानन्त्यायतनोपग देव होते हैं। यह षष्ठ सत्त्वावास कहलाता है। (६)

७. "भिक्षुओ! कुछ प्राणी ऐसे होते हैं, जो इस आकाशानन्त्यायतन भूमि का भी सर्वथा अतिक्रमण कर 'विज्ञान अनन्त है'—ऐसा मान कर विज्ञानानन्त्यायतनोपगदेव होते हैं। यह सप्तम सत्त्वावास है। (७)

८. "भिक्षुओ! कुछ प्राणी ऐसे भी हैं जो विज्ञानानन्त्यायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर 'कुछ भी नहीं है'—ऐसा मान कर आकिञ्चन्यायतनोपग देव होते हैं। यह अष्टम सत्त्वावास है। (८)

९. "भिक्षुओ! कुछ प्राणी इस आकिञ्चन्यायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर 'न संज्ञा न असंज्ञा'—ऐसा मानते हुए नैवसंज्ञानासंज्ञायतन देव होते हैं। यह नवम सत्त्वावास है।

इस प्रकार, भिक्षुओ! ये नौ सत्त्वावास कहलाते हैं॥" ●

५. प्रज्ञासूत्र : : भिक्षु का नवविध चित्त

१. "भिक्षुओ! जिस भिक्षु का चित्त प्रज्ञा द्वारा सुपरिचित (स्थिर) हो जाता है वह भिक्षु स्वयं के लिये यह कह सकता है—'मेरी जाति (जन्मपरम्परा) क्षीण हो चुकी है, मेरी धर्मसाधना पूर्ण हो चुकी है, मैं अपना कर्तव्य पूर्ण कर चुका हूँ, अब आगे शरीर धारण नहीं करना है।'

२. "भिक्षुओ! कैसे किसी भिक्षु का चित्त प्रज्ञा द्वारा सुपरिचित होता है? (१) 'मेरा चित्त वीतराग है'..., (२) मेरा चित्त द्वेषरहित है'..., (३) 'मेरा चित्त मोहरहित है'..., (४) 'मेरा चित्त

पञ्ञाय चित्तं सुपरिचितं होति; 'असमोहधम्मं मे चित्तं' ति पञ्ञाय चित्तं सुपरिचितं होति; 'अनावत्तिधम्मं मे चित्तं कामभवाया'' ति ...पे०... रूपभवाया' ति पञ्ञाय चित्तं सुपरिचितं होति; 'अनावत्तिधम्मं मे चित्तं अरूपभवाया'' ति पञ्ञाय चित्तं सुपरिचितं होति। यतो खो, भिक्खवे, भिक्खुनो पञ्ञाय चित्तं सुपरिचितं होति, तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो कल्लं वचनाय—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी'' ति॥

६. सिलायूपसुत्तं : १. एकं समयं आयस्मा च सारिपुत्तो आयस्मा च चन्दिकापुत्तो [B.203] राजगहे विहरन्ति वेळुवने कलन्दकनिवापे। तत्र खो आयस्मा चन्दिकापुत्तो भिक्खू आमन्तेसि—''देवदत्तो, आवुसो, भिक्खूनं एवं धम्मं देसेति—'यतो खो, आवुसो, भिक्खुनो चेतसा चितं होति, तस्सेतं भिक्खुनो कल्लं वेय्याकरणाय—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, [R.403] कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' '' ति।

२. एवं वुत्ते आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं चन्दिकापुत्तं एतदवोच—''न खो, आवुसो चन्दिकापुत्त, देवदत्तो भिक्खूनं एवं धम्मं देसेति—'यतो खो, आवुसो, भिक्खुनो [N.44] चेतसा चितं होति, तस्सेतं भिक्खुनो कल्लं वेय्याकरणाय—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। एवं च खो, आवुसो, चन्दिकापुत्त, देवदत्तो भिक्खूनं धम्मं देसेति—'यतो खो, आवुसो, भिक्खुनो चेतसा चित्तं

रागधर्मरहित है' (५) 'मेरा चित्त द्वेषधर्मरहित है'... (६) 'मेरा चित्त मोहधर्मरहित है' (७) 'मेरा चित्त अब कामभव के लिये अनावृत्तिस्वभाव वाला हो गया'... (८) 'मेरा चित्त अब रूपभव के लिये अनावृत्तिस्वभाव वाला हो गया'..., (९) एवं 'मेरा चित्त अब अरूपभव के लिये अनावृत्तिस्वभाव वाला हो गया'—ऐसा जब वह प्रज्ञा द्वारा जान लेता है। इस प्रकार, भिक्षुओ! जब साधक भिक्षु का चित्त प्रज्ञा द्वारा स्थिर हो जाता है तब वह स्वयं के विषय में यह घोषित कर सकता है—'मेरी जन्म-मरणपरम्परा क्षीण हो चुकी है ...पूर्ववत्... अब यह शरीर धारण नहीं करना है—ऐसा मैं जानता हूँ'''॥

६. शिलायूपसूत्र : : भिक्षु का नवविध चित्त

१. एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र एवं आयुष्मान् चन्द्रिकापुत्र राजगृह के वेणुवनस्थित कलन्दकनिवाप में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। वहाँ कभी आयुष्मान् चन्द्रिकापुत्र ने भिक्षुओं से यह कहा—''आयुष्मानो! देवदत्त भिक्षुओं को ऐसा धर्मोपदेश करता है—'जिस भिक्षु का चित्त कभी एक स्थान पर ठहर जाय तब वह अपने लिये यह घोषणा कर सकता है—मेरी जन्ममरणपरम्परा क्षीण हो चुकी है...अब मुझ को इस शरीर में नहीं आना है—ऐसा मैं जान गया हूँ।'''

२. ऐसा कहे जाने पर, आयुष्मान् सारिपुत्र आयुष्मान् चन्द्रिकापुत्र को यह बोले—''नहीं, आयुष्मन् चन्द्रिकापुत्र! देवदत्त यह नहीं कहता कि जिस भिक्षु का चित्त कभी एक स्थान पर ...पूर्ववत्... ऐसा मैं जान गया हूँ; अपितु वह यह कहता है—'जिस भिक्षु का चित्त, स्वचित्त से जान

सुपरिचितं होति, तस्सेतं भिक्खुनो कल्लं वेय्याकरणाय—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' '' ति।

३. दुतियं पि खो आयस्मा चन्दिकापुत्तो भिक्खू आमन्तेसि—''देवदत्तो, आवुसो, भिक्खूनं एवं धम्मं देसेति—'यतो खो, आवुसो, भिक्खुनो चेतसा चितं होति, तस्सेतं भिक्खुनो कल्लं वेय्याकरणाय—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' '' ति।

दुतियं पि खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं चन्दिकापुत्तं एतदवोच—''न खो, आवुसो, चन्दिकापुत्त, देवदत्तो भिक्खूनं एवं धम्मं देसेति—'यतो खो, आवुसो, भिक्खुनो चेतसा चितं होति, तस्सेतं भिक्खुनो कल्लं वेय्याकरणाय—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। एवं च खो, आवुसो, चन्दिकापुत्त, देवदत्तो भिक्खूनं धम्मं देसेति—'यतो खो, आवुसो, भिक्खुनो चेतसा चितं सुपरिचितं होति, तस्सेतं भिक्खुनो कल्लं वेय्याकरणाय—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' '' ति।

४. ततियं पि खो आयस्मा चन्दिकापुत्तो भिक्खू आमन्तेसि—''देवदत्तो, [B.204] आवुसो, भिक्खूनं एवं धम्मं देसेति—'यतो खो, आवुसो, भिक्खुनो चेतसा चितं होति, तस्सेतं भिक्खुनो कल्लं वेय्याकरणाय—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' '' ति।

ततियं पि खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं चन्दिकापुत्तं एतदवोच—''न खो, आवुसो, चन्दिकापुत्त, देवदत्तो भिक्खूनं एवं धम्मं देसेति—'यतो खो, आवुसो, भिक्खुनो चेतसा चितं होति, तस्सेतं भिक्खुनो कल्लं वेय्याकरणाय—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। एवं च खो, आवुसो, चन्दिकापुत्त, [N.45] देवदत्तो भिक्खूनं धम्मं देसेति—'यतो खो, आवुसो, भिक्खुनो चेतसा चितं सुपरिचितं होति, तस्सेतं भिक्खुनो कल्लं वेय्याकरणाय—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति।

लेने पर, एक स्थान पर स्थिर हो जाय तो वह अपने विषय में यह घोषणा कर सकता है कि मेरी जन्ममरणपरम्परा ...पूर्ववत्... ऐसा मैं जान गया हूँ'।''

३. दूसरी बार भी आयुष्मान् चन्द्रिकापुत्र ने भिक्षुओं से ...पूर्ववत्...।

दूसरी बार भी आयुष्मान् सारिपुत्र ने आयुष्मान् चन्द्रिकापुत्र से यह कहा—...पूर्ववत्...।

४. तीसरी बार भी आयुष्मान् चन्द्रिकापुत्र ने भिक्षुओं से यह कहा—...पूर्ववत्...।

तीसरी बार भी आयुष्मान् सारिपुत्र ने आयुष्मान् चन्द्रिकापुत्र से यह ...पूर्ववत्...। अपितु वह यह कहता है—'जब किसी भिक्षु का चित्त सुस्थिर हो जाता है तब वह भिक्षु अपने लिये यह घोषणा कर सकता है कि मेरी जन्ममरणपरम्परा क्षीण हो चुकी...ऐसा जानता हूँ।'

५. ''कथं च, आवुसो, भिक्खुनो चेतसा चित्तं सुपरिचितं होति? 'वीतरागं मे [R.404] चित्तं' ति चेतसा चित्तं सुपरिचितं होति; 'वीतदोसं मे चित्तं' ति चेतसा चित्तं सुपरिचितं होति; 'वीतमोहं मे चित्तं' ति चेतसा चित्तं सुपरिचितं होति; 'असरागधम्मं मे चित्तं' ति चेतसा चित्तं सुपरिचितं होति; 'असदोसधम्मं मे चित्तं' ति चेतसा चित्तं सुपरिचितं होति; 'असमोहधम्मं मे चित्तं' ति चेतसा चित्तं सुपरिचितं होति; 'अनावत्तिधम्मं मे चित्तं कामभवाया' ति चेतसा चित्तं सुपरिचितं होति; 'अनावत्तिधम्मं मे चित्तं रूपभवाया' ति चेतसा चित्तं सुपरिचितं होति; 'अनावत्तिधम्मं मे चित्तं अरूपभवाया' ति चेतसा चित्तं सुपरिचितं होति। एवं सम्मा विमुत्तचित्तस्स खो, आवुसो, भिक्खुनो भुसा चे पि चक्खु-विञ्ञेय्या रूपा चक्खुस्स आपाथं आगच्छन्ति, नेवस्स चित्तं परियादियन्ति; अमिस्सी-कतमेवस्स चित्तं होति ठितं आनेञ्जप्पत्तं, वयं चस्सानुपस्सति।

''सेय्यथापि, आवुसो, सिलायूपो सोळसकुक्कुको। तस्सस्सु अट्ठ कुक्कू हेट्ठा [R.405] नेमङ्गमा, अट्ठ कुक्कू उपरि नेमस्स। अथ पुरत्थिमाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि, नेव नं सङ्कम्पेय्य न सम्पवेधेय्य; अथ पच्छिमाय... अथ उत्तराय... अथ दक्खिणाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि, नेव नं सङ्कम्पेय्य न सम्पवेधेय्य। [B.205] तं किस्स हेतु? गम्भीरत्ता, आवुसो, नेमस्स, सुनिखातत्ता सिलायूपस्स। एवमेव खो, आवुसो, सम्मा विमुत्तचित्तस्स भिक्खुनो भुसा चे पि चक्खुविञ्ञेय्या रूपा चक्खुस्स आपाथं आगच्छन्ति, नेवस्स चित्तं परियादियन्ति; अमिस्सीकतमेवस्स चित्तं होति ठितं आनेञ्जप्पत्तं, वयं चस्सानुपस्सति।

[N.46] ''भुसा चे पि सोतविञ्ञेय्या सद्दा... घानविञ्ञेय्या गन्धा... जिव्हाविञ्ञेय्या रसा...

---

५. ''आयुष्मान्! कैसे किसी भिक्षु का चित्त स्वचित्त से सुपरिचित होता है? 'मेरा चित्त वीतराग है'...पूर्वसूत्रवत्...। इस प्रकार, आयुष्मन्! उस सम्यग्विमुक्त चित्त वाले भिक्षु की चक्षुरिन्द्रिय के सम्मुख कितने भी तीव्र रूप (चक्षुरिन्द्रिय के विषय) आवें वे उसके चित्त को स्वीकार्य नहीं होते। वह (चित्त) उन से असम्पृक्त ही रहता हुआ स्थिर एवं अचल रहता है तथा उस विषय को नाशवान् समझता हुआ उससे तटस्थ रहता है।

''आयुष्मन्! जैसे कोई सोलह हाथ लम्बा शिलास्तम्भ हो। वह आठ हाथ नीचे तक भूमि में गडा हुआ हो, केवल आठ हाथ ही ऊपर दिखायी दे। तब कभी कोई भयङ्कर एवं तीव्र वात्याचक्र (तीव्र आँधी) पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण दिशा से आये, किन्तु वह वात्याचक्र शिलास्तम्भ को कुछ भी हिला डुला नहीं सकता। उस वात्याचक्र द्वारा बहुत अधिक झकझोरे जाने पर भी वह हिल नहीं सकता। वह किस कारण? वह इस लिये कि वह शिलास्तम्भ गहराई से (आठ हाथ तक) नीचे भूमि में गड़ा हुआ है। इसी प्रकार, आयुष्मन्! इस भिक्षु का चित्त भी तीव्र से तीव्र रूप के सम्मुख आने पर भी उससे असम्पृक्त रहता हुआ स्थिर एवं अचल ही रहता है।

''कितने ही तीव्र श्रोत्रेन्द्रिय के विषय शब्द...घ्राणेन्द्रिय के विषय गन्ध...रसनेन्द्रिय के विषय

कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा... मनोविञ्ञेय्या धम्मा मनस्स आपाथं आगच्छन्ति, नेवस्स चित्तं परियादियन्ति; अमिस्सीकतमेवस्स चित्तं होति ठितं आनेञ्जप्पत्तं, वयं चस्सानुपस्सती'' ति॥

●

७. पठमवेरसुत्तं : १. अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो अनाथपिण्डिकं गहपतिं भगवा एतदवोच—

२. ''यतो खो, गहपति, अरियसावकस्स पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति, चतूहि च सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति, सो आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं व्याकरेय्य— 'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो, सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो' ति।

३. ''कतमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति? यं, गहपति, [R.406] पाणातिपाती पाणातिपातपच्चया दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति, सम्परायिकं पि भयं वेरं पसवति, चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदेति; पाणातिपाता पटिविरतो नेव दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति, न सम्परायिकं पि भयं वेरं पसवति, न चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदेति। पाणातिपाता पटिविरतस्स एवं तं भयं वेरं वूपसन्तं होति।

४. ''यं, गहपति, अदिन्नादायी ...पे०... कामेसुमिच्छाचारी... मुसावादी... सुरा-

---

रस...कायेन्द्रिय के विषय स्प्रष्टव्य विषय उसके चित्त के सम्मुख आवें उस भिक्षु का चित्त स्थिर एवं अकम्प्य ही रहता है। तथा वह उक्त विषय को नाशवान् समझता हुआ उसके ग्रहण में उपेक्षा भाव ही रखता है॥''

●

७. प्रथम वैरसूत्र : : पञ्च भयमुक्त एवं चार स्रोतआपत्ति अङ्गों से युक्त भिक्षु

१. ...तब अनाथपिण्डिक गृहपति भगवान् के सम्मुख आया...उस अनाथपिण्डिक गृहपति को भगवान् ने यह उपदेश किया—

२. ''गृहपति! जिस साधक के ये पाँच भयोत्पादक वैर शान्त हुए रहते हैं तथा जो चार स्रोतआपत्ति अङ्गों से युक्त हो जाता है, वह यदि चाहे तो, स्वयं के विषय में यह घोषणा कर सकता है—'अब मेरा नरकगमन, पशुयोनि में गमन, भूत प्रेतयोनि में गमन तथा ऐसी ही अन्य अपायभूत दुर्गतियों में गमन असम्भव हो चुका है; क्योंकि मैं अब स्रोतआपन्न हो चुका हूँ, अब मैं धर्म से च्युत नहीं हो सकता। अब मुझ को सम्बोधि प्राप्त होना निश्चित है।'

३. ''कौन से पाँच भययुक्त वैर शान्त होते हैं? (१) गृहपति! प्राणातिपात के कारण कोई प्राणातिपाती मनुष्य ऐहलौकिक तथा पारलौकिक भययुक्त वैर को जन्म देता है; मानसिक दुःख दौर्मनस्य का अनुभव करता है; प्राणातिपात से विरत साधक न उस लौकिक, न पारलौकिक भययुक्त वैर को जन्म देता है और न उसके कारण कोई मानसिक दुःख दौर्मनस्य का ही अनुभव करता है। इस प्रकार प्राणातिपात से विरत साधक का वह भययुक्त वैर शान्त हुआ माना जाता है।

मेरयमज्जपमादट्ठायी सुरामेरयमज्जपमादट्ठानपच्चया दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति, [B.206] सम्परायिकं पि भयं वेरं पसवति, चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदेति; सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतो नेव दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति, न सम्परायिकं पि भयं वेरं पसवति, न चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदेति। सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना [N.47] पटिविरतस्स एवं तं भयं वेरं वूपसन्तं होति। इमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति।

५. ''कतमेहि चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति? इध, गहपति, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। धम्मे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'स्वाक्खातो भगवता धम्मो सन्दिट्ठिको अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही' ति। सङ्घे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो उजुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो ञायप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो सामीचिप्पटिपन्नो [R.407] भगवतो सावकसङ्घो; यदिदं चत्तारि पुरिसयुगानि अट्ठ पुरिसपुग्गला एस भगवतो सावकसङ्घो आहुनेय्यो पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा' ति। अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि अच्छिद्देहि असबलेहि अकम्मासेहि भुजिस्सेहि विञ्ञुप्पसत्थेहि अपरामट्ठेहि समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति।

६. ''यतो खो, गहपति, अरियसावकस्स इमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति, इमेहि च चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति, सो आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं

---

४. (२) गृहपति! अदत्तादायी जिस अदत्तादान के कारण ...पूर्ववत्...। (३) कामभोगों में मिथ्याचारी इस मिथ्याचार के कारण ...पूर्ववत्...। (४) मृषावादी जिस मृषावाद (असत्यभाषण) के कारण...। (५) मद्यपायी जिस मद्यपान के कारण ...पूर्ववत्...। दौर्मनस्य का ही अनुभव करता है। इस प्रकार उस साधक के ये पाँचों भययुक्त वैर शान्त हुए माने जाते हैं।

५. और वह किन चार स्रोतआपत्तिअङ्गों से युक्त माना जाता है? (१) गृहपति! वह आर्यश्रावक बुद्ध के प्रति इस प्रकार श्रद्धायुक्त होता है-—'वे भगवान् सम्यक्सम्बुद्ध (=परमज्ञानी), विद्या एवं आचरण से युक्त, सुन्दर गति को प्राप्त (सुगत) या मधुरभाषी, लोकविद् (लोकव्यवहारज्ञ), अज्ञानी पुरुषों के दमन हेतु अनुपम चाबुकसवार (सारथि), देव एवं मनुष्यों के शास्ता (=उपदेशक), बुद्ध भगवान् हैं'। (२) धर्म के प्रति इस प्रकार श्रद्धावान् होता है—'यह धर्म स्वाख्यात है ...पूर्ववत्...। (३) सङ्घ के प्रति श्रद्धावान् होता है—'यह सङ्घ सुव्यवस्थित है ...पूर्ववत्... लोक के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल है'। (४) आर्यप्रिय शीलों से युक्त होता है...पूर्ववत्... जो कि समाधि तक पहुँचाने वाले हैं।

६. ''क्यों कि, गृहपति! वह आर्यश्रावक इन पाँच भययुक्त वैरों से अतिक्रान्त होता है और

व्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गति-विनिपातो; सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो' '' ति॥ ●

८. **दुतियवेरसुत्तं** : १. ''यतो खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स पञ्च [B.207] भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति, चतूहि च सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति, सो आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं व्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छानयोनि खीण-पेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो; सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो' ति।

२. ''कतमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति? यं, भिक्खवे, [N.48] पाणातिपाती पाणातिपातपच्चया दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति, सम्परायिकं पि भयं वेरं पसवति, चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदेति; पाणातिपाता पटिविरतो ...पे०... एवं तं भयं वेरं वूपसन्तं होति।

३. ''यं, भिक्खवे, अदिन्नादायी ...पे०... सुरामेरयमज्जपमादट्ठायी सुरामेरय-मज्जपमादट्ठानपच्चया दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति, सम्परायिकं पि भयं वेरं पसवति, चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदेति; सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतो नेव दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति, न सम्परायिकं पि भयं वेरं पसवति, न चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदेति। सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतस्स एवं तं भयं वेरं वूपसन्तं होति। इमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति।

४. ''कतमेहि चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति? इध, गहपति, अरिय-सावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा ...पे०... सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। धम्मे ...पे०... सङ्घे... अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि अछिद्देहि असबलेहि अकम्मासेहि भुजिस्सेहि विञ्ञुप्पसत्थेहि अपरामट्ठेहि समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति।

५. ''यतो खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स इमानि पञ्च भयानि वेरानि [R.408]

इन चार स्रोतआपत्ति अङ्गों से सम्पन्न होता है अत: यदि वह चाहे तो अपने विषय में यह घोषणा कर सकता है—'मेरा नरकपात, पशुयोनि एवं प्रेतयोनि में गमन एवं ऐसी ही किसी अपायभूत दुर्गति में पतन असम्भव है; क्यों कि मैं स्रोतआपन्न हो चुका हूँ, मैं धर्म से च्युत नहीं हो सकता, मैं निश्चित ही सम्बोधि तक पहुँचने वाला हूँ॥''' ●

८. द्वितीय वैरसूत्र : :

१. ''भिक्षुओ! जिस आर्यश्रावक के ये पाँच भययुक्त वैर ...पूर्ववत्...।

२. ''कौन से पाँच भय युक्त वैर ...पूर्ववत्...।

३. ''जो, भिक्षुओ! अदत्तादायी ...पूर्ववत्... ये पाँच भययुक्त वैर शान्त हुए रहते हैं।

४. ''किन चार स्रोतआपत्ति अङ्गों से ...पूर्ववत्... समन्वित होता है।

वूपसन्तानि होन्ति, इमेहि च चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति, सो आकङ्खमानो [B.208] अत्तना व अत्तानं व्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो; सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो' '' ति॥

९. आघातवत्थुसुत्तं : १. ''नवयिमानि, भिक्खवे, आघातवत्थूनि। कतमानि नव? 'अनत्थं मे अचरी' ति आघातं बन्धति; 'अनत्थं मे चरती' ति आघातं बन्धति; 'अनत्थं मे चरिस्सती' ति आघातं बन्धति; 'पियस्स मे मनापस्स अनत्थं अचरी' ति ...पे०... 'अनत्थं [N.49] चरती' ति ...पे०... 'अनत्थं चरिस्सती' ति आघातं बन्धति; 'अप्पियस्स मे अमनापस्स अत्थं अचरी' ति ...पे०... 'अत्थं चरती' ति ...पे०... 'अत्थं चरिस्सती' ति आघातं बन्धति। इमानि खो, भिक्खवे, नव आघातवत्थूनी'' ति॥ ●

१०. आघातपटिविनयसुत्तं : १. ''नवयिमे, भिक्खवे, आघातपटिविनया। कतमे नव? 'अनत्थं मे अचरि, तं कुतेत्थ लब्भा' ति आघातं पटिविनेति; 'अनत्थं मे चरति, तं कुतेत्थ लब्भा' ति आघातं पटिविनेति; 'अनत्थं मे चरिस्सति, तं कुतेत्थ लब्भा' ति आघातं पटिविनेति; 'पियस्स मे मनापस्स अनत्थं अचरि ...पे०... अनत्थं चरति ...पे०... 'अनत्थं

---

५. ''क्यों कि वह पाँच भय युक्त वैरों तथा चार स्रोत आपत्ति अङ्गों से सम्पन्न होता है, अत: वह यदि चाहे तो ...पूर्ववत्... सम्बोधि तक पहुँचूँगा ही॥'' ●

९. आघातवस्तु सूत्र : : नौ आघात वस्तुएँ

''भिक्षुओ! ये नौ आघात (घृणायुक्त द्वेष) कारक वस्तु हैं। कौन से नौ? (१) 'इस ने मेरा अनर्थ किया'—यह सोच कर द्वेष करने लगता है; (२) 'यह मेरा अनर्थ कर रहा है'—यह सोच कर द्वेष करने लगता है; (३) 'यह मेरा अनर्थ करेगा'—यह सोच कर द्वेष करने लगता है। (४) 'इसने मेरे प्रिय का अनर्थ किया'..., (५) 'यह मेरे प्रिय का अनर्थ करता है'..., (६) 'यह मेरे प्रिय का अनर्थ करेगा'..., (७) 'इसने मेरे अप्रिय एवं प्रतिकूल पुरुष का हित किया'..., (८) 'यह मेरे अप्रिय एवं प्रतिकूल पुरुष का हित करता है'..., तथा (९) 'यह मेरे अप्रिय एवं प्रतिकूल पुरुष का हित करेगा'—यह सोच कर उससे द्वेष करने लगता है। भिक्षुओ! ये नौ आघातवस्तु हैं॥''

१०. आघातप्रतिविनयसूत्र : : नौ आघात प्रतिविनय

१. भिक्षुओ! आघात को शान्त करने वाले ये नौ प्रकार हैं। कौन से नौ?

(१) 'इसने मेरा अनर्थ किया हो—यह कैसे सम्भव है'—ऐसा चिन्तन...।

(२) 'यह मेरा अनर्थ करता है—यह कैसे सम्भव है'—ऐसा चिन्तन...।

(३) 'यह मेरा अनर्थ करेगा—यह कैसे सम्भव है'—ऐसा चिन्तन...।

(४) 'इसने मेरे प्रिय का अनर्थ किया—यह कैसे सम्भव है'—ऐसा चिन्तन...।

(५) 'यह मेरे प्रिया का अनर्थ करता है—यह कैसे सम्भव है'—ऐसा चिन्तन...।

(६) 'यह मेरे प्रिय का अनर्थ करेगा—यह कैसे सम्भव है'—ऐसा चिन्तन...।

(७) 'इसने मेरे अप्रिय एवं प्रतिकूल का हित किया—यह कैसे सम्भव है'—ऐसा चिन्तन...।

चरिस्सति, तं कुतेत्थ लब्भा' ति आघातं पटिविनेति; 'अप्पियस्स मे अमनापस्स [R.409] अत्थं अचरि ...पे०... अत्थं चरति ...पे०... 'अत्थं चरिस्सति, तं कुतेत्थ लब्भा' ति आघातं पटिविनेति। इमे खो, भिक्खवे, नव आघातपटिविनया'' ति॥ ●

११. अनुपुब्बनिरोधसुत्तं : १. ''नवयिमे, भिक्खवे, अनुपुब्बनिरोधा। कतमे नव? पठमं झानं समापन्नस्स कामसञ्ञा निरुद्धा होति; दुतियं झानं समापन्नस्स वितक्कविचारा निरुद्धा होन्ति; ततियं झानं समापन्नस्स पीति निरुद्धा होति; चतुत्थं झानं समापन्नस्स अस्सासपस्सासा निरुद्धा होन्ति; आकासानञ्चायतनं समापन्नस्स रूपसञ्ञा निरुद्धा होति; विञ्ञाणञ्चायतनं समापन्नस्स आकासानञ्चायतनसञ्ञा निरुद्धा होति; आकिञ्चञ्ञायतनं समापन्नस्स विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञा निरुद्धा होति; नेव सञ्ञा-नासञ्ञायतनं समापन्नस्स आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञा निरुद्धा होति; सञ्ञावेदयित- [B.209] निरोधं समापन्नस्स सञ्ञा च वेदना च निरुद्धा होति। इमे खो, भिक्खवे, नव अनुपुब्ब-निरोधा'' ति॥

सत्तावासवग्गो ततियो॥ ●

तस्सुद्दानं

तिठानं खळुङ्को तण्हा, सत्तपञ्ञा सिलायुपो। [N.50]
द्वे वेरा द्वे आघातानि, अनुपुब्बनिरोधेन चा ति॥ ●

---

(८) 'यह मेरे अप्रिय एवं प्रतिकूल का हित करता है—यह कैसे सम्भव है'—ऐसा चिन्तन...।

(९) 'यह मेरे अप्रिय एवं प्रतिकूल का हित करेगा—यह कैसे सम्भव है'—ऐसा चिन्तन करता हुआ उसके प्रति अपने आघात (घृणापूर्ण द्वेष) का शमन कर लेता है। भिक्षुओ! इस प्रकार ये नौ आघातप्रतिविनय के प्रकार हैं॥ ●

११. अनुपूर्वनिरोधसूत्र : : नौ क्रमशः निरोध-धर्म

१. ''भिक्षुओ! ये नौ अनुपूर्व (क्रमिक) निरोध धर्म हैं। कौन से नौ?

(१) प्रथमध्यानप्राप्त साधक की कामसंज्ञा निरुद्ध हो जाती है।

(२) द्वितीयध्यानप्राप्त साधक के वितर्क विचार निरुद्ध हो जाते हैं।

(३) तृतीयध्यानप्राप्त साधक की प्रीति निरुद्ध हो जाती है।

(४) चतुर्थध्यानप्राप्त साधक के आश्वास-प्रश्वास नियन्त्रित हो जाते हैं।

(५) आकाशानन्त्यायतनप्राप्त साधक की रूपसंज्ञा निरुद्ध हो जाती है।

(६) विज्ञानानन्त्यायतनप्राप्त साधक की आकाशानन्त्यायतनसंज्ञा निरुद्ध हो जाती है।

(७) आकिञ्चन्यायतनप्राप्त साधक की विज्ञानानन्त्यायतनसंज्ञा निरुद्ध हो जाती है।

(८) नैवसंज्ञानासंज्ञाप्राप्त साधक की आकिञ्चन्यायतनसंज्ञा निरुद्ध हो जाती है।

(९) संज्ञावेदितनिरोधप्राप्त साधक की संज्ञा और वेदना निरुद्ध हो जाती हैं।

भिक्षुओ! ये नौ अनुपूर्वनिरोध धर्म हैं''॥ **सत्त्वावासवर्ग तृतीय सम्पन्न॥** ●

४. महावग्गो

[R.410] **१. अनुपुब्बविहारसुत्तं** : १. ''नवयिमे, भिक्खवे, अनुपुब्बविहारा। कतमे नव? पठमं झानं, दुतियं झानं, ततियं झानं, चतुत्थं झानं, आकासानञ्चायतनं, विञ्ञाणञ्चायतनं, आकिञ्चञ्ञायतनं, नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं, सञ्ञावेदयितनिरोधो—इमे खो, भिक्खवे, नव अनुपुब्बविहारा'' ति॥ ●

२. अनुपुब्बविहारसमापत्तिसुत्तं : १. ''नवयिमा, भिक्खवे, अनुपुब्बविहार-समापत्तियो देसेस्सामि, तं सुणाथ ...पे०... कतमा च, भिक्खवे, नव अनुपुब्ब-विहारसमापत्तियो? यत्थ कामा निरुज्झन्ति, ये च कामे निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति, [R.411] 'अद्धा ते आयस्मन्तो निच्छाता निब्बुता तिण्णा पारङ्गता तदङ्गेना' ति वदामि। 'कत्थ कामा निरुज्झन्ति, के च कामे निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति—अहमेतं न जानामि अहमेतं न पस्सामी' ति, इति यो एवं वदेय्य, सो एवमस्स वचनीयो—'इधावुसो, भिक्खु

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. त्रिस्थानसूत्र, २. अखळुङ्कसूत्र, ३. तृष्णामूलकसूत्र, ४. सत्त्वावाससूत्र, ५. प्रज्ञासूत्र, ६. शिलायूपसूत्र, ७. प्रथम वैरसूत्र, ८. द्वितीय वैरसूत्र, ९. आघातवस्तुसूत्र, १०. आघात-प्रतिविनयसूत्र, एवं ११. अनुपूर्वनिरोधसूत्र॥ ●

४ महावर्ग

१. अनुपूर्वविहारसूत्र : : नौ साधनाओं का क्रम

१. ''भिक्षुओ! ये नौ क्रमिक साधनाएँ हैं। कौन सी नौ? (१) प्रथम ध्यान, (२) द्वितीय ध्यान, (३) तृतीय ध्यान, (४) चतुर्थ ध्यान, (५) आकाशानन्त्यायतन, (६) विज्ञानानन्त्यायतन, (७) आकिञ्चन्यायतन, (८) नैवसंज्ञानासंज्ञायतन, एवं (९) संज्ञावेदितनिरोध—भिक्षुओ! ये नौ क्रमिक साधनाएँ (=विहार) हैं॥'' ●

२. अनुपूर्वविहारसमापत्तिसूत्र : : साधनाओं का क्रमिक अभ्यास

१. ''भिक्षुओ! इन साधनाओं का क्रमिक अभ्यास नौ प्रकार से होता है। उनको बताता हूँ, तुम ध्यानपूर्वक सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! इन साधनाओं का क्रमिक नवविध अभ्यास कौन सा है?

साधना करते हुए जहाँ सब कामवासनाएँ निरुद्ध हो जायँ और जो इन वासनाओं का निरोध करते हुए साधना करते हैं, उन के विषय में मेरा यही कहना है— 'उन की कामवासनाविषयक भूख मिट चुकी है, वे भवसागर को पार कर चुके हैं, वे तैर कर किनारे जा चुके हैं तथा साधना का यह अङ्ग उन ने पूर्ण कर लिया है'। 'ये कामवासनाएँ कहाँ निरुद्ध होती हैं तथा इन का निरोध करते हुए कौन साधना करता है—यह मैं नहीं जानता, नहीं समझता'—यदि कोई तुम से यह कहे तो उसको यह उत्तर देना चाहिये—'आयुष्मन्! यहाँ कोई साधक भिक्षु कामभोगों से दूर रह कर,

विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एत्थ कामा निरुज्झन्ति, ते च कामे निरोधेत्वा [B.210] निरोधेत्वा विहरन्ती' ति। अद्धा, भिक्खवे, असठो अमायावी 'साधू' ति भासितं अभिनन्देय्य अनुमोदेय्य; 'साधू' ति भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा नमस्समानो पञ्जलिको पयिरुपासेय्य।

२. ''यत्थ वितक्कविचारा निरुज्झन्ति, ये च वितक्कविचारे निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति, 'अद्धा ते आयस्मन्तो निच्छाता निब्बुता तिण्णा पारङ्गता तदङ्गेना' ति वदामि। 'कत्थ वितक्कविचारा निरुज्झन्ति, के च वितक्कविचारे निरोधेत्वा निरोधेत्वा [N.51] विहरन्ति—अहमेतं न जानामि अहमेतं न पस्सामी' ति, इति यो एवं वदेय्य, सो एवमस्स वचनीयो—'इधावुसो, भिक्खु वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति; एत्थ वितक्कविचारा निरुज्झन्ति, ते च वितक्कविचारे निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ती' ति। अद्धा, भिक्खवे, असठो अमायावी 'साधू' ति भासितं अभिनन्देय्य अनुमोदेय्य; 'साधू' ति भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा नमस्समानो पञ्जलिको पयिरुपासेय्य।

३. ''यत्थ पीति निरुज्झति, ये च पीतिं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति, 'अद्धा ते आयस्मन्तो निच्छाता निब्बुता तिण्णा पारङ्गता तदङ्गेना' ति वदामि। 'कत्थ पीति निरुज्झति, के च पीतिं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति—अहमेतं न जानामि अहमेतं न पस्सामी' ति, इति यो एवं वदेय्य, सो एवमस्स वचनीयो—'इधावुसो, भिक्खु पीतिया च विरागा ...पे०... ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति; एत्थ पीति निरुज्झति, ते च पीतिं निरोधेत्वा [R.412]

अकुशल धर्मों से दूर रह कर वितर्क-विचार सहित विवेकजन्य प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। यहाँ (इस प्रथम ध्यान में) ये वासनाएँ निरुद्ध हो जाती हैं। तथा इन वासनाओं का निरोध करते हुए साधक जन साधना करते हैं'। तब उस प्रश्नकर्ता को अपनी शठता एवं धूर्तता का त्याग कर नम्रता के साथ 'साधु' शब्द कहते हुए इस कथन का अभिनन्दन एवं अनुमोदन करना चाहिये और प्रणाम करते हुए तथा हाथ जोड़ते हुए उसके प्रति श्रद्धा प्रकट करना चाहिये। (१)

२. ''जिस साधना से वितर्क एवं विचार निरुद्ध हो जाते हैं, तथा जो इनका निरोध करते हुए साधना करते हैं उन के विषय में मेरा यही कहना है—...पूर्ववत्...। यहाँ यदि कोई यह पूछे—'ये वितर्क एवं विचार कहाँ निरुद्ध होते हैं? या कौन इन का निरोध कर साधना करते हैं?—यह मैं नहीं जानता, नहीं समझता।' उस को यह उत्तर देना चाहिये—'आयुष्मन्! यहाँ कोई साधक भिक्षु वितर्क विचारों के शान्त होने से ...पूर्ववत्... द्वितीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है; यहाँ (द्वितीय ध्यान में) उस के वितर्क विचार निरुद्ध हो जाते हैं। उन वितर्क विचारों का निरोध करते हुए साधना करते हैं।' तब उस प्रश्नकर्ता को अपनी ...पूर्ववत्... श्रद्धा प्रकट करना चाहिये। (२)

३. ''जहाँ प्रीति भी निरुद्ध हो जाती है, और जो प्रीति का निरोध करते हुए साधना करते हैं, उन के विषय में मेरा यही कहना है—'उनकी प्रीतिविषयक भूख मिट चुकी है ...पूर्ववत्...'। वहाँ कोई यदि यह पूछे कि 'प्रीति कहाँ निरुद्ध होती है, तथा ऐसी साधना कौन करते हैं?—यह मैं नहीं

निरोधेत्वा विहरन्ती' ति। अद्धा, भिक्खवे, असठो अमायावी 'साधू' ति भासितं अभिनन्देय्य अनुमोदेय्य; 'साधू' ति भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा नमस्समानो पञ्जलिको पयिरुपासेय्य।

४. ''यत्थ उपेक्खासुखं निरुज्झति, ये च उपेक्खासुखं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति, 'अद्धा ते आयस्मन्तो निच्छाता निब्बुता तिण्णा पारङ्गता तदङ्गेना' ति वदामि। 'कत्थ उपेक्खासुखं निरुज्झति, के च उपेक्खासुखं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति—अहमेतं न जानामि अहमेतं न पस्सामी' ति, इति यो एवं वदेय्य, सो एवमस्स वचनीयो—'इधावुसो, भिक्खु सुखस्स च पहाना ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति; एत्थ उपेक्खासुखं निरुज्झति, ते च उपेक्खासुखं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ती' ति। अद्धा, भिक्खवे, असठो [B.211] अमायावी 'साधू' ति भासितं अभिनन्देय्य अनुमोदेय्य; 'साधू' ति भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा नमस्समानो पञ्जलिको पयिरुपासेय्य।

[N.52] ५. ''यत्थ रूपसञ्ञा निरुज्झति, ये च रूपसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति, 'अद्धा ते आयस्मन्तो निच्छाता निब्बुता तिण्णा पारङ्गता तदङ्गेना' ति वदामि। 'कत्थ रूपसञ्ञा निरुज्झति, के च रूपसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति—अहमेतं न जानामि अहमेतं न पस्सामी' ति, इति यो एवं वदेय्य, सो एवमस्स वचनीयो—'इधावुसो, भिक्खु सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा अनन्तो आकासो ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। एत्थ रूपसञ्ञा निरुज्झति, ते

जानता, नहीं समझता ?' उसको यह उत्तर देना चाहिये—'आयुष्मन्! यहाँ भिक्षु प्रीति से वैराग्य होने के कारण... पूर्ववत्... तृतीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करते हैं'। तब उस प्रश्नकर्ता को अपनी ...पूर्ववत्... श्रद्धा प्रकट करना चाहिये। (३)

४. ''जहाँ उपेक्षासुख भी निरुद्ध हो जाता है तथा जो इस उपेक्षासुख का निरोध कर साधना करते हैं, उन के विषय में ...पूर्ववत्...। वहाँ कोई यदि यह पूछे—'उपेक्षासुख कहाँ निरुद्ध होता है, और कौन इस उपेक्षासुख का निरोध कर साधना करते हैं ?—यह मैं न जानता हूँ, न समझता हूँ' उसको यह उत्तर देना चाहिये—'आयुष्मन्! यहाँ साधक भिक्षु सुख के प्रहाण से ...पूर्ववत्... चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है; यहाँ उपेक्षासुख निरुद्ध हो जाता है और वे उपेक्षासुख का निरोध कर साधना करते हैं।' तब उस प्रश्नकर्ता को अपनी ...पूर्ववत्... श्रद्धा प्रकट करनी चाहिये। (४)

५. 'जहाँ रूपसंज्ञा भी निरुद्ध हो जाती है तथा जो इस रूपसंज्ञा का निरोध कर साधना करते हैं, उन के विषय में मेरा यही कहना है ...पूर्ववत्...। वहाँ कोई यह पूछे—'यह रूपसंज्ञा कहाँ निरुद्ध होती है और कौन इस रूपसंज्ञा का निरोध कर साधना करते हैं ?—यह मैं न जानता हूँ, न समझता हूँ'; उसको यह उत्तर देना चाहिये—'आयुष्मन्! यहाँ साधक भिक्षु रूपसंज्ञाओं का अतिक्रमण कर, तथा प्रतिघसंज्ञाओं के अस्त हो जाने से, तथा नानात्व संज्ञाओं को मन में न करने से 'आकाश अनन्त है'—इस प्रकार आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। यहाँ रूपसंज्ञा निरुद्ध हो जाती

च रूपसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ती' ति। अद्धा, भिक्खवे, असठो अमायावी 'साधू' ति भासितं अभिनन्देय्य अनुमोदेय्य; 'साधू' ति भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा नमस्समानो पञ्जलिको पयिरुपासेय्य।

६. ''यत्थ आकासानञ्चायतनसञ्ञा निरुज्झति, ये च आकासानञ्चायतन- [R.413] सञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति, 'अद्धा ते आयस्मन्तो निच्छाता निब्बुता तिण्णा पारङ्गता तदङ्गेना' ति वदामि। 'कत्थ आकासानञ्चायतनसञ्ञा निरुज्झति, के च आकासानञ्चायतनसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति—अहमेतं न जानामि अहमेतं न पस्सामी' ति, इति यो एवं वदेय्य, सो एवमस्स वचनीयो—'इधावुसो, भिक्खु सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म अनन्तं विञ्ञाणं ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। एत्थ आकासानञ्चायतनसञ्ञा निरुज्झति, ते च आकासानञ्चायतनसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ती' ति। अद्धा, भिक्खवे, असठो अमायावी 'साधू' ति भासितं अभिनन्देय्य अनुमोदेय्य; 'साधू' ति भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा नमस्समानो पञ्जलिको पयिरुपासेय्य।

७. ''यत्थ विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञा निरुज्झति, ये च विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति, 'अद्धा ते आयस्मन्तो निच्छाता निब्बुता तिण्णा पारङ्गता तदङ्गेना' ति वदामि। 'कत्थ विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञा निरुज्झति, के च [B.212] विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति—अहमेतं न जानामि अहमेतं [N.53] न पस्सामी' ति, इति यो एवं वदेय्य, सो एवमस्स वचनीयो—'इधावुसो, भिक्खु सब्बसो

है और वे रूपसंज्ञा का सतत निरोध करते हुए साधना करते हैं।' तब उस प्रश्नकर्ता को अपनी ...पूर्ववत्...श्रद्धा प्रकट करनी चाहिये। (५)

६. ''जहाँ आकाशानन्त्यायतनसंज्ञा निरुद्ध हो जाती है, और जो आकाशानन्त्यायतनसंज्ञा का निरोध कर साधना करते हैं, उन के विषय में मेरा यही कहना है—...पूर्ववत्...। वहाँ तुम से कोई भिक्षु यदि यह पूछे—'यह आकाशानन्त्यायतनसंज्ञा कहां निरुद्ध होती है? तथा कौन आकाशा-नन्त्यायतन संज्ञा का निरोध कर साधना करते हैं?—यह मैं नहीं जानता, नहीं समझता'। तो उसको यह उत्तर देना चाहिये—'आयुष्मन्! कोई साधक भिक्षु आकाशानन्त्यायतन संज्ञा को अतिक्रान्त कर, 'विज्ञान अनन्त है'— यह मान कर विज्ञानानन्त्यायतनसंज्ञा की भावना करता है। यहाँ आकाशानन्त्यायतनसंज्ञा का निरोध होता है, वे आकाशानन्त्यायतनसंज्ञा का निरोध करते हुए साधना करते हैं।' तब, भिक्षुओ! उस (प्रश्नकर्ता) भिक्षु को अपनी ...पूर्ववत्... श्रद्धा प्रकट करनी चाहिये। (६)

(७) ''जहाँ विज्ञानानन्त्यायतनसंज्ञा भी निरुद्ध हो... जो विज्ञानानन्त्यायतनसंज्ञा का निरोध कर साधना करते हैं, उन के विषय में मेरा यही कहना है ...पूर्ववत्...। वहाँ तुम से कोई भिक्षु यदि यह पूछे —'यह विज्ञानानन्त्यायतन संज्ञा कहाँ निरुद्ध होती है, तथा कौन इस विज्ञाना-नन्त्यायतनसंज्ञा का निरोध कर साधना करते हैं—यह मैं नहीं जानता, नहीं समझता'। उसको यह

विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म नत्थि किञ्ची ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। एत्थ विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञा निरुज्झति, ते च विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ती' ति। अद्धा, भिक्खवे, असठो अमायावी 'साधू' ति भासितं अभिनन्देय्य अनुमोदेय्य; 'साधू' ति भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा नमस्समानो पञ्जलिको पयिरुपासेय्य।

८. "यत्थ आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञा निरुज्झति, ये च आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति, 'अद्धा ते आयस्मन्तो निच्छाता निब्बुता तिण्णा पारङ्गता तदङ्गेना' ति वदामि। 'कत्थ आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञा निरुज्झति, के च आकिञ्चञ्ञा- [R.414] यतनसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति—अहमेतं न जानामि अहमेतं न पस्सामी' ति, इति यो एवं वदेय्य, सो एवमस्स वचनीयो—'इधावुसो, भिक्खु सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। एत्थ आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञा निरुज्झति, ते च आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ती' ति। अद्धा, भिक्खवे, असठो अमायावी 'साधू' ति भासितं अभिनन्देय्य अनुमोदेय्य; 'साधू' ति भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा नमस्समानो पञ्जलिको पयिरुपासेय्य।

९. "यत्थ नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञा निरुज्झति, ये च नेवसञ्ञानासञ्ञा-यतनसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति, 'अद्धा ते आयस्मन्तो निच्छाता निब्बुता तिण्णा पारङ्गता तदङ्गेना' ति वदामि। 'कत्थ नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञा निरुज्झति, के च नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ति—अहमेतं न जानामि अहमेतं न

उत्तर देना चाहिये—'आयुष्मन्! कोई साधक भिक्षु विज्ञानानन्त्यायतन संज्ञा का भी निरोध कर 'कुछ भी नहीं है'—ऐसा मानता हुआ आकिञ्चन्यायतनसंज्ञा की भावना करता है, और वे विज्ञाना-नन्त्यायतनसंज्ञा का निरोध करते हुए साधना करते हैं। तब, भिक्षुओ! उस (प्रश्नकर्ता) भिक्षु को अपनी ...पूर्ववत्...श्रद्धा प्रकट करनी चाहिये। (७)

८. "जहाँ आकिञ्चन्यायतनसंज्ञा भी निरुद्ध हो जाती है, और जो आकिञ्चन्यायतनसंज्ञा का निरोध कर साधना करते हैं, उन के विषय में मेरा यही कहना है—...पूर्ववत्...। वहाँ तुम से भिक्षु! कोई यदि यह पूछे—'यह आकिञ्चन्यायतनसंज्ञा कहाँ निरुद्ध होती है? और कौन आकिञ्चन्यायतनसंज्ञा का निरोध कर साधना करते हैं?—यह मैं नहीं जानता, नहीं समझता'। इसका उत्तर यह देना चाहिये—'आयुष्मन्! कोई साधक आकिञ्चन्यायतनसंज्ञा का निरोध कर नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करते हैं। यहाँ आकिञ्चन्यायतनसंज्ञा निरुद्ध हो जाती है तथा वे आकिञ्चन्यायतनसंज्ञा का निरोध कर साधना करते हैं। तब, भिक्षुओ! उस (प्रश्नकर्ता) भिक्षु को अपनी ...पूर्ववत्... श्रद्धा प्रकट करनी चाहिये। (८)

९. "जहाँ नैवसंज्ञानासंज्ञायतनसंज्ञा निरुद्ध हो जाती है, तथा जो इस नैवसंज्ञानासंज्ञायतनसंज्ञा का निरोध कर साधना करते हैं, उनके विषय में मेरा यही कहना है—...पूर्ववत्...। वहाँ यदि कोई तुम से यह पूछे—'यह नैवसंज्ञानासंज्ञायतनसंज्ञा कहाँ निरुद्ध होती है? और कौन इस

पस्सामी' ति, इति यो एवं वदेय्य, सो एवमस्स वचनीयो—'इधावुसो, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति। एत्थ नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञा निरुज्झति, ते च नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञं निरोधेत्वा निरोधेत्वा विहरन्ती' ति। अद्धा, भिक्खवे, असठो अमायावी 'साधू' ति भासितं अभिनन्देय्य अनुमोदेय्य; 'साधू' ति भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा नमस्समानो पञ्जलिको [B.213] पयिरुपासेय्य। इमा खो, भिक्खवे, नव अनुपुब्बविहारसमापत्तियो'' ति॥ [N.54] ●

३. निब्बानसुखसुत्तं : १. एकं समयं आयस्मा सारिपुत्तो राजगहे विहरति वेळुवने कलन्दकनिवापे। तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि—''सुखमिदं, आवुसो, निब्बानं। सुखमिदं, आवुसो, निब्बानं'' ति। एवं वुत्ते आयस्मा उदायी आयस्मन्तं [R.415] सारिपुत्तं एतदवोच—''किं पनेत्थ, आवुसो सारिपुत्त, सुखं यदेत्थ नत्थि वेदयितं'' ति?

२. ''एतदेव ख्वेत्थ, आवुसो, सुखं यदेत्थ नत्थि वेदयितं। पञ्चिमे, आवुसो, कामगुणा। कतमे पञ्च? चक्खुविञ्ञेय्या रूपा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया, सोतविञ्ञेय्या सद्दा ...पे०... 'घानविञ्ञेय्या गन्धा... जिव्हाविञ्ञेय्या रसा... कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया—इमे खो, आवुसो, पञ्च कामगुणा। यं खो, आवुसो, इमे पञ्च कामगुणे पटिच्च उप्पज्जति सुखं सोमनस्सं, इदं वुच्चतावुसो, कामसुखं।

नैवसंज्ञानायतनसंज्ञा का निरोध करते हुए साधना करते हैं—यह मैं नहीं जानता, नहीं समझता। उस को तुम्हारे द्वारा यह उत्तर दिया जाना चाहिये—'आयुष्मन्! कोई भिक्षु नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का सर्वथा निरोध कर संज्ञावेदितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है। यहाँ नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का निरोध हो जाता है, और वे नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का निरोध कर के ही साधना करते हैं'। तब, भिक्षुओ! उस (प्रश्नकर्ता) भिक्षु को अपनी ...पूर्ववत्... श्रद्धा प्रकट करनी चाहिये। (९)

''भिक्षुओ! इस प्रकार इन साधनाओं का यह नवविध क्रमिक अभ्यास माना जाता है॥''●

३. निर्वाणसुखसूत्र : : नवविध निर्वाण सुख

१. एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र राजगृहस्थित वेणुवन के कलन्दकनिवाप में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। वहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को यह धर्मप्रवचन किया—''आयुष्मानो! यह निर्वाण ही सुख है! यह निर्वाण ही सुख है!'' ऐसा कहे जाने पर, आयुष्मान् उदायी ने आयुष्मान् सारिपुत्र से यह पूछा—''आयुष्मन् सारिपुत्र! परन्तु यहाँ वह 'सुख क्या होता है'—इसे ही हम नहीं समझ पा रहे हैं।''

२. ''आयुष्मानो! मैं उसी 'सुख' का विवेचन करना चाहता हूँ जिस सुख को तुम समझ नहीं पा रहे हो। आयुष्मन्! यहाँ लौकिक कामगुण पाँच प्रकार के होते हैं। कौन से पाँच? इष्ट, प्रिय, अनुकूल, कामसम्पृक्त रागयुक्त चक्षुर्विज्ञेय रूप...श्रोत्रविज्ञेय शब्द...घ्राणविज्ञेय गन्ध...जिह्वाविज्ञेय रस...कायविज्ञेय स्प्रष्टव्य—आयुष्मानो! ये पाँच लौकिक कामगुण होते हैं। इन पाँच गुणों के आश्रय से उत्पन्न होने वाला सुख 'कामसुख' कहलाता है।''

३. ''इधावुसो, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। तस्स चे, आवुसो, भिक्खुनो इमिना विहारेन विहरतो कामसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति, स्वास्स होति आबाधो। सेय्यथापि, आवुसो, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स ते कामसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स होति आबाधो। यो खो पनावुसो, आबाधो दुक्खमेतं वुत्तं भगवता। इमिना पि खो एतं, आवुसो, परियायेन वेदितब्बं यथा सुखं निब्बानं।

४. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। तस्स चे, आवुसो, भिक्खुनो इमिना विहारेन विहरतो वितक्कसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति, स्वास्स होति आबाधो। सेय्यथापि, आवुसो, सुखिनो दुक्खं [N.55,R.416] उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स ते वितक्कसहगता सञ्ञा- [B.214] मनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स होति आबाधो। यो खो पनावुसो, आबाधो दुक्खमेतं वुत्तं भगवता। इमिना पि खो एतं, आवुसो, परियायेन वेदितब्बं यथा सुखं निब्बानं।

५. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु पीतिया च विरागा ...पे०... ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। तस्स चे, आवुसो, भिक्खुनो इमिना विहारेन विहरतो पीतिसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति, स्वास्स होति आबाधो। सेय्यथापि, आवुसो, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स ते पीतिसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स होति आबाधो। यो खो पनावुसो, आबाधो दुक्खमेतं वुत्तं भगवता। इमिना पि खो एतं, आवुसो, परियायेन वेदितब्बं यथा सुखं निब्बानं।

६. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सुखस्स च पहाना ...पे०... चतुत्थं झानं

---

३. ''आयुष्मानो! यहाँ कोई साधक भिक्षु उपर्युक्त कामभोगों से दूर रह कर...पूर्ववत्...प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। आयुष्मानो! यह साधना करते समय उस भिक्षु के अनेक कामसहगत संज्ञामनस्कार सामने आते हैं, वेही इसकी साधना के रोग (के समान) हैं। जैसे, आयुष्मानो! किसी स्वस्थ सुखी पुरुष को कोई दुःख उत्पन्न हो जाय तो वही उसका 'रोग' कहलाता है; उसी प्रकार उस साधक को ये कामसहगत संज्ञामनस्कार 'रोग' कहलाते हैं। आयुष्मानो! जितने भी 'रोग' हैं भगवान् ने उन सब को 'दुःख' ही कहा है। इस विवेचन से भी, आयुष्मानो! यह निर्वाण ही 'सुख' सिद्ध होता है। (१)

४. ''पुनः आयुष्मानो! वह भिक्षु वितर्क एवं विचारों के शान्त होने पर...पूर्ववत्...द्वितीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। इस साधना के समय भी उस को अनेक वितर्कसहगत ...पूर्ववत्...। इस विवेचन से भी, आयुष्मानो! निर्वाण ही 'सुख' सिद्ध होता है। (२)

५. ''पुनः, आयुष्मानो! भिक्षु प्रीति से वैराग्य होने से ...पूर्ववत्... तृतीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। इस साधना के समय भी उस भिक्षु के अनेक प्रीतिसहगत ...पूर्ववत्...। इस विवेचन से भी, आयुष्मानो! यह निर्वाण ही 'सुख' सिद्ध होता है। (३)

६. ''पुनः, आयुष्मानो! भिक्षु सुख एवं दुःख के प्रहाण से ...पूर्ववत्... चतुर्थ ध्यान को प्राप्त

उपसम्पज्ज विहरति। तस्स चे, आवुसो, भिक्खुनो इमिना विहारेन विहरतो उपेक्खासहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति, स्वास्स होति आबाधो। सेय्यथापि, आवुसो, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स ते उपेक्खासहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स होति आबाधो। यो खो पनावुसो, आबाधो दुक्खमेतं वुत्तं भगवता। इमिना पि खो एतं, आवुसो, परियायेन वेदितब्बं यथा सुखं निब्बानं।

७. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा अनन्तो आकासो ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। तस्स चे, आवुसो, भिक्खुनो इमिना विहारेन विहरतो रूपसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति, स्वास्स होति आबाधो। सेय्यथापि, आवुसो, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स ते रूपसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स होति आबाधो। यो खो पनावुसो, आबाधो दुक्खमेतं वुत्तं भगवता। इमिना [R.417] पि खो एतं, आवुसो, परियायेन वेदितब्बं यथा सुखं निब्बानं।

८. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म अनन्तं विञ्ञाणं ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। तस्स चे, आवुसो, भिक्खुनो इमिना विहारेन विहरतो आकासानञ्चायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा [N.56,B.215] समुदाचरन्ति, स्वास्स होति आबाधो। सेय्यथापि, आवुसो, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स ते आकासनञ्चायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स होति आबाधो। यो खो पनावुसो, आबाधो दुक्खमेतं वुत्तं भगवता। इमिना पि खो एतं, आवुसो, परियायेन वेदितब्बं यथा सुखं निब्बानं।

९. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म, नत्थि किञ्ची ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। तस्स चे, आवुसो, भिक्खुनो इमिना

कर साधना करता है। इस साधना के समय भी उस भिक्षु के अनेक उपेक्षासहगत ...पूर्ववत्...। इस विवेचन से भी यह निर्वाण ही 'सुख' सिद्ध होता है। (४)

७. ''पुनः, आयुष्मानो! भिक्षु रूपसंज्ञाओं को अतिक्रान्त कर तथा प्रतिघसंज्ञाओं के अस्त हो जाने से एवं नानात्वसंज्ञाओं को मन में न धारण करने से 'आकाश अनन्त है'—इस प्रकार आकाशानन्त्यायतनसंज्ञा को प्राप्त कर साधना करता है। इस साधना के समय उस भिक्षु के अनेक रूपसहगत ...पूर्ववत्...। इस विवेचन से भी यह निर्वाण ही 'सुख' सिद्ध होता है। (५)

८. ''पुनः, आयुष्मानो! भिक्षु आकाशानन्त्यायतन को भी अतिक्रान्त कर 'विज्ञान अनन्त है'—इस प्रकार विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। इस साधना के समय उस भिक्षु के अनेक आकाशानन्त्यायतनसहगत ...पूर्ववत्...। इस विवेचन से भी यह निर्वाण ही 'सुख' सिद्ध होता है। (६)

९. ''पुनः आयुष्मानो! भिक्षु विज्ञानानन्त्यायतन को भी अतिक्रान्त कर 'कुछ भी नहीं है'—ऐसा समझता हुआ आकिञ्चन्यायतन की साधना को प्राप्त कर साधना करता है। उस भिक्षु के इस

विहारेन विहरतो विञ्ञाणञ्चायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति, स्वास्स होति आबाधो। सेय्यथापि, आवुसो, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स ते विञ्ञाणञ्चायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स होति आबाधो। यो खो पनावुसो, आबाधो दुक्खमेतं वुत्तं भगवता। इमिना पि खो एतं, आवुसो, परियायेन वेदितब्बं यथा सुखं निब्बानं।''

१०. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म, नेसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। तस्स चे, आवुसो, भिक्खुनो इमिना विहारेन विहरतो आकिञ्चायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति, स्वास्स होति आबाधो। सेय्यथापि, आवुसो, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स ते आकिञ्चञ्ञायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स होति आबाधो। यो खो पनावुसो, आबाधो दुक्खमेतं वुत्तं भगवता। इमिना पि खो एतं, आवुसो, परियायेन वेदितब्बं यथा सुखं निब्बानं।

[R.418] ११. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। इमिना पि खो एतं, आवुसो, परियायेन वेदितब्बं यथा सुखं निब्बानं'' ति॥ ●

४. गावीउपमासुत्तं : १. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, गावी पब्बतेय्या बाला अब्यत्ता [N.57, B.216] अखेत्तञ्ञू अकुसला विसमे पब्बते चरितुं। तस्सा एवमस्स—'यन्नूनाहं अगतपुब्बं चेव दिसं गच्छेय्यं, अखादितपुब्बानि च तिणानि खादेय्यं, अपीतपुब्बानि च पानीयानि पिवेय्यं' ति। सा पुरिमं पादं न सुप्पतिट्ठितं पतिट्ठापेत्वा पच्छिमं पादं उद्धरेय्य। सा

साधना के समय यदि ...पूर्ववत्...। इस विवेचन से भी निर्वाण ही वास्तविक 'सुख' सिद्ध होता है। (७)

१०. ''पुनः, आयुष्मानो! भिक्षु आकिञ्चन्यायतन को भी सर्वथा अतिक्रान्त कर नैवसंज्ञा-नासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करता है। इस साधना के समय यदि ...पूर्ववत्...। इस विवेचन से भी निर्वाण ही वास्तविक 'सुख' सिद्ध होता है। (८)

११. ''पुनः, आयुष्मानो! भिक्षु नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को भी सर्वथा समतिक्रान्त कर संज्ञावेदितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है। प्रज्ञा द्वारा, साक्षात्कार करने पर इसके सभी आश्रव क्षीण हो जाते हैं। इस विवेचन से भी निर्वाण ही वास्तविक 'सुख' सिद्ध होता है''॥ (९) ●

४. गो-उपमासूत्र : : अशिक्षित तथा शिक्षित गौ के नौ धर्म

१. ''जैसे, भिक्षुओ! किसी पर्वत प्रदेश में विचरने वाली कोई मूर्ख एवं मन्दमति तथा उस क्षेत्र से अपरिचित गौ यह सोचे—'क्यों न आज ऐसे क्षेत्र में चल कर, जहाँ पहले कभी न गयी हूँ, चल कर ऐसा घास खाया जाय तथा ऐसा जल पीया जाय जो पहले कभी न खाया गया हो, न पीया गया हो'। तब वह अपना अगला पैर सुव्यवस्थित रखने से पहले ही पिछला पैर उठा ले। तब वह

न चेव अगतपुब्बं दिसं गच्छेय्य, न च अखादितपुब्बानि तिणानि खादेय्य, न च अपीतपुब्बानि पानीयानि पिवेय्य; यस्मिं चस्सा पदेसे ठिताय एवमस्स—'यन्नूनाहं अगतपुब्बं चेव दिसं गच्छेय्यं, अखादितपुब्बानि च तिणानि खादेय्यं, अपीतपुब्बानि न पानीयानि पिवेय्यं' ति तं च पदेसं न सोत्थिना पच्चागच्छेय्य। तं किस्स हेतु? तथा हि सा, भिक्खवे, गावी पब्बतेय्या बाला अब्यत्ता अखेत्तञ्ञू अकुसला विसमे पब्बते चरितुं। एवमेव खो, भिक्खवे, इधेकच्चो भिक्खु बालो अब्यत्तो अखेत्तञ्ञू अकुसलो विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति; सो तं निमित्तं न आसेवति न भावेति न बहुलीकरोति न स्वाधिट्ठितं अधिट्ठाति।

२. "तस्स एवं होति—'यन्नूनाहं वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। सो न सक्कोति वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं उपसम्पज्ज [R.419] विहरितुं। तस्स एवं होति—'यन्नूनाहं विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। सो न सक्कोति विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरितुं। अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'भिक्खु उभतो भट्ठो उभतो परिहीनो, सेय्यथापि सा गावी पब्बतेय्या बाला अब्यत्ता अखेत्तञ्ञू अकुसला विसमे पब्बते चरितुं'।

न पहले कभी न गये क्षेत्र में जा सकेगी और न अपूर्व घास तथा जल ही खा पी सकेगी। इतना ही नहीं, उसने जहाँ आरम्भ में खड़ी हो कर यह सोचा था कि क्यों न आज ऐसे प्रदेश में चल कर ...पूर्ववत्... न पीया गया हो, वहाँ भी सुखपूर्वक न लौट सकेगी। वह किस कारण? वह इस कारण कि वह पर्वतप्रदेश में विचरण करने में अकुशल मूर्ख मन्दमति गौ ऐसे पर्वतप्रदेश में विचरण करने में कुशल नहीं है। इसी प्रकार, भिक्षुओ! यहाँ कोई मूर्ख एवं मन्दमति भिक्षु साधनाक्षेत्र से अपरिचित होता हुआ भी यदि कामभोगों को त्याग कर, अकुशल धर्मों से दूर रह कर, वितर्क विचार सहित, विवेकजन्य प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है तो भी वह अपने लक्ष्य का आसेवन (अभ्यास), भावना या उसमें बहुलता नहीं ला पाता और न अपनी पूर्वस्थिति में ही लौटने में समर्थ होता है।

२. "तब उस (भिक्षु) को यह विचार होता है—'क्यों न मैं वितर्क एवं विचारों के शमन से आध्यात्मिक चित्तप्रसाद एवं एकाग्रता वाले, वितर्क विचाररहित, समाधिजन्य प्रीतिसुखमय द्वितीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करूँ!' परन्तु वह इस वितर्क एवं विचारों के शमन से ...पूर्ववत्... द्वितीय ध्यान की साधना नहीं कर पाता। तब उसको यह विचार हो—'क्यों न मैं कामभोगों से दूर रहता हुआ, अकुशल धर्मों का त्याग कर वितर्क विचार सहित विवेकजन्य प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान की ही साधना करूँ।' परन्तु वह इन कामभोगों से दूर रह कर ...पूर्ववत्... प्रथम ध्यान की भी साधना नहीं कर पाता। भिक्षुओ! ऐसा साधक भिक्षु 'उभयतो भ्रष्ट' कहलाता है। वह किसी भी ओर का नहीं रहता, उसके दोनों ही अंश क्षीण हो जाते हैं, न वह आगे बढ पाता है और न पुनः पीछे ही

३. "सेय्यथापि, भिक्खवे, गावी पब्बतेय्या पण्डिता ब्यत्ता खेत्तञ्ञू कुसला विसमे [N.58] पब्बते चरितुं। तस्सा एवमस्स—'यन्नूनाहं अगतपुब्बं चेव दिसं गच्छेय्यं, अखादित-पुब्बानि च तिणानि खादेय्यं, अपीतपुब्बानि च पानीयानि पिवेय्यं' ति। सा पुरिमं पादं न [B.217] सुप्पतिट्ठितं पतिट्ठापेत्वा पच्छिमं पादं उद्धरेय्य। सा अगतपुब्बं चेव दिसं गच्छेय्य, अखादितपुब्बानि च तिणानि खादेय्य, अपीतपुब्बानि च पानीयानि पिवेय्य। यस्मिं चस्सा पदेसे ठिताय एवमस्स—'यन्नूनाहं अगतपुब्बं चेव दिसं गच्छेय्यं, अखादितपुब्बानि च तिणानि खादेय्यं, अपीतपुब्बानि न पानीयानि पिवेय्यं' ति तं च पदेसं सोत्थिना पच्चागच्छेय्य। तं किस्स हेतु? तथा हि सा, भिक्खवे, गावी पब्बतेय्या पण्डिता ब्यत्ता खेत्तञ्ञू कुसला विसमे पब्बते चरितुं। एवमेव खो, भिक्खवे, इधेकच्चो भिक्खु पण्डितो ब्यत्तो खेत्तञ्ञू कुसलो विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो तं निमित्तं आसेवति भावेति बहुलीकरोति स्वाधिट्ठितं अधिट्ठाति।

४. "तस्स एवं होति—'यन्नूनाहं वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। सो दुतियं झानं अनभिहिंसमानो वितक्कविचारानं वूपसमा दुतियं झानं

लौटने की स्थिति में रह जाता है; जैसे वह पर्वतक्षेत्र के विचरण से अपरिचित मूर्ख, मन्दगति गौ न आगे जाकर कोई नया घास एवं नया जल पाती है और न पीछे ही लौटने की स्थिति में रह जाती है।

३. "भिक्षुओ! जैसे, पर्वतों पर रहने वाली, पर्वत क्षेत्र के विचरण में चतुर, कोई समझदार गौ क्षेत्र से परिचित हो। उस को यह विचार हो—'क्यों न आज उस ओर चला जाय, जहाँ पहले कभी न गयी थी और वहाँ ऐसा अपूर्व घास खाया जाय जो पहले कभी न खाया हो, और ऐसा स्वादिष्ट जल पीया जाय जो पहले कभी न पीया हो'। वह आगे चलते समय अगला पैर सुव्यवस्थित रख कर ही पिछला पैर उठावे। तब वह उस प्रदेश में पहुँच जाती है जहाँ पहले न कभी गयी थी। वहाँ अपूर्व घास भर पेट खाये तथा मीठा जल पीये। इतना ही नहीं, वह वहाँ से तृप्त होने के बाद, पहले जहाँ खड़े होकर उसने वहाँ जाने का विचार किया था, वहाँ उसी क्रम से बुद्धिमत्तापूर्वक लौट भी आती है। ऐसा क्यों? ऐसा इसलिये कि वह पर्वतों पर रहने वाली, उस क्षेत्र से परिचित समझदार गौ उस पर्वत क्षेत्र में विचरण करने में दक्ष है।

"इसी प्रकार, भिक्षुओ! यहाँ कोई बुद्धिमान् साधनाक्षेत्र का परिचित भिक्षु कामभोगों से दूर रह कर अकुशल धर्मों का त्याग कर, वितर्क विचार सहित प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है तो वह ऐसा भिक्षु अपने लक्ष्य का आसेवन, भावना तथा उसमें बहुलता प्राप्त कर, यदि चाहे तो पुनः पीछे लौटने में भी समर्थ है। (१)

४. "भिक्षुओ! वह आगे यह सोचता है—'क्यों न मैं वितर्क एवं विचारों के शमन से आध्यात्मिक सम्प्रसाद (सुख), एकाग्रता, वितर्क विचार रहित समाधिजन्य प्रीतिसुखमय द्वितीय

उपसम्पज्ज विहरति। सो तं निमित्तं आसेवति भावेति बहुलीकरोति स्वाधिट्ठितं अधिट्ठाति।

५. ''तस्स एवं होति—'यन्नूनाहं पीतिया च विरागा उपेक्खको च [R.420] विहरेय्यं सतो न सम्पजानो, सुखं च कायेन पटिसंवेदेय्यं यं तं अरिया आचिक्खन्ति— उपेक्खको सतिमा सुखविहारी ति ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। सो ततियं झानं अनभिहिंसमानो पीतिया च विरागा ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो तं निमित्तं आसेवति भावेति बहुलीकरोति स्वाधिट्ठितं अधिट्ठाति।

६. ''तस्स एवं होति—'यन्नूनाहं सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। सो चतुत्थं झानं अनभिहिंसमानो सुखस्स च पहाना ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो तं निमित्तं आसेवति भावेति बहुलीकरोति स्वाधिट्ठितं अधिट्ठाति।

७. ''तस्स एवं होति—'यन्नूनाहं सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा [N.59] पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा अनन्तो आकासो ति आकासा-नञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। सो आकासानञ्चायतनं अनभिहिंसमानो [B.218]

ध्यान को प्राप्त कर साधना करूँ। और वह द्वितीय ध्यान को चोट न पहुँचाता (अन्यथा आचरण न करता) हुआ, वितर्क एवं विचारों के उपशम से द्वितीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। वह उस लक्ष्य का आसेवन (अभ्यास), साधना एवं उसमें बहुलता प्राप्त करने में समर्थ होता है तथा अपने क्षेत्र में भी दृढता से स्थिर रहता है। (२)

५. ''पुन: उस को यह विचार होता है—'क्यों न मैं प्रीति में वैराग्य के कारण उपेक्षापूर्वक, स्मृतिसम्प्रजन्य के साथ साधना करता हुआ अपनी काया में सुख का अनुभव करूँ, जिसके लिये आर्यजन यह कहा करते हैं कि यह साधक उपेक्षापूर्वक, स्मृतिमान् हो कर साधना कर रहा है, ऐसे तृतीय ध्यान की साधना करूँ।' वह तृतीय ध्यान को किसी अन्यथा कर्म से चोट न पहुँचाता हुआ, प्रीति में वैराग्य के कारण, तृतीय ध्यान को प्राप्त कर साधन करता है। वह अपने लक्ष्य का आसेवन, भावना एवं बहुलीकार करने में समर्थ होता है। तथा अपने प्राप्त किये हुए अधिकार पर भी स्थिर रहता है। (३)

६. ''पुन: उसको यह विचार होता है—'क्यों न मैं सुख एवं दु:ख के प्रहाण से, तथा सौमनस्य एवं दौर्मनस्य के पहले ही अस्त हो जाने से, अदु:ख-असुखमय, स्मृतिपरिशुद्धियुक्त चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करूँ।' वह चतुर्थ ध्यान के साथ मूर्खतापूर्ण छेड़छाड़ न करता हुआ सुख-दु:ख के प्रहाण से ...पूर्ववत्... चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। वह अपने लक्ष्य का ...पूर्ववत्...अधिकार भी स्थिर रखता है। (४)

७. ''पुन: उसको यह विचार होता है—'क्यों न मैं रूपसंज्ञाओं का सर्वथा अतिक्रमण कर, प्रतिघसंज्ञाओं के अस्त हो जाने से, नानात्व संज्ञाओं को मन में न लाने से 'आकाश अनन्त है'— ऐसा समझता हुआ आकाशानन्त्यायतन को प्राप्तकर उस की साधना करूँ'। वह आकाशानन्त्यायतन

सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा ...पे०... आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। सो तं निमित्तं आसेवति भावेति बहुलीकरोति स्वाधिट्ठितं अधिट्ठाति।

८. "तस्स एवं होति—'यन्नूनाहं सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम अनन्तं विञ्ञाणं ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। सो विञ्ञाणञ्चायतनं अनभिहिंसमानो सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। सो तं निमित्तं आसेवति भावेति बहुलीकरोति स्वाधिट्ठितं अधिट्ठाति।

९. "तस्स एवं होति—'यन्नूनाहं सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम नत्थि किञ्ची ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। सो आकिञ्चञ्ञायतनं अनभिहिंसमानो सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। सो तं निमित्तं आसेवति भावेति बहुलीकरोति स्वाधिट्ठितं अधिट्ठाति।

१०. "तस्स एवं होति—'यन्नूनाहं सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। सो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं अनभिहिंसमानो सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज [R.421] विहरति। सो तं निमित्तं आसेवति भावेति बहुलीकरोति स्वाधिट्ठितं अधिट्ठाति।

११. "तस्स एवं होति—'यन्नूनाहं सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म

के साथ व्यर्थ अवरोध (छेड़छाड़) न करता हुआ रूपसंज्ञाओं का सर्वथा अतिक्रमण कर ...पूर्ववत्... आकाशानन्त्यायतन की साधना करता है। वह अपने लक्ष्य का ...पूर्ववत्... अधिकार भी रखता है। (५)

८. "पुन: उस को यह विचार होता है—'क्यों न मैं आकाशानन्त्यायतन का सर्वथा अतिक्रमण कर 'विज्ञान अनन्त है'—ऐसा समझता हुआ विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर उसकी साधना करूँ।' वह विज्ञानानन्त्यायतन से व्यर्थ छेड़छाड़ न करता हुआ आकाशानन्त्यायतन की साधना से आगे बढकर ...पूर्ववत्... विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। वह अपने लक्ष्य का ...पूर्ववत्.... अधिकार भी रखता है। (६)

९. "पुन: उस को यह विचार होता है—'क्यों न मैं विज्ञानानन्त्यायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर 'कुछ नहीं है'—ऐसा समझ कर आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करूँ।' वह आकिञ्चन्यायतन के साथ व्यर्थ छेड़छाड़ न कर 'कुछ नहीं है'—इस आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। वह अपने लक्ष्य का ...पूर्ववत्... अधिकार भी रखता है। (७)

१०. "पुन: उस को यह विचार होता है—'क्यों न मैं आकिञ्चन्यायतन का सर्वथा अतिक्रमण कर नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करूँ'। वह नैवसंज्ञानासंज्ञायतन से अशास्त्रीय छेड़छाड़ न करता हुआ, आकिञ्चन्यायतन का सर्वथा अतिक्रमण कर नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करता है।... (८)

सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। सो सञ्ञावेदयितनिरोधं अनभिहिंसमानो सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति।

१२. ''यतो खो, भिक्खवे, भिक्खु तं तदेव समापत्तिं समापज्जति पि वुट्ठाति पि, तस्स मुदु चित्तं होति कम्मञ्ञं। मुदुना कम्मञ्ञेन चित्तेन अप्पमाणो समाधि होति सुभावितो। सो अप्पमाणेन समाधिना सुभावितेन यस्स यस्स अभिञ्ञा- [N.60, B.219] सच्छिकरणीयस्स धम्मस्स चित्तं अभिनिन्नामेति अभिञ्ञासच्छिकिरियाय तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणाति सति सति आयतने।

१३. ''सो सचे आकङ्खति—'अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभवेय्यं, एको पि हुत्वा बहुधा अस्सं, बहुधा पि हुत्वा एको अस्सं ...पे०... याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेय्यं' ति, तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणाति सति सति आयतने।

१४. ''सो सचे आकङ्खति—दिब्बाय सोतधातुया ...पे०... सति सति आयतने।

१५. ''सो सचे आकङ्खति—'परसत्तानं परपुग्गलानं चेतसा चेतो परिच्च पजानेय्यं, सरागं वा चित्तं सरागं चित्तं ति पजानेय्यं, वीतरागं वा चित्तं वीतरागं चित्तं ति पजानेय्यं, सदोसं वा चित्तं सदोसं चित्तं ति पजानेय्यं, वीतदोसं वा चित्तं वीतदोसं चित्तं ति पजानेय्यं, समोहं वा चित्तं समोहं चित्तं ति पजानेय्यं, वीतमोहं वा चित्तं... सङ्खित्तं वा चित्तं... विक्खित्तं वा चित्तं... महग्गतं वा चित्तं... अमहग्गतं वा चित्तं... सउत्तरं वा चित्तं... अनुत्तरं वा चित्तं... समाहितं वा चित्तं... असमाहितं वा चित्तं... विमुत्तं वा चित्तं... अविमुत्तं वा चित्तं अविमुत्तं चित्तं ति पजानेय्यं' ति, तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणाति सति सति आयतने।

---

११. ''पुनः उस को यह विचार होता है—'क्यों न मैं नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का सर्वथा अतिक्रमण कर, संज्ञावेदियतनिरोध को प्राप्त कर साधना करूँ।' वह इस संज्ञावेदितनिरोध के साथ व्यर्थ छेड़छाड़ न करता हुआ, नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का सर्वथा अतिक्रमण कर संज्ञावेदितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है।... (९)

१२. ''इस प्रकार वह भिक्षु जिस साधना की प्राप्ति में लगता है वह वहाँ से ऊपर उठता है (उसमें प्रगति करता है)। उससे उस का चित्त मृदु एवं निपुण (कर्मकुशल) होता जाता है। उस मृदु एवं कर्मण्यचित्त से वह अपरिमेय समाधि की साधना करता है। वह उस अपरिमित समाधि से सम्यक्तया साधना के बाद जिस किसी भी अभिज्ञा से साक्षात्करणीय धर्म की ओर अपना चित्त लगाता है वहाँ वहाँ उस स्मृत्यायतन में उसका साक्षात्कार हो जाता है।

१३. ''उस समय यदि वह चाहे—'अनेक प्रकार के चमत्कारों का अनुभव करूँ, एक हो कर बहुत हो जाऊँ, या बहुत हो कर एक हो जाऊँ ...पूर्ववत्... ब्रह्मलोक तक अपने इसी शरीर से जा कर वश में कर लूँ', तो वह वैसा करने में समर्थ होता है।

१४. ''वह यदि चाहता है—दिव्य श्रोत्र धातु से ...पूर्ववत्... उसका साक्षात्कार हो जाता है।

१५. ''वह यदि चाहता है—दूसरे प्राणियों का, दूसरे पुद्गलों के चित्त स्वचित्त से जान ले कि उसका चित्त सराग है ...पूर्ववत्... उसका चित्त अविमुक्त है तो वह वैसा साक्षात्कार कर सकता है।

१६. ''सो सचे आकङ्खति—'अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरेय्यं, सेय्यथीदं— एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरेय्यं' ति, तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणाति सति सति आयतने।

[R.422] १७. ''सो सचे आकङ्खति—'दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानेय्यं' ति, तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणाति सति सति आयतने।

१८. ''सो सचे आकङ्खति—'आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं [N.61] दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति, तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणाति सति सति आयतने'' ति॥ ●

५. झानसुत्तं : १. ''पठमं पाहं, भिक्खवे, झानं निस्साय आसवानं खयं वदामि; [B.220] दुतियं पाहं, भिक्खवे, झानं निस्साय आसवानं खयं वदामि; ततियं पाहं, भिक्खवे, झानं निस्साय आसवानं खयं वदामि; चतुत्थं पाहं, भिक्खवे, झानं निस्साय आसवानं खयं वदामि; आकासानञ्चायतनं पाहं, भिक्खवे, निस्साय आसवानं खयं वदामि; विञ्ञाणञ्चा-यतनं पाहं, भिक्खवे, निस्साय आसवानं खयं वदामि; आकिञ्चञ्ञायतनं पाहं, भिक्खवे, निस्साय आसवानं खयं वदामि; नेवसञ्ञानाञ्ञायतनं पाहं, भिक्खवे, निस्साय आसवानं खयं वदामि; सञ्ञावेदयितनिरोधं पाहं, भिक्खवे, निस्साय आसवानं खयं वदामि।

२. '''पठमं पाहं, भिक्खवे, झानं निस्साय आसवानं खयं वदामी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो यदेव तत्थ होति रूपगतं वेदनागतं सञ्ञागतं सङ्खारगतं

---

१६. ''वह यदि चाहता है कि वह अपने अनेक पूर्व जन्मों के विषय में स्मरण कर सके कि वह एक जन्म में ...पूर्ववत्... वह वैसा साक्षात्कार कर सकता है।

१७. ''वह यदि चाहता है कि वह मानवदुर्लभ दिव्य चक्षु से ...पूर्ववत्... कर्मानुसार जिस किसी भी योनि में पहुँचे हुए प्राणी के विषय में जान सके तो वह वैसा करने में समर्थ होता है।

१८. ''वह यदि चाहता है—'आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर साधना करूँ', तो वह वैसा स्मृत्यायतनपूर्वक कर सकता है''॥ ●

५. ध्यानसूत्र : : आश्रवक्षय के नौ आलम्बन

१. ''भिक्षुओ! मैं प्रथम ध्यान के सहारे से आश्रवक्षय की बात कहता हूँ, द्वितीय ध्यान...तृतीय ध्यान...चतुर्थ ध्यान के सहारे से आश्रवक्षय की बात कहता हूँ; आकाशा-नन्त्यायतन...विज्ञानानन्त्यायतन... आकिञ्चन्यायतन...नैवसंज्ञानासंज्ञायतन...संज्ञावेदितनिरोध की भावना के सहारे से भी आश्रवक्षयनिरोध की बात कहता हूँ।

२. ''भिक्षुओ! मैने 'प्रथम ध्यान के सहारे से आश्रवक्षय का निरोध होता है'—यह जो कहा है वह किस कारण से कहा है? यहाँ, भिक्षुओ! जो साधक कामभोगों से तथा अकुशल धर्मों से

विञ्ञाणगतं, ते धम्मे अनिच्चतो दुक्खतो रोगतो गण्डतो सल्लतो अघतो आबाधतो परतो पलोकतो सुञ्ञतो अनत्ततो समनुपस्सति। सो तेहि धम्मेहि चित्तं पटिवापेति। सोतेहि धम्मेहि चित्तं पटिवापेत्वा अमताय धातुया चित्तं उपसंहरति—'एतं सन्तं एतं पणीतं [R.423] यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति। नो चे आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, इस्सासो वा इस्सासन्तेवासी वा तिणपुरिसरूपके वा मत्तिकापुञ्जे वा योग्गं करित्वा, सो अपरेन समयेन दूरपाति च होति अक्खणवेधी च महतो च कायस्स पदालेता; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... [N.62] पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो यदेव तत्थ होति रूपगतं वेदनागतं सञ्ञागतं [B.221] सङ्खारगतं विञ्ञाणगतं, ते धम्मे अनिच्चतो दुक्खतो रोगतो गण्डतो सल्लतो अघतो आबाधतो परतो पलोकतो सुञ्ञतो अनत्ततो समनुपस्सति। सो तेहि धम्मेहि चित्तं पटिवापेत्वा अमताय धातुया चित्तं उपसंहरति—'एतं सन्तं एतं पणीतं यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधि-पटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति। नो चे आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी [R.424]

...पूर्ववत्... प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है, वह वहाँ जो कुछ भी रूपगत, वेदनागत, संज्ञागत, संस्कारगत एवं विज्ञानगत होता है, उस सबको अनित्य, दुःख, रोग, गण्ड, शल्य, अघ (पाप), आबाध, पर, प्रलोक (टूटा हुआ), शून्य एवं अनात्म रूप से देखता है। वह उन धर्मों से स्वचित्त को दूर हटा देता है। वह उन धर्मों से स्वचित्त को दूर हटाकर अमृत (निर्वाण) धातु (की प्राप्ति) के लिये लगाता है कि यह (निर्वाण) ही शान्त एवं उत्तम है, यही सर्वविध संस्कारों का शमनकारक, सर्व प्रकार के मानसिक विकारों को दूर करने वाला, तृष्णा का नाशक, वैराग्यदायक, भवपरम्परा का निरोधक है। वह साधक उसकी साधना में लगा हुआ ही अपने चित्तविकारों का क्षय कर सकता है। यदि वह किसी (प्रबल) कारण से अपने इन चित्तविकारों का सर्वथा क्षय न भी कर पावे तो वह अपने इस अतिशय धर्मराग एवं धर्मप्रेम के प्रभाव से पाँचों अवरभागीय संयोजनों का क्षय कर औपपातिक (अयोनिज=देवता) हो जाता है तथा वह उस देवलोक से यहाँ न लौट कर, वहाँ ही रह कर, साधना करता हुआ परिनिर्वाण पा जाता है।

"भिक्षुओ! जैसे कोई धनुर्धर या उस का कोई शिष्य तृणसमूह या मिट्टी से पुरुष का आकार बना कर उस पर बाण चलाने का अभ्यास करता है, वह इस प्रकार अभ्यास करता हुआ किसी अन्य समय दूर तक लक्ष्यभेद करने में कुशल हो जाता है तथा विशाल सेना को परास्त करने में भी समर्थ हो जाता है; भिक्षुओ! इसी प्रकार वह साधक भिक्षु कामभोगों तथा अकुशल धर्मों को दूर कर ...पूर्ववत्... प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। वह उस समय जो कुछ भी रूपगत,

अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। 'पठमं पाहं, भिक्खवे, झानं निस्साय आसवानं खयं वदामी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

३. ''दुतियं पाहं, भिक्खवे, झानं निस्साय ...पे०... ततियं पाहं, भिक्खवे, झानं निस्साय ...पे०... 'चतुत्थं पाहं, भिक्खवे, झानं निस्साय आसवानं खयं वदामी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे, भिक्खु सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो यदेव तत्थ होति रूपगतं वेदनागतं सञ्ञागतं सङ्खारगतं विञ्ञाणगतं, ते धम्मे अनिच्चतो दुक्खतो रोगतो गण्डतो सल्लतो अघतो आबाधतो परतो पलोकतो सुञ्ञतो अनत्ततो समनुपस्सति। सो तेहि धम्मेहि चित्तं पटिवापेति। सो तेहि धम्मेहि चित्तं पटिवापेत्वा अमताय धातुया चित्तं उपसंहरति—'एतं सन्तं एतं पणीतं यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति। नो चे आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका।

[N.63] ''सेय्यथापि, भिक्खवे, इस्सासो वा इस्सासन्तेवासी वा तिणपुरिसरूपके वा [B.222] मत्तिकापुञ्जे वा योग्गं करित्वा, सो अपरेन समयेन दूरेपाती च होति अक्खणवेधी च महतो च कायस्स पदालेता; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सुखस्स च पहना ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो यदेव तत्थ होति रूपगतं वेदनागतं ...पे०... [R.425] अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। 'चतुत्थं पाहं, भिक्खवे, झानं निस्साय आसवानं खयं वदामी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

४. ''आकासानञ्चायतनं पाहं, भिक्खवे, झानं निस्साय आसवानं खयं वदामी'

वेदनागत ...पूर्ववत्... वहाँ से न लौटकर वहाँ ही साधना करता हुआ परिनिर्वाण प्राप्त कर जाता है। 'मैं प्रथम ध्यान के आश्रय से आश्रवों का क्षय कहता हूँ'—यह जो कहा था, इसी आशय से कहा था। (१)

३. ''भिक्षुओ! मैं द्वितीय ध्यान के आश्रय से भी ...पूर्ववत्... तृतीय ध्यान के आश्रय से भी मैं ...पूर्ववत्... 'चतुर्थ ध्यान के आश्रय से भी आश्रवों का क्षय कहता हूँ'—यह जो कहा था, वह किस आशय से कहा था? यहाँ, भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु सुख-दुःख के प्रहाण से, सौमनस्य एवं दौर्मनस्य के भी उस समय विलुप्त हो जाने से अदुःख-असुखमय, स्मृतिपरिशुद्धियुक्त चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। वह उस समय जो कुछ भी रूपगत, वेदनागत ...पूर्ववत्... परिनिर्वाण प्राप्त कर जाता है। 'मैं चतुर्थ ध्यान के आश्रय से आश्रवों का क्षय कहता हूँ'—यह जो कहा था, इसी आशय से कहा था। (२-३-४)

४. '''भिक्षुओ! मैं आकाशानन्त्यायन की साधना के आश्रय से भी आश्रवों का क्षय कहता

ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे, भिक्खु सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। सो यदेव तत्थ होति वेदनागतं सञ्ञागतं सङ्खारगतं विञ्ञाणगतं, ते धम्मे अनिच्चतो दुक्खतो रोगतो गण्डतो सल्लतो अघतो आबाधतो परतो पलोकतो सुञ्ञतो अनत्ततो समनुपस्सति। सो तेहि धम्मेहि चित्तं पटिवापेति। सो तेहि धम्मेहि चित्तं पटिवापेत्वा अमताय धातुया चित्तं उपसंहरति—'एतं सन्तं एतं पणीतं यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति। नो चे आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, इस्सासो वा इस्सासन्तेवासी वा तिणपुरिसरूपके वा मत्तिकापुञ्जे वा योग्गं करित्वा, सो अपरेन समयेन दूरेपाती च होति अक्खणवेधी च महतो च कायस्स पदालेता; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघ-सञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। सो यदेव तत्थ होति वेदनागतं सञ्ञागतं ...पे०... अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। 'आकासानञ्चायतनं पाहं, भिक्खवे, निस्साय आसवानं खयं वदामी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

५. ''विञ्ञाणञ्चायतनं पाहं, भिक्खवे, निस्साय ...पे०... 'आकिञ्चञ्ञा- [N.64] यतनं पाहं, भिक्खवे, निस्साय आसवानं खयं वदामी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। [R.426] किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे, भिक्खु सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं [B.223] समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। सो यदेव तत्थ होति वेदनागतं सञ्ञागतं सङ्खारगतं विञ्ञाणगतं, ते धम्मे अनिच्चतो दुक्खतो रोगतो गण्डतो सल्लतो अघतो आबाधतो परतो पलोकतो सुञ्ञतो अनत्ततो समनुपस्सति। सो तेहि धम्मेहि चित्तं पटिवापेति। सो तेहि धम्मेहि चित्तं पटिवापेत्वा अमताय धातुया चित्तं उपसंहरति—'एतं सन्तं एतं पणीतं यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो

हूँ'—यह जो कहता था, वह किस आशय से कहा था? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु रूपसंज्ञाओं का सर्वथा अतिक्रमण कर, प्रतिघसंज्ञाओं के भी उस समय क्षीण रहने से, नानात्व संज्ञाओं को मन में न करने से, 'आकाश अनन्त है'—ऐसा मानते हुए आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। वह उस समय जो भी रूपगत, वेदनागत...पूर्ववत्... यह जो कहा था, इसी आशय से कहा था। (५)

५. '''भिक्षुओ! मैं विज्ञानानन्त्यायतन के ...पूर्ववत्...आकिञ्चन्यायतन के सहारे से भी आश्रवों का क्षय कहता हूँ'—यह जो कहा था, किस आशय से कहा था? यहाँ, भिक्षुओ! कोई

निरोधो निब्बानं' ति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति। नो चे आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, इस्सासो वा इस्सासन्तेवासी वा तिणपुरिसरूपके वा मत्तिकापुञ्जे वा योग्गं करित्वा, सो अपरेन समयेन दूरेपाती च होति अक्खणवेधी च महतो च कायस्स पदालेता; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। सो यदेव तत्थ होति वेदनागतं सञ्ञागतं सङ्खारगतं विञ्ञाणगतं, ते धम्मे अनिच्चतो दुक्खतो रोगतो गण्डतो सल्लतो अघतो आबाधतो परतो पलोकतो सुञ्ञतो अनत्ततो समनुपस्सति। सो तेहि धम्मेहि चित्तं पटिवापेति। सो तेहि धम्मेहि चित्तं पटिवापेत्वा अमताय धातुया चित्तं उपसंहरति— 'एतं सन्तं एतं पणीतं यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति। नो चे आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। 'आकिञ्चञ्ञायतनं पाहं, निस्साय आसवानं खयं वदामी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

[N.65] ६. "इति खो, भिक्खवे, यावता सञ्ञासमापत्ति तावता अञ्ञापटिवेधो। यानि च खो इमानि, भिक्खवे, निस्साय द्वे आयतनानि—नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्ति च सञ्ञा-
[B.224] वेदयितनिरोधो च, झायीहेते, भिक्खवे, भिक्खूहि समापत्तिकुसलेहि समापत्ति-वुट्ठानकुसलेहि समापज्जित्वा वुट्ठहित्वा सम्मा अक्खातब्बानी ति वदामी" ति।

६. आनन्दसुत्तं : १. एकं समयं आयस्मा आनन्दो कोसम्बियं विहरति घोसितारामे। तत्र खो आयस्मा आनन्दो भिक्खू आमन्तेसि—"आवुसो भिक्खवे" ति। "आवुसो" ति खो ते भिक्खू आयस्मतो आनन्दस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा आनन्दो एतदवोच—

भिक्षु विज्ञानानन्त्यायतन को सर्वथा अतिक्रान्त कर 'कुछ भी नहीं है'—ऐसा समझता हुआ आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। वह उस समय जो भी रूपगत, वेदनागत ...पूर्ववत्... यह जो कहा था वह इसी आशय से कहा था। (६-७)

६. "इस प्रकार, भिक्षुओ! जहाँ तक संज्ञा की प्राप्ति होती है वहीं तक ज्ञान का प्रवेश है। भिक्षुओ! शेष दो आयतनों का—नैवसंज्ञानासंज्ञायतन समापत्ति एवं संज्ञावेदितनिरोधसमापत्ति—इन का भी, समापत्तिकुशल एवं समापत्तिव्युत्थानकुशल भिक्षुओं द्वारा प्राप्त कर, इन पर स्थिर रह कर समीचीनतया साक्षात्कार करना चाहिये—ऐसा मैं कहता हूँ॥" (८-९)

६. आनन्दसूत्र : : तथागतोपदिष्टमार्ग सरलतम

१. एक समय आयुष्मान् आनन्द कौशाम्बी के घोषिताराम में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। वहाँ आयुष्मान् आनन्द ने भिक्षुओं को "आयुष्मन् भिक्षुओ!" कह कर अपने पास बुलाया। भिक्षु भी "हाँ, आयुष्मन्" कह कर उनके सम्मुख आ गये। तब आयुष्मन् आनन्द उन से यह बोले—

२. "अच्छरियं, आवुसो, अब्भुतं, आवुसो! यावञ्चिदं तेन भगवता जानता पस्सता अरहता सम्मासम्बुद्धेन सम्बाधे ओकासाधिगमो अनुबुद्धो सत्तानं विसुद्धिया सोक-परिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय। तदेव नाम चक्खुं भविस्सति ते रूपा तं चायतनं नो पटि- [R.427] संवेदिस्सति। तदेव नाम सोतं भविस्सति ते सद्दा तं चायतनं नो पटिसंवेदिस्सति। तदेव नाम घानं भविस्सति ते गन्धा तं चायतनं नो पटिसंवेदिस्सति। सा व नाम जिव्हा भविस्सति ते रसा तं चायतनं नो पटिसंवेदिस्सति। सो व नाम कायो भविस्सति ते फोट्ठब्बा तं चायतनं नो पटिसंवेदिस्सती" ति।

३. एवं वुत्ते आयस्मा उदायी आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—"सञ्ञीयेव नु खो, आवुसो आनन्द, तदायतनं नो पटिसंवेदेति उदाहु असञ्ञी" ति?

"सञ्ञीयेव खो, आवुसो, तदायतनं नोपटिसंवेदेति, नो असञ्ञी" ति।

"किंसञ्ञी पनावुसो, तदायतनं नो पटिसंवेदेती" ति?

४. "इधावुसो, भिक्खु, सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं [N.66] अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। एवंसञ्ञी पि खो, आवुसो, तदायतनं नो पटिसंवेदेति।

---

२. "आयुष्मानो! यह आश्चर्य तथा अद्भुत है (कि) उन भगवान् ज्ञानी एवं सम्यक्सम्बुद्ध ने हम श्रावकों के लिये इस जनसम्मर्द (भीड़) से निकलने के लिये कितने सरलमार्ग की देशना कर दी है। इस के आश्रयण से हमारी चित्तविशुद्धि तो हो ही जाती है; साथ ही हमारे सभी प्रकार के लौकिक शोक एवं परिदेव भी नष्ट हो जाते हैं, दुःख एवं दौर्मनस्य (पारस्परिक द्वेष) से हम दूर हो जाते हैं, हमें ज्ञान-प्राप्ति हो जाती है और निर्वाण का साक्षात्कार हो जाता है! उस समय (देशनानुसार साधना करते समय) हमारा वही चक्षु रहेगा, वही रूप (विषय) रहेंगे और वही आयतन होगा; परन्तु हम (उस देशना के प्रभाव से) उस जगत्प्रपञ्च में नहीं फँसेंगे। वही श्रोत्र रहेगा, वही शब्द रहेंगे, वही आयतन होगा, परन्तु उन का हम पर कोई लौकिक प्रभाव नहीं होगा। वही घ्राण रहेगा, वही गन्ध रहेंगे और वही आयतन रहेंगे तो भी लौकिक दृष्टि से वे हमारे लिये व्यर्थ ही होंगे! और वही जिह्वा रहेगी, वही रस रहेंगे, वही आयतन रहेंगे परन्तु देशना के कारण उन का हम पर कोई लौकिक प्रभाव नहीं पड़ेगा। काया भी वही होगी, स्प्रष्टव्य विषय भी वही होंगे और आयतन भी वही होने पर भी (भगवद्देशना के दृढ प्रभाव के कारण) हमारे लिये वे सब निरर्थक ही होंगे।"

३. ऐसा कहे जाने पर, आयुष्मन् उदायी ने आयुष्मन् आनन्द से इस प्रसङ्ग में यह पूछा— "आयुष्मन् आनन्द! संज्ञी ही उस आयतन को अनुभव करता है, या असंज्ञी भी?"

"आयुष्मन्! संज्ञी साधक ही उस आयतन को अनुभव करता है, असंज्ञी नहीं।"

"आयुष्मन्! वह किंसंज्ञी हो कर उस आयतन को अनुभव करता है?"

४. आयुष्मन्! साधक भिक्षु रूपसंज्ञाओं का सर्वथा अतिक्रमण कर, प्रतिघसंज्ञाओं के पूर्णतः

[B.225] ५. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। एवंसञ्ञी पि खो, आवुसो, तदायतनं नो पटिसंवेदेति।

६. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। एवंसञ्ञी पि खो, आवुसो, तदायतनं नो पटिसंवेदेति'' ति।

७. ''एकमिदाहं, आवुसो, समयं साकेते विहरामि अञ्जनवने मिगदाये। अथ खो, [R.428] आवुसो, जटिलवासिका भिक्खुनी येनाहं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो, आवुसो, जटिलवासिका भिक्खुनी मं एतदवोच—'यायं, भन्ते आनन्द, समाधि न चाभिनतो न चापनतो न च ससङ्खारनिग्गय्ह-वारितगतो, विमुत्तत्ता ठितो, ठितत्ता सन्तुसितो, सन्तुसितत्ता नो परितस्सति। अयं, भन्ते आनन्द, समाधि किम्फलो वुत्तो भगवता' ति?

''एवं वुत्ते, सोहं, आवुसो, जटिलवासिकं भिक्खुनिं एतदवोचं—'यायं, भगिनि, समाधि न चाभिनतो न चापनतो न च ससङ्खारनिग्गय्हवारितगतो, विमुत्तत्ता ठितो, ठितत्ता सन्तुसितो, सन्तुसितत्ता नो परितस्सति। अयं, भगिनि, समाधि अञ्ञाफलो वुत्तो भगवता' ति। एवंसञ्ञी पि खो, आवुसो, तदायतनं नो पटिसंवेदेती'' ति॥ ●

अस्त हो जाने से तथा नानात्वसंज्ञाओं मन में न करने से 'आकाश अनन्त है'—यह मान कर आकाशानन्त्यायतन की साधना करता है। ऐसा संज्ञी हो कर, आयुष्मन्! वह साधक उस आयतन को अनुभव नहीं करता।

५. ''पुनः, आयुष्मन्! वह भिक्षु आकाशानन्त्यायतन को पूर्णतः अतिक्रान्त कर 'विज्ञान अनन्त है'—ऐसा मानता हुआ विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। ऐसा संज्ञी होकर ...पूर्ववत्... अनुभव नहीं करता।

६. ''पुनः, आयुष्मन्! वह भिक्षु विज्ञानन्त्यायतन को भी सर्वथा अतिक्रान्त कर 'कुछ नहीं है'—ऐसा मानता हुआ आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। ऐसा संज्ञी हो कर ...पूर्ववत्... अनुभव नहीं करता।

७. ''एक समय, आयुष्मानो! मैं साकेत प्रदेश स्थित अञ्जनवन के मृगदाव में साधना हेतु ठहरा हुआ था। तब आयुष्मानो! जटिलवासिका नाम भिक्षुणी जहाँ मैं साधना कर रहा था, वहाँ आयी ...पूर्ववत्... मुझ से वह यह बोली—''भन्ते आनन्द! जो समाधि न अधिक झुकी हुई है, न अधिक अदृश्य ही हुई है, न संस्कारों के निग्रह से अधिक धूमिल ही हुई है, विमुक्त होने के कारण स्थित है, स्थित होने के कारण सन्तुष्ट होने के कारण किसी प्रकार के त्रास को प्राप्त नहीं होती, भन्ते आनन्द! भगवान् ने इस समाधि का क्या फल बताया है?

''ऐसा कहे जाने पर, आयुष्मानो! मैने उस जटिलवासिका भिक्षुणी को यह बताया—''भगिनि! अभी तुम ने जिस समाधि का विवरण सुनाया है, ऐसी समाधि का, भगवान् ने, एकमात्र

७. लोकायतिकसुत्तं : १. अथ खो द्वे लोकायतिका ब्राह्मणा येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदिंसु। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते ब्राह्मणा भगवन्तं [N.67] एतदवोचुं—

२.. "पूरणो, भो गोतम, कस्सपो सब्बञ्ञू सब्बदस्सावी अपरिसेसं ञाणदस्सनं पटिजानाति—'चरतो च मे तिट्ठतो च सुत्तस्स च जागरस्स च सततं समितं ञाण- [B.226] दस्सनं पच्चुपट्ठितं' ति। सो एवमाह—'अहं अनन्तेन ञाणेन अनन्तं लोकं जानं पस्सं विहरामी' ति। अयं पि, भो गोतम, निगण्ठो नाटपुत्तो सब्बञ्ञू सब्बदस्सावी [R.429] अपरिसेसं ञाणदस्सनं पटिजानाति—'चरतो च मे तिट्ठतो च सुत्तस्स च जागरस्स च सततं समितं ञाणदस्सनं पच्चुपट्ठितं' ति। सो एवमाह—'अहं अनन्तेन ञाणेन अनन्तं लोकं जानं पस्सं विहरामी' ति। इमेसं, भो गोतम, उभिन्नं ञाणवादानं उभिन्नं अञ्ञमञ्ञं विपच्चनीकवादानं को सच्चं आह को मुसा" ति?

३. "अलं, ब्राह्मणा! तिट्ठतेतं—'इमेसं उभिन्नं ञाणवादानं उभिन्नं अञ्ञमञ्ञं विपच्चनीकवादानं को सच्चं आह को मुसा' ति। धम्मं वो, ब्राह्मणा, देसेस्सामि, तं सुणाथ, साधुकं मनसिकरोथ; भासिस्सामी" ति। "एवं, भो" ति खो ते ब्राह्मणा भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

४. "सेय्यथापि, ब्राह्मणा, चत्तारो पुरिसा चतुद्दिसा ठिता परमेन जवेन च समन्नागता परमेन च पदवीतिहारेन। ते एवरूपेन जवेन समन्नागता अस्सु, सेय्यथापि नाम दळ्हधम्मा

ज्ञान (अर्हत्त्व) ही फल बताया है। आयुष्मानो! ऐसी संज्ञावाला साधक (अर्हत्) भी उस आयतन का अनुभव नहीं करता॥" ●

७. लोकायतिकसूत्र : : वास्तविक साधक के नौ गुण

१. तब कोई दो लोकायतिक (नास्तिक) ब्राह्मण भगवान् (बुद्ध) के सम्मुख आये। आकर कुशलमंगल-प्रश्नानन्तर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उन ब्राह्मणों ने भगवान् से यह कहा—

२. "भौ गौतम! पूरण काश्यप सर्वज्ञ, सर्वद्रष्टा एवं समस्त ज्ञानदर्शन का इस प्रकार साक्षात्कार किये हुए है मानो उस के चलते फिरते समय, सोते जागते समय, समग्र ज्ञानदर्शन उसके चारों ओर परिक्रमा कर रहा हो। उस का कहना है कि वह अपने अनन्त ज्ञान से अनन्त लोकों को देखता हुआ साधना करता है। इधर यह निर्ग्रन्थ ज्ञातिपुत्र भी स्वयं को सर्वज्ञ, सर्वद्रष्टा ...पूर्ववत्... साधना करता है। भो गौतम! इन परस्पर विरुद्ध मतवादों वाले इन दोनों ज्ञानियों के पक्षों में किसका पक्ष सत्य है और किसका पक्ष मिथ्या है?"

३. "ब्राह्मणो! छोड़ो इस बात को कि इन में से किसका पक्ष सत्य है या किसका मिथ्या! मैं तुम्हें धर्म (का तत्त्व) बतलाता हूँ, उस को सुनो और मन में बैठा लो। मैं कहता हूँ—

४. जैसे, ब्राह्मणो! अतिशय वेग वाले तथा दूर तक चलने में अत्यधिक समर्थ कोई चार पुरुष एक स्थान पर बैठे हों। वे इतने वेग से वहाँ आये हों जैसे किसी धनुर्धर ने अपने धनुष् से तीव्र

धनुग्गहो सिक्खितो कतहत्थो कतूपासनो लहुकेन असनेन अप्पकसिरेन तिरियं तालच्छायं अतिपातेय्य; एवरूपेन च पदवीतिहारेन, सेय्यथापि नाम पुरत्थिमा समुद्दा पच्छिमो समुद्दो अथ पुरत्थिमाय दिसाय ठितो पुरिसो एवं वदेय्य—'अहं गमनेन लोकस्स अन्तं पापुणिस्सामी' ति। सो अञ्ञत्रेव असितपीतखायितसायिता अञ्ञत्र उच्चारपस्सावकम्मा अञ्ञत्र निद्दाकिलमथपटिविनोदना वस्ससतायुको वस्ससतजीवी वस्ससतं गन्त्वा अप्पत्वा व [R.430,N.68] लोकस्स अन्तं अन्तरा कालं करेय्य। अथ पच्छिमाय दिसाय ...पे०... अथ उत्तराय दिसाय... अथ दक्खिणाय दिसाय ठितो पुरिसो एवं वदेय्य—'अहं गमनेन लोकस्स [B.227] अन्तं पापुणिस्सामी' ति। सो अञ्ञत्रेव असितपीतखायितसायिता अञ्ञत्र उच्चार-पस्सावकम्मा अञ्ञत्र निद्दाकिलमथपटिविनोदना वस्ससतायुको वस्ससतजीवी वस्ससतं गन्त्वा अप्पत्वा व लोकस्स अन्तं अन्तरा कालं करेय्य। तं किस्स हेतु? नाहं, ब्राह्मणा, एवरूपाय सन्धावनिकाय लोकस्स अन्तं ञातेय्यं दट्ठेय्यं पत्तेय्यं ति वदामि। न चाहं, ब्राह्मणा, अप्पत्वा व लोकस्स अन्तं दुक्खस्स अन्तकिरियं वदामि।

५. "पञ्चिमे, ब्राह्मणा, कामगुणा अरियस्स विनये लोको ति वुच्चति। कतमे पञ्च? चक्खुविञ्ञेय्या रूपा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया; सोतविञ्ञेय्या सद्दा ...पे०... घानविञ्ञेय्या गन्धा... जिव्हाविञ्ञेय्या रसा... कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया; इमे खो, ब्राह्मणा, पञ्च कामगुणा अरियस्स विनये लोको ति वुच्चति।

६. "इध, ब्राह्मणा, भिक्खु विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि

वेगवाला कोई बाण छोड़ा हो; या इतना दूर पैदल चलकर आये हों जैसे कोई पूर्व समुद्र से पैदल चल कर पश्चिम समुद्र तट पर आ कर खड़ा हुआ हो। उन पुरुषों में पूर्व दिशा की ओर बैठा हुआ पुरुष यह कहे—'मैं पैदल चल कर इस लोक अन्त (किनारे) तक पहुँच जाऊँगा।' वह पुरुष कहीं खाना-पीना करता हुआ, कहीं नित्य कर्म (मल-मूत्रोत्सर्जन) करता हुआ, कहीं निद्रा तथा श्रम (थकान) मिटाता हुआ सौ वर्ष तक जीवित रहकर, सौ वर्ष तक निरन्तर चलता हुआ भी इस लोक का अन्त न पाकर मध्य मार्ग में ही मर जाय। तब पश्चिम दिशा में बैठा हुआ पुरुष ...पूर्ववत्...। तब उत्तर दिशा में बैठा हुआ पुरुष...पूर्ववत्...। तब दक्षिण दिशा में बैठा हुआ ...पूर्ववत्... लोक का अन्त न पा कर मध्य मार्ग में ही मर जाय। वह किस कारण? वह इसलिये कि ऐसी दौड़ (सन्धावनिका) से इस लोक का किनारा नहीं पाया जा सकता। ब्राह्मणो! मैं तुमको, इस लोक का अन्त पाये विना ही, दुःखों के अन्त का उपाय बताता हूँ।

५. "ब्राह्मणो! हमारे इस आर्यविनय में ये लौकिक पाँच कामगुण (कामभोग) ही 'लोक' कहलाते हैं। कौन से पाँच? इष्ट, कान्त, मनाप, कामसम्पृक्त, स्पृहणीय चक्षुर्विज्ञेय रूप...श्रोत्रविज्ञेय शब्द...घ्राणविज्ञेय गन्ध...जिह्वाविज्ञेय रस...कायविज्ञेय स्प्रष्टव्य—भिक्षुओ! ये पाँच कामगुण आर्यविनय में 'लोक' कहे जाते हैं।

६. "यहाँ, ब्राह्मणो! कोई साधक भिक्षु कामभोगों तथा अकुशल धर्मों से दूर रह कर वितर्क

सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। अयं वुच्चति, ब्राह्मणा, 'भिक्खु लोकस्स अन्तमागम्म, लोकस्स अन्ते विहरति'। तमञ्ञे एवमाहंसु— 'अयं पि लोकपरियापन्नो, अयं पि अनिस्सटो लोकम्हा' ति। अहं पि हि, ब्राह्मणा, एवं वदामि—'अयं पि लोकपरियापन्नो, अयं पि अनिस्सटो लोकम्हा' ति।

७. ''पुन च परं, ब्राह्मणा, भिक्खु वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... [R.431] दुतियं झानं... ततियं झानं... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। अयं वुच्चति, ब्राह्मणा, 'भिक्खु लोकस्स अन्तमागम्म लोकस्स अन्ते विहरति'। तमञ्ञे एवमाहंसु—'अयं पि लोकपरियापन्नो, अयं पि अनिस्सटो लोकम्हा' ति। अहं पि हि, ब्राह्मणा, एवं वदामि— 'अयं पि लोकपरियापन्नो, अयं पि अनिस्सटो लोकम्हा' ति।

८. ''पुन च परं, ब्राह्मणा, भिक्खु सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा [N.69] पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। अयं वुच्चति, ब्राह्मणा, 'भिक्खु लोकस्स अन्तमागम्म लोकस्स अन्ते विहरति'। तमञ्ञे एवमाहंसु—'अयं पि लोकपरियापन्नो, अयं पि अनिस्सटो लोकम्हा' ति। अहं पि हि, ब्राह्मणा, एवं वदामि—'अयं पि लोकपरियापन्नो, अयं [B.228] पि अनिस्सटो लोकम्हा' ति।

९. ''पुन च परं, ब्राह्मणा, भिक्खु सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म 'अनन्तं

विचार सहित विवेकजन्य प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। ब्राह्मणो! इस के लिये लोग कहने लगते हैं—'यह साधक लोक का अन्त जान कर लोक के अन्त (निर्वाण) के लिये साधना कर रहा है।' उस के लिये दूसरे लोग यह कहते हैं—'अरे! यह भी लोक में सम्मिलित है, लोक से निकला नहीं है'। ब्राह्मण! मैं भी इसके लिये यही कहता हूँ कि यह अभी लोक में सम्मिलित है, लोक से निकला नहीं है। (१)

७. ''पुनः, ब्राह्मणो! वह साधक भिक्षु उन वितर्क-विचारों के उपशमन से ...पूर्ववत्... द्वितीय ध्यान ... तृतीय ध्यान ... चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। ब्राह्मणो! ऐसा साधक लोक का अन्त कर लोक (निर्वाण) में साधना करने वाला कहलाता है। उस के लिये दूसरे लोग कहते हैं—'अरे! यह लोक में ही सम्मिलित है, लोक से निकला नहीं है।' मैं भी इसके लिये यही कहता हूँ, ब्राह्मणो! कि यह अभी लोक में सम्मिलित है, लोक से निकला नहीं है। (२-३-४)

८. ''पुनः, ब्राह्मणो! वह साधक भिक्षु रूपसंज्ञाओं का सर्वथा अतिक्रमण कर, प्रतिघसंज्ञाओं के भी अस्त हो जाने से तथा नानात्व संज्ञाओं को मन में न लाने से 'आकाश अनन्त है'—यह समझता हुआ आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। ब्राह्मणो! यह साधक भिक्षु 'लोक का अन्त जानकर लोक (निर्वाण) में साधना करता है'—ऐसा कहलाता है। दूसरे लोग उसके लिये यह कहते हैं—'अरे! यह अभी लोक में ही सम्मिलित है, लोक से निकला नहीं है।' मैं भी इसके लिये ऐसा ही कहता हूँ। (५)

 ९. ''पुनः ब्राह्मणो! वह साधक भिक्षु आकाशानन्त्यायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर

विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति ...पे०... सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति... पे०... सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। अयं वुच्चति, ब्राह्मणा, 'भिक्खु लोकस्स अन्तमागम्म लोकस्स अन्ते विहरति'। तमञ्ञे एवमाहंसु—'अयं पि लोकपरियापन्नो, अयं पि अनिस्सटो लोकम्हा' ति। अहं पि हि, ब्राह्मणा, एवं वदामि—'अयं पि लोकपरियापन्नो, अयं पि अनिस्सटो लोकम्हा' ति।

१०. "पुन च परं, ब्राह्मणा, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। [R.432] अयं वुच्चति, ब्राह्मणा, 'भिक्खु लोकस्स अन्तमागम्म लोकस्स अन्ते विहरति तिण्णो लोके विसत्तिकं' " ति॥

८. देवासुरसङ्गामसुत्तं : १. "भूतपुब्बं, भिक्खवे, देवासुरसङ्गामो समुपब्यूळ्हो अहोसि। तस्मिं खो पन, भिक्खवे, सङ्गामे असुरा जिनिंसु, देवा पराजयिंसु। पराजिता च, भिक्खवे, देवा अपयिंसुयेव उत्तरेनाभिमुखा, अभियिंसु असुरा। अथ खो, भिक्खवे, देवानं [N.70] एतदहोसि—'अभियन्तेव खो असुरा। यन्नून मयं दुतियं पि असुरेहि सङ्गामेय्यामा' ति। दुतियं पि खो, भिक्खवे, देवा असुरेहि सङ्गामेसुं। दुतियं पि खो, भिक्खवे, असुरा व जिनिंसु, देवा पराजयिंसु। पराजिता च, भिक्खवे, देवा अपयिंसुयेव उत्तरेनाभिमुखा, अभियिंसु असुरा। अथ खो, भिक्खवे, देवानं एतदहोसि—'अभियन्तेव खो असुरा। यन्नून

'विज्ञान अनन्त है'—यह जानता हुआ विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। ...पूर्ववत्..। विज्ञानानन्त्यायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर 'कुछ नहीं है'—ऐसा समझता हुआ आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है...पूर्ववत्...आकिञ्चन्यायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करता है...पूर्ववत्...ऐसा ही कहता हूँ। (६-७-८)

१०. "पुनः, ब्राह्मणो! वह साधक भिक्षु नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का भी अतिक्रमण कर संज्ञावेदयितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है तथा प्रज्ञा द्वारा देख कर यह अपने समस्त आश्रवों को क्षीण कर लेता है। यही ब्राह्मणो! 'साधक भिक्षु लोक का अन्त पा कर निर्वाण हेतु साधना कर रहा है, यह लोक से पार हो चुका है तथा लोक के प्रति तृष्णारहित हो चुका है'—ऐसा कहलाता है"॥ (९)

८. देवासुरसंग्रामसूत्र : : तृष्णारहित ही पारगामी

१. "पहले कभी, भिक्षुओ! देवासुरयुद्ध हुआ। भिक्षुओ! उस युद्ध में देवता हार गये तथा असुरों की विजय हुई। हार कर देवता उत्तर दिशा की ओर भागे, असुरों ने उन का पीछा किया। तब, भिक्षुओ! देवताओं को यह विचार हुआ—'ये असुर हमारा अब भी पीछा कर रहे हैं, क्यों न हम इनसे पुनः युद्ध करें।' अतः दूसरी बार, भिक्षुओ! देवताओं ने युद्ध आरम्भ किया; परन्तु उसमें भी देवताओं की पराजय हुई और असुर जीते। तब देवता पुनः उत्तर दिशा की ओर भागे, असुरों ने उन

मयं ततियं पि असुरेहि सङ्गामेय्यामा' ति। ततियं पि खो, भिक्खवे, देवा असुरेहि [B.229] सङ्गामेसुं। ततियं पि खो, भिक्खवे, असुरा व जिनिंसु, देवा पराजयिंसु। पराजिता च, भिक्खवे, देवा भीता देवपुरंयेव पविसिंसु। देवपुरगतानं च पन, भिक्खवे, देवानं एतदहोसि—'भीरुत्तानगतेन खो दानि मयं एतरहि अत्तना विहराम अकरणीया [R.433] असुरेही' ति। असुरानं पि, भिक्खवे, एतदहोसि—'भीरुत्तानगतेन खो दानि देवा एतरहि अत्तना विहरन्ति अकरणीया अम्हेही' ति।

२. "भूतपुब्बं, भिक्खवे, देवासुरसङ्गामो समुपब्यूळ्हो अहोसि। तस्मिं खो पन, भिक्खवे, सङ्गामे देवा जिनिंसु, असुरा पराजयिंसु। पराजिता च, भिक्खवे, असुरा अपयिंसुयेव दक्खिणेनाभिमुखा, अभियिंसु देवा। अथ खो, भिक्खवे, असुरानं एतदहोसि—'अभियन्तेव खो देवा। यन्नून मयं दुतियं पि देवेहि सङ्गामेय्यामा' ति। दुतियं पि खो, भिक्खवे, असुरा देवेहि सङ्गामेसुं। दुतियं पि खो, भिक्खवे, देवा जिनिंसु, असुरा पराजयिंसु। पराजिता च, भिक्खवे, असुरा अपयिंसुयेव दक्खिणेनाभिमुखा, अभियिंसु देवा। अथ खो, भिक्खवे, असुरानं एतदहोसि—'अभियन्तेव खो देवा। यन्नून मयं ततियं पि देवेहि सङ्गामेय्यामा' ति। ततियं पि खो, भिक्खवे, असुरा देवेहि सङ्गामेसुं। ततियं पि खो, भिक्खवे, देवा जिनिंसु, असुरा पराजयिंसु। पराजिता च, भिक्खवे, असुरा भीता असुरपुरंयेव पविसिंसु। असुरपुरगतानं च पन, भिक्खवे, असुरानं एतदहोसि—'भीरुत्तानगतेन खो दानि मयं एतरहि अत्तना विहराम अकरणीया देवेही' ति। देवानं पि, भिक्खवे, एतदहोसि—'भीरुत्तानगतेन खो दानि असुरा एतरहि अत्तना विहरन्ति अकरणीया अम्हेही' ति।

३. "एवमेव खो, भिक्खवे, यस्मिं समये भिक्खु विविच्चेव कामेहि विविच्च

का पीछा किया। ...तीसरी बार भी...देवताओं की पराजय हुई, असुर जीत गये। पराजित देवता भयभीत होकर सीधे देवपुर चले गये। वहाँ पहुँचने पर देवताओं को यह आश्वासन मिला—'अब हम सुरक्षित स्थान में पहुँच गये हैं। अब वे असुर यहाँ हम को कोई हानि नहीं पहुँचा सकते।' उधर, भिक्षुओ! देवताओं को देवपुर में सुरक्षित जान कर असुरों के मन में भी यह विचार हुआ—'अब ये देवता अपने देवपुर में सुरक्षित हैं, इस स्थिति में हम इनको कोई हानि नहीं पहुँचा सकते।'

२. "पहले कभी, भिक्षुओ! देवासुर संग्राम हुआ। भिक्षुओ! उस युद्ध में देवताओं की विजय हुई, असुरों की पराजय। पराजित असुर दक्षिण दिशा की ओर भागे। भागते हुए असुरों का भी देवताओं ने पीछा किया। तब असुरों ने सोचा—'ये देवता अब भी हमारा पीछा कर रहे हैं, क्यों न हम इन से पुन: युद्ध ही करें।' तब दूसरी बार भी ...पूर्ववत्... तीसरी बार भी...असुर हार ही गये। तब असुर सीधे जाकर असुरपुर में छिप गये। तब उन असुरों को आश्वासन मिला—'अब हम सुरक्षित स्थान में पहुँच गये'। उधर, उन देवताओं को भी विचार हुआ—'अब ये असुर अपने असुरपुर में सुरक्षित हैं, यहाँ इन की हानि किसी भी प्रकार से नहीं की जा सकती।'

३. "इसी प्रकार, भिक्षुओ! जिस समय भिक्षु कामभोगों एवं अकुशल धर्मों से दूर रहकर

[N.71] अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति, तस्मिं, भिक्खवे, समये भिक्खुस्स एवं होति—'भीरुत्तानगतेन खो दानाहं एतरहि अत्तना विहरामि अकरणीयो मारस्सा' ति। मारस्सा पि, भिक्खवे, पापिमतो एवं होति—[B.230,R.434] 'भीरुत्तानगतेन खो दानि भिक्खु एतरहि अत्तना विहरति अकरणीयो मय्हं' ति।

४. "यस्मिं, भिक्खवे, समये भिक्खु वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं... ततियं झानं... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति, तस्मिं, भिक्खवे, समये भिक्खुस्स एवं होति—'भीरुत्तानगतेन खो दानाहं एतरहि अत्तना विहरामि अकरणीयो मारस्सा' ति। मारस्सा पि, भिक्खवे, पापिमतो एवं होति—'भीरुत्तानगतेन खो दानि भिक्खु एतरहि अत्तना विहरति, अकरणीयो मय्हं' ति।

५. "यस्मिं, भिक्खवे, समये भिक्खु सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघ-सञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'भिक्खु अन्तमकासि मारं, अपदं वधित्वा मारचक्खुं अदस्सनं गतो पापिमतो तिण्णो लोके विसत्तिकं' ति।

६. "यस्मिं, भिक्खवे, समये भिक्खु सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति... सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति... सब्बसो

वितर्क विचार सहित, विवेकजन्य, प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है, उस समय उस भिक्षु को यह विचार होता है—'इस समय मैं अपने को सुरक्षित कर साधना में लगा हुआ हूँ, अब मुझे मार कोई हानि नहीं पहुँचा सकता'। उसी प्रकार उस भिक्षु को देख कर मार भी यह सोचता है—'इस समय यह भिक्षु सुरक्षित स्थान में जा पहुँचा है, अब मैं इसको कोई हानि नहीं पहुँचा सकता।' (१)

४. "जिस समय, भिक्षुओ! भिक्षु वितर्क विचारों के उपशम से ...पूर्ववत्... द्वितीय ध्यान ... तृतीय ध्यान ... चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है, उस समय उस भिक्षु को यह होता है—'अब मैं सुरक्षित स्थान मैं बैठ कर साधना कर रहा हूँ'...'यह भिक्षु अब सुरक्षित स्थान में बैठकर साधना कर रहा है, अत: अब मैं इस की कोई हानि नहीं कर सकता।' (२-३-४)

५. जिस समय भिक्षु रूपसंज्ञाओं का सर्वथा अतिक्रमण कर, प्रतिघसंज्ञाओं के अस्त हो जाने से, नानात्वसंज्ञाओं के मन में न करने के कारण 'आकाश अनन्त है'—ऐसा मानता हुआ आकाशनन्त्यायतन की साधना करता है तब भिक्षुओ! वह भिक्षु 'इसने अकेले ही विना किसी का सहयोग लिये मार का अन्त कर दिया, अब यह पापी मार की दृष्टि से अदृश्य हो गया, यह संसार को पार कर चुका है; क्यों कि यह वासनारहित हो चुका है'—ऐसा कहलाता है। (५)

६. जिस समय, भिक्षुओ! भिक्षु आकाशानन्त्यायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर 'विज्ञान अनन्त है'—ऐसा मान कर विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है...विज्ञानानन्त्यायतन का

आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति... सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'भिक्खु अन्तमकासि मारं, अपदं वधित्वा मारचक्खुं अदस्सनं गतो पापिमतो तिण्णो लोके विसत्तिकं''' ति॥●

९. नागसुत्तं : १. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये आरञ्ञकस्स नागस्स [N.72,R.435] गोचरपसुतस्स हत्थी पि हत्थिनियो पि हत्थिकलभा पि हत्थिच्छापा पि पुरतो पुरतो गन्त्वा तिणग्गानि छिन्दन्ति, तेन, भिक्खवे, आरञ्ञको नागो अट्टीयति हरायति जिगुच्छति। यस्मिं, भिक्खवे, समये आरञ्ञकस्स नागस्स गोचरपसुतस्स हत्थी पि हत्थिनियो पि हत्थिकलभा पि हत्थिच्छापा पि ओभग्गोभग्गं साखाभङ्गं खादन्ति, तेन, भिक्खवे, आरञ्ञको नागो अट्टीयति हरायति जिगुच्छति। यस्मिं, भिक्खवे, समये आरञ्ञकस्स नागस्स [B.231] ओगाहं ओतिण्णस्स हत्थी पि हत्थिनियो पि हत्थिकलभा पि हत्थिच्छापा पि पुरतो पुरतो गन्त्वा सोण्डाय उदकं आलोळेन्ति, तेन, भिक्खवे, आरञ्ञको नागो अट्टीयति हरायति जिगुच्छति। यस्मिं, भिक्खवे, समये आरञ्ञकस्स नागस्स ओगाहा उत्तिण्णस्स हत्थिनियो कायं उपनिघंसन्तियो गच्छन्ति, तेन, भिक्खवे, आरञ्ञको नागो अट्टीयति हरायति जिगुच्छति।

भी अतिक्रमण कर 'कुछ भी नहीं है'—ऐसा जान कर आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है...सर्वथा आकिञ्चन्यायतन को भी अतिक्रान्त कर नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करता है...सब तरह से नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को भी अतिक्रान्त कर संज्ञावेदितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है। ऐसी स्थिति में आ कर उसके सभी आश्रव क्षीण हो जाते हैं। भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु—'इसने अकेले ही अन्य किसी के सहयोग के विना मार का अन्त कर दिया, अब यह पापी मार की दृष्टि से अदृश्य हो चुका है। इसने भवसागर पार कर लिया; क्यों कि यह तृष्णारहित हो चुका है'—ऐसा कहलाता है''॥ (६-७-८-९) ●

९. नागसूत्र : : साधना में एकान्तवास का महत्त्व

१. ''भिक्षुओ! जिस समय कोई हस्तिराज वन में कुछ खाने के लिये निकलता था तब उस के आगे पीछे चलने वाले दूसरे छोटे हाथी, हथिनियाँ और उन के बच्चे भी उससे आगे बढ कर उस के खाने से पहले ही घास के मृदु अग्रभाग को खा जाते थे, उनके इस कर्म से वह हस्तिराज बहुत दुःखी हैरान एवं अन्यमनस्क हो जाता था। जिस समय वह हस्तिराज ...पूर्ववत्... उससे आगे बढ़ कर उसके खाने से पहले ही वृक्षों की हरी शाखाओं को तोड़ कर उस के कोमल पत्ते खा जाते थे, इससे वह हस्तिराज ... अन्यमनस्क हो जाता था। जिस समय वह अरण्यवासी हस्तिराज जल पीने के लिये गहरे पानी में उतरता था तो दूसरे हाथी, हथिनियाँ, हाथियों के बच्चे पहले ही उस से आगे आकर अपनी सूँड से वहाँ का जल मैला कर देते थे, इस से भी वह ...पूर्ववत्...। तथा वह आरण्यक हाथी जलक्रीड़ा के लिये गहरे जल में उतरता था उस समय हस्तिनियाँ उसके शरीर को घर्षण करती हुई आगे बढ जाती थीं, इस से भी वह हस्तिराज ...पूर्ववत्...।

२. ''तस्मिं, भिक्खवे, समये आरञ्ञकस्स नागस्स एवं होति—'अहं खो एतरहि आकिण्णो विहरामि हत्थीहि हत्थिनीहि हत्थिकलभेहि हत्थिच्छापेहि। छिन्नग्गानि चेव तिणानि खादामि, आविलानि च पानीयानि पिवामि, ओगाहा च मे उत्तिण्णस्स हत्थिनियो कायं उपनिघंसन्तियो गच्छन्ति। यन्नूनाहं एको गणस्मा वूपकट्ठो विहरेय्यं' ति। सो अपरेन समयेन एको गणस्मा वूपकट्ठो विहरति, अच्छिन्नग्गानि चेव तिणानि खादति, ओभग्गोभग्गं [R.436] चस्स साखाभङ्गं न खादन्ति, अनाविलानि च पानीयानि पिवति, ओगाहा चस्स उत्तिण्णस्स न हत्थिनियो कायं उपनिघंसन्तियो गच्छन्ति। तस्मिं, भिक्खवे, समये आरञ्ञकस्स नागस्स एवं होति—'अहं खो पुब्बे आकिण्णो विहासिं हत्थीहि हत्थिनीहि हत्थिकलभेहि हत्थिच्छापेहि, छिन्नग्गानि चेव तिणानि खादिं, ओभग्गोभग्गं च मे साखाभङ्गं [N.73] खादिंसु, आविलानि च पानीयानि अपायिं, ओगाहा च मे उत्तिण्णस्स हत्थिनियो कायं उपनिघंसन्तियो अगमंसु। सोहं एतरहि एको गणस्मा वूपकट्ठो विहरामि, अच्छिन्नग्गानि चेव तिणानि खादामि, ओभग्गोभग्गं च मे साखाभङ्गं न खादन्ति, अनाविलानि च पानीयानि पिवामि, ओगाहा च मे उत्तिण्णस्स न हत्थिनियो कायं उपनिघंसन्तियो गच्छन्ती' ति। सो सोण्डाय साखाभङ्गं भञ्जित्वा साखाभङ्गेन कायं परिमज्जित्वा अत्तमनो सोण्डं संहरति।

३. ''एवमेव खो, भिक्खवे, यस्मिं समये भिक्खु आकिण्णो विहरति भिक्खूहि भिक्खुनीहि उपासकेहि उपासिकाहि रञ्ञा राजमहामत्तेहि तित्थियेहि तित्थियसावकेहि,

---

२. ''उस समय भिक्षुओ! उस आरण्यक हस्तिराज को यह विचार हुआ—''अभी मैं इन हाथी हथिनियों के समूहों से घिरा हुआ यहाँ विचरण करता हूँ, इसी लिये अग्रभाग टूटा हुआ घास खाना पड़ता है, हरे पत्तों से रहित शाखाएँ चबानी पड़ती हैं, इन के द्वारा मैला किया हुआ जल पीना पड़ता है, जल में उतरे हुए मुझको रगड़ मारती हुई ये हथिनियाँ आगे बढ जाती हैं; तो क्यों न मैं इस समूह से पृथक् हो कर एकाकी विचरण करूँ।' तब वह हस्तिराज कुछ समय बाद उस गण से पृथक् हो कर एकाकी वन में विचरण करने लगा। अब उसे कोमल अग्रभाग सहित तृणराशि तथा विना टूटी शाखाओं के हरे पत्ते खाने को मिलने लगे, अन्य हाथियों द्वारा मलिन न किया हुआ स्वच्छ जल पीने को मिलने लगा, तथा गहरे जल में एकाकी लेटने लगा जहाँ दूसरी हथिनियों के शरीर से टकराने की कोई आशङ्का नहीं थी। तब उस हाथी के मन में विचार हुआ—'पहले जब मैं हाथियों के समूह में विचरण करता था, तब अग्रभागरहित तृण तथा पत्ररहित शाखाएँ चबानी पडती थीं, हाथियों द्वारा मलिन किया जल पीना पड़ता था, जलक्रीड़ा के समय दूसरी हथिनियाँ मेरे शरीर से टकरा कर आगे बढती थीं। अब एकाकी रहने पर ...पूर्ववत्... शरीर से टकराने की कोई आशङ्का नहीं है'। यह सोचते हुए उसने किसी वृक्ष से हरे पत्तों वाली शाखा अपनी सूँड से तोड कर उस के कुछ पत्ते खा कर, शेष शाखा को वह सूँड से अपने शरीर पर लहराता हुआ अपनी हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त करने लगा।

३. ''इसी प्रकार, भिक्षुओ! जब कोई भिक्षु भिक्षु-भिक्षुणियों से, उपासक-उपासिकाओं से,

तस्मिं, भिक्खवे, समये भिक्खुस्स एवं होति—'अहं खो एतरहिं आकिण्णो [B.232] विहरामि भिक्खूहि भिक्खुनीहि उपासकेहि उपासिकाहि रञ्ञा राजमहामत्तेहि तित्थियेहि तित्थियसावकेहि। यन्नूनाहं एको गणस्मा वूपकट्ठो विहरेय्यं' ति। सो विवित्तं सेनासनं भजति अरञ्ञं रुक्खमूलं पब्बतं कन्दरं गिरिगुहं सुसानं वनपत्थं अब्भोकासं पलालपुञ्जं। [R.437] सो अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो अभिज्झं लोके पहाय विगताभिज्झेन चेतसा विहरति, अभिज्झाय चित्तं परिसोधेति; ब्यापादपदोसं पहाय अब्यापन्नचित्तो विहरति सब्बपाणभूतहितानुकम्पी, ब्यापादपदोसा चित्तं परिसोधेति; थीनमिद्धं पहाय विगतथीन-मिद्धो विहरति, आलोकसञ्ञी सतो सम्पजानो, थीनमिद्धा चित्तं परिसोधेति; उद्धच्च-कुक्कुच्चं पहाय अनुद्धतो विहरति अज्झत्तं वूपसन्तचित्तो, उद्धच्चकुक्कुच्चा चित्तं परिसोधेति; विचिकिच्छं पहाय तिण्णविचिकिच्छो विहरति अकथङ्कथी कुसलेसु धम्मेसु, विचिकिच्छाय चित्तं परिसोधेति। सो इमे पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो अत्तमनो सोण्डं संहरति। वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं... ततियं झानं... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो

राजा और उसके मन्त्रियों से, अन्य धर्मावलम्बियों तथा उन के शिष्यों से घिरा हुआ रहता है; तब उसको विचार होता है—'क्यों न मैं इस गण से पृथक् हो कर एकाकी विचरण करूँ'। और वह अपना शयनासन किसी एकान्त स्थान में लगा लेता है; जैसे—कोई वनप्रदेश, किसी वृक्ष के नीचे, पर्वत, गिरिकन्दरा, गिरिगुफा, श्मशान, जंगल या फिर आकाश (खुला स्थान) या तृणराशि। इस प्रकार वह अरण्य में या किसी वृक्ष के नीचे जा कर, या किसी शून्य (एकान्त) स्थान में आसन लगा कर, शरीर को सहज स्थिति में ला कर, स्मृति को सुव्यवस्थित कर बैठ जाता है।

''वह **लोभ** का परित्याग कर, लोभरहित चित्त से साधना में लग जाता है, और चित्त को लोभ से सर्वथा मुक्त कर लेता है। **द्वेष** का त्याग कर, द्वेष रहित हो कर, सभी प्राणियों का हितचिन्तन एवं उन पर अनुकम्पा करता हुआ चित्त को द्वेष से सर्वथा मुक्त कर लेता है। **आलस्य** (स्त्यान मृद्ध) का त्याग कर आलस्यरहित हो कर, स्मृतिमान् एवं प्रकाशमय स्थिति प्राप्त कर स्वचित्त को आलस्य से मुक्त कर लेता है। **औद्धत्य कौकृत्य** (अशिष्टता एवं प्रमाद) का त्याग कर शिष्ट एवं नम्र रहता हुआ अपने अध्यात्म में शान्तचित्त हो कर स्वचित्त को इस औद्धत्य कौकृत्य से दूर कर लेता है। **विचिकित्सा** (सन्देह) का त्याग कर विचिकित्सा से ऊपर उठकर कुशल धर्मों के प्रति कोई शङ्का-सन्देह नहीं करता और विचिकित्सा से स्वचित्त को सर्वथा हटा लेता है।

''वह इन पाँच नीवरणों (बाधाओं) का त्याग कर चित्त के सभी उपक्लेशों (विकारों) को प्रज्ञा के माध्यम से दुर्बल कर, कामभोगों एवं अकुशल धर्मों को दूर कर वितर्क विचार सहित विवेकजन्य प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना में लग जाता है। वह अपनी इस साधना से सन्तुष्ट हो कर उस आरण्य हाथी के समान सूँड सिकोड़ने लगता है। इन वितर्क विचारों के

अत्तमनो सोण्डं संहरति। सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्त-[N.74] सञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। सो अत्तमनो सोण्डं संहरति। सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति... सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति... सब्बसो [B.233,R.438] आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति... सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। सो अत्तमनो सोण्डं संहरती'' ति॥ ●

१०. तपुस्ससुत्तं : १. एकं समयं भगवा मल्लेसु विहरति उरुवेलकप्पं नाम मल्लानं निगमो। अथ खो भगवा पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय उरुवेलकप्पं पिण्डाय पाविसि। उरुवेलकप्पे पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—''इधेव ताव त्वं, आनन्द, होहि, यावाहं महावनं अज्झोगाहामि दिवाविहाराया'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि। अथ खो भगवा महावनं अज्झोगाहेत्वा अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले दिवाविहारं निसीदि।

उपशमन से ...पूर्ववत्...द्वितीय ध्यान...तृतीय ध्यान...चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करने लगता है। इस स्थिति से भी सन्तुष्ट होता हुआ वह पुनः उस आरण्यक हाथी की तरह प्रसन्नता से सूँड सिकोड़ने लगता है।

(कुछ समय बाद) रूपसंज्ञाओं के सर्वथा अतिक्रमण होने से एवं प्रतिघसंज्ञाओं के लुप्त हो जाने से, और नानात्व संज्ञाओं को मन में न करने से, 'आकाश अनन्त है'—यह मानता हुआ आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। इस साधना से भी वह सन्तुष्ट ...पूर्ववत्...। आकाशानन्त्यायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर, 'विज्ञान अनन्त हैं'—ऐसा मानता हुआ विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है।...विज्ञानानन्त्यायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर, 'कुछ भी नहीं है'—ऐसा मानता हुआ वह आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। ...पुनः आकिञ्चन्यायतन को भी सर्वथा अतिक्रान्त कर नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करता है।...पुनः नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को भी अतिक्रान्त कर वह संज्ञावेदितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है। प्रज्ञा के आश्रय से इस के सभी आश्रव क्षीण हो जाते हैं। और वह साधक उस आरण्यक हाथी की तरह सूँड को प्रसन्नता के कारण सिकोड़ने लगता है''॥ ●

१०. तपुस्ससूत्र : : भगवान् का तपुस्सगृहपति को उपदेश

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) मल्ल प्रदेश के मल्लवासियों के उरुवेलकल्प नामक किसी निगम में साधनाहेतु विराजमान थे। तब कभी भगवान् ने प्रातः काल...भोजनकर्म के अनन्तर आयुष्मान् आनन्द से कहा—''आनन्द! कुछ समय तक तुम यहीं प्रतीक्षा करो। मैं कुछ काल के लिये दैवसिक साधनाहेतु इस महावन के एकान्त प्रदेश में जा रहा हूँ।'' 'अच्छा, भन्ते!'' कहकर

२. अथ खो तपुस्सो गहपति येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो तपुस्सो गहपति आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—

"मयं, भन्ते आनन्द, गिही कामभोगिनो कामारामा कामरता कामसम्मुदिता। तेसं नो, भन्ते, अम्हाकं गिहीनं कामभोगीनं कामारामानं कामरतानं कामसम्मुदितानं पपातो विय खायति, यदिदं नेक्खम्मं। सुतं मेतं, भन्ते, 'इमस्मिं धम्मविनये दहरानं दहरानं भिक्खूनं नेक्खम्मे चित्तं पक्खन्दति पसीदति सन्तिट्ठति विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'। तयिदं, भन्ते, इमस्मिं धम्मविनये भिक्खूनं बहुना जनेन विसभागो, यदिदं नेक्खम्मं" ति ?

३. "अत्थि खो एतं, गहपति, कथापाभतं भगवन्तं दस्सनाय। [N.75,R.439] आयाम, गहपति, येन भगवा तेनुपसङ्कमिस्साम; उपसङ्कमित्वा भगवतो एतमत्थं आरोचेस्साम। यथा नो भगवा ब्याकरिस्सति तथा नं धारेस्सामा" ति।

"एवं, भन्ते" ति खो तपुस्सो गहपति आयस्मतो आनन्दस्स पच्चस्सोसि।

४. अथ खो आयस्मा आनन्दो तपुस्सेन गहपतिना सद्धिं येन भगवा [B.234] तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। तब भगवान् महावन में प्रविष्ट हो कर किसी वृक्ष के नीचे साधनाहेतु विराजे।

२. उसी समय कोई तपुस्स नामक गृहपति आयुष्मान् आनन्द के पास आया। ...पूर्ववत्...। एक ओर बैठे तपुस्स गृहपति ने आयुष्मान् आनन्द से यह निवेदन किया—

"भन्ते आनन्द! हम गृहस्थजन निरन्तर कामों का भोग करते हुए उन में सुख मानते हुए, उन में ही आसक्त रहते हुए, उन में ही रमण करते हुए तथा उन में ही प्रमुदित रहते हुए अपना जीवन बिता देते हैं। ऐसा जीवन बिताने वाले हम लोगों को निष्काम भावना पर विचार करना तो ऐसा लगता है मानों किसी प्रपात के मुख पर जा खड़े हुए हों। सुना है, भन्ते! आप के इस आर्यविनय (धर्मसाधनापद्धति) में अल्प आयु के (युवक) भिक्षुओं का भी मन निष्काम भावना में ऐसा द्रवित होता है, झुकता है, लगता है, रुकता है, प्रसन्न होता है कि वे इस साधना को ही शान्त एवं उत्तम समझते हैं। भन्ते! यह निष्काम भावना ही आप के धर्मविनय में भिक्षुओं को अन्य साधारण जनों से असाधारण (विशेष) बना देती है ?"

३. "अहो गृहपति! तुम्हारा यह संवाद भगवान् के दर्शन में उपहारस्वरूप होगा। आओ! भगवान् के दर्शनहेतु चलें। वहीं तुम्हारी इस समस्या को रखा जायगा। वे जैसा उपदेश करेंगे वैसा ही हम लोग स्वीकार कर लेंगे।"

"अच्छा, भन्ते!" कह कर तपुस्सगृहपति ने आयुष्मान् आनन्द की बात मान ली।

४. तब आयुष्मान् आनन्द तपुस्स गृहपति के साथ भगवान् के सम्मुख पहुँचे। ...पूर्ववत्...। आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यह निवेदन किया—

"अयं, भन्ते, तपुस्सो गहपति एवमाह—'मयं, भन्ते आनन्द, गिही कामभोगिनो... तयिदं, भन्ते, इमस्मिं धम्मविनये भिक्खूनं बहुना जनेन विसभागो यदिदं नेक्खम्मं''' ति।

५. "एवमेतं, आनन्द, एवमेतं, आनन्द! मय्हं पि खो, आनन्द, पुब्बेव सम्बोधा अनभिसम्बुद्धस्स बोधिसत्तस्सेव सतो एतदहोसि—'साधु नेक्खम्मं, साधु पविवेको' ति। तस्स मय्हं, आनन्द, नेक्खम्मे चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'को नु खो हेतु को पच्चयो येन मे नेक्खम्मे चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'? तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'कामेसु खो मे आदीनवो अदिट्ठो, सो च मे अबहुलीकतो, नेक्खम्मे च आनिसंसो अनधिगतो, सो च मे अनासेवितो। तस्मा मे नेक्खम्मे [R.440] चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'सचे खो अहं कामेसु आदीनवं दिस्वा तं बहुलं करेय्यं, नेक्खम्मे आनिसंसं अधिगम्म तमासेवेय्यं, ठानं खो पनेतं विज्जति यं मे नेक्खम्मे आनिसंसं अधिगम्म तमासेवेय्यं, ठानं खो पनेतं विज्जति यं मे नेक्खम्मे चित्तं पक्खन्देय्य पसीदेय्य सन्तिट्ठेय्य विमुच्चेय्य एतं सन्तं पि पस्सतो'। सो खो अहं, आनन्द, अपरेन समयेन कामेसु आदीनवं दिस्वा तं बहुलमकासिं, नेक्खम्मे आनिसंसं अधिगम्म तमासेविं। तस्स मय्हं, आनन्द, नेक्खम्मे चित्तं पक्खन्दति पसीदति सन्तिट्ठति विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। सो [N.76] खो अहं, आनन्द, विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरामि। तस्स मय्हं, आनन्द, इमिना

"भन्ते! यह तपुस्स गृहपति कहता है—'भन्ते आनन्द! हम गृहस्थजन निरन्तर ...पूर्ववत्...भिक्षुओं को अन्य साधारण जनों से असाधारण बना देती है।'''

५. "ऐसी ही बात है, आनन्द! ऐसी ही बात है। मुझे भी, आनन्द! सम्बोधिप्राप्ति से पूर्व बोधिसत्त्वावस्था में यह विचार हुआ था—'निष्कामभावना ही अच्छी है, एकान्तसाधना ही शुभ है'। परन्तु आरम्भ में मेरा चित्त उस निष्कामभावना में नहीं लगा...। तब मैंने सोचा कि क्या कारण है कि मेरा चित्त इस भावना में नहीं लग रहा है?' तब मुझ को यह बात ध्यान में आयी—'कामभोगों के दोष अभी मुझ को ज्ञात नहीं हैं, न मैने इस भावना का अभ्यास ही किया है, निष्कामभावना का महत्त्व भी मुझे ज्ञात नहीं, न मैने उसका अभ्यास ही किया है। अत मेरा चित्त निष्कामभावना की ओर नहीं झुकता...।' तब, आनन्द! मुझको यह विचार हुआ—'यदि मैं कामभोगों में दोष देख कर उस का अभ्यास करूँ, तथा निष्कामभावना का भी महत्त्व समझता हुआ उसकी भावना करूँ, तभी सम्भव है कि मेरा चित्त निष्कामभावना की ओर झुके तथा उसके प्रति द्रवित हो'...। तब, आनन्द! मैंने, दूसरे समय, कामों में दोष देख कर उस का अभ्यास बढाया, निष्कामभावना का माहात्म्य समझते हुए उसकी प्राप्ति के लिये भी साधना में वृद्धि की...। तब, आनन्द! मेरा चित्त निष्कामभावना की ओर झुका, द्रवित हुआ...। आनन्द! वह मैं तब कामभोगों से तथा अकुशल धर्मों दूर रह कर वितर्क विचार सहित प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान की साधना करने

विहारेन विहरतो कामसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो। सेय्यथापि, आनन्द, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स मे [B.235] कामसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो।

६. ''तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'यन्नूनाहं वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। तस्स मय्हं, आनन्द, अवितक्के चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'को नु खो हेतु को पच्चयो, येन मे अवितक्के चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'? तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'वितक्केसु खो मे आदीनवो अदिट्ठो, सो च मे अबहुलीकतो, अवितक्के च [R.441] आनिसंसो अनधिगतो, सो च मे अनासेवितो। तस्मा मे अवितक्के चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्दिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'सचे खो अहं वितक्केसु आदीनवं दिस्वा तं बहुलं करेय्यं, अवितक्के आनिसंसं अधिगम्म तमासेवेय्यं, ठानं खो पनेतं विज्जति यं मे अवितक्के चित्तं पक्खन्देय्य पसीदेय्य सन्तिट्ठेय्य विमुच्चेय्य एतं सन्तं नि पस्सतो'। सो खो अहं, आनन्द, अपरेन समयेन वितक्केसु आदीनवं दिस्वा तं बहुलमकासिं, अवितक्के आनिसंसं अधिगम्म तमासेविं। तस्स मय्हं, आनन्द, अवितक्के चित्तं पक्खन्दति पसीदति सन्तिट्ठति विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। सो खो अहं, आनन्द, वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरामि। तस्स मय्हं, आनन्द, इमिना विहारेन विहरतो वितक्कसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो। सेय्यथापि, आनन्द, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स मे वितक्कसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो।

लगा। उस साधनावस्था में, आनन्द! मुझको कामसहगत संज्ञामनस्कार उद्भूत होने लगे। यही मेरी इस साधना में बाधा थी। जैसे, आनन्द! किसी सुखी को दुःख उत्पन्न हो जाय, भले ही वह छोटा सा दुःख ही क्यों न हो, वैसे ही मुझ को वे कामसहगत संज्ञामनस्कार होने लगे। वही मेरा दुःख था। (१)

६. ''तब, आनन्द! मुझको यह हुआ—'क्यों न मैं वितर्क विचारों का ही उपशमन कर ...पूर्ववत्...द्वितीय ध्यान को प्राप्तकर साधना करने लगूँ'। तब आनन्द! उस अवितर्कावस्था में मेरा चित्त नहीं ठहरता था...। उस समय मैने सोचा—'मेरा चित्त अवितर्कावस्था में क्यों नहीं ठहर रहा है... ?' तब मुझ को ध्यान आया—'वितर्कों के दोष मैंने अभी तक देखे नहीं, तथा मुझ को अवितर्क का माहात्म्य भी ज्ञात नहीं।'...तो, आनन्द! मैने यही निश्चय किया कि क्यों न मैं वितर्क में दोषदर्शन का अभ्यास करूँ तथा अवितर्क के माहात्म्य की भावना करूँ तो सम्भव है मेरा अवितर्क में चित्त झुके...। तब मैने उक्त अभ्यास तथा भावना की तो मेरा चित्त अवितर्क में प्रतिष्ठित हुआ। इस अवस्था में वितर्क विचारों के व्युपशम से...पूर्ववत्...द्वितीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करने लगा। उस साधनावस्था में ...पूर्ववत्...वही मेरा दुःख था। (२)

७. "तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'यन्नूनाहं पीतिया च विरागा [N.77] उपेक्खको च विहरेय्यं सतो च सम्पजानो सुखं च कायेन पटिसंवेदेय्यं यं तं अरिया आचिक्खन्ति—उपेक्खको सतिमा सुखविहारी ति ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। तस्स मय्हं, आनन्द, निप्पीतिके चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'को नु खो हेतु को पच्चयो, [B.236] येन मे निप्पीतिके चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'? तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'पीतिया खो मे आदीनवो अदिट्ठो, सो च मे अबहुलीकतो, निप्पीतिके च आनिसंसो अनधिगतो, सो च मे अनासेवितो। तस्मा मे निप्पीतिके चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्दिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति [R.442] पस्सतो'। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'सचे खो अहं पीतिया आदीनवं दिस्वा तं बहुलं करेय्यं, निप्पीतिके आनिसंसं अधिगम्म तमासेवेय्यं, ठानं खो पनेतं विज्जति यं मे निप्पीतिके चित्तं पक्खन्देय्य पसीदेय्य सन्तिट्ठेय्य विमुच्चेय्य एतं सन्तं ति पस्सतो'। सो खो अहं, आनन्द, अपरेन समयेन पीतिया आदीनवं दिस्वा तं बहुलमकासिं, निप्पीतिके आनिसंसं अधिगम्म तमासेविं। तस्स मय्हं, आनन्द, निप्पीतिके चित्तं पक्खन्दति पसीदति सन्तिट्ठति विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। सो खो अहं, आनन्द, पीतिया च विरागा ...पे०... ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरामि। तस्स मय्हं, आनन्द, इमिना विहारेन विहरतो पीतिसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो। सेय्यथापि, आनन्द, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स मे पीतिसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो।

८. "तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'यन्नूनाहं सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। तस्स मय्हं, आनन्द, अदुक्खमसुखे चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'को नु खो हेतु को पच्चयो, येन मे अदुक्खमसुखे चित्तं न पक्खन्दति [N.78] नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'? तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'उपेक्खासुखे खो मे आदीनवो अदिट्ठो, सो च मे अबहुलीकतो, अदुक्खमसुखे च आनिसंसो अनधिगतो, सो च मे अनासेवितो। तस्मा मे अदुक्खमसुखे चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्दिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'। तस्स मय्हं,

---

७. "तब, आनन्द! मुझ को यह हुआ—'क्यों न मैं प्रीति से विरक्त एवं उपेक्षक हो कर स्मृतिसम्प्रजन्यपूर्वक काया से सुख का अनुभव करूँ ...पूर्ववत्...साधना करूँ...पूर्ववत्...तृतीय ध्यान... *(यथाप्रसङ्ग परिवर्तन कर विस्तार कर ले।)* वही मेरा दुःख था। (३)

८. "आनन्द! तब मुझको यह हुआ—'क्यों न मैं सुख दुःख का प्रहाण कर, सौमनस्य

आनन्द, एतदहोसि—'सचे खो अहं उपेक्खासुखे आदीनवं दिस्वा तं बहुलं [R.443] करेय्यं, अदुक्खमसुखे आनिसंसं अधिगम्म तमासेवेय्यं, ठानं खो पनेतं विज्जति यं [B.237] मे अदुक्खमसुखे चित्तं पक्खन्देय्य पसीदेय्य सन्तिट्ठेय्य विमुच्चेय्य एतं सन्तं ति पस्सतो'। सो खो अहं, आनन्द, अपरेन समयेन उपेक्खासुखे आदीनवं दिस्वा तं बहुलमकासिं, अदुक्खमसुखे आनिसंसं अधिगम्म तमासेविं। तस्स मय्हं, आनन्द, अदुक्खमसुखे चित्तं पक्खन्दति पसीदति सन्तिट्ठति विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। सो खो अहं, आनन्द, सुखस्स च पहाना ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरामि। तस्स मय्हं, आनन्द, इमिना विहारेन विहरतो उपेक्खासहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो। सेय्यथापि, आनन्द, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स मे उपेक्खासहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो।

९. ''तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'यन्नूनाहं सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकास-नञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। तस्स मय्हं, आनन्द, आकासनञ्चायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'को नु खो हेतु को पच्चयो, येन मे आकासनञ्चायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'? तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'रूपेसु खो मे आदीनवो अदिट्ठो, सो च मे अबहुलीकतो, आकासनञ्चायतने च आनिसंसो अनधिगतो, सो च मे अनासेवितो। तस्मा मे आकासनञ्चायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्दिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'। तस्स [N.79,R.444] मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'सचे खो अहं रूपेसु आदीनवं दिस्वा तं बहुलं करेय्यं, आकासनञ्चायतने आनिसंसं अधिगम्म तमासेवेय्यं, ठानं खो पनेतं विज्जति यं मे आकासनञ्चायतने चित्तं पक्खन्देय्य पसीदेय्य सन्तिट्ठेय्य विमुच्चेय्य एतं सन्तं ति पस्सतो'। सो खो अहं, आनन्द, अपरेन समयेन रूपेसु आदीनवं दिस्वा तं बहुलमकासिं, आकासनञ्चायतने आनिसंसं अधिगम्म तमासेविं। तस्स मय्हं, आनन्द, आकासनञ्चायतने चित्तं पक्खन्दति पसीदति सन्तिट्ठति विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। सो खो अहं, [B.238] आनन्द, सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं

दौर्मनस्य का लोप हो जाने से अदुःख-असुखमय उपेक्षा एवं स्मृति से परिशुद्ध चतुर्थ ध्यान की साधना करूँ।' ...पूर्ववत्... *(यथाप्रसङ्ग परिवर्तन कर विस्तार कर लें।)* वही मेरा दुःख था। (४)

९. ''आनन्द! तब मुझ को यह हुआ—'क्यों न मैं रूपसंज्ञाओं का अतिक्रमण कर, प्रतिघसंज्ञाओं का लोप हो जाने से 'आकाश अनन्त है'—यह समझता हुआ आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करूँ।' ...पूर्ववत्... *(यथाप्रसङ्ग परिवर्तन कर विस्तार कर लें।)* यही मेरा दुःख था। (५)

अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरामि। तस्स मय्हं, आनन्द, इमिना विहारेन विहरतो रूपसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो। सेय्यथापि, आनन्द, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स मे रूपसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो।

१०. ''तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'यन्नूनाहं सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। तस्स मय्हं, आनन्द, विञ्ञाणञ्चायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'को नु खो हेतु को पच्चयो, येन मे विञ्ञाणञ्चायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'? तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'आकासानञ्चायतने खो मे आदीनवो अदिट्ठो, सो च अबहुलीकतो, विञ्ञाणञ्चायतने च आनिसंसो अनधिगतो, सो च मे अनासेवितो। तस्मा मे विञ्ञाणञ्चायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्दिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'सचे खो अहं आकासानञ्चायतने आदीनवं [R.445] दिस्वा तं बहुलं करेय्यं, विञ्ञाणञ्चायतने आनिसंसं अधिगम्म तमासेवेय्यं, ठानं खो पनेतं विज्जति यं मे विञ्ञाणञ्चायतने चित्तं पक्खन्देय्य पसीदेय्य सन्तिट्ठेय्य विमुच्चेय्य एतं सन्तं ति पस्सतो'। सो खो अहं, आनन्द, अपरेन समयेन आकासानञ्चायतने आदीनवं दिस्वा [N.80] तं बहुलमकासिं, विञ्ञाणञ्चायतने आनिसंसं अधिगम्म तमासेविं। तस्स मय्हं, आनन्द, विञ्ञाणञ्चायतने चित्तं पक्खन्दति पसीदति सन्तिट्ठति विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। सो खो अहं, आनन्द, सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरामि। तस्स मय्हं, आनन्द, इमिना विहारेन विहरतो आकासानञ्चायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो। [B.239] सेय्यथापि, आनन्द, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स मे आकासानञ्चायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो।

११. ''तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'यन्नूनाहं सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम नत्थि किञ्चि ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। तस्स मय्हं, आनन्द, आकिञ्चञ्ञायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'को नु खो हेतु को पच्चयो, येन मे आकिञ्चञ्ञायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति

---

१०. ''आनन्द! तब मुझ को यह हुआ—'क्यों न मैं आकाशानन्त्यायतन का अतिक्रमण कर 'विज्ञान अनन्त है'—ऐसा मानता हुआ विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करूँ'। ...पूर्ववत्...। *(यथाप्रसङ्ग परिवर्तन कर विस्तार कर लें।)* वही मेरा दु:ख था। (६)

११. ''आनन्द! तब मुझको यह हुआ—'क्यों न मैं विज्ञानानन्त्यायतन का सर्वथा अतिक्रमण

पस्सतो'? तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'विञ्ञाणञ्चायतने खो मे आदीनवो अदिट्ठो, सो च मे अबहुलीकतो, आकिञ्चञ्ञायतने च आनिसंसो अनधिगतो, सो च मे अनासेवितो। तस्मा मे आकिञ्चञ्ञायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्दिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'सचे खो अहं विञ्ञाणञ्चायतने आदीनवं दिस्वा तं बहुलं करेय्यं, आकिञ्चञ्ञायतने आनिसंसं अधिगम्म तमासेवेय्यं, ठानं [R.446] खो पनेतं विज्जति यं मे आकिञ्चञ्ञायतने चित्तं पक्खन्देय्य पसीदेय्य सन्तिट्ठेय्य विमुच्चेय्य एतं सन्तं ति पस्सतो'। सो खो अहं, आनन्द, अपरेन समयेन विञ्ञाणञ्चायतने आदीनवं दिस्वा तं बहुलमकासिं, आकिञ्चञ्ञायतने आनिसंसं अधिगम्म तमासेविं। तस्स मय्हं, आनन्द, आकिञ्चञ्ञायतने चित्तं पक्खन्दति पसीदति सन्तिट्ठति विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। सो खो अहं, आनन्द, सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरामि। तस्स मय्हं, आनन्द, इमिना विहारेन विहरतो विञ्ञाणञ्चायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो। [N.81] सेय्यथापि, आनन्द, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स मे विञ्ञाणञ्चायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो।

१२. ''तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'यन्नूनाहं सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम नेवसञ्ञानासञ्ञाचयतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। तस्स मय्हं, आनन्द, नेवसञ्ञानासञ्ञायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'को नु खो हेतु को पच्चयो, येन मे [B.240] नेवसञ्ञानासञ्ञायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'? तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'आकिञ्चञ्ञायतने खो मे आदीनवो अदिट्ठो, सो च मे अबहुलीकतो, नेवसञ्ञानासञ्ञायतने च आनिसंसो अनधिगतो, सो च मे अनासेवितो। तस्मा मे नेवसञ्ञानासञ्ञायतने चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्दिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'सचे खो अहं आकिञ्चञ्चायतने आदीनवं दिस्वा तं बहुलं करेय्यं, नेवसञ्ञानासञ्ञायतने आनिसंसं अधिगम्म तमासेवेय्यं, ठानं खो पनेतं विज्जति यं मे नेवसञ्ञानासञ्ञायतने चित्तं पक्खन्देय्य पसीदेय्य सन्तिट्ठेय्य विमुच्चेय्य एतं सन्तं ति पस्सतो'। सो खो अहं, आनन्द, अपरेन [R.447] समयेन आकिञ्चञ्ञायतने आदीनवं दिस्वा तं बहुलमकासिं, नेवसञ्ञानासञ्ञायतने आनिसंसं अधिगम्म तमासेविं। तस्स मय्हं, आनन्द, नेवसञ्ञानासञ्ञायतने चित्तं

कर 'कुछ भी नहीं है'—यह समझकर आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करूँ।' ...पूर्ववत्... *(यथाप्रसङ्ग परिवर्तन कर विस्तार कर लें।)* (७)

१२. ''आनन्द! तब मुझ को यह हुआ—'क्यों न मैं आकिञ्चन्यानन्त्यायतन से भी आगे बढ कर नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करूँ'।...पूर्ववत्...। वही मेरा दुःख था। (८)

पक्खन्दति पसीदति सन्तिट्ठति विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। सो खो अहं, आनन्द, सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरामि। तस्स मय्हं, आनन्द, इमिना विहारेन विहरतो आकिञ्चञ्ञायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो। सेय्यथापि, आनन्द, सुखिनो दुक्खं उप्पज्जेय्य यावदेव आबाधाय; एवमेवस्स मे आकिञ्चञ्ञायतनसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति। स्वास्स मे होति आबाधो।

[N.82] १३. "तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'यन्नूनाहं नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति। तस्स मय्हं, आनन्द, सञ्ञावेदयितनिरोधे चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'को नु खो हेतु को पच्चयो, येन मे सञ्ञावेदयितनिरोधे चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'? तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'नेवसञ्ञानासञ्ञायतने खो मे आदीनवो अदिट्ठो, सो च मे अबहुलीकतो, सञ्ञावेदयितनिरोधे च आनिसंसो अनधिगतो, सो च मे [B.241] अनासेवितो। तस्मा मे सञ्ञावेदयितनिरोधे चित्तं न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्दिट्ठति न विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो'। तस्स मय्हं, आनन्द, एतदहोसि—'सचे खो अहं नेवसञ्ञानासञ्ञायतने आदीनवं दिस्वा तं बहुलं करेय्यं, सञ्ञावेदयितनिरोधे आनिसंसं अधिगम्म तमासेवेय्यं, ठानं खो पनेतं विज्जति यं मे सञ्ञावेदयितनिरोधे चित्तं पक्खन्देय्य पसीदेय्य सन्तिट्ठेय्य विमुच्चेय्य एतं सन्तं ति पस्सतो'। सो खो अहं, आनन्द, [R.448] अपरेन समयेन नेवसञ्ञानासञ्ञायतने आदीनवं दिस्वा तं बहुलमकासिं, सञ्ञावेदयितनिरोधे आनिसंसं अधिगम्म तमासेविं। तस्स मय्हं, आनन्द, सञ्ञावेदयितनिरोधे चित्तं पक्खन्दति पसीदति सन्तिट्ठति विमुच्चति एतं सन्तं ति पस्सतो। सो खो अहं, आनन्द, सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरामि, पञ्ञाय च मे दिस्वा आसवा परिक्खयं अगमंसु।

१४. "यावकीवञ्चाहं, आनन्द, इमा नव अनुपुब्बविहारसमापत्तियो न एवं अनुलोमपटिलोमं समापज्जिं पि वुट्ठहिं पि, नेव तावाहं, आनन्द, सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय 'अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो'

---

१३. "आनन्द! तब मुझ को यह हुआ—'क्यों न मैं अब नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का भी समतिक्रमण कर संज्ञावेदितनिरोध को प्राप्त कर साधना करूँ।'...पूर्ववत्... वह मैं, आनन्द! नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का अतिक्रमण कर संज्ञावेदितनिरोध को प्राप्त कर साधना करने लगा। उस अवस्था में प्रज्ञा के आश्रयण से मेरे सभी आश्रव क्षीण हो गये। (९)

१४. "आनन्द! जब तक मैने इन क्रमिक विहारसमापत्तियों को अनुलोम एवं प्रतिलोम क्रम से प्राप्त नहीं किया तथा इन में स्थिरता नहीं प्राप्त की, तब तक, आनन्द! देव मार एवं ब्रह्म

ति पच्चञ्ञासिं। यतो च खो अहं, आनन्द, इमा नव अनुपुब्बविहारसमापत्तियो एवं अनुलोमपटिलोमं समापज्जिं पि वुट्ठहिं पि, अथाहं, आनन्द, सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय 'अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो' ति पच्चञ्ञासिं। ञाणं च पन मे दस्सनं उदपादि—'अकुप्पा मे चेतोविमुत्ति, अयमन्तिमा जाति, नत्थि दानि पुनब्भवो' '' ति॥ ●

महावग्गो चतुत्थो॥

तस्सुद्दानं

द्वे विहारा च निब्बानं, गावी झानेन पञ्चमं। [N.83]
आनन्दो ब्राह्मणा देवो, नागेन तपुस्सेन चा ति॥ ●

५. सामञ्ञवग्गो

१. सम्बाधसुत्तं : १. एकं समयं आयस्मा आनन्दो कोसम्बियं विहरति घोसितारामे। अथ खो आयस्मा उदायी येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; [B.242,R.449] उपसङ्कमित्वा आयस्मता आनन्देन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा उदायी आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—

लोकसहित श्रमण ब्राह्मण प्रजाजन सहित समस्त देव मनुष्यों में यह घोषणा नहीं की कि मैं अनुत्तर सम्यक्सम्बोधि प्राप्त कर सम्यक्सम्बुद्ध बन गया हूँ। परन्तु जब मैंने इन नौ क्रमिक विहारसमापत्तियों की साधना कर इन में स्थिरता प्राप्त कर ली तभी, आनन्द! मैंने इन देव, मार...मनुष्यों में यह घोषणा की कि मैं अनुत्तर सम्यक्सम्बोधि प्राप्त कर सम्यक्सम्बुद्ध हो चुका हूँ। तथा मुझे इस ज्ञान का साक्षात्कार हुआ—'अब मेरी यह चित्तविमुक्ति स्थिर है, यह मेरा अन्तिम जन्म है, अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा'॥'' ●

महावर्ग चतुर्थ सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. अनुपूर्वविहार सूत्र, २. अनुपूर्वविहारसमापत्तिसूत्र, ३. निर्वाणसुखसूत्र, ४. गो-उपमासूत्र, ५. ध्यानसूत्र, ६. आनन्दसूत्र, ७. लोकायतिक सूत्र, ८. देवासुरसंग्रामसूत्र, ९. नागसूत्र, एवं १०. तपुस्ससूत्र॥ ●

५. श्रामण्यवर्ग

१. सम्बाधसूत्र : : साधना में नौ सम्बाध (सङ्कीर्णता)

१. एक समय आयुष्मान् आनन्द कौशाम्बी के घोषिताराम में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब

२. "वुत्तमिदं, आवुसो, पञ्चालचण्डेन देवपुत्तेन (सं० नि० १.२.७, पृ० ८१)—

'सम्बाधे वत ओकासं, अविन्दि भूरिमेधसो।
यो झानमबुज्झि बुद्धो, पटिलीननिसभो मुनी' ति॥

"कतमो, आवुसो, सम्बाधो, कतमो सम्बाधे ओकासाधिगमो वुत्तो भगवता" ति?

३. "पञ्चिमे, आवुसो, कामगुणा सम्बाधो वुत्तो भगवता। कतमे पञ्च? चक्खुविञ्ञेय्या रूपा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया, सोतविञ्ञेय्या सद्दा ...पे०... घानविञ्ञेय्या गन्धा... जिव्हाविञ्ञेय्या रसा... कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया। इमे खो, आवुसो, पञ्च कामगुणा सम्बाधो वुत्तो भगवता।

४. "इधावुसो, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, सम्बाधे ओकासाधिगमो वुत्तो भगवता परियायेन। [N.84,R.450] तत्रापत्थि सम्बाधो। किञ्च तत्थ सम्बाधो? यदेव तत्थ वितक्कविचारा अनिरुद्धा होन्ति, अयमेत्थ सम्बाधो।

५. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एत्तावता पि खो आवुसो, सम्बाधे ओकासाधिगमो वुत्तो भगवता परियायेन। तत्रापत्थि सम्बाधो। किञ्च तत्थ सम्बाधो? यदेव तत्थ पीति अनिरुद्धा होति, अयमेत्थ सम्बाधो।

आयुष्मान् उदायी आयुष्मान् आनन्द के पास गये ...पूर्ववत्...। आयुष्मान् आनन्द से उनने यह पूछा—

२. "आयुष्मन्! पञ्चालचण्ड देवपुत्र ने *(**संयुत्तनिकाय** के सगाथवर्गस्थित देवपुत्रसंयुक्त में **पञ्चालचण्डसूत्र,** बौ. भा. ग्र. मा., १ भा०.,१ पृ. ८१)* भगवान् से यह निवेदन किया है—

'सङ्कीर्ण एवं विषम मार्ग (सम्बाध) में भी ध्यानाभ्यासरत, ज्ञानी, निरहङ्कार, श्रेष्ठ, भूरिप्रज्ञ मुनिजन आगे बढने का मार्ग (अवकाश) निकाल ही लेते हैं॥'

"आयुष्मन्! यह विषम मार्ग (सम्बाध=अवरोध) क्या है? तथा इस विषम मार्ग में आगे बढने का उपाय (अवकाश) क्या है?"

३. "आयुष्मन्! भगवान् ने ये पाँच कामगुण 'सम्बाध' बताये हैं। कौन से पाँच? इष्ट, कान्त, अनुकूल, प्रिय कामसम्पृक्त एवं रागयुक्त चक्षुर्विज्ञेय **रूप**, ...श्रोत्रविज्ञेय **शब्द**, ...घ्राणविज्ञेय **गन्ध**, ...जिह्वाविज्ञेय **रस**, एवं ...कायविज्ञेय **स्प्रष्टव्य** विषय। आयुष्मन्! ये पाँच कामगुण भगवान् ने 'सम्बाध' बताये हैं।

४. "आयुष्मन्! यहाँ भिक्षु कामगुणों से दूर रह कर ...पूर्ववत्... प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। इस उपाय से भी भगवान् ने सम्बाध में अवकाश का मार्ग बताया है। (परन्तु) वहाँ भी सम्बाध है। वहाँ क्या सम्बाध है? क्यों कि वहाँ वितर्क एवं विचारों का कोई अवरोध नहीं हो पाता। यही वहाँ 'सम्बाध' है।

६. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु पीतिया च विरागा ...पे०... ततियं झानं [B.243] उपसम्पज्ज विहरति। एत्तावता पि खो आवुसो, सम्बाधे ओकासाधिगमो वुत्तो भगवता परियायेन। तत्रापत्थि सम्बाधो। किञ्च तत्थ सम्बाधो? यदेव तत्थ उपेक्खासुखं अनिरुद्धं होति, अयमेत्थ सम्बाधो।

७. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सुखस्स च पहाना ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, सम्बाधे ओकासाधिगमो वुत्तो भगवता परियायेन। तत्रापत्थि सम्बाधो। किञ्च तत्थ सम्बाधो? यदेव तत्थ रूपसञ्ञा अनिरुद्धा होति, अयमेत्थ सम्बाधो।

८. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, सम्बाधे ओकासाधिगमो वुत्तो भगवता परियायेन। तत्रापत्थि सम्बाधो। किञ्च तत्थ सम्बाधो? यदेव तत्थ आकासानञ्चायतनसञ्ञा अनिरुद्धा होति, अयमेत्थ सम्बाधो।

९. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म [R.451] 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, सम्बाधे ओकासाधिगमो वुत्तो भगवता परियायेन। तत्रापत्थि सम्बाधो। किञ्च तत्थ सम्बाधो? यदेव तत्थ विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञा अनिरुद्धा होति, अयमेत्थ सम्बाधो।

१०. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म [N.85]

---

५. "पुनः, आयुष्मन्! वह भिक्षु वितर्क विचारों के उपशमन से ...पूर्ववत्... द्वितीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। इस उपाय से भी ...पूर्ववत्...; क्योंकि यहाँ प्रीति अनिरुद्ध ही रह जाती है, अतः यही यहाँ 'सम्बाध' है।

६. "पुनः, आयुष्मन्! वह भिक्षु प्रीति से वैराग्य के कारण ...पूर्ववत्... तृतीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। इस उपाय से भी ...पूर्ववत्...; क्योंकि यहाँ भी उपेक्षा-सुख अवरुद्ध नहीं हो पाता। यही यहाँ 'सम्बाध' है।

७. "पुनः, आयुष्मन्! वह भिक्षु सुख के प्रहाण से ...पूर्ववत्... चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। इस उपाय से भी ...पूर्ववत्..., क्यों कि यहाँ भी रूपसंज्ञा का निरोध नहीं हो पाता, अतः यह 'सम्बाध' ही है।

८. "पुनः, आयुष्मन्! वह भिक्षु रूप-संज्ञाओं का भली भाँति अतिक्रमण कर, प्रतिघसंज्ञाओं के अस्त हो जाने से, तथा नानात्वसंज्ञाओं को मन में न करने से 'आकाश अनन्त है'—यह मानता हुआ आकाशानन्त्यायतन की साधना करता है। इस उपाय से भी ...पूर्ववत्...; क्यों कि यहाँ भी आकाशानन्त्यायनसंज्ञा निरुद्ध नहीं हो पाती, अतः यही 'सम्बाध' है।

९. "पुनः, आयुष्मन्! वह भिक्षु आकाशानन्त्यायतन का सर्वथा अतिक्रमण कर 'विज्ञान अनन्त है'—यह मानता हुआ विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। इस उपाय से भी

'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। एत्तावता पि खो आवुसो, सम्बाधे ओकासाधिगमो वुत्तो भगवता परियायेन। तत्रापत्थि सम्बाधो। किञ्च तत्थ सम्बाधो ? यदेव तत्थ आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञा अनिरुद्धा होति, अयमेत्थ सम्बाधो।

११. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म [B.244] नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, सम्बाधे ओकासाधिगमो वुत्तो भगवता परियायेन। तत्रापत्थि सम्बाधो। किञ्च तत्थ सम्बाधो ? यदेव तत्थ नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञा अनिरुद्धा होति, अयमेत्थ सम्बाधो।

१२. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। एत्तावता पि खो, आवुसो, सम्बाधे ओकासाधिगमो वुत्तो भगवता निप्परियायेना'' ति॥●

२. कायसक्खिसुत्तं : १. '''कायसक्खि कायसक्खी' ति, आवुसो, वुच्चति। कित्तावता नु खो, आवुसो, कायसक्खि वुत्तो भगवता'' ति ?

२. ''इधावुसो, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। यथा यथा च तदायतनं तथा तथा नं कायेन फुसित्वा विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, कायसक्खि वुत्तो भगवता परियायेन।

[R.452] ३. ''पुन च परं, आवुसो, भिक्खु वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं ...

...पूर्ववत्...; क्यों कि वहाँ विज्ञानानन्त्यायतनसंज्ञा निरुद्ध नहीं हो पाती। अतः यह वहाँ 'सम्बाध' ही है।

१०. ''पुनः आयुष्मन्! वह भिक्षु विज्ञानानन्त्यायतन का सर्वथा अतिक्रमण कर 'कुछ भी नहीं है'—ऐसा मान कर आकिञ्चन्यायतनसंज्ञा को प्राप्त कर साधना करता है। इस उपाय से भी ...पूर्ववत्...; क्योंकि वहाँ नैवसंज्ञानासंज्ञायतनसंज्ञा निरुद्ध नहीं होती, अतः यह वहाँ 'सम्बाध' ही है।

११. पुनः, आयुष्मन्! वह भिक्षु आकिञ्चन्यायतन का सर्वथा अतिक्रमण कर नैवसंज्ञा-नासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करता है। तथा प्रज्ञा से साक्षात्कार कर आश्रवों का क्षय होता है। इस से भी, आयुष्मन्! भगवान् ने सम्बाध में अवकाश का मार्ग बताया है॥'' ●

२. कायसाक्षिसूत्र : : नवविध कायसाक्षी

१. ''आयुष्मन्! 'कायसाक्षी कायसाक्षी'—ऐसा धर्मप्रवचन में बार बार कहा जाता है। आयुष्मन्! इस 'कायसाक्षी' शब्द का भगवान् ने क्या अर्थ बताया है ?''

२. ''आयुष्मन्! यहाँ साधक भिक्षु कामभोगों से दूर रहता हुआ ...पूर्ववत्... प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। उस अवस्था में वह जिस जिस आयतन (क्षेत्र) को देखता है उस को काया से अनुभव करता हुआ साधना में लगा रहता है। आयुष्मानो! इस पर्याय (उपाय) से भी भगवान् ने सत्य को काया से साक्षात् करने की विधि (क्रम) बतायी है। (१)

ततियं झानं... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। यथा यथा च तदायतनं तथा तथा नं कायेन फुसित्वा विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, कायसक्खि वुत्तो भगवता परियायेन।

४. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं [N.86] उपसम्पज्ज विहरति। यथा यथा च तदायतनं तथा तथा नं कायेन फुसित्वा विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, कायसक्खि वुत्तो भगवता परियायेन ...पे०...।

५. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। यथा यथा च तदायतनं तथा तथा नं कायेन फुसित्वा विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, कायसक्खि वुत्तो भगवता निप्परियायेना" ति॥ ●

३. पञ्ञाविमुत्तसुत्तं : १. "'पञ्ञाविमुत्तो पञ्ञाविमुत्तो' ति, आवुसो, [B.245] वुच्चति। कित्तावता नु खो, आवुसो, पञ्ञाविमुत्तो वुत्तो भगवता" ति?

२. "इधावुसो, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय च नं पजानाति। एत्तावता पि खो, आवुसो, पञ्ञाविमुत्तो वुत्तो भगवता परियायेन ...पे०...।

---

३. "आयुष्मन्! यहाँ साधक भिक्षु वितर्क विचारों के उपशम से ...पूर्ववत्...द्वितीय ध्यान ...तृतीय ध्यान...चतुर्थ ध्यान प्राप्त कर साधना करता है। वह उस अवस्था में ...पूर्ववत्... साक्षात् करने की विधि बतायी है। (३-४-५)

४. पुनः, आयुष्मन्! यहाँ साधक भिक्षु रूपसंज्ञाओं के सर्वथा अतिक्रान्त होने से, प्रतिघसंज्ञाओं के भी विनष्ट हो जाने से, नानात्वसंज्ञाओं की उपेक्षा करने से 'आकाश अनन्त है'— ऐसा मान कर आकाशानन्त्यायतन की साधना करता है। ...इस उपाय से भी ...पूर्ववत्...साक्षात् करने की विधि बतायी है ...पूर्ववत्। (६-७-८)

५. पुनः, आयुष्मन्! यहाँ साधक भिक्षु सब ओर से नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का अतिक्रमण कर संज्ञावेदितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है। तथा प्रज्ञा से साक्षात् कर उस के आश्रव क्षीण हो जाते हैं। वह इस अवस्था में जिस जिस आयतन को देखता है, उस को काया से अनुभव करता हुआ भी साधना में ही लगा रहता है। इस उपाय से भी भगवान् ने सत्य को काया से साक्षात् करने की विधि बतायी है॥ (९) ●

३. प्रज्ञाविमुक्तसूत्र : : नवविध प्रज्ञाविमुक्त

१. "आयुष्मन्! 'प्रज्ञाविमुक्त', 'प्रज्ञाविमुक्त'—ऐसा धर्मप्रवचन में अनेक बार कहा जाता है; भगवान् ने इस 'प्रज्ञाविमुक्त' का क्या निर्वचन किया है?

२. "यहाँ, आयुष्मन्! कोई भिक्षु कामभोगों से दूर रह कर...पूर्ववत्...प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। और प्रज्ञा से इस को साक्षात् करता है। इस उपाय से भी भगवान् ने 'प्रज्ञाविमुक्त' का निर्वचन किया है। ...पूर्ववत्...।

[R.453] ३. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति, पञ्ञाय च नं पजानाति। एत्तावता पि खो, आवुसो, पञ्ञाविमुत्तो वुत्तो भगवता निप्परियायेना" ति॥ ●

४. उभतोभागविमुत्तसुत्तं : १. "'उभतोभागविमुत्तो उभतोभागविमुत्तो' ति, आवुसो, वुच्चति। कित्तावता नु खो, आवुसो, उभतोभागविमुत्तो वुत्तो भगवता" ति?

२. "इधावुसो, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। यथा यथा च तदायतनं तथा तथा नं कायेन फुसित्वा विहरति, पञ्ञाय च नं पजानाति। एत्तावता पि खो, आवुसो, उभतोभागविमुत्तो वुत्तो भगवता परियायेन ...पे०...।

[N.87] ३. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। यथा यथा च तदायतनं तथा तथा नं कायेन फुसित्वा विहरति, पञ्ञाय च नं पजानाति। एत्तावता पि खो, आवुसो, उभतोभागविमुत्तो वुत्तो भगवता निप्परियायेना" ति॥ ●

५. सन्दिट्ठिकधम्मसुत्तं : १. "'सन्दिट्ठिको धम्मो सन्दिट्ठिको धम्मो' ति, आवुसो, वुच्चति। कित्तावता नु खो, आवुसो, सन्दिट्ठिको धम्मो वुत्तो भगवता" ति?

२. "इधावुसो, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। [B.246] एत्तावता पि खो, आवुसो, सन्दिट्ठिको धम्मो वुत्तो भगवता परियायेन ...पे०...।

३. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। एत्तावता पि खो, आवुसो, सन्दिट्ठिको धम्मो वुत्तो भगवता निप्परियायेना" ति॥ ●

६. सन्दिट्ठिकनिब्बानसुत्तं : १. "'सन्दिट्ठिकं निब्बानं सन्दिट्ठिकं निब्बानं' ति, आवुसो, वुच्चति। कित्तावता नु खो, आवुसो, सन्दिट्ठिकं निब्बानं वुत्तं भगवता" ति?

---

३. "पुनः, आयुष्मन्! साधक भिक्षु नैवसंज्ञानासंज्ञायतनसंज्ञा का सर्वथा अतिक्रमण कर संज्ञावेदयितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है। उस समय वह प्रज्ञा की सहायता से अपने सभी आश्रव क्षीण कर लेता है। प्रज्ञा से उस का साक्षात्कार कर लेता है। इस उपाय से भी भगवान् ने 'प्रज्ञाविमुक्त' शब्द का निर्वचन किया है"॥ ●

४. उभतोभागविमुक्तसूत्र : : नवविध उभतोभागविमुक्त

१. ...पूर्ववत्...। *('प्रज्ञाविमुक्त' के स्थान पर 'उभतोभागविमुक्त' शब्द लगा कर पूर्व सूत्र के समान ही विस्तार कर लें।)* ●

५. सान्दृष्टिकधर्मसूत्र : : नवविध सान्दृष्टिक धर्म

१. ...पूर्ववत्...। *('प्रज्ञाविमुक्त' के स्थान पर 'सान्दृष्टिकधर्म' शब्द लगा कर प्रज्ञाविमुक्तसूत्रवत् ही विस्तार कर लें।)* ●

२. "इधावुसो, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, सन्दिट्ठिकं निब्बानं वुत्तं भगवता परियायेन ...पे०...।

३. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। एत्तावता पि खो, आवुसो, सन्दिट्ठिकं निब्बानं वुत्तं भगवता निप्परियायेना" ति॥ ●

[N.88, R.454] ७. **निब्बानसुत्तं** : १. निब्बानं निब्बानं ति, आवुसो, वुच्चति ...पे०... ॥●

८. **परिनिब्बानसुत्तं** : १. परिनिब्बानं परिनिब्बानं ति, आवुसो, वुच्चति ...पे०... ॥

९. **तदङ्गनिब्बानसुत्तं** : १. तदङ्गनिब्बानं तदङ्गनिब्बानं ति, आवुसो, वुच्चति ...पे०... ॥ ●

१०. **दिट्ठधम्मनिब्बानसुत्तं** : १. " 'दिट्ठधम्मनिब्बानं दिट्ठधम्मनिब्बानं' ति, आवुसो, वुच्चति। कित्तावता नु खो, आवुसो दिट्ठधम्मनिब्बानं वुत्तं भगवता" ति?

२. "इधावुसो, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज [B.247] विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, दिट्ठधम्मनिब्बानं वुत्तं भगवता परियायेन ...पे०...।

३. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। एत्तावता पि खो, आवुसो, दिट्ठधम्मनिब्बानं वुत्तं भगवता निप्परियायेना" ति॥ ●

सामञ्ञवग्गो पञ्चमो॥

---

६. सान्दृष्टिकनिर्वाणसूत्र :: नवविध सान्दृष्टिक निर्वाण

१. ...पूर्ववत्... ॥ सान्दृष्टिक निर्वाण 'सान्दृष्टिक निर्वाण' ऐसा धर्मप्रवचन में अनेक बार कहा जाता है। ...पूर्ववत्...।

('प्रज्ञाविमुक्त' के स्थान पर 'सान्दृष्टिक निर्वाण' शब्द लगा कर प्रज्ञाविमुक्तसूत्रवत् ही विस्तार कर लें।) ●

७. निर्वाणसूत्र :: निर्वाणप्राप्ति के नवविध उपाय

१. ...पूर्ववत्... ॥ *('प्रज्ञाविमुक्त' के स्थान पर 'निर्वाण' शब्द लगा कर पूर्ववत् विस्तार कर लें।)* ●

८. परिनिर्वाणसूत्र :: परिनिर्वाण के नवविध उपाय

१. ...पूर्ववत्... ॥ *('प्रज्ञाविमुक्त' के स्थान पर 'परिनिर्वाण' शब्द लगा कर प्रज्ञाविमुक्तसूत्रवत् ही विस्तार कर लें।)* ●

९. तदङ्गनिर्वाणसूत्र :: तदङ्गनिर्वाण के नवविध उपाय

१. ...पूर्ववत्... ॥ *('प्रज्ञाविमुक्त' के स्थान पर 'तदङ्गनिर्वाण' शब्द लगा कर 'प्रज्ञाविमुक्तसूत्र' के समान ही विस्तार कर लें।)* ●

तस्सुद्दानं

[R.455] सम्बाधो कायसक्खि पञ्ञा, उभतोभागो सन्दिट्ठिका द्वे।
निब्बानं परिनिब्बानं, तदङ्गदिट्ठधम्मिकेन चा ति॥ ●

पठमो पण्णासको समत्तो॥

६. खेमवग्गो

१. खेमसुत्तं : १. " 'खेमं खेमं' ति, आवुसो, वुच्चति। कित्तावता नु खो, [N.89, B.248] आवुसो, खेमं वुत्तं भगवता" ति?

२. "इधावुसो, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, खेमं वुत्तं भगवता परियायेन ...पे०... ॥

३. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। एत्तावता पि खो, आवुसो, खेमं वुत्तं भगवता निप्परियायेना" ति॥ ●

---

१०. दृष्टधर्मनिर्वाणसूत्र :: दृष्टधर्मनिर्वाण के नवविध उपाय

१. ...पूर्ववत्...॥ *('प्रज्ञाविमुक्त' के स्थान पर 'दृष्टधर्मनिर्वाण' शब्द लगा कर प्रज्ञाविमुक्तसूत्र के समान ही इस सूत्र का भी विस्तार कर लें।)* ●

श्रामण्यवर्ग पञ्चम सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. सम्बाधसूत्र, २. कायसाक्षिसूत्र, ३. प्रज्ञाविमुक्तसूत्र, ४. उभतोभागविमुक्तसूत्र, ५. सान्दृष्टिकधर्मसूत्र, ६. सान्दृष्टिकनिर्वाणसूत्र, ७. निर्वाणसूत्र, ८. परिनिर्वाणसूत्र, ९. तदङ्गनिर्वाण-सूत्र, १०. दृष्टधर्मनिर्वाणसूत्र॥ ●

प्रथम पञ्चाशत्क सम्पन्न॥

६. क्षेमवर्ग

१. क्षेमसूत्र :: 'क्षेम' शब्द का नवविध निर्वचन

१. "आयुष्मन्! 'क्षेम' 'क्षेम'—यह बहुत कहा जाता है। भगवान् ने इस शब्द का कैसे निर्वचन किया है?"

२. "आयुष्मान्! यहाँ कोई भिक्षु कामभोगों से दूर रह कर ...प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। प्रज्ञा द्वारा साक्षात् द्वारा इसका साक्षात्कार करने पर इस के आश्रव क्षीण हो जाते हैं। इस उपाय से भी, आयुष्मानो! भगवान् ने 'क्षेम' शब्द का निर्वचन किया है। ...पूर्ववत्...।

२. खेमप्पत्तसुत्तं : १. खेमप्पत्तो खेमप्पत्तो ति, आवुसो, वुच्चति ...पे०... ॥ ●

३. अमतसुत्तं : १. अमतं अमतं ति, आवुसो, वुच्चति ...पे०... ॥ ●

४. अमतप्पत्तसुत्तं : १. अमतप्पत्तो अमतप्पत्तो ति, आवुसो, वुच्चति ...पे०... ॥●

५. अभयसुत्तं : १. अभयं अभयं ति, आवुसो, वुच्चति ...पे०... ॥ ●

६. अभयप्पत्तसुत्तं : १. अभयप्पत्तो अभयप्पत्तो ति, आवुसो, वुच्चति ...पे०... ॥●

७. पस्सद्धिसुत्तं : १. पस्सद्धि पस्सद्धी ति, आवुसो, वुच्चति ...पे०... ॥ ●

८. अनुपुब्बपस्सद्धिसुत्तं : १. अनुपुब्बपस्सद्धि अनुपुब्ब- [N.90, B.249, R.456] पस्सद्धी ति, आवुसो, वुच्चति ...पे०... ॥ ●

९. निरोधसुत्तं : १. निरोधो निरोधो ति, आवुसो, वुच्चति ...पे०... ॥ ●

१०. अनुपुब्बनिरोधसुत्तं : १. " 'अनुपुब्बनिरोधो अनुपुब्बनिरोधो' ति, आवुसो, वुच्चति। कित्तावता नु खो, आवुसो, अनुपुब्बनिरोधो वुत्तो भगवता" ति?

---

३. "पुनः, आयुष्मन्! भिक्षु नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को भी अतिक्रान्त करता हुआ संज्ञा-वेदयितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है। तथा प्रज्ञा द्वारा साक्षात्कार करने पर इस के आश्रव क्षीण हो जाते हैं। इस उपाय से भी भगवान् ने 'क्षेम' शब्द का निर्वचन किया है॥" ●

२. क्षेमप्राप्तसूत्र : : नवविध क्षेमप्राप्त भिक्षु

१. "आयुष्मन्! 'क्षेमप्राप्त', 'क्षेमप्राप्त'—ऐसा कहा जाता है ...पूर्ववत्... ॥ ●

३. अमृतसूत्र : : 'अमृत' शब्द का नवविध निर्वचन

१. "आयुष्मन्! 'अमृत', 'अमृत'—ऐसा कहा जाता है ...पूर्ववत्... ॥ ●

४. अमृतप्राप्तसूत्र : : अमृतप्राप्त नवविध भिक्षु

१. "आयुष्मन्! 'अमृतप्राप्त', 'अमृतप्राप्त'—ऐसा कहा जाता है...पूर्ववत्... ॥ ●

५. अभयसूत्र : : 'अभय' शब्द का नवविध निर्वचन

१. "आयुष्मन्! 'अभय', 'अभय'—ऐसा कहा जाता है...पूर्ववत्... ॥ ●

६. अभयप्राप्तसूत्र : : अभयप्राप्त नवविध भिक्षु

"आयुष्मन्! 'अभयप्राप्त', 'अभयप्राप्त'—ऐसा कहा जाता है ...पूर्ववत्... ॥ ●

७. प्रश्रब्धिसूत्र : : नवविध प्रश्रब्धि (गम्भीरता एवं शान्ति)

"आयुष्मन्! 'प्रश्रब्धि', 'प्रश्रब्धि'—ऐसा कहा जाता है...पूर्ववत्... ॥ ●

८. अनुपूर्वप्रश्रब्धिसूत्र : : नवविध क्रमिक प्रश्रब्धि

"आयुष्मन्! 'अनुपूर्व प्रश्रब्धि', 'अनुपूर्व प्रश्रब्धि'—ऐसा कहा जाता है ...पूर्ववत्... ॥ ●

९. निरोधसूत्र : : नवविध निरोध-उपाय

"आयुष्मन्! 'निरोध', 'निरोध'—ऐसा कहा जाता है...पूर्ववत्... ॥ ●

१०. अनुपूर्वनिरोधसूत्र : : नवविध क्रमिक निरोध

१. "आयुष्मन्! 'अनुपूर्व निरोध' 'अनुपूर्व निरोध'—ऐसा कहा जाता है। भगवान् ने इस 'अनुपूर्व निरोध' का क्या व्याख्यान किया है"?

२. "इधावुसो, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एत्तावता पि खो, आवुसो, अनुपुब्बनिरोधो वुत्तो भगवता परियायेन ...पे०...।

३. "पुन च परं, आवुसो, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। एत्तावता पि खो, आवुसो, अनुपुब्बनिरोधो वुत्तो भगवता निप्परियायेना" ति॥ ●

११. अभब्बसुत्तं : १. "नव, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं। कतमे नव? रागं, दोसं, मोहं, कोधं, उपनाहं, मक्खं, पळासं, इस्सं, मच्छरियं—इमे खो, भिक्खवे, नव धम्मे अप्पहाय अभब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं।

२. "नव, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं। कतमे नव? रागं, दोसं, मोहं, कोधं, उपनाहं, मक्खं, पळासं, इस्सं, मच्छरियं—इमे खो, भिक्खवे, नव धम्मे पहाय भब्बो अरहत्तं सच्छिकातु" ति॥ ●

खेमवग्गो छट्ठो॥

तस्सुद्दानं

[N.91, R.457] खेमो च अमतं चेव, अभयं पस्सद्धियेन च।
निरोधो अनुपुब्बो च, धम्मं पहाय भब्बेन चा ति॥ ●

---

२. यहाँ, आयुष्मन्! कोई भिक्षु काम भोगों से दूर रहकर ...पूर्ववत्... प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। आयुष्मन्! इस उपाय से भी भगवान् ने 'अनुपूर्वनिरोध' का व्याख्यान किया है। ...पूर्ववत्...।

३. "पुनः, आयुष्मन्! कोई भिक्षु नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का सर्वथा अतिक्रमण कर संज्ञावेदयितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है। और प्रज्ञा द्वारा साक्षात्कार कर अपने सभी आश्रवों का क्षय कर लेता है। इतने से भी भगवान् ने 'अनुपूर्वनिरोध' का व्याख्यान किया है"॥ ●

११. अभव्यसूत्र : : नव धर्मों के त्याग से अर्हत्त्व साक्षात्कार

१. "भिक्षुओ! इन नौ धर्मों का त्याग किये विना अर्हत्त्व का साक्षात्कार असम्भव है। कौन से नौ धर्म? राग, द्वेष, मोह, क्रोध, उपनाह, म्रक्ष, प्रदाश, ईर्ष्या, एवं मात्सर्य। भिक्षुओ! इन नौ धर्मों का त्याग किये विना अर्हत्त्व का साक्षात्कार असम्भव है।

२. (परन्तु) "भिक्षुओ! इन नव धर्मों के त्याग से अर्हत्त्व का साक्षात्कार सम्भव है। कौन से नौ धर्म? राग, द्वेष ...पूर्ववत्... एवं मात्सर्य। भिक्षुओ! इन नौ धर्मों के त्याग से अर्हत्त्व का साक्षात्कार सम्भव है॥" ●

क्षेमवर्ग षष्ठ सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. क्षेमसूत्र, २. क्षेमप्राप्तसूत्र, ३. अमृतसूत्र, ४. अमृतप्राप्तसूत्र, ५. अभयसूत्र, ६. अभय-प्राप्तसूत्र, ७. प्रश्रब्धिसूत्र, ८. अनुपूर्वप्रश्रब्धिसूत्र, ९. निरोधसूत्र, १०. अनुपूर्वनिरोधसूत्र एवं अभव्यसूत्र॥ ●

७. सतिपट्ठानवग्गो

१. **सिक्खादुब्बल्यसुत्तं** : १. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, सिक्खादुब्बल्यानि। कतमानि पञ्च? पाणातिपातो, अदिन्नादानं, कामेसुमिच्छाचारो, मुसावादो, [B.250] सुरामेरयमज्जपमादट्ठानं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्च सिक्खादुब्बल्यानि।

२. "इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं सिक्खादुब्बल्यानं पहानाय चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु ...पे०... चित्ते... धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं सिक्खादुब्बल्यानं पहानाय इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा" ति॥

२. **नीवरणसुत्तं** : १. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, नीवरणानि। कतमानि पञ्च? कामच्छन्दनीवरणं, ब्यापादनीवरणं, थीनमिद्धनीवरणं, उद्धच्चकुक्कुच्चनीवरणं, विचिकिच्छानीवरणं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्च नीवरणानि। [R.458]

२. "इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं नीवरणानं पहानाय चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी

---

७. स्मृतिप्रस्थानवर्ग

१. शिक्षादौर्बल्यसूत्र : : शिक्षा दौर्बल्यकारक पाँच धर्म, तथा उनके नाशक चार धर्म

१. "भिक्षुओ! ये पाँच धर्म शिक्षा को दुर्बल करने वाले हैं। कौन से पाँच? (१) प्राणातिपात, (२) अदत्तादान, (३) कामभोगों में मिथ्याचार, (४) असत्य भाषण एवं (५) मैरेय आदि मद्यपान। भिक्षुओ! ये पाँच धर्म शिक्षा को दुर्बल करने वाले हैं।

२. भिक्षुओ! शिक्षा में दुर्बलताकारक इन पाँच धर्मों के प्रहाण हेतु इन चारस्मृति प्रस्थानों की भावना करनी चाहिये। कौन से चार? (१) भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु उद्योग के साथ पूर्ण ध्यान रखता हुआ, स्मृतिमान् हो कर, लौकिक अभिध्या (लोभ) एवं दौर्मनस्य को स्वचित्त से दूर हटा कर काया में कायानुपश्यना करता (शरीर की वास्तविकता को समझता) हुआ साधना करता है; (२) ...वेदनाओं में वेदनानुपश्यना करता है, (३)...चित्त में चित्तानुपश्यना करता है, एवं (४) ...धर्मों में धर्मानुपश्यना करता हुआ साधना करता है। भिक्षुओ! उन उपर्युक्त पाँच शिक्षादौर्बल्यकारक धर्मों का प्रहाण करने के लिये इन चार स्मृतिप्रस्थानों की ऐसे भावना करनी चाहिये॥" ●

२. नीवरणसूत्र : : पाँच नीवरण एवं उनके नाशक चार धर्म

१. भिक्षुओ! ये पाँच नीवरण धर्म हैं। कौन से पाँच? (१) कामच्छन्दनीवरण, (२) व्यापादनीवरण, (३) स्त्यानमृद्धनीवरण, (४) औद्धत्यकौकृत्यनीवरण एवं (५) विचिकित्सानीवरण—भिक्षुओ! ये पाँच नीवरण होते हैं।

२. "भिक्षुओ! इन पाँच नीवरणों के प्रहाण के लिये चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी

सम्पजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु ...पे०... चित्ते... धम्मेसु [N.92] धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं नीवरणानं पहानाय इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा'' ति॥ ●

३. कामगुणसुत्तं : १. ''पञ्चिमे, भिक्खवे, कामगुणा। कतमे पञ्च? चक्खु-विञ्ञेय्या रूपा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया, सोतविञ्ञेय्या सद्दा [B.251] ...पे०... घानविञ्ञेय्या गन्धा... जिव्हाविञ्ञेय्या रसा... कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया। इमे खो, भिक्खवे, पञ्च कामगुणा।

२. ''इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं कामगुणानं पहानाय ...पे०... इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा'' ति॥ ●

४. उपादानक्खन्धसुत्तं : १. ''पञ्चिमे, भिक्खवे, उपादानक्खन्धा। कतमे पञ्च? [R.459] रूपुपादानक्खन्धो, वेदनुपादानक्खन्धो, सञ्ञुपादानक्खन्धो, सङ्खारुपादानक्खन्धो, विञ्ञाणुपादानक्खन्धो—इमे खो, भिक्खवे, पञ्चुपादानक्खन्धा।

२. ''इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उपादानक्खन्धानं पहानाय ...पे०... इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा'' ति॥ ●

५. ओरम्भागियसुत्तं : १. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, ओरम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? सक्कायदिट्ठि, विचिकिच्छा, सीलब्बतपरामासो, कामच्छन्दो, ब्यापादो— इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चोरम्भागियानि संयोजनानि।

चाहिये। कौन से चार? ...पूर्वसूत्रवत्...। भिक्षुओ! इन पाँच नीवरणों के प्रहाण के लिये इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये॥ ●

३. कामगुणसूत्र : : पाँच कामगुण एवं उसके नाशक चार धर्म

१. भिक्षुओ! ये पाँच कामगुण हैं। कौन से पाँच? इष्ट, कान्त, मनाप, प्रिय, कामसम्पृक्त रागयुक्त चक्षुविज्ञेय रूप, ...शब्द, ...गन्ध..., रस..., ...कायविज्ञेय स्प्रष्टव्य। भिक्षुओ! ये पाँच कामगुण होते हैं।

२. ''भिक्षुओ! इन पाँच कामगुणों के प्रहाण के लिये ...पूर्ववत्...इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये॥'' ●

४. उपादानस्कन्धसूत्र : : पाँच स्कन्ध और उनके नाशक चार धर्म

१. ''भिक्षुओ! ये पाँच उपादानस्कन्ध हैं। कौन से पाँच? (१) रूपोपादानस्कन्ध, (२) वेदनोपादानस्कन्ध, (३) संज्ञोपादानस्कन्ध, (४) संस्कारोपादानस्कन्ध, एवं (५) विज्ञानोपादान-स्कन्ध। भिक्षुओ! ये पाँच उपादानस्कन्ध होते हैं।

२. ''भिक्षुओ! इन पाँचों उपादानस्कन्धों के प्रहाण के लिये ...पूर्ववत्... इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये॥'' ●

५. अवरभागीयसूत्र : : पाँच संयोजन और उनके नाशक चार धर्म

१. ''भिक्षुओ! ये पाँच अवरभागीय संयोजन हैं। कौन से पाँच? (१) सत्कायदृष्टि,

२. "इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं पहानाय ...पे०... इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा" ति॥ ●

६. गतिसुत्तं : १. "पञ्चिमा, भिक्खवे, गतियो। कतमा पञ्च? निरयो, [N.93] तिरच्छानयोनि, पेत्तिविसयो, मनुस्सा, देवा—इमा खो, भिक्खवे, पञ्च गतियो।

२. "इमासं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं गतीनं पहानाय ...पे०... इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा" ति॥ ●

७. मच्छरियसुत्तं : १. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, मच्छरियानि। कतमानि पञ्च? आवासमच्छरियं, कुलमच्छरियं, लाभमच्छरियं, वण्णमच्छरियं, धम्ममच्छरियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्च मच्छरियानि।

२. "इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं मच्छरियानं पहानाय ...पे०... इमे चत्तारो [B.252] सतिपट्ठाना भावेतब्बा" ति॥ ●

८. उद्धम्भागियसुत्तं : १. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि खो, [R.460] भिक्खवे, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि।

---

(२) विचिकित्सा, (३) शीलव्रतपरामर्श, (४) कामच्छन्द, एवं (५) व्यापाद। भिक्षुओ! ये पाँच अवरभागीय संयोजन होते हैं।

२. "भिक्षुओ! इन पाँच अवरभागीय संयोजनों के प्रहाण के लिये ...पूर्ववत्... इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये॥" ●

६. गतिसूत्र : : पाँच गति एवं उनके नाशक चार धर्म

१. "भिक्षुओ! ये पाँच गतियाँ (योनि=जन्मस्थान) होती हैं। कौन सी पाँच? (१) निरय (नरक), (२) पशुयोनि, (३) प्रेतलोक, (४) देवलोक एवं (५) मनुष्यलोक।

२. "भिक्षुओ! इन पाँच गतियों के प्रहाण के लिये ...पूर्ववत्...इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये॥" ●

७. मात्सर्यसूत्र : : पाँच मात्सर्य और उनके नाशक चार धर्म

१. "भिक्षुओ! ये पाँच मात्सर्य (अभिमान) होते हैं। कौन से पाँच? (१) आवासमात्सर्य, (२) कुलमात्सर्य, (३) वर्णमात्सर्य, (४) लाभमात्सर्य, एवं (५) धर्ममात्सर्य—भिक्षुओ! ये पाँच मात्सर्य होते हैं।

२. "भिक्षुओ! इन पाँच मात्सर्यों के प्रहाण हेतु ...पूर्ववत्... इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये॥" ●

८. ऊर्ध्वभागीयसूत्र : : पाँच संयोजन तथा उनके नाशक चार धर्म

१. "भिक्षुओ! ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन होते हैं। कौन से पाँच? (१) रूपराग, (२) अरूपराग, (३) मान (४) औद्धत्य एवं (५) अविद्या—भिक्षुओ! ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन होते हैं।

२. ''इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं पहानाय ...पे०... इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा'' ति॥

९. चेतोखीलसुत्तं : १. ''पञ्चिमे, भिक्खवे, चेतोखीला। कतमे पञ्च? इध भिक्खवे, भिक्खु सत्थरि कङ्खति विचिकिच्छति नाधिमुच्चति न सम्पसीदति। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु सत्थरि कङ्खति विचिकिच्छति नाधिमुच्चति न सम्पसीदति, तस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय, अयं पठमो चेतोखीलो।

[N.94] २. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु धम्मे कङ्खति ...पे०... सङ्घे कङ्खति... सिक्खाय कङ्खति... सब्रह्मचारीसु कुपितो होति अनत्तमनो आहतचित्तो खीलजातो। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु सब्रह्मचारीसु कुपितो होति अनत्तमनो आहतचित्तो खीलजातो, तस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय, अयं पञ्चमो चेतोखीलो। इमे खो, भिक्खवे, पञ्च चेतोखीला।

३. ''इमेसं, खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं चेतोखीलानं पहानाय ...पे०... इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा'' ति॥

[R.461] **१०. चेतसोविनिबन्धसुत्तं :** १. ''पञ्चिमे, भिक्खवे, चेतसोविनिबन्धा। कतमे

---

२. ''इन पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजनों के प्रहाण हेतु ...पूर्ववत्... इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये॥''

९. चेतः खीलसूत्र : : पाँच चेतः खील तथा उनके नाशक चार धर्म

१. ''भिक्षुओ! ये पाँच चेत: खील (चित्त की कठोरता) होते हैं। कौन से पाँच? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई शास्ता में शङ्का-सन्देह करता है, उन पर विश्वास नहीं करता, न श्रद्धा ही करता है, (२) शास्ता के प्रति ऐसे शङ्का-सन्देह करने वाले पुरुष का मन उदयोग की ओर नहीं झुकता; तब उसका मन न अनुयोग (साधना) की ओर झुकता है, न सातत्य (किसी सत्कर्म में निरन्तर प्रवृत्ति) में लगता है, और न प्रधान (दुर्गुणों को हटाना) में ही लगता है। यह उस का प्रथमः चेत:खील है।

२. (२) भिक्षुओ! जो धर्म में शङ्का सन्देह करता है...; (३) जो सङ्घ में शङ्का-सन्देह करता है...; (४) जो शिक्षा में शङ्का-सन्देह करता है...; (५) जो अपने सब्रह्मचारियों में व्यर्थ क्रोध करता है, सन्तुष्ट नहीं करता, कठोरता का व्यवहार करता है, उस का मन (साधना में उदयोग की ओर नहीं झुकता...पूर्ववत्...।

भिक्षुओ! ये पाँच चेत:खील होते हैं।

३. ''भिक्षुओ! इन पाँचों चेत:खील के प्रहाण के लिये इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये॥''

१०. चेतोविनिबन्धसूत्र : : चित्त के पाँच विनिबन्ध (आसक्ति)...

१. ''भिक्षुओ! ये चित्त के पाँच विनिबन्ध होते हैं। कौन से पाँच? (१) भिक्षुओ! यहाँ कोई

पञ्च? इध, भिक्खवे, भिक्खु कामेसु अवीतरागो होति अविगतच्छन्दो अविगतपेमो अविगतपिपासो अविगतपरिळाहो अविगततण्हो। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु [B.253] कामेसु अवीतरागो होति अविगतच्छन्दो अविगतपेमो अविगतपिपासो अविगतपरिळाहो अविगततण्हो, तस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय, अयं पठमो चेतसोविनिबन्धो।

२. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु काये अवीतरागो होति ...पे०... रूपे अवीतरागो होति... यावदत्थं उदरावदेहकं भुञ्जित्वा सेय्यसुखं पस्ससुखं मिद्धसुखं अनुयुत्तो विहरति... अञ्ञतरं देवनिकायं पणिधाय ब्रह्मचरियं चरति—'इमिनाहं सीलेन वा वतेन वा तपेन वा ब्रह्मचरियेन वा देवो वा भविस्सामि देवञ्ञतरो वा' ति। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु अञ्ञतरं देवनिकायं पणिधाय ब्रह्मचरियं चरति—'इमिनाहं सीलेन वा वतेन वा तपेन ब्रह्मचरियेन वा देवो वा भविस्सामि देवञ्ञतरो वा' ति, तस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय, अयं पञ्चमो चेतसोविनिबन्धो। इमे खो, भिक्खवे, पञ्च चेतसोविनिबन्धा। [N.95]

३. "इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं चेतसोविनिबन्धानं पहानाय चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु ...पे०... चित्ते... धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं चेतसोविनिबन्धानं पहानाय इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा" ति॥

सतिपट्ठानवग्गो सत्तमो॥ ●

भिक्षु कामभोगों में आसक्त रहता है, स्वेच्छाचार करता है, प्रेम करता है, उन में राग रखता है, उन से परिदाह नहीं मानता, उन को बार बार प्राप्त करने की तृष्णा करता है। ऐसा भिक्षु, जिसकी कामभोगों आदि में आसक्ति हो, उसका चित्त साधना की ओर नहीं झुकता, ऐसा न होने पर वह वहाँ न कोई उद्योग करता है, न साधना ही करता है और अपनी साधना में सातत्य ही रख पाता है। यह प्रथम चेतोविनिबन्ध कहलाता है। (१)

२. "पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु काया में आसक्त रहता है ...पूर्ववत्...। (२)

"...रूप में आसक्त रहता है ...पूर्ववत्...। (३)

"जब जितना चाहे उतना पेट भर भोजन कर, शय्या-सुख भोगते हुए करवटें बदलते हुए आलस्ययुक्त हो कर लेटे रहना, आदि दुर्गुणों से युक्त होकर साधना करता है...। (४)

"या कोई भिक्षु किसी देवनिकाय में उत्पन्न होने का सङ्कल्प कर साधना करने लगता है कि मैं इस शील (आचरण), व्रत, तप या साधना से अमुक देवनिकाय में उत्पन्न होऊँ या उसमें कोई एक देवता बन जाऊँ। ऐसा सङ्कल्प कर साधना करने वाले भिक्षु दुःख का अन्त करने की ओर नहीं झुकता, तब वह तदर्थ उद्योग, अनुयोग या साधना की ओर भी नहीं झुकता। यह पाँचवाँ चेत्तोविनिबन्ध है। (५)

तस्सुद्दानं

[R.462] सिक्खा नीवरणाकामा, खन्धा च ओरम्भागिया गति।
मच्छेरं उद्धम्भागिया अट्ठमं, चेतोखीला विनिबन्धा ति॥

८. सम्मप्पधानवग्गो

१. सिक्खादुब्बल्यसुत्तं : १. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, सिक्खादुब्बल्यानि। कतमानि [B.254] पञ्च? पाणातिपातो ...पे०... सुरामेरयमज्जपमादट्ठानं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्च सिक्खादुब्बल्यानि।

२. ''इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं सिक्खादुब्बल्यानं पहानाय चत्तारो सम्मप्पधाना भावेतब्बा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु अनुप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं अनुप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति; उप्पन्नानं [N.96] पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं

---

३. ''भिक्षुओ! इन पाँच चेतोविनिबन्धों के प्रहाणहेतु इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये—(१) ...काया में कायानुपश्यना, (२) ...वेदनाओं में वेदनानुपश्यना..., (३) ...चित्त में चित्तानुपश्यना..., (४) ...धर्मों में धर्मानुपश्यना करता है...। भिक्षुओ! उन पाँच चेतोविनिबन्धों के प्रहाण के लिये इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये॥''

स्मृतिप्रस्थानवर्ग सप्तम सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. शिक्षादौर्बल्यसूत्र, २. नीवरणसूत्र, ३. कामगुणसूत्र, ४. उपादानस्कन्धसूत्र, ५. अवर-भागीयसूत्र, ६. गतिसूत्र, ७. मात्सर्यसूत्र, ८. ऊर्ध्वभागीयसूत्र, ९. चेत:खिलसूत्र, एवं १०. चेतो-विनिबन्धसूत्र॥

८. सम्यक्प्रधानवर्ग

१. शिक्षादौर्बल्यसूत्र : : पाँच शिक्षादौर्बल्यों के नाशक चार धर्म

१. ''भिक्षुओ! ये पाँच शिक्षादौर्बल्य होते हैं। कौन से पाँच? प्राणातिपात ...पूर्ववत्,.. सुरामैरयमद्यप्रमादस्थान—ये पाँच शिक्षादौर्बल्य होते हैं।

२. ''भिक्षुओ! इन पाँचों शिक्षादौर्बल्यों के प्रहाण के लिये इन चार सम्यक्प्रधानों की भावना करनी चाहिये। कौन से चार?

''यहाँ आयुष्मानो! कोई साधक भिक्षु (१) अनुत्पन्न पापमय धर्मों का उत्पाद न हो—एतदर्थ इच्छा करता है; उद्योग करता है, शक्ति लगाता है, स्वचित्त का निग्रह करता है एवं अभ्यास

पग्गण्हाति पदहति; अनुप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं उप्पादायं छन्दं जनेति ...पे०... उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं सिक्खादुब्बाल्यानं पहानाय मे चत्तारो सम्मप्पधाना भावेतब्बा'' ति॥

(यथा सतिपट्ठानवग्गे तथा सम्मप्पधानवसेन वित्थारेतब्बा।) ●

१०. चेतसोविनिबन्धसुत्तं : १. ''पञ्चिमे, भिक्खवे, चेतसोविनिबन्धा। [R.463] कतमे पञ्च? इध, भिक्खवे, भिक्खु कामेसु अवीतरागो होति ...पे०... इमे खो, भिक्खवे, पञ्च चेतसोविनिबन्धा।

२. ''इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं चेतसोविनिबन्धानं पहानाय चत्तारो सम्मप्पधाना भावेतब्बा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु अनुप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं अनुप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति; उप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय... अनुप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं उप्पादाय... उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। इमेसं खो, भिक्खवे, [B.255] पञ्चन्नं चेतसोविनिबन्धानं पहानाय इमे चत्तारो सम्मप्पधाना भावेतब्बा'' ति॥ ●

सम्मप्पधानवग्गो अट्ठमो॥

करता है; (२) उत्पन्न पापमय धर्मों के नाश हेतु इच्छा करता है...पूर्ववत्...; (३) अनुत्पन्न कुशल धर्मों के उत्पाद हेतु इच्छा करता है...पूर्ववत्...; (४) उत्पन्न कुशल धर्मों की स्थिरता के लिये, अक्षय के लिये, अधिक से अधिक वृद्धि के लिये, उनकी विपुलता के लिये, अभ्यास के लिये एवं पूर्णता के लिये रुचि उत्पन्न करता है, उद्योग करता है...अभ्यास करता है।

''भिक्षुओ! उन पाँचों धर्मों के नाश के लिये इन चार सम्यक्प्रधानों की भावना की जाती है॥'' ●

[पूर्ववर्णित स्मृतिप्रस्थानवर्ग के समान ही इस सम्यक्प्रधानवर्ग के अवशिष्ट सभी सूत्रों का 'स्मृतिप्रस्थान' के स्थान पर 'सम्यक्प्रधान' लगा कर विस्तार कर लेना चाहिये।]

१०. चेतोविनिबन्धसूत्र : : पाँच विनिबन्धों के नाशक चार धर्म

१. ''भिक्षुओ! ये पाँच चित्त के विनिबन्ध (आसक्ति-उत्पादक) होते हैं। कौन से पाँच? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु कामभोगों में रागसम्पन्न होता है ...पूर्ववत्...ये पाँच चित्त के विनिबन्ध होते हैं।

२. ''भिक्षुओ! इन पाँच चित्तविनिबन्धों के प्रहाणहेतु इन पाँच सम्यक्प्रधानों की साधना करनी चाहिये। कौन से चार? ...पूर्वसूत्रवत्...।

''भिक्षुओ! इन पाँच चित्तविनिबन्धों के प्रहाणहेतु इन चार सम्यक्प्रधानों की भावना करनी चाहिये॥'' ●

सम्यक्प्रधानवर्ग अष्टम सम्पन्न॥

९. इद्धिपादवग्गो

१. सिक्खादुब्बल्यसुत्तं : १. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, सिक्खादुब्बल्यानि। कतमानि पञ्च? पाणातिपातो ...पे०... सुरामेरयमज्जपमादट्ठानं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्च सिक्खादुब्बल्यानि।

२. ''इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं सिक्खादुब्बल्यानं पहानाय चत्तारो इद्धिपादा [R.464] भावेतब्बा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिपधानसङ्खार- [N.97] समन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि... चित्तसमाधि... वीमंसासमाधिपधान-सङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं सिक्खादुब्बल्यानं पहानाय इमे चत्तारो इद्धिपादा भावेतब्बा'' ति॥

(यथा सतिपट्ठानवग्गे तथा इद्धिपादवसेन वित्थारेतब्बा।) ●

१०. चेतसोविनिबन्धसुत्तं : १. ''पञ्चिमे, भिक्खवे, चेतसोविनिबन्धा। कतमे पञ्च? इध, भिक्खवे, भिक्खु कामेसु अवीतरागो होति ...पे०... इमे खो, भिक्खवे, पञ्च चेतसोविनिबन्धा।

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. शिक्षा (दौर्बल्य) सूत्र, २. नीवरणसूत्र, ३. कामगुणसूत्र, ४. उपादानस्कन्धसूत्र, ५. अवरभागीयसूत्र, ६. गतिसूत्र, ७. मात्सर्यसूत्र, ८. ऊर्ध्वभागीयसूत्र, ९. चेत:खिलसूत्र, एवं १०. चेतोविनिबन्धसूत्र॥ ●

९. ऋद्धिपादवर्ग

१. शिक्षादौर्बल्यसूत्र : : पाँच शिक्षादौर्बल्यनाशक चार धर्म

''भिक्षुओ! ये पाँच शिक्षादौर्बल्य होते हैं। कौन से पाँच? प्राणातिपात ...पूर्ववत्...सुरामैरेय प्रमादस्थान...भिक्षुओ! ये पाँच शिक्षादौर्बल्य कहलाते हैं।

२. ''भिक्षुओ! इन पाँच शिक्षादौर्बल्यों के प्रहाणहेतु चार ऋद्धिपादों की भावना करनी चाहिये। कौन से चार? आयुष्मानो! यहाँ कोई भिक्षु (१) छन्दसमाधिप्रधान संस्कारों से समन्वित ऋद्धिपाद की भावना करता है; (२) चित्तसमाधिप्रधान संस्कारों से समन्वित ऋद्धिपाद की भावना करता है; (३) वीर्यसमाधिप्रधान संस्कारों से समन्वित ऋद्धिपाद की भावना करता है; (४) मीमांसासमाधिप्रधान संस्कारों से समन्वित ऋद्धिपाद की भावना करता है—भिक्षुओ! इन पाँच शिक्षादौर्बल्यों के प्रहाणहेतु इन चार ऋद्धिपादों की भावना करनी चाहिये''॥ ●

*[पूर्ववर्णित **स्मृतिप्रस्थानवर्ग** के समान ही इस ऋद्धिपादवर्ग के अवशिष्ट सूत्रों का 'स्मृतिप्रस्थान' के स्थान पर 'ऋद्धिपाद' शब्द लगा कर विस्तार कर लेना चाहिये]*

१०. चेतोविनिबन्धसूत्र : : पाँच चेतोविनिबन्धों के नाशक चार धर्म

१. ''भिक्षुओ! ये चित्त के विनिबन्ध पाँच हैं। कौन से पाँच? भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु कामभोगों में रागासक्त होता है...पूर्ववत्...भिक्षुओ! ये चित्त के पाँच विनिबन्ध होते हैं।

२. "इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं चेतसोविनिबन्धानं पहानाय इमे चत्तारो इद्धिपादा भावेतब्बा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिपधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि... चित्तसमाधि... वीमंसासमाधिपधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं चेतसोविनिबन्धानं पहानाय इमे चत्तारो इद्धिपादा भावेतब्बा" ति॥ **इद्धिपादवग्गो नवमो॥** ●

तस्सुद्दानं

यथेव सतिपट्ठाना, पधाना चतुरो पि च। [B.256]
चत्तारो इद्धिपादा च, तथेव सम्पयोजये ति॥ ●

१०. रागपेय्यालं

१. "रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय नव धम्मा भावेतब्बा। कतमे नव? [R.465] असुभसञ्ञा, मरणसञ्ञा, आहारे पटिकूलसञ्ञा, सब्बलोके अनभिरतिसञ्ञा, अनिच्चसञ्ञा, अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, दुक्खे अनत्तसञ्ञा, पहानसञ्ञा, विरागसञ्ञा—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे नव धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

२. "रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय नव धम्मा भावेतब्बा। कतमे नव? पठमं झानं, दुतियं झानं, ततियं झानं, चतुत्थं झानं, आकासानञ्चायतनं, विञ्ञाणञ्चायतनं,

---

२. "भिक्षुओ! इन पाँच चित्तविनिबन्धों के प्रहाणहेतु इन चार ऋद्धिपादों की भावना करनी चाहिये। कौन से चार? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु छन्दसमाधि...पूर्ववत्...भावना करनी चाहिये॥"

ऋद्धिपादवर्ग नवम सम्पन्न॥ ●

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

जैसे स्मृतिप्रस्थानवर्ग का जिन सूत्रों से विभाजन कर व्याख्यान किया गया है, उसी प्रकार सम्यक्प्रधानवर्ग एवं ऋद्धिपादवर्ग का भी उन ही सूत्रों से विभक्त कर व्याख्यान समझना चाहिये॥

१०. रागपेय्याल

१. "भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये नौ धर्मों की भावना करनी चाहिये। कौन से नौ धर्म? (१) अशुभसंज्ञा, (२) मरणसंज्ञा, (३) आहार में प्रतिकूलसंज्ञा, (४) सर्वलोकों में अनभिरति (आसक्ति) संज्ञा, (५) अनित्यसंज्ञा, (६) अनित्य में दुःखसंज्ञा, (७) दुःख में अनात्मसंज्ञा, (८) प्रहाणसंज्ञा, एवं (९) विरागसंज्ञा। भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये इन नौ धर्मों की भावना करनी चाहिये"॥

२. "भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये नौ धर्मों की भावना करनी चाहिये। कौन से नौ

[N.98] आकिञ्चञ्ञायतनं, नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं, सञ्ञावेदयितनिरोधो—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे नव धम्मा भावेतब्बा'' ति॥

३-२०. ''रागस्स भिक्खवे, परिञ्ञाय ...पे०... परिक्खयाय ...पे०... पहानाय ...पे०... खयाय ...पे०... वयाय ...पे०... विरागाय ...पे०... निरोधाय ...पे०... चागाय ...पे०... पटिनिस्सग्गाय ...पे०... इमे नव धम्मा भावेतब्बा'' ति॥

२१-३४०. ''दोसस्स ...पे०... मोहस्स... कोधस्स... उपनाहस्स... मक्खस्स... पळासस्स... इस्साय... मच्छरियस्स... मायाय... साठेय्यस्स... थम्भस्स... सारम्भस्स... [R.466] मानस्स... अतिमानस्स... मदस्स... पमादस्स अभिञ्ञाय... पे०... परिञ्ञाय... परिक्खयाय... पहानाय... खयाय... वयाय... विरागाय... निरोधाय... चागाय... पटिनिस्सग्गाय ...पे०... इमे नव धम्मा भावेतब्बा'' ति॥

रागपेय्यालं निट्ठितं॥

नवकनिपातो निट्ठितो॥

धर्म? (१) प्रथम ध्यान, (२) द्वितीय ध्यान, (३) तृतीय ध्यान, (४) चतुर्थ ध्यान, (५) आकाशानन्त्यायतन... (६) विज्ञानानन्त्यायतन, (७) आकिञ्चन्यायतन, (८) नैवसंज्ञानासंज्ञायतन, एवं (९) संज्ञावेदितनिरोध—राग के अभिज्ञान के लिये, भिक्षुओ! इन नौ धर्मों की भावना करनी चाहिये॥

३-२०. ''भिक्षुओ! राग के परिज्ञान के लिये...परिक्षय के लिये...प्रहाण के लिये...क्षय के लिये...व्यय के लिये...विराग के लिये ...पूर्ववत्... निरोध के लिये ...पूर्ववत्... त्याग के लिये ...पूर्ववत्... प्रतिनिसर्ग के लिये ...पूर्ववत्... नौ धर्मों की भावना करनी चाहिये॥''

२१-३४०. ''द्वेष के...पूर्ववत्...मोह के...क्रोध के...उपनाह के...म्रक्ष के...प्रदाश के...ईर्ष्या के...मात्सर्य के...माया के...शाठ्य के...स्तम्भ के...सारम्भ के...मान के...अतिमान के...मद के...प्रमाद के अभिज्ञान के लिये ...पूर्ववत्... परिज्ञान के लिये...परिक्षय के लिये...प्रहाण के लिये...क्षय के लिये...व्यय के लिये...विराग के लिये...निरोध के लिये...त्याग के लिये...प्रतिनिसर्ग के लिये ...पूर्ववत्... इन नौ धर्मों की भावना करनी चाहिये॥''

रागपेय्याल सम्पन्न॥

नवकनिपातपालि समाप्त

१०. दसकनिपातो

१. आनिसंसवग्गो

पठमो पण्णासको

१. किमत्थियसुत्तं : १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा [N.99,B.257,R.Vol.V,1] सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

२. "किमत्थियानि, भन्ते, कुसलानि सीलानि किमानिसंसानी" ति?

"अविप्पटिसारत्थानि खो, आनन्द, कुसलानि सीलानि अविप्पटिसारानिसंसानी" ति।

३. "अविप्पटिसारो पन, भन्ते, किमत्थियो किमानिसंसो" ति?

"अविप्पटिसारो खो, आनन्द, पामोज्जत्थो पामोज्जानिसंसो" ति।

४. "पामोज्जं पन, भन्ते, किमत्थियं किमानिसंसं" ति?

"पामोज्जं खो, आनन्द, पीतत्थं पीतानिसंसं" ति।

---

१०. दशकनिपात

१. आनृशंस्यवर्ग

प्रथम पञ्चाशत्क

१. किमर्थसूत्र : : कुशल धर्मों की साधना का प्रयोजन

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सम्मुख पहुँच कर, उन्हें प्रणाम कर एक तरफ बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यह निवेदन किया—

२. "भन्ते! कुशल धर्मों की साधना किसलिये की जाती है तथा उनका क्या माहात्म्य है?"

"आनन्द! इन कुशल धर्मों की साधना पापधर्मों के पश्चात्ताप-निवारणहेतु की जाती है तथा पापधर्मों के पश्चात्ताप का निवारण ही इनका माहात्म्य है। (१)

३. "भन्ते! पुन: यह पश्चात्ताप का निवारण किस लिये किया जाता है?

आनन्द! पश्चात्ताप का निवारण प्रमोद (आनन्द) के लिये किया जाता है।" (२)

४. "भन्ते! इस प्रमोद का क्या प्रयोजन है... ?"

"आनन्द! प्रमोद की साधना प्रीति-उत्पाद हेतु की जाती है...।" (३)

५. ''पीति पन, भन्ते, किमत्थिया किमानिसंसा'' ति?

''पीति खो, आनन्द, पस्सद्धत्था पस्सद्धानिसंसा'' ति।

[B.258] ६. ''पस्सद्धि, पन, भन्ते, किमत्थिया किमानिसंसा'' ति?

''पस्सद्धि खो, आनन्द, सुखत्था सुखानिसंसा'' ति।

७. ''सुखं पन, भन्ते, किमत्थियं किमानिसंसं'' ति?

[R.2] ''सुखं खो, आनन्द, समाधत्थं समाधानिसंसं'' ति।

८. ''समाधि पन, भन्ते, किमत्थियो किमानिसंसो'' ति?

''समाधि खो, आनन्द, यथाभूतञाणदस्सनत्थो यथाभूतञाणदस्सनानिसंसो'' ति।

९. ''यथाभूतञाणदस्सनं पन, भन्ते, किमत्थियं किमानिसंसं'' ति?

[N.100] ''यथाभूतञाणदस्सनं खो, आनन्द, निब्बिदाविरागत्थं निब्बिदाविरागानिसंसं'' ति।

१०. ''निब्बिदाविरागो पन, भन्ते, किमत्थियो किमानिसंसो'' ति?

''निब्बिदाविरागो खो, आनन्द, विमुत्तिञाणदस्सनत्थो विमुत्तिञाणदस्सनानिसंसो।

११. ''इति खो, आनन्द, कुसलानि सीलानि अविप्पटिसारत्थानि अविप्पटिसारानिसंसानि; अविप्पटिसारो पामोज्जत्थो पामोज्जानिसंसो; पामोज्जं पीतत्थं पीतानिसंसं; पीति पस्सद्धत्था पस्सद्धानिसंसा; पस्सद्धि सुखत्था सुखानिसंसा; सुखं समाधत्थं समाधा-

---

५. ''भन्ते! इस प्रीति-उत्पाद का क्या प्रयोजन है... ?''

''आनन्द! प्रीति-उत्पाद का चित्त में शान्ति या प्रश्रब्धि (स्थिरता) लाना प्रयोजन है... ।'' (४)

६. ''भन्ते! इस प्रश्रब्धि की साधना क्यों की जाती है... ?''

''आनन्द! प्रश्रब्धि-साधना का प्रयोजन है—सुखप्राप्ति... ।'' (५)

७. ''और, भन्ते! यह सुखसाधना किसलिये की जाती है... ?''

''आनन्द! यह सुखसाधना समाधि में कुशलताप्राप्ति हेतु की जाती है... ।'' (६)

८. ''तथा, भन्ते! यह समाधिसाधना किस प्रयोजन से की जाती है... ?''

''आनन्द! यह समाधिसाधना यथाभूत (सत्य) ज्ञान के साक्षात्कार हेतु की जाती है तथा यथाभूतज्ञानदर्शन ही इसका माहात्म्य है।'' (७)

९. ''तब, भन्ते! इस यथाभूतज्ञानदर्शन की साधना का क्या प्रयोजन है... ?''

''आनन्द! निर्विदा (संसार के प्रति अरुचि) एवं वैराग्य की प्राप्ति हेतु यथाभूतज्ञानदर्शन की साधना की जाती है... ।'' (८)

१०. ''तो, भन्ते! इस निर्विदा एवं वैराग्य की साधना क्यों की जाती है... ?''

''आनन्द! विमुक्तिज्ञान के साक्षात्कार हेतु निर्विदा एवं वैराग्य की साधना की जाती है तथा इन तक पहुँचना ही इसका माहात्म्य है।'' (९)

११. ''इस प्रकार, आनन्द! कुशलशील की साधना पापधर्मों के पश्चात्ताप हेतु की जाती है, यही इसका माहात्म्य है। प्रामोद्यप्राप्तिहेतु पापधर्मों का पश्चात्ताप किया जाता है। प्रामोद्य प्रीति

निसंसं; समाधि यथाभूतञाणदस्सनत्थो यथाभूतञाणदस्सनानिसंसो; यथाभूतञाणदस्सनं निब्बिदाविरागत्थं निब्बिदाविरागानिसंसं; निब्बिदाविरागो विमुत्तिञाणदस्सनत्थो विमुत्तिञाणदस्सनानिसंसो। इति खो, आनन्द, कुसलानि सीलानि अनुपुब्बेन अग्गाय परेन्ती'' ति॥

२. चेतनाकरणीयसुत्तं : १. ''सीलवतो, भिक्खवे, सीलसम्पन्नस्स न चेतनाय करणीयं—'अविप्पटिसारो मे उप्पज्जतू' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं सीलवतो सीलसम्पन्नस्स अविप्पटिसारो उप्पज्जति। अविप्पटिसारिस्स, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'पामोज्जं मे उप्पज्जतू' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं अविप्पटिसारिस्स पामोज्जं जायति। पमुदितस्स, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'पीति मे उप्पज्जतू' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं पमुदितस्स पीति उप्पज्जति। पीतिमनस्स, भिक्खवे, न चेतनाय [R.3] करणीयं—'कायो मे पस्सम्भतू' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति। पस्सद्धकायस्स, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'सुखं वेदियामी' [B.259] ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं पस्सद्धकायो सुखं वेदियति। सुखिनो, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'चित्तं मे समाधियतू' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं सुखिनो चित्तं समाधियति। समाहितस्स, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'यथाभूतं जानामि पस्सामी' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं समाहितो यथाभूतं जानाति पस्सति। यथाभूतं, जानतो पस्सतो न [N.101] चेतनाय करणीयं—'निब्बिन्दामि विरज्जामी' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं यथाभूतं जानं

के लिये...प्रीति प्रश्रब्धि के लिये...प्रश्रब्धि सुख के लिये...सुख समाधि के लिये...समाधि यथाभूत ज्ञानदर्शन के लिये...यथाभूतज्ञानदर्शन निर्विदा एवं विराग के लिये...निर्विदा एवं विराग की साधना विमुक्तिज्ञानदर्शन के लिये...। इस प्रकार, आनन्द! ये कुशलशील ही साधक को क्रमशः अर्हत्त्व की ओर बढ़ाते हैं॥'' (१०) ●

२. चेतनाकरणीयसूत्र : : अपार से पार जाने के साधन दश धर्म

१. ''भिक्षुओ! शीलवान् एवं शीलसम्पन्न साधक को अपने मन में यह कभी नहीं सोचना चाहिये कि मुझे 'अविप्रतिसार' (अपश्चात्ताप) उत्पन्न हो; क्योंकि, भिक्षुओ! उस शीलवान् भिक्षु को स्वभावतः ही मन में अविप्रतिसार आने लगेगा। इसी प्रकार अविप्रतिसार तक पहुँचे साधक को अपने मन में यह कभी नहीं लाना चाहिये कि मुझे 'प्रामोद्य' (आनन्द) उत्पन्न हो; क्योंकि, भिक्षुओ! अविप्रतिसारी होने पर उसके मन में स्वभावतः ही प्रामोद्य की उत्पत्ति होने लगेगी। इसी प्रकार प्रमुदित साधक को यह भी मन में नहीं लाना चाहिये कि मुझे 'प्रीति' उत्पन्न हो; क्योंकि...; प्रीतियुक्तमनवाले साधक को यह भी मन में नहीं लाना चाहिये कि मेरे काय में 'प्रश्रब्धि' उत्पन्न हो; क्योंकि...; प्रश्रब्धकाययुक्त साधक को भी यह नहीं सोचना चाहिये कि मुझे 'सुख' उत्पन्न हो; क्योंकि...; सुखसम्पन्न साधक को मन में यह कभी नहीं सोचना चाहिये कि अब मैं 'समाधि' की ओर अग्रसर होऊँ, क्योंकि...; समाहित साधक को भी यह नहीं सोचना चाहिये कि मैं यथाभूत सत्य को जान लूँ, उसका साक्षात्कार कर लूँ; क्योंकि...; यथाभूत सत्य के साक्षात्कर्त्ता साधक को भी यह नहीं मन में लाना चाहिये कि मुझमें निर्विदा एवं वैराग्य उत्पन्न हों; क्योंकि...; निर्विण्ण

पस्सं निब्बिन्दति विरज्जति। निब्बिन्नस्स, भिक्खवे, विरत्तस्स न चेतनाय करणीयं— 'विमुत्तिञाणदस्सनं सच्छिकरोमी' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं निब्बिन्नो विरत्तो विमुत्तिञाणदस्सनं सच्छिकरोति।

२. "इति खो, भिक्खवे, निब्बिदाविरागो विमुत्तिञाणदस्सनत्थो विमुत्तिञाण-दस्सनानिसंसो; यथाभूतञाणदस्सनं निब्बिदाविरागत्थं निब्बिदाविरागानिसंसं; समाधि यथाभूतञाणदस्सनत्थो यथाभूतञाणदस्सनानिसंसो; सुखं समाधत्थं समाधानिसंसं; पस्सद्धि सुखत्था सुखानिसंसा; पीति पस्सद्धत्था पस्सद्धानिसंसा; पामोज्जं पीतत्थं पीतानिसंसं; अविप्पटिस्सारो पामोज्जत्थो पामोज्जानिसंसो; कुसलानि सीलानि अविप्पटिसारत्थानि [R.4] अविप्पटिसारानिसंसानि। इति खो, भिक्खवे, धम्मा धम्मे अभिसन्देन्ति, धम्मा धम्मे परिपूरेन्ति अपारा पारं गमनाया" ति॥ ●

३. पठमउपनिससुत्तं : १. "दुस्सीलस्स, भिक्खवे, सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो; अविप्पटिसारे असति अविप्पटिसारविप्पन्नस्स हतूपनिसं होति पामोज्जं; पामोज्जे असति पामोज्जविपन्नस्स हतूपनिसा होति पीति; पीतिया असति पीतिविपन्नस्स हतूपनिसा होति पस्सद्धि; पस्सद्धिया असति पस्सद्धिविपन्नस्स हतूपनिसं होति सुखं; सुखे असति सुखविपन्नस्स हतूपनिसो होति सम्मासमाधि; सम्मासमाधिम्हि

(अरुचिसम्पन्न) एवं वैराग्यवान् साधक को यह नहीं सोचना चाहिये कि उसको विमुक्तिज्ञान का साक्षात्कार हो जाय; क्योंकि, भिक्षुओ! उस निर्विण्ण एवं वैराग्यवान् पुरुष की स्वभावतः ही विमुक्तिज्ञानदर्शन की ओर प्रवृत्ति होने लगेगी।

२. (अतः) "भिक्षुओ! यह समझ लो कि इन निर्विदा एवं वैराग्य की साधना विमुक्ति-ज्ञानदर्शन के लिये ही की जाती है, यही इसका फल है। यथाभूत ज्ञानदर्शन की साधना निर्विदा एवं वैराग्य की प्राप्ति के लिये की जाती है, यही इसका फल है। सुख की साधना समाधि-प्राप्ति के लिये की जाती है; यही इसका फल है। इसी प्रकार प्रश्रब्धि की साधना सुख-प्राप्ति के लिये की जाती है, यही इसका फल है। प्रश्रब्धि की प्राप्ति के लिये प्रीति की साधना की जाती है, यही इसका फल है। प्रीति की प्राप्ति के लिये प्रामोद्य की साधना की जाती है, प्रामोद्य ही इसका फल है। इस प्रामोद्य की प्राप्ति के लिये ही अविप्रतिसार की भावना की जाती है, यह अविप्रतिसार ही इसका फल है और कुशलशीलों की साधना अविप्रतिसार के लिये की जाती है, ये कुशलशील ही इसके फल हैं। इस प्रकार, भिक्षुओ! ये धर्म अन्य धर्मों के परिणाम हैं, पहले धर्म दूसरे धर्म को पूर्ण करते हैं। इसके फलस्वरूप साधक अपार से पार (अर्हत्त्व) तक पहुँचने में समर्थ हो पाता है॥" ●

३. प्रथम उपनिषत्सूत्र : : उत्पत्तिकारणविहीन दश धर्म

१. "भिक्षुओ! शीलविनष्ट या दुःशील भिक्षु को अविप्रतिसार उत्पन्न ही नहीं हो पाता; अविप्रतिसार के न होने पर उसको प्रामोद्य नहीं हो पाता; प्रामोद्य के न रहने पर प्रीति उत्पन्न नहीं हो पाती; प्रीतिरहित को प्रश्रब्धि का अभाव हो जाता है; प्रश्रब्धि के विना सुख की उत्पत्ति नहीं होती; सुख के विना सम्यक्समाधि नहीं हो सकती; सम्यक्समाधि के विना यथाभूतज्ञानदर्शन भी

असति सम्मासमाधिविपन्नस्स हतूपनिसं होति यथाभूतञाणदस्सनं; यथाभूतञाणदस्सने असति यथाभूतञाणदस्सनविपन्नस्स हतूपनिसो होति निब्बिदाविरागो; निब्बिदाविरागे असति निब्बिदाविरागविपन्नस्स हतूपनिसं होति विमुत्तिञाणदस्सनं। सेय्यथापि, [B.260] भिक्खवे, रुक्खो साखापलासविपन्नो। तस्स पपटिका पि न पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि... सारो पि न पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, दुस्सीलस्स [N.102] सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो; अविप्पटिसारे असति अविप्पटिसारविपन्नस्स हतूपनिसं होति ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं।

२. "सीलवतो, भिक्खवे, सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो; अविप्पटिसारे सति अविप्पटिसारसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति पामोज्जं; पामोज्जे सति पामोज्जसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति पीति; पीतिया सति पीतिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति पस्सद्धि; पस्सद्धिया सति पस्सद्धिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति सुखं; सुखे सति सुखसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति सम्मासमाधि; सम्मासमाधिम्हि सति सम्मा- [R.5] समाधिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति यथाभूतञाणदस्सनं; यथाभूतञाणदस्सने सति यथाभूतञाणदस्सनसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति निब्बिदाविरागो; निब्बिदाविरागे सति निब्बिदाविरागसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति विमुत्तिञाणदस्सनं। सेय्यथापि, भिक्खवे, रुक्खो साखापलाससम्पन्नो। तस्स पपटिका पि पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि... सारो पि पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, सीलवतो सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो; अविप्पटिसारे सति अविप्पटिसारसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं" ति॥ ●

नहीं हो सकता; और यथाभूतज्ञानदर्शन के न होने पर निर्विदा एवं वैराग्य का भी अभाव ही रहेगा; इसी प्रकार निर्विदा एवं वैराग्य के अभाव में विमुक्तिज्ञान का साक्षात्कार भी नहीं हो पायगा भिक्षुओ! जैसे कोई वृक्ष शाखापत्रविहीन हो, उसकी स्थूल एवं सूक्ष्म त्वचा (छाल) भी न हो...वैसे ही, भिक्षुओ! दुःशील एवं शीलविनष्ट का अविप्रतिसार उत्पत्तिविहीन हो जाता है ...पूर्ववत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन भी उत्पत्ति के अयोग्य हो जाता है।

२. (इसके विपरीत) "भिक्षुओ! शीलवान् शीलसम्पन्न भिक्षु को अविप्रतिसार उत्पन्न होगा ही; इस अविप्रतिसार के होने पर प्रामोद्य की उत्पत्ति सम्भव है; प्रामोद्यवान् को प्रीति उत्पन्न होगी; प्रीतिवान्, प्रीतिसम्पन्न को कायप्रश्रब्धि होगी; इस कायप्रश्रब्धि से सुखोत्पाद; एवं सुखोत्पाद से सम्यक्समाधि भावित होगी; सम्यक्समाधिसम्पन्न को ही यथाभूत ज्ञान का साक्षात्कार सम्भव होगा; यथाभूतज्ञानदर्शनवाले साधक को निर्विदा एवं वैराग्य उत्पन्न होंगे; तथा निर्विदा-वैराग्यसम्पन्न भिक्षु को विमुक्तिज्ञान का साक्षात्कार होगा ही। जैसे, भिक्षुओ! कोई वृक्ष शाखा एवं पत्रों से युक्त हो, उसकी स्थूल एवं सूक्ष्म त्वचा भी सम्यक्तया जीवित हों...; वैसे ही, भिक्षुओ! शीलवान् शीलसम्पन्न भिक्षु को अविप्रतिसार उत्पन्न होगा ही, और उस अविप्रतिसार के होने पर उस भिक्षु को...पूर्ववत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन होगा ही॥" ●

४. दुतियउपनिससुत्तं : १. तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि— "दुस्सीलस्स, आवुसो, सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो; अविप्पटिसारे असति अविप्पटिसारविपन्नस्स हतूपनिसं होति ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं। सेय्यथापि, आवुसो, रुक्खो साखापलासविपन्नो। तस्स पपटिका पि न पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि... सारो पि न पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, आवुसो, दुस्सीलस्स सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो; अविप्पटिसारे असति अविप्पटिसारविपन्नस्स हतूपनिसं होति ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं।

[B.261] २. "सीलवतो, आवुसो, सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो; [N.103] अविप्पटिसारे सति अविप्पटिसारसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति ...पे०... विमुत्ति-ञाणदस्सनं। सेय्यथापि, आवुसो, रुक्खो साखापलाससम्पन्नो। तस्स पपटिका पि पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि... सारो पि पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, आवुसो, सीलवतो सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो; अविप्पटिसारे सति अविप्पटिसार-सम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं" ति॥ ●

५.ततियउपनिससुत्तं : १. तत्र खो आयस्मा आनन्दो भिक्खू आमन्तेसि— [R.6] "दुस्सीलस्स, आवुसो, सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो; अविप्पटि-सारे असति अविप्पटिसारविप्पन्नस्स हतूपनिसं होति पामोज्जं; पामोज्जे असति पामोज्ज-विपन्नस्स हतूपनिसा होति पीति; पीतिया असति पीतिविपन्नस्स हतूपनिसा होति पस्सद्धि; पस्सद्धिया असति पस्सद्धिविपन्नस्स हतूपनिसं होति सुखं; सुखे असति सुखविपन्नस्स हतूपनिसो होति सम्मासमाधि; सम्मासमाधिम्हि असति सम्मासमाधिविपन्नस्स हतूपनिसं होति यथाभूतञाणदस्सनं; यथाभूतञाणदस्सने असति यथाभूतञाणदस्सनविपन्नस्स हतूप-निसो होति निब्बिदाविरागो; निब्बिदाविरागे असति निब्बिदाविरागविपन्नस्स हतूपनिसं होति विमुत्तिञाणदस्सनं। सेय्यथापि, आवुसो, रुक्खो साखापलासविपन्नो। तस्स पपटिका पि न

---

४. द्वितीय उपनिषत्सूत्र : : उत्पत्तिकारणविहीन दश धर्म

१. वहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को यह धर्मप्रवचन किया—"आयुष्मानो! शीलविनष्ट या दुःशील भिक्षु को अविप्रतिसार उत्पन्न ही नहीं हो पाता ...पूर्वसूत्रवत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन होगा ही॥" ●

(यहाँ, 'भिक्षुओं' के स्थान पर 'आयुष्मानो' लगाकर पूर्वसूत्र का अविकल हिन्दी रूपान्तरण कर लें।)

५. तृतीय उपनिषत्सूत्र : : उत्पादकारणविहीन दश धर्म

१. आयुष्मान् आनन्द ने भिक्षुओं को यह धर्मप्रवचन किया—"आयुष्मानो! विनष्टशील एवं दुःशील साधक को अविप्रतिसार उत्पन्न ही नहीं हो पाता...पूर्वसूत्रवत्...विमुक्तिज्ञानदर्शन होगा ही॥" ●

पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि... सारो पि न पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, आवुसो, दुस्सीलस्स सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो; अविप्पटिसारे असति अविप्पटिसारविपन्नस्स हतूपनिसं होति ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं।

२. "सीलवतो, आवुसो, सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो; अविप्पटिसारे सति अविप्पटिसारसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति पामोज्जं; पामोज्जे सति पामोज्जसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति पीति; पीतिया सति पीतिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति पस्सद्धि; पस्सद्धिया सति पस्सद्धिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति सुखं; सुखे सति सुखसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति सम्मासमाधि; सम्मासमाधिम्हि सति सम्मासमाधि-सम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति यथाभूतञाणदस्सनं; यथाभूतञाणदस्सने सति यथाभूत-ञाणदस्सनसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति निब्बिदाविरागो; निब्बिदाविरागे [N.104,B.262] सति निब्बिदाविरागसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति विमुत्तिञाणदस्सनं। सेय्यथापि, आवुसो, रुक्खो साखापलाससम्पन्नो। तस्स पपटिका पि पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि [R.7] सारो पि पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, आवुसो, सीलवतो सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो; अविप्पटिसारे सति अविप्पटिसारसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं" ति॥ ●

६. **समाधिसुत्तं :** १. अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि ...पे०... एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

२. "सिया नु खो, भन्ते, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स, न तेजस्मिं तेजोसञ्ञी अस्स, न वायस्मिं वायोसञ्ञी अस्स, न आकासानञ्चायतने आकासानञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न विञ्ञाणञ्चायतने विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न आकिञ्चञ्ञायतने आकिञ्चञ्ञायतन-सञ्ञी अस्स, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न इधलोके इधलोकसञ्ञी अस्स, न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा" ति?

(पूर्वसूत्र के समान ही इस सूत्र का भी अविकल अनुवाद समझ लें।)

६. समाधिसूत्र : :विशेष समाधि द्वारा विशेष साधना-स्थिति

१. तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सम्मुख गये...पूर्ववत्...आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से अपनी यह जिज्ञासा प्रकट की—

२. "भन्ते! क्या साधक के द्वारा समाधि के किसी ऐसे प्रकार की भी साधना सम्भव है, जिसका अभ्यास करने पर उस साधक को न पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा रह जाय, न जल में जलसंज्ञा रह जाय, न तेज में तेज:संज्ञा रह जाय, न वायु में वायुसंज्ञा रह जाय, न आकाशानन्त्यायतन में आकाशानन्त्यायतनसंज्ञा रह जाय, न विज्ञानान्त्यायतन में विज्ञानानन्त्यायतनसंज्ञा रह जाय, न नैवसंज्ञानासंज्ञायतन में नैवसंज्ञानासंज्ञायतनसंज्ञा रह जाय, न इस लोक में इहलोकसंज्ञा रह जाय, और न परलोक में परलोकसंज्ञा रह जाय, यद्यपि वह संज्ञावान् रहे?"

"सिया, आनन्द, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स, न तेजस्मिं तेजोसञ्ञी अस्स, न वायस्मिं वायोसञ्ञी अस्स, न आकासानञ्चायतने आकासानञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न विञ्ञाणञ्चायतने विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न आकिञ्चञ्ञायतने आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न इधलोके इधलोकसञ्ञी अस्स, न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा" ति।

३. "यथा कथं पन, भन्ते, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स... न परलोके परलोकसञ्ञी [N.105,R.8,B.263] अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा" ति?

"इधानन्द, भिक्खु एवंसञ्ञी होति—'एतं सन्तं एतं पणीतं यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। एवं खो, आनन्द, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं, आपोसञ्ञी अस्स, न तेजस्मिं तेजोसञ्ञी अस्स, न वायस्मिं वायोसञ्ञी अस्स, न आकासानञ्चायतने आकासानञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न विञ्ञाणञ्चायतने विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न आकिञ्चञ्ञायतने आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न इधलोके इधलोकसञ्ञी अस्स, न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा" ति॥ ●

७. सारिपुत्तसुत्तं : १. अथ खो आयस्मा आनन्दो येनायस्मा सारिपुत्तो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मता सारिपुत्तेन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो आयस्मन्तं सारिपुत्तं एतदवोच—

"हाँ, आनन्द! साधक के द्वारा समाधि के किसी ऐसे प्रकार की भी साधना सम्भव है, जिसका अभ्यास करने पर उस साधक को न पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा रह जाय...पूर्ववत्...यद्यपि वह संज्ञावान् रहे।"

३. "भन्ते! वह किस प्रकार की समाधिभावना है, जिसका अभ्यास करने पर उस साधक को न पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा रह जाय...पूर्ववत्...यद्यपि वह संज्ञावान् रहे?"

"यहाँ (वैसी समाधिभावना करते समय) आनन्द! जो साधक भिक्षु ऐसी संज्ञा (चिन्तन) वाला हो—'यही शान्त है, यही उत्तम है कि सब संस्कारों का शमन हो जाय, सभी मानसिक विकारों (उपधि) को त्याग दिया जाय, जिसे तृष्णा का क्षय', 'निरोध' या 'निर्वाण' कहते हैं।' आनन्द! ऐसे भिक्षु को वह समाधिप्रकार अभ्यस्त हो जाता है जिसके कारण पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा नहीं रहती... पूर्ववत्...परलोक में परलोकसंज्ञा नहीं रहती, यद्यपि वह संज्ञावान् रहता है॥" ●

७. सारिपुत्रसूत्र : :विशेष समाधि द्वारा विशेष साधना-स्थिति

१. तब आयुष्मान् आनन्द आयुष्मान् सारिपुत्र के पास गये...पूर्ववत्...आयुष्मान् सारिपुत्र से यह पूछा—

२. ''सिया नु खो, आवुसो सारिपुत्त, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स, न तेजस्मिं तेजोसञ्ञी अस्स, न वायस्मिं वायोसञ्ञी अस्स, न आकासानञ्चायतने आकासानञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न विञ्ञाणञ्चायतने विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न आकिञ्चञ्ञायतने [R.9] आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न इधलोके इधलोकसञ्ञी अस्स, न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा'' ति?

''सिया, आवुसो आनन्द, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन [B.264] अस्सा'' ति।

३. ''यथा कथं पन, आवुसो सारिपुत्त, सिया भिक्खुनो तथारूपो [N.106] समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... सञ्ञी च पन अस्सा'' ति?

''एकमिदाहं, आवुसो आनन्द, समयं इधेव सावत्थियं विहरामि अन्धवनस्मिं। तत्थाहं तथारूपं समाधिं समापज्जिं यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अहोसिं, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अहोसिं, न तेजस्मिं तेजोसञ्ञी अहोसिं, न वायस्मिं वायोसञ्ञी अहोसिं, न आकासानञ्चायतने आकासानञ्चायतनसञ्ञी अहोसिं, न विञ्ञाणञ्चायतने विञ्ञाणञ्चा-यतनसञ्ञी अहोसिं, न आकिञ्चञ्ञायतने आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञी अहोसिं, न नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञी अहोसिं, न इधलोके इधलोकसञ्ञी अहोसिं, न परलोके परलोकसञ्ञी अहोसिं; सञ्ञी च पन अहोसिं'' ति।

४. ''किंसञ्ञी पनायस्मा सारिपुत्तो तस्मिं समये अहोसी'' ति?

'''भवनिरोधो निब्बानं भवनिरोधो निब्बानं' ति खो मे, आवुसो, अञ्ञा व सञ्ञा

---

२. ''आयुष्मन् सारिपुत्र! क्या किसी साधक भिक्षु को ऐसे समाधि प्रकार का भी लाभ हो सकता है, जिसका अभ्यास करने से उसको पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा न रह जाय...पूर्ववत्...यद्यपि वह संज्ञावान् रहे?''

''हाँ, आनन्द! उस साधक भिक्षु को ऐसे समाधि प्रकार का भी लाभ हो सकता है, जिसका अभ्यास करने पर उसको पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा न रह जाय...पूर्ववत्...यद्यपि वह संज्ञावान् रहता है।

३. ''कैसे, आयुष्मन् सारिपुत्र! उस भिक्षु को ऐसे समाधिप्रकार का लाभ हो सकता है, जिसका...पूर्ववत्...यद्यपि वह संज्ञावान् रहता है?''

''आयुष्मन् आनन्द! एक समय मैं इसी श्रावस्ती के अन्धवन में साधनारत था। वहाँ मैं ऐसी उस समाधि में लीन हो गया, जिसमें मेरी न पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा रह गयी थी...यद्यपि मैं उस समय भी संज्ञावान् था।''

४. ''आयुष्मन् सारिपुत्र! उस समय आपको क्या संज्ञा (मन में भावना) हो रही थी?''

उप्पज्जति अञ्ञा व सञ्ञा निरुज्झति। सेय्यथापि, आवुसो, सकलिकग्गिस्स झायमानस्स अञ्ञा व अच्चि उप्पज्जति अञ्ञा व अच्चि निरुज्झति; एवमेव खो, आवुसो, 'भवनिरोधो [R.10] निब्बानं भवनिरोधो निब्बानं' ति अञ्ञा व सञ्ञा उप्पज्जति अञ्ञा व सञ्ञा निरुज्झति। 'भवनिरोधो निब्बानं' ति सञ्ञी च पनाहं, आवुसो, तस्मिं समये अहोसिं'' ति॥

८. झानसुत्तं : १. ''सद्धो च, भिक्खवे, भिक्खु होति, नो च सीलवा; एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्सं, सीलवा चा' ति! यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो च होति सीलवा च, एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति। [B.265] २. ''सद्धो, च भिक्खवे, भिक्खु होति सीलवा च, नो च बहुस्सुतो ...पे०... बहुस्सुतो च, नो च धम्मकथिको... धम्मकथिको च, नो च परिसावचरो... परिसावचरो [N.106] च, नो च विसारदो परिसाय धम्मं देसेति... विसारदो च परिसाय धम्मं देसेति, नो च विनयधरो... विनयधरो च, नो च आरञ्ञको पन्तसेनासनो... आरञ्ञको च पन्त-सेनासनो, नो च चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी... चतुन्नं च झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, नो च आसवानं खया अनासवं चेतो-विमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। एवं सो

''आयुष्मन् आनन्द! उस समय मेरे मन में 'भवनिरोध ही निर्वाण है', 'भवनिरोध ही निर्वाण है'—ऐसी अन्य संज्ञा का ही उत्पाद एवं निरोध हो रहा था। जैसे कि आयुष्मन् आनन्द! लकड़ी के छोटे टुकड़ों की जलती हुई अग्नि का अन्य प्रकार का ही उत्पाद एवं निरोध होता है; उसी प्रकार उस समय, आयुष्मन् आनन्द! मेरे मन में 'भवनिरोध ही निर्वाण है'—इस संज्ञा का ही उत्पाद एवं निरोध हो रहा था॥''

●

८. ध्यानसूत्र : : भिक्षु के लिये आवश्यक दश धर्म

१. ''भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु केवल श्रद्धालु होता है, शीलवान् नहीं होता तो वह अपनी साधना में एक अङ्ग से अपरिपूर्ण ही रह जाता है। अतः उसको अपनी उस साधना के अपरिपूर्ण अङ्ग के विषय में यह विचार करना चाहिये—'कैसे मैं श्रद्धालु भी होऊँ और शीलवान् भी। भिक्षुओ! जब वह भिक्षु अभ्यास करते-करते अपनी साधना के इन दोनों अङ्गों को पूर्ण कर लेता है तब उसकी साधना दोनों अङ्गों से पूर्ण कहलाती है।

२. ''भिक्षुओ! कोई कोई भिक्षु श्रद्धालु भी होता है और शीलवान् भी; परन्तु बहुश्रुत नहीं होता...पूर्ववत्...बहुश्रुत भी होता है, परन्तु धर्मकथिक नहीं होता...धर्मकथिक भी होता है, परन्तु परिषदवचर (सभाकुशल) नहीं होता...परिषदवचर होता है, परन्तु परिषद् में बैठकर धर्मदेशना में कुशल नहीं होता...धर्मदेशना में भी कुशल होता है, परन्तु वह विनयधर नहीं होता...विनयधर भी होता है, परन्तु अरण्य में या एकान्त में अपना शयनासन रखने में उत्साही नहीं होता...शयनासन में उत्साह रखने पर भी वह प्रत्यक्ष सुखदायक आध्यात्मिक चारों ध्यानों का सुखलाभी नहीं होता...सुखलाभी होने पर भी आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म

तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्सं, सीलवा च, बहुस्सुतो च, धम्मकथिको च, परिसावचरो च, विसारदो च परिसाय धम्मं देसेय्यं, विनयधरो च, आरञ्ञको च पन्तसेनासनो, चतुन्नं च झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्म- [R.11] सुखविहारानं निकामलाभी अस्सं अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, आसवानं च खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति।

३. "यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो च होति, सीलवा च, बहुस्सुतो च, धम्मकथिको च, परिसावचरो च, विसारदो च परिसाय धम्मं देसेति, विनयधरो च, आरञ्ञको च पन्तसेनासनो, चतुन्नं च झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, आसवानं च खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति; एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु समन्तपासादिको च होति सब्बाकारपरिपूरो च" ति॥ ●

९. **सन्तविमोक्खसुत्तं** : १. "सद्धो च, भिक्खवे, भिक्खु होति, नो च सीलवा ...पे०... सीलवा च, नो च बहुस्सुतो... बहुस्सुतो च, नो च धम्मकथिको... धम्मकथिको च, नो च परिसावचरो... परिसावचरो च, नो च विसारदो परिसाय धम्मं देसेति... विसारदो च परिसाय धम्मं देसेति, नो च विनयधरो... विनयधरो च, नो च [B.266,N.108] आरञ्ञको पन्तसेनासनो... आरञ्ञको च पन्तसेनासनो, नो च ये ते सन्ता विमोक्खा अतिक्कम्म रूपे आरुप्पा ते कायेन फुसित्वा विहरति... ये ते सन्ता विमोक्खा अतिक्कम्म रूपे

में जानकर साक्षात् कर साधना नहीं कर पाता; अत: वह इस एक अङ्ग से अपनी साधना में अपरिपूर्ण कहलाता है। अत: उसको इस विषय में यह विचार करना चाहिये—'क्यों न मैं श्रद्धालु एवं शीलवान् भी बनूँ, बहुश्रुत एवं धर्मकथिक भी बनूँ, सभाचतुर एवं परिषद् में बैठकर कुशल धर्मोपदेशक बनूँ, विनयधर एवं अरण्य में एकान्त शयनासन लगाऊँ, चार ध्यानों का सुखलाभी एवं आश्रवक्षय से...साक्षात् कर प्राप्त कर साधना करूँ।'

३. "जब, भिक्षुओ! वह साधक भिक्षु अपना ऐसा सङ्कल्प दृढ़कर श्रद्धावान्, शीलवान्... साक्षात् कर पर्याप्त कर साधना करता है, तब वह अपनी साधना के समस्त अङ्गों में परिपूर्ण माना जाता है। भिक्षुओ! इन दश अङ्गों से युक्त भिक्षु ही सबको प्रसन्न रखनेवाला (समन्तप्रासादिक) तथा साधना के सब आकारों का पूर्ण कर लेनेवाला माना जाता है। ●

९. शान्तविमोक्षसूत्र : : भिक्षु के लिये आवश्यक दश धर्म

१. "भिक्षुओ! कोई भिक्षु श्रद्धावान् होता है, परन्तु शीलवान् नहीं होता...शीलवान् होता है, परन्तु बहुश्रुत नहीं होता...बहुश्रुत होता है, परन्तु धर्मकथिक नहीं होता...धर्मकथिक होता हुआ सभाचतुर नहीं होता...सभाचतुर होता हुआ भी वहाँ कुशलतापूर्वक धर्मदेशना नहीं कर पाता... धर्मदेशना करता हुआ भी विनयधर नहीं होता...विनयधर होते हुए भी अरण्य में या एकान्त में

[B.12] आरुप्पा ते च कायेन फुसित्वा विहरति, नो च आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्सं, सीलवा च, बहुस्सुतो च, धम्मकथिको च, परिसवाचरो च, विसारदो च परिसाय धम्मं देसेय्यं, विनयधरो च, आरञ्ञको च पन्तसेनासनो, ये ते सन्ता विमोक्खा अतिक्कम्म रूपे आरुप्पा ते च कायेन फुसित्वा विहरेय्यं, आसवानं च खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति।

२. " यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो च होति, सीलवा च, बहुस्सुतो च, धम्मकथिको च, परिसावचरो च, विसारदो च परिसाय धम्मं देसेति, विनयधरो च, आरञ्ञको च पन्तसेनासनो, ये ते सन्ता विमोक्खा अतिक्कम्म रूपे आरुप्पा ते च कायेन फुसित्वा विहरति, आसवानं च खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति; एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु समन्तपासादिको च होति सब्बाकारपरिपूरो चा" ति॥ ●

१०. विज्जासुत्तं : १. "सद्धो च, भिक्खवे, भिक्खु होति, नो च सीलवा। एवं सो [R.13] तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्सं सीलवा चा' ति! यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो च होति सीलवा च, एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति।

२. "सद्धो च, भिक्खवे, भिक्खु होति सीलवा च, नो च बहुस्सुतो... बहुस्सुतो च,

---

शयनासन लगाने में उत्सुक नहीं होता...शयनासन लगाने में उत्सुक होते हुए भी शान्त विमोक्ष धर्मों में रूपसंज्ञा को अतिक्रान्त कर अरूप धर्मों का काया से स्पर्श कर साधना नहीं कर पाता...ऐसी साधना करते हुए भी आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को प्रत्यक्षतः स्वयं जानकर प्राप्त कर विहार नहीं कर पाता। इस प्रकार वह अपनी साधना में इस अङ्ग से अपरिपूर्ण रह जाता है। तब उसको इस अङ्ग की पूर्ति के लिये यह चिन्तन करना चाहिये—'क्यों न मैं शीलवान्, श्रद्धावान् बनूँ... पूर्ववत्...प्रत्यक्षतः स्वयं जानकर प्राप्त कर साधना करूँ।'

२. "भिक्षुओ! जब वह भिक्षु श्रद्धालु एवं शीलवान् हो जाता है...पूर्ववत्...इन दश धर्मों से युक्त साधक भिक्षु सबको प्रसन्न रखनेवाला, साधना के सब आकारों को पूर्ण कर लेनेवाला माना जाता है॥" ●

१०. विद्यासूत्र : : भिक्षु के लिये आवश्यक दश धर्म

१. "भिक्षुओ! कोई भिक्षु श्रद्धालु होता है, परन्तु शीलवान् नहीं होता; अतः वह अपनी साधना में इस अङ्ग से अपरिपूर्ण कहलाता है। इसकी पूर्ति के लिये उसको यह चिन्तन करना चाहिये—'क्यों न मैं श्रद्धालु एवं शीलवान् होऊँ।' जब वह अभ्यास करते करते श्रद्धालु एवं शीलवान् हो जाता है तब वह साधना के उस अङ्ग से परिपूर्ण कहलाता है।

२. "भिक्षुओ! कोई भिक्षु श्रद्धालु एवं शीलवान् ही होता है परन्तु वह बहुश्रुत नहीं होता...

नो च धम्मकथिको ...पे०... धम्मकथिको च, नो च परिसावचरो... परिसावचरो च, नो च विसारदो परिसाय धम्मं देसेति... विसारदो च परिसाय धम्मं देसेति, नो च [B.267] विनयधरो... विनयधरो च, नो च अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति... [N.109] पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, नो च दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति, नो च आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्सं, सीलवा च, बहुस्सुतो च, धम्मकथिको च, परिसावचरो च, विसारदो च परिसाय धम्मं देसेय्यं, विनयधरो च, अनेकविहितं च पुब्बेनिवासं अनुस्सरेय्यं... यथा- [.R.14] कम्मूपगे सत्ते पजानेय्यं, आसवानं च खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति।

३. ''यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो च होति, सीलवा च, बहुस्सुतो च, धम्मकथिको च, परिसावचरो च, विसारदो च परिसाय धम्मं देसेति, विनयधरो च, अनेकविहितं च पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, दिब्बेन च चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति, आसवानं च खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु समन्तपासादिको च होति सब्बाकारपरिपूरो चा'' ति॥

आनिसंसवग्गो पठमो॥ ●

तस्सुद्दानं

किमत्थियं चेतना च, तयो उपनिसा पि च।
समाधि सारिपुत्तो च, झानं सन्तेन विज्जया ति॥

पूर्ववत्...विनयधर होता है, परन्तु वह अपने पूर्वजन्मों का अनुस्मरण नहीं कर पाता...पूर्वजन्मों का अनुस्मरण करने पर भी स्वचित्त से पर प्राणियों के कर्मभोगों को नहीं पहचान पाता...पर प्राणियों के कर्मभोगों को पहचानने पर भी आश्रवों के क्षय से...प्राप्त कर साधना नहीं कर पाता, अत: वह अपनी साधना में इस अङ्ग से अपरिपूर्ण ही रह जाता है। तब उसको यह सोचना चाहिये कि 'क्यों न मैं...प्राप्त कर साधना करूँ।'

३. ''भिक्षुओ! जब वह भिक्षु श्रद्धालु और शीलवान् हो जाता है...पूर्ववत्...प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जानकर साक्षात् कर प्राप्त कर साधना करता है, तब वह अपनी साधना के सभी अङ्गों से परिपूर्ण कहलाता है। भिक्षुओ! साधना के इन दश अङ्गों से पूर्ण भिक्षु समन्तप्रासादिक एवं साधना का सर्वाकारपरिपूरक कहलाता है॥''

आनृशंस्यवर्ग प्रथम सम्पन्न॥ ●

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. किमर्थसूत्र, २. चेतनाकरणीयसूत्र, ३. प्रथम उपनिषत्सूत्र, ४. द्वितीय उपनिषत्सूत्र, ५. तृतीय उपनिषत्सूत्र, ६. समाधिसूत्र, ७. सारिपुत्रसूत्र, ८. ध्यानसूत्र, शान्तविमोक्षसूत्र एवं १०. विद्यासूत्र॥ ●

२. नाथवग्गो

१. सेनासनसुत्तं : १. ''पञ्चङ्गसमन्नागतो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गसमन्नागतं [B.268, R.15] सेनासनं सेवमानो भजमानो नचिरस्सेव आसवानं खया अनासवं [N.110] चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्य।

२. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गसमन्नागतो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो होति; सद्दहति तथागतस्स बोधिं—'इति पि सो भगवा ...पे०... भगवा' ति; अप्पाबाधो होति अप्पातङ्को, समवेपाकिनिया गहणिया समन्नागतो नातिसीताय नाच्चुण्हाय मज्झिमाय पधानक्खमाय; असठो होति अमायावी, यथाभूतं अत्तानं आविकत्ता सत्थरि वा विञ्ञूसु वा सब्रह्मचारीसु; आरद्धविरियो विहरति, अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय; थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु; पञ्ञवा होति, उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गसमन्नागतो होति।

३. ''कथं च, भिक्खवे, सेनासनं पञ्चङ्गसमन्नागतं होति? इध, भिक्खवे, सेनासनं नातिदूरं होति नाच्चासन्नं गमनागमनसम्पन्नं दिवा अप्पाकिण्णं रत्तिं अप्पसद्दं अप्पनिग्घोसं अप्पडंसमकसवातातपसिरिंसपसम्फस्सं; तस्मिं खो पन सेनासने विहरन्तस्स अप्पकसिरेन

---

२. नाथवर्ग

१. शयनासनसूत्र : : भिक्षु के पालनीय दश धर्म

१. ''भिक्षुओ! पञ्चाङ्गसमन्वागत (पाँच गुणों से युक्त) कोई भिक्षु पाँच अङ्गों से युक्त शयनासन (भिक्षु आवास) का उपयोग करता हुआ शीघ्र ही आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतो-विमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को इसी संसार में स्वयं जानकर साक्षात् कर प्राप्त कर साधना कर सकता है।

२. ''कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु 'पञ्चाङ्गसमन्वागत' होता है? जो भिक्षु श्रद्धालु हो तथा भगवान् बुद्ध की सम्यक्सम्बोधि पर श्रद्धा रखता हो; ...पूर्ववत्... रोग एवं भय से प्रायः मुक्त रहता हो; न अधिक शीत और न अधिक उष्ण—ऐसी मध्यम अतएव उचित पाचनशक्ति से युक्त हो; जिसके व्यवहार में शठता एवं माया (धूर्तता) का अभाव है; जो अपने वास्तविक आचरण को शास्ता एवं विद्वानों तथा साथियों के सम्मुख प्रकट करने वाला हो; जो साधना में सतत उद्योगी रहता हुआ अकुशल धर्मों के प्रहाण एवं कुशल धर्मों के उत्पाद में प्रयासरत हो; साधना में स्थिरता एवं दृढ़ पराक्रम करनेवाला, कुशल धर्मों के उत्पाद में परिश्रम से न डरने वाला, प्रज्ञावान् हो, उत्पत्ति एवं विनाश को जाननेवाली ऐसी प्रज्ञा से युक्त हो जो श्रेष्ठ तथा गम्भीर अन्तस्तल तक प्रविष्ट एवं दुःखक्षय तक पहुँचाने वाली हो। भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु 'पञ्चाङ्गसमन्वागत' कहलाता है।

३. ''और, भिक्षुओ! कैसे कोई पञ्च अङ्गों से युक्त शयनासन (भिक्षु-आवास) कहलाता है? भिक्षुओ! भिक्षु का आवास ऐसे स्थान पर होना चाहिये जो स्थान १. न बहुत दूर हो, न बहुत

उप्पज्जन्ति चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारा; तस्मिं खो पन सेनासने थेरा भिक्खू विहरन्ति बहुस्सुता आगतागमा धम्मधरा विनयधरा मातिकाधरा; ते [R.16] कालेन कालं उपसङ्कमित्वा परिपुच्छति परिपञ्हति—'इदं, भन्ते, कथं, इमस्स को अत्थो' ति; तस्स ते आयस्मन्तो अविवटं चेव विवरन्ति अनुत्तानीकतं च उत्तानिं करोन्ति अनेकविहितेसु च कङ्खाठानियेसु धम्मेसु कङ्खं पटिविनोदेन्ति। एवं खो, भिक्खवे, सेनासनं पञ्चङ्गसमन्नागतं होति। पञ्चङ्गसमन्नागतो खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गसमन्नागतं सेनासनं सेवमानो भजमानो नचिरस्सेव आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्या" ति॥

२. पञ्चङ्गसुत्तं : १. "पञ्चङ्गविप्पहीनो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गसमन्नागतो इमस्मिं धम्मविनये 'केवली वुसितवा उत्तमपुरिसो' ति वुच्चति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु [N.111] पञ्चङ्गविप्पहीनो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो कामच्छन्दो पहीनो होति, ब्यापादो पहीनो होति, थीनमिद्धं पहीनं होति, उद्धच्चकुक्कुच्चं पहीनं होति, विचिकिच्छा पहीना होति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गविप्पहीनो होति।

२. कथं च, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गसमन्नागतो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु

समीप; जाने आने के लिये सुविधासम्पन्न हो, दिन में जनता की भीड़ न होती हो, रात्रि में हिंसक पशुओं की भयावह शब्दध्वनि न होती हो, मच्छर मक्खी, डाँस, शीत, उष्ण, साँप आदि का भय न हो; २. उस भिक्षु-आवास में रहते हुए चीवर, पिण्डपात आदि सुलभता से मिल जाते हों; ३. उस आवास में ऐसे स्थविर एवं विद्वान् विनयधर तथा मातृकाधर भिक्षु भी रहते हों; ४. जिनके पास जाकर समय समय पर अपने धार्मिक सन्देहों का निराकरण किया जा सके कि भन्ते! यह कैसे है और इसका क्या अर्थ है। ५. जो उसको उपदेश एवं प्रवचन द्वारा धर्म को स्पष्ट विवृत कर सकें, उसकी धर्मविषयक शङ्काओं का समाधान कर सकें। भिक्षुओ! इन पाँच अङ्गों से युक्त आवास ही साधक भिक्षु की साधना में उपयुक्त होता है। इस अभिप्राय से, भिक्षुओ! मैंने कहा है कि पाँच अङ्गों से समन्वित भिक्षु के लिये (उपर्युक्त) पाँच अङ्गों से युक्त आवास ही साधना में सहायक होता है, जहाँ वास करता हुआ वह शीघ्र आश्रवों के क्षय से...पूर्ववत्...साक्षात्कार कर प्राप्त कर साधना में समर्थ होता है॥"

२. पञ्चाङ्गसूत्र : : सम्पूर्णताप्राप्त साधक भिक्षु

१. "भिक्षुओ! पाँच अङ्गों से रहित भिक्षु यदि इन पाँच अङ्गों से युक्त है तो ऐसा भिक्षु इस धर्मविनय में 'केवली' साधना वाला (सम्पूर्णता प्राप्त अर्हत्), 'साधनापूर्ण कर चुका' तथा 'उत्तम पुरुष' कहलाता है। भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु किन पाँच अङ्गों से रहित होता है? जिसका कामच्छन्द (कामवासना) प्रहीण हो चुका है, व्यापाद (क्रोध या द्वेष) प्रहीण हो चुका है, स्त्यानमृद्ध (आलस्य) प्रहीण हो चुका है, औद्धत्य कौकृत्य प्रहीण हो चुके हैं, विचिकित्सा (सन्देह) प्रहीण हो चुकी है। ऐसा भिक्षु, भिक्षुओ! 'पाँच अङ्गों से हीन' कहलाता है।

२. "भिक्षुओ! और कौन भिक्षु 'पाँच अङ्गों से युक्त' कहलाता है? भिक्षुओ! यहाँ जो भिक्षु

असेखेन सीलक्खन्धेन समन्नागतो होति, असेखेन समाधिक्खन्धेन समन्नागतो होति, असेखेन पञ्ञाक्खन्धेन समन्नागतो होति, असेखेन विमुत्तिक्खन्धेन समन्नागतो होति, असेखेन विमुत्तिञाणदस्सनक्खन्धेन समन्नागतो होति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गसमन्नागतो होति।

३. "पञ्चङ्गविप्पहीनो खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गसमन्नागतो इमस्मिं धम्मविनये 'केवली वुसितवा उत्तमपुरिसो' ति वुच्चति।

"कामच्छन्दो च ब्यापादो, थीनमिद्धं च भिक्खुनो।
उद्धच्चं विचिकच्छा च, सब्बसो व न विज्जति॥

[R.17] "असेखेन च सीलेन, असेखेन समाधिना।
विमुत्तिया च सम्पन्नो, ञाणेन च तथाविधो॥

"स वे पञ्चङ्गसम्पन्नो, पञ्च अङ्गे विवज्जयं।
इमस्मिं धम्मविनये, केवली इति वुच्चती" ति॥ ●

३. संयोजनसुत्तं : १. "दसयिमानि, भिक्खवे, संयोजनानि। कतमानि तस? पञ्चोरम्भागियानि संयोजनानि, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्चोरम्भागियानि [B.270] संयोजनानि? सक्कायदिट्ठि, विचिकिच्छा, सीलब्बतपरामासो, कामच्छन्दो, ब्यापादो—इमानि पञ्चोरम्भागियानि संयोजनानि।

[N.112] २. "कतमानि पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि।

इमानि खो, भिक्खवे, दस संयोजनानी" ति॥ ●

अशैक्ष्य शीलस्कन्ध से, अशैक्ष्य समाधिस्कन्ध से, अशैक्ष्य प्रज्ञास्कन्ध से, अशैक्ष्य विमुक्तिस्कन्ध से, अशैक्ष्य विमुक्ति ज्ञानदर्शनस्कन्ध से युक्त होता है—ऐसा भिक्षु 'पञ्चाङ्गसमन्वागत' कहलाता है।

३. "भिक्षुओ! ऐसा 'पञ्चाङ्गविप्रहीण' एवं 'पञ्चाङ्गसमन्वागत' भिक्षु इस धर्मविनय में अर्हत्, साधनापूर्ण एवं उत्तम पुरुष कहलाता है।

"जिस भिक्षु की कामवासना, क्रोध, आलस्य और औद्धत्य कौकृत्य एवं सन्देह सर्वथा लुप्त हो चुके हैं॥

"जो भिक्षु अशैक्ष्य शील, अशैक्ष्य समाधि और अशैक्ष्य प्रज्ञा, अशैक्ष्य विमुक्ति एवं अशैक्ष्य विमुक्तिज्ञान से युक्त है॥

"वैसा भिक्षु पाँच अङ्गों को अपने से दूर करता हुआ पाँच अङ्गों से युक्त होता है। वह इस धर्म विनय में 'केवली' कहलाता है"॥ ●

३. संयोजनसूत्र : : दश संयोजन

१. "भिक्षुओ! ये दश संयोजन हैं। कौन से दश? पाँच अवरभागीय संयोजन और पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन। पाँच अवरभागीय संयोजन कौन से हैं? सत्कायदृष्टि, विचिकित्सा, शीलव्रतपरामर्श, कामच्छन्द एवं व्यापाद—ये पाँच अवरभागीय संयोजन कहलाते हैं।

४. चेतोखीलसुत्तं : १. ''यस्स कस्सचि, भिक्खवे, भिक्खुस्स वा भिक्खुनिया वा पञ्च चेतोखीला अप्पहीना पञ्च चेतसोविनिबद्धा असमुच्छिन्ना, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो वुद्धि।

२. ''कतमस्स पञ्च चेतोखीला अप्पहीना होन्ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सत्थरि कङ्खति विचिकिच्छति नाधिमुच्चति न सम्पसीदति। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु सत्थरि कङ्खति विचिकिच्छति नाधिमुच्चति न सम्पसीदति, तस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय [R.18] सातच्चाय पधानाय, एवमस्सायं पठमो चेतोखीलो अप्पहीनो होति।

३. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु धम्मे कङ्खति ...पे०... सङ्घे कङ्खति... सिक्खाय कङ्खति... सब्रह्मचारीसु कुपितो होति अनत्तमनो आहतचित्तो खीलजातो। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु सब्रह्मचारीसु कुपितो होति अनत्तमनो आहतचित्तो खीलजातो, तस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय, एवमस्सायं पञ्चमो चेतोखीलो अप्पहीनो होति। इमस्स पञ्च चेतोखीला अप्पहीना होन्ति।

४. ''कतमस्स पञ्च चेतसोविनिबन्धा असमुच्छिन्ना होन्ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु कामेसु अवीतरागो होति अविगतच्छन्दो अविगतपेमो अविगतपिपासो अविगतपरिळाहो अविगततण्हो। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु कामेसु अवीतरागो होति अविगतच्छन्दो [B.271]

---

२. ''पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन कौन से हैं? रूपराग, अरूपराग, मान, औद्धत्य, अविद्या—ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन कहलाते हैं।

इस प्रकार, भिक्षुओ! ये दश संयोजन होते हैं॥''

४. चेत:कीलसूत्र : : पाँच चित्तप्रतिबद्ध चेत:कील धर्म

१. ''भिक्षुओ! जिस किसी भिक्षु या भिक्षुणी के चित्तप्रतिबद्ध पाँच चेत:कील नष्ट न हुए हों तो उसके आगे आने वाले रात्रि या दिनों में कुशल धर्मों की हानि ही सम्भव है, वृद्धि नहीं।

२. ''किनके ये पाँच चेत:कील प्रहीण नहीं हुए रहते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु शास्ता में सन्देह करता है, उनको स्वीकार नहीं करता तथा उनमें श्रद्धा नहीं रखता, जिस भिक्षु में ये कमियाँ (दोष) हैं उसका चित्त साधना में उद्योग, अभ्यास, निरन्तरता तथा प्रयत्न हेतु नहीं लगता, ऐसे भिक्षु का यह प्रथम चेत:कील प्रहीण न हुआ माना जाता है। (१)

३. ''पुन: भिक्षुओ! जो भिक्षु धर्म में...सङ्घ में...धर्मशिक्षा में...अपने धार्मिक सहयोगियों में सन्देह करता है, उनको स्वीकार नहीं करता...पूर्ववत्...। ऐसे भिक्षु का यह पञ्चम चेत:कील अप्रहीण हुआ माना जाता है। इस प्रकार इसके ये पाँच चेत:कील प्रहीण न हुए माने जाते हैं। (२-३-४-५)

४. ''तथा किस भिक्षु के चित्तप्रतिबद्ध धर्म नष्ट नहीं होते? यहाँ, भिक्षुओ! जिस भिक्षु का चित कामभोगों में वीतराग न हुआ हो, इच्छारहित न हुआ हो, पिपासा एवं परिदाह से रहित न हुआ

अविगतपेमो अविगतपिपासो अविगतपरिळाहो अविगततण्हो, तस्स चित्तं न नमति [N.113] आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय, एवमस्सायं पठमो चेतसोविनिबन्धो असमुच्छिन्नो होति।

५. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु काये अवीतरागो होति ...पे०... रूपे अवीतरागो होति ...पे०... यावदत्थं उदरावदेहकं भुञ्जित्वा सेय्यसुखं पस्ससुखं मिद्धसुखं अनुयुत्तो विहरति... अञ्ञतरं देवनिकायं पणिधाय ब्रह्मचरियं चरति—'इमिनाहं सीलेन वा वतेन वा तपेन वा ब्रह्मचरियेन वा देवो वा भविस्सामि देवञ्ञतरो वा' ति। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु अञ्ञतरं देवनिकायं पणिधाय ब्रह्मचरियं चरति—'इमिनाहं सीलेन वा वतेन वा तपेन वा ब्रह्मचरियेन वा देवो वा भविस्सामि देवञ्ञतरो वा' ति, तस्स चित्तं न नमति आतप्पाय [R.19] अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं न नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय, एवमस्सायं पञ्चमो चेतसोविनिबन्धो असमुच्छिन्नो होति। इमस्स पञ्च चेतसोविनिबन्धा असमुच्छिन्ना होन्ति॥

६. ''यस्स कस्सचि, भिक्खवे, भिक्खुस्स वा भिक्खुनिया वा इमे पञ्च चेतोखीला अप्पहीना इमे पञ्च चेतसोविनिबन्धा असमुच्छिन्ना, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो वुद्धि।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, काळपक्खे चन्दस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हायतेव वण्णेन हायति मण्डलेन हायति आभाय हायति आरोहपरिणाहेन; एवमेव खो, भिक्खवे, यस्स कस्सचि भिक्खुस्स वा भिक्खुनिया वा इमे पञ्च चेतोखीला अप्पहीना इमे पञ्च चेतसोविनिबन्धा असमुच्छिन्ना, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो वुद्धि।

हो तथा तृष्णारहित न हुआ हो। ऐसे इन पाँचों दुर्गुणों से युक्त भिक्षु का चित्त साधना में उद्योग, अभ्यास, निरन्तरता तथा तदर्थ प्रयत्न हेतु नहीं लगता; जिस भिक्षु का चित्त साधना की वृद्धि हेतु इन प्रयत्नों में नहीं लगता ऐसे भिक्षु का यह प्रथम चित्तप्रतिबद्ध धर्म है। (१)

५. ''पुन:, भिक्षुओ! कोई भिक्षु काया में वीतराग न हुआ हो...रूप में वीतराग न हुआ हो...पूर्ववत्...भरपेट (जितना चाहे उतना) भोजन कर शय्यासन पर इधर-उधर लेटता हुआ आलस्य करता हुआ साधना करता है...किसी देवलोक का ध्यानकर इस लक्ष्य से धर्मसाधना करता है—'मैं इस शील या व्रत या तपश्चर्या या धर्मसाधना द्वारा यही देवता या अन्य कोई (प्रतापी) देवता बनूँगा' जो ऐसा सङ्कल्प कर इस देवत्वप्राप्ति के लिये साधना आरम्भ करता है, उसका चित्त वास्तविक धर्मसाधना की ओर नहीं झुकता; इस प्रकार ऐसी धर्मसाधना करने वाले के चित्त का धर्मसाधना की ओर न झुकना ही पञ्चम चित्तप्रतिबद्ध धर्म है। (२-३-४-५)

६. ''अत:, भिक्षुओ! जब तक ऐसे भिक्षु या भिक्षुणी के ये पाँच चेत:कील एवं ये पाँच चित्तप्रतिबद्ध धर्म प्रहीण एवं समुच्छिन्न न होंगे तब तक उसके कुशल धर्मों की हानि ही होगी, उनमें वृद्धि की सम्भावना कथमपि नहीं है।

७. ''यस्स कस्सचि, भिक्खवे, भिक्खुस्स वा भिक्खुनिया वा पञ्च चेतोखीला पहीना पञ्च चेतसोविनिबन्धा सुसमुच्छिन्ना, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो परिहानि।

८. ''कतमस्स पञ्च चेतोखीला पहीना होन्ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सत्थरि न कङ्खति न विचिकिच्छति, अधिमुच्चति सम्पसीदति। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु [B.272] सत्थरि न कङ्खति न विचिकिच्छति अधिमुच्चति सम्पसीदति, तस्स चित्तं नमति [N.114] आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय, एवमस्सायं पठमो चेतोखीलो पहीनो होति।

९. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु धम्मे न कङ्खति ...पे०... सङ्घे न कङ्खति... सिक्खाय न कङ्खति... सब्रह्मचारीसु न कुपितो होति अत्तमनो न आहतचित्तो न खीलजातो। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु सब्रह्मचारीसु न कुपितो होति अत्तमनो न आहतचित्तो न खीलजातो, तस्स चित्तं नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय, एवमस्सायं पञ्चमो चेतोखीलो पहीनो होति। इमस्स पञ्च चेतोखीला पहीना होन्ति॥

१०. ''कतमस्स पञ्च चेतसोविनिबन्धा सुसमुच्छिन्ना होन्ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु कामेसु वीतरागो होति विगतच्छन्दो विगतपेमो विगतपिपासो विगतपरिळाहो विगततण्हो। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु कामेसु वीतरागो होति विगतच्छन्दो विगतपेमो विगतपिपासो विगतपरिळाहो विगततण्हो, तस्स चित्तं नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय, एवमस्सायं पठमो चेतसोविनिबन्धो सुसमुच्छिन्नो होति।

११. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु काये वीतरागो होति ...पे०... रूपे वीतरागो होति ...पे०... न यावदत्थं उदरावदेहकं भुञ्जित्वा सेय्यसुखं पस्ससुखं मिद्धसुखं अनुयुत्तो

''भिक्षुओ! जैसे कृष्णपक्ष के दिन या रात्रि के चन्द्रमा का वर्ण, मण्डल, उसकी आभा, उसके आरोह-परिणाह (वृद्धि एवं ऊँचाई-लम्बाई) घटते ही हैं, बढ़ते नहीं; उसी प्रकार जिस किसी भिक्षु या...पूर्ववत्...धर्मों की हानि ही होगी, वृद्धि नहीं।

७. (परन्तु) ''भिक्षुओ! जिस किसी भिक्षु या भिक्षुणी के पाँच चेत:कील प्रहीण हो चुके हैं या पाँच चित्तप्रतिबद्ध धर्म नष्ट हो चुके हैं उसके आगे आने वाले दिनों या रात्रियों में उसके कुशल धर्मों की वृद्धि ही होगी, हानि नहीं।

८. ''ये पाँच चेत:कील किसके प्रहीण होते हैं? भिक्षुओ! जो भिक्षु या भिक्षुणी शास्ता के प्रति सन्देह नहीं करते, उनको स्वीकार करते हैं, उनमें श्रद्धा रखते हैं ऐसे भिक्षु या भिक्षुणी का चित्त धर्मसाधना हेतु उद्योग, अभ्यास, निरन्तरता तथा प्रयत्न में लगा रहता है, ऐसे भिक्षु का यह प्रथम चेत:कील प्रहीण हुआ माना जाता है। (१)

विहरति, न अञ्ञतरं देवनिकायं पणिधाय ब्रह्मचरियं चरति—'इमिनाहं सीलेन वा वतेन वा तपेन वा ब्रह्मचरियेन वा देवो वा भविस्सामि देवञ्ञतरो वा' ति। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु न अञ्ञतरं देवनिकायं पणिधाय ...पे०... देवञ्ञतरो वा ति, तस्स चित्तं नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय पधानाय। यस्स चित्तं नमति आतप्पाय अनुयोगाय सातच्चाय [B.273] पधानाय, एवमस्सायं पञ्चमो चेतसोविनिबन्धो सुसमुच्छिन्नो होति। इमस्स पञ्च चेतसोविनिबन्धा सुसमुच्छिन्ना होन्ति।

१२. "यस्स कस्सचि, भिक्खवे, भिक्खुस्स वा भिक्खुनिया वा इमे पञ्च [N.115,R.21] चेतोखीला पहीना इमे पञ्च चेतसोविनिबन्धा सुसमुच्छिन्ना, तस्सा या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो परिहानि।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, जुण्हपक्खे चन्दस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वड्ढतेव वण्णेन वड्ढति मण्डलेन वड्ढति आभाय वड्ढति आरोहपरिणाहेन; एवमेव खो, भिक्खवे, यस्स कस्सचि भिक्खुस्स वा भिक्खुनिया वा इमे पञ्च चेतोखीला पहीना इमे पञ्च चेतसोविनिबन्धा सुसमुच्छिन्ना, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो परिहानी" ति॥

५. अप्पमादसुत्तं : १. "यावता, भिक्खवे, सत्ता अपदा वा द्विपदा वा चतुप्पदा वा बहुप्पदा वा रूपिनो वा अरूपिनो वा सञ्ञिनो वा असञ्ञिनो वा नेवसञ्ञिनासञ्ञिनो वा, तथागतो तेसं अग्गमक्खायति अरहं सम्मासम्बुद्धो; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि कुसला धम्मा, सब्बे ते अप्पमादमूलका अप्पमादसमोसरणा। अप्पमादो तेसं अग्गमक्खायति।

९, १०, ११...पूर्ववत्...[इन तीनों उपबन्धों का हिन्दी रूपान्तरण अनुपद में पीछे वर्णित ३,४,५ उपबन्धों के समान (केवल नञर्थ=निषेधार्थ हटाकर) समझ लें।]

१२. "भिक्षुओ! जिस किसी भिक्षु या भिक्षुणी के ये पाँच चेत:कील प्रहीण हुए रहते हैं या पाँच चित्तप्रतिबद्ध धर्म समुच्छिन्न हुए रहते हैं, उनके आगे आने दिनों या रात्रियों में उनके कुशल धर्मों की वृद्धि ही सम्भव है, हानि नहीं।

"जैसे, भिक्षुओ! शुक्लपक्ष में चन्द्रमा के लिये जो रात्रि या दिन आयगा, उनमें उसका वर्ण, मण्डल, आभा एवं आरोह-परिणाह—ये सब बढ़ेंगे ही, इनके घटने की सम्भावना नहीं है; वैसे ही इस उपर्युक्त भिक्षु या भिक्षुणी के आगे आने वाले दिनों में कुशल धर्मों की वृद्धि ही सम्भव है, हानि नहीं॥"

५. अप्रमादसूत्र[1] : : **दशविध अप्रमाद**

१. "भिक्षुओ! संसार में जितने भी दो पैरों वाले, चार पैरों वाले या बहुत से पैरों वाले रूपी, अरूपी, संज्ञी, असंज्ञी या नैवसंज्ञिनासंज्ञी प्राणी हैं, उनमें तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध ही सर्वप्रमुख (*अग्र*) कहलाते हैं; इसी प्रकार, भिक्षुओ! जितने भी कुशल धर्म हैं उन सबका आधार (मूल)

---

१. इस सूत्र का विस्तार समझने के लिये **संयुत्तनिकाय पालि, ५. महावर्ग** (बौ. भा. ग्र. मा.-४३) के अन्तर्गत **समस्त ५. अप्रमादवर्ग** (पृ० १६७२-१६७६) भी अवश्य देखने का कष्ट करें।—स०

२. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, यानि कानिचि जङ्गलानं पाणानं पदजातानि, सब्बानि तानि हत्थिपदे समोधानं गच्छन्ति, हत्थिपदं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं महन्तत्तेन; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि कुसला धम्मा, सब्बे ते अप्पमादमूलका अप्पमादसमोसरणा। अप्पमादो तेसं अग्गमक्खायति।

३. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, कूटागारस्स या काचि गोपानसियो सब्बा ता कूटङ्गमा कूटनिन्ना कूटसमोरणा, कूटो तासं अग्गमक्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि कुसला धम्मा, सब्बे ते अप्पमादमूलका अप्पमादसमोसरणा। अप्पमादो तेसं अग्गमक्खायति।

४. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि मूलगन्धा, काळानुसारियं तेसं [B.274,R.22] अग्गमक्खायति; एवमेव ग्वो, भिक्खवे ...पे०... अप्पमादो तेसं अग्गमक्खायति।

५. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि सारगन्धा, लोहितचन्दनं तेसं अग्ग- [N.116] मक्खायति; एवमेव खो भिक्खवे ...पे०... अप्पमादो तेसं अग्गमक्खायति।

६. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि पुप्फगन्धा, वस्सिकं तेसं अग्गमक्खायति; एवमेव खो भिक्खवे ...पे०... अप्पमादो तेसं अग्गमक्खायति।

७. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि खुद्दराजानो, सब्बे ते रञ्ञो चक्कवत्तिस्स अनुयन्ता भवन्ति, राजा तेसं चक्कवत्ती अग्गमक्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे ...पे०... अप्पमादो तेसं अग्गमक्खायति।

८. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, या काचि तारकरूपानं पभा, सब्बा ता चन्दप्पभाय कलं

अप्रमाद (सावधानी) ही होता है, वे सब अप्रमाद में एकत्र किये जा सकते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि अप्रमाद ही उन कुशल धर्मों का मुख्य (अग्र) कहलाता है।

२. ''जैसे, भिक्षुओ! जितने भी जङ्गल में रहनेवाली प्राणी हैं, उन सबके पैर हाथी के पैरों की लम्बाई-चौड़ाई में समाहित हो जाते हैं, अतः हाथी का पैर ही उन सभी प्राणियों के पैरों की अपेक्षा श्रेष्ठ कहलाता है; इसी प्रकार, भिक्षुओ! जितने भी कुशल धर्म हैं उन सबका आधार अप्रमाद ही होता है...मुख्य कहलाता है।

३. ''भिक्षुओ! जैसे किसी कूटागार (शिखरयुक्त मनन) के सभी कूट (धरण=काष्ठ= शहतीर) उसी की ओर अपना मुख किये रहते हैं, कूट उनका प्रमुख कहलाता है; वैसे ही, भिक्षुओ! अप्रमाद सभी कुशल धर्मों का मूल कहलाता है, प्रमुख कहलाता है।

४. ''भिक्षुओ! जैसे जितने भी मूल में गन्ध वाले क्षुप (छोटे वृक्ष=वनस्पति) हैं, उनमें खस (कालानुसारिय) का क्षुप सर्वोत्तम गन्ध वाला होता है; वैसे ही भिक्षुओ! अप्रमाद...पूर्ववत्...प्रमुख कहलाता है।

५. ''भिक्षुओ! जैसे जितने भी गन्ध वाले बड़े काष्ठ (सार) वृक्ष हैं उनमें रक्तचन्दन वृक्ष सर्वोत्तम् गन्ध वाला कहलाता है; उसी प्रकार अप्रमाद...पूर्ववत्...प्रमुख होता है।

६. ''भिक्षुओ! जैसे जितने भी सुगन्ध वाले पुष्प वृक्ष हैं, उनमें वार्षिक (वस्सिका=जूही) का फूल सर्वोत्तम गन्ध वाला होता है; वैसे ही अप्रमाद...पूर्ववत्...प्रमुख होता है।

नागघन्ति सोळसिं, चन्दप्पभा तासं अग्गमक्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे ...पे०... अप्पमादो तेसं अग्गमक्खायति।

९. "सेय्यथापि, भिक्खवे, सरदसमये विद्धे विगतवलाहके देवे आदिच्चो नभं अब्भुस्सक्कमानो सब्बं आकासगतं तमगतं अभिविहच्च भासते च तपते च विरोचति च; एवमेव खो, भिक्खवे ...पे०... अप्पमादो तेसं अग्गमक्खायति।

१०. "सेय्यथापि, भिक्खवे, या काचि महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही, सब्बा ता समुद्दङ्गमा समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा, महासमुद्दो तासं अग्गमक्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि कुसला धम्मा, सब्बे ते अप्पमादमूलका अप्पमादसमोसरणा। अप्पमादो तेसं अग्गमक्खायती" ति॥ ●

[R.23] ६. **आहुनेय्यसुत्तं** : १. "दसयिमे, भिक्खवे, पुग्गला आहुनेय्या पाहुनेय्या दक्खिणेय्या अञ्जलिकरणीया अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमे दस? तथागतो अरहं सम्मासम्बुद्धो, पच्चेकबुद्धो, उभतोभागविमुत्तो, पञ्ञाविमुत्तो, कायसक्खि, दिट्ठिप्पत्तो, सद्धाविमुत्तो, सद्धानुसारी, धम्मानुसारी, गोत्रभू—इमे खो, भिक्खवे, दस पुग्गला आहुनेय्या [N.117] ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा" ति॥ ●

---

७. "भिक्षुओ! जैसे छोटे-छोटे दुर्गों के राजाओं से चक्रवर्ती राजा श्रेष्ठ होता है; वैसे ही अप्रमाद सब कुशल धर्मों में श्रेष्ठ होता है...पूर्ववत्...प्रमुख होता है।

८. भिक्षुओ! जैसे समस्त तारागण का सम्मिलित प्रकाश भी चन्द्रमा के प्रकाश की सोलहवीं कला की भी समानता नहीं कर पाता अर्थात् उन (तारा समूहों) में चन्द्रमा ही श्रेष्ठ कहलाता है; उसी प्रकार अप्रमाद ही...पूर्ववत्...प्रमुख होता है।

९. "भिक्षुओ! जैसे शरदृतु में मेघों से आकाश के स्वच्छ हो जाने पर सूर्य, आकाशस्थ समस्त अन्धकार को नष्ट करने में समर्थ होता है, अत: वह (सूर्य) ही समस्त प्रकाशकारक पदार्थों में श्रेष्ठ कहलाता है, वैसे ही अप्रमाद...पूर्ववत्...प्रमुख कहलाता है।

१०. "भिक्षुओ! जैसे लोक में जितनी महानदियाँ हैं, यथा—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरयू, मही—ये सभी नदियाँ समुद्र की ओर झुकी हुई, समुद्र में ही मिलने वाली तथा समुद्र में मिलना ही इनका लक्ष्य है, अत: समुद्र ही उनमें श्रेष्ठ कहलाता है; वैसे ही, भिक्षुओ! जितने भी कुशल धर्म हैं, वे सभी अप्रमादमूलक एवं अप्रमाद पर ही आधृत हैं। अत: अप्रमाद ही उनमें श्रेष्ठ (प्रमुख) कहलाता है।" ●

६. आहवनीयसूत्र : : दश पूजनीय पुद्गल

१. "भिक्षुओ! ये दशविध पुद्गल उपहार के योग्य, आतिथ्य के योग्य, दक्षिणा के योग्य, प्रणाम करने योग्य, तथा लोक के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल हैं। कौन से दश? १. तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध, २. प्रत्येकबुद्ध, ३. उभयतोभागविमुक्त, ४. प्रज्ञाविमुक्त, ५. कायसाक्षी, ६. दृष्टिप्राप्त, ७. श्रद्धाविमुक्त, ८. श्रद्धानुसारी, ९. धर्मानुसारी तथा १०. गोत्रभू (नव प्रव्रजित भिक्षु)—भिक्षुओ! ये दशविध पुद्गल आहवनीय...लोक के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल हैं।" ●

७. पठमनाथसुत्तं : १. "सनाथा, भिक्खवे, विहरथ, मा अनाथा। दुक्खं, भिक्खवे, अनाथो विहरति। दसयिमे, भिक्खवे, नाथकरणा धम्मा। कतमे दस? [B.275] इध, भिक्खवे, भिक्खु सीलवा होति, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति आचारगोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु सीलवा होति ...पे०... समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु, अयं पि धम्मो नाथकरणो।

२. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु बहुस्सुतो होति सुतधरो सुतसन्निचयो, ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु बहुस्सुतो होति ...पे०... दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा, अयं पि धम्मो नाथकरणो।

३. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो होति कल्याणसहायो [R.24] कल्याणसम्पवङ्को। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो होति कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को, अयं पि धम्मो नाथकरणो।

४. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सुवचो होति सोवचस्सकरणेहि धम्मेहि समन्नागतो, खमो पदक्खिणग्गाही अनुसासनिं। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु सुवचो होति ...पे०... अनुसासनिं, अयं पि धम्मो नाथकरणो।

---

७. प्रथम नाथसूत्र[1] : : **दश नाथ (रक्षा) कारक धर्म**

१. "भिक्षुओ! सनाथ होकर साधना करो, अनाथ होकर नहीं; क्योंकि अनाथ होकर साधना करना दुःखकर होता है। भिक्षुओ! ये दशविध नाथकरण धर्म हैं। कौन से दश? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु शीलवान्, प्रातिमोक्ष (भिक्षुनियम) रूप कवच से आवृत होता है, वह यत्किञ्चित् प्रमाद से भी भय खाता है, आचार-गोचर युक्त होकर साधनारत रहता है, शिक्षापद ग्रहण कर उनका अभ्यास करता है। आयुष्मानो! जो भिक्षु शीलवान् होकर साधना करता है—यह धर्म भी नाथकरण है। (१)

२. "पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु बहुश्रुत, श्रुतधर एवं श्रुतसञ्चयवान् होता है। ये जो धर्म आदि, मध्य एवं अन्त में भी कल्याणकारक, सार्थक एवं सव्यञ्जन हैं, जिनको 'केवल', 'परिपूर्ण' एवं 'परिशुद्ध' धर्मसाधना (ब्रह्मचर्य) कहते हैं, वैसे धर्म साधक भिक्षु द्वारा बहुत सुने, बहुत ग्रहण किये, वाणी से परिचित, मन से अनुपेक्षित, दृष्टि से सुप्रतिविद्ध (अन्तस्तल तक देखे गये) होते हैं—यह धर्म भी नाथकरण है। (२)

३. "भिक्षुओ! कोई भिक्षु कल्याणकारक मित्रों, साथियों एवं कल्याणकारक शुद्धियों से घिरा हुआ है—यह धर्म भी नाथकरण है। (३)

४. "पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु सुवच होता है, सौवचस्य (नम्रता) धर्मों से युक्त एवं धर्मोपदेश में समर्थ होता है—उसका यह धर्म भी नाथकरण होता है। (४)

---

१. इस सूत्र का व्याख्यान **दीघनिकाय,** तृतीय भाग (बौ. भा. ग्र. मा. ३६) के ८१४ पृष्ठ पर भी देखें।—स०

५. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु यानि तानि सब्रह्मचारीनं उच्चावचानि किङ्करणीयानि, तत्थ दक्खो होति अनलसो तत्रूपायाय वीमंसाय समन्नागतो, अलं कातुं अलं संविधातुं। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु यानि तानि सब्रह्मचारीनं ...पे०... अलं कातुं अलं संविधातुं, अयं पि धम्मो नाथकरणो।

६. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु धम्मकामो होति पियसमुदाहारो, अभिधम्मे [N.118,B.276] अभिविनये उळारपामोज्जो। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु धम्मकामो होति पियसमुदाहारो, अभिधम्मे अभिविनये उळारपामोज्जो, अयं पि धम्मो नाथकरणो।

७. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु, अयं पि धम्मो नाथकरणो।

[R.25] ८. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सन्तुट्ठो होति इतरीतरचीवरपिण्डपात-सेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु सन्तुट्ठो होति इतरीतर-चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन, अयं पि धम्मो नाथकरणो।

९. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सतिमा होति परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु सतिमा होति परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता, अयं पि धम्मो नाथकरणो।

१०. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय

---

५. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अपने सब्रह्मचारियों (साथियों) द्वारा बताये गये विविध कार्यों में दक्ष एवं आलस्यरहित होता है तथा उनमें विमर्श एवं मीमांसायुक्त रहता है, उनको पूर्ण करने में समर्थ होता है—उसका यह धर्म भी नाथकरण होता है। (५)

६. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अभिधर्म (सूत्र) एवं विनय में धर्मेच्छुक, दूसरों के उपदेशों को ससम्मान सुनने वाला, स्वयं भी उपदेश करने में उत्साही तथा सूत्र एवं विनय को सुनकर प्रमुदित होने वाला हो—उस भिक्षु का यह धर्म भी नाथकरण कहलाता है। (६)

७. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अपने अकुशल धर्मों के विनाश हेतु तथा कुशल धर्मों की प्राप्ति हेतु उद्योगरत एवं दृढ़पराक्रमशील होता है और कुशलधर्मों के पालन से मन नहीं चुराता—उस भिक्षु का यह धर्म भी नाथकरण कहलाता है। (७)

८. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु जिस किसी तरह से प्राप्त साधारण चीवर, पिण्डपात, शयनासन एवं रोगों में सहायक ओषधियों से भी सन्तुष्ट रहता है—उस भिक्षु का यह धर्म भी नाथकरण होता है। (८)

९. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्मृतिमान् एवं अत्युत्तम स्मृतिपरिपाक से युक्त होता है, बहुत

समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खगामिनिया। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया, अयं पि धम्मो नाथकरणो।

"सनाथा, भिक्खवे, विहरथ, मा अनाथा। दुक्खं, भिक्खवे, अनाथो विहरति। इमे खो, भिक्खवे, दस नाथकरणा धम्मा" ति॥ ●

८. दुतियनाथसुत्तं : १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि--"भिक्खवो" ति। "भदन्ते" ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. "सनाथा, भिक्खवे, विहरथ, मा अनाथा। दुक्खं, भिक्खवे, अनाथो विहरति। दसयिमे, भिक्खवे, नाथकरणा धम्मा। कतमे दस ? इध, भिक्खवे, भिक्खु [N.119,B.277] सीलवा होति ...पे०... समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु। 'सीलवा वतायं भिक्खु पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति आचारगोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसू' ति थेरा पि नं भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति, [R.26] मज्झिमा पि भिक्खू... नवा पि भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति। तस्स थेरानुकम्पितस्स मज्झिमानुकम्पितस्स नवानुकम्पितस्स वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानि। अयं पि धम्मो नाथकरणो।

समय पहले कही बात को भी स्मरण रखने वाला, अनुस्मरण करने वाला होता है—उसका यह धर्म भी नाथकरण कहलाता है। (९)

१०. "पुन:, भिक्षुओ! कोई भिक्षु प्रज्ञावान् होता है तथा उदय (उत्पत्ति) और अस्त (नाश) तक पहुँचने वाली, श्रेष्ठ, अन्तस्तल (गहराई) तक पहुँचनेवाली तथा दु:खक्षय की ओर सम्यक्तया ले जाने वाली प्रज्ञा से युक्त होता है—इस भिक्षु का यह धर्म भी नाथकरण (रक्षक) होता है। (१०)

"अत:, भिक्षुओ! तुम इन नाथकरण धर्मों के साथ साधना में लगो, इनसे रहित होकर नहीं। भिक्षुओ! ये दश नाथकरण धर्म होते हैं॥" ●

८. द्वितीय नाथसूत्र : : दश नाथकरण (रक्षक) धर्म

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवनाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने "भिक्षुओ!" सम्बोधन से भिक्षुओं को बुलाया। भिक्षुजन 'हाँ, भन्ते!" कहकर भगवान् के सम्मुख उपस्थित हुए। भगवान् ने उनको यह धर्मोपदेश किया—

२. "भिक्षुओ! तुम नाथकरण धर्मों के साथ ही साधना करो, उनसे रहित होकर नहीं; क्योंकि उनसे रहित होकर साधना करना बहुत कष्टकारक होता है। भिक्षुओ! वे दशविध नाथकरण धर्म कौन से हैं ? वे दश ये हैं—यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु शीलवान्...पूर्वसूत्रवत्...शिक्षापद ग्रहण कर उनका अभ्यास करता है। उसके इस कुशल कर्म से प्रभावित होकर स्थविर भिक्षु भी, मध्यम भिक्षु भी, नये भिक्षु भी उसको उचित परामर्श तथा समय समय पर आवश्यक चेतावनी देते रहना उचित

३. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु बहुस्सुतो होति ...पे०... दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा। 'बहुस्सुतो वतायं भिक्खु सुतधरो सुतसन्निचयो, ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा' ति थेरा पि नं भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति, मज्झिमा पि भिक्खू... नवा पि भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति। तस्स थेरानुकम्पितस्स मज्झिमानुकम्पितस्स नवानुकम्पितस्स वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानि। अयं पि धम्मो नाथकरणो।

४. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो होति कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को। 'कल्याणमित्तो वतायं भिक्खु कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को' ति थेरा पि नं भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति, मज्झिमा पि भिक्खू ...नवा पि भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति। तस्स थेरानुकम्पितस्स मज्झिमानुकम्पितस्स नवानुकम्पितस्स वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानि। अयं पि धम्मो नाथकरणो।

५. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सुवचो होति सोवचस्सकरणेहि धम्मेहि समन्नागतो, खमो पदक्खिणग्गाही अनुसासनिं। 'सुवचो वतायं भिक्खु सोवचस्सकरणेहि [R.27] धम्मेहि समन्नागतो, खमो पदक्खिणग्गाही अनुसासनिं' ति थेरा पि नं भिक्खू वत्तब्बं [N.120, B.278] अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति, मज्झिमा पि भिक्खू... नवा पि भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति। तस्स थेरानुकम्पितस्स मज्झिमानुकम्पितस्स नवानुकम्पितस्स वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानि। अयं पि धम्मो नाथकरणो।

६. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु यानि तानि सब्रह्मचारीनं उच्चावचानि किङ्करणीयानि, तत्थ दक्खो होति अनलसो, तत्रूपायाय वीमंसाय समन्नागतो, अलं कातुं अलं संविधातुं। 'यानि तानि सब्रह्मचारीनं उच्चावचानि किङ्करणीयानि, तत्थ दक्खो वतायं भिक्खु अनलसो, तत्रूपायाय वीमंसाय समन्नागतो, अलं कातुं अलं संविधातुं' ति थेरा पि नं भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति, मज्झिमा पि भिक्खू... नवा पि भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति। तस्स थेरानुकम्पितस्स मज्झिमानुकम्पितस्स नवानुकम्पितस्स वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानि। अयं पि धम्मो नाथकरणो।

७. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु धम्मकामो होति पियसमुदाहारो, अभिधम्मे अभिविनये उळारपामोज्जो। 'धम्मकामो वतायं भिक्खु पियसमुदाहारो, अभिधम्मे अभिविनये उळारपामोज्जो' ति थेरा पि नं भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति, मज्झिमा पि

समझते हैं। इस प्रकार उन सभी भिक्षुओं के कृपाप्राप्त उस भिक्षु के कुशल धर्मों में वृद्धि की ही सम्भावना है, हानि की नहीं। यह धर्म भी नाथकरण है। (१)

३. पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु बहुश्रुत, श्रुतधर...पूर्ववत्...। (२)

भिक्खू... नवा पि भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति। तस्स थेरानुकम्पितस्स मज्झिमानुकम्पितस्स नवानुकम्पितस्स वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानि। अयं पि धम्मो नाथकरणो।

८. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु 'आरद्धविरियो वतायं भिक्खु विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसू' ति थेरा [R.28] पि नं भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति, मज्झिमा पि भिक्खू... नवा पि भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति। तस्स थेरानुकम्पितस्स मज्झिमानुकम्पितस्स नवानुकम्पितस्स वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानि। अयं पि धम्मो नाथकरणो।

९. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सन्तुट्ठो होति इतरीतरचीवरपिण्डपातसेनासन-गिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन। 'सन्तुट्ठो वतायं भिक्खु इतरीतरपिण्डपात- [N.121] सेनासनगिलानप्पच्चयभेज्जपरिक्खारेना' ति थेरा पि नं भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति, मज्झिमा पि भिक्खू... नवा पि भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति। [B.279] तस्स थेरानुकम्पितस्स मज्झिमानुकम्पितस्स नवानुकम्पितस्स वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानि। अयं पि धम्मो नाथकरणो।

१०. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सतिमा होति परमेन सति नेपक्केन समन्नागतो, चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता। 'सतिमा वतायं भिक्खु परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो, चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता' ति थेरा पि नं भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति, मज्झिमा पि भिक्खू... नवा पि भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति। तस्स थेरानुकम्पितस्स मज्झिमानुकम्पितस्स नवानुकम्पितस्स वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुलेसु धम्मेसु, नो परिहानि।

११. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। 'पञ्ञवा वतायं भिक्खु उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया' ति थेरा पि नं भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति, मज्झिमा पि भिक्खू... नवा पि भिक्खू वत्तब्बं अनुसासितब्बं मञ्ञन्ति। तस्स थेरानुकम्पितस्स ...पे०... नो परिहानि। अयं [R.29] पि धम्मो नाथकरणो।

[इस समग्र सूत्र का विस्तार पूर्वसूत्रवत् ही होगा]

१२. ''अत: भिक्षुओ! तुम इन नाथकरण धर्मों के साथ ही साधना में लगो, इनसे रहित होकर नहीं; क्योंकि, भिक्षुओ! इन नाथकरण धर्मों से रहित होकर की गयी साधना बहुत कष्टकर होती है। भिक्षुओ! ये दश नाथकरण धर्म हैं॥''

१२. ''सनाथा, भिक्खवे, विहरथ, मा अनाथा। दुक्खं, भिक्खवे, अनाथो विहरति। इमे खो, भिक्खवे, दस नाथकरणा धम्मा'' ति।

१३. इदमवोच भगवा। अत्तमना ते भिक्खू भगवतो भासितं अभिनन्दुं ति॥ ●

९. पठमअरियावाससुत्तं : १. ''दसयिमे, भिक्खवे, अरियावासा, ये अरिया आवसिंसु वा आवसन्ति वा आवसिस्सन्ति वा। कतमे दस? इध, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गविप्पहीनो होति, छळङ्गसमन्नागतो, एकारक्खो, चतुरापस्सेनो, पनुण्णपच्चेकसच्चो, [N.122] समवयसट्ठेसनो, अनाविलसङ्कप्पो, पस्सद्धकायसङ्खारो, सुविमुत्तचित्तो, सुविमुत्त-[B.280] पञ्ञो। इमे खो, भिक्खवे, दस अरियावासा, ये अरिया आवसिंसु वा आवसन्ति वा आवसिस्सन्ति वा'' ति॥ ●

[R.30] **१०. दुतियअरियावाससुत्तं :** १. ''एकं समयं भगवा कुरूसु विहरति कम्मा-सधम्मं नाम कुरूनं निगमो। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि ...पे०... एतदवोच—

२. ''दसयिमे, भिक्खवे, अरियावासा, ये अरिया आवसिंसु वा आवसन्ति वा आवसिस्सन्ति वा। कतमे दस? इध, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गविप्पहीनो होति, छळङ्ग-समन्नागतो, एकारक्खो, चतुरापस्सेनो, पनुण्णपच्चेकसच्चो, समवयसट्ठेसनो, अनाविल-सङ्कप्पो, पस्सद्धकायसङ्खारो, सुविमुत्तचित्तो, सुविमुत्तपञ्ञो।

३. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गविप्पहीनो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो

भगवान् ने यह प्रवचन किया सन्तुष्ट हुए भिक्षुओं ने भगवान् के इस प्रवचन का अभिनन्दन किया॥ ●

९. प्रथम आर्यावाससूत्र : : दश आर्यावास धर्म

१. ''भिक्षु ये दश आर्यावास कहलाते हैं, जिनके सहारे से ही अतीत आर्यजनों ने वास (जीवनयापन या साधना) किया, वर्तमान काल के आर्यजन भी...तथा भविष्य में होने वाले आर्यजन भी इन ही दश धर्मों का आश्रय लेंगे। कौन से दश?

यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु (१) **पञ्चाङ्ग से विप्रहीण** होता है, (२) कोई **षडङ्गों से युक्त** होता है, (३) कोई **एकारक्ष** होता है, (४) कोई **चतुरपाश्रयण** होता है, (५) कोई **प्रनुन्नप्रत्येकसत्य** होता है, (६) कोई **सम्यग्विसृष्टैषण** होता है, (७) कोई **अनाविलसङ्कल्प** होता है, (८) कोई **प्रश्रब्धकायसंस्कार** होता है, (९) कोई **विमुक्तचित्त** होता है, तथा (१०) कोई **विमुक्तप्रज्ञ** होता है। भिक्षुओ! ये दश 'आर्यावास' कहलाते हैं। भिक्षुओ! इनके आश्रय से ही अतीत... अनागत... एवं वर्तमान के आर्यजन जीवनयापन करते हुए साधनारत हैं।'' ●

१०. द्वितीय आर्यावाससूत्र : : दशविध आर्यावास

१. एक समय भगवान् कुरुप्रदेश में कल्मषधर्म नामक किसी कुरुवासियों के ग्राम में साधना हेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को बुलाया और यह उपदेश किया—

२. ''भिक्षुओ! ये दश आर्यावास होते हैं, जिनके सहारे...पूर्ववत्...साधना करेंगे। कौन से दश? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु पञ्चाङ्गविप्रहीन होता है...पूर्ववत्...सुविमुक्तप्रज्ञ होता है।

कामच्छन्दो पहीनो होति, ब्यापादो पहीनो होति, थीनमिद्धं पहीनं होति, उद्धच्चकुक्कुच्चं पहीनं होति, विचिकिच्छा पहीना होति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चङ्गविप्पहीनो होति।

४. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु छळङ्गसमन्नागतो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु चक्खुना रूपं दिस्वा नेव सुमनो होति न दुम्मनो, उपेक्खको विहरति सतो सम्पजानो। सोतेन सद्दं सुत्वा ...पे०... घानेन गन्धं घायित्वा... जिव्हाय रसं सायित्वा... कायेन फोट्ठब्बं फुसित्वा... मनसा धम्मं विञ्ञाय नेव सुमनो होति न दुम्मनो, उपेक्खको विहरति सतो सम्पजानो। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु छळङ्गसमन्नागतो होति।

५. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु एकारक्खो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतारक्खेन चेतसा समन्नागतो होति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु एकारक्खो होति।

६. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु चतुरापस्सेनो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सङ्खायेकं पटिसेवति, सङ्खायेकं अधिवासेति, सङ्खायेकं परिवज्जेति, सङ्खायेकं विनोदेति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु चतुरापस्सेनो होति।

७. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु पनुण्णपच्चेकसच्चो [N.123,B.281,R.31] होति? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो यानि तानि पुथुसमणब्राह्मणानं पुथुपच्चेकसच्चानि, सेय्यथीदं—'सस्सतो लोको' ति वा, 'असस्सतो लोको' ति वा, 'अन्तवा लोको' ति वा, 'अनन्तवा लोको' ति वा, 'तं जीवं तं सरीरं' ति वा, 'अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं' ति वा, 'होति तथागतो परं मरणा' ति वा, 'न होति तथागतो परं मरणा' ति वा, 'होति च न च होति

---

३. ''कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु **पञ्चाङ्गविप्रहीण** होता है? यहाँ, भिक्षुओ! उस भिक्षु का कामराग प्रहीण होता है...व्यापाद...स्त्यानमृद्ध...औद्धत्य कौकृत्य...विचिकित्सा प्रहीण होती है। इस तरह, भिक्षुओ! वह भिक्षु 'पञ्चाङ्गविप्रहीण' होता है। (१)

४. कैसे, भिक्षुओ! कोई **षडङ्गसमन्वागत** होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु चक्षु से रूप को देखकर न प्रसन्न होता है, न अप्रसन्न; अपितु वहाँ स्मृतिमान् एवं सम्प्रजन्यवाला होकर उपेक्षापूर्वक ही व्यवहार करता है। श्रोत्र से शब्द सुनकर...घ्राण से गन्ध को सूँघकर...जिह्वा से रस को चखकर...काया से स्प्रष्टव्य विषय का स्पर्श कर...मन से धर्मों को जानकर न प्रसन्न होता है न अप्रसन्न...पूर्ववत्...। इस तरह, भिक्षुओ! वह भिक्षु 'षडङ्गसमन्वागत' होता है। (२)

५. कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु **एकारक्ष** होता है? यहाँ भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्मृति से सुरक्षित चित्तवाला होकर साधना करता है। ऐसा भिक्षु 'एकारक्ष' कहलाता है। (४)

६. कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु **चतुरपाश्रयण** होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु जान-समझकर एक का सेवन करता है, एक को स्वीकार करता है, जान-समझकर एक का त्याग करता है, एक का परिवर्जन करता है। यों वह 'चतुरपाश्रयण' कहलाता है। (४)

७. कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु **प्रनुन्नप्रत्येकसत्य** कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! ये जो श्रमण ब्राह्मणों के प्रत्येकसत्य (व्यक्तिगत मान्यताएँ) होते हैं, जैसे—'यह लोक शाश्वत हैं', 'यह लोक अशाश्वत है', 'यह लोक अन्तवान् है', 'यह लोक अनन्तवान् है', 'वही जीव है वही शरीर है',

तथागतो परं मरणा' ति वा, 'नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा' ति वा, सब्बानि तानि नुण्णानि होन्ति पनुण्णानि चत्तानि वन्तानि मुत्तानि पहीनानि पटिनिस्सट्ठानि। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पनुण्णपच्चेकसच्चो होति।

८. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु समवयसट्ठेसनो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो कामेसना पहीना होति, भवेसना पहीना होति, ब्रह्मचरियेसना पटिप्पस्सद्धा। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु समवयसट्ठेसनो होति।

९. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अनाविलसङ्कप्पो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो कामसङ्कप्पो पहीनो होति, ब्यापादसङ्कप्पो पहीनो होति, विहिंसासङ्कप्पो पहीनो होति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अनाविलसङ्कप्पो होति।

१०. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु पस्सद्धकायसङ्खारो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पस्सद्धकायसङ्खारो होति।

११. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सुविमुत्तचित्तो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो रागा चित्तं विमुत्तं होति, दोसा चित्तं विमुत्तं होति, मोहा चित्तं विमुत्तं होति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सुविमुत्तचित्तो होति।

'जीव अन्य है तथा शरीर अन्य है', 'तथागत मरणानन्तर भी रहते हैं', 'तथागत मरणानन्तर नहीं होते', 'तथागत मरणानन्तर होते भी हैं, नहीं भी होते' और 'तथागत मरणानन्तर नहीं होते, न नहीं होते।' ये सभी मान्यताएँ भिक्षु अपने चित्त से सर्वथा दूर हटा देता है, जो उसके मत से विरुद्ध हैं उनसे मुक्त हो जाता है, उनको त्याग देता है। ऐसा भिक्षु 'प्रनुन्नप्रत्येकसत्य' कहलाता है। (५)

८. ''भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु **सम्यग्विसृष्टैषण** कहलाता है? भिक्षुओ! यहाँ जिस भिक्षु ने कामैषणा, भवैषणा का परित्याग कर दिया है, उसकी ब्रह्मचर्यैषणा शान्त रहती है, अतः वह 'सम्यग्विसृष्टैषण' कहलाता है। (६)

९. ''भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु **अनाविलसङ्कल्प** होता है? भिक्षुओ! यहाँ किसी भिक्षु के कामसङ्कल्प, व्यापादसङ्कल्प तथा विहिंसासङ्कल्प प्रहीण हो जाते हैं वह भिक्षु 'अनाविलसङ्कल्प' कहलाता है। (७)

१०. ''कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु **प्रश्रब्धकायसंस्कार** कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु सुख एवं दुःख के प्रहाण से, सौमनस्य एवं दौर्मनस्य के लुप्त हो जाने से अदुःख-असुखमय उपेक्षास्मृति से परिशुद्ध चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है—ऐसा भिक्षु 'प्रश्रब्धकायसंस्कार' कहलाता है। (८)

११. ''कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु **सुविमुक्तचित्त** कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! किसी भिक्षु का चित्त राग, द्वेष एवं मोह से विमुक्त हो जाता है—ऐसा भिक्षु 'सुविमुक्तचित्त' कहलाता है। (९)

१२. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सुविमुत्तपञ्ञो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु 'रागो मे पहीनो उच्छिन्नमूलो तालावत्थुकतो अनभावङ्कतो आयतिं अनुप्पादधम्मो' [R.32] ति पजानाति, दोसो मे पहीनो ...पे०... 'मोहो मे पहीनो उच्छिन्नमूलो [N.124,B.282] तालावत्थुकतो अनभावङ्कतो आयतिं अनुप्पादधम्मो' ति पजानाति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सुविमुत्तपञ्ञो होति।

१३. "ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं अरिया अरियावासे आवसिंसु, सब्बे ते इमेव दस अरियावासे आवसिंसु; ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं अरिया अरियावासे आवसिस्सन्ति, सब्बे ते इमेव दस अरियावासे आवसिस्सन्ति; ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि अरिया अरियावासे आवसन्ति, सब्बे ते इमेव दस अरियावासे आवसन्ति। इमे खो, भिक्खवे, दस अरियावासा, ये अरिया आवसिंसु वा आवसन्ति वा आवसिस्सन्ति वा" ति॥

नाथवग्गो दुतियो॥ ●

तस्सुद्दानं

सेनासनं च पञ्चङ्गं, संयोजनाखिलेन च।
अप्पमादो आहुनेय्यो, द्वे नाथा द्वे अरियावासा ति॥ ●

---

१२. "कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु **सुविमुक्तप्रज्ञ** कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु 'मेरा राग प्रहीण हो चुका है...भविष्य में वह कभी उद्भूत नहीं होगा; मेरा द्वेष...मेरा मोह प्रहीण हो चुका है...भविष्य वह कभी उद्भूत नहीं होगा'—ऐसा जानता है। ऐसा भिक्षु 'सुविमुक्तप्रज्ञ' कहलाता है।

१३. "भिक्षुओ! जो आर्य भूतकाल में साधक हुए हैं वे सब इन आर्यावासों का आश्रयण कर ही साधना करते रहे, जो भविष्य में साधक होंगे वे भी इन आर्यावासों के आश्रयण से साधना करेंगे, तथा जो वर्तमान में हैं वे भी इन दश आर्यावासों के आश्रयण से साधना कर रहे हैं। भिक्षुओ! यों ये दश आर्यावास हैं, जिनका आश्रय ग्रहण कर आर्यजन साधना करते हैं॥" ●

नाथवर्ग तृतीय सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. शयनासनसूत्र, २. पञ्चाङ्गसूत्र, ३. संयोजनसूत्र, ४. चेत:कीलसूत्र, ५. अप्रमादसूत्र, ६. आहवनीयसूत्र, ७. प्रथम नाथसूत्र, ८. द्वितीय नाथसूत्र, ९. प्रथम आर्यावाससूत्र एवं १०. द्वितीय आर्यावाससूत्र॥ ●

३. महावग्गो

१. सीहनादसुत्तं

१. ''सीहो, भिक्खवे, मिगराजा सायन्हसमयं आसया निक्खमति। आसया निक्खमित्वा विजम्भति। विजम्भित्वा समन्ता चतुद्दिसं अनुविलोकेति। समन्ता चतुद्दिसं [R.33] अनुविलोकेत्वा तिक्खत्तुं सीहनादं नदति। तिक्खत्तुं सीहनादं नदित्वा गोचराय पक्कमति। तं किस्स हेतु? 'माहं खुद्दके पाणे विसमगते सङ्घातं आपादेसिं' ति!

२. '''सीहो' ति, भिक्खवे, तथागतस्सेतं अधिवचनं अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। यं खो, भिक्खवे, तथागतो परिसाय धम्मं देसेति, इदमस्स होति सीहनादस्मिं।

[B.283] ३. ''दसयिमानि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलानि, येहि बलेहि समन्नागतो [N.125] तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति। कतमानि दस? इध, भिक्खवे, तथागतो ठानं च ठानतो अट्ठानं च अट्ठानतो यथाभूतं पजानाति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो ठानं च ठानतो अट्ठानं च अट्ठानतो यथाभूतं पजानाति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

४. ''पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं कम्मसमादानानं ठानसो हेतुसो विपाकं यथाभूतं पजानाति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो अतीता-नागतपच्चुप्पन्नानं कम्मसमादानानं ठानसो हेतुसो विपाकं यथाभूतं पजानाति, इदं पि,

---

३. महावर्ग

१. सिंहनादसूत्र : : तथागत को दश धर्मों का ज्ञान

१. ''भिक्षुओ! मृगराज सिंह सायङ्काल अपनी गुफा से निकलता है। गुफा से निकल कर जम्हाई लेता है। जम्हाई लेकर चारों ओर देखता है। चारों ओर देख कर तीन बार सिंहनाद करता है। तीन बार सिंहनाद कर अपने भोजन (शिकार) के लिये चल पड़ता है। वह किसलिये? वह इसलिये कि उसे छोटे-मोटे प्राणियों पर, जो कि स्वयं सङ्कट में पड़े रहते हैं, आक्रमण न करना पड़े।

२. ''भिक्षुओ! यहाँ 'सिंह' शब्द तथागत अर्हत्, सम्यक्सम्बुद्ध का नाम (प्रतीक) है। भिक्षुओ! तथागत का परिषदों में धर्मप्रवचन करना ही उनका सिंहनाद है।

३. ''भिक्षुओ! तथागत के ये दश बल होते हैं, जिन बलों से युक्त तथागत आर्षभ (उत्तम) स्थान का ज्ञान रखते हैं, तदनुसार परिषदों में सिंहनाद करते हैं तथा ब्रह्मचक्र का प्रवर्तन (धर्मप्रवचन) करते हैं। कौन से दश (तथागतबल)?

''यहाँ, भिक्षुओ! तथागत स्थान को स्थान से तथा अस्थान को अस्थान से यथार्थतः जानते हैं। इनका इस प्रकार का यह ज्ञान ही तथागत का प्रथम तथागतबल होता है, जिसका आश्रयण कर तथागत उत्तम स्थान का ज्ञान रखते हैं, परिषदों में सिंहनाद करते हैं तथा ब्रह्मचक्र का प्रवर्तन करते हैं। (१)

४. ''पुनः, भिक्षुओ! तथागत अतीत, अनागत एवं प्रत्युत्पन्न कर्मसमादानों का स्थानरूप से

भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

५. "पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो सब्बत्थगामिनिं पटिपदं यथाभूतं पजानाति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो सब्बत्थगामिनिं पटिपदं यथाभूतं पजानाति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

६. "पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो अनेकधातुं नानाधातुं लोकं [R.34] यथाभूतं पजानाति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो अनेकधातुं नानाधातुं लोकं यथाभूतं पजानाति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति ...पे०... ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

७. "पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो सत्तानं नानाधिमुत्तिकतं यथाभूतं पजानाति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो नानाधिमुत्तिकतं यथाभूतं पजानाति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति ...पे०... ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

८. "पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो परसत्तानं परपुग्गलानं इन्द्रियपरोपरियत्तं यथाभूतं पजानाति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो परसत्तानं परपुग्गलानं इन्द्रियपरोपरियत्तं यथाभूतं पजानाति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति ...पे०... [B.284] ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

९. "पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो झानविमोक्खसमाधिसमापत्तीनं [N.126] सङ्किलेसं वोदानं वुट्ठानं यथाभूतं पजानाति। यं पि ...पे०... पजानाति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति ...पे०... ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

तथा हेतुरूप से विपाक (फल) भी यथार्थतः जानते हैं।...यह ज्ञान भी, भिक्षुओ! तथागत का तथागतबल कहलाता है, जिसका आश्रयण कर तथागत...पूर्ववत्...ब्रह्मचक्रप्रवर्तन करते हैं। (२)

५. "पुनः, भिक्षुओ! तथागत सर्वार्थगामी (आर्य अष्टाङ्गिक) मार्ग (उपाय) को यथार्थतः जानते हैं...यह ज्ञान भी, भिक्षुओ! तथागत का...पूर्ववत्...करते हैं। (३)

६. "पुनः, भिक्षुओ! तथागत अनेक धातु तथा नाना धातुओं वाले इस ब्रह्माण्ड (लोक) को यथार्थतः जानते हैं...यह ज्ञान भी, भिक्षुओ! तथागत का...पूर्ववत्...करते हैं। (४)

७. "पुनः, भिक्षुओ! तथागत प्राणियों के नानाधिमुक्तिकृत कार्यों को यथार्थतः जानते हैं...यह ज्ञान भी भिक्षुओ! तथागत का...पूर्ववत्...ब्रह्मचक्रप्रवर्तन करते हैं। (५)

८. "पुनः, भिक्षुओ! तथागत अन्य प्राणियों की इन्द्रियों द्वारा किये गये ऊँचे-नीचे कार्यों के विषय में यथार्थतः जानते हैं..., यह ज्ञान भी, भिक्षुओ! तथागत का...पूर्ववत्...ब्रह्मचक्रप्रवर्तन करते हैं। (६)

९. "पुनः, भिक्षुओ! तथागत ध्यान, विमोक्ष, समाधि समापत्तियों के क्लेश, व्यवदान (शुद्धि) एवं व्युत्थान को यथार्थतः जानते हैं।...यह ज्ञान भी...तथागत का ...पूर्ववत्... ब्रह्मचक्रप्रवर्तन करते हैं। (७)

१०. ''पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो तिस्सो पि जातियो चतस्सो पि जातियो पञ्च पि [R.35] जातियो दस पि जातियो बीसं पि जातियो तिंसं पि जातियो चत्तालीसं पि जातियो पञ्ञासं पि जातियो जातिसतं पि जातिसहस्सं पि जातिसतसहस्सं पि अनेके पि संवट्टकप्पे अनेके पि विवट्टकप्पे अनेके पि संवट्टविवट्टकप्पे, 'अमुत्रासिं एवंनामो एवंगोत्तो एवंवण्णो एवमाहारो एवंसुखदुक्खप्पटतिसंवेदी एवमायुपरियन्तो, सो ततो चुतो अमुत्र उदपादिं; तत्रापासिं एवंनामो एवंगोत्तो एवंवण्णो एवमाहारो एवंसुखदुक्खप्पटिसंवेदी एवमायु-परियन्तो, सो ततो चुतो इधूपपन्नो' ति, इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति। यं पि भिक्खवे, तथागतो अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

११. ''पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्त-मानुसकेन सत्ते पस्सति चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति—'इमे वत भोन्तो सत्ता कायदुच्चरितेन समन्नागता वचीदुच्चरितेन समन्नागता मनोदुच्चरितेन समन्नागता अरियानं उपवादका मिच्छादिट्ठिका मिच्छादिट्ठिकम्मसमादाना, ते कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं [B.285] उपपन्ना; इमे वा पन भोन्तो सत्ता कायसुचरितेन समन्नागता वचीसुचरितेन समन्नागता मनोसुचरितेन समन्नागता अरियानं अनुपवादका सम्मादिट्ठिका सम्मादिट्ठिकम्म-समादाना, ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपन्ना' ति। इति दिब्बेन चक्खुना [N.127] विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सति चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीतं सुवण्णे [R.36] दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

१२. ''पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं

---

१०. ''पुनः, भिक्षुओ! तथागत अपने अनेकविध पूर्वनिवासों (जन्मों) को जानते हैं; जैसे—एक जन्म, दो जन्म...पूर्ववत्...यह ज्ञान भी तथागत का...पूर्ववत्...ब्रह्मचक्रप्रवर्तन करते हैं। (८)

११. ''पुनः, भिक्षुओ! तथागत अपने मानवदुर्लभ दिव्यचक्षु से उत्पन्न एवं विनष्ट होते छोटे-बड़े प्राणियों को देखते हैं...पूर्ववत्...यह ज्ञान भी तथागत का...पूर्ववत्...ब्रह्मचक्रप्रवर्तन करते हैं। (९)

१२. ''पुनः, भिक्षुओ! तथागत आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को

पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

''इमानि खो, भिक्खवे, दस तथागतस्स तथागतबलानि, येहि बलेहि समन्नागतो तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेती'' ति॥●

२. अधिवुत्तिपदसुत्तं : १. अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं आनन्दं भगवा एतदवोच—

''ये ते, आनन्द, धम्मा तेसं तेसं अधिवुत्तिपदानं अभिञ्ञा सच्छिकिरियाय संवत्तन्ति, विसारदो अहं, आनन्द, तत्थ पटिजानामि। 'तेसं तेसं तथा तथा धम्मं देसेतुं यथा यथा पटिपन्नो सन्तं वा अत्थी ति ञस्सति, अनन्तं वा नत्थी ति ञस्सति, हीनं वा [B.286] हीनं ति ञस्सति, पणीतं वा पणीतं ति ञस्सति, सउत्तरं वा सउत्तरं ति ञस्सति, अनुत्तरं वा अनुत्तरं ति ञस्सति; यथा यथा वा पनं तं ञातेय्यं वा दट्ठेय्यं वा सच्छिकरेय्यं वा, तथा [R.37] तथा ञस्सति, वा दक्खति वा सच्छिकरिस्सति वा' ति ठानमेतं विज्जति। [N.128] एतदानुत्तरियं, आनन्द, ञाणानं यदिदं तत्थ तत्थ यथाभूतञाणं। एतस्मा चाहं, आनन्द, ञाणा अञ्ञं ञाणं उत्तरितरं वा पणीततरं वा नत्थी ति वदामि।

२. ''दसयिमानि, आनन्द, तथागतस्स तथागतबलानि, येहि बलेहि समन्नागतो

इसी जन्म में स्वयं जानकर...पूर्ववत्...यह ज्ञान भी तथागत का...पूर्ववत्...ब्रह्मचक्रप्रवर्तन करते हैं। (१०)

''भिक्षुओ! तथागत के ये दश तथागतबल हैं, जिन बलों से युक्त होकर तथागत उत्तम स्थान का ज्ञान रखते हैं। परिषदों में सिंहनाद करते हैं तथा ब्रह्मचक्र का प्रवर्त्तन (धर्मोपदेश) करते हैं॥''●

२. अध्युक्तिपदसूत्र : : तथागत के दश बल

१. तब आयुष्मान् आनन्द, जहाँ भगवान् साधनारत थे, वहाँ पहुँचे।...आयुष्मान् आनन्द से भगवान् ने यह कहा—

''आनन्द, ये जितने धर्म हैं, उनको जिन नामों या संज्ञाओं से निर्दिष्ट किया जाता है, आनन्द! मैं उन सबको भलीभाँति जानता हूँ। किसी भी पुरुष के लिये यही उचित है कि उन उन धर्मों के विषय में जैसा जो कुछ उसने देखा है, वह वैसा ही जाने। जैसे अस्तित्ववान् को विद्यमान के रूप में, अनस्तित्वान् को अविद्यमान के रूप में, हीन (तुच्छ) को हीन के रूप में, प्रणीत (उत्तम) को प्रणीत के रूप में, सोत्तर को सोत्तर के रूप में, अनुत्तर को अनुत्तर के रूप में देखा है तो उनको वैसा ही देखना चाहिये, साक्षात्कार करना चाहिये—यही उचित है, यही सम्भव है। आनन्द! सभी ज्ञानों में यथाभूत (सत्य) ज्ञान ही सर्वोत्तम है। अतः, आनन्द! मैं इस ज्ञान के आगे अन्य किसी ज्ञान को श्रेष्ठ नहीं कहता।

तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति। कतमानि दस? इधानन्द, तथागतो ठानं च ठानतो अट्ठानं च अट्ठानतो यथाभूतं पजानाति। यम्पानन्द, तथागतो ठानं च ठानतो अट्ठानं च अट्ठानतो यथाभूतं पजानाति, इदम्पानन्द, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

३. ''पुन च परं, आनन्द तथागतो अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं कम्मसमादानानं ठानसो हेतुसो विपाकं यथाभूतं पजानाति। यम्पानन्द ...पे०... इदम्पानन्द ...पे०... ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

४. ''पुन च परं, आनन्द, तथागतो सब्बत्थगामिनिं पटिपदं यथाभूतं पजानाति। यम्पानन्द ...पे०... इदम्पानन्द ...पे०... ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

५. ''पुन च परं, आनन्द, तथागतो अनेकधातुं नानाधातुं लोकं यथाभूतं पजानाति। यम्पानन्द ...पे०... इदम्पानन्द ...पे०... ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

[R.38] ६. ''पुन च परं, आनन्द, तथागतो सत्तानं नानाधिमुत्तिकतं यथाभूतं पजानाति। यम्पानन्द ...पे०... इदम्पानन्द ...पे०... ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

७. ''पुन च परं, आनन्द, तथागतो परसत्तानं परपुग्गलानं इन्द्रियपरोपरियत्तं यथाभूतं पजानाति। यम्पानन्द ...पे०... इदम्पानन्द ...पे०... ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

८. ''पुन च परं, आनन्द, तथागतो झानविमोक्खसमाधिसमापत्तीनं सङ्किलेसं वोदानं वुट्ठानं यथाभूतं पजानाति। यम्पानन्द ...पे०... इदम्पानन्द ...पे०... ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

[B.287] ९. ''पुन च परं, आनन्द, तथागतो अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, [N.129] सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति। यम्पानन्द ...पे०... इदम्पानन्द ...पे०... ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

१०. ''पुन च परं, आनन्द, तथागतो दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति। यम्पानन्द ...पे०... इदम्पानन्द ...पे०... ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

११. ''पुन च परं, आनन्द, तथागतो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। यम्पानन्द, तथागतो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इदम्पानन्द, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

---

२. ''आनन्द! तथागत के ये दश तथागतबल हैं, जिन बलों का आश्रयण कर तथागत सर्वत्र उत्तम स्थान प्राप्त करते हैं; सभाओं में सिंहनाद करते हैं, तथा ब्रह्मचक्र का प्रवर्तन (धर्मप्रवचन) करते हैं। कौन से दश ?...पूर्वसूत्रवत्... ॥

''इमानि खो, भिक्खवे, दस तथागतस्स तथागतबलानि. येहि बलेहि समन्नागतो तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेती'' ति॥ ●

३. कायसुत्तं : १. ''अत्थि, भिक्खवे, धम्मा कायेन पहातब्बा, नो वाचाय। अत्थि, भिक्खवे, धम्मा वाचाय पहातब्बा, नो कायेन। अत्थि, भिक्खवे, धम्मा नेव कायेन [R.39] पहातब्बा नो वाचाय, पञ्ञाय दिस्वा पहातब्बा।

२. ''कतमे च, भिक्खवे, धम्मा कायेन पहातब्बा, नो वाचाय? इध, भिक्खवे, भिक्खु अकुसलं आपन्नो होति किञ्चि देसं कायेन। तमेनं अनुविच्च विञ्ञू सब्रह्मचारी एवमाहंसु—'आयस्मा खो अकुसलं आपन्नो किञ्चि देसं कायेन। साधु वतायस्मा कायदुच्चरितं पहाय कायसुचरितं भावेतू' ति। सो अनुविच्च विञ्ञूहि सब्रह्मचारीहि वुच्चमानो कायदुच्चरितं पहाय कायसुचरितं भावेति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, धम्मा कायेन पहातब्बा, नो वाचाय।

३. ''कतमे च, भिक्खवे, धम्मा वाचाय पहातब्बा, नो कायेन? इध, भिक्खवे, भिक्खु अकुसलं आपन्नो होति किञ्चि देसं वाचाय। तमेनं अनुविच्च विञ्ञू [B.288,N.130] सब्रह्मचारी एवमाहंसु—'आयस्मा खो अकुसलं आपन्नो किञ्चि देसं वाचाय। साधु वतायस्मा वचीदुच्चरितं पहाय वचीसुचरितं भावेतू' ति। सो अनुविच्च विञ्ञूहि

(इससे आगे पूर्ववर्णित सिंहनादसूत्र के अविकल पाठ का हिन्दी रूपान्तरण समझ लें।)

३. कायसूत्र : : काय, वाक् एवं प्रज्ञा से त्याज्य दश धर्म

१. ''भिक्षुओ! कुछ धर्म हैं जिनका काया से ही त्याग किया जा सकता है, वाणी से नहीं; कुछ धर्म हैं, जिनका वाणी से ही त्याग किया जा सकता है, काया से नहीं; और कुछ धर्म ऐसे हैं जिनका त्याग न काया से ही किया जा सकता है और न वाणी से; उनका प्रज्ञा से ही समझ-बूझकर त्याग किया जाना सम्भव है।

२. ''भिक्षुओ! कौन से धर्म काया से त्याज्य हैं, वाणी से नहीं? यहाँ भिक्षुओ! कोई भिक्षु काया के किसी भाग से किसी अकुशल आपत्ति से ग्रस्त हो जाय; उस भिक्षु के दूसरे साथी उस आपत्ति को जानकर उसे यों सावधान करें—'आयुष्मन्! तुम अपनी काया के इस अंश में अकुशल आपत्ति से ग्रस्त हो, तुम्हारे लिये यही उचित होगा कि तुम इस कायदुश्चरित का त्याग कर कायसुचरित का ग्रहण करो।' वह भिक्षु साथियों के कहने से इस बात को समझकर (अनुविच्च) कायदुश्चरित का त्याग कर कायसुचरित की भावना करने लगे। भिक्षुओ! ऐसे धर्म 'काया से त्याज्य' कहलाते हैं, वाणी से नहीं। (क)

३. ''और, भिक्षुओ! कौन से धर्म वाणी से त्याज्य हैं, काया से नहीं? यहाँ भिक्षुओ! कोई भिक्षु वाणी के किसी भाग से अकुशल आपत्तिग्रस्त हो जाय, उस भिक्षु के दूसरे साथी उसकी उस आपत्ति को देखकर उसको सावधान करें—'आयुष्मन्! तुम अपनी वाणी के इस अंश में अकुशल आपत्ति से ग्रस्त हो। तुम्हारे लिये यह उचित होगा कि तुम इस वाग्दुश्चरित का त्यागकर वाक्सुचरित की भावना करो।' तब वह भिक्षु, साथियों की बात मानकर, उस वाग्दुश्चरित का त्यागकर

सब्रह्मचारीहि वुच्चमानो वचीदुच्चरितं पहाय वचीसुचरितं भावेति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, धम्मा कायेन पहातब्बा, नो वाचाय।

४. "कतमे च, भिक्खवे, धम्मा नेव कायेन पहातब्बा नो वाचाय, पञ्ञाय दिस्वा पहातब्बा? लोभो, भिक्खवे, नेव कायेन पहातब्बो नो वाचाय, पञ्ञाय दिस्वा पहातब्बो। [R.40] दोसो, भिक्खवे ...पे०... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं, भिक्खवे, नेव कायेन पहातब्बं नो वाचाय, पञ्ञाय दिस्वा पहातब्बं।

५. "पापिका, भिक्खवे, इस्सा नेव कायेन पहातब्बा नो वाचाय, पञ्ञाय दिस्वा पहातब्बा। कतमा च, भिक्खवे, पापिका इस्सा? इध, भिक्खवे, इज्झति गहपतिस्स वा गहपतिपुत्तस्स वा धनेन वा धञ्ञेन वा रजतेन वा जातरूपेन वा। तत्राञ्ञतरस्स दासस्स वा उपवासस्स वा एवं होति—'अहो वतिमस्स गहपतिस्स वा गहपतिपुत्तस्स वा न इज्झेय्य धनेन वा धञ्ञेन वा रजतेन वा जातरूपेन वा' ति। समणो वा पन ब्राह्मणो वा लाभी होति चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं' ति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, पापिका इस्सा।

६. "पापिका, भिक्खवे, इच्छा नेव कायेन पहातब्बा नो वाचाय, पञ्ञाय दिस्वा पहातब्बा। कतमा च, भिक्खवे, पापिका इच्छा? इध, भिक्खवे, एकच्चो अस्सद्धो समानो

वाक्सुचरित की भावना करने लगे। भिक्षुओ! ऐसे धर्म 'वाणी से त्याज्य' कहलाते हैं, काया से नहीं। (ख)

४. "और, भिक्षुओ! कौन से धर्म न काया से और न वाणी से ही प्रहातव्य हैं, अपितु उनका त्याग, प्रज्ञा द्वारा जानकर ही, किया जा सकता है? भिक्षुओ! लोभ न काया से प्रहातव्य है, न वाणी से ही; अपितु, प्रज्ञा से जानकर ही, इसका प्रहाण किया जा सकता है। द्वेष, भिक्षुओ! ...मोह...क्रोध... उपनाह...म्रक्ष...प्रदाश...मात्सर्य भी, भिक्षुओ! न काया से प्रहातव्य है, न वाणी से ही; यह तो प्रज्ञा द्वारा जानकर ही प्रहीण किया जा सकता है।

५. "भिक्षुओ! यह **पापमयी ईर्ष्या** न काया से प्रहेय है, न वाणी से ही; अपितु प्रज्ञा द्वारा जानने के बाद ही प्रहेय है। भिक्षुओ! यह पापमयी ईर्ष्या क्या है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई गृहपति या गृहपतिपुत्र धन, धान्य तथा सुवर्ण या रजत की वृद्धि से समाज में उन्नति प्राप्त करता है। तब उसके किसी दास या साथ रहने वाले के मन में यह भावना उठे—'अरे! इस गृहपति या गृहपतिपुत्र की धन, धान्य, सुवर्ण रजत आदि की वृद्धि से उन्नति न हो।'

"या किसी श्रमण ब्राह्मण को चीवर, पिण्डपात, शयनासन एव पथ्य में सहायक भैषज्य परिष्कार का अतिशय लाभ हो रहा हो। उसको देखकर कोई दूसरा श्रमण ब्राह्मण अपने मन में यह भावना करे—'इसको इन चीवर, पिण्डपात आदि का अतिशय लाभ न हो।' भिक्षुओ! यह कहलाती है—पापमयी ईर्ष्या।

६. "भिक्षुओ! **पापमयी इच्छा** भी न काया से प्रहेय है और न वाणी से; अपितु यह प्रज्ञा द्वारा परीक्षा करके ही प्रहीण की जा सकती है। भिक्षुओ! यह पापमयी इच्छा क्या होती है? भिक्षुओ!

'सद्धो ति मं जानेय्युं' ति इच्छति; दुस्सीलो समानो 'सीलवा ति मं जानेय्युं' ति इच्छति; अप्पस्सुतो समानो 'बहुस्सुतो ति मं जानेय्युं' ति इच्छति; सङ्गणिकारामो समानो 'पविवित्तो ति मं जानेय्युं' ति इच्छति; कुसीतो समानो 'आरद्धविरियो ति मं जानेय्युं' ति इच्छति; मुट्ठस्सति समानो 'उपट्ठितस्सती ति मं जानेय्युं' ति इच्छति; असमाहितो समानो '[B.289] समाहितो ति मं जानेय्युं' ति इच्छति; दुप्पञ्ञो समानो 'पञ्ञवा ति मं जानेय्युं' ति [N.131] इच्छति; अखीणासवो समानो 'खीणासवो ति मं जानेय्युं' ति इच्छति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, पापिका इच्छा। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, धम्मा नेव कायेन पहातब्बा नो [R.41] वाचाय, पञ्ञाय दिस्वा पहातब्बा।

७. ''तं चे, भिक्खवे, भिक्खुं लोभो अभिभुय्य इरियति, दोसो... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा अभिभुय्य इरियति। सो एवमस्स वेदितब्बो—'नायमायस्मा तथा पजानाति यथा पजानतो लोभो न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं लोभो अभिभुय्य इरियति; नायमायस्मा तथा पजानाति यथा पजानतो दोसो न होति... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं पापिका इच्छा अभिभुय्य इरियती' ति।

८. ''तं चे, भिक्खवे, भिक्खुं लोभो नाभिभुय्य इरियति, दोसो... मोहो... कोधो...

यहाँ कोई अश्रद्धालु होता हुआ भी 'मुझे लोग श्रद्धालु रूप में जानें'—ऐसी इच्छा करता है, दु:शील होता हुआ भी 'मुझे लोग शीलवान् रूप में जाने'—ऐसी इच्छा करता है, अल्पश्रुत होता हुआ भी 'मुझे लोग बहुश्रुत रूप में जानें'—ऐसी इच्छा करता है, जनसमाज में रहता हुआ भी 'मुझे लोग एकान्तसाधक समझें'—ऐसी इच्छा करता है, आलस्ययुक्त होता हुआ भी 'मुझे लोग साधना में उद्योगरत समझें'—ऐसी इच्छा करता है, लुप्तस्मृति होता हुआ भी 'मुझे लोग उपस्थितस्मृति समझें'—ऐसी इच्छा करता है, असमाहितचित्त होता हुआ भी 'मुझे सब समाधिनिष्ठ समझे'—ऐसी इच्छा करता है, प्रज्ञारहित होते हुए भी 'मुझे लोग प्रज्ञावान् समझें'—ऐसी इच्छा करता है, क्षीणाश्रव न होता हुआ भी 'मुझे लोग क्षीणाश्रव समझें'—ऐसी इच्छा करता है। भिक्षुओ! यह कहलाती है पापिका इच्छा। भिक्षुओ! ये (उपर्युक्त) धर्म न काया से प्रहातव्य हैं, न वाणी से ही; अपितु प्रज्ञा द्वारा परीक्षण कर ही प्रहीण किये जा सकते हैं।

७. ''भिक्षुओ! उस भिक्षु को लोभ अभिभूत कर प्रेरित करता है; द्वेष... मोह... क्रोध... उपनाह... म्रक्ष... प्रदाश... मात्सर्य... पापमयी ईर्ष्या... पापमयी इच्छा उस भिक्षु को अभिभूत कर प्रेरित करती है। उसके विषय में यह समझ लेना चाहिये—'इस आयुष्मान् को वह ज्ञान नहीं है, जिसके सहारे से लोभ न हो... द्वेष न हो... मोह न हो... क्रोध न हो... उपनाह न हो... म्रक्ष न हो... प्रदाश न हो... मात्सर्य न हो... पापमयी ईर्ष्या न हो...पापमयी इच्छा न हो, अतएव यह पापमयी इच्छा इसको अभिभूत कर प्रेरित करती है।

८. ''यदि, भिक्षुओ! उस भिक्षु को लोभ अभिभूत कर प्रेरित नहीं कर पाता है...द्वेष...मोह...

उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा नाभिभुय्य इरियति, सो एवमस्स वेदितब्बो—'तथा अयमायस्मा पजानाति यथा पजानतो लोभो न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं लोभो नाभिभुय्य इरियति; अयमायस्मा पजानाति यथा पजानतो दोसो न होति... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं पापिका इच्छा नाभिभुय्य इरियती' ति ॥ ●

४. महाचुन्दसुत्तं : १. एकं समयं आयस्मा महाचुन्दो चेतीसु विहरति सहजातियं। तत्र खो आयस्मा महाचुन्दो भिक्खू आमन्तेसि—"आवुसो भिक्खवे" ति। "आवुसो" ति [R.42] खो ते भिक्खू आयस्मतो महाचुन्दस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा महाचुन्दो एतदवोच—

"ञाणवादं, आवुसो, भिक्खु वदमानो—'जानामिमं धम्मं, पस्सामिमं धम्मं' ति। तं [N.132, B.290] चे, आवुसो, भिक्खुं लोभो अभिभुय्य तिट्ठति, दोसो... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा अभिभुय्य तिट्ठति, सो एवमस्स वेदितब्बो—'नायमायस्मा तथा पजानाति यथा पजानतो लोभो न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं लोभो अभिभुय्य तिट्ठति; नायमायस्मा तथा पजानाति यथा पजानतो दोसो न होति... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं पापिका इच्छा अभिभुय्य तिट्ठती' ति।

क्रोध... उपनाह... म्रक्ष... प्रदाश... मात्सर्य... पापिका ईर्ष्या... पापिका इच्छा उस भिक्षु को अभिभूत कर प्रेरित नहीं कर पाती है तो उसके विषय में भिक्षुओं को यह समझ लेना चाहिये—'इस आयुष्मान् को वह ज्ञान है, जिसके होने से लोभ न हो... द्वेष... मोह... क्रोध... उपनाह... म्रक्ष... प्रदाश... मात्सर्य... पापिका ईर्ष्या... पापिका इच्छा न हो। अतएव वह पापमयी इच्छा इसको अभिभूत कर प्रेरित नहीं कर पा रही है॥''' (ग) ●

४. महाचुन्दसूत्र : :

१. एक समय आयुष्मान् महाचुन्द चेदिदेश के सहजाति नगर में साधना हेतु ठहरे हुए थे। वहाँ उनने भिक्षुओं को "आयुष्मन् भिक्षुओ" कहकर अपने पास बुलाया भिक्षुजन भी "आयुष्मन्!" कहकर उनके सम्मुख आये। तब आयुष्मान् महाचुन्द ने उनको यह धर्मप्रवचन किया—

"आयुष्मानो! कोई भिक्षु **ज्ञानवाद** का आश्रय लेकर यह कहता है—'मैं इस धर्म को जान चुका हूँ, साक्षात् कर चुका हूँ।' उसको यदि लोभ अभिभूत कर बैठता है, द्वेष... मोह... क्रोध... उपनाह... म्रक्ष... प्रदाश... मात्सर्य अभिभूत कर बैठता है तो उसके विषय में यह समझ लेना चाहिये—'इस आयुष्मान् को वह ज्ञान नहीं है, जिसके होने से लोभ अभिभूत न कर पाता हो, इसीलिये यह लोभ इसको अभिभूत कर बैठा है, इस को वह ज्ञान भी नहीं है जिसके होने से द्वेष अभिभूत न कर पाता हो; इसीलिये यह द्वेष इसको अभिभूत कर बैठा है... मोह... क्रोध... उपनाह... म्रक्ष... प्रदाश... मात्सर्य... पापमय ईर्ष्या... पापमय इच्छा अभिभूत नहीं कर पाती, इसीलिये यह पापमयी इच्छा अभिभूत कर बैठी है।'

२. "भावनावादं, आवुसो, भिक्खु वदमानो—'भावितकायोम्हि भावितसीलो भावितचित्तो भावितपञ्ञो' ति। तं चे, आवुसो, भिक्खुं लोभो अभिभुय्य तिट्ठति, दोसो... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा अभिभुय्य तिट्ठति, सो एवमस्स वेदितब्बो—'नायमायस्मा तथा पजानाति यथा पजानतो लोभो न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं लोभो अभिभुय्य तिट्ठति; नायमायस्मा तथा पजानाति यथा पजानतो दोसो न होति... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं पापिका इच्छा अभिभुय्य तिट्ठती' ति॥

३. "ञाणवादं च, आवुसो, भिक्खु वदमानो भावनावादं च—'जानामिमं धम्मं, पस्सामिमं धम्मं, भावितकायोम्हि भावितसीलो भावितचित्तो भावितपञ्ञो' ति। तं चे, आवुसो, भिक्खुं लोभो अभिभुय्य तिट्ठति, दोसो... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा अभिभुय्य तिट्ठति, सो [R.43] एवमस्स वेदितब्बो—'नायमायस्मा तथा पजानाति यथा पजानतो लोभो न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं लोभो अभिभुय्य तिट्ठति; नायमायस्मा तथा पजानाति यथा पजानतो दोसो न होति... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं पापिका इच्छा अभिभुय्य तिट्ठती' ति।

४. "सेय्यथापि, आवुसो, पुरिसो दलिद्दो व समानो अड्ढवादं वदेय्य, [B.291] अधनो व समानो धनवावादं वदेय्य, अभोगो व समानो भोगवावादं वदेय्य। सो किस्मिञ्चिदेव धनकरणीये समुप्पन्ने न सक्कुणेय्य उपनीहातुं धनं वा धञ्ञं वा रजतं [N.133] वा जातरूपं वा। तमेनं एवं जानेय्युं—'दलिद्दो व अयमायस्मा समानो अड्ढवादं वदेति, अधनो व अयमायस्मा समानो धनवावादं वदेति, अभोगवा व अयमायस्मा समानो

---

२. "आयुष्मानो! इसी प्रकार कोई भिक्षु **भावनावाद** का आश्रय लेकर यह कहे—'मेरा शरीर, मेरा शील, मेरा चित्त और मेरी प्रज्ञा पूर्णत: भावित (अभ्यस्त या विकसित) है।' आयुष्मानो! ऐसे भिक्षु को यदि लोभ अभिभूत कर बैठता है ...पूर्ववत्... यह पापमयी इच्छा अभिभूत कर बैठी है।

३. "आयुष्मानो! इसी प्रकार कोई भिक्षु **ज्ञानवाद** एवं **भावनावाद** का आश्रय लेकर यह कहे—'मैं इस धर्म को जान चुका हूँ, साक्षात् कर चुका हूँ, मेरा शरीर, मेरा शील, मेरा चित्त और मेरी प्रज्ञा भी भावित हो चुकी है।' ऐसे भिक्षु को यदि लोभ अभिभूत कर बैठता है...पूर्ववत्...यह पापमयी इच्छा अभिभूत कर बैठी है।

४. "जैसे, आयुष्मानो! कोई पुरुष दरिद्र होता हुआ भी पूँजीपति होने की बात करे, निर्धन होने पर भी धनवान् होने की बात करे, ऐश्वर्यरहित होता हुआ भी ऐश्वर्यसम्पन्नता की बात करे; परन्तु वह अवसर आने पर, धन-धान्य सुवर्ण रजत आदि की कोई व्यवस्था न कर पावे। तब उसको लोग समझ लेते हैं कि यह आयुष्मान् दरिद्र होता हुआ भी पूँजीपति होने की डींग मार (आत्मश्लाघा

भोगवावादं वदेति। तं किस्स हेतु? तथा हि अयमायस्मा किस्मिञ्चिदेव धनकरणीये समुप्पन्ने न सक्कोति उपनीहातुं धनं वा धञ्ञं वा रजतं वा जातरूपं वा' ति।

''एवमेव खो, आवुसो, ञाणवादं च भिक्खु वदमानो भावनावादं च—'जानामिमं धम्मं, पस्सामिमं धम्मं, भावितकायोम्हि भावितसीलो भावितचित्तो भावितपञ्ञो' ति। तं चे, आवुसो, भिक्खुं लोभो अभिभुय्य तिट्ठति, दोसो... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो ... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा अभिभुय्य तिट्ठति, सो एवमस्स वेदितब्बो—'नायमायस्मा तथा पजानाति यथा पजानतो लोभो न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं लोभो अभिभुय्य तिट्ठति; नायमायस्मा तथा पजानाति यथा पजानतो दोसो न [R.44] होति... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा ...पापिका इच्छा न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं पापिका इच्छा अभिभुय्य तिट्ठती' ति। (क)

५. ''ञाणवादं, आवुसो, भिक्खु वदमानो—'जानामिमं धम्मं, पस्सामिमं धम्मं' ति। तं चे, आवुसो, भिक्खुं लोभो नाभिभुय्य तिट्ठति, दोसो... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा नाभिभुय्य तिट्ठति, सो एवमस्स वेदितब्बो—'अयमायस्मा तथा पजानाति यथा पजानतो लोभो न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं लोभो नाभिभुय्य तिट्ठति; तथा अयमायस्मा पजानाति यथा पजानतो दोसो न होति... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं पापिका इच्छा नाभिभुय्य तिट्ठती' ति।

[B.292] ६. ''भावनावादं, आवुसो, भिक्खु वदमानो—'भावितकायोम्हि भावितसीलो भावितचित्तो भावितपञ्ञो' ति। तं चे, आवुसो, भिक्खुं लोभो नाभिभुय्य तिट्ठति, दोसो... [N.134] मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा...

कर) रहा है, निर्धन होता हुआ धनवान् होने का ढोंग रच रहा है, ऐश्वर्यरहित होता हुआ भी ऐश्वर्यवत्ता प्रदर्शित कर रहा है। वह क्यों? वह इसलिये कि यह आयुष्मान् धन-व्यय का प्रसङ्ग आने पर धन, धान्य, सुवर्ण, रजत में से कुछ भी न दे पाता।

''इसी प्रकार, आयुष्मानो! जो भिक्षु **ज्ञानवाद** एवं **भावनावाद** का आश्रय लेकर यह कहता है—'मैं इस धर्म को जान चुका हूँ...पूर्ववत्...प्रज्ञा भी भावित हो चुकी है'; उस भिक्षु को यदि लोभ अभिभूत कर बैठता है...पूर्ववत्...पापमयी इच्छा अभिभूत कर बैठी है। (क)

५. (परन्तु) ''आयुष्मानो! जो भिक्षु **ज्ञानवाद** के आश्रयण से, यह कहता है—'मैं इस धर्म को जान चुका हूँ, साक्षात् कर चुका हूँ।' उसको यदि लोभ अभिभूत नहीं कर पाया है...पापिका इच्छा अभिभूत नहीं कर पायी है तो उसके विषय में यह समझ लेना चाहिये—'यह आयुष्मान् वैसा ज्ञान अधिगत कर चुका है, जिसके कारण इसको लोभ अभिभूत नहीं कर पाया...पापमयी इच्छा अभिभूत नहीं कर पायी।

६. ''तथा, आयुष्मानो! कोई भिक्षु **भावनावाद** का आश्रयण कर यह कहे—'मेरा काय, मेरा शील, मेरा चित्त तथा मेरी प्रज्ञा भावित हो चुकी है।' आयुष्मानो! उस भिक्षु को यदि लोभ अभिभूत

पापिका इच्छा नाभिभुय्य तिट्ठति, सो एवमस्स वेदितब्बो—'तथा अयमायस्मा पजानाति यथा पजानतो लोभो न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं लोभो नाभिभुय्य तिट्ठति; तथा अयमायस्मा पजानाति यथा पजानतो दोसो न होति... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं पापिका इच्छा नाभिभुय्य तिट्ठती' ति।

७. ''ञाणवादं, आवुसो, भिक्खु वदमानो भावनावादं च—'जानामिमं धम्मं, पस्सामिमं धम्मं, भावितकायोम्हि भावितसीलो भावितचित्तो भावितपञ्ञो' ति। तं चे, आवुसो, भिक्खुं लोभो नाभिभुय्य तिट्ठति, दोसो... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा नाभिभुय्य तिट्ठति, सो एवमस्स वेदितब्बो—'तथा अयमायस्मा पजानाति यथा पजानतो लोभो न होति, तथा हिमं [R.45] आयस्मन्तं लोभो नाभिभुय्य तिट्ठति; तथा अयमायस्मा पजानाति यथा पजानतो दोसो न होति... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं पापिका इच्छा नाभिभुय्य तिट्ठती' ति।

८. ''सेय्यथापि, आवुसो, पुरिसो अड्ढो व समानो अड्ढवादं वदेय्य, धनवा व समानो धनवावादं वदेय्य, भोगवा व समानो भोगवावादं वदेय्य। सो किस्मिञ्चिदेव धनकरणीये समुप्पन्ने सक्कुणेय्य उपनीहातुं धनं वा धञ्ञं वा रजतं वा जातरूपं वा। तमेनं एवं जानेय्युं—'अड्ढो व अयमायस्मा समानो अड्ढवादं वदेति, धनवा व अयमायस्मा समानो धनवावादं वदेति, भोगवा व अयमायस्मा समानो भोगवावादं वदेति। तं किस्स हेतु ? तथा हि अयमायस्मा किस्मिञ्चिदेव धनकरणीये समुप्पन्ने सक्कोति उपनीहातुं धनं वा [B.293]

नहीं कर बैठा है...पूर्ववत्...पापमयी इच्छा अभिभूत नहीं कर बैठी है तो उसके विषय में यह समझ लेना चाहिये—'यह आयुष्मान् उस ज्ञान को अधिगत कर चुका है, जिसके कारण इस भिक्षु को लोभ अभिभूत नहीं कर पाया...पूर्ववत्...पापमयी इच्छा अभिभूत नहीं कर पायी।'

७. ''आयुष्मानो! **ज्ञानवाद** एवं **भावनावाद** का आश्रयण कर कोई भिक्षु यह कहे—'मैं इस धर्म को जान चुका हूँ, साक्षात् कर चुका हूँ, तथा मैं भावितकाय, भावितशील, भावितचित्त एवं भावितप्रज्ञ हो चुका हूँ।' आयुष्मानो! उस भिक्षु को यदि लोभ अभिभूत न कर सके ...पूर्ववत्...पापमयी इच्छा अभिभूत न कर पावे तो उसके विषय में यह धारणा बना लेनी चाहिये—'यह आयुष्मान् उस ज्ञान को अधिगत कर चुका है जिसके फलस्वरूप इस भिक्षु को लोभ अभिभूत नहीं कर पाया ...पूर्ववत्...पापमयी इच्छा अभिभूत नहीं कर पायी।

८. ''जैसे, आयुष्मानो! कोई आढ्य (पूँजीपति) पुरुष आढ्यवाद का अभिमान करे, धनवान् होता हुआ धनवत्ता का, ऐश्वर्यवान् होता हुआ अपनी ऐश्वर्यवत्ता का अभिमान करे। वह, कोई धनसंग्रह का प्रसङ्ग आने पर, यथेच्छ धन, धान्य, सुवर्ण एवं रजत प्रस्तुत कर देता है, तो उसके विषय में यही समझना चाहिये—'यह वस्तुत: पूँजीपति होता हुआ अपने पूँजीपति होने का अभिमान कर रहा था, यह धनवान् होता हुआ ही अपनी धनवत्ता का प्रदर्शन कर रहा था, तथा

धञ्ञं वा रजतं वा जातरूपं वा' ति; एवमेव खो, आवुसो ञाणवादं च भिक्खु वदमानो भावनावादं च—'जानामिमं धम्मं, पस्सामिमं धम्मं, भावितकायोम्हि भावितसीलो भावितचित्तो भावितपञ्ञो' ति। तं चे, आवुसो, भिक्खुं लोभो नाभिभुय्य तिट्ठति, दोसो... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका [N.135] इच्छा नाभिभुय्य तिट्ठति, सो एवमस्स वेदितब्बो—'तथा अयमायस्मा पजानाति यथा पजानतो लोभो न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं लोभो नाभिभुय्य तिट्ठति; तथा अयमायस्मा पजानाति यथा पजानतो दोसो न होति... मोहो... कोधो... उपनाहो... मक्खो... पळासो... मच्छरियं... पापिका इस्सा... पापिका इच्छा न होति, तथा हिमं आयस्मन्तं पापिका इच्छा नाभिभुय्य तिट्ठती' '' ति। ●

५. कसिणसुत्तं : १. ''दसयिमानि, भिक्खवे, कसिणायतनानि। कतमानि दस? [R.46] पथवीकसिणमेको सञ्जानाति उद्धं अधो तिरियं अद्वयं अप्पमाणं; आपोकसिणमेको सञ्जानाति ...पे०... तेजोकसिणमेको सञ्जानाति... वायोकसिणमेको सञ्जानाति... नील-कसिणमेको सञ्जानाति... पीतकसिणमेको सञ्जानाति... लोहितकसिणमेको सञ्जानाति... ओदातकसिकणमेको सञ्ञानाति... आकासकसिणमेको सञ्जानाति... विञ्ञाणकसिगमेको सञ्जानाति उद्धं अधो तिरियं अद्वयं अप्पमाणं। इमानि खो, भिक्खवे, दस कसिणायतनानी'' ति॥ ●

६. काळीसुत्तं : १. एकं समयं आयस्मा महाकच्चानो अवन्तीसु विहरति कुलघरे

ऐश्वर्यवान् होता हुआ ही ऐश्वर्यवत्ता प्रकट कर रहा था; तभी तो इसने समय आने पर धन, धान्य, सुवर्ण एवं रजत का यथेच्छ संग्रह कर दिया! इसी प्रकार, आयुष्मानो! जो भिक्षु ज्ञानवाद एवं भावनावाद का आश्रयण कर यह कहता है...पूर्ववत्...। आयुष्मानो! उस भिक्षु को यदि लोभ अभिभूत न कर सके ...पूर्ववत्... पापमयी इच्छा अभिभूत न कर सके तो उसके विषय में यह धारणा बना लेनी चाहिये—'यह आयुष्मान् उस ज्ञान को अधिगत कर चुका है जिसके फलस्वरूप इसको किसी प्रकार का लोभ उद्भूत नहीं होता ...पूर्ववत्... इसको किसी प्रकार की पापमयी इच्छा उद्भूत नहीं होती'॥'' ●

५. कृत्स्न (कसिण) सूत्र : : दश कृत्स्नायतन

१. भिक्षुओ! ये दश कृत्स्नायतन होते हैं। कौन से दश? (१) कोई ऊँचे, नीचे, तिरछे, अद्वय एवं प्रमाणरहित पृथ्वीकृत्स्न को जानता है, (२)...अप्कृत्स्न (आपोकसिण) को जानता है, (३)...तेज:कृत्स्न को जानता है, (४)...वायुकृत्स्न को जानता है, (५)...नीलकृत्स्न को जानता है, (६)...पीतकृत्स्न को जानता है, (७)...लोहित (रक्त) कृत्स्न को जानता है, (८)...अवदात (शुभ्र) कृत्स्न को जानता है, (९)...आकाशकृत्स्न को जानता है, (१०) कोई ऊँचे, नीचे, तिरछे, अद्वय एवं प्रमाणरहित विज्ञानकृत्स्न को जानता है। भिक्षुओ! ये दश कृत्स्नायतन होते हैं॥'' ●

६. कालीसूत्र : : दश कृत्स्नायतन धर्म

१. एक समय आयुष्मान् महाकात्यायन कुलघर (कुररघर) की समीपवर्ती पर्वतशृङ्खला में

पवत्ते पब्बते। अथ खो काळी उपासिका कुलघरिका येनायस्मा महाकच्चानो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं महाकच्चानं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्ना खो काळी उपासिका कुलघरिका आयस्मन्तं महाकच्चानं एतदवोच— [B.294]

२. ''वुत्तमिदं, भन्ते, भगवता **कुमारिपञ्हेसु**—

'अत्थस्स पत्तिं हदयस्स सन्तिं, जेत्वान सेनं पियसातरूपं।
एकोहं झायं सुखमनुबोधिं, तस्मा जनेन न करोमि सखिं।
सखी न सम्पज्जति केनचि मे' ति॥

''इमस्स खो, भन्ते, भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स कथं वित्थारेन [N.136, R.47] अत्थो दट्ठब्बो'' ति?

३. ''पथवीकसिणसमापत्तिपरमा खो, भगिनि, एके समणब्राह्मणा 'अत्थो' ति अभिनिब्बत्तेसुं। यावता खो, भगिनि, पथवीकसिणसमापत्तिपरमता, तदभिञ्ञासि भगवा। तदभिञ्ञाय भगवा अस्सादमद्दस आदीनवमद्दस निस्सरणमद्दस मग्गामग्गञाणदस्सनमद्दस। तस्स अस्साददस्सनहेतु आदीनवदस्सनहेतु निस्सरणदस्सनहेतु मग्गामग्गञाणदस्सनहेतु अत्थस्स पत्ति हदयस्स सन्ति विदिता होति।

४. ''आपोकसिणसमापत्तिपरमा खो, भगिनि ...पे०... तेजोकसिणसमापत्तिपरमा खो, भगिनि... वायोकसिणसमापत्तिपरमा खो, भगिनि... नीलकसिणसमापत्तिपरमा खो,

---

साधना हेतु ठहरे हुए थे। उस समय कुलघरनिवासिनी काली नाम की कोई उपासिका आयुष्मान् महाकात्यायन के पास धर्मश्रवणार्थ आयी। उसने वहाँ आकर आयुष्मान् महाकात्यायन को प्रणाम किया तथा एक ओर बैठ गयी। एक ओर बैठी उस कुलघरवासिनी काली उपासिका ने आयुष्मान् महाकात्यायन से यह जिज्ञासा प्रकट की—

२. ''भन्ते! भगवान् ने **कुमारिप्रश्न प्रकरण** में यह कहा है—

'हृदय की शान्ति रूप धर्मसाधना का प्रयोजन प्राप्त कर तथा प्रिय तथा मनोनुकूल विषयरूप मारसेना को जीतकर मैं सुखपूर्वक बोधि (ज्ञान) प्राप्त करानेवाली ध्यानभावना में लगा हुआ हूँ। अत: मैंने साधारण जनता से सख्यभाव (मिलना-जुड़ना) छोड़ दिया है। अब मेरा किसी से लौकिक सख्यभाव नहीं रह गया है।''

'भन्ते! भगवदुपदिष्ट इस संक्षिप्त गाथा का विस्तृत अर्थ कैसे समझना चाहिये?''

३. ''भगिनि! कुछ श्रमण ब्राह्मण पृथ्वीकात्स्र्न्य की साधना तक धर्मसाधना का अर्थ (प्रयोजन) मानकर धर्मसाधना करते हैं। जहाँ तक पृथ्वीकात्स्र्न्य की सीमा है वहाँ तक भगवान् ने सब कुछ जान लिया; उसको जानकर विषयों के आस्वाद को, उनमें निहित दोषों को, उनसे मुक्ति के उपाय (मार्ग) तथा अपाय (अमार्ग) के ज्ञान का भी साक्षात्कार कर लिया उनको इस आस्वादज्ञान, आदीनवज्ञान, निस्सरणज्ञान तथा मार्गामार्गज्ञानदर्शन के फलस्वरूप धर्मसाधना की लक्ष्यभूत हार्दिक शान्ति की अनुभूत होने लगी।

४. ''भगिनि! कुछ श्रमण ब्राह्मण अप्-कृत्स्नसमापत्ति को ही धर्मसाधना की सीमा

भगिनि... पीतकसिणसमापत्तिपरमा खो, भगिनि...लोहितकसिणसमापत्तिपरमा खो, भगिनि ...ओदातकसिणसमापत्तिपरमा खो, भगिनि... आकासकसिणसमापत्तिपरमा खो, भगिनि... विञ्ञाणकसिणसमापत्तिपरमा खो, भगिनि, एके समणब्राह्मणा 'अत्थो' ति अभिनिब्बत्तेसुं। यावता खो, भगिनि, विञ्ञाणकसिणसमापत्तिपरमता, तदभिञ्ञासि भगवा। तदभिञ्ञाय भगवा अस्सादमद्दस आदीनवमद्दस निस्सरणमद्दस मग्गामग्गञाणदस्सनमद्दस। तस्स अस्साददस्सनहेतु आदीनवदस्सनहेतु निस्सरणदस्सनहेतु मग्गामग्गञाणदस्सनहेतु अत्थस्स पत्ति हदयस्स सन्ति विदिता होति। इति खो,भगिनि, यं तं वुत्तं भगवता कुमारिपञ्हेसु—

[B.295] 'अत्थस्स पत्तिं हदयस्स सन्तिं, जेत्वान सेनं पियसातरूपं।
[R.48] एकोहं झायं सुखमनुबोधिं, तस्मा जनेन न करोमि सखिं।
सखी न सम्पज्जति केनचि मे' ति॥

"इमस्स खो, भन्ते, भगिनि, भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थो दट्ठब्बो" ति॥ ●

७. पठममहापञ्हासुत्तं : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथ- [N.137] पिण्डिकस्स आरामे। अथ खो सम्बहुला भिक्खू पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थिं पिण्डाय पविसिंसु। अथ खो तेसं भिक्खूनं एतदहोसि— "अतिप्पगो खो ताव सावत्थियं पिण्डाय चरितुं; यन्नून मयं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यामा" ति।

२. अथ खो ते भिक्खू येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमिंसु;

मानकर... तेजःकृत्स्नसमापत्ति को ही... वायुकृत्स्नसमापत्ति को ही... लोहितकृत्स्नसमापत्ति को ही... अवदातकृत्स्नसमापत्ति को ही... आकाशकृत्स्नसमापत्ति को ही... विज्ञानकृत्स्नसमापत्ति को ही, भगिनि! धर्मसाधना की सीमा मानकर धर्मसाधना करने लगे। भगिनि! जहाँ तक विज्ञानकृत्स्न-समापत्ति की सीमा है, भगवान् ने उसको जान लिया उसको जानने के बाद उसके आस्वाद, आदीनव, निस्सरण एवं मार्गामार्ग के ज्ञान दर्शन के फलस्वरूप उनको धर्मसाधना की लक्ष्यभूत हार्दिक शान्ति अनुभूत होने लगी। भगिनि! इसी आश्रय से भगवान् ने **कुमारिप्रश्न** प्रकरण में यह कहा है—

" 'धर्मसाधना का हृदय की शान्तिरूप प्रयोजन प्राप्त कर...पूर्ववत्...' अब मेरा किसी से लौकिक सख्यभाव नहीं रह गया है॥"

"भगिनि! भगवान् के द्वारा संक्षेप में उद्दिष्ट वचन का यही विस्तार समझना चाहिये।" ●

७. प्रथम महाप्रश्नसूत्र : धर्म की दश विशेषताएँ

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवनाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। तब किसी दिन प्रातःकाल बहुत से भिक्षु शरीर के वस्त्र व्यवस्थित कर, पात्र चीवर साथ लेकर श्रावस्ती में भिक्षाचर्याहेतु प्रविष्ट हुए। उस समय उन भिक्षुओं को यह विचार हुआ—"अभी तो भिक्षाकाल में विलम्ब है, तो क्यों न उतना समय किसी अन्य तीर्थिकों के परिव्राजकाराम में चलकर धर्मचर्चा में बिताया जाय।"

उपसङ्कमित्वा तेहि अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं सम्मोदिंसु। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ने खो ते भिक्खू ते अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एतदवोचुं—

३. ''समणो, आवुसो, गोतमो सावकानं एवं धम्मं देसेति—'एथ तुम्हे, भिक्खवे, सब्बं धम्मं अभिजानाथ, सब्बं धम्मं अभिञ्ञाय विहरथा' ति; मयं पि खो, आवुसो, सावकानं एवं धम्मं देसेम—'एथ तुम्हे, आवुसो, सब्बं धम्मं अभिजानाथ, सब्बं धम्मं अभिञ्ञाय विहरथा' ति। इध नो, आवुसो, को विसेसो को अधिप्पयासो किं नानाकरणं समणस्स वा गोतमस्स अम्हाकं वा, यदिदं धम्मदेसनाय वा धम्मदेसनं अनुसासनिया वा अनुसासनिं'' ति? [R.49]

४. अथ खो ते भिक्खू तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं भासितं नेव अभिनन्दिंसु नप्पटिक्कोसिंसु। अनभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कमिंसु—''भगवतो सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थं आजानिस्सामा'' ति। [B.296]

५. अथ खो ते भिक्खू सावत्थियं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्ता येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं—

६. ''इध मयं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थिं [N.138] पिण्डाय पविसिम्हा। तेसं नो, भन्ते, अम्हाकं एतदहोसि— 'अतिप्पगो खो ताव सावत्थियं पिण्डाय चरितुं; यन्नून मयं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यामा' ति। अथ खो मयं, भन्ते, येन... अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं सम्मोदिम्हा।

---

२. तब वे भिक्षु अन्य तीर्थिकों के परिव्राजकाराम में पहुँचे। वहाँ परिव्राजकों से कुशल मङ्गल पूछकर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे इन भिक्षुओं से उन परिव्राजकों ने यह प्रश्न किया—

३. ''आयुष्मानो! आपके श्रमण गौतम अपने शिष्यों को यह उपदेश करते हैं—'आओ! भिक्षुओ! तुम समग्र धर्म को जान लो, उस समग्र धर्म को जानकर साधना करो।' हम भी अपने शिष्यों को यही उपदेश करते हैं...पूर्ववत्...। तब आयुष्मानो! आप के श्रमण गौतम द्वारा उपदिष्ट और हमारे द्वारा उपदिष्ट धर्म में क्या विशेष अन्तर है; क्योंकि हम तो देखते हैं कि दोनों की एक ही धर्मदेशना है तथा एक ही अनुशासन है?''

४. तब उन भिक्षुओं ने उन परिव्राजकों के इस कथन का न अनुमोदन किया और न कोई विरोध। ऐसा कर, वे वहाँ से यह कहते हुए उठकर चल दिये—''भगवान् के सम्मुख इस प्रश्न को प्रस्तुत करेंगे, और वे जैसा उपदेश करेंगे उसे मान लेंगे।''

५. तब वे भिक्षु श्रावस्ती में भिक्षा कर, पिण्डपातकर्म से निवृत्त होकर जहाँ भगवान् विराजमान थे वहाँ पहुँचे...पूर्ववत्... उनने भगवान् से यह निवेदन किया—

६. ''भन्ते! आज प्रात:काल वस्त्र व्यवस्थित कर...पूर्ववत्...भगवान् जैसा आदेश करेंगे वैसा मान लेंगे।''

सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिम्हा। एकमन्तं निसिन्ने खो, भन्ते, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका अम्हे एतदवोचुं—'समणो, आवुसो, गोतमो सावकानं एवं धम्मं देसेति—एथ तुम्हे, भिक्खवे, सब्बं धम्मं अभिजानाथ, सब्बं धम्मं अभिञ्ञाय विहरथा ति; मयं पि खो, आवुसो, सावकानं एवं धम्मं देसेम—एथ तुम्हे, आवुसो, सब्बं धम्मं अभिजानाथ, सब्बं धम्मं अभिञ्ञाय विहरथा ति। इध नो, आवुसो, को विसेसो को अधिप्पयासो किं नानाकरणं समणस्स वा गोतमस्स अम्हाकं वा, यदिदं धम्मदेसनाय वा धम्मदेसनं अनुसासनिया वा अनुसासनिं' ति?

[R.50] "अथ खो मयं, भन्ते, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं भासितं नेव अभिनन्दिम्हा नप्पटिक्कोसिम्हा। अनभिनदित्वा अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कमिम्हा—'भगवतो सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थं आजानिस्सामा''' ति।

७. "एवंवादिनो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवमस्सु वचनीया—'एको, आवुसो, पञ्हो एको उद्देसो एकं वेय्याकरणं, द्वे पञ्हा द्वे उद्देसा द्वे वेय्याकरणानि, तयो पञ्हा तयो उद्देसा तीणि वेय्याकरणानि, चत्तारो पञ्हा चत्तारो उद्देसा चत्तारि वेय्याकरणानि, [B.297] पञ्च पञ्हा पञ्चुद्देसा पञ्च वेय्याकरणानि, छ पञ्हा च उद्देसा छ वेय्याकरणानि, सत्त पञ्हा सत्तुद्देसा सत्त वेय्याकरणानि, अट्ठ पञ्हा अट्ठुद्देसा अट्ठ वेय्याकरणानि, नव पञ्हा नवुद्देसा नव वेय्याकरणानि, दस पञ्हा दसुद्देसा दस वेय्याकरणानी' ति। एवं पुट्ठा, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका न चेव सम्पायिस्सन्ति, उत्तरिं च विघातं आपज्जिस्सन्ति। तं किस्स हेतु? यथा तं, भिक्खवे, अविसयस्मिं। नाहं तं, भिक्खवे, पस्सामि सदेवके लोके [N.139] समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय यो इमेसं पञ्हानं वेय्याकरणेन चित्तं आराधेय्य, अञ्ञत्र तथागतेन वा तथागतसावकेन वा इतो वा पन सुत्वा।

८. "'एको पञ्हो एको उद्देसो एकं वेय्याकरणं' ति, इति खो पनतं वुत्तं। किञ्चेतं

---

७. "भिक्षुओ! ऐसा पूछने वाले उन अन्यमतावलम्बी परिव्राजकों को तुम्हारे द्वारा यह उत्तर दिया जाना चाहिये था—'आयुष्मानो! एक प्रश्न का एक ही उद्देश तथा एक ही व्याकरण होता है; इसी प्रकार दो प्रश्न होने पर दो उद्देश, दो व्याख्यान, तीन प्रश्न के तीन उद्देश, तीन व्याकरण; चार प्रश्न के चार उद्देश, चार व्याकरण, पाँच...छ...सात...आठ...नौ...दश प्रश्न के दश उद्देश एवं दश व्याकरण होते हैं।' ऐसा उत्तर दिये जाने पर वे प्रष्टा परिव्राजक इसको समझ ही न पायेंगे, अपितु एक विचित्र ऊहापोह में पड़ जायँगे। वह क्यों? वह इसलिये कि यह समझना उनकी बुद्धि से बाहर है। भिक्षुओ! इस देवताओं सहित...समस्त मानवलोक में ऐसा कोई प्राणी नहीं है जो इनका मन से सन्तोषप्रद (उचित) उत्तर दे सके, केवल तथागत या तथागत के किसी बुद्धिमान् शिष्य को छोड़कर या जिसने इन से कभी सुना हो।

८. "'एक प्रश्न, एक उद्देश, एक व्याकरण'—यह जो कहा है, किसी अभिप्राय से कहा

पटिच्च वुत्तं? एकधम्मे, भिक्खवे, भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमस्मिं एकधम्मे? '**सब्बे सत्ता आहारट्ठितिका**'—इमस्मिं खो, भिक्खवे, एकधम्मे भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा [R.51] परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'एको पञ्हो एको उद्देसो एकं वेय्याकरणं' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

९. '''द्वे पञ्हा द्वे उद्देसा द्वे वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? द्वीसु, भिक्खवे, धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु द्वीसु? **नामे च रूपे च**—इमेसु खो, भिक्खवे, द्वीसु धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'द्वे पञ्हा द्वे उद्देसा द्वे वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१०. '''तयो पञ्हा तयो उद्देसा तीणि वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुतं? तीसु, भिक्खवे, धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्ज-मानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे

है? भिक्षुओ! साधक भिक्षु किसी एक धर्म में सम्यक्तया निर्वेद एवं वैराग्य प्राप्त करता हुआ, उस धर्म से पूर्णतः मुक्त होता हुआ, उस धर्म के अन्त (सीमा) तक पहुँचता हुआ उसके अर्थ को भलीभाँति समझता हुआ इसी जन्म में अपने दुःखों का अन्त कर लेता है। किस एक धर्म में? '**सभी प्राणी आहार पर निर्भर हैं**'। इस एक धर्म में, भिक्षुओ! कोई भिक्षु सम्यक्तया निर्वेद एवं वैराग्य प्राप्त करता हुआ, उस धर्म से पूर्णतः मुक्त होता हुआ, उस धर्म के अन्त तक पहुँचता हुआ, उसके अर्थ को भलीभाँति समझता हुआ इसी जन्म में दुःखों का अन्त कर लेता है। 'एक प्रश्न, एक उद्देश, एक व्याकरण'—ऊपर जो यह कहा था, वह इसी उद्देश्य से कहा है।

९. '' 'दो प्रश्न, दो उद्देश, दो व्याकरण'—यह जो कहा है वह किस उद्देश्य से कहा है? भिक्षुओ! कोई भिक्षु दो धर्मों में सम्यक्तया निर्वेद एवं वैराग्य प्राप्त करता हुआ उन धर्मों से पूर्णतः मुक्त होता हुआ, उन धर्मों के अन्त (सीमा) तक पहुँचता हुआ, उनके अर्थ को भली भाँति समझता हुआ इसी जन्म में अपने दुःखों का अन्त कर लेता है। किन दो धर्मों में? **नाम एवं रूप में**। इन दो धर्मों में सम्यक्तया निर्वेद एवं वैराग्य प्राप्त कर, इन दो धर्मों से मुक्त होता हुआ, इन धर्मों के अन्त तक पहुँचता हुआ, उनके अर्थ को भलीभाँति समझता हुआ इसी जन्म में अपने दुःखों का अन्त कर लेता है।...पूर्ववत्...इसी उद्देश्य से कहा है।

१०. '' 'तीन प्रशन, तीन उद्देश एवं तीन व्याकरण'—यह जो कहा है, यह किस उद्देश्य से कहा है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु तीन धर्मों में सम्यक्तया निर्वेद एवं वैराग्य प्राप्त करता हुआ ...पूर्ववत्... दुःखों का अन्त कर लेता है। किन तीन धर्मों में? **तीनों वेदनाओं में**। भिक्षुओ! इन

दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु तीसु? **तीसु वेदनासु**—इमेसु खो, भिक्खवे, तीसु धम्मेसु [B.298] भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'तयो पञ्हा तयो उद्देसा तीणि वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

[N.140]११. '''चत्तारो पञ्हा चत्तारो उद्देसा चत्तारि वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं [R.52] वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? चतूसु, भिक्खवे, धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु चतूसु? **चतूसु आहारेसु**—इमेसु खो, भिक्खवे, चतूसु धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'चत्तारो पञ्हा चत्तारो उद्देसा चत्तारि वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१२. '''पञ्च पञ्हा पञ्चुद्देसा पञ्च वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? पञ्चसु, भिक्खवे, धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु पञ्चसु? **पञ्चसु उपादानक्खन्धेसु**—इमेसु खो, भिक्खवे, पञ्चसु धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'पञ्च पञ्हा पञ्चुद्देसा पञ्च वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१३. '''छ पञ्हा छ उद्देसा छ वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? छसु, भिक्खवे, धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा

तीन धर्मों में कोई भिक्षु सम्यक्तया निर्विदा एवं वैराग्य प्राप्त करता हुआ...पूर्ववत्..दु:खों का अन्त कर लेता है। ...पूर्ववत्... इसी उद्देश्य से कहा है।

११. " 'चार प्रश्न, चार उद्देश, चार व्याकरण'—यह जो कहा है, किस उद्देश्य से कहा है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु चार धर्मों में सम्यक्तया ...पूर्ववत्... दु:खों का अन्त कर लेता है। किन चार धर्मों में? **चतुर्विध आहारों में।** इन चार धर्मों में, भिक्षुओ! कोई भिक्षु सम्यक्तया निर्वेद...पूर्ववत्... दु:खों का अन्त कर लेता है। ...पूर्ववत्... इसी उद्देश्य से कहा है।

१२. " 'पाँच प्रश्न, पाँच उद्देश, पाँच व्याकरण'—यह जो कहा है किस उद्देश्य से कहा है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु पाँच धर्मों में सम्यक्तया निर्वेद ...पूर्ववत्... दु:खों का अन्त कर लेता है। किन पाँच धर्मों में? **पाँच उपादानस्कन्धों में।** भिक्षुओ! इन पाँच धर्मों में कोई भिक्षु सम्यक्तया निर्वेद ...पूर्ववत्... दु:खों का अन्त कर लेता है। ...पूर्ववत्... इसी उद्देश्य से कहा है।

१३. "'छह प्रश्न, छह उद्देश, छह व्याकरण'—यह जो कहा है वह किस उद्देश्य से कहा है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु छह धर्मों में सम्यक्तया निर्वेद ...पूर्ववत्... दु:खों का अन्त कर लेता है।

विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु छसु? **छसु अज्झत्तिकेसु आयतनकेसु**—इमेसु खो, भिक्खवे, छसु धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा [R.53] परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'छ पञ्हा छ उद्देसा छ वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१४. '''सत्त पञ्हा सत्तुद्देसा सत्त वेय्यकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। [B.299] किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? सत्तसु, भिक्खवे, धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मापरियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च [N.141] दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु सत्तसु? **सत्तसु विञ्ञाणट्ठितीसु**—इमेसु खो, भिक्खवे, सत्तसु धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'सत्त पञ्हा सत्तुद्देसा सत्त वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१५. '''अट्ठ पञ्हा अट्ठुद्देसा अट्ठ वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? अट्ठसु, भिक्खवे, धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु अट्ठसु? **अट्ठसु लोकधम्मेसु**—इमेसु खो, भिक्खवे, अट्ठसु धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो ...पे०... दुक्खस्सन्तकरो होति। 'अट्ठ पञ्हा अट्ठुद्देसा अट्ठ वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१६. '''नव पञ्हा नवुद्देसा नव वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? नवसु, भिक्खवे, धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्ख-

---

किन छह धर्मों में? **छह आध्यात्मिक आयतनों में।** भिक्षुओ! इन छह धर्मों में सम्यक्तया निर्वेद ...पूर्ववत्... दुःखों का अन्त कर लेता है। ...पूर्ववत्... इसी उद्देश्य से कहा है। (६)

१४. '' 'सात प्रश्न, सात उद्देश, सात व्याकरण'—यह जो कहा है, किस उद्देश्य से कहा है? भिक्षुओ! सात धर्मों में कोई भिक्षु सम्यक्तया ...पूर्ववत्... दुःखों का अन्त कर लेता है। किन सात धर्मों में? **सात विज्ञानस्थितियों में।** भिक्षुओ! इन सात धर्मों में कोई भिक्षु सम्यक्तया ...पूर्ववत्... दुःखों का अन्त कर लेता है। ...पूर्ववत्... इसी उद्देश्य से कहा है। (७)

१५. '' 'आठ प्रश्न, आठ उद्देश, आठ व्याकरण'—यह जो कहा है, किस उद्देश्य से कहा है? भिक्षुओ! आठ धर्मों में? **आठ लोकधर्मों में।** भिक्षुओ! इन आठ धर्मों में कोई भिक्षु सम्यक्तया... पूर्ववत्...दुःखों का अन्त कर लेता है। ...पूर्ववत्... इसी उद्देश्य से कहा है। (८)

१६. '' 'नौ प्रश्न, नौ उद्देश, नौ व्याकरण'—यह जो कहा है, किस उद्देश्य से कहा है? भिक्षुओ! कोई भिक्षु नौ धर्मों में सम्यक्तया ...पूर्ववत्... दुःखों का अन्त कर लेता है। किन नौ धर्मों

[R.54] स्सन्तकरो होति। कतमेसु नवसु? **नवसु सत्तावासेसु**—इमेसु खो, भिक्खवे, नवसु धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'नव पञ्हा नवुद्देसा नव वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१७. "'दस पञ्हा दसुद्देसा दस वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? दससु, भिक्खवे, धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु दससु? **दससु अकुसलेसु कम्मपथेसु**—इमेसु खो, भिक्खवे, दससु धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा [N.142,B.300] परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'दस पञ्हा दसुद्देसा दस वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं'' ति॥ ●

८. दुतियमहापञ्हासुत्तं : १. एकं समयं भगवा कजङ्गलायं विहरति वेळुवने। अथ खो सम्बहुला कजङ्गलका उपासका येन कजङ्गलिका भिक्खुनी तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा कजङ्गलिकं भिक्खुनिं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो कजङ्गलका उपासका कजङ्गलिकं भिक्खुनिं एतदवोचुं—

२. "वुत्तमिदं, अय्ये, भगवता **महापञ्हेसु**—'एको पञ्हो एको उद्देसो एकं वेय्या- [R.55] करणं, द्वे पञ्हा द्वे उद्देसा द्वे वेय्याकरणानि, तयो पञ्हा तयो उद्देसा तीणि वेय्याकरणानि, चत्तारो पञ्हा चत्तारो उद्देसा चत्तारि वेय्याकरणानि, पञ्च पञ्हा पञ्चुद्देसा पञ्च वेय्याकरणानि, छ पञ्हा छ उद्देसा छ वेय्याकरणानि, सत्त पञ्हा सत्तुद्देसा सत्त वेय्याकरणानि, अट्ठ पञ्हा अट्ठुद्देसा अट्ठ वेय्याकरणानि, नव पञ्हा नवुद्देसा नव

में? **नौ सत्त्वावासों में।** भिक्षुओ! कोई भिक्षु इन नौ धर्मों में सम्यक्तया ...पूर्ववत्... दुःखों का अन्त कर लेता है। ...पूर्ववत्... इस उद्देश्य से कहा है। (९)

१७. " 'दश प्रश्न, दश उद्देश, दश व्याकरण'—यह जो कहा है, किस उद्देश्य से कहा है? भिक्षुओ! दश धर्मों में कोई भिक्षु सम्यक्तया ...पूर्ववत्... दुःखों का अन्त कर लेता है। किन दश धर्मों में? **दश अकुशल कर्मपथों में।** भिक्षुओ! कोई भिक्षु सम्यक्तया ...पूर्ववत्... दुःखों का अन्त कर लेता है। ...पूर्ववत्... इस उद्देश्य से कहा है॥" ●

८. द्वितीय महाप्रश्नसूत्र : : तथागतोपदिष्टधर्म की दश विशेषताएँ

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) कजङ्गला के वेणुवन में साधना हेतु विराजमान थे। बहुत से कजङ्गलवासी उपासक कजङ्गलिका भिक्षुणी के पास आये। आकर उनको प्रणामकर एक ओर बैठ गये। एक ओर बै वे उपासक कजङ्गलिका भिक्षुणी से यह बोले—

२. "आर्ये! भगवान् ने **महाप्रश्नों** में—'एक प्रश्न, एक उद्देश, एक व्याकरण...पूर्ववत्...दश प्रश्न, दश उद्देश, दश व्याकरण' कहा। आर्ये! हम भगवान् के इस संक्षिप्त कथन का विस्तृत अर्थ क्या समझें?"

वेय्याकरणानि, दस पञ्हा दसुद्देसा दस वेय्याकरणानी' ति। इमस्स नु खो, अय्ये, भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स कथं वित्थारेन अत्थो दट्ठब्बो'' ति?

३. ''न खो पनेतं, आवुसो, भगवतो सम्मुखा सुतं सम्मुखा पटिग्गहितं, न पि मनोभावनीयानं भिक्खूनं सम्मुखा सुतं सम्मुखा पटिग्गहितं; अपि च, यथा मेत्थ खायति तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ, भासिस्सामी'' ति। ''एवं, अय्ये'' ति खो कजङ्गलका उपासका कजङ्गलिकाय भिक्खुनिया पच्चस्सोसुं। कजङ्गलिका भिक्खुनी एतदवोच—

४. '''एको पञ्हो एको उद्देसो एकं वेय्याकरणं' ति, इति खो पनेतं भगवता। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? एकधम्मे, आवुसो, भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमस्मिं एकधम्मे? **सब्बे सत्ता आहारट्ठितिका**—इमस्मिं खो, आवुसो, एकधम्मे भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। [N.143] 'एको पञ्हो एको उद्देसो एकं वेय्याकरणं ति, इति यं तं वुत्तं भगवता इदमेतं पटिच्च [B.301] वुत्तं।

५. '''द्वे पञ्हा द्वे उद्देसा द्वे वेय्याकरणानी' ति इति, खो पनेतं वुत्तं भगवा। [R.56] किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? द्वीसु, आवुसो, धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु द्वीसु? **नामे च रूपे च** ...पे०... कतमेसु तीसु? **तीसु वेदनासु**—इमेसु खो, आवुसो, तीसु धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'तयो पञ्हा तयो उद्देसा तीणि वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुतं भगवता इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

६. '''चत्तारो पञ्हा चत्तारो उद्देसा चत्तारि वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं भगवता। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? चतूसु, आवुसो, धम्मेसु भिक्खु सम्मा सुभावितचित्तो

---

३. ''आयुष्मानो! यद्यपि मैंने इन प्रश्नों का व्याख्यान साक्षात् भगवान् के श्रीमुख से नहीं सुना है और न ही किसी मनोभावनीय (सम्माननीय) स्थविर भिक्षु से ही सुन पायी हूँ; पुनरपि मैं जैसा समझ पायी हूँ उसे सुनो और ध्यानपूर्वक मन में बैठा लो, मैं उसे बताती हूँ।''

''अच्छा आर्ये!'' कहकर उपासकों ने अपनी सहमति प्रकट की। तब कजङ्गला भिक्षुणी यह बोली—

४. भगवान् ने—'एक प्रश्न, एक उद्देश, एक प्रश्न'—यह कहा है। इस कथन का उद्देश्य क्या है? आयुष्मानो! कोई भिक्षु एक धर्म में सम्यक्तया निर्वेद एवं वैराग्य...पूर्वसूत्रवत्...।

[इसके आगे इस सूत्र के अवशिष्ट ५ से ९ तक के अनुबन्धों का पूर्वसूत्र के समान विस्तार

सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु चतूसु? **चतूसु सतिपट्ठानेसु**—इमेसु खो, आवुसो, चतूसु धम्मेसु भिक्खु सम्मा सुभावितचित्तो सम्मा परिन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'चत्तारो पञ्हा चत्तारो उद्देसा चत्तारि वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं भगवता इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

७. "'पञ्च पञ्हा पञ्चुद्देसा पञ्च वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं भगवता। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? पञ्चसु, आवुसो, धम्मेसु भिक्खु सम्मा सुभावितचित्तो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु पञ्चसु? **पञ्चसु इन्द्रियेसु** ...पे०... कतमेसु छसु? छसु **निस्सरणीयासु धातूसु** ...पे०... [R.57] कतमेसु सत्तसु? **सत्तसु बोज्झङ्गेसु** ...पे०... कतमेसु अट्ठसु? **अट्ठसु अरियअट्ठङ्गिकमग्गेसु**—इमेसु खो, आवुसो, अट्ठसु धम्मेसु भिक्खु सम्मा सुभावितचित्तो [N.144] सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'अट्ठ पञ्हा अट्ठुद्देसा अट्ठ वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं भगवता इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

[B.302] ८. "'नव पञ्हा नवुद्देसा नव वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुतं भगवता। किञ्चेतं पटिच्च वुतं? नवसु, आवुसो, धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु नवसु? **नवसु सत्तावासेसु**—इमेसु खो, आवुसो, नवसु धम्मेसु भिक्खु सम्मा निब्बिन्दमानो सम्मा विरज्जमानो सम्मा विमुच्चमानो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'नव पञ्हा नवुद्देसा नव वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं भगवता इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

९. "'दस पञ्हा दसुद्देसा दस वेय्याकरणानी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं भगवता। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? दससु, आवुसो, धम्मेसु भिक्खु सम्मा सुभावितचित्तो सम्मा [R.58] परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। कतमेसु दससु? **दससु कुसलेसु कम्मपथेसु**—इमेसु खो, आवुसो, दससु धम्मेसु भिक्खु सम्मा सुभावितचित्तो सम्मा परियन्तदस्सावी सम्मदत्थं अभिसमेच्च दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होति। 'दस पञ्हा दसुद्देसा दस वेय्याकरणानी' ति, इति यं तं वुत्तं भगवता इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१०. "इति खो, आवुसो, यं तं वुत्तं भगवता सङ्खित्तेन भासितासु महापञ्हासु—

कर लें। इसमें प्रथम तीन धर्म तो पूर्वसूत्रवत् हैं। शेष ये हैं—(४) चार स्मृतिप्रस्थान, (५) पाँच इन्द्रियाँ, (६) छह निस्सरणीय धातु, (७) सात बोध्यङ्ग, (८) आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग, (९) नौ सत्त्वावास एवं (१०) दश कुशल कर्मपथ।]

१०. "इस प्रकार, आयुष्मानो! भगवान् ने दश महाप्रश्नों में—'एक प्रश्न, एक उद्देश, एक

'एको पञ्हो एको उद्देसो एकं वेय्याकरणं ...पे०... दस पञ्हा दसुद्देसा दस वेय्याकरणानी' ति, इमस्स खो अहं, आवुसो, भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थं आजानामि। आकङ्खमाना च पन तुम्हे, आवुसो, भगवन्तञ्ञेव उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छेय्याथ। यथा नो नं भगवा ब्याकरोति तथा नं धारेय्याथा'' ति। ''एवं, अय्ये'' ति खो कजङ्गलका उपासका कजङ्गलिकाय खो भिक्खुनिया भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा उट्ठायासना कजङ्गलिकं भिक्खुनिं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो कजङ्गलका उपासका यावतको अहोसि कजङ्गलिकाय भिक्खुनिया सद्धिं कथासल्लापो, तं [N.145] सब्बं भगवतो आरोचेसुं।

११. ''साधु साधु, गहपतयो! पण्डिता, गहपतयो, कजङ्गलिका [B.303] भिक्खुनी। महापञ्ञा, गहपतयो, कजङ्गलिका भिक्खुनी। मं चे पि तुम्हे, गहपतयो, उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छेय्याथ, अहं पि चेतं एवमेव ब्याकरेय्यं यथा तं [R.59] कजङ्गलिकाय भिक्खुनिया ब्याकतं। एसो चेव तस्स अत्थो। एवं च नं धारेय्याथा'' ति॥ ●

९. पठमकोसलसुत्तं : १. ''यावता, भिक्खवे, कासिकोसला, यावता रञ्ञो पसेनदिस्स कोसलस्स विजितं, राजा तत्थ पसेनदि कोसलो अग्गमक्खायति। रञ्ञो पि खो, भिक्खवे, पसेनदिस्स कोसलस्स अत्थेव अञ्ञथत्तं अत्थि विपरिणामो। एवं पस्सं, भिक्खवे, सुतवा अरियसावको तस्मिं पि निब्बिन्दति। तस्मिं निब्बिन्दन्तो अग्गे विरज्जति, पगेव हीनस्मिं।

व्याकरण...पूर्ववत्...दश प्रश्न, दश उद्देश, दश व्याकरण'—यह कहा है। मैं भगवान् के इस संक्षिप्त कथन का यही विस्तृत अर्थ जानती हूँ। यदि तुम चाहो तो भगवान् के सम्मुख स्वयं उपस्थित होकर उनसे इसका विस्तार पूछ सकते हो। जैसा वे उपदेश करें वैसा तुम धारण कर लेना।'' ''अच्छा, आर्ये'' कहकर वे कजङ्गलिक उपासक कजङ्गलिका भिक्षुणी के भाषण का अभिनन्दन, अनुमोदन कर, आसन से उठकर कजङ्गलिका भिक्षुणी को प्रणाम एवं प्रदक्षिणा कर भगवान् के सम्मुख आये, तथा उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उन कजङ्गलवासी उपासकों ने कजङ्गलिका भिक्षुणी से हुआ अपना समस्त संवाद सुनाया।

११. ''साधु, गृहपतियो! साधु! वह कजङ्गलिका भिक्षुणी पण्डित है। वह महाप्राज्ञ है। गृहपतियो! यदि तुम मुझसे आकर इस विषय में पूछते तो मैं भी वही उत्तर देता जो कजङ्गलिका भिक्षुणी ने दिया है। इन महाप्रश्नों का यही उत्तर है। इसको तुम इसी प्रकार अपने मन में बैठा लो॥'' ●

९. प्रथम कौशलसूत्र : : दश अग्रताएँ (श्रेष्ठताएँ)

१. ''भिक्षुओ! जहाँ तक काशी या कोशल प्रदेश फैले हुए हैं, जिन पर प्रसेनजित् कौशल का शासन है, वहाँ राजा प्रसेनजित ही सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इतना होने पर भी, हो सकता है कि किसी श्रुतवान् आर्यश्रावक को उक्त राजा में कुछ विपरीतता या गुणविरोध दिखायी दे जाय, जिसके

२. ''यावता, भिक्खवे, चन्दिमसुरिया परिहरन्ति दिसा भन्ति विरोचमाना, ताव सहस्सधा लोको। तस्मिं सहस्सधा लोके सहस्सं चन्दानं सहस्सं सुरियानं सहस्सं सिनेरुपब्बतराजानं सहस्सं जम्बुदीपानं सहस्सं अपरगोयानानं सहस्सं उत्तरकुरूनं सहस्सं पुब्बविदेहानं चत्तारि महासमुद्दसहस्सानि चत्तारि महाराजसहस्सानि सहस्सं चातुमहा-राजिकानं सहस्सं तावतिंसानं सहस्सं यामानं सहस्सं तुसितानं सहस्सं निम्मानरतीनं सहस्सं परनिम्मितवसवत्तीनं सहस्सं ब्रह्मलोकानं। यावता, भिक्खवे, सहस्सी लोकधातु, महाब्रह्मा [R.60] तत्थ अग्गमक्खायति। महाब्रह्मुनो पि खो, भिक्खवे, अत्थेव अञ्ञथत्तं अत्थि विपरिणामो। एवं पस्सं, भिक्खवे, सुतवा अरियसावको तस्मिं पि निब्बिन्दति। तस्मिं निब्बिन्दन्तो अग्गे विरज्जति, पगेव हीनस्मिं।

३. ''होति सो, भिक्खवे, समयो यं अयं लोको संवट्टति। संवट्टमाने, भिक्खवे, लोके येभुय्येन सत्ता आभस्सरसंवत्तनिका भवन्ति। ते तत्थ होन्ति मनोमया पीतिभक्खा [N.146] सयम्पभा अन्तलिक्खेचरा सुभट्ठायिनो चिरं दीघमद्धानं तिट्ठन्ति। संवट्टमाने, [B.304] भिक्खवे, लोके आभस्सरा देवा अग्गमक्खायन्ति। आभस्सरानं पि खो, भिक्खवे, देवानं अत्थेव अञ्ञथत्तं अत्थि विपरिणामो। एवं पस्सं, भिक्खवे, सुतवा अरियसावको तस्मिं पि निब्बिन्दति। तस्मिं निब्बिन्दन्तो अग्गे विरज्जति, पगेव हीनस्मिं।

४. ''दसयिमानि, भिक्खवे, कसिणायतनानि। कतमानि दस? पथवीकसिणमेको

कारण उसको उसके प्रति निर्वेद हो जाय। उसके निर्विण्ण होने पर उसकी श्रेष्ठता में भी उसको वैराग्य होगा, हीनता के प्रति तो पहले ही से था।

२. भिक्षुओ! जहाँ तक ये चन्द्रमा और सूर्य अपनी उज्ज्वल आभा से प्रकाश फैला रहे हैं, ऐसे ऐसे हजारों लोक हैं। उन हजारों लोकों में हजारों चन्द्रमाओं की, हजारों सूर्यों की, हजारों पर्वतराज सुमेरुओं की, हजारों जम्बूद्वीपों की, हजारों अपरगोयानों की, हजारों उत्तरकुरुओं की, हजारों पूर्वविदेहों की, हजारों चारों महासमुद्रों की, हजारों चार महाराजाओं की, हजारों चातुर्महाराजिकों की, हजारों त्रायस्त्रिंश लोकों की, हजारों यमलोकों की, हजारों तुषित लोकों की, हजारों निर्माणरति देवलोकों की, हजारों परनिर्मितवशवर्ती देवलोकों की उपस्थिति है। इस लोकधातुसाहस्त्री (हजारों लोकों) में महाब्रह्मा श्रेष्ठ कहलाता है। इस महाब्रह्मा में भी कोई अन्यथात्व या विकार हो सकता है। इसे देखकर किसी श्रुतवान् आर्यश्रावक को उस महाब्रह्मा के प्रति निर्वेद हो जाय। उसके प्रति यह निर्विण्ण होता हुआ उसकी अग्रता में भी वैराग्यवान् होता है, फिर हीनता की तो बात ही क्या!

३. ''भिक्षुओ! एक समय आता है जब इस लोक में संवर्त प्रलय हो जाता है। इस प्रलय के होने पर यहाँ के प्राय: अनेक प्राणी आभास्वर लोक में जाकर उत्पन्न होते हैं। उनकी वहाँ प्रीति ही भक्ष्य होती है, उनकी सभी क्रियाएँ मनोमय होती हैं। वे स्वयं प्रकाशमान एवं अन्तरिक्षचारी होते हैं तथा वे शुभ स्थायी होकर वहाँ दीर्घकाल तक ठहरे रहते हैं। उस लोक-संवर्तकाल में ये आभास्वर देव ही श्रेष्ठ कहलाते हैं। परन्तु हो सकता है इन आभास्वरदेवों में कोई अन्यथात्व या कोई गुणविरोध दिखायी दे जाय। इसे देखकर किसी श्रुतवान् आर्यश्रावक का उन आभास्वर देवों के प्रति

सञ्जानाति उद्धं अधो तिरियं अद्वयं अप्पमाणं; आपोकसिणमेको सञ्जानाति ...पे०... तेजोकसिणमेको सञ्जानाति... वायोकसिणमेको सञ्जानाति...नीलकसिणमेको सञ्जानाति ...पीतकसिणमेको सञ्जानाति... लोहितकसिणमेको सञ्जानाति... ओदातकसिणमेको सञ्जानाति... आकासकसिणमेको सञ्जानाति... विञ्ञाणकसिणमेको सञ्जानाति उद्धं अधो तिरियं अद्वयं अप्पमाणं। इमानि खो, भिक्खवे, दस कसिणायतनानि।

''एतदग्गं, भिक्खवे, इमेसं दसन्नं कसिणायतनानं यदिदं विञ्ञाणकसिणं एको सञ्जानाति उद्धं अधो तिरियं अद्वयं अप्पमाणं। एवंसञ्ञिनो पि खो, भिक्खवे, सन्ति सत्ता। एवंसञ्ञीनं पि खो, भिक्खवे, सत्तानं अत्थेव अञ्ञथत्तं अत्थि विपरिणामो। एवं [R.61] पस्सं, भिक्खवे, सुतवा अरियसावको तस्मिं पि निब्बिन्दति। तस्मिं निब्बिन्दन्तो अग्गे विरज्जति, पगेव हीनस्मिं।

५. ''अट्ठिमानि, भिक्खवे, अभिभायतनानि। कतमानि अट्ठ? अज्झत्तं रूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति परित्तानि सुवण्णदुब्बण्णानि; 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं पठमं अभिभायतनं।

''अज्झत्तं रूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति अप्पमाणानि सुवण्णदुब्बण्णानि; 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं दुतियं अभिभायतनं।

''अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति परित्तानि सुवण्णदुब्बण्णानि; 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं ततियं अभिभायतनं।

''अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति अप्पमाणानि [N.147, B.305]

निर्वेद हो जाय। वह वहाँ निर्विण्ण होता हुआ उनकी अग्रता के प्रति भी वैराग्यवान् होता है, हीनता के प्रति तो वह पहले से ही था।

४. ''भिक्षुओ! ये **दश कृत्स्नायतन** होते हैं। कौन से दश? (१) कोई ऊँचे, नीचे, तिरछे, अद्वय एवं प्रमाणरहित पृथ्वीकृत्स्न, (२)...अप्कृत्स्न, (३)...तेजःकृत्स्न, (४)...वायुकृत्स्न, (५)...नीलकृत्स्न, (६)...पीतकृत्स्न, (७)... लोहितकृत्स्न, (८)...अवदातकृत्स्न, (९)... आकाशकृत्स्न एवं (१०)... विज्ञानकृत्स्न—भिक्षुओ! ये दश कृत्स्नायतन होते हैं।

''भिक्षुओ! इन दश कृत्स्नायतनों में विज्ञानकृत्स्न श्रेष्ठ होता है। इस ऊँचे-नीचे, तिरछे...विज्ञान-कृत्स्नायतन की कोई साधना करता है। भिक्षुओ! बहुत से प्राणी ऐसे ज्ञानी भी होते हैं। इन ज्ञानियों में भी हो सकता है, कोई विपरीतता या कोई गुणविरोध दिखायी दे जाय।...पूर्ववत्...हीन में तो वह पहले से ही था।

५. ''भिक्षुओ! **आठ अभिभ्वायतन** होते हैं। कौन आठ? कोई पुरुष अध्यात्म में रूपसंज्ञी (अपने में रूपसंज्ञा का ध्यान करने वाला) होकर बाहर कुछ ही सुवर्ण या दुर्वर्ण रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत (लुप्त) कर जानता हूँ, साक्षात् करता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह प्रथम अभिभ्वायतन है। (१)

''कोई पुरुष अध्यात्म में रूपसंज्ञी होकर बाहर अप्रमाण (असङ्ख्य) सुवर्ण, दुर्वर्ण रूपों को

सुवण्णदुब्बण्णानि; 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं चतुत्थं अभिभायतनं।

"अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति नीलानि नीलवण्णानि नीलनिदस्सनानि नीलनिभासानि। सेय्यथापि नाम उमापुप्फं नीलं नीलवण्णं नीलनिदस्सनं नीलनिभासं, सेय्यथा वा पन तं वत्थं वाराणसेय्यकं उभतोभागविमट्ठं नीलं नीलवण्णं नीलनिदस्सनं नीलनिभासं; एवमेव अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति नीलानि नीलवण्णानि नीलनिदस्सनानि नीलनिभासानि; 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं पञ्चमं अभिभायतनं।

"अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति पीतानि पीतवण्णानि पीतनिदस्सनानि पीतनिभासानि। सेय्यथापि नाम कणिकारपुप्फं पीतं पीतवण्णं पीतनिदस्सनं [R.62] पीतनिभासं, सेय्यथा वा पन तं वत्थं वाराणसेय्यकं उभतोभागविमट्ठं पीतं पीतवण्णं पीतनिदस्सनं पीतनिभासं; एवमेव अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति पीतानि पीतवण्णानि पीतनिदस्सनानि पीतनिभासानि; 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं छट्ठं अभिभायतनं।

"अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति लोहितकानि लोहितकवण्णानि लोहितकनिदस्सनानि लोहितकनिभासानि। सेय्यथापि नाम बन्धुजीवकपुप्फं लोहितकं लोहितकवण्णं लोहितकनिदस्सनं लोहितकनिभासं, सेय्यथा वा पन तं वत्थं

देखता है। वह 'उनको अभिभूत कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह द्वितीय अभिभ्वायतन है। (२)

"कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर कुछ ही सुवर्ण दुर्वण रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह तृतीय अभिभ्वायतन है। (३)

"कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर अप्रमाण सुवर्ण, दुर्वर्ण रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह चतुर्थ अभिभ्वायतन है। (४)

"कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर नील, नीलवर्ण एवं नीलनिदर्शन, नीलनिर्भास रूपों को देखता है; जैसे कि नील...नीलनिर्भास अलसी का फूल हो या जैसे दोनों ओर से कान्तिमय (चमकीला) नील...नीलनिर्भास काशी का बना कौषेय वस्त्र हो। वह ...पूर्ववत्...। यह पञ्चम अभिभ्वायतन है। (५)

"कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर पीत, पीतवर्ण, पीतनिदर्शन एवं पीताभास रूपों को देखता है, जैसे कर्णिकार (अमलतास या कनेर) का फूल हो या जैसे दोनों ओर से कान्तिमय पीत...काशी का बना कौषेयवस्त्र हो। वह ...पूर्ववत्...। यह षष्ठ अभिभ्वायतन है। (६)

"कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर लोहित (लाल), लोहितवर्ण...रूपों को

वाराणसेय्यकं उभतोभागविमट्ठं लोहितकं लोहितकवण्णं लोहितकनिदस्सनं लोहितकनिभासं; एवमेव अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति लोहितकानि लोहितकवण्णानि लोहितकनिदस्सनानि लोहितकनिभासानि; 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं सत्तमं अभिभायतनं।

''अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति ओदातानि ओदातवण्णानि ओदातनिदस्सनानि ओदातनिभासानि। सेय्यथापि नाम ओसधितारका ओदाता ओदातवण्णा ओदातनिदस्सना ओदातनिभासा, सेय्यथा वा पन तं वत्थं वाराणसेय्यकं [N.148,B.306] उभतोभागविमट्ठं ओदातं ओदातवण्णं ओदातनिदस्सनं ओदातनिभासं; एवमेव अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति ओदातानि ओदातवण्णानि ओदातनिदस्सनानि ओदातनिभासानि; 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं अट्ठमं अभिभायतनं। इमानि खो, भिक्खवे, अट्ठ अभिभायतनानि।

''एतदग्गं, भिक्खवे, इमेसं अट्ठन्नं अभिभायतनानं यदिदं अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति ओदातानि ओदातवण्णानि ओदातनिदस्सनानि ओदातनिभासानि; 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। एवंसञ्ञिनो पि खो, भिक्खवे, सन्ति सत्ता। एवंसञ्ञीनं पि खो, भिक्खवे, सत्तानं अत्थेव अञ्ञथत्तं अत्थि [R.63] विपरिणामो। एवं पस्सं, भिक्खवे, सुतवा अरियसावको तस्मिं पि निब्बिन्दति। तस्मिं निब्बिन्दन्तो अग्गे विरज्जति, पगेव हीनस्मिं।

६. ''चतस्सो इमा, भिक्खवे, पटिपदा। कतमा चतस्सो? दुक्खा पटिपदा दन्धाभिञ्ञा, दुक्खा पटिपदा खिप्पाभिञ्ञा, सुखा पटिपदा दन्धाभिञ्ञा, सुखा पटिपदा खिप्पाभिञ्ञा—इमा खो, भिक्खवे, चतस्सो पटिपदा।

देखता है; जैसे—लाल बन्धुजीवक का फूल (गुल दुपहरिया) हो या...काशी का बना लाल कौषयवस्त्र हो। वह...पूर्ववत्...। यह सप्तम अभिभ्वायतन है। (७)

''कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर अवदात (श्वेत) अवदातवर्ण...रूपों को देखता है; जैसे तारा (नक्षत्र) समूह अवदात होता है, या दोनों ओर से कान्तिमय (चमकीला) अवदात...काशी का बना हुआ कौषय वस्त्र होता है। वह 'उनको अभिभूत कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञावाला होता है। यह अष्टम अभिभ्वायतन है। (८)

''भिक्षुओ! ये आठ अभिभ्वायतन होते हैं।

''भिक्षुओ! इन आठों अभिभ्वायतनों में वह आध्यात्मिक अरूपसंज्ञी श्रेष्ठ होता है, जो बाहर अवदात, अवदातवर्ण, अवदातनिदर्शन एवं अवदातनिर्भास रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञावाला होता है। भिक्षुओ! ऐसी संज्ञावाले भी कुछ प्राणी होते हैं। ऐसी संज्ञा वाले प्राणियों में भी, हो सकता है, कोई विकार या अन्यथात्व दिखायी दे जाय। ऐसा देखकर कोई आर्यश्रावक उसके प्रति अपने चित्त में निर्वेद उत्पन्न कर ले। उसमें निर्विण्ण होता हुआ वह उसकी अग्रता में भी वैराग्यवान् होता है, हीन में तो वह पहले ही था।

"एतदग्गं, भिक्खवे, इमासं चतस्सन्नं पटिपदानं यदिदं सुखा पटिपदा खिप्पाभिञ्ञा। एवम्पटिपन्ना पि खो, भिक्खवे, सन्ति सत्ता। एवम्पटिपन्नानं पि खो, भिक्खवे, सत्तानं अत्थेव अञ्ञथत्तं अत्थि विपरिणामो। एवं पस्सं, भिक्खवे, सुतवा अरियसावको तस्मिं पि निब्बिन्दति। तस्मिं निब्बिन्दन्तो अग्गे विरज्जति, पगेव हीनस्मिं।

७. "चतस्सो इमा, भिक्खवे, सञ्ञा। कतमा चतस्सो? परित्तमेको सञ्जानाति, महग्गतमेको सञ्जानाति, अप्पमाणमेको सञ्जानाति, 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनमेको सञ्जानाति—इमा खो, भिक्खवे, चतस्सो सञ्ञा।

"एतदग्गं, भिक्खवे, इमासं चतस्सन्नं सञ्ञानं यदिदं 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनमेको सञ्जानाति। एवंसञ्ञिनो पि खो, भिक्खवे, सन्ति सत्ता। एवंसञ्ञीनं पि खो, भिक्खवे, सत्तानं अत्थेव अञ्ञथत्तं अत्थि विपरिणामो। एवं पस्सं, [N.149] भिक्खवे, सुतवा अरियसावको तस्मिं पि निब्बिन्दति। तस्मिं निब्बिन्दन्तो अग्गे विरज्जति, पगेव हीनस्मिं।

[B.307] ८. "एतदग्गं, भिक्खवे, बाहिरकानं दिट्ठिगतानं यदिदं 'नो चस्सं, नो च मे सिया, न भविस्सामि, न मे भविस्सती' ति। एवंदिट्ठिनो, भिक्खवे एतं पाटिकङ्खं—'या चायं भवे [R.64] अप्पटिकुल्यता, सा चस्स न भविस्सति; या चायं भवनिरोधे पाटिकुल्यता, सा चस्स

---

६. "भिक्षुओ! **प्रतिपदाएँ चार** होती हैं। कौन सी चार? (१) दु:खा प्रतिपदा, विलम्ब से ज्ञान वाली, (२) दु:खा प्रतिपदा, शीघ्र ज्ञान वाली, (३) सुखा प्रतिपदा, विलम्ब से ज्ञान वाली एवं (४) सुखा प्रतिपदा, शीघ्र ज्ञान वाली।

"भिक्षुओ! इन चारों प्रतिपदाओं में चतुर्थ सुखा प्रतिपदा (शीघ्र ज्ञान वाली प्रतिपदा) श्रेष्ठ है। इसकी साधना करने वाले भी बहुत से प्राणी होते हैं। ऐसे साधकों में भी, हो सकता है, कोई अन्यथात्व या विकार दिखायी दे जाय। ऐसा देखकर कोई आर्यश्रावक उसके प्रति निर्विण्ण (ग्लानियुक्त) हो जाय। उसमें निर्विण्ण होता हुआ वह उसकी श्रेष्ठता में भी वैराग्यवान् हो जाता है, हीन में तो वह पहले ही था।

७. "भिक्षुओ! **संज्ञा** (ज्ञान-प्रकार) **चार** होती हैं। कौन सी चार? (१) एक कुछ ही जानता है, (२) एक बहुत कुछ जानता है, (३) एक अप्रमाण जानता है और (४) एक 'कुछ भी नहीं है'—ऐसा मानकर आकिञ्चन्यायतन को ही जानता है। भिक्षुओ! ये चार संज्ञाएँ होती हैं।

"इन चारों संज्ञाओं में वह जो 'कुछ भी नहीं है'—ऐसा मानकर आकिञ्चन्यायतन का ज्ञान है वही श्रेष्ठ है। इसकी आराधना करनेवाले भी कुछ प्राणी हो सकते हैं, कभी ऐसे प्राणियों में कुछ विकार या अन्यथात्व आ जाय। इसे देखकर किसी श्रुतवान् आर्यश्रावक को उनके प्रति निर्वेद उत्पन्न हो जाय। वह वहाँ निर्विण्ण होता हुआ उनकी अग्रता के प्रति वैराग्यवान् हो जाता है, हीनता के प्रति तो वह पहले ही था।

८. "भिक्षुओ! **बाह्य दृष्टिवादियों** की दृष्टि में यह श्रेष्ठ दृष्टि है, जिसके आश्रयण से कोई यह मानता है—'न मैं था, न मैं कभी हो पाऊँ या न मैं कभी होऊँगा।' भिक्षुओ! ऐसी दृष्टि वाला यह

न भविस्सती' ति। एवंदिट्ठिनो पि खो, भिक्खवे, सन्ति सत्ता। एवंदिट्ठीनं पि खो, भिक्खवे, सुतवा अरियसावको तस्मिं पि निब्बिन्दति। तस्मिं निब्बिन्दन्तो अग्गे विरज्जति, पगेव हीनस्मिं।

९. ''सन्ति, भिक्खवे, एके समणब्राह्मणा परमत्थविसुद्धिं पञ्ञापेन्ति। एतदग्गं, भिक्खवे, परमत्थविसुद्धिं पञ्ञापेन्तानं यदिदं सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। ते तदभिञ्ञाय तस्स सच्छिकिरियाय धम्मं देसेन्ति। एवंवादिनो पि खो, भिक्खवे, सन्ति सत्ता। एवंवादीनं पि खो, भिक्खवे, सत्तानं अत्थेव अञ्ञथत्तं अत्थि विपरिणामो। एवं पस्सं, भिक्खवे, सुतवा अरियसावको तस्मिं पि निब्बिन्दन्ति। तस्मिं निब्बिन्दन्तो अग्गे विरज्जति, पगेव हीनस्मिं।

१०. ''सन्ति, भिक्खवे, एके समणब्राह्मणा परमदिट्ठधम्मनिब्बानं पञ्ञापेन्ति। एतदग्गं, भिक्खवे, परमदिट्ठधम्मनिब्बानं पञ्ञापेन्तानं यदिदं छन्नं फस्सायतनानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं विदित्वा अनुपादाविमोक्खो। एवंवादिं खो मं, भिक्खवे, एवमक्खायिं एके समणब्राह्मणा असता तुच्छा मुसा अभूतेन अब्भाचिक्खन्ति—'समणो गोतमो न कामानं परिञ्ञं पञ्ञापेति, न रूपानं परिञ्ञं पञ्ञापेति, न वेदनानं परिञ्ञं पञ्ञापेती' ति। कामानं चाहं, भिक्खवे, परिञ्ञं [R.65] पञ्ञापेमि, रूपानं च परिञ्ञं पञ्ञापेमि, वेदनानं च परिञ्ञं पञ्ञापेमि, दिट्ठेव धम्मे निच्छातो निब्बुतो सीतिभूतो अनुपादापरिनिब्बानं पञ्ञापेमी'' ति॥ ●

चाहता है—'यह जो भव में अनुकूलता है वह उसको नहीं होगी, तथा भवनिरोध में जो प्रतिकूलता है, वह उसको नहीं होगी।' ऐसी दृष्टिवाले भी अनेक प्राणी हैं। ऐसी दृष्टिवालों में कोई अन्यथात्व या कोई विकार हो सकता है। उसे देखता हुआ कोई श्रुतवान् आर्यश्रावक उनके प्रति निर्वेद कर सकता है। उस निर्वेद से उसको उसकी अग्रता में वैराग्य में हो जायगा, हीनता में तो वह पहले ही से था।

९. ''भिक्षुओ! कुछ श्रमण ब्राह्मण **परमार्थविशुद्धि** को मानने की घोषणा करते हैं। इस परमार्थविशुद्धि की साधना करने वालों में वही श्रेष्ठ है जो सब ओर से आकिञ्चन्यायतन को अतिक्रान्त कर नैवसंज्ञानासंज्ञायतन की साधना करता है। वे (साधक) उसको जानकर उसके साक्षात्कार हेतु धर्मोपदेश करते हैं। ऐसे मतवादी भी बहुत से प्राणी हैं। भिक्षुओ! हो सकता है, ऐसे मतवादियों में भी कोई श्रुतवान् आर्यश्रावक उनके प्रति अपने में निर्वेद उत्पन्न कर ले। ऐसे निर्विण्ण होता हुआ वह उन की अग्रता के प्रति भी वैराग्यवान् हो जाता है, उनकी हीनता में तो वैराग्यवान् पहले ही से था।

१०. ''भिक्षुओ! कुछ श्रमण ब्राह्मण **परमदृष्टधर्मनिर्वाण** की मान्यता की घोषणा करते हैं। इस परम दृष्टधर्मनिर्वाण की घोषणा करने वालों में वह साधक श्रेष्ठ होता है जो छहों स्पर्शायतनों के उत्पत्ति एवं विनाश, आस्वाद, आदीनव एवं निःसरण को यथार्थतः जानकर अनुपधिविमोक्ष की स्थिति तक पहुँच जाता है। ऐसा मानने वाले, ऐसा कहने वाले मुझको कुछ श्रमण ब्राह्मण असत्य

[N.150] **१०. दुतियकोसलसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समयेन राजा पसेनदि कोसलो उय्योधिका निवत्तो होति विजितसङ्गामो लद्धाधिप्पायो। अथ खो राजा पसेनदि कोसलो येन आरामो तेन पायासि। यावतिका यानस्स भूमि, यानेन गन्त्वा याना पच्चोरोहित्वा पत्तिको व आरामं पाविसि। तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू अब्भोकासे चङ्कमन्ति। अथ खो राजा [B.308] पसेनदि कोसलो येन ते भिक्खू तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा ते भिक्खू एतदवोच—

२. "कहं नु खो, भन्ते, भगवा एतरहि विहरति अरहं सम्मासम्बुद्धो। दस्सनकामा हि मयं, भन्ते, तं भगवन्तं अरहन्तं सम्मासम्बुद्धं" ति।

"एसो, महाराज, विहारो संवुतद्वारो। तेन अप्पसद्दो उपसङ्कमित्वा अतरमानो आलिन्दं पविसित्वा उक्कासित्वा अग्गळं आकोटेहि; विवरिस्सति ते भगवा द्वारं" ति।

३. अथ खो राजा पसेनदि कोसलो येन सो विहारो संवुतद्वारो, तेन अप्पसद्दो उपसङ्कमित्वा अतरमानो आलिन्दं पविसित्वा उक्कासित्वा अग्गळं आकोटेसि। विवरि भगवा द्वारं। अथ खो राजा पसेनदि कोसलो विहारं पविसित्वा भगवतो पादेसु सिरसा निपतित्वा भगवतो पादानि मुखेन च परिचुम्बति पाणीहि च परिसम्बाहति नामं च [R.66] सावेति—"राजाहं, भन्ते पसेनदि कोसलो; राजाहं, भन्ते, पसेनदि कोसलो" ति।

आरोप लगाते हुए कहते हैं—'यह श्रमण गौतम न कामभोगों का त्याग, न रूपों का त्याग और न वेदनाओं का त्याग ही प्रज्ञप्त करता है।' जबकि, भिक्षुओ! मैं कामों के परित्याग की, रूपों के परित्याग की, वेदनाओं के परित्याग की प्रज्ञापना करता ही रहता हूँ॥" ●

१०. द्वितीय कोशलसूत्र : : भगवान् बुद्ध की दश विशेषताएँ

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवनाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय संग्रामविजय के अपने प्रयोजन में सफल हुआ राजा प्रसेनजित् कोशल सैनिक अभ्यास के निरीक्षण के निवृत्त हुआ था। तब वह जेतवन विहार में आया, जहाँ तक यान से आने योग्य भूमि थी, वहाँ तक यान से आया, तदनन्तर यान से उतर कर पैदल ही विहार में प्रविष्ट हुआ, उस समय बहुत से भिक्षु खुले मैदान में चंक्रमण कर रहे थे। राजा उन भिक्षुओं के पास गया और उन भिक्षुओं से यह पूछा—

२. "भन्ते! भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध इस समय कहाँ विराजमान है? मुझे उन भगवान् के दर्शनों की इच्छा है।"

"महाराज! विहार का द्वार इस समय बन्द है। आप निःशब्द वहाँ जाकर बरामदे में पहुँचकर, खांसकर अर्गला (कुण्डी) खटखटाइयेगा। तब भगवान् द्वार खोल देंगे।"

३. तब राजा प्रसेनजित् कोशल बन्द द्वार वाले विहार (साधना प्रकोष्ठ) के पास पहुँचा, वहाँ निःशब्द (पदध्वनि किये विना) पहुँचकर, बरामदे में जाकर कुछ खाँस कर उसने धीरे से अर्गला खटखटायी। भगवान् ने द्वार खोल दिया। तब राजा प्रसेनजित् कोशल विहार में जा कर भगवान् के श्रीचरणों में अपना मस्तक रखकर उन के श्रीचरणों का मुख से चुम्बन करने लगा, हाथों से दबाने

४. "कं पन त्वं, महाराज, अत्थवसं सम्पस्समानो इमस्मिं सरीरे एवरूपं परमनिपच्चकारं करोसि, मेत्तूपहारं उपदंसेसी" ति?

५. "कतञ्ञुतं खो अहं, भन्ते, कतवेदितं सम्पस्समानो भगवति एवरूपं परमनिपच्चकारं करोमि, मेत्तूपहारं उपदंसेमि। भगवा हि, भन्ते, बहुजनहिताय पटिपन्नो बहुजनसुखाय बहुनो जनस्स अरिये ञाये पतिट्ठापिता यदिदं कल्याणधम्मताय कुसल-धम्मताय। यं पि, भन्ते, भगवा बहुजनहिताय पटिपन्नो बहुजनसुखाय बहुनो जनस्स अरिये ञाये पतिट्ठापिता यदिदं कल्याणधम्मताय कुसलधम्मताय, इदं पि खो अहं, भन्ते, [N.151] अत्थवसं सम्पस्समानो भगवति एवरूपं परमनिपच्चकारं करोमि, मेत्तूपहारं उपदंसेमि।

६. "पुन च परं, भन्ते, भगवा सीलवा वुद्धसीलो अरियसीलो कुसलसीलेन समन्नागतो। यं पि, भन्ते, भगवा सीलवा वुद्धसीलो अरियसीलो कुसलसीलो कुसलसीलेन समन्नागतो, इदं पि खो अहं, भन्ते, अत्थवसं सम्पस्समानो भगवति एवरूपं परमनिपच्चकारं करोमि, मेत्तूपहारं उपदंसेमि।

७. "पुन च परं, भन्ते, भगवा दीघरत्तं आरञ्ञको, अरञ्ञवनपत्थानि [B.309] पन्तानि सेनासनानि पटिसेवति। यं पि, भन्ते, भगवा दीघरत्तं आरञ्ञको, अरञ्ञवन- [R.67] पत्थानि पन्तानि सेनासनानि पटिसेवति, इदं पि खो अहं, भन्ते, अत्थवसं सम्पस्समानो भगवति एवरूपं परमनिपच्चकारं करोमि, मेत्तूपहारं उपदंसेमि।

८. "पुन च परं, भन्ते, भगवा सन्तुट्ठो इतरीतरचीवरपिण्डपातसेनासन-

---

लगा और अपना नाम तीन बार सुनाया—"भन्ते! मैं राजा प्रसेनजित् कोशल हूँ, भन्ते! मैं राजा प्रसेनजित् कोशल हूँ।"

४. "परन्तु, राजन्! आज किस कारणवश इस (मेरे) शरीर में तुम्हारा ऐसा श्रद्धातिरेक उद्भूत हो गया कि ऐसी नम्रता दिखा रहे हो तथा मैत्रीभाव प्रदर्शित कर रहे हो?"

५. "भन्ते! मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिये यह नम्रता तथा मैत्रीभाव प्रदर्शित कर रहा हूँ। भन्ते! आप बहुजन हित में तथा बहुजन सुख में रत हैं, आपने बहुत से साधकजनों को इस कल्याणधर्म एवं कुशलधर्म वाले आर्य ज्ञान में प्रतिष्ठित कर दिया है। इस कल्याणधर्मता तथा कुशलधर्मता के लिये कृतज्ञता प्रकट करने हेतु मैं आपके प्रति अपनी यह नम्रता एवं मैत्रीभाव प्रदर्शित कर रहा हूँ। (१)

६. "पुनः, भन्ते! आप शीलवान् हैं; वुद्धशील, आर्यशील होते हुए कुशलशील से युक्त हैं। क्योंकि, भन्ते! आप ऐसे शीलवान् हैं—इस कारण भी मैं आपके प्रति...पूर्ववत्...नम्रता प्रदर्शित कर रहा हूँ। (२)

७. "पुनः, भन्ते! आप दीर्घकाल तक अरण्यसाधक रहे हैं। आपने अरण्य के एकान्त स्थानों का साधना हेतु प्रयोग किया है। क्योंकि, भन्ते! आप अरण्यसाधक रहे हैं—इस कारण भी मैं आपके प्रति...नम्रता प्रदर्शित कर रहा हूँ। (३)

८. "पुनः, भन्ते! आप साधारणतः मिल जाने वाले किसी भी प्रकार के चीवर, पिण्डपात,

गिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन। यं पि, भन्ते, भगवा सन्तुट्ठो इतरीतरचीवरपिण्डपात-सेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन, इदं पि खो अहं, भन्ते, अत्थवसं सम्पस्समानो भगवति एवरूपं परमनिपच्चकारं करोमि, मेत्तूपहारं उपदंसेमि।

९. ''पुन च परं, भन्ते, भगवा आहुनेय्यो पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। यं पि, भन्ते भगवा आहुनेय्यो पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स, इदं पि खो अहं, भन्ते, अत्थवसं सम्पस्समानो भगवति एवरूपं परमनिपच्चकारं करोमि, मेत्तूपहारं उपदंसेमि।

१०. ''पुन च परं, भन्ते, भगवा यायं कथा अभिसल्लेखिका चेतोविवरणसप्पाया, सेय्यथीदं—अप्पिच्छकथा सन्तुट्ठिकथा पविवेककथा असंसग्गकथा विरियारम्भकथा सीलकथा समाधिकथा पञ्ञाकथा विमुत्तिकथा विमुत्तिञाणदस्सनकथा, एवरूपाय कथाय [N.152] निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। यं पि, भन्ते, भगवा यायं कथा अभिसल्लेखिका चेतोविवरणसप्पाया, सेय्यथीदं—अप्पिच्छकथा ...पे०... विमुत्तिञाण-दस्सनकथा, एवरूपाय कथाय निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, इदं पि खो अहं, भन्ते, अत्थवसं सम्पस्समानो भगवति एवरूपं परमनिपच्चकारं करोमि, मेत्तूपहारं उपदंसेमि।

[R.68] ११. ''पुन च परं, भन्ते, भगवा चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्म-सुखविहारानं निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। यं पि, भन्ते, भगवा चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, इदं पि खो अहं, भन्ते, अत्थवसं सम्पस्समानो भगवति एवरूपं परमनिपच्चकारं करोमि, मेत्तूपहारं उपदंसेमि।

शयनासन, रोगमुक्तिहेतु भैषज्य से सन्तुष्ट रहे हैं। क्योंकि आप इतना सन्तोषी जीवन बिताने वाले रहे हैं—इसलिये भी मैं आपके प्रति...नम्रता प्रदर्शित कर रहा हूँ। (४)

९. ''पुनः, भन्ते! आप आहवनीय, प्राघुणिक (अतिथि) बनाने योग्य, प्रणम्य, दानयोग्य तथा लोक के लिये अद्वितीय पुण्यभूमिस्वरूप हैं। क्योंकि आप इन गुणों से भी युक्त हैं—इस कारण भी मैं आपके प्रति...नम्रता दिखा रहा हूँ। (५)

१०. ''पुनः, भन्ते! आप ऐसे संवाद (कथा) कहते हैं जो धर्म की ओर उत्तेजना एवं प्रेरणा देने वाले हैं तथा चित्त को संयत करने वाले हैं; जैसे—अल्पेच्छकथा, सन्तोषकथा, एकान्त-माहात्म्यबोधक कथा, (लोक से) सम्बन्ध न रखने वाली कथा, साधना के लिये उद्योगकथा, शीलकथा, समाधिकथा, प्रज्ञाकथा, विमुक्तिकथा एवं विमुक्तिज्ञानदर्शनकथा आदि। ऐसी कथाओं का आप स्वभावतः एवं पूर्णतः लाभ कराने वाले हैं। क्योंकि आप ऐसे उत्तम संवादकर्त्ता हैं—इस कारण भी मैं आपके प्रति...नम्रता प्रदर्शित कर रहा हूँ। (६)

११. ''पुनः, भन्ते! आप इस शरीर से सुखपूर्वक साधना किये जाने योग्य आध्यात्मिक चारों

१२. "पुन च परं, भन्ते, भगवा अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, [B.310] सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो तिस्सो पि जातियो चतस्सो पि जातियो पञ्च पि जातियो दस पि जातियो वीसं पि जातियो तिंसं पि जातियो चत्तालीसं पि जातियो पञ्ञासं पि जातियो जातिसतं पि जातिसहस्सं पि जातिसतसहस्सं पि अनेके पि संवट्टकप्पे अनेके पि विवट्टकप्पे अनेके पि संवट्टविवट्टकप्पे—'अमुत्रासिं एवंनामो एवंगोत्तो एवंवण्णो एवमाहारो एवंसुखदुक्खप्पटिसंवेदी एवमायुपरियन्तो, सो ततो चुतो अमुत्र उदपादिं; तत्रापासिं एवंनामो एवंगोत्तो एवंवण्णो एवमाहारो एवंसुखदुक्खप्पटिसंवेदी एवमायुपरियन्तो, सो ततो चुतो इधूपपन्नो' ति। इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति। यं पि, भन्ते, भगवा अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, इदं पि खो अहं, भन्ते, अत्थवसं सम्पस्समानो भगवति एवरूपं परमनिपच्चकारं करोमि, मेत्तूपहारं उपदंसेमि।

१३. "पुन च परं, भन्ते, भगवा दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सति चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति—"इमे वत भोन्तो सत्ता कायदुच्चरितेन समन्नागता वचीदुच्चरितेन समन्नागता मनोदुच्चरितेन समन्नागता अरियानं उपवादका मिच्छादिट्ठिका मिच्छादिट्ठि- [N.153, R.69] कम्मसमादाना, ते कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपन्ना; इमे वा पन भोन्तो सत्ता कायसुचरितेन समन्नागता वचीसुचरितेन समन्नागता मनोसुचरितेन समन्नागता अरियानं अनुपवादका सम्मादिट्ठिका सम्मादिट्ठिकम्मसमादाना, ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपन्ना' ति, इति दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सति ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति। यं पि, भन्ते, भगवा दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति, इदं पि खो अहं, भन्ते, अत्थवसं सम्पस्समानो भगवति एवरूपं परमनिपच्चकारं करोमि, मेत्तूपहारं उपदंसेमि।

ध्यानावस्थाओं को पूर्णत: प्राप्त कर चुके हैं। इसलिये भी मैं आपके प्रति यह...नम्रता प्रदर्शित कर रहा हूँ। (७)

१२. "पुन:, भन्ते! आप अपने विविध पूर्वजन्मों का अनुस्मरण करते रहते हैं; जैसे—एक जन्म, दो जन्म...पूर्ववत्...। इस कारण भी मैं आप के प्रति यह...नम्रता प्रदर्शित कर रहा हूँ। (८)

१३. "पुन: भन्ते! आप अपनी मानवदुर्लभ विशुद्ध दिव्यचक्षुरिन्द्रिय से इस लोक में कर्मानुसार उत्पन्न एवं विनष्ट होने वाले छोटे-बड़े सभी सत्त्वों (प्राणियों) के विषय में सब कुछ जानते हैं कि ये अपने कायदुश्चरित से, वाग्दुश्चरित से या मनोदुश्चरित से युक्त होकर अपने कर्मानुसार यहाँ उत्पन्न हुए हैं। ...पूर्ववत्...इस ज्ञान के कारण भी मैं आपके प्रति...यह नम्रता प्रदर्शित कर रहा हूँ। (९)

[B.311] १४. ''पुन च परं, भन्ते, भगवा आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। यं पि, भन्ते, भगवा आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति, इदं पि खो अहं, भन्ते, अत्थवसं सम्पस्समानो भगवति एवरूपं परमनिपच्चकारं करोमि, मेत्तूपहारं उपदंसेमि।

१५. ''हन्द च दानि मयं, भन्ते, गच्छाम। बहुकिच्चा मयं बहुकरणीया'' ति।

''यस्स दानि त्वं, महाराज, कालं मञ्ञसी'' ति।

अथ खो राजा पसेनदि कोसलो उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामी ति॥ ●

महावग्गो ततियो॥

तस्सुद्दानं

[R.70] सीहाधिवुत्ति कायेन, चुन्देन कसिणेन च।
काळी च द्वे महापञ्हा, कोसलेहि परे दुवे ति॥ ●

---

१४. ''पुनः, भन्ते! आप आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति, प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जानकर साक्षात् कर प्राप्त कर साधना कर रहे हैं; क्योंकि भन्ते! आप ऐसा कर रहे हैं, इस कारण भी मैं आपके प्रति ऐसी नम्रता एवं मैत्री प्रदर्शित कर रहा हूँ। (१०)

१५. ''और अब, भन्ते! अपने आवास पर जाऊँगा; क्योंकि मुझे अन्य बहुत से कार्य भी करने हैं।''

''राजन्! जैसा तुम उचित समझो।''

तब वह राजा प्रसेनजित् कोशल आसन से उठकर, भगवान् को प्रणाम-प्रदक्षिणा कर यथास्थान चले गये॥ ●

महावर्ग तृतीय सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. सिंहनादसूत्र, २. अध्युक्तिपदसूत्र, ३. कायसूत्र, ४. महाचुन्दसूत्र, ५. कृत्स्न (कसिण) सूत्र, ६. कालीसूत्र, ७. प्रथम महाप्रश्नसूत्र, ८. द्वितीय महाप्रश्न सूत्र, ९. प्रथम कोशलसूत्र एवं १०. द्वितीय कोशलसूत्र॥ ●

४. उपालिवग्गो

१. उपालिसुत्तं : १. अथ खो आयस्मा उपालि येन भगवा तेनुपसङ्कमि; [N.154] उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा उपालि भगवन्तं एतदवोच—

२. ''कति नु खो, भन्ते, अत्थवसे पटिच्च तथागतेन सावकानं सिक्खापदं पञ्ञत्तं, पातिमोक्खं उद्दिट्ठं'' ति?

३. ''दस खो, उपालि, अत्थवसे पटिच्च तथागतेन सावकानं सिक्खापदं पञ्ञत्तं, पातिमोक्खं उद्दिट्ठं। कतमे दस? सङ्घसुट्ठुताय, सङ्घफासुताय, दुम्मङ्कूनं पुग्गलानं निग्गहाय, पेसलानं भिक्खूनं फासुविहाराय, दिट्ठधम्मिकानं आसवानं संवराय, सम्परायिकानं आसवानं पटिघाताय, अप्पसन्नानं पसादाय, पसन्नानं भिय्योभावाय, सद्धम्मट्ठितिया, विनया-नुग्गहाय—इमे खो, उपालि, दस अत्थवसे पटिच्च तथागतेन सावकानं सिक्खापदं पञ्ञत्तं, पातिमोक्खं उद्दिट्ठं'' ति॥ ●

२. पातिमोक्खट्ठपनासुत्तं : १. ''कति नु खो, भन्ते, पातिमोक्खट्ठपना'' [B.312] ति?

२. ''दस खो, उपालि, पातिमोक्खट्ठपना। कतमे दस? पाराजिको तस्सं परिसायं

---

४. उपालिवर्ग

१. उपालिसूत्र : : शिक्षापद-उपदेश के दश हेतु

१. तब आयुष्मान् उपालि, जहाँ भगवान् विराजमान थे, वहाँ पहुँचे। पहुँचकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बै आयुष्मान् उपालि ने भगवान् से यह पूछा—

२. ''भन्ते! कितने प्रयोजनों से भगवान् ने अपने श्रावकों (शिष्यों) को शिक्षापदों का प्रज्ञापन तथा प्रातिमोक्ष का उद्देश (संक्षेपकथन) किया है?

३. ''उपालि! दश प्रयोजनों से तथागत ने अपने श्रावकों को शिक्षापद प्रज्ञप्त किये हैं, तथा प्रातिमोक्ष का उद्देश किया है। कौन से दश? (१) सङ्घ में सुष्ठुता (अच्छाई=शुद्धि) बनी रहे, (२) सङ्घ में फासुता (सरलता=सुविधा) बनी रहे, (३) वाक्चपल (मुखर=मुँहफट) पुद्गलों पर निग्रह (नियन्त्रण) रखने के लिये, (४) सदाचरणयुक्त भिक्षुओं को सरलता से साधना में सहायता हेतु (५) इस लोक से सम्बद्ध आश्रवों के क्षय के लिये; (६) परलोक से सम्बद्ध आश्रवों के क्षय के लिये; (७) अश्रद्धालुओं की श्रद्धा के लिये; (८) श्रद्धालुओं की श्रद्धा में वृद्धि के लिये; (९) सद्धर्म की स्थिति के लिये तथा (१०) भिक्षुओं के जीवन के नियमोपनियमों के उपदेश से उन पर अनुग्रह (कृपा) के लिये—उपालि! इन दश प्रयोजनों के लिये तथागत ने श्रावकों को शिक्षापद का प्रज्ञापन किया है, तथा प्रातिमोक्ष का उद्देश (नामनिर्देशपूर्वक सङ्केत) किया गया है॥'' ●

२. प्रातिमोक्षस्थगनसूत्र : : प्रतिमोक्षस्थगन के दश हेतु

१. ''भन्ते! किन अवसरों (कारणों के उपस्थित होने) पर भिक्षुसङ्घ द्वारा किया जा रहा प्रातिमोक्ष का पाठ स्थगित कर देना चाहिये?''

निसिन्नो होति, पाराजिककथा विप्पकता होति, अनुपसम्पन्नो तस्सं परिसायं निसिन्नो होति, [R.71] अनुपसम्पन्नकथा विप्पकता होति, सिक्खं पच्चक्खातको तस्सं परिसायं निसिन्नो होति, सिक्खं पच्चक्खातककथा विप्पकता होति, पण्डको तस्सं परिसायं निसिन्नो होति, पण्डककथा विप्पकता होति, भिक्खुनिदूसको तस्सं परिसायं निसिन्नो होति, भिक्खुनि-दूसककथा विप्पकता होति—इमे खो, उपालि, दस पातिमोक्खट्ठपना'' ति ॥

३. उब्बाहिकासुत्तं : १. ''कतीहि नु खो, भन्ते, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु उब्बाहिकाय सम्मन्नितब्बो'' ति?

[N.154]२. ''दसहि खो, उपालि, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु उब्बाहिकाय सम्मन्नितब्बो। कतमेहि दसहि? इधुपालि, भिक्खु सीलवा होति; पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति आचार-गोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु; बहुस्सुतो होति सुतधरो सुतसन्निचयो, ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा; उभयानि खो पनस्स पातिमोक्खानि वित्थारेन स्वागतानि होन्ति सुविभत्तानि सुप्पवत्तीनि सुविनिच्छितानि सुत्तसो अनुब्यञ्जनसो; विनये खो पन ठितो होति असंहीरो; पटिबलो होति उभो

---

२. ''उपालि! प्रातिमोक्ष स्थगित करने के दश अवसर होते हैं। कौन से दश? (१) यदि उस परिषद् में कोई पाराजिक आपत्तिग्रस्त पुद्गल बैठा हो, (२) किसी भी प्रकार के पाराजिक की चर्चा आरम्भ हो गयी हो; (३) जिसको उपसम्पदा न मिली हो ऐसे पुद्गल की उपस्थिति होने पर; (४) ऐसे अनुपसम्पन्न की कथा आरम्भ होने पर; (५) उस सभा में इस धर्म को त्याग देने वाले की उपस्थिति पर; (६) ऐसे पुरुष की चर्चा आरम्भ होने पर; (७) किसी पण्डक (नपुंसक) की उस सभा में उपस्थिति होने पर; (८) उस सभा में किसी पण्डक से सम्बद्ध चर्चा आरम्भ होने पर; (९) किसी भिक्षुणी से व्यभिचार के आरोप वाले पुद्गल की उपस्थिति पर; (१०) तथा ऐसे पुद्गल की चर्चा आरम्भ होने पर—उपालि ये दश अवसर आने पर प्रातिमोक्ष-पाठ स्थगित कर देना चाहिये॥''

३. उद्वाहिकासूत्र : : विशेष समिति में निर्वाचन के योग्य भिक्षु

१. ''भन्ते! किन धर्मों से युक्त भिक्षु को किसी विशेष समिति (उद्वाहिका) में निर्वाचनयोग्य समझना चाहिये?

२. ''उपालि यहाँ दश धर्मों से युक्त भिक्षु को किसी विशेष समिति में निर्वाचनयोग्य समझना चाहिये। कौन से दश? (१) उपालि! जो भिक्षु शीलवान् हो, प्रातिमोक्ष नियमों से संवृत हो, आचार-व्यवहार से युक्त हो, छोटे से छोटे निन्दय कर्म करने में भी भय मानने वाला हो, कायिक एवं वाचिक कर्मों से परिशुद्ध होकर भगवान् द्वारा उपदिष्ट शिक्षापदों का अभ्यास करने वाला हो; (२) जो श्रुत को धारण करनेवाला तथा श्रुत का अपनी स्मृति में संग्रह करने वाला हो, जो धर्म आदिकल्याण मध्येकल्याण ...पूर्ववत्... हों वे धर्म बहुधा श्रुत हों... दृष्टि से सुप्रतिविद्ध हों;

अत्तपच्चत्थिके सञ्ञापेतुं पञ्ञापेतुं निज्झापेतुं पेक्खेतुं पसादेतुं; अधिकरणसमुप्पाद-वूपसमकुसलो होति—अधिकरणं जानाति; अधिकरणसमुप्पादवूपसमकुसलो [R.72] होति—अधिकरणं जानाति; अधिकरणसमुदयं जानाति; अधिकरणनिरोधं जानाति; अधि-करणनिरोधगामिनिं पटिपदं जानाति। इमेहि खो, उपालि, दसहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु उब्बाहिकाय सम्मन्नितब्बो'' ति॥ ●

४. उपसम्पदासुत्तं : १. ''कतीहि नु खो, भन्ते, धम्मेहि समन्नागतेन भिक्खुना उपसम्पादेतब्बं'' ति? [B.313]

२. ''दसहि खो, उपालि, धम्मेहि समन्नागतेन भिक्खुना उपसम्पादेतब्बं। कतमेहि दसहि? इधुपालि, भिक्खु सीलवा होति, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति आचार-गोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु; बहुस्सुतो होति सुतधरो सुतसन्निचयो, ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा; पातिमोक्खं खो पनस्स वित्थारेन स्वागतं होति सुविभत्तं सुप्पवत्तं सुविनिच्छितं सुत्तसो [N.156] अनुब्यञ्जनसो; पटिबलो होति गिलानं उपट्ठातुं वा उपट्ठापेतुं वा; पटिबलो होति अनभिरतिं वूपकासेतुं वा वूपकासापेतुं वा; पटिबलो होति उप्पन्नं कुक्कुच्चं धम्मतो विनोदेतुं; पटिबलो होति उप्पन्नं दिट्ठिगतं धम्मतो विवेचेतुं; पटिबलो होति अधिसीले समादपेतुं; पटिबलो होति अधिचित्ते समादपेतुं; पटिबलो होति अधिपञ्ञाय समादपेतुं। इमेहि खो, उपालि, दसहि धम्मेहि समन्नागतेन भिक्खुना उपसम्पादेतब्बं'' ति॥

---

(३) जिसको द्विविध (भिक्षु एवं भिक्षुणी) प्रातिमोक्ष विस्तार से ज्ञात हों..., (४) जो स्वयं विनय (भिक्षुनियम) में सुस्थिर हो; (५) जो अनुकूल-प्रतिकूल दोनों पक्षों को समझने समझाने में समर्थ हो; (६) वाद के उत्पाद एवं शमन में कुशल हो; (७) सम्बद्ध वाद को जानता हो; (८) उसके उत्पाद को जानता हो; (९) उस वाद के निरोध को जानता हो; तथा (१०) उस वाद के निरोध का उपाय भी जानता हो। उपालि! इन दश धर्मों से युक्त किसी भिक्षु को ऐसी विशेष समिति में निर्वाचनयोग्य समझना चाहिये॥'' ●

४. उपसम्पदासूत्र : : उपसम्पदा देने योग्य भिक्षु के दश धर्म

१. ''भन्ते! किन धर्मों से युक्त भिक्षु द्वारा उपसम्पदा दी जानी चाहिये?''

२. ''उपालि! दश धर्मों से युक्त भिक्षु द्वारा उपसम्पदा देनी चाहिये। कौन से दश? (१) जो भिक्षु शीलवान् हो...पूर्ववत्...अभ्यास करने वाला हो; (२) जो भिक्षु बहुश्रुत हो...पूर्ववत्...दृष्टि से सुप्रतिविद्ध हों; (३) जिसको समस्त प्रातिमोक्ष सूत्रशः भी और व्यञ्जनशः (चिह्नों से) भी हृदयङ्गम हो; (४) जो रोगी की सेवा करने में सर्वथा समर्थ हो, (५) जो धर्म में अनभिरति (अनिच्छा) को हटाने या हटवाने में सर्वथा समर्थ हो; (६) जो उत्पन्न कुकृत्य को धर्मोपदेश द्वारा हटाने में सर्वथा समर्थ हो; (७) जो मिथ्यादृष्टिगत धर्म को हटाने में सर्वथा समर्थ हो, (८) जो शील के पालन

[R.73] **५. निस्सयसुत्तं** : १. ''कतीहि नु खो, भन्ते, धम्मेहि समन्नागतेन भिक्खुना निस्सयो दातब्बो'' ति ?

२. ''दसहि खो, उपालि, धम्मेहि समन्नागतेन भिक्खुना निस्सयो दातब्बो। कतमेहि दसहि ? इधुपालि, भिक्खु सीलवा होति ...पे०... समादाय सिक्खति सिक्खा-पदेसु; बहुस्सुतो होति ...पे०... दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा; पातिमोक्खं खो पनस्स वित्थारेन स्वागतं होति सुविभत्तं सुप्पवत्तं सुविनिच्छतं सुत्तसो अनुब्यञ्जनसो; पटिबलो होति गिलानं उपट्ठातुं वा उपट्ठापेतुं वा; पटिबलो होति अनभिरतिं वूपकासेतुं वा वूपकासापेतुं वा; पटिबलो होति उप्पन्नं कुक्कुच्चं धम्मतो विनोदेतुं; पटिबलो होति उप्पन्नं दिट्ठिगतं धम्मतो विवेचेतुं; पटिबलो होति अधिसीले ...पे०... अधिचित्ते... अधिपञ्ञाय समादपेतुं। इमेहि खो, उपालि, दसहि धम्मेहि समन्नागतेन भिक्खुना निस्सयो दातब्बो'' ति॥ ●

[B.314] **६. सामणेरसुत्तं** : १. ''कतीहि नु खो, भन्ते, धम्मेहि समन्नागतेन भिक्खुना सामणेरो उपट्ठापेतब्बो'' ति ?

२. ''दसहि खो, उपालि, धम्मेहि समन्नागतेन भिक्खुना सामणेरो उपट्ठापेतब्बो। कतमेहि दसहि ? इधुपालि, भिक्खु सीलवा होति ...पे०... समादाय सिक्खति सिक्खा-पदेसु; बहुस्सुतो होति ...पे०... दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा; पातिमोक्खं खो पनस्स वित्थारेन स्वागतं होति सुविभत्तं सुप्पवत्तं सुविनिच्छितं सुत्तसो अनुब्यञ्जनसो; पटिबलो होति गिलानं उपट्ठातुं वा उपट्ठापेतुं वा; पटिबलो होति अनभिरतिं वूपकासेतुं वा वूपकासापेतुं वा; पटिबलो [N.157] होति उप्पन्नं कुक्कुच्चं धम्मतो विनोदेतुं; पटिबलो होति उप्पन्नं दिट्ठिगतं धम्मतो विवेचेतुं; पटिबलो होति अधिसीले समादपेतुं; पटिबलो होति अधिचित्ते समादपेतुं;

कराने में सर्वथा समर्थ हो; (९) जो आध्यात्मिक शान्ति प्रदान करने में सर्वथा समर्थ हो; तथा (१०) जो प्रज्ञासम्बन्धी धर्मों में लगाये रखने में सर्वथा समर्थ हो—उपालि! इन दश धर्मों से युक्त भिक्षु द्वारा ही उपसम्पदा दी जानी चाहिये।'' ●

५. निःश्रयसूत्र : : किन धर्मों से युक्त द्वारा निश्रय दिया जाना चाहिए ?

१. ''भन्ते! किन धर्मों से युक्त भिक्षु द्वारा निश्रय (आश्रय) दिया जाना चाहिये ?

२. ''उपालि! दश धर्मों से युक्त भिक्षु द्वारा ही निश्रय दिया जाना चाहिये। किन दश धर्मों से ?...पूर्ववत्...निश्रय दिया जाना चाहिये॥'' ●

*[उपरिवर्णित **उपसम्पदासूत्र** के समान ही इस सूत्र का भी हिन्दी-विस्तार कर लेना चाहिये।]*

६. श्रामणेरसूत्र : : श्रामणेर रखने वाले भिक्षु के दश धर्म

१. ''भन्ते! किन धर्मों से युक्त भिक्षु द्वारा किसी श्रामणेर को अपनी सेवा में रखना चाहिये ?''

२. ''उपालि! इन दश धर्मों से युक्त भिक्षु द्वारा ही किसी श्रामणेर को अपनी सेवा में रखना चाहिये। कौन से दश धर्म ? यहाँ उपालि...पूर्ववत्...भिक्षु द्वारा किसी श्रामणेर को अपनी सेवा में रखना चाहिये।'' ●

पटिबलो होति अधिपञ्ञाय समादपेतुं। इमेहि खो, उपालि, दसहि धम्मेहि समन्नागतेन भिक्खुना सामणेरो उपट्ठापेतब्बो'' ति॥ ●

७. सङ्घभेदसुत्तं : १. '' 'सङ्घभेदो सङ्घभेदो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, सङ्घो भिन्नो होती'' ति?

२. ''इधुपालि, भिक्खू अधम्मं धम्मो ति दीपेन्ति, धम्मं अधम्मो ति दीपेन्ति, अविनयं विनयो ति दीपेन्ति, विनयं अविनयो ति दीपेन्ति, अभासितं अलपितं [R.74] तथागतेन भासितं लपितं तथागतेना ति दीपेन्ति, भासितं लपितं तथागतेन अभासितं अलपितं तथागतेना ति दीपेन्ति, अनाचिण्णं तथागतेन आचिण्णं तथागतेना ति दीपेन्ति, आचिण्णं तथागतेन अनाचिण्णं तथागतेना ति दीपेन्ति, अपञ्ञत्तं तथागतेन पञ्ञत्तं तथागतेना ति दीपेन्ति, पञ्ञत्तं तथागतेन अपञ्ञत्तं तथागतेना ति दीपेन्ति। ते इमेहि दसहि वत्थूहि अवकस्सन्ति अपकस्सन्ति अवेनि कम्मानि करोन्ति अवेनि पातिमोक्खं उद्दिसन्ति। एत्तावता खो, उपालि, सङ्घो भिन्नो होती'' ति॥ ●

८. सङ्घसामग्गीसुत्तं : १. '''सङ्घसामग्गी सङ्घसामग्गी' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, सङ्घो समग्गो होती'' ति? [B.315]

२. ''इधुपालि, भिक्खू अधम्मं धम्मो ति दीपेन्ति, धम्मं धम्मो ति दीपेन्ति, अविनयं अविनयो ति दीपेन्ति, विनयं विनयो ति दीपेन्ति, अभासितं अलपितं तथागतेन अभासितं

---

*[उपरिवर्णित **उपसम्पदासूत्र** के समान ही इस सूत्र का भी व्याख्यान है।]*

७. सङ्घभेदसूत्र : : दश धर्मों से सङ्घ की एकता का नाश

१. ''भन्ते! (समय-समय पर किये गये धर्मप्रवचनों में) 'सङ्घभेद' 'सङ्घभेद'—ऐसा कहा जाता है, भन्ते! यह 'सङ्घभेद' कैसे होता है?

२. ''यहाँ, उपालि! जो भिक्षु (१) अधर्म को 'धर्म है'—ऐसा बताते हैं, (२) धर्म को 'अधर्म है'—ऐसा बताते हैं, (३) अविनय को 'विनय है'—ऐसा...(४) विनय को 'अविनय है'—ऐसा ; (५) तथागत द्वारा अकथित अचर्चित को 'तथागत द्वारा कथित है, चर्चित है'—ऐसा; (६) तथागत द्वारा कथित चर्चित को 'तथागत द्वारा अकथित है, अचर्चित है'—ऐसा; (७) तथागत द्वारा अनभ्यस्त को 'तथागत द्वारा अभ्यस्त है'—ऐसा; (८) तथागत द्वारा अभ्यस्त को 'तथागत द्वारा अनभ्यस्त है'—ऐसा; (९) तथागत द्वारा अप्रज्ञप्त को 'तथागत द्वारा प्रज्ञप्त है'—ऐसा, तथा (१०) तथागत द्वारा प्रज्ञप्त को 'तथागत द्वारा अप्रज्ञप्त है'—ऐसा बताते हैं। वे इन दश विधियों से धर्म को अपने अनुकूल कहते रहते हैं, धार्मिक कृत्य एवं प्रातिमोक्ष का उद्देश भी परम्परा से हटकर विशेष रूप से करते हैं। इतनी बातों से उपालि! सङ्घ की एकता नष्ट होती है॥'' ●

८. सङ्घसामग्रीसूत्र : : दश विधियों से सङ्घ की एकता

१. ''भन्ते! 'सङ्घसामग्री' 'सङ्घसामग्री'—ऐसा बहुत कहा जाता है, भन्ते! यह सङ्घसामग्री (सङ्घ की एकता) कितने से होती है?

२. ''यहाँ भिक्षु जब कोई भिक्षु (१) अधर्म को अधर्म ही, (२) धर्म को धर्म ही,

अलपितं तथागतेना ति दीपेन्ति, भासितं लपितं तथागतेन भासितं लपितं तथागतेना ति दीपेन्ति, अनाचिण्णं तथागतेन अनाचिण्णं तथागतेना ति दीपेन्ति, आचिण्णं तथागतेन [N.158] आचिण्णं तथागतेना ति दीपेन्ति, अपञ्ञत्तं तथागतेन अपञ्ञत्तं तथागतेना ति दीपेन्ति, पञ्ञत्तं तथागतेन पञ्ञत्तं तथागतेन पञ्ञत्तं तथागतेना ति दीपेन्ति। ते इमेहि दसहि वत्थूहि न अवकस्सन्ति न अपकस्सन्ति न आवेनि कम्मानि करोन्ति न आवेनि पातिमोक्खं उद्दिसन्ति। एत्तावता खो, उपालि, सङ्घो समग्गो होती'' ति॥

[R.75] **९. पठमआनन्दसुत्तं :** १. अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—'' 'सङ्घभेदो सङ्घभेदो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, सङ्घो भिन्नो होती'' ति?

२. ''इधानन्द, भिक्खू अधम्मं धम्मो ति दीपेन्ति, धम्मं अधम्मो ति दीपेन्ति, अविनयं विनयो ति दीपेन्ति ...पे०... पञ्ञत्तं तथागतेन अपञ्ञत्तं तथागतेना ति दीपेन्ति। ते इमेहि दसहि वत्थूहि अवकस्सन्ति अपकस्सन्ति आवेनि कम्मानि करोन्ति आवेनि पातिमोक्खं उद्दिसन्ति।

३. ''समग्गं पन, भन्ते, सङ्घं भिन्दित्वा किं सो पसवती'' ति?

''कप्पट्ठिकं, आनन्द, किब्बिसं पसवती'' ति।

---

(३) अविनय को अविनय ही, (४) विनय को विनय ही, (५) तथागत द्वारा अभाषित अचर्चित को तथागत द्वारा अभाषित अचर्चित ही, (६) तथागत द्वारा भाषित चर्चित ही, (७) तथागत द्वारा अनभ्यस्त को तथागत द्वारा अनभ्यस्त ही, (८) तथागत द्वारा अभ्यस्त को तथागत द्वारा अभ्यस्त ही, (९) तथागत द्वारा अप्रज्ञप्त को तथागत द्वारा अप्रज्ञप्त ही तथा (१०) तथागत द्वारा प्रज्ञप्त को तथागत द्वारा प्रज्ञप्त ही कहते हैं तो वे इन १० विधियों से धर्म को न अपने अनुकूल (अपनी ओर) खींचते हैं और न कोई धार्मिक कृत्य या प्रातिमोक्ष का पाठ ही परम्पराबाह्य विधि से करते हैं। इतनी बातों से, उपालि! सङ्घ में एकता होती है॥''

९. प्रथम आनन्दसूत्र : : सङ्घ की अनेकता का कुफल

१. तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सम्मुख पहुँचे...। पहुँचकर भगवान् से यह जिज्ञासा की—''भन्ते! (धर्मचर्चा में) सङ्घभेद, सङ्घभेद—ऐसा बहुत बार कहा जाता है। यह सङ्घभेद कैसे होता है?''

२. ''यहाँ, आनन्द! अनेक भिक्षु अधर्म को ही धर्म बताने लगते हैं तथा धर्म को अधर्म, तथा अविनय को विनय बताने लगते हैं और विनय को अविनय...पूर्ववत्...तथागत द्वारा प्रज्ञप्त को तथागत द्वारा अप्रज्ञप्त बताने लगते हैं। वे इन दश विधियों से धर्म को पीछे ढकेलते हैं, आगे नहीं बढ़ने देते। तथा परम्परा से हटकर अपनी मनोनुकूल विधि से धार्मिक कृत्य एवं प्रातिमोक्षपाठ सम्पन्न करने लगते हैं। इन कृत्यों से सङ्घ में फूट (अनेकता) उत्पन्न होती है।

३. ''भन्ते! इस सङ्घ की एकता को नष्ट करने का क्या फल मिलता है?''

"किं पन, भन्ते, कप्पट्ठिकं किब्बिसं" ति?

"कप्पं, आनन्द, निरयम्हि पच्चती ति—

"आपायिको नेरयिको, कप्पट्ठो सङ्घभेदको। [R.76]
वग्गरतो अधम्मट्ठो, योगक्खेमा पधंसति।
सङ्घं समग्गं भिन्दित्वा, कप्पं निरयम्हि पच्चती" ति॥ ●

१०. दुतियआनन्दसुत्तं : १. "'सङ्घसामग्गी सङ्घसामग्गी' ति, भन्ते, [B.316] वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, सङ्घो समग्गो होती" ति?

२. "इधानन्द, भिक्खू अधम्मं अधम्मो ति दीपेन्ति, धम्मं धम्मो ति [N.159] दीपेन्ति, अविनयं अविनयो ति दीपेन्ति, विनयं विनयो ति दीपेन्ति, अभासितं अलपितं तथागतेन अभासितं अलपितं तथागतेना ति दीपेन्ति, भासितं लपितं तथागतेन भासितं लपितं तथागतेन ति दीपेन्ति, अनाचिण्णं तथागतेन अनाचिण्णं तथागतेना ति दीपेन्ति, आचिण्णं तथागतेना आचिण्णं तथागतेना ति दीपेन्ति, अपञ्ञत्तं तथागतेन अपञ्ञत्तं तथागतेना ति दीपेन्ति, पञ्ञत्तं तथागतेन पञ्ञत्तं तथागतेना ति दीपेन्ति। ते इमेहि दसहि वत्थूहि न अवकस्सन्ति न अपकस्सन्ति न आवेनि कम्मानि करोन्ति न आवेनि पातिमोक्खं उद्दिसन्ति। एत्तावता खो, आनन्द, सङ्घो समग्गो होती" ति॥

३. "भिन्नं पन, भन्ते, सङ्घं समग्गं कत्वा किं सो पसवती" ति?

"ब्रह्मं, आनन्द, पुञ्ञं पसवती" ति।

"आनन्द! वह कल्प-पर्यन्त पापफल भोगता है।"

"भन्ते! यह कल्पपर्यन्त पापफल क्या होता है?"

"आनन्द! उसका कल्पपर्यन्त नरक में वास होता है।

"ऐसा यह सङ्घभेदक कल्पपर्यन्त किसी दुर्गतिमय नरक में गिरा रहता है। जो सङ्घ के वर्गवाद (भेद) में लगा रहता है, अधर्म में स्थित है, वह अपने योगक्षेम से च्युत हो जाता है॥

"परन्तु सङ्घ में फूट डाल कर तो वह कल्पपर्यन्त नरक में ही पड़ा रहता है॥" ●

१०. द्वितीय आनन्दसूत्र : : सङ्घसामग्री का सुफल

१. "भन्ते! (धर्मचर्चा में) सङ्घसामग्री, सङ्घसामग्री—ऐसा अनेक बार कहा जाता है। किस प्रकार सङ्घ में यह एकता (सामग्री) आती है?"

२. "यहाँ, आनन्द! अनेक भिक्षु अधर्म को अधर्म ही बताते हैं, धर्म को धर्म ही बताते हैं, अविनय को अविनय ही कहते हैं, विनय को विनय ही कहते हैं...पूर्ववत्...तथागत द्वारा प्रज्ञप्त (उपदिष्ट) को तथागत द्वारा प्रज्ञप्त ही कहते हैं। इस प्रकार वे इन दश विधियों से धर्म को पीछे नहीं ढकेलते, आगे ही बढ़ाते हैं। तथा परम्परा त्याग कर अपनी मनोनुकूल विधि से कोई धार्मिक कृत्य या प्रातिमोक्ष पाठ नहीं करते—इन सत्कृत्यों से सङ्घ में समग्रता (एकता) ही रहती है।

३. "भन्ते! मतभिन्न सङ्घ में एकता उत्पन्न करने वाले को क्या फल मिलता है?"

"आनन्द! उसको इसके फलस्वरूप ब्राह्म सुख प्राप्त होता है।"

"किं पन, भन्ते, ब्रह्मं पुञ्ञं" ति?

"कप्पं, आनन्द, सग्गम्हि मोदती ति—

[R.77] "सुखा सङ्घस्स सामग्गी, समग्गानं च अनुग्गहो।
समग्गरतो धम्मट्ठो, योगक्खेमा न धंसति।
सङ्घं समग्गं कत्वान, कप्पं सग्गम्हि मोदती" ति॥ ●

उपालिवग्गो चतुत्थो॥

तस्सुद्दानं

उपालि ठपना उब्बाहो, उपसम्पदनिस्सया।
सामणेरो च द्वे भेदा, आनन्देहि परे दुवे ति॥ ●

५. अक्कोसवग्गो

१. विवादसुत्तं : १. अथ खो आयस्मा उपालि येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा [B.317] उपालि भगवन्तं एतदवोच—

[N.160] २. "को नु खो, भन्ते, हेतु को पच्चयो, येन सङ्घे भण्डनकलहविग्गहविवादा उप्पज्जन्ति, भिक्खू च न फासु विहरन्ती" ति?

"भन्ते! यह ब्राह्मसुख क्या होता है?"

"आनन्द! वह कल्पपर्यन्त स्वर्ग में सुख भोगता है।"

"सङ्घ की एकता ही सुखप्रद होती है। सङ्घ में एकताबद्ध रहनेवाले पर तथागत का अनुग्रह होता है। एकताबद्ध एवं धर्मरत भिक्षु का योगक्षेम विनष्ट नहीं होता। सङ्घ को एकताबद्ध कर भिक्षु कल्पपर्यन्त स्वर्ग सुख भोगता है॥" ●

उपालिवर्ग चतुर्थ सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. उपालिसूत्र, २. प्रातिमोक्षस्थगनसूत्र, ३. उद्वाहिकासूत्र, ४. उपसम्पदासूत्र, ५. निश्रयसूत्र, ६. श्रामणेरसूत्र, ७. सङ्घभेदसूत्र, ८. सङ्घसामग्रीसूत्र, ९. प्रथम आनन्दसूत्र, १०. द्वितीय आनन्दसूत्र॥

५. आक्रोशवर्ग

१. विवादसूत्र : : विवाद के दश कारण

१. तब आयुष्मान् उपालि भगवान् के सम्मुख पहुँचे।...पूर्ववत्...। आयुष्मान् उपालि ने भगवान् से यह जिज्ञासा की—

३. ''इधुपालि, भिक्खू अधम्मं धम्मो ति दीपेन्ति, धम्मं अधम्मो ति दीपेन्ति, अविनयं विनयो ति दीपेन्ति, विनयं अविनयो ति दीपेन्ति, अभासितं अलपितं तथागतेन भासितं लपितं तथागतेना ति दीपेन्ति, भासितं लपितं तथागतेन अभासितं अलपितं तथागतेना ति दीपेन्ति, अनाचिण्णं तथागतेन आचिण्णं तथागतेना ति दीपेन्ति, आचिण्णं तथागतेन अनाचिण्णं तथागतेना ति दीपेन्ति, अपञ्ञत्तं तथागतेन पञ्ञत्तं तथागतेना ति दीपेन्ति, पञ्ञत्तं तथागतेन अपञ्ञत्तं तथागतेना ति दीपेन्ति। अयं खो, उपालि, हेतु [R.78] अयं पच्चयो, येन सङ्घे भण्डनकलहविग्गहविवादा उप्पज्जन्ति, भिक्खू च न फासु विहरन्ती'' ति॥

२. पठमविवादमूलसुत्तं : १. ''कति नु खो, भन्ते, विवादमूलानी'' ति?

२. ''दस खो, उपालि, विवादमूलानि। कतमानि दस? इधुपालि, भिक्खू अधम्मं धम्मो ति दीपेन्ति, धम्मं अधम्मो ति दीपेन्ति, अविनयं विनयो ति दीपेन्ति, विनयं अविनयो ति दीपेन्ति, अभासितं अलपितं तथागतेन भासितं लपितं तथागतेना ति दीपेन्ति, भासितं लपितं तथागतेन अभासितं अलपितं तथागतेना ति दीपेन्ति, अनाचिण्णं तथागतेन आचिण्णं तथागतेना ति दीपेन्ति, आचिण्णं तथागतेन अनाचिण्णं तथागतेना ति दीपेन्ति, अपञ्ञत्तं तथागतेन पञ्ञत्तं तथागतेना ति दीपेन्ति, पञ्ञत्तं तथागतेन अपञ्ञत्तं तथागतेना ति दीपेन्ति। इमानि खो, उपालि, दस विवादमूलानी'' ति॥

३. दुतियविवादमूलसुत्तं : १. ''कति नु खो, भन्ते, विवादमूलानी'' ति?

२. ''दस खो, उपालि, विवादमूलानि। कतमानि दस? इधुपालि, भिक्खू अनापत्तिं आपत्ती ति दीपेन्ति, आपत्तिं अनापत्ती ति दीपेन्ति, लहुकं आपत्तिं गरुकापत्ती ति दीपेन्ति,

---

२. ''भन्ते! वह कौन हेतु या प्रत्यय है, जिससे सङ्घ में झगड़ा, कलह, विवाद, विग्रह (फूट) होते हैं, तथा भिक्षु सुख-सुविधापूर्वक साधना नहीं कर पाते?''

३. ''यहाँ, उपालि! जब कुछ भिक्षु अधर्म को धर्म बताने लगते हैं, धर्म को अधर्म बताने लगते हैं...पूर्ववत्...तथागत द्वारा प्रज्ञप्त को तथागत द्वारा अप्रज्ञप्त बताने लगते हैं। उपालि! यह हेतु या यह प्रत्यय है, जिससे सङ्घ में झगड़ा, कलह, विग्रह, विवाद होते हैं। तब भिक्षु भी सुखसुविधापूर्वक साधना नहीं कर पाते॥''

२. प्रथम विवादमूलसूत्र : : दश विवादमूल

१. ''उपालि! दश विवाद के मूल (जड़) हैं। कौन से दश? यहाँ, उपालि! कुछ भिक्षु अधर्म को धर्म तथा धर्म को अधर्म घोषित कर देते हैं, अविनय को विनय एवं विनय को अविनय घोषित करते हैं...पूर्ववत्...तथागत के प्रज्ञप्त को तथागत द्वारा अप्रज्ञप्त घोषित कर देते हैं। उपालि! ये दश बातें विवादमूलक होती हैं॥''

३. द्वितीय विवादमूलसूत्र : : दूसरे दश विवादमूल

१. ''भन्ते! विवादमूल कितने होते हैं?

२. ''उपालि! यहाँ ये दश विवादमूल होते हैं। कौन से दश? उपालि! यहाँ कोई भिक्षु

गरुकं आपत्तिं लहुकापत्ती ति दीपेन्ति, दुट्ठुल्लं आपत्तिं अदुट्ठुल्लापत्ती ति दीपेन्ति, अदुट्ठुल्लं [N.161] आपत्तिं दुट्ठुल्लापत्ती ति दीपेन्ति, सावसेसं आपत्तिं अनवसेसापत्ती ति दीपेन्ति, [R.79] अनवसेसं आपत्तिं सावसेसापत्ती ति दीपेन्ति, सप्पटिकम्मं आपत्तिं अप्पटिकम्मापत्ती ति दीपेन्ति, अप्पटिकम्मं आपत्तिं सप्पटिकम्मापत्ती ति दीपेन्ति। इमानि खो, उपालि, दस विवादमूलानी'' ति॥ ●

४. कुसिनारसुत्तं : १. एकं समयं भगवा कुसिनारायं विहरति बलिहरणे वनसण्डे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''भिक्खवो'' ति। ''भदन्ते'' ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''चोदकेन, भिक्खवे, भिक्खुना परं चोदेतुकामेन पञ्च धम्मे अज्झत्तं पच्चवेक्खित्वा पञ्च धम्मे अज्झत्तं उपट्ठापेत्वा परो चोदेतब्बो। कतमे पञ्च धम्मा अज्झत्तं पच्चवेक्खितब्बा? चोदकेन, भिक्खवे, भिक्खुना परं चोदेतुकामेन एवं पच्चवेक्खितब्बं— 'परिसुद्धकायसमाचारो नु खोम्हि, परिसुद्धेनम्हि कायसमाचारेन समन्नागतो अच्छिद्देन अप्पटिमंसेन। संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो' ति? नो चे, भिक्खवे, भिक्खु परिसुद्धकायसमाचारो होति परिसुद्धेन कायसमाचारेन समन्नागतो अच्छिद्देन अप्पटिमंसेन, तस्स भवन्ति वत्तारो—'इङ्घ ताव आयस्मा कायिकं सिक्खस्सू' ति, इतिस्स भवन्ति वत्तारो।

३. ''पुन च परं, भिक्खवे, चोदकेन भिक्खुना परं चोदेतुकामेन एवं पच्चवेक्खि-

---

अनापत्ति को आपत्ति बतावे तथा आपत्ति को अनापत्ति, छोटी आपत्ति को गुरु (बड़ी) आपत्ति बतावे तथा गुरु आपत्ति को छोटी आपत्ति, दौष्ठुल्य (फूहड़) आपत्ति को अदौष्ठुल्य आपत्ति बतावे तथा अदौष्ठुल्य आपत्ति को दौष्ठुल्य आपत्ति, सावशेष आपत्ति को निरवशेष आपत्ति बतावे तथा निरवशेष आपत्ति को सावशेष आपत्ति, सप्रतिकर्म आपत्ति को अप्रतिकर्म आपत्ति बतावे तथा अप्रतिकर्म आपत्ति को सप्रतिकर्म आपत्ति बतावे। उपालि! ये दशविध विवादमूल होते हैं॥'' ●

४. कुसिनारसूत्र : :

१. एक समय भगवान् बुद्ध कुसिनारा के बलिहरण नामक वनप्रदेश में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को ''भिक्षुओ!'' सम्बोधन से अपने पास बुलाया। ''भन्ते!'' कहकर भिक्षु भगवान् के सम्मुख आये। भगवान् ने उनको यह उपदेश किया—

२. ''भिक्षुओ! आरोपकर्ता को दूसरे पर आरोप करने से पूर्व स्वयं अपने में इन पाँच धर्मों के विषय में विचार कर, समीक्षा कर ही दूसरे पर आरोप लगाना चाहिये। कौन से पाँच धर्मों का अपने में विचार करना चाहिये? आरोपकर्त्ता को स्वयं सोचना चाहिये—'मैं स्वयं काया से परिशुद्ध होकर परिशुद्धकाययुक्त हूँ या नहीं? मुझमें कोई आपत्तिजनक या स्पर्शजनक दोष तो नहीं है?' यदि, भिक्षुओ! वह भिक्षु स्वयं परिशुद्धकाय नहीं है और उसमें कोई आपत्तिजनक या स्पर्शजनक दोष है तो उसको लोग ऐसा कहेंगे—'अरे आयुष्मन्! पहले तुम स्वयं परिशुद्धकाय बनो।' उसके विषय में ऐसा कहने वाले लोग मिल ही जायँगे। (१)

३. ''पुन: भिक्षुओ! आरोपकर्ता को दूसरे पर आरोप करने से पूर्व अपने विषय में यह

तब्बं—'परिसुद्धवचीसमाचारो नु खोम्हि, परिसुद्धेनम्हि वचीसमाचारेन समन्नागतो अच्छिद्देन अप्पटिमंसेन। संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो' ति? नो चे, भिक्खवे, भिक्खु परिसुद्धवचीसमाचारो होति परिसुद्धेन वचीसमाचारेन समन्नागतो अच्छिद्देन अप्पटिमंसेन, तस्स भवन्ति वत्तारो—'इङ्घ ताव आयस्मा वाचसिकं सिक्खस्सू' ति, इतिस्स भवन्ति वत्तारो।

४. ''पुन च परं, भिक्खवे, चोदकेन भिक्खुना परं चोदेतुकामेन एवं [R.80] पच्चवेक्खितब्बं—'मेत्तं नु खो मे चित्तं पच्चुपट्ठितं सब्रह्मचारीसु अनाघातं। संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो' ति? नो चे, भिक्खवे, भिक्खुनो मेत्तं चित्तं पच्चुपट्ठितं होति [B.319] सब्रह्मचारीसु अनाघातं, तस्स भवन्ति वत्तारो—'इङ्घ ताव आयस्मा सब्रह्मचारीसु [N.162] मेत्तं चित्तं उपट्ठापेही' ति, इतिस्स भवन्ति वत्तारो।

५. ''पुन च परं, भिक्खवे, चोदकेन भिक्खुना परं चोदेतुकामेन एवं पच्चवेक्खितब्बं—'बहुस्सुतो नु खोम्हि सुतधरो सुतसन्निचयो, ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपा मे धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा। संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो' ति? नो चे, भिक्खवे, भिक्खु बहुस्सुतो होति सुतधरो सुतसन्निचयो, ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा, तस्स भवन्ति वत्तारो—'इङ्घ ताव आयस्मा आगमं परियापुणस्सू' ति, इतिस्स भवन्ति वत्तारो।

समीक्षा कर लेनी चाहिये—''मैं वाणी से शुद्ध हूँ या नहीं, मेरी वाणी में कोई आपत्तिजनक या स्पर्शजनक दोष तो नहीं है? क्या मैं ऐसा हूँ या नहीं?' यदि, भिक्षुओ! वह भिक्षु वाणी से परिशुद्ध नहीं है तो लोग उसको यह कहने लगेंगे—'अरे आयुष्मन्! पहले अपनी वाणी को शुद्ध करो! तब किसी अन्य पर आरोप लगाना।' उसको ऐसा कहने वाले लोग भी मिल ही जायँगे। (२)

४. ''पुनः, भिक्षुओ! दूसरों पर आरोपकर्त्ता भिक्षु को अपने विषय में भी यह समीक्षा कर लेनी चाहिये—'मैं अपने सब्रह्मचारियों के साथ मैत्रीपूर्ण व्यवहार करता हूँ कि नहीं, मुझमें यह धर्म है कि नहीं?' यदि उस भिक्षु का अपने सब्रह्मचारियों के साथ मैत्रीभाव नहीं है तो लोग उसके विषय में यह कहने लगेंगे—'अरे आयुष्मन्! तुम पहले अपना चित्त सब्रह्मचारियों के लिये मैत्रीभावयुक्त बनाओ।' ऐसा कहने वाले लोग भी मिल ही जायँगे। (३)

५. ''पुनः, भिक्षुओ! दूसरों पर आरोपकर्ता भिक्षु को पहले अपने विषय में यह समीक्षा कर लेनी चाहिये—'मैं बहुश्रुत, श्रुतधर या श्रुतसन्निचयकर्ता हूँ कि नहीं? क्या मुझमें वे धर्म हैं जो आदिकल्याण ...पूर्ववत्... दृष्टि से सुप्रतिविद्ध हों?' यदि वह भिक्षु बहुश्रुत... सुप्रतिविद्ध न हो तो

६. ''पुन च परं, भिक्खवे, चोदकेन भिक्खुना परं चोदेतुकामेन एवं पच्च-वेक्खितब्बं—'उभयानि खो पन मे पातिमोक्खानि वित्थारेन स्वागतानि होन्ति सुविभत्तानि सुप्पवत्तीनि सुविनिच्छितानि सुत्तसो अनुब्यञ्जनसो। संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु [R.81] नो' ति? नो चे, भिक्खवे, भिक्खुनो उभयानि पातिमोक्खानि वित्थारेन स्वागतानि होन्ति सुविभत्तानि सुप्पवत्तीनि सुविविच्छतानि सुत्तसो अनुब्यञ्जनसो, 'इदं पनायस्मा, कत्थ वुत्तं भगवता' ति, इति पुट्ठो न सम्पायिस्सति। तस्स भवन्ति वत्तारो—'इङ्घ ताव आयस्मा विनयं सिक्खस्सू' ति, इतिस्स भवन्ति वत्तारो। इमे पञ्च धम्मा अज्झत्तं पच्चवेक्खितब्बा।

७. ''कतमे पञ्च धम्मा अज्झत्तं उपट्ठापेतब्बा? 'कालेन वक्खामि, नो अकालेन; भूतेन वक्खामि, नो अभूतेन; सण्हेन वक्खामि, नो फरुसेन; अत्थसंहितेन वक्खामि, नो अनत्थसंहितेन; मेत्तचित्तो वक्खामि, नो दोसन्तरो' ति—इमे पञ्च धम्मा अज्झत्तं उपट्ठापे-[N.163] तब्बा। चोदकेन, भिक्खवे, भिक्खुना परं चोदेतुकामेन इमे पञ्च धम्मे अज्झत्तं पच्चवेक्खित्वा इमे पञ्च धम्मे अज्झत्तं उपट्ठापेत्वा परो चोदेतब्बो'' ति॥ ●

५. राजन्तेपुरप्पवेसनसुत्तं : १. ''दसयिमे, भिक्खवे, आदीनवा राजन्तेपुरप्प-[B.320] वेसने। कतमे दस? इध, भिक्खवे, राजा महेसिया सद्धिं निसिन्नो होति। तत्र भिक्खु पविसति। महेसी वा भिक्खुं दिस्वा सितं पातुकरोति, भिक्खु वा महेसिं दिस्वा सितं पातुकरोति। तत्थ रञ्ञो एवं होति—'अद्धा इमेसं कतं वा करिस्सन्ति वा' ति! अयं, भिक्खवे, पठमो आदीनवो राजन्तेपुरप्पवेसने।

लोग उसको यही कहने लगेंगे—'अरे आयुष्मन्! पहले तुम स्वयं बहुश्रुत बनो, शास्त्र पढ़ो।' ऐसा कहने वाले लोग भी मिल ही जायँगे। (४)

६. ''पुन:, भिक्षुओ! दूसरों पर आरोपकर्त्ता भिक्षु को पहले अपने विषय में यह समीक्षा कर लेनी चाहिये—'मुझको दोनों प्रातिमोक्ष विस्तार से हृदयङ्गम हैं या नहीं कि अवसर आने पर मैं उनका विस्तृत एवं विभागश: विवेचन कर सकूँ, क्या मुझमें यह धर्म है?' यदि, भिक्षुओ! वह भिक्षु इस धर्म से शून्य है तो लोग उसको यह कहने लगेंगे—'अरे आयुष्मन्! पहले तुम स्वयं प्रातिमोक्ष को विस्तार से हृदयङ्गम करो।' ऐसा कहने वाले लोग भी मिल ही जायँगे। (५)

७. कौन पाँच धर्म (बातें) स्वयं पहले मन में धारण करने चाहिये? '१. समय से ही कहूँगा, असमय (अनवसर) पर नहीं, २. सत्य (जैसा हुआ है वैसा) ही कहूँगा, असत्य (अभूत) नहीं; ३. मधुर वाणी से कहूँगा, कठोर वाणी से नहीं; ४. सार्थक ही कहूँगा निरर्थक नहीं, ५. मैत्रीभाव से कहूँगा, द्वेषभाव से नहीं'—ये पाँच धर्म पहले स्वयं मन में धारण करने चाहियें। दूसरों पर आरोपकर्त्ता भिक्षु को पहले स्वयं ये पाँच धर्म मन में बैठा लेने चाहिये; तभी दूसरों पर आरोप लगाना चाहिये॥'' (६-१०) ●

५. राजान्त:पुरप्रवेशनसूत्र : : राजकीय अन्त:पुर प्रवेश में दश दोष

१. ''भिक्षुओ! किसी भिक्षु द्वारा राजकीय अन्त:पुर प्रवेश में ये दश दोष हैं। कौन से दश? कोई भिक्षु राजा के अन्त:पुर (रानियों का महल) में प्रवेश करता है। वह वहाँ किसी रानी को

२. ''पुन च परं, भिक्खवे, राजा बहुकिच्चो बहुकरणीयो अञ्ञतरं इत्थिं गन्त्वा न सरति—'सा तेन गब्भं गण्हाति'। तत्थ रञ्ञो एवं होति—'न खो इध अञ्ञो कोचि पविसति, अञ्ञत्र पब्बजितेन। सिया नु खो पब्बजितस्स कम्मं' ति। अयं, भिक्खवे, [R.82] दुतियो आदीनवो राजन्तेपुरप्पवेसने।

३. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो अन्तेपुरे अञ्ञतरं रतनं नस्सति। तत्थ रञ्ञो एवं होति—'न खो इध अञ्ञो कोचि पविसति, अञ्ञत्र पब्बजितेन। सिया नु खो पब्बजितस्स कम्मं' ति। अयं, भिक्खवे, ततियो आदीनवो राजन्तेपुरप्पवेसने।

४. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो अन्तेपुरे अब्भन्तरा गुय्हमन्ता बहिद्धा सम्भेदं गच्छन्ति। तत्थ रञ्ञो एवं होति—'न खो इध अञ्ञो कोचि पविसति, अञ्ञत्र पब्बजितेन। सिया नु खो पब्बजितस्स कम्मं' ति। अयं, भिक्खवे, चतुत्थो आदीनवो राजन्तेपुरप्पवेसने।

५. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो अन्तेपुरे पिता वा पुत्तं पत्थेति पुत्तो वा पितरं पत्थेति। तेसं एवं होति—'न खो इध अञ्ञो कोचि पविसति, अञ्ञत्र पब्बजितेन। सिया नु खो पब्बजितस्स कम्मं' ति। अयं, भिक्खवे, पञ्चमो आदीनवो राजन्तेपुरप्पवेसने।

६. ''पुन च परं, भिक्खवे, राजा नीचट्ठानियं उच्चे ठानं ठपेति। येसं तं अमनापं

देखकर मुस्करा दे, या रानी उसको देखकर मुस्करा दे। उनका यह मुस्कराना राजा देख ले तो उसको यह विचार हो—'अवश्य इन दोनों ने कुछ किया है या करने वाले हैं'। भिक्षुओ! राजकीय अन्त:पुर में प्रवेश का यह पहला दोष है। (१)

२. ''पुन:, भिक्षुओ! किसी राजा को अपनी अतिशय कार्यव्यस्तता के कारण यह स्मरण न रहे कि अमुक रानी ने उससे गर्भ धारण किया है। और वह यह सोचने लगे—'मेरे इस महल में उस प्रव्रजित के अतिरिक्त कोई प्रविष्ट नहीं होता, अवश्य ही रानी को यह गर्भ धारण कराना उस प्रव्रजित का ही कार्य है।' भिक्षुओ! राजकीय अन्त:पुर में प्रवेश का यह द्वितीय दोष है। (२)

३. ''पुन:, भिक्षुओ! राजा का कोई बहुमूल्य रत्न लुप्त हो जाय। तब राजा को यह विचार हो—'मेरे महल में इस प्रव्रजित के अतिरिक्त अन्य कोई प्रविष्ट नहीं होता, अत: अवश्य ही इस रत्न की चोरी इस प्रव्रजित ने ही की होगी।' भिक्षुओ! राजकीय अन्त:पुर में प्रवेश का यह तृतीय दोष है। (३)

४. ''पुन: भिक्षुओ! राजा के अन्त:पुर में प्राय: गोपनीय विचार-विमर्श भी चलता रहता है। किसी कारण से उसकी गोपनीयता भङ्ग हो जाय तो राजा को यही सन्देह होगा—'मेरे इस महल में इस प्रव्रजित के अतिरिक्त कोई नहीं आता, अत: अवश्य इस प्रव्रजित ने ही वह गोपनीयता भङ्ग की होगी।' भिक्षुओ! राजकीय अन्त:पुर में प्रवेश का यह चतुर्थ दोष है। (४)

५. ''पुन: भिक्षुओ! वहाँ पिता अपने पुत्र से कुछ प्रार्थना करे (माँगे) या पुत्र पिता से कुछ माँगे और वह गुप्त प्रार्थना प्रजाजनों को ज्ञात हो जाय तो वहाँ यही सन्देह होगा—'यहाँ इस प्रव्रजित के अतिरिक्त कोई नहीं आता, अत: इसने ही यहाँ सुनकर बाहर कही होगी।' भिक्षुओ! राजकीय अन्त:पुर में प्रवेश का यह पञ्चम दोष है। (५)

[N.164] तेसं एवं होति—'राजा खो पब्बजितेन संसट्ठो। सिया नु खो पब्बजितस्स कम्मं' ति। अयं, भिक्खवे, छट्ठो आदीनवो राजन्तेपुरप्पवेसने।

[B.321] ७. "पुन च परं, भिक्खवे, राजा उच्चट्ठानियं नीचे ठाने ठपेति। येसं तं अमनापं तेसं एवं होति—'राजा खो पब्बजितेन संसट्ठो। सिया नु खो पब्बजितस्स कम्मं' ति। अयं, भिक्खवे, सत्तमो आदीनवो राजन्तेपुरप्पवेसने।

८. "पुन च परं, भिक्खवे, राजा अकाले सेनं उय्योजेति। येसं तं अमनापं तेसं एवं होति—'राजा खो पब्बजितेन संसट्ठो। सिया नु खो पब्बजितस्स कम्मं' ति। अयं, भिक्खवे, अट्ठमो आदीनवो राजन्तेपुरप्पवेसने।

९. "पुन च परं, भिक्खवे, राजा काले सेनं उय्योजेत्वा अन्तरामग्गतो निवत्तापेति। [R.83] येसं तं अमनापं तेसं एवं होति—'राजा खो पब्बजितेन संसट्ठो। सिया नु खो पब्बजितस्स कम्मं' ति। अयं, भिक्खवे, नवमो आदीनवो राजन्तेपुरप्पवेसने।

१०. "पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो अन्तेपुरं हत्थिसम्मद्दं अस्ससम्मद्दं रथसम्मद्दं रजनीयानि रूपसद्दगन्धरसफोट्ठब्बानि, यानि न पब्बजितस्स सारुप्पानि। अयं, भिक्खवे, दसमो आदीनवो राजन्तेपुरप्पवेसने।

"इमे खो, भिक्खवे, दस आदीनवा राजन्तेपुरप्पवेसने" ति॥ ●

"पुनः, भिक्षुओ! राजा किसी नीचे स्थान पर नियुक्त अधिकारी की किसी उच्च स्थान पर नियुक्ति कर दे, तब उसके विरोधी यह अनुमान लगा लें—'आजकल यह प्रव्रजित राजा से बहुत मिलता है; हो सकता है, इसने ही राजा को इसकी उन्नति का परामर्श दिया होगा। भिक्षुओ!...यह षष्ठ दोष है। (६)

७. "पुनः, भिक्षुओ! राजा किसी उच्च पदासीन अधिकारी की पदावनति कर दे, तब उस पदावनत को यह विचार हो सकता है—'आजकल यह प्रवजित राजमहल में बहुत आता-जाता है, हो सकता है, इसी के कहने से राजा ने मेरी यह पदावनति की हो। भिक्षुओ!.. यह सप्तम दोष है। (७)

८. "पुनः, भिक्षुओ! राजा असमय में किसी शत्रु पर आक्रमण कर दे। जो इस आक्रमण के विरोधी हों उनको यह विचार हो सकता है—'आजकल यह प्रव्रजित राजा का बहुत घनिष्ठ बना हुआ है, अवश्य इसी ने इस आक्रमण का परामर्श दिया होगा।' भिक्षुओ...यह अष्टम दोष है। (८)

९. "पुनः, भिक्षुओ! राजा कभी अपनी सेना को शत्रु पर आक्रमण का आदेश देकर भी मध्य मार्ग से ही अपनी सेना को पीछे लौटा ले। जिनको राजा का यह निर्णय उचित न लगा हो वे यह अनुमान लगावें—'आजकल इस प्रव्रजित का राजा से बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध चल रहा है। हो सकता है, सेना को पुनः लौटाने का परामर्श इसी ने दिया हो।' भिक्षुओ!...यह नवम दोष है। (९)

१०. "पुनः, भिक्षुओ! राजा के महल में समय-समय पर हाथियों, घोड़ों एवं रथों का सम्मर्द (एकत्र होना=भीड़) आदि होता रहता है, जो कि प्रव्रजित के आचार-विचार के प्रतिकूल होता है। 'भिक्षुओ! राजकीय अन्तःपुर में प्रवेश का यह दशम दोष है। (१०)

६. सक्कसुत्तं : १. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं निग्रोधारामे। अथ खो सम्बहुला सक्का उपासका तदहुपोसथे येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ने खो सक्के उपासके भगवा एतदवोच—

२. "अपि नु तुम्हे, सक्का, अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसथा" ति?

"अप्पेकदा मयं, भन्ते, अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसाम, अप्पेकदा न उपवसामा" ति।

"तेसं वो, सक्का, अलाभा तेसं दुल्लद्धं, ये तुम्हे एवं सोकसभये जीविते [N.165] मरणसभये जीविते अप्पेकदा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसथ, अप्पेकदा न उपवसथ।

"तं किं मञ्ञथ, सक्का, इध पुरिसो येन केनचि कम्मट्ठानेन अनापज्ज अकुसलं दिवसं अड्ढकहापणं निब्बिसेय्य। दक्खो पुरिसो उट्ठानसम्पन्नो ति अलं वचनाया" [R.84] ति?

"एवं, भन्ते"।

"तं किं मञ्ञथ, सक्का, इध पुरिसो येन केनचि कम्मट्ठानेन अनापज्ज [B.322] अकुसलं दिवसं कहापणं निब्बिसेय्य। दक्खो पुरिसो उट्ठानसम्पन्नो ति अलं वचनाया" ति?

"एवं, भन्ते"।

"तं कि, मञ्ञथ, सक्का, इध पुरिसो येन केनचि कम्मट्ठानेन अनापज्ज अकुसलं दिवसं द्वे कहापणे निब्बिसेय्य ...तयो कहापणे निब्बिसेय्य... चत्तारो कहापणे निब्बिसेय्य...

"भिक्षुओ! राजकीय अन्त:पुर में प्रवेश के ये दश दोष होते हैं॥" ●

६. शाक्यसूत्र : : शाक्यों द्वारा अष्टाङ्ग उपोसथ न करने के दोष

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्य प्रदेश की कपिलवस्तु नगरी के न्यग्रोधाराम में साधना हेतु विराजमान थे। उस समय कभी बहुत से शाक्य उपासक उसी उपोसथ के दिन भगवान् के सम्मुख आये। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उन शाक्य उपासकों से भगवान् ने पूछा—

२. "शाक्यगण! क्या तुम आठ अङ्गों से युक्त उपोसथ व्रत रखते हो?"

"भन्ते! कभी हम यह आठ अङ्गों से युक्त उपोसथ व्रत रखते हैं, कभी नहीं भी रखते।"

"शाक्यजन! यह तो तुम्हारे लिये बहुत हानिप्रद बात ही है कि तुम ऐसा शोकभय एवं मरणभय से युक्त जीवन पाकर भी कभी यह अष्टाङ्गयुक्त उपोसथव्रत रखते हो, कभी नहीं।

'तो क्या मानते हो! शाक्यजन! कि यहाँ कोई पुरुष कुछ कार्य किये विना अपने समस्त खाली दिन की आधे कार्षापण से भी समानता कर सकेगा! क्या चतुर पुरुष वह नहीं कहलाता जो अपनी उन्नति के लिये कुछ न कुछ करता रहे?

"हाँ, भन्ते! ऐसा ही है।"

"तो क्या मानते हो शाक्यजन! कि यहाँ कोई पुरुष कुछ कार्य किये विना अपने समस्त खाली दिन की एक कार्षापण से...दो कार्षापण से...तीन कार्षापण से...चार कार्षापण से...पाँच

पञ्च कहापणे निब्बिसेय्य... छ कहापणे निब्बिसेय्य... सत्त कहापणे निब्बिसेय्य... अट्ठ कहापणे निब्बिसेय्य... नव कहापणे निब्बिसेय्य... दस कहापणे निब्बिसेय्य... वीस कहापणे निब्बिसेय्य... तिंस कहापणे निब्बिसेय्य... चत्तारीसं कहापणे निब्बिसेय्य... पञ्ञासं कहापणे निब्बिसेय्य... कहापणसतं निब्बिसेय्य। दक्खो पुरिसो उट्ठानसम्पन्नो ति अलं वचनाया'' ति? ''एवं, भन्ते''।

''तं किं मञ्ञथ, सक्का, अपि नु सो पुरिसो दिवसे दिवसे कहापणसतं कहापण-सहस्सं निब्बिसमानो लद्धं लद्धं निक्खिपन्तो वस्ससतायुको वस्ससतजीवी महन्तं भोगक्खन्धं अधिगच्छेय्या'' ति? ''एवं, भन्ते''।

''तं किं मञ्ञथ, सक्का, अपि नु सो पुरिसो भोगहेतु भोगनिदानं भोगाधिकरणं एकं वा रत्तिं एकं वा दिवसं उपड्ढं वा रत्तिं उपड्ढं वा दिवसं एकन्तसुखप्पटिसंवेदी विहरेय्या'' ति?

[N.166] ''नो हेतं, भन्ते''। ''तं किस्स हेतु''?

''कामा हि, भन्ते अनिच्चा तुच्छा मुसा मोसधम्मा'' ति।

३. ''इध पन वो, सक्का, मम सावको दस वस्सानि अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो यथा मयानुसिट्ठं तथा पटिपज्जमानो सतं पि वस्सानि सतं पि वस्ससतानि सतं पि [R.85] वस्ससहस्सानि एकन्तसुखप्पटिसंवेदी विहरेय्य। सो च ख्वास्स सकदागामी वा अनागामी वा अपण्णकं वा सोतापन्नो। तिट्ठन्तु, सक्का, दस वस्सानि। इध मम सावको नव

कार्षापण से... छह कार्षापण से...सात कार्षापण से...आठ कार्षापण से...नौ कार्षापण से...दश कार्षापण से...बीस कार्षापण से...तीस कार्षापण से...चालीस कार्षापण से...पचास कार्षापण से...सौ कार्षापण से समानता कर सकेगा; क्या चतुर पुरुष वह नहीं कहलाता जो अपनी उन्नति के लिये कुछ न कुछ करता रहे?''

''हाँ, भन्ते! ऐसा ही है।''

''तो क्या मानते हो, शाक्यजन! क्या वह पुरुष प्रतिदिन सौ कार्षापण या हजार कार्षापण प्राप्त करता हुआ तथा उन प्राप्त कार्षापणों को एक ओर सुरक्षित रखता हुआ सौ वर्ष की आयु वाला होकर सौ वर्ष तक जीवित रहता हुआ विशाल ऐश्वर्यराशि को प्राप्त कर सकेगा?''

''हाँ भन्ते! प्राप्त कर सकेगा।''

''तो क्या मानते हो, शाक्यजन! वह कामभोगों को ही सबकुछ समझ कर उनमें ही रमा रहता हो, क्या वह उन भोगों से एक दिन, एक रात्रि या आधा दिन, आधी रात्रि तक भी एकान्त सुख (धर्मसाधना) का आनन्द अनुभव कर सकता है?'' ''नहीं, भन्ते!'' ''वह क्यों?''

''क्योंकि, भन्ते! ये कामभोग अनित्य, तुच्छ एवं नाश-स्वभाव हैं।''

३. ''यहाँ तुम देखते हो, शाक्यजनो! कि मेरा कोई शिष्य (श्रावक) दश वर्ष तक निरन्तर सावधान एवं संयतचित्त रहकर मेरे उपदेशानुसार साधना कर ले तो वह सौ वर्ष या हजार वर्ष तक एकान्तसुख (धर्मसाधना) का आनन्द अनुभव कर सकता है। और वह उस साधना के बल पर सकृदागामी, अनागामी या अपर्णक (निर्दोष=संशयरहित) स्रोतआपन्न हो सकता है। शाक्यजनो!

वस्सानि... अट्ठ वस्सानि... सत्त वस्सानि... छ वस्सानि... पञ्च वस्सानि... चत्तारि वस्सानि ...तीणि वस्सानि... द्वे वस्सानि... एकं वस्सं अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो यथा मयानुसिट्ठं तथा पटिपज्जमानो सतं पि वस्सानि सतं पि वस्ससतानि सतं पि वस्ससहस्सानि एकन्तसुखप्पटिसंवेदी विहरेय्य, सो च ख्वास्स सकदागामी वा अनागामी वा [B.323] अपण्णकं वा सोतापन्नो। तिट्ठतु, सक्का, एकं वस्सं। इध मम सावको दस मासे अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो यथा मयानुसिट्ठं तथा पटिपज्जमानो सतं पि वस्सानि सतं पि वस्ससतानि सतं पि वस्ससहस्सानि एकन्तसुखप्पटिसंवेदी विहरेय्य, सो च ख्वास्स सकदागामी वा अनागामी वा अपण्णकं वा सोतापन्नो। तिट्ठन्तु, सक्का, दस मासा। इध मम सावको नव मासे... अट्ठ मासे... सत्तमासे... छ मासे... पञ्च मासे... चत्तारो मासे... तयो मासे ...द्वे मासे... एकं मासं... अड्ढमासं अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो यथा मयानुसिट्ठं तथा पटिपज्जमानो सतं पि वस्सानि सतं पि वस्ससतानि सतं पि वस्ससहस्सानि एकन्तसुखप्पटिसंवेदी विहरेय्य, सो च ख्वास्स सकदागामी वा अनागामी वा अपण्णकं वा सोतापन्नो। तिट्ठतु, सक्का, अड्ढमासो... तिट्ठन्तु, सक्का, दस रत्तिन्दिवा। इध मम सावको नव रत्तिन्दिवे... अट्ठ रत्तिन्दिवे... सत्त रत्तिन्दिवे... छ रत्तिन्दिवे... पञ्च रत्तिन्दिवे... चत्तारो [R.86] रत्तिन्दिवे... तयो रत्तिन्दिवे ...द्वे रत्तिन्दिवे... एकं रत्तिन्दिवं अप्पमत्तो आतापी [N.167] पहितत्तो विहरन्तो यथा मयानुसिट्ठं तथा पटिपज्जमानो... सतं पि वस्ससहस्सानि एकन्तसुखप्पटिसंवेदी विहरेय्य, सो च ख्वास्स सकदागामी वा अनागामी वा अपण्णकं वा

दश वर्ष की बात छोड़ो; यदि मेरा शिष्य नौ वर्ष भी...आठ वर्ष भी...सात वर्ष भी...छह वर्ष भी...पाँच वर्ष भी...चार वर्ष भी...तीन वर्ष भी...दो वर्ष भी...एक वर्ष भी सावधान एवं संयतचित्त होकर...पूर्ववत्... स्रोतआपन्न हो सकता है।

"और, शाक्यजनो! एक वर्ष की बात भी छोड़ो; यदि मेरा कोई शिष्य दश मास भी सावधान एवं संयतचित्त होकर मेरे उपदेशानुसार साधना कर ले तो वह ...पूर्ववत्... स्रोतआपन्न हो सकता है। तथा शाक्यजनो! दश मास की बात भी छोड़ो; यदि कोई मेरा शिष्य नौ मास भी...आठ मास भी...सात मास भी... छह मास भी...पाँच मास भी...चार मास भी...तीन मास भी...दो मास भी...एक मास भी... अर्ध मास भी सावधान एवं संयतचित्त होकर मेरे उपदेशानुसार साधना कर ले तो वह ...पूर्ववत्... स्रोतआपन्न हो सकता है।

"और, शाक्यजनो! आधे मास की बात भी छोड़ो; यदि कोई मेरा शिष्य दश रात्रिदिन तक भी सावधान एव संयतचित्त हो। और मेरे उपदेशानुसार साधना कर ले तो वह ...पूर्ववत्... स्रोतआपन्न हो सकता है। और, शाक्यजनो! दश रात्रिदिन की बात भी छोड़ो, यदि कोई मेरा शिष्य नौ रात्रिदिन... आठ रात्रिदिन... सात रात्रिदिन... छह रात्रिदिन... पाँच रात्रिदिन... चार रात्रिदिन... तीन रात्रिदिन... दो रात्रिदिन... एक रात्रिदिन भी सावधान एवं संयतचित्त होकर मेरे उपदेशानुसार साधना कर ले तो वह सौ वर्ष तक या हजार वर्ष तक एकान्तसुख का आनन्द अनुभव कर सकता है। और वह इस साधना के बल पर सकृदागामी, अनागामी या अपर्णक (निर्दोष) स्रोतआपन्न हो सकता है।

सोतापन्नो। तेसं वो, सक्का, अलाभा तेसं दुल्लद्धं, ये तुम्हे एवं सोकसभये जीविते मरणसभये जीविते अप्पेकदा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसथ, अप्पेकदा न उपवसथा'' ति।

''एते मयं, भन्ते, अज्जतग्गे अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसिस्सामा'' ति॥ ●

७. महालिसुत्तं : १. एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागार-
[B.324] सालायं। अथ खो महालि लिच्छवि येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो महालि लिच्छवि भगवन्तं एतदवोच—

२. ''को नु खो, भन्ते हेतु, को पच्चयो पापस्स कम्मस्स किरियाय पापस्स कम्मस्स पवत्तिया'' ति?

'' लोभो खो, महालि, हेतु, लोभो पच्चयो पापस्स कम्मस्स किरियाय पापस्स कम्मस्स पवत्तिया। दोसो खो, महालि, हेतु, दोसो पच्चयो पापस्स कम्मस्स किरियाय पापस्स कम्मस्स पवत्तिया। मोहो खो, महालि, हेतु, मोहो पच्चयो पापस्स कम्मस्स किरियाय पापस्स कम्मस्स पवत्तिया। अयोनिसो मनसिकारो खो, महालि, हेतु, अयोनिसो
[R.87] मनसिकारो पच्चयो पापस्स कम्मस्स किरियाय पापस्स कम्मस्स पवत्तिया। मिच्छा-पणिहितं खो, महालि, चित्तं हेतु, मिच्छापणिहितं चित्तं पच्चयो पापस्स कम्मस्स किरियाय पापस्स कम्मस्स पवत्तिया ति। अयं खो, महालि, हेतु, अयं पच्चयो पापस्स कम्मस्स किरियाय पापस्स कम्मस्स पवत्तिया'' ति।

३. ''को पन, भन्ते, हेतु को पच्चयो कल्याणस्स कम्मस्स किरियाय कल्याणस्स कम्मस्स पवत्तिया'' ति?

इस दृष्टि से शाक्यजनो! तुम लोगों के लिये यह अति हानिकर बात हुई कि तुम ऐसा शोकभय एवं मरणभय से युक्त जीवन पाकर भी कभी अष्टाङ्गयुक्त उपोसथव्रत पालन करते हो और कभी नहीं।''

''भन्ते! आज के बाद हम सब अष्टाङ्गयुक्त उपोसथव्रत का अवश्य पालन करेंगे॥'' ●

७. महालिसूत्र : : धर्मचर्या एवं अधर्मचर्या के दश हेतु

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली के महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजमान थे। तब कभी महालि लिच्छवि भगवान् के सम्मुख आया, आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे महालि लिच्छवि ने भगवान् से यह पूछा—

२. ''भन्ते! पापकर्म की क्रिया एवं पापकर्म की प्रवृत्ति में कौन हेतु या कौन प्रत्यय है?''

''महालि! पापकर्म की क्रिया एवं पापकर्म की प्रवृत्ति में **लोभ** हेतु या प्रत्यय है। महालि! पापकर्म की क्रिया एवं प्रवृत्ति में **द्वेष** हेतु या प्रत्यय है। महालि! पापकर्म की क्रिया एवं प्रवृत्ति में **मोह** हेतु या प्रत्यय है। महालि! पापकर्म की क्रिया एवं प्रवृत्ति में **अयोनिशः मनस्कार** हेतु या प्रत्यय है। महालि! पापकर्म की क्रिया एवं प्रवृत्ति में **मिथ्यासङ्कल्प** हेतु या प्रत्यय है। महालि! पापकर्म की क्रिया एवं प्रवृत्ति में ये ही पाँच हेतु या प्रत्यय है।

३. ''भन्ते! कल्याण (शुभ) कर्म की क्रिया एवं प्रवृत्ति में क्या हेतु एवं क्या प्रत्यय है?''

''अलोभो खो, महालि, हेतु, अलोभो खो, महालि,... अदोसो पच्चयो [N.168] कल्याणस्स कम्मस्स किरियाय कल्याणस्स कम्मस्स पवत्तिया। अमोहो खो, महालि, हेतु, अमोहो पच्चयो कल्याणस्स कम्मस्स किरियाय कल्याणस्स कम्मस्स पवत्तिया। योनिसो मनसिकारो खो, महालि, हेतु, योनिसो मनसिकारो पच्चयो कल्याणस्स कम्मस्स किरियाय कल्याणस्स कम्मस्स पवत्तिया। सम्मापणिहितं खो, महालि, चित्तं हेतु, सम्मापणिहितं चित्तं पच्चयो कल्याणस्स कम्मस्स किरियाय कल्याणस्स कम्मस्स पवत्तिया। अयं खो, महालि, हेतु, अयं पच्चयो कल्याणस्स कम्मस्स किरियाय कल्याणस्स कम्मस्स पवत्तिया। इमे चे, महलि, दस धम्मा लोके न संविज्जेय्युं, नयिध पञ्ञायेथ अधम्मचरिया विसमचरिया ति वा धम्मचरिया समचरिया ति वा। यस्मा च खो, महालि, इमे दस धम्मा लोके [B.325] संविज्जन्ति, तस्मा पञ्ञायति अधम्मचरिया विसमचरिया ति वा धम्मचरिया समचरिया ति वा'' ति॥ ●

८. **पब्बजितअभिण्हसुत्तं** : १. ''दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बा। कतमे दस? 'वेवण्णियम्हि अज्झुपगतो' ति पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बं; 'परपटिबद्धा मे जीविका' ति पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बं; [R.88] 'अञ्ञो मे आकप्पो करणीयो' ति पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बं; 'कच्चि नु खो मे अत्ता सीलतो न उपवदती' ति पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बं; 'कच्चि नु खो मं अनुविच्च विञ्ञू सब्रह्मचारी सीलतो न उपवदन्ती' ति पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बं; 'सब्बेहि मे पियेहि मनापेहि नानाभावो विनाभावो' ति पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बं; 'कम्मस्सकोम्हि कम्मदायादो कम्मयोनि कम्मबन्धु कम्मपटिसरणो, यं कम्मं

''महालि! कल्याणकर्म की क्रिया एवं प्रवृत्ति में **अलोभ** हेतु या प्रत्यय है। महालि! **अद्वेष** ...पूर्ववत्... **अमोह... योनिशःमनस्कार... सम्यक्सङ्कल्प** कल्याणकर्म की क्रिया एवं प्रवृत्ति में हेतु या प्रत्यय है। महालि! कल्याणकर्म की क्रिया एवं प्रवृत्ति में ये पाँच हेतु या प्रत्यय हैं। महालि! ये दश धर्म लोक में न हों तो यहाँ न यह ज्ञात हो पावे अधर्मचर्या या विषमचर्या क्या है! और न यह ज्ञात हो पावे कि धर्मचर्या एवं समचर्या क्या है! क्योंकि, महालि! लोक में दश धर्म हैं अतः ज्ञात हो जाता है कि अधर्मचर्या एवं विषमचर्या क्या है, और धर्मचर्या एवं समचर्या क्या है!॥''●

८. प्रव्रजित-अभीक्ष्णसूत्र : : भिक्षु द्वारा दश धर्मों का निरन्तर प्रत्यवेक्षण

१. ''भिक्षुओ! प्रव्रजित को अपने में निरन्तर इन दश धर्मों की प्रत्यवेक्षा करनी चाहिये। किन दश धर्मों की? प्रवजित को निरन्तर (१) 'मैं किसी विकार (दोष) के कारण (समाज में) कलङ्कित तो नहीं होने जा रहा हूँ'; (२) 'मेरी जीविका दूसरों पर तो आश्रित नहीं है'; (३) 'मेरा ईर्यापथ विकृत तो नहीं हो रहा है?'; (४) 'कोई मेरे सदाचार की निन्दा तो नहीं कर रहा है?'; (५) 'विद्वान् साथी मेरे शील पर अङ्गुलि तो नहीं उठा रहे हैं'; (६) मेरा सभी अनुकूल एवं प्रियों के साथ नानाभाव और विनाभाव तो है?'; (७) 'मैं अपने कर्मों के अधीन हूँ, उन कर्मों का उत्तराधिकारी (दायाद) हूँ'; (८) 'मेरे रात और दिन कैसे बीत रहे हैं?'; (९) 'मुझे शून्यागार में

करिस्सामि कल्याणं वा पापकं वा तस्स दायादो भविस्सामी' ति पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बं; 'कथंभूतस्स मे रत्तिन्दिवा वीतिवत्तन्ती' ति पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बं; 'कच्चि नु खो अहं सुञ्ञागारे अभिरमामी' ति पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बं; 'अत्थि नु खो मे उत्तरिमनुस्सधम्मो अलमरियञाणदस्सनविसेसो अधिगतो, योहं पच्छिमे [N.169] काले सब्रह्मचारीहि पुट्ठो न मङ्कु भविस्सामी' ति पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बं। इमे खो, भिक्खवे, दस धम्मा पब्बजितेन अभिण्हं पच्चवेक्खितब्बा'' ति॥ ●

९. सरीरट्ठधम्मसुत्तं : १. ''दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा सरीरट्ठा। कतमे दस? सीतं, उण्हं, जिघच्छा, पिपासा, उच्चारो, पस्सावो, कायसंवरो, वचीसंवरो, आजीवसंवरो, पोनोब्भविको भवसङ्खारो—इमे खो, भिक्खवे, दस धम्मा सरीरट्ठा'' ति॥ ●

१०. भण्डनसुत्तं : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथ- [R.89] पिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू पच्छाभत्तं पिण्डपात- [B.326] पटिक्कन्ता उपट्ठानसालायं सन्निसिन्ना सन्निपतिता भण्डनजाता कलहजाता विवादापन्ना अञ्ञमञ्ञं मुखसत्तीहि वितुदन्ता विहरन्ति।

२. अथ खो भगवा सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येन उपट्ठानसाला तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि— ''काय नुत्थ, भिक्खवे, एतरहि कथाय सन्निसिन्ना सन्निपतिता, का च पन वो अन्तराकथा विप्पकथा'' ति?

३. ''इध मयं, भन्ते, पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्ता उपट्ठानसालायं सन्निसिन्ना

रहना अच्छा लगता है कि नहीं'; (१०) 'क्या मैंने कोई साधारण साधकों की अपेक्षा आर्य ज्ञानदर्शनविशेष प्राप्त कर लिया है, जिसके विषय में कभी मेरे साथी मुझसे पूछें तो मुझे उनके सम्मुख नीचा न देखना पड़े?'। भिक्षुओ! इन दश धर्मों का प्रव्रजित को निरन्तर प्रत्यवेक्षण करते रहना चाहिये॥'' ●

९. शरीरस्थधर्मसूत्र : : दश शरीरस्थ धर्म

''भिक्षुओ! ये दश शरीरगत धर्म होते हैं। कौन से दश? (१) शीत, (२) उष्ण, (३) जिघत्सा (भूख), (४) पिपासा (प्यास), (५) मलोत्सर्जन, (६) मूत्रोत्सर्जन, (७) कायसंवर, (८) वाक्संवर, (९) आजीवसंवर एवं (१०) पुनर्जन्मसम्बद्ध भवसंस्कार! भिक्षुओ! ये दश शरीरगत धर्म होते हैं॥'' ●

१०. भण्डन (कलह) सूत्र : : भिक्षुओं में एकतास्थापक दश धर्म

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय बहुत से भिक्षु भिक्षाचर्या के बाद भोजनोत्तर उपस्थानशाला (सभाभवन) में एकत्र बैठे हुए परस्पर कलह विवाद करते एक-दूसरे को अपशब्द कहते हुए अपना समय नष्ट कर रहे थे।

२. तब भगवान् सायङ्काल ध्यानभावना से निवृत्त होकर उपस्थानशाला में पधारे और प्रज्ञप्त

सन्निपतिता भण्डनजाता कलहजाता विवादापन्ना अञ्ञमञ्ञं मुखसत्तीहि वितुन्दता विहरामा'' ति।

४. ''न खो पनेतं, भिक्खवे, तुम्हाकं पतिरूपं कुलपुत्तानं सद्धाय अगारस्मा अनगारियं पब्बजितानं, ये तुम्हे भण्डनजाता कलहजाता विवादापन्ना अञ्ञमञ्ञं मुखसत्तीहि वितुदन्ता विहरेय्याथ।

५. ''दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा सारणीया पियकरणा गरुकरणा सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तन्ति। कतमे दस? इध, भिक्खवे, भिक्खु सीलवा होति, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति आचारगोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु [N.170] भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु सीलवा होति ...पे०... समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति।

६. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु बहुस्सुतो होति सुतधरो सुतसन्निचयो, ये ते धम्मा आदिल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा [R.90] परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु बहुस्सुतो होति ...पे०... दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति।

७. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो होति कल्याणसहायो [B.327] कल्याणसम्पवङ्को। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो होति कल्याणसहायो कल्याण-

---

आसन पर विराजमान हुए। विराजमान होकर उनने भिक्षुओं से पूछा—''भिक्षुओ! इस समय तुम किस प्रसङ्ग पर चर्चा कर रहे थे?''

३. ''भन्ते! इस समय हम भिक्षाचर्या के बाद...पूर्ववत्...समय नष्ट कर रहे थे।''

४. ''भिक्षुओ! यह तो तुम्हारे जैसे कुलपुत्रों के लिये, जो श्रद्धा के वशीभूत होकर घर छोड़कर प्रव्रजित हुए हो, उचित नहीं है कि तुम परस्पर कलह विवाद करते हुए एक-दूसरे को कटुवचन कहते हुए अपना समय नष्ट करो!

५. ''भिक्षुओ! ये दश धर्म सदा स्मरणीय, प्रियकारक, गौरवोत्पादक, सबको एकत्र करने के लिये, विवाद न होने देने के लिये, एकता के लिये होते हैं। कौन से दश धर्म?

''यहाँ भिक्षुओ! कोई भिक्षु प्रातिमोक्ष के नियमों की साधना से सदाचार का पालन करता है, आचार व्यवहार से सम्पन्न, छोटे छोटे निन्द्य कर्म के आचरण में भी भय मानने वाला तथा भगवान् के कहे शिक्षापदों का अभ्यास करता है। ...पूर्ववत्... यह धर्म भी स्मरणीय...एकता के लिये होता है। (१)

६. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु बहुश्रुत ...पूर्ववत्... दृष्टि से सुप्रतिविद्ध धर्मों का पालन करता है... यह धर्म भी स्मरणीय...एकता के लिये होता है। (२)

सम्पवङ्को, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति।

८. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सुवचो होति सोवचस्सकरणेहि धम्मेहि समन्नागतो खमो पदक्खिणग्गाही अनुसासनिं। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु सुवचो होति सोवचस्सकरणेहि धम्मेहि समन्नागतो खमो पदक्खिणग्गाही अनुसासनिं, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति।

९. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु यानि तानि सब्रह्मचारीनं उच्चावचानि किङ्करणीयानि—तत्थ दक्खो होति अनलसो, तत्रूपायाय वीमंसाय समन्नागतो अलं कातुं अलं संविधातुं। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु यानि तानि सब्रह्मचारीनं उच्चावचानि किङ्करणीयानि—तत्थ दक्खो होति अनलसो तत्रूपायाय वीमंसाय समन्नागतो अलं कातुं अलं संविधातुं, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति।

१०. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु धम्मकामो होति पियसमुदाहारो, अभिधम्मे [N.171] अभिविनये उळारपामोज्जो। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु धम्मकामो होति पियसमुदाहारो, अभिधम्मे अभिविनये उळारपामोज्जो, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति।

११. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु [R.91] धम्मेसु। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति।

---

७. "पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अपने साथियों का कल्याणमित्र होता है ...पूर्ववत्... यह धर्म भी स्मरणीय...एकता के लिये होता है। (३)

८. "पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु आज्ञाकारी होता है, आज्ञाकारी धर्मों से युक्त होता है...पूर्ववत्... यह धर्म भी स्मरणीय...एकता के लिये होता है। (४)

९. "पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अपने साथियों के छोटे बड़े कार्य-निष्पादन में दक्ष होता है, विचारपूर्वक उनको पूर्ण करता है...पूर्ववत्...यह धर्म भी स्मरणीय...एकता के लिये होता है। (५)

१०. "पुनः, भिक्षुओ! धर्मसाधना में उत्सुक रहता है, अभिधर्म एवं विनय से सम्बद्ध धर्मचर्या सुनकर अत्यधिक प्रमुदित होता है...पूर्ववत्...यह धर्म भी स्मरणीय....एकता के लिये होता है। (६)

११. "पुनः भिक्षुओ! कोई भिक्षु अकुशल धर्मों के प्रहाणहेतु प्रयास करता है, कुशल धर्मों के उत्पाद के लिये प्रयास करता है...पूर्ववत्...यह धर्म भी स्मरणीय...एकता के लिये होता है। (७)

१२. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सन्तुट्ठो होति इतरीतरचीवरपिण्ड- [B.328] पातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु सन्तुट्ठो होति इतरीतरचीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन, अयं पि धम्मो सारणीयो ...पे०... संवत्तति।

१३. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सतिमा होति, परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो, चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु सतिमा होति, परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो, चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता, अयं पि धम्मो सारणीयो ...पे०... संवत्तति।

१४. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु पञ्ञवा होति, उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु पञ्ञवा होति, उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया, अयं पि धम्मो सारणीयो ...पे०... संवत्तति। इमे खो, भिक्खवे, दस धम्मा सारणीया ...पे०... संवत्तति। इमे खो, भिक्खवे, दस धम्मा सारणीया पियकरणा गरुकरणा सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तन्ती'' ति॥ ●

अक्कोसवग्गो पञ्चमो॥

तस्सुद्दानं

विवादा द्वे च मूलानि, कुसिनारपवेसने। [N.172, R.92]
सक्को महालि अभिण्हं, सरीरट्ठा च भण्डना ति॥ ●

पठमो पण्णासको समत्तो॥

---

१२. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु साधारणतः मिले हुए चीवर, पिण्डपात आदि से सन्तुष्ट होता है...पूर्ववत्...यह धर्म भी स्मरणीय...एकता के लिये होता है। (८)

१३. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्मृतिमान् होता है, अतिशय स्मृतिसम्प्रजन्य से युक्त होता है। चिरकृत कर्म एवं चिरभाषित वचन का भी स्मरण रखता है...पूर्ववत्...यह धर्म भी स्मरणीय...एकता के लिये होता है। (९)

१४. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु प्रज्ञावान् होता है, धर्मों के उत्पाद विनाश का ज्ञान कराने वाली प्रज्ञा से युक्त होता है...पूर्ववत्...यह धर्म भी स्मरणीय...एकता के लिये होता है। (१०)

भिक्षुओ! ये दश धर्म स्मरणीय, प्रियकारक, गौरवकारक, परस्पर मिलाने के लिये, विवाद न होने देने के लिये, एकता के लिये होते हैं॥'' **आक्रोशवर्ग पञ्चम सम्पन्न॥** ●

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. विवादसूत्र, २. प्रथम विवादमूलसूत्र, ३. द्वितीय विवादमूलसूत्र, ४. कुसिनारसूत्र, ५. राजान्तःपुरप्रवेशनसूत्र, ६. शाक्यसूत्र, ७. महालिसूत्र, ८. प्रव्रजितअभीक्ष्णसूत्र, ९. शरीरस्थ-धर्मसूत्र एवं १०. भण्डन सूत्र॥

प्रथम पञ्चाशत्क सम्पन्न॥ ●

६. सचित्तवग्गो

दुतियो पण्णासको

[B.329] **१. सचित्तसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"भिक्खवो" ति। "भदन्ते" ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. "नो चे, भिक्खवे, भिक्खु परचित्तपरियायकुसलो होति, अथ 'सचित्तपरियायकुसलो भविस्सामी' ति—एवं हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं।

३. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सचित्तपरियायकुसलो होति? सेय्यथापि, भिक्खवे, इत्थी वा पुरिसो वा दहरो युवा मण्डनकजातिको आदासे वा परिसुद्धे परियोदात्ते अच्छे वा उदकपत्ते सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो सचे तत्थ पस्सति रजं वा अङ्गणं वा, तस्सेव रजस्स वा अङ्गणस्स वा पहानाय वायमति। नो चे तत्थ पस्सति रजं वा अङ्गणं वा, तेनेवत्तमनो होति परिपुण्णसङ्कप्पो—'लाभा वत मे, परिसुद्धं वत मे' ति। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो पच्चवेक्खणा बहुकारा होति कुसलेसु धम्मेसु—'अभिज्झालु नु खो [R.93] बहुलं विहरामि, अनभिज्झालु नु खो बहुलं विहरामि, ब्यापन्नचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, अब्यापन्नचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, थीनमिद्धपरियुट्ठितो नु खो बहुलं

---

६. स्वचित्तवर्ग

द्वितीय पञ्चाशत्क

१. स्वचित्तसूत्र : : स्वचित्तज्ञान में उपयोगी दश धर्म

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवनाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने "भिक्षुओ!" सम्बोधन से भिक्षुओं को अपने सम्मुख बुलाया। "भन्ते" कहकर सभी भिक्षु भगवान् के सम्मुख उपस्थित हुए। भगवान् ने उन भिक्षुओं को यह देशना की—

२. "भिक्षुओ! यदि कोई भिक्षु परचित्त के ज्ञान में भी कुशल नहीं होता है, परन्तु स्वचित्तज्ञान में कुशलता प्राप्त करने की इच्छा करता है; तो उसको स्वचित्तज्ञान में कौशल प्राप्त करने के लिये शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

३. "कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वचित्तज्ञानकुशल हो सकता है? जैसे, भिक्षुओ! शृङ्गारप्रेमी कोई युवक पुरुष या स्त्री किसी दर्पण में या किसी स्वच्छ जलपूर्ण पात्र में अपना मुख देखे। यदि उसको वहाँ (मुख पर) धूल या अन्य विकार दिखायी दे तो वह धूल या विकार को हटाने का प्रयास करता है। यदि वहाँ कोई धूल या विकार नहीं दिखायी देता है तो सन्तुष्ट एवं परिपूर्ण सङ्कल्प होकर वह सोचता है—'मुझे बहुत लाभ है कि मेरा मुख स्वच्छ है।' इसी प्रकार, भिक्षुओ! किसी भिक्षु की कुशल धर्मों में यह प्रत्यवेक्षणा बहुत लाभप्रद होती है—'साधना करते समय कभी मेरा चित्त अभिध्या (लोभ) सम्पन्न रहता है, कभी नहीं रहता; कभी द्वेषसम्पन्न होता है

विहरामि, विगतथीनमिद्धो नु खो बहुलं विहरामि, उद्धतो नु खो बहुलं विहरामि, अनुद्धतो नु खो बहुलं विहरामि, विचिकिच्छो नु खो बहुलं विहरामि, तिण्णविचिकिच्छो नु खो बहुलं विहरामि, कोधनो नु खो बहुलं विहरामि, अक्कोधनो नु खो बहुलं विहरामि, [N.173] सङ्किलिट्ठचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, असङ्किलिट्ठचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, सारद्धकायो नु खो बहुलं विहरामि, असारद्धकायो नु खो बहुलं विहरामि, कुसीतो नु खो बहुलं विहरामि, आरद्धविरियो नु खो बहुलं विहरामि, असमाहितो नु खो बहुलं विहरामि, समाहितो नु खो बहुलं विहरामी' ति।

४. ''सचे, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'अभिज्झालु [B.330] बहुलं विहरामि, ब्यापन्नचित्तो बहुलं विहरामि, थीनमिद्धपरियुट्ठितो बहुलं विहरामि, उद्धतो बहुलं विहरामि, विचिकिच्छो बहुलं विहरामि, कोधनो बहुलं विहरामि, सङ्किलिट्ठचित्तो बहुलं विहरामि, सारद्धकायो बहुलं विहरामि, कुसीतो बहुलं विहरामि, असमाहितो बहुलं विहरामी' ति, तेन भिक्खवे, भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं। सेय्यथापि, भिक्खवे, आदित्तचेलो वा आदित्तसीसो वा। तस्सेव चेलस्स वा सीसस्स वा निब्बापनाय अधिमत्तं छन्दं च वायामं च उस्साहं च उस्सोळ्हिं च अप्पटिवानिं च सतिं च सम्पजञ्ञं च करेय्य; एवमेव खो तेन, भिक्खवे, भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं।

५. ''सचे पन, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—[R.94]

कभी नहीं होता; कभी स्त्यानमृद्ध से पर्युत्थित रहता है कभी नहीं भी रहता; कभी क्रोधरहित रहता है कभी नहीं; कभी संक्लिष्ट रहता है कभी नहीं; कभी आरब्ध होता है कभी नहीं; कभी समाहित रहता है कभी नहीं।'

४. ''यदि भिक्षुओ! वह भिक्षु प्रत्यवेक्षणा करता हुआ यह समझे—'मैं अभिध्यालु होकर ही साधना कर रहा हूँ; अनभिध्यालु होकर नहीं, व्यापन्नचित्त होकर ही साधना कर रहा हूँ, अव्यापन्नचित्त होकर नहीं; स्त्यानमृद्ध होकर ही साधना कर रहा हूँ, स्त्यानमृद्धरहित नहीं; उद्धतचित्त होकर ही साधना कर रहा हूँ, अनुद्धतचित्त होकर नहीं; क्रोधचित्त होकर ही साधना कर रहा हूँ, अक्रोधचित्त होकर नहीं; संक्लिष्टचित्त होकर ही साधना कर रहा हूँ, असंक्लिष्टचित्त होकर नहीं; सारब्धचित्त होकर ही प्राय: साधना कर रहा हूँ, असारब्धचित्त होकर नहीं; अलसचित्त होकर ही साधना कर रहा हूँ, निरलसचित्त होकर नहीं; असमाहितचित्त होकर ही साधना कर रहा हूँ, समाहितचित्त होकर नहीं'; तब भिक्षुओ! उस भिक्षु को अपने इन पापमय अकुशल धर्मों के प्रहाण के लिये अतिशय इच्छा, सङ्कल्प, उद्योग, उत्साह, आगे बढ़ने का प्रयास, सम्प्रजन्यपूर्वक स्मृति करनी चाहिये। जैसे, भिक्षुओ! किसी के वस्त्रों में या शिर पर अग्नि लग जाय। वह अपने उन वस्त्रों में या शिर पर लगी अग्नि को बुझाने की तत्काल इच्छा, सङ्कल्प प्रयास आदि करता है; उसी प्रकार

'अनभिज्झालु बहुलं विहरामि, अब्यापन्नचित्तो बहुलं विहरामि, विगतथीनमिद्धो बहुलं विहरामि, अनुद्धतो बहुलं विहरामि, तिण्णविचिकिच्छो बहुलं विहरामि, अक्कोधनो बहुलं विहरामि, असङ्किलिट्ठचित्तो बहुलं विहरामि, असारद्धकायो बहुलं विहरामि, आरद्धविरियो बहुलं विहरामि, समाहितो बहुलं विहरामी' ति, तेन, भिक्खवे, भिक्खुना तेसुयेव कुसलेसु धम्मेसु पतिट्ठाय उत्तरि आसवानं खयाय योगो करणीयो'' ति॥ ●

[N.174] **२. सारिपुत्तसुत्तं :** १. तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खु आमन्तेसि—''आवुसो भिक्खवे'' ति। ''आवुसो'' ति खो ते भिक्खू आयस्मतो सारिपुत्तस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—

२. ''नो चे, आवुसो, भिक्खु परचित्तपरियायकुसलो होति, अथ 'सचित्तपरियाय-कुसलो भविस्सामी' ति—एवं हि वो, आवुसो, सिक्खितब्बं।

३. ''कथं च, आवुसो, भिक्खु सचित्तपरियायकुसलो होति? सेय्यथापि, आवुसो, इत्थी वा पुरिसो वा दहरो युवा मण्डनकजातिको आदासे वा परिसुद्धे परियोदाते अच्छे वा उदकपत्ते सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो सचे तत्थ पस्सति रजं वा अङ्गणं वा, तस्सेव रजस्स वा अङ्गणस्स वा पहानाय वायमति। नो चे तत्थ पस्सति रजं वा अङ्गणं वा, तेनेवत्तमनो होति परिपुण्णसङ्कप्पो—'लाभा वत मे, परिसुद्धं वत मे' ति। एवमेव खो, [R.95] आवुसो, भिक्खुनो पच्चवेक्खणा बहुकारा होति कुसलेसु धम्मेसु—'अभिज्झालु नु खो बहुलं विहरामि, अनभिज्झालु नु खो बहुलं विहरामि, ब्यापन्नचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, अब्यापन्नचितो नु खो बहुलं विहरामि, ब्यापन्नचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, अब्यापन्नचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, थीनमिद्धपरियुट्ठितो नु खो बहुलं विहरामि,

---

इस भिक्षु को भी, भिक्षुओ! अपने इन पापमय धर्मों के प्रहाण हेतु अतिशय इच्छा...पूर्ववत्...स्मृति करनी चाहिये।

५. ''भिक्षुओ! यदि वह भिक्षु प्रत्यवेक्षणा करता हुआ यह जान ले—'मैं अनभिध्यालु (लोभरहित) होकर ही साधना कर रहा हूँ, लोभसहित नहीं..पूर्ववत्...समाहित होकर ही साधना कर रहा हूँ, असमाहित होकर नहीं'; तब भिक्षुओ! उस भिक्षु को अपने कुशल धर्मों की स्थिरता हेतु आगे बढ़कर आश्रवों के क्षय के लिये प्रयास आरम्भ कर देना चाहिये॥'' ●

२. सारिपुत्रसूत्र : : स्वचित्तज्ञान कौशल हेतु दश धर्म

१. आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को अपने पास बुलाया और उनको यह धर्मप्रवचन किया—

२. ''आयुष्मानो! यदि कोई भिक्षु परचित्तज्ञान में भी कुशल नहीं होता, परन्तु स्वचित्तज्ञान में कौशल प्राप्त करना चाहता है तो उसको यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये—

''कैसे, वह भिक्षु स्वचित्तज्ञान ग्रहण कर सकता है? जैसे...पूर्वसूत्रवत्...आयुष्मानो! प्रयास आरम्भ कर देना चाहिये।'' ●

*[इस सूत्र का पूर्ववर्णित **स्वचित्तसूत्र** के समान ही विस्तार कर लें।]*

विगतथीनमिद्धो नु खो बहुलं विहरामि, उद्धतो नु खो बहुलं विहरामि, अनुद्धतो नु खो बहुलं विहरामि, विचिकिच्छो नु खो बहुलं विहरामि, तिण्णविचिकिच्छो नु खो बहुलं विहरामि, कोधनो नु खो बहुलं विहरामि, अक्कोधनो नु खो बहुलं विहरामि, सङ्किलिट्ठचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, असङ्किलिट्ठचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, सारद्धकायो नु खो बहुलं विहरामि, असारद्धकायो नु खो बहुलं विहरामि, कुसीतो नु खो बहुलं विहरामि, आरद्धविरियो नु खो बहुलं विहरामि, समाहितो नु खो बहुलं विहरामि, असमाहितो नु खो बहुलं विहरामी' ति।

४. ''सचे, आवुसो, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'अभिज्झालु बहुलं विहरामि ...पे०... असमाहितो बहुलं विहरामी' ति, तेनावुसो, भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं। सेय्यथापि, आवुसो, आदित्तचेलो वा आदित्तसीसो वा। तस्सेव चेलस्स वा सीसस्स वा निब्बापनाय अधिमत्तं छन्दं च [N.175] वायामं च उस्साहं च उस्सोळ्हिं च अप्पटिवानिं च सतिं च सम्पजञ्ञं च करेय्य। एवमेव खो, आवुसो, तेन भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं।

५. ''सचे पनावुसो, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'अनभिज्झालु [B.332] बहुलं विहरामि ...पे०... समाहितो बहुलं विहरामी' ति, तेनावुसो, भिक्खुना तेसुयेव कुसलेसु धम्मेसु पतिट्ठाय उत्तरि आसवानं खयाय योगो करणीयो'' ति॥ ●

३. ठितिसुत्तं : १. ''ठितिं पाहं, भिक्खवे, न वण्णयामि कुसलेसु [R.96] धम्मेसु, पगेव परिहानिं। वुड्ढिं च खो अहं, भिक्खवे, वण्णयामि कुसलेसु धम्मेसु, नो ठितिं नो हानिं।

२. ''कथं च, भिक्खवे, हानि होति कुसलेसु धम्मेसु, नो ठिति नो वुड्ढि? इध, भिक्खवे, भिक्खु यत्तको होति सद्धाय सीलेन सुतेन चागेन पञ्ञाय पटिभानेन, तस्स ते धम्मा नेव तिट्ठन्ति नो वड्ढन्ति। हानिमेतं, भिक्खवे, वदामि कुसलेसु धम्मेसु, नो ठितिं नो वुड्ढिं। एवं खो, भिक्खवे, हानि होति कुसलेसु धम्मेसु, नो ठिति नो वुड्ढि।

---

३. स्थितिसूत्र : :

१. ''भिक्षुओ! मैं कुशल धर्मों में स्थिति (ठहराव) की भी बात नहीं करता, उनकी हानि की तो बात ही क्या कही जाय। मैं कुशल धर्मों में वृद्धि की ही बात करता हूँ, न स्थिति की और न हानि की।

२. ''कैसे भिक्षुओ! कुशल धर्मों की हानि होती है, उस समय उनकी न स्थिति ही रहने की सम्भावना है, न वृद्धि की ही? भिक्षुओ! जब कोई भिक्षु श्रद्धा, शील, श्रुत, त्याग एवं प्रज्ञा से जितना दुर्बल (रिक्त) होगा, उस समय उसके वे (कुशल) धर्म न ठहरेंगे और न बढ़ेंगे। भिक्षुओ! इसी को

३. "कथं च, भिक्खवे ठिति होति कुसलेसु धम्मेसु, नो हानि नो वुड्ढि? इध, भिक्खवे, भिक्खु यत्तको होति सद्धाय सीलेन सुत्तेन चागेन पञ्ञाय पटिभानेन, तस्स ते धम्मा नेव हायन्ति नो वड्ढन्ति। ठितिमेतं, भिक्खवे, वदामि कुसलेसु धम्मेसु, नो हानिं नो वुड्ढिं। एवं खो, भिक्खवे, ठिति होति कुसलेसु धम्मेसु, नो वुड्ढि नो हानि।

४. "कथं च, भिक्खवे, वुड्ढि होति कुसलेसु धम्मेसु, नो ठिति नो हानि? इध, भिक्खवे, भिक्खु यत्तको होति सद्धाय सीलेन सुतेन चागेन पञ्ञाय पटिभानेन, तस्स ते धम्मा नेव तिट्ठन्ति नो हायन्ति। वुड्ढिमेतं, भिक्खवे, वदामि कुसलेसु धम्मेसु, नो ठितिं नो हानिं। एवं खो, भिक्खवे, वुड्ढि होति कुसलेसु धम्मेसु, नो ठिति नो हानि।

[N.176] ५. "नो चे, भिक्खवे, भिक्खु परचित्तपरियायकुसलो होति, अथ 'सचित्त-परियायकुसलो भविस्सामी' ति—एवं हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं।

६. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सचित्तपरियायकुसलो होति? सेय्यथापि, [R.97] भिक्खवे, इत्थी वा पुरिसो वा दहरो युवा मण्डनकजातिको आदासे वा परिसुद्धे [B.333] परियोदाते अच्छे वा उदपत्ते सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो सचे तत्थ पस्सति रजं वा अङ्गणं वा, तस्सेव रजस्स वा अङ्गणस्स वा पहानाय वायमति। नो चे तत्थ पस्सति रजं वा अङ्गणं वा, तेनेवत्तमनो होति परिपुण्णसङ्कप्पो—'लाभा वत मे, परिसुद्धं वत मे' ति। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो पच्चवेक्खणा बहुकारा होति कुसलेसु धम्मेसु—'अभिज्झालु नु खो बहुलं विहरामि, अनभिज्झालु नु खो बहुलं विहरामि, ब्यापन्नचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, अब्यापन्नचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, थीनमिद्धपरियुट्ठितो नु खो बहुलं विहरामि, विगतथीनमिद्धो नु खो बहुलं विहरामि, उद्धतो नु खो बहुलं विहरामि, अनुद्धतो नु खो बहुलं विहरामि, विचिकिच्छो नु खो बहुलं विहरामि, तिण्णविचिकिच्छो नु

मैं कुशल धर्मों की हानि कहता हूँ, यह न उनकी स्थिति है न वृद्धि। इस प्रकार, भिक्षुओ! कुशल धर्मों की हानि होती है, न कि स्थिति या वृद्धि।

३. "कैसे, भिक्षुओ! कुशल धर्मों की स्थिति होती है, न स्थिति न वृद्धि? भिक्षुओ! जब कोई भिक्षु श्रद्धा, शील, श्रुत, त्याग एवं प्रज्ञा तथा ज्ञान में जितना सशक्त होगा उन धर्मों की उतनी ही न हानि होगी न वृद्धि। भिक्षुओ! कुशल धर्मों की यह अवस्था ही उनकी 'स्थिति' कहलती है, न कि वृद्धि या हानि।

४. "कैसे, भिक्षुओ! कुशल धर्मों में वृद्धि कहलाती है, न स्थिति न हानि? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु श्रद्धा, शील, श्रुत, त्याग, प्रज्ञा एवं ज्ञान से समृद्ध होगा उतनी ही उसके कुशल धर्मों की वृद्धि होती है, उस समय उसके कुशल धर्मों में न ठहराव आता है न उनकी हानि ही होती है। इस प्रकार, भिक्षुओ! यह उन कुशल धर्मों की वृद्धि कहलाती है, न कि स्थिति या हानि।

५. "यदि, भिक्षुओ! कोई भिक्षु परचित्तज्ञान में कुशल नहीं होगा...पूर्ववत्...।

६. "कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वचित्तज्ञान कुशल होता है...पूर्ववत्...।

खो बहुलं विहरामि, कोधनो नु खो बहुलं विहरामि, अक्कोधनो नु खो बहुलं विहरामि, सङ्किलिट्ठचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, असङ्किलिट्ठचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, सारद्धकायो नु खो बहुलं विहरामि, असारद्धकायो नु खो बहुलं विहरामि, कुसीतो नु खो बहुलं विहरामि, आरद्धविरियो नु खो बहुलं विहरामि, समाहितो नु खो बहुलं विहरामि, असमाहितो नु खो बहुलं विहरामी' ति।

७. "सचे, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'अभिज्झालु बहुलं विहरामि, ब्यापन्नचित्तो बहुलं विहरामि, थीनमिद्धपरियुट्ठितो बहुलं विहरामि, उद्धतो बहुलं विहरामि, विचिकिच्छो बहुलं विहरामि, कोधनो बहुलं विहरामि, सङ्किलिट्ठचित्तो बहुलं विहरामि, सारद्धकायो बहुलं विहरामि, कुसीतो बहुलं विहरामि, असमाहितो बहुलं विहरामी' ति, तेन, भिक्खवे, भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च [R.98] सम्पजञ्ञं च करणीयं। सेय्यथापि, भिक्खवे, आदित्तचेलो वा आदित्तसीसो वा। तस्सेव चेलस्स वा सीसस्स वा निब्बापनाय अधिमत्तं छन्दं च वायामं च उस्साहं च उस्सोळ्हिं च अप्पटिवानिं च सतिं च सम्पजञ्ञं च करेय्य; एवमेव खो, भिक्खवे, तेन भिक्खुना [N.177] तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं।

८. "सचे पन, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'अनभिज्झालु बहुलं विहरामि, अब्यापन्नचित्तो बहुलं विहरामि, विगतथीनमिद्धो बहुलं विहरामि, अनुद्धतो बहुलं विहरामि, तिण्णविचिकिच्छो बहुलं विहरामि, अक्कोधनो बहुलं विहरामि, असङ्किलिट्ठचित्तो बहुलं विहरामि, असारद्धकायो बहुलं विहरामि, आरद्धविरियो बहुलं विहरामि, समाहितो बहुलं विहरामी' ति, तेन, भिक्खवे, भिक्खुना तेसुयेव कुसलेसु धम्मेसु पतिट्ठाय उत्तरि आसवानं खयाय योगो करणीयो" ति॥ ●

४. समथसुत्तं : १. "नो चे, भिक्खवे, भिक्खु, परचित्तपरियायकुसलो होति, अथ 'सचित्तपरियायकुसलो भविस्सामी' ति—एवं हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं।

२. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सचित्तपरियायकुसलो होति? सेय्यथापि,

---

७. "यदि, भिक्षुओ! वह भिक्षु प्रत्यवेक्षणा करता हुआ यह जान ले...पूर्ववत्...।

८. "यदि, भिक्षुओ! वह भिक्षु प्रत्यवेक्षणा करता हुआ यह समझ ले...पूर्ववत्...॥" ●

*[इस सूत्र के इन उपबन्धों का विस्तार पूर्ववर्णित **स्वचित्तसूत्र** के समान ही कर लें।]*

४. शमथसूत्र : :

१. "भिक्षुओ! यदि कोई भिक्षु परचित्तज्ञान में कुशल नहीं होता और वह स्वचित्तज्ञान में कुशल होना चाहता है तो उसको यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये ...पूर्ववत...।

२. "कैसे, भिक्षुओ! कोई स्वचित्तज्ञानकुशल हो सकता है? जैसे, भिक्षुओ! कोई शृङ्गारप्रिय

भिक्खवे, इत्थी वा पुरिसो वा दहरो युवा मण्डनकजातिको आदासे वा परिसुद्धे परियोदाते अच्छे वा उदपत्ते सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो सचे तत्थ पस्सति रजं वा अङ्गणं वा, तस्सेव रजस्स वा अङ्गणस्स वा पहानाय वायमति। नो चे तत्थ पस्सति रजं वा अङ्गणं वा, [R.99] तेनेवत्तमानो होति परिपुण्णसङ्कप्पो—'लाभा वत मे, परिसुद्धं वत मे' ति। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो पच्चवेक्खणा बहुकारा होति कुसलेसु धम्मेसु—'लाभी नु खोम्हि अज्झत्तं चेतोसमथस्स, न नु खोम्हि लाभी अज्झत्तं चेतोसमथस्स, लाभी नु खोम्हि अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय, न नु खोम्हि लाभी अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाया' ति।

३. "सचे, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'लाभीम्हि अज्झत्तं चेतोसमथस्स, न लाभी अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाया' ति, तेन, भिक्खवे, भिक्खुना अज्झत्तं चेतोसमथे पतिट्ठाय अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय योगो करणीयो। सो अपरेन समयेन लाभी चेव होति अज्झत्तं चेतोसमथस्स लाभी च अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय।

[N.178] ४. "सचे पन, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'लाभीम्हि [B.335] अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय, न लाभी अज्झत्तं चेतोसमथस्सा' ति, तेन, भिक्खवे, भिक्खुना अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय पतिट्ठाय अज्झत्तं चेतोसमथे योगो करणीयो। सो अपरेन समयेन लाभी चेव होति अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय लाभी च अज्झत्तं चेतोसमथस्स।

५. "सचे पन, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'न लाभी अज्झत्तं

युवा पुरुष या स्त्री दर्पण में या स्वच्छ जलपूर्ण पात्र में अपने मुख की आकृति देखे। उसे देखते हुए उसको वहाँ कोई धूल के कण या अन्य दोष दिखायी दे, तब वह उस धूल के कण या दोष को हटाने का प्रयास करता है। यदि वह वहाँ ऐसा कुछ नहीं देखता है तो वह सन्तुष्ट व प्रसन्नचित्त होता हुआ कहता है—'अरे! मेरा अतिशय लाभ हुआ, मेरे मुख का आकार कितना स्वच्छ है।' इसी प्रकार, भिक्षुओ! किसी भिक्षु की अपने कुशलधर्मों की प्रत्यवेक्षणा भी बहुत लाभप्रद होती है। वह यह प्रत्यवेक्षणा कर विचार करता है—'मैं आध्यात्मिक चित्त शान्ति का अतिशय लाभी हूँ और मैं न केवल इस आध्यात्मिक चित्तशान्ति का लाभी हुआ हूँ, अपितु मुझको धर्मविपश्यना एवं प्रज्ञाविपश्यना का भी लाभ हो गया है'।

३. "यदि, भिक्षुओ! उस भिक्षु को ऐसी प्रत्यवेक्षणा करते हुए यह भान होने लगे—'मैं चित्तशान्ति को अवश्य प्राप्त कर चुका हूँ, परन्तु अभी मुझको धर्मविपश्यना का लाभ नहीं हो सका है', तो भिक्षुओ! उसको धर्मविपश्यना प्राप्त करने का प्रयास आरम्भ करना चाहिये। इस प्रकार, वह आगे साधना करता हुआ, एक समय चित्तशान्ति के साथ साथ धर्मविपश्यना को भी प्राप्त कर लेगा। तदनन्तर उसके लिये प्रज्ञाविपश्यना के लाभ की सम्भावना भी बन जायगी।

४. "और यदि, भिक्षुओ! कोई भिक्षु ऐसी प्रत्यवेक्षणा करता हुआ यह जाने—'मैं प्रज्ञासम्बद्ध धर्मविपश्यना को अवश्य प्राप्त कर चुका हूँ, परन्तु मुझे अभी आध्यात्मिक चित्तशान्ति प्राप्त नहीं हो सकी है।' तो, भिक्षुओ! उस भिक्षु को प्रज्ञाविषयक धर्मविपश्यना की स्थिति के लिये

चेतोसमथस्स, न लाभी अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाया' ति, तेन भिक्खवे, भिक्खुना तेसंयेव कुसलानं धम्मानं पटिलाभाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं। सेय्यथापि, भिक्खवे, आदित्तचेलो वा आदित्तसीसो वा। तस्सेव चेलस्स वा सीसस्स वा निब्बापनाय अधिमत्तं छन्दं च वायामं च उस्साहं च उस्सोळ्हिं च अप्पटिवानिं च सतिं च सम्पजञ्ञं च करेय्य। एवमेव खो, भिक्खवे, तेन भिक्खुना तेसंयेव कुसलानं धम्मानं पटिलाभाय अधिमत्तो छन्दो च [R.100] वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं। सो अपरेन समयेन लाभी चेव होति अज्झत्तं चेतोसमथस्स लाभी च अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय।

६. "सचे पन, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'लाभीम्हि अज्झत्तं चेतोसमथस्स, लाभी अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाया' ति, तेन, भिक्खवे, भिक्खुना तेसुयेव कुसलेसु धम्मेसु पतिट्ठाय उत्तरि आसवानं खयाय योगो करणीयो।

७. "चीवरं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पि। पिण्डपातं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पि। सेनासनं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पि। गामनिगमं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पि। जनपदपदेसं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पि। पुग्गलं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पि।

८. " 'चीवरं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति,

---

आध्यात्मिक चित्तशान्ति प्राप्तिहेतु प्रयास आरम्भ करना चाहिये। इस प्रकार, वह समय आने पर, प्रज्ञाविषयक धर्मविपश्यना के साथ आध्यात्मिक चित्तशान्ति को भी प्राप्त कर सकेगा।

५. "और, यदि, भिक्षुओ! कोई भिक्षु प्रत्यवेक्षणा करते हुए यह समझ ले—'मैं आध्यात्मिक चित्तशान्ति अभी तक नहीं पा सका हूँ, और न प्रज्ञासम्बद्ध धर्मविपश्यना ही प्राप्त कर सका हूँ।' भिक्षुओ! तब वह भिक्षु उन कुशल धर्मों के लाभ के लिये दृढ़ इच्छा, सङ्कल्प, उद्योग, उत्साहपूर्वक इस प्रयास में पीछे न हटने के निश्चय के साथ स्मृतिसम्प्रजन्यपूर्वक प्रयास आरम्भ करे। जैसे भिक्षुओ! किसी के वस्त्रों में या शिर पर अग्नि...पूर्ववत्...; इसी प्रकार, भिक्षुओ! वह भिक्षु उन कुशल धर्मों के लाभ के लिये दृढ़ इच्छा...स्मृतिसम्प्रजन्यपूर्वक प्रयास आरम्भ करे। इस प्रयास से वह, आगे समय आने पर, आध्यात्मिक चित्तशान्ति एवं प्रज्ञाविषयक धर्मविपश्यना—दोनों का लाभी हो सकेगा।

६. "यदि, भिक्षुओ! प्रत्यवेक्षणा करने पर उसको यह अनुभव हो—'मैं आध्यात्मिक चित्तशान्ति एवं प्रज्ञाविषयक धर्मविपश्यना—दोनों का लाभी हूँ', तो, भिक्षुओ! उस भिक्षु को उन कुशल धर्मों को प्रतिष्ठित कर साधना में आगे बढ़ते हुए (उत्तरिं) आश्रवों के क्षय हेतु प्रयास करना चाहिये।

[N.179] इति खो पनेतं वुत्तं? किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा चीवरं—'इदं खो मे चीवरं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ती' ति, एवरूपं चीवरं न [B.336] सेवितब्बं। तत्थ यं जञ्ञा चीवरं—'इदं खो मे चीवरं सेवतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ती' ति, एवरूपं चीवरं सेवितब्बं। 'चीवरं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

९. "'पिण्डपातं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा पिण्डपातं—'इमं खो मे पिण्डपातं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ती' ति, एवरूपो [R.101] पिण्डपातो न सेवितब्बो। तत्थ यं जञ्ञा पिण्डपातं—'इमं खो मे पिण्डपातं सेवतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ती' ति, एवरूपो पिण्डपातो सेवितब्बो। 'पिण्डपातं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं, पि असेवितब्बं पी' इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।'

१०. "'सेनासनं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा सेनासनं—'इदं खो मे सेनासनं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ती' ति, एवरूपं सेनासनं न सेवितब्बं। तत्थ यं जञ्ञा सेनासनं—'इदं खो मे सेनासनं सेवतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति. कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ती' ति, एवरूपं सेनासनं सेवितब्बं। 'सेनासनं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि... असेवितब्बं पी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

११. "'गामनिगमं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि— सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा गामनिगमं—'इमं खो मे गामनिगमं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ती' ति,एवरूपो

---

७. "भिक्षुओ! मैं चीवर, पिण्डपात, शयनासन, ग्राम-निगम, जनपद-प्रदेश एवं पुद्गल—इन सबके दो भेद मानता हूँ। ये सेवितव्य भी होते हैं और असेवितव्य भी।

८. "भिक्षुओ! 'मैं चीवर के भी दो भेद मानता हूँ—सेवितव्य (प्रयोग में लाने योग्य) भी, असेवितव्य भी' यह जो कहा, किस अभिप्राय से कहा? वहाँ वह भिक्षु जिस चीवर के विषय में यह जान जाय कि इसको उपयोग में लाने से अकुशल धर्म बढ़ते हैं तथा कुशल धर्म क्षीण होते हैं तो ऐसे चीवर का उपयोग नहीं करना चाहिये। और जिस चीवर के विषय में यह जान ले कि इस चीवर के उपयोग से अकुशल धर्म क्षीण होते हैं तथा कुशलधर्म बढ़ते हैं तो ऐसे चीवर को उपयोग में लाना चाहिये। भिक्षुओ! 'चीवर के भी मैं दो भेद मानता हूँ...पूर्ववत्...'—यह जो कहा गया है इसी अभिप्राय से कहा गया है।

९. "भिक्षुओ! मैं पिण्डपात के भी दो भेद मानता हूँ...पूर्ववत्...।

१०. "भिक्षुओ! मैं शयनासन के भी दो भेद मानता हूँ ...पूर्ववत्...।

११. "भिक्षुओ! मैं ग्राम-निगम के भी दो भेद मानता हूँ ...पूर्ववत्...।

गामनिगमो न सेवितब्बो। तत्थ यं जञ्ञा गामनिगमं—'इमं खो मे गामनिगमं सेवतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ती' ति, एवरूपो गामनिगमो सेवितब्बो। 'गामनिगमं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि [N.180] असेवितब्बं पी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१२. '''पुग्गलं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा जनपदपदेसं—'इमं खो मे जनपदपदेसं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा [B.337, R.102] परिहायन्ती' ति, एवरूपो जनपदपदेसो न सेवितब्बो। तत्थ यं जञ्ञा जनपदपदेसं—'इमं खो मे जनपदपदेसं सेवतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ती' ति, एवरूपो जनपदपदेसो सेवितब्बो। 'जनपदपदेसं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१३. '''पुग्गलं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति, इति खो पनेतं वुत्तं। किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? तत्थ यं जञ्ञा पुग्गलं—'इमं खो मे पुग्गलं सेवतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ती' ति, एवरूपो पुग्गलो न सेवितब्बो। तत्थ यं जञ्ञा पुग्गलं—'इमं खो मे पुग्गलं सेवतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ती' ति, एवरूपो पुग्गलो सेवितब्बो। 'पुग्गलं पाहं, भिक्खवे, दुविधेन वदामि—सेवितब्बं पि असेवितब्बं पी' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं'' ति॥ ●

५. परिहानसुत्तं : १. तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि— ''आवुसो भिक्खवे'' ति। ''आवुसो'' ति खो ते भिक्खू आयस्मतो सारिपुत्तस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—

२. '''परिहानधम्मो पुग्गलो, परिहानधम्मो पुग्गलो' ति, आवुसो, वुच्चति। 'अपरिहानधम्मो पुग्गलो, अपरिहानधम्मो पुग्गलो' ति, आवुसो, वुच्चति। कित्तावता नु खो, आवुसो, परिहानधम्मो पुग्गलो वुत्तो भगवता, कित्तावता च पन अपरिहानधम्मो पुग्गलो वुत्तो भगवता'' ति?

---

१२. ''भिक्षुओ! मैं जनपद-प्रदेश के भी दो भेद मानता हूँ ...पूर्ववत्....।

१३. ''भिक्षुओ! मैं पुद्गल के भी दो भेद मानता हूँ ...पूर्ववत्...। ...यह जो कहा था इसी अभिप्राय से कहा था॥'' ●

५. परिहाणसूत्र : : परिहाण एवं अपरिहाण धर्म वाले पुद्गल

१. वहाँ, आयुष्मान् सारिपुत्र ने ''आयुष्मन् भिक्षुओ!'' सम्बोधन से भिक्षुओं को अपने पास बुलाया, भिक्षु ''आयुष्मन्'' कहकर उनके पास आये। आयुष्मान् सारिपुत्र ने उनको यह धर्मप्रवचन किया—

[N.181] "दूरतो पि खो मयं, आवुसो, आगच्छाम आयस्मतो सारिपुत्तस्स सन्तिके एतस्स [R.103] भासितस्स अत्थमञ्ञातुं। साधु वतायस्मन्तंयेव सारिपुत्तं पटिभातु एतस्स भासितस्स अत्थो। आयस्मतो सारिपुत्तस्स सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती" २ति।

[B.338] ३. "तेनहावुसो, सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति। "एव-मावुसो" ति खो ते भिक्खू आयस्मतो सारिपुत्तस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—

४. "कित्तावता नु खो, आवुसो, परिहानधम्मो पुग्गलो वुत्तो भगवता? इधावुसो, भिक्खु अस्सुतं चेव धम्मं न सुणाति, सुता चस्स धम्मा सम्मोसं गच्छन्ति, ये चस्स धम्मा पुब्बे चेतसो असम्फुट्ठपुब्बा ते चस्स न समुदाचरन्ति, अविञ्ञातं चेव न विजानाति। एत्तावता खो, आवुसो, परिहानधम्मो पुग्गलो वुत्तो भगवता।

५. "कित्तावता च पनावुसो, अपरिहानधम्मो पुग्गलो वुत्तो भगवता? इधावुसो, भिक्खु अस्सुतं चेव धम्मं सुणाति, सुता चस्स धम्मा न सम्मोसं गच्छन्ति, ये चस्स धम्मा पुब्बे चेतसो असम्फुट्ठपुब्बा ते चस्स समुदाचरन्ति, अविञ्ञातं चेव विजानाति। एत्तावता खो, आवुसो, अपरिहानधम्मो पुग्गलो वुत्तो भगवता।

६. "नो चे, आवुसो, भिक्खु परचित्तपरियायकुसलो होति, अथ 'सचित्तपरियाय-कुसलो भविस्सामी' ति—एवं हि वो, आवुसो, सिक्खितब्बं।

७. "कथं चावुसो, भिक्खु सचित्तपरियायकुसलो होति? सेय्यथापि, आवुसो,

---

२. "आयुष्मानो! 'परिहाणधर्मा पुद्गल परिहाणधर्मा पुद्गल'—ऐसा अनेक बार कहा जाता है; 'अपरिहाणधर्मा पुद्गल'—ऐसा भी कहा जाता है। भगवान् ने इस परिहाणधर्मा एवं अपरिहाणधर्मा पुद्गल का क्या व्याख्यान किया है?

"आयुष्मन्! हमलोग बहुत दूर से आपका धर्मप्रवचन सुनने के लिये ही यहाँ आये हैं। अच्छा हो आयुष्मन्! कि आप ही भगवदुपदिष्ट धर्म का विशद व्याख्यान करें। हम आयुष्मान् से सुनकर इसे धारण कर लेंगे।"

३. "तो आयुष्मानो! सुनो। मैं बताता हूँ। तदनुसार तुम लोग इसको अपने मन में बैठा लो।

४. "भिक्षुओ! भगवान् ने किस पुद्गल को परिहाणधर्म वाला बताया है? यहाँ, आयुष्मानो! जो भिक्षु अश्रुत धर्म को सुनता नहीं है तथा श्रुत धर्म को स्मरण नहीं रख पाता, जिन धर्मों का इसने पहले कभी अपने मन में विचार नहीं किया है वे इसके मन में उठते रहते हैं, जिन धर्मों को यह जानता नहीं है वे भी इसके मन में आते रहते हैं। इतने से यह भिक्षु भगवान् द्वारा 'परिहाण धर्मवाला' कहा गया है। (क)

५. और आयुष्मानो! भगवान् ने अपरिहाणधर्मवाला पुद्गल किसको कहा है? आयुष्मानो! जो भिक्षु अश्रुत धर्म को सुनता है, श्रुत धर्म को स्मरण रखता है तथा जिन धर्मों को इसने सुना या जाना नहीं है उनको यह अपने मन में लाता है, उन पर विचार भी करता है। ऐसे भिक्षु को भगवान् ने 'अपरिहाण धर्मवाला' बताया है। (ख)

इत्थी वा पुरिसो वा दहरो युवा मण्डनकजातिको आदासे वा परिसुद्धे परियोदाते अच्छे वा उदपत्ते सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो सचे तत्थ पस्सति रजं वा अङ्गणं वा, तस्सेव रजस्स वा अङ्गणस्स वा पहानाय वायमति। नो चे तत्थ पस्सति रजं वा अङ्गणं वा, तेनेवत्तमनो होति परिपुण्णसङ्कप्पो—'लाभा वत मे, परिसुद्धं वत मे' ति। एवमेव खो, आवुसो, [R.104] भिक्खुनो पच्चवेक्खणा बहुकारा होति कुसलेसु धम्मेसु—'अनभिज्झालु नु खो बहुलं विहरामि, संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो, अब्यापन्नचित्तो नु खो बहुलं [N.182] विहरामि, संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो, विगतथीनमिद्धो नु खो बहुलं विहरामि, संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो, तिण्णविचिकिच्छो नु खो बहुलं विहरामि, संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो, अक्कोधनो नु खो बहुलं विहरामि, [B.339] संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो, असङ्किलिट्ठचित्तो नु खो बहुलं विहरामि, संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो, लाभी नु खोम्हि अज्झत्तं धम्मपामोज्जस्स, संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो, लाभी नु खोम्हि अज्झत्तं चेतोसमथस्स, संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो, लाभी नु खोम्हि अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय, संविज्जति नु खो मे एसो धम्मो उदाहु नो' ति।

८. ''सचे पन, आवुसो, भिक्खु पच्चवेक्खमानो सब्बे पिमे कुसले धम्मे अत्तनि न समनुपस्सति, तेनावुसो, भिक्खुना सब्बेसंयेव इमेसं कुसलानं धम्मानं पटिलाभाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उसोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं। सेय्यथापि, आवुसो, आदित्तचेलो वा आदित्तसीसो वा। तस्सेव चेलस्स वा सीसस्स वा निब्बापनाय अधिमत्तं छन्दं च वायामं च उस्साहं च उस्सोळ्हिं च अप्पटिवानिं च सतिं च सम्पजञ्ञं च करेय्य। एवमेव खो, आवुसो, तेन भिक्खुना सब्बेसंयेव कुसलानं धम्मानं पटिलाभाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं;

९. ''सचे पन, आवुसो, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एकच्चे कुसले धम्मे अत्तनि समनुपस्सति, एकच्चे कुसले धम्मे अत्तनि न समनुपस्सति, तेनावुसो, भिक्खुना ये [R.105] कुसले धम्मे अत्तनि समनुपस्सति तेसु कुसलेसु धम्मेसु पतिट्ठाय, ये कुसले धम्मे अत्तनि न समनुपस्सति तेसं कुसलानं धम्मानं पटिलाभाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं। सेय्यथापि, आवुसो, आदित्तचेलो वा आदित्तसीसो वा। तस्सेव चेलस्स वा सीसस्स वा निब्बापनाय अधिमत्तं छन्दं च वायामं च उस्साहं च उस्सोळ्हिं च अप्पटिवानिं च सतिं च सम्पजञ्ञं च करेय्य।

---

६. ''जो भिक्षु परचित्तपर्यायकुशल नहीं होता, परन्तु स्वचित्तपर्यायकुशल होना चाहता है, उसको यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये—...पूर्ववत्...।

भिक्षु को इन धर्मों पर प्रतिष्ठित रहते हुए आश्रवों के क्षय हेतु प्रयास करना चाहिये॥'' ●

एवमेव खो, आवुसो, तेन भिक्खुना ये कुसले धम्मे अत्तनि समनुपस्सति तेसु कुसलेसु धम्मेसु पतिट्ठाय, ये कुसले धम्मे अत्तनि न समनुपस्सति तेसं कुसलानं धम्मानं पटिलाभाय [N.183] अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं।

१०. ''सचे पनावुसो, भिक्खु पच्चवेक्खमानो सब्बे पिमे कुसले धम्मे अत्तनि [B.340] समनुपस्सति, तेनावुसो, भिक्खुना सब्बेस्वेव इमेसु कुसलेसु धम्मेसु पतिट्ठाय, उत्तरि आसवानं खयाय योगो करणीयो'' ति॥ ●

६. पठमसञ्ञासुत्तं : १. ''दसयिमा, भिक्खवे, सञ्ञा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना। कतमा दस? असुभसञ्ञा, मरणसञ्ञा, आहारे पटिकूलसञ्ञा, सब्बलोके अनभिरतिसञ्ञा, अनिच्चसञ्ञा, अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, दुक्खे अनत्तसञ्ञा, पहानसञ्ञा, विरागसञ्ञा, निरोधसञ्ञा—इमा खो, भिक्खवे, दस सञ्ञा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना'' ति॥ ●

७. दुतियसञ्ञासुत्तं : १. ''दसयिमा, भिक्खवे, सञ्ञा भाविता बहुलीकता [R.106] महप्फला होन्ति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना। कतमा दस? अनिच्चसञ्ञा, अनत्तसञ्ञा, मरणसञ्ञा, आहारे पटिकूलसञ्ञा, सब्बलोके अनभिरति-सञ्ञा, अट्ठिकसञ्ञा, पुळुवकसञ्ञा, विनीलकसञ्ञा, विच्छिद्दकसञ्ञा, उद्धुमातक-सञ्ञा—इमा खो, भिक्खवे, दस सञ्ञा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना'' ति॥ ●

---

६. प्रथमसंज्ञासूत्र : : दश संज्ञाएँ

१. ''भिक्षुओ! इन दश संज्ञाओं की साधना, अभ्यास करने पर ये वृद्धिङ्गत होती हैं। उनका अतिशय माहात्म्य एवं फल बताया गया है। ये निर्वाण तक पहुँचाने वाली हैं तथा निर्वाण इनकी अन्तिम सीमा है। कौन सी दश? (१) अशुभसंज्ञा, (२) मरणसंज्ञा, (३) आहार में प्रतिकूलसंज्ञा, (४) समस्त लोक में अनभिरति (अरुचि) संज्ञा, (५) अनित्यसंज्ञा, (६) अनित्य में दुःखसंज्ञा, (७) दुःख में अनात्मसंज्ञा, (८) प्रहाणसंज्ञा, (९) विरागसंज्ञा एवं (१०) निरोधसंज्ञा—भिक्षुओ! ये दश संज्ञाएँ साधना, अभ्यास...पूर्ववत्...निर्वाण इनकी अन्तिम सीमा है॥'' ●

७. द्वितीय संज्ञासूत्र : : दश संज्ञाएँ

१. भिक्षुओ! इन दश संज्ञाओं की साधना ...पूर्ववत्... अन्तिम सीमा है। कौन सी दश? (१) अनित्यसंज्ञा, (२) अनात्मसंज्ञा, (३) मरणसंज्ञा, (४) आहार में प्रतिकूलसंज्ञा, (५) समस्त लोक में अनभिरतिसंज्ञा, (६) अस्थिकसंज्ञा, (७) पुळवकसंज्ञा, (८) विनीलकसंज्ञा, (९) विच्छिद्रकसंज्ञा तथा (१०) उद्धूमातकसंज्ञा भिक्षुओ! ये दश संज्ञाएँ साधना, अभ्यास ...पूर्ववत्... निर्वाण इनकी अन्तिम सीमा है॥'' ●

८. मूलकसुत्तं : १. "सचे, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—'किंमूलका, आवुसो, सब्बे धम्मा, किंसम्भवा सब्बे धम्मा, किंसमुदया सब्बे धम्मा, किंसमोसरणा सब्बे धम्मा, किंपमुखा सब्बे धम्मा, किंअधिपतेय्या सब्बे धम्मा, [N.184] किंउत्तरा सब्बे धम्मा, किंसारा सब्बे धम्मा, किंओगधा सब्बे धम्मा, किंपरियोसाना सब्बे धम्मा' ति, एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं किन्ति ब्याकरेय्याथा" ति ?

"भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा भगवन्नेत्तिका भगवम्पटिसरणा। साधु वत, भन्ते, भगवन्तंयेव पटिभातु एतस्स भासितस्स अत्थो। भगवतो सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती" ति।

"तेन हि, भिक्खवे, सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति। [B.341]

"एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. "सचे, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—'किंमूलका, आवुसो, सब्बे धम्मा, किंसम्भवा सब्बे धम्मा, किंसमुदया सब्बे धम्मा, किंसमोसरणा सब्बे धम्मा... किंपरियोसाना सब्बे धम्मा' ति? एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं [R.107] अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथ—'छन्दमूलका, आवुसो, सब्बे धम्मा, मनसिकारसम्भवा सब्बे धम्मा, फस्ससमुदया सब्बे धम्मा, वेदनासमोसरणा सब्बे धम्मा, समाधिप्पमुखा सब्बे धम्मा, सताधिपतेय्या सब्बे धम्मा, पञ्ञुत्तरा सब्बे धम्मा, विमुत्तिसारा सब्बे धम्मा, अमतोगधा सब्बे धम्मा, निब्बानपरियोसाना सब्बे धम्मा' ति। एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथा" ति॥ ●

९. पब्बज्जासुत्तं : १. "तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं—'यथापब्बज्जा-

---

८. मूलकसूत्र : : **धर्मों का मूल कारण**

१. "यदि, भिक्षुओ! अन्यमतावलम्बी परिव्राक तुमसे यह पूछें—'आयुष्मानो! सभी धर्मों का मूल (आदिकारण) क्या है? उनका उत्पत्ति कारण क्या है? उनकी एकीभाव (एक स्थान पर एकत्र होना) क्या है? उन धर्मों का मुख्य (ज्येष्ठ) कौन है? उन धर्मों का स्वामित्व क्या है? उनके आगे क्या है? उनका सार क्या है? उनकी गहराई क्या है? तथा उन धर्मों का अन्त कहाँ होता है?"

"भन्ते! हमारे ज्ञान के तो आप ही आधार हैं, आप ही हमारे लिये शरणस्थल हैं, आप ही हमारे मार्गदर्शक हैं। अच्छा हो, भन्ते! कि आप ही इनके उत्तर का विस्तार करें। आपसे सुनकर हम तदनुसार ही धारण कर लेंगे।"

"तो, भिक्षुओ! सुनो! तदनुसार अपने मन में बैठा लो।"

"अच्छा, भन्ते!" कहकर भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। भगवान् ने कहा—

२. "यदि, भिक्षुओ! अन्य मतावलम्बी तुमसे यह पूछें-...पूर्ववत्...इन धर्मों का अन्त कहाँ होता है?'—ऐसा पूछे जाने पर तुमको यह उत्तर देना चाहिये—'आयुष्मानो! सभी धर्म इच्छामूलक हैं, मनःसङ्कल्प ही उनका उद्भवस्थल है, स्पर्श ही उनकी उत्पत्ति है, वेदना का कार्य है उनको एकत्र करना, समाधि उन सभी धर्मों का प्रमुख है, स्मृति उनकी स्वामी है, वे सभी एकमात्र प्रज्ञा से ज्ञेय

परिचितं च नो चित्तं भविस्सति, न चुप्पन्ना पापका अकुसला धम्मा चित्तं परियादाय ठस्सन्ति; अनिच्चसञ्ञापरिचितं च नो चित्तं भविस्सति, अनत्तसञ्ञापरिचितं च नो चित्तं भविस्सति, असुभसञ्ञापरिचितं च नो चित्तं भविस्सति, आदीनवसञ्ञापरिचितं च नो चित्तं भविस्सति, लोकस्स समं च विसमं च ञत्वा तंसञ्ञापरिचितं च नो चित्तं भविस्सति, [N.184] लोकस्स भवं च विभवं च ञत्वा तंसञ्ञापरिचितं च नो चित्तं भविस्सति, लोकस्स समुदयं च अत्थङ्गमं च ञत्वा तंसञ्ञापरिचितं च नो चित्तं भविस्सति, पहानसञ्ञापरिचितं च नो चित्तं भविस्सति, विरागसञ्ञापरिचितं च नो चित्तं भविस्सति, निरोधसञ्ञापरिचितं [R.108] च नो चित्तं भविस्सती' ति—एवं हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं।

[B.342] २. ''यतो खो, भिक्खवे, भिक्खुनो यथापब्बज्जापरिचितं च चित्तं होति न चुप्पन्ना पापका अकुसला धम्मा चित्तं परियादाय तिट्ठन्ति, अनिच्चसञ्ञापरिचितं च चित्तं होति, अनत्तसञ्ञापरिचितं च चित्तं होति, असुभसञ्ञापरिचितं च चित्तं होति, आदीनवसञ्ञापरिचितं च चित्तं होति, लोकस्स समं च विसमं च ञत्वा तंसञ्ञापरिचितं च चित्तं होति, लोकस्स भवं च विभवं च ञत्वा तंसञ्ञापरिचितं च चित्तं होति, लोकस्स समुदयं च अत्थङ्गमं च ञत्वा तंसञ्ञापरिचितं च चित्तं होति, पहानसञ्ञापरिचितं च चित्तं होति, विरागसञ्ञापरिचितं च चित्तं होति, निरोधसञ्ञापरिचितं च चित्तं होति, तस्स द्विन्नं फलानं अञ्ञतरं फलं पाटिकङ्खं—दिट्ठेव धम्मे अञ्ञा, सति वा उपादिसेसे अनागामिता'' ति॥ ●

१०. गिरिमानन्दसुत्तं : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समयेन आयस्मा गिरिमानन्दो आबाधिको होति

हैं, विमुक्ति उनका सार है, तथा निर्वाण इन सबकी अन्तिम सीमा है।' अन्य मतावलम्बियों द्वारा इस विषय में पूछे जाने पर तुमको यह उत्तर देना चाहिये॥'' ●

९. प्रव्रज्यासूत्र : :

१. ''अतः, भिक्षुओ! तुमको यह सीखना चाहिये—'हमारा मन प्रव्रज्याधर्मों से ही परिचित रहेगा, हममें उत्पन्न पापमय धर्म हमारे चित्त को प्रभावित न कर सकेंगे; हमारा चित्त अनित्यसंज्ञा से ही परिचित रहेगा, अनात्मसंज्ञा से ही...अशुभसंज्ञा से ही...आदीनवसंज्ञा से ही...संसार की समता विषमता की स्थिति से ही परिचित होगा, संसार के उत्पत्ति एवं नाश की स्थिति को जानकर उसी से परिचित होगा, संसार के उदय अस्त की स्थिति से ही परिचित होगा, प्रहाणसंज्ञा...विरागसंज्ञा... निरोधसंज्ञा से ही हमारा चित्त परिचित रहेगा'—भिक्षुओ! यह तुमको सीखना चाहिये।

२. ''भिक्षुओ! जब भिक्षु का चित्त प्रव्रज्याधर्मों से ही परिचित रहेगा...पूर्ववत्...निरोधसंज्ञा से ही परिचित रहेगा तब उसके दो ही फल (परिणाम) सम्भव हैं—१. या तो इसी जन्म में ज्ञान-(अर्हत्त्व-) प्राप्ति; २. या कोई प्रारब्ध कर्म शेष रहने पर अनागामिता॥'' ●

१०. गिरिमानन्दसूत्र : : दश संज्ञाओं के ज्ञान का महत्त्व

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन

दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

२. "आयस्मा, भन्ते, गिरिमानन्दो आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। साधु, भन्ते, भगवा येनायस्मा गिरिमानन्दो तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया" ति।

"सचे खो त्वं, आनन्द, गिरिमानन्दस्स भिक्खुनो दस सञ्ञा भासेय्यासि, ठानं खो पनेतं विज्जति यं गिरिमानन्दस्स भिक्खुनो दस सञ्ञा सुत्वा सो आबाधो ठानसो पटिप्पस्सम्भेय्य।

३. "कतमा दस? अनिच्चसञ्ञा, अनत्तसञ्ञा, असुभसञ्ञा, [N.186, R.109] आदीनवसञ्ञा, पहानसञ्ञा, विरागसञ्ञा, निरोधसञ्ञा, सब्बलोके अनभिरतिसञ्ञा, सब्बसङ्खारेसु अनिच्छासञ्ञा, आनापानस्सति।

४. "कतमा चानन्द, अनिच्चसञ्ञा? इधानन्द, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा इति पटिसञ्चिक्खति—'रूपं अनिच्चं, वेदना अनिच्चा, सञ्ञा अनिच्चा, सङ्खारा अनिच्चा, विञ्ञाणं अनिच्चं' ति। इति इमेसु पञ्चसु उपादानक्खन्धेसु अनिच्चानुपस्सी विहरति। अयं वुच्चतानन्द, अनिच्चसञ्ञा।

५. "कतमा चानन्द, अनत्तसञ्ञा? इधानन्द, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा इति पटिसञ्चिक्खति—'चक्खु अनत्ता, रूपा अनत्ता, सोतं अनत्ता,

---

विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय कोई आयुष्मान् गिरिमानन्द नामक भिक्षु किसी गम्भीर रोग से पीड़ित था। तब आयुष्मान् आनन्द (इसकी सूचना देने हेतु) भगवान् के सम्मुख आये...तथा भगवान् से यह निवेदन किया—

२. "भन्ते! आयुष्मान् गिरिमानन्द किसी गम्भीर रोग से ग्रस्त होकर अत्यधिक दु:खी हैं। अच्छा हो, भन्ते! उस पर अनुकम्पा करते हुए उसको देखने के लिये वहाँ पधारें।"

"आनन्द! इस गिरिमानन्द भिक्षु के लिये यह उचित होगा कि उसे दश संज्ञाओं के विषय में विस्तार से बताया जाय। जिनके ज्ञान से उसका यह रोग क्रमश: शान्त होता जायगा।

३. "कौन सी दश? अनित्यसंज्ञा, अनात्मसंज्ञा, अशुभसंज्ञा, आदीनवसंज्ञा, प्रहाणसंज्ञा, विरागसंज्ञा, निरोधसंज्ञा, समस्त लोक में अनभिरतिसंज्ञा तथा सब संस्कारों में अनिच्छासंज्ञा एवं आनापानस्मृति।

४. "आनन्द! इनमें **अनित्यसंज्ञा** क्या है? आनन्द! यहाँ कोई भिक्षु किसी अरण्य में वृक्ष के नीचे या किसी शून्य भवन में बैठकर इस प्रकार चिन्तन करे—'रूप अनित्य है, वेदना अनित्य है, संज्ञा अनित्य है, संस्कार अनित्य हैं, विज्ञान अनित्य हैं।' इस प्रकार वह इन पाँच उपादानस्कन्धों में अनित्यानुपश्यना की साधना करता है। ऐसी साधना अनित्यसंज्ञा की साधना कहलाती है। (१)

५. "और, आनन्द! **अनात्मसंज्ञा** क्या कहलाती है? यहाँ, आनन्द! कोई भिक्षु, किसी अरण्य में वृक्ष के नीचे या शून्य भवन में बैठकर यह चिन्तन करे—'चक्षु अनात्म है, रूप अनात्म

सद्दा अनत्ता, घानं अनत्ता, गन्धा अनत्ता, जिव्हा अनत्ता, रसा अनत्ता, काया अनत्ता, फोट्ठब्बा अनत्ता, मनो अनत्ता, धम्मा अनत्ता' ति। इति इमेसु छसु अज्झत्तिक-बाहिरेसु आयतनेसु अनत्तानुपस्सी विहरति। अयं वुच्चतानन्द, अनत्तसञ्ञा।

६. "कतमा चानन्द, असुभसञ्ञा? इधानन्द, भिक्खु इममेव कायं उद्धं पादतला अधो केसमत्थका तचपरियन्तं पूरं नानाप्पकारस्स असुचिनो पच्चवेक्खति—'अत्थि इमस्मिं काये केसा लोमा नखा दन्ता तचो मंसं न्हारु अट्ठि अट्ठिमिञ्जं वक्कं हदयं यकनं किलोमकं पिहकं पप्फासं अन्तं अन्तगुणं उदरियं करीसं पित्तं सेम्हं पुब्बो लोहितं सेदो मेदो अस्सु वसा खेळा सिङ्घाणिका लसिका मुत्तं' ति। इति इमस्मिं काये असुभानुपस्सी विहरति। अयं वुच्चतानन्द, असुभसञ्ञा।

७. "कतमा चानन्द, आदीनवसञ्ञा? इधानन्द, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्ख-[R.110] मूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा इति पटिसञ्चिक्खति—'बहुदुक्खो खो अयं कायो बहुआदीनवो! इति इमस्मिं काये विविधा आबाधा उप्पज्जन्ति, सेय्यथीदं—चक्खुरोगो सोतरोगो घानरोगो जिव्हारोगो कायरोगो सीसरोगो कण्णरोगो मुखरोगो दन्तरोगो ओट्ठरोगो [N.187] कासो सासो पिनासो डाहो जरो कुच्छिरोगो मुच्छा पक्खन्दिका सूला विसूचिका कुट्ठं गण्डो किलासो सोसो अपमारो दद्दु कण्डु कच्छु नखसा वितच्छिका लोहितं पित्तं मधुमेहो अंसा पिळका भगन्दला पित्तसमुट्ठाना आबाधा उतुपरिणामजा आबाधा विसम-

---

है; श्रोत्र अनात्म है, शब्द अनात्म है, घ्राण अनात्म है, गन्ध अनात्म है, जिह्वा अनात्म है, रस अनात्म है, काय अनात्म है, स्प्रष्टव्य अनात्म है, मन अनात्म है, धर्म अनात्म है'— इस प्रकार वह इन छह आध्यात्मिक एवं बाह्य अनात्मधर्मों में अनात्मानुपश्यना करता हुआ साधना करता है—आनन्द! यह अनात्मानुपश्यना (की साधना) कहलाती है। (२)

६. "और, आनन्द! **अशुभसंज्ञा** क्या कहलाती है? आनन्द! यहाँ कोई भिक्षु अपनी इसी काया को पैरों से ऊपर तक और केश-मस्तक से नीचे तक विविध प्रकार के अशुचि (पदार्थों) से पूर्ण देखे—'इस काया में केश, लोम, नख, दाँत, त्वचा, मांस, स्नायु, अस्थि, अस्थिमज्जा, वृक्क, हृदय, यकृत, क्लोम, प्लीहा, फुफ्फुस, अन्त्र अन्त्रगुण, उदर में भरा हुआ मल (पुरीष), पित्त, श्लेष्मा, पूय, रक्त, मेद, स्वेद, अश्रु, वसा, कफ, नासिका का मल (सिङ्घाणक), लसीका एवं मूत्र इस प्रकार इस काया में अशुभानुपश्यना (की साधना) करता है। (३)

७. "आनन्द! **आदीनवसंज्ञा** क्या कहलाती है? यहाँ, आनन्द! कोई भिक्षु किसी अरण्य, वृक्ष की छाया या किसी एकान्त भवन में बैठकर यह चिन्तन करे—'मेरा यह शरीर अनेक दुःखों एवं दोषों से पूर्ण है; क्योंकि इस शरीर में समय समय पर बहुत से रोग उत्पन्न होते रहते हैं; जैसे—चक्षुरोग, श्रोत्ररोग, घ्राणरोग जिह्वारोग, कायरोग, शीर्षरोग, कर्णरोग, मुखरोग, दन्तरोग, ओष्ठरोग, कास, श्वास, पीनस, दाह, ज्वर, उदररोग, मूर्च्छा, प्रस्कन्दिका, शूल, विसूचिका, कुष्ठ, गण्ड, किलास (कुष्ठभेद), शोष, अपस्मार, दद्रु , कण्डु (खाज), कच्छु (खुजली), नखाश्व (नखवृद्धि), वितर्दिका, रक्तपित्त, मधुमेह, अंस (स्कन्धरोग), पिडिका, भगन्दर, पित्तजन्यरोग,

परिहारजा आबाधा ओपक्कमिका आबाधा कम्मविपाकजा आबाधा सीतं उण्हं जिघच्छा पिपासा उच्चारो पस्सावो' ति। इति इमस्मिं काये आदीनवानुपस्सी विहरति। अयं [B.344] वुच्चतानन्द, आदीनवसञ्ञा।

८. "कतमा चानन्द, पहानसञ्ञा? इधानन्द, भिक्खु उप्पन्नं कामवितक्कं नाधिवासेति, पजहति, विनोदेति, ब्यन्तीकरोति, अनभावं गमेति। उप्पन्नं ब्यापादवितक्कं नाधिवासेति, पजहति, विनोदेति, ब्यन्तीकरोति, अनभावं गमेति। उप्पन्नं विहिंसावितक्कं नाधिवासेति, पजहति, विनोदेति, ब्यन्तीकरोति, अनभावं गमेति। उप्पन्नुप्पन्ने पापके अकुसले धम्मे नाधिवासेति, पजहति, विनोदेति, ब्यन्तीकरोति, अनभावं गमेति। अयं वुच्चतानन्द, पहानसञ्ञा।

९. "कतमा चानन्द, विरागसञ्ञा? इधानन्द, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा इति पटिसञ्चिक्खति—'एतं सन्तं एतं पणीतं यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिप्पटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निब्बानं' ति। अयं वुच्चतानन्द, विरागसञ्ञा।

१०. "कतमा चानन्द, निरोधसञ्ञा? इधानन्द, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा इति पटिसञ्चिक्खति—'एतं सन्तं एतं पणीतं यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिप्पटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो निरोधो निब्बानं' ति। अयं [R.111] वुच्चतानन्द, निरोधसञ्ञा।

११. "कतमा चानन्द, सब्बलोके अनभिरतिसञ्ञा? इधानन्द, भिक्खु ये लोके उपादाना चेतसो अधिट्ठानाभिनिवेसानुसया, ते पजहन्तो विहरति अनुपादियन्तो। अयं वुच्चतानन्द, सब्बलोके अनभिरतिसञ्ञा।

वातजन्यरोग, सान्निपातिकरोग ऋतुपरिणामजरोग, विषमाहारजन्यरोग, औपक्रमिक (उपद्रवजन्य) रोग, कर्मविपाकजरोग, शीत, उष्ण, जिघत्सा (भूख), पिपासा (प्यास), मल, मूत्र' इस प्रकार इस काया में आदीनवानुपश्यना (दोषदर्शन) करता है। आनन्द! इसे आदीनवसंज्ञा कहते हैं। (४)

८. "आनन्द! **प्रहाणसंज्ञा** किसे कहते हैं? यहाँ, आनन्द! कोई भिक्षु उत्पन्न कामवितर्क को, उत्पन्न व्यापादवितर्क को, उत्पन्न विहिंसावितर्क को, उत्पन्न पापमय अकुशलधर्मों को स्वीकार नहीं करता, त्याग देता है, दूर हटा देता है, नष्ट कर देता है, सदा के लिये लुप्त कर देता है। इसको कहते हैं, आनन्द! प्रहाणसंज्ञा। (५)

९. "आनन्द! **विरागसंज्ञा** किसे कहते हैं? यहाँ, आनन्द! कोई भिक्षु अरण्य में किसी वृक्ष की छाया में या किसी एकान्त भवन में बैठकर यह विचार करता है—'सभी संस्कारों का शमन तथा सभी मानसिक विकारों का त्याग, तृष्णा क्षय, विराग और निर्वाण ही शान्त एवं सर्वोत्तम पद है। आनन्द! इसी को विरागसंज्ञा कहते हैं।... (६)

१०. "आनन्द! **निरोधसंज्ञा** किसे कहते हैं? यहाँ, आनन्द! कोई भिक्षु अरण्य में...पूर्ववत्... तृष्णाक्षय, निरोध और निर्वाण ही शान्त एवं सर्वोत्तम पद है।... (७)

[N.188] १२. ''कतमा चानन्द, सब्बसङ्खारेसु अनिच्छासञ्ञा? इधानन्द, भिक्खु सब्बसङ्खारेसु अट्टीयति हरायति जिगुच्छति। अयं वुच्चतानन्द, सब्बसङ्खारेसु अनिच्छासञ्ञा।

१३. ''कतमा चानन्द, आनापानस्सति? इधानन्द, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व अस्ससति सतो व पस्ससति। दीघं वा अस्ससन्तो 'दीघं पस्सामी' ति पजानाति। रस्सं वा अस्ससन्तो 'रस्सं अस्ससामी' ति पजानाति। रस्सं वा [B.345] पस्ससन्तो 'रस्सं पस्ससामी' ति पजानाति। 'सब्बकायपटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'सब्बकायपटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'पस्सम्भयं कायसङ्खारं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'पस्सम्भयं कायसङ्खारं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'पीतिपटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'पीतिपटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'सुखपटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'सुखपटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'चित्तसङ्खारपटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'चित्तसङ्खारपटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'पस्सम्भयं चित्तसङ्खारं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति।

---

११. ''और आनन्द! समस्त लोक में **अनभिरति (वीतरागता) संज्ञा** क्या होती है? यहाँ, आनन्द! जो भिक्षु लोक में ग्राह्य विषयों को, जो कि चित्त के अधिष्ठान, अभिनिवेश एवं अनुशय के कारण बन सकते हैं, छोड़ते हुए, उनको कथमपि न ग्रहण करता हुआ धर्मसाधनारत रहता है; यही उसकी लोक में अनभिरतिसंज्ञा है। (८)

१२. ''और आनन्द! **सब संस्कारों में अनिच्छासंज्ञा** क्या है? यहाँ, आनन्द! जो भिक्षु संस्कारों को ग्रहण करने में दुःख मानता है, ग्लानि करता है, उनसे घृणा (जुगुप्सा) करता है, इसे कहते हैं, आनन्द 'सब संस्कारों में अनिच्छासंज्ञा'। (९)

१३. और आनन्द! यह **आनापानस्मृति (प्राणायाम)** क्या है? आनन्द! यहाँ कोई भिक्षु वन में जाकर, या वृक्षों के नीचे अथवा किसी शून्य आवास में पद्मासन लगाकर, शरीर को सीधा (सरल) कर, स्मृति को सम्मुख रखकर बैठा हुआ साधना करता है। वह स्मृतियुक्त रहते हुए ही श्वास लेता है और छोड़ता है। वह लम्बी श्वास लेता हुआ 'लम्बी श्वास ले रहा हूँ'—यह जानता है, तथा लम्बी श्वास छोड़ता हुआ 'लम्बी श्वास छोड़ रहा हूँ'—यह जानता है। छोटी (ह्रस्व) श्वास लेता हुआ 'छोटी श्वास ले रहा हूँ'—यह जानता है, और छोटी श्वास छोड़ता हुआ 'छोटी श्वास छोड़ता हूँ'—यह जानता है। 'समस्त काया (शरीर) को अनुभव करता हुआ श्वास लूँगा'—यह अभ्यास करता है, 'समस्त काया को अनुभव करता हुआ श्वास छोड़ूँगा'—यह अभ्यास करता है। 'काया के संस्कार (गति या क्रिया) को शान्त करता हुआ श्वास लूँगा'—यह अभ्यास करता है। 'काया के संस्कार को शान्त करता हुआ श्वास छोड़ूँगा'—यह अभ्यास करता है। 'प्रीति का अनुभव करता हुआ श्वास लूँगा'—यह अभ्यास करता है। 'प्रीति का अनुभव करता हुआ श्वास छोड़ूँगा'—यह सीखता है। 'सुख का अनुभव करता हुआ श्वास लूँगा'—यह अभ्यास करता है। 'सुख का अनुभव करता हुआ श्वास छोड़ूँगा'—यह अभ्यास करता है। 'चित्त के संस्कार (गति या

'पस्सम्भयं चित्तसङ्खारं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'चित्तपटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'चित्तपटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। अभिप्पमोदयं चित्तं [R.112] ...पे०... समादहं चित्तं ...पे०... विमोचयं चित्तं ...पे०... अनिच्चानुपस्सी ...पे०... विरागानुपस्सी ...पे०... निरोधानुपस्सी ...पे०... 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। अयं वुच्चतानन्द, आनापानस्सति।

१४. "सचे खो त्वं, आनन्द, गिरिमानन्दस्स भिक्खुनो इमा दस सञ्ञा भासेय्यासि, ठानं खो पनेतं विज्जति यं गिरिमानन्दस्स भिक्खुनो इमा दस सञ्ञा सुत्वा सो आबाधो ठानसो पटिप्पस्सम्भेय्या" ति।

१५. अथ खो आयस्मा आनन्दो भगवतो सन्तिके इमा दस सञ्ञा उग्गहेत्वा येनायस्मा गिरिमानन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मतो गिरिमानन्दस्स इमा दस सञ्ञा अभासि। अथ खो आयस्मतो गिरिमानन्दस्स दस सञ्ञा सुत्वा सो आबाधो [N.189] ठानसो पटिप्पस्सम्भि। वुट्ठहि चायस्मा गिरिमानन्दो तम्हा आबाधा। तथा पहीनो च पनायस्मतो गिरिमानन्दस्स सो आबाधो अहोसी" ति॥

सचित्तवग्गो छट्ठो॥ ●

तस्सुद्दानं

सचित्तं च सारिपुत्त, ठिति च समथेन च।
परिहानो च द्वे सञ्ञा, मूला पब्बजितं गिरी ति॥ ●

क्रिया) का अनुभव करता हुआ श्वास लूँगा'—यह सीखता है। 'चित्त के संस्कार का अनुभव करता हुआ श्वास छोड़ूँगा'—यह सीखता है। 'चित्त के संस्कार को शान्त करता हुआ श्वास लूँगा'—यह सीखता है।'चित्त के संस्कार को शान्त करता हुआ श्वास छोड़ूँगा'—यह सीखता है। 'चित्त को जानता हुआ श्वास लूँगा'—... 'चित्त को जानता हुआ श्वास छोड़ूँगा' यह सीखता है। 'चित्त को प्रसन्न करता हुआ...'। चित्त को समाहित करता हुआ...।' 'चित्त को मुक्त करता हुआ....।''चित्त में निरोधानुपश्यना करता हुआ...।''चित्त में प्रतिनिसर्गा(त्यागा)नुपश्यना करता हुआ श्वास लूँगा'—यह सीखता है, तथा 'चित्त में प्रतिनिसर्गानुपश्यना करता हुआ श्वास छोड़ूँगा'—यह सीखता है। आनन्द! यह (साधना) कहलाती है—आनापानस्मृति। (१०)

१४. "यदि, आनन्द तुम जाकर उस गिरिमानन्द भिक्षु को ये दश संज्ञाएँ सुनाओ, तो यह निश्चित है कि उस गिरिमानन्द भिक्षु का रोग अवश्य ही क्रमशः शान्त होता जायगा।"

१५. तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् से इन दश संज्ञाओं (के ज्ञान) को अधिगृहीत कर गिरिमानन्द भिक्षु के पास गये। वहाँ जाकर उस भिक्षु को ये दश संज्ञाएँ सुनायीं। तब इन संज्ञाओं के सुनने के बाद से ही, उस गिरिमानन्द भिक्षु का वह प्रबल रोग (इस संज्ञाश्रवण के पुण्य प्रभाव से) क्रमशः शान्त हो गया और वह रोगमुक्त होकर स्वस्थ हो गया।

इस प्रकार उस गिरिमानन्द भिक्षु का रोग शान्त हुआ था॥ ●

स्वचित्तवर्ग षष्ठ सम्पन्न॥

७. यमकवग्गो

१. अविज्जासुत्तं : १. ''पुरिमा, भिक्खवे, कोटि न पञ्ञायति अविज्जाय—'इतो [B.346,R.113] पुब्बे अविज्जा नाहोसि, अथ पच्छा सम्भवी' ति। एवञ्चेतं, भिक्खवे, वुच्चति, अथ च पन पञ्ञायति—'इदप्पच्चया अविज्जा' ति।

२. ''अविज्जं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो अविज्जाय? 'पञ्च नीवरणा' तिस्स वचनीयं। पञ्च पाहं, भिक्खवे, नीवरणे साहारे वदामि, नो अनाहारे। को चाहारो पञ्चन्नं नीवरणानं? 'तीणि दुच्चरितानी' तिस्स वचनीयं। तीणि पाहं, भिक्खवे, दुच्चरितानि साहारानि वदामि, नो अनाहारानि। को चाहारो तिण्णं दुच्चरितानं? 'इन्द्रिय-असंवरो' तिस्स वचनीयं। इन्द्रियअसंवरं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो इन्द्रियअसंवरस्स? 'असतासम्पजञ्ञं' तिस्स वचनीयं। असतासम्पजञ्ञं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो असतासम्पजञ्ञस्स? 'अयोनिसो मनसिकारो' तिस्स वचनीयं। अयोनिसो मनसिकारं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो [N.190] अनाहारं। को चाहारो अयोनिसो मनसिकारस्स? 'अस्सद्धियं' तिस्स वचनीयं। अस्सद्धियं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो अस्सद्धियस्स?

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. स्वचित्तसूत्र, २. सारिपुत्रसूत्र, ३.स्थितिसूत्र, ४. शमथसूत्र, ५. परिहाणसूत्र, ६. प्रथम संज्ञासूत्र, ७. द्वितीय संज्ञासूत्र, ८. मूलकसूत्र, ९. प्रव्रज्यासूत्र एवं १०. गिरिमानन्दसूत्र॥ ●

७. यमकवर्ग

१. अविद्यासूत्र : : अविद्या एवं विद्या के आहार

१. भिक्षुओ! अविद्या के उत्पत्तिकाल की ऐसी सीमा निर्धारित नहीं हो पायी है—'इससे पूर्व अविद्या नहीं थी या इसके बाद ही अविद्या उत्पन्न हुई है।' ऐसा कहा जाता है। अतः अविद्या-विषयक विचार यहीं से आरम्भ किया जाता है—'इसके कारण अविद्या उत्पन्न हुई है।'

'भिक्षुओ! मैं इस अविद्या को भी साहार (किसी कारण से उत्पन्न होने वाली) मानता हूँ, अनाहार (अकारण उत्पन्न होने वाली) नहीं। इस अविद्या का आहार (उत्पादक कारण) क्या है? पाँच नीवरण ही इसके कारण हैं—ऐसा कहना चाहिये। और भिक्षुओ! इन पाँच नीवरणों को भी मैं साहार ही कहता हूँ, अनाहार नहीं। इन पाँच नीवरणों का आहार क्या है? तीन दुश्चरित। भिक्षुओ! इन तीन दुश्चरितों को भी मैं साहार ही बताता हूँ, अनाहार नहीं। इन तीन दुश्चरितों का आहार क्या है? इनका आहार 'इन्द्रियअसंवर' (असंयम) को कहना चाहिये। भिक्षुओ! इस इन्द्रियअसंवर को भी मैं साहार ही कहता हूँ, अनाहार नहीं। इस इन्द्रियअसंवर का आहार क्या है? अस्मृति (स्मृति-रहितता) एवं असम्प्रजन्य ही इसका आहार है। भिक्षुओ! इस अस्मृति एवं असम्प्रजन्य को भी मैं साहार ही कहता हूँ, अनाहार नहीं। इस अस्मृति एवं असम्प्रजन्य का क्या आहार है? अयोनिशः

'असद्धम्मस्सवनं' तिस्स वचनीयं। असद्धम्मस्सवनं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो असद्धम्मस्सवनस्स? 'असप्पुरिससंसेवो' तिस्स वचनीयं।

३. "इति खो, भिक्खवे, असप्पुसिसंसेवो परिपूरो असद्धम्मस्सवनं परिपूरेति, असद्धम्मस्सवनं परिपूरं अस्सद्धियं परिपूरेति, अस्सद्धियं परिपूरं अयोनिसो मनसिकारं परिपूरेति, अयोनिसो मनसिकारो परिपूरो असतासम्पजञ्ञं परिपूरेति, असतासम्पजञ्ञं परिपूरं इन्द्रियअसंवरं परिपूरेति, इन्द्रियअसंवरो परिपूरो तीणि दुच्चरितानि परिपूरेति, [R.114] तीणि दुच्चरितानि परिपूरानि पञ्च नीवरणे परिपूरेन्ति, पञ्च नीवरणा परिपूरेरा अविज्जं परिपूरेन्ति। एवमेतिस्सा अविज्जाय आहारो होति, एवं च पारिपूरि।

४. "सेय्यथापि, भिक्खवे, उपरिपब्बते थुल्लफुसितके देवे वस्सन्ते तं [B.347] उदकं यथानिन्नं पवत्तमानं पब्बतकन्दरपदरसाखा परिपूरेति, पब्बतकन्दरपदरसाखा परिपूरा कुसोब्भे परिपूरेन्ति, कुसोब्भा परिपूरा महासोब्भे परिपूरेन्ति, महासोब्भा परिपूरा कुन्नदियो परिपूरेन्ति, कुन्नदियो परिपूरा महानदियो परिपूरेन्ति, महानदियो परिपूरा महासमुद्दं सागरं परिपूरेन्ति; एवमेतस्स महासमुद्दस्स सागरस्स आहारो होति, एवं च पारिपूरि।

"एवमेव खो, भिक्खवे, असप्पुरिससंसेवो परिपूरो असद्धम्मस्सवनं परिपूरेति,

---

मनस्कार (अनुचित मन:सङ्कल्प) ही इनका आहार है। भिक्षुओ! इस अयोनिश: मनस्कार को भी मैं साहार ही कहता हूँ, अनाहार नहीं। इस अयोनिश: मनस्कार का क्या आहार है? अश्रद्धा ही इसका आहार है—ऐसा कहना चाहिये। भिक्षुओ! इस अश्रद्धा को भी मैं साहार ही कहता हूँ, अनाहार नहीं। इस अश्रद्धा का क्या आहार है? 'असद्धर्म का श्रवण' ही इसका आहार कहना चाहिये। भिक्षुओ! इस असद्धर्म के श्रवण को भी मैं साहार ही कहता हूँ, निराहार नहीं। इस असद्धर्मश्रवण का क्या आहार है? असत्पुरुषों की संगति के कारण ही मनुष्य सद्धर्मश्रवण में प्रवृत्त नहीं हो पाता।

३. "इस प्रकार, भिक्षुओ! यह बढ़ती हुई असत्पुरुष की सङ्गति असद्धर्मश्रवण को बढ़ाती है, असद्धर्मश्रवण बढ़ता हुआ अश्रद्धा को बढ़ाता है, बढ़ती हुई अश्रद्धा अयोनिश: मनस्कार को बढ़ाती है, अयोनिश: मनस्कार बढ़ता हुआ अस्मृति एवं असम्प्रजन्य को बढ़ाता है, अस्मृति एवं असम्प्रजन्य बढ़ते हुए इन्द्रियों के असंयम को बढ़ाते हैं, इन्द्रियों का असंयम बढ़ता हुआ तीन दुश्चरितों को बढ़ाता है, तीन दुश्चरित बढ़ते हुए पाँच नीवरणों को बढ़ाते हैं, पाँच नीवरण बढ़ते हुए अविद्या को बढ़ाते हैं।

४. "जैसे, भिक्षुओ! किसी पर्वत पर घनघोर वर्षा होने से वह जल नीचे की ओर आता हुआ सामने पड़ने वाली पर्वतों की कन्दराओं एवं रिक्त स्थानों को भरता है। वे जलपूर्ण पर्वतों की कन्दराएँ एवं रिक्त स्थान छाटे जलाशयों का भर देते हैं, वे भरे हुए जलाशय छोटी नदियों को...छोटी नदियाँ महानदियों को...तथा ये भरी हुई महानदियाँ महासमुद्र को जलपूर्ण कर देती हैं। इस प्रकार इस महासागर का आहार बनता रहता है और यह जल से भरा रहता है।

"इसी प्रकार, भिक्षुओ! असत्पुरुष की सङ्गति से असद्धर्मश्रवण बढ़ता है, यह असद्धर्म-

असद्धम्मस्सवनं परिपूरं अस्सद्धियं परिपूरेति, अस्सद्धियं परिपूरं अयोनिसो मनसिकारं परिपूरेति, अयोनिसो मनसिकारो परिपूरो असतासम्पजञ्ञं परिपूरेति, असतासम्पजञ्ञं परिपूरं इन्द्रियअसंवरं परिपूरेति, इन्द्रियअसंवरो परिपूरो तीणि दुच्चरितानि परिपूरेति, तीणि दुच्चरितानि परिपूरानि पञ्च नीवरणे परिपूरेन्ति, पञ्च नीवरणा परिपूरा अविज्जं परिपूरेन्ति; एवमेतिस्सा अविज्जाय आहारो होति; एवं च पारिपूरि॥

[N.191] ५. ''विज्जाविमुत्तिं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो विज्जाविमुत्तिया? 'सत्त बोज्झङ्गा' तिस्स वचनीयं। सत्त पाहं, भिक्खवे, बोज्झङ्गे साहारे वदामि, नो अनाहारे। को चाहारो सत्तन्नं बोज्झङ्गानं? 'चत्तारो सतिपट्ठाना' तिस्स वचनीयं। चत्तारो पाहं, भिक्खवे, सतिपट्ठाने साहारे वदामि, नो अनाहारे। को चाहारो चतुन्नं सतिपट्ठानानं? 'तीणि सुचरितानी' तिस्स वचनीयं। तीणि पाहं, भिक्खवे, सुचरितानि [R.115] साहारानि वदामि, नो अनाहारानि। को चाहारो तिण्णं सुचरितानं? 'इन्द्रियसंवरो' तिस्स वचनीयं। इन्द्रियसंवरं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो इन्द्रियसंवरस्स? 'सतिसम्पजञ्ञं' तिस्स वचनीयं। सतिसम्पजञ्ञं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो सतिसम्पजञ्ञस्स? 'योनिसो मनसिकारो' तिस्स वचनीयं। योनिसो मनसिकारं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो योनिसो मनसिकारस्स? 'सद्धा' तिस्स वचनीयं। सद्धं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो [B.348] अनाहारं। को चाहारो सद्धाय? 'सद्धम्मस्सवनं' तिस्स वचनीयं। सद्धम्मस्सवनं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि,नो अनाहारं। को चाहारो सद्धम्मस्सवनस्स? 'सप्पुरिस-संसेवो' तिस्स वचनीयं।

श्रवण ...पूर्ववत्... पाँच नीवरण अविद्या को बढ़ाते हैं। इस प्रकार इस अविद्या का आहार पूर्ण होने से उसकी पूर्ति भी होती रहती है॥ (क)

५. ''भिक्षुओ! मैं विद्याविमुक्ति को भी साहार ही कहता हूँ, अनाहार नहीं। इस विद्याविमुक्ति का आहार (उत्पादक कारण) क्या है? सात बोध्यङ्गों को ही इसका आहार कहना चाहिये। भिक्षुओ! इन सात बोध्यङ्गों को भी मैं साहार ही कहता हूँ, अनाहार नहीं। इन सात बोध्यङ्गों का क्या आहार है? चार स्मृतिप्रस्थान ही इनके आहार हैं। भिक्षुओ! मैं इन चार स्मृतिप्रस्थानों को भी साहार ही कहता हूँ, निराहार नहीं। इन स्मृतिप्रस्थानों का आहार क्या है? तीन सुचरित ही इनके आहार हैं। भिक्षुओ! इन तीन सुचरितों को भी मैं साहार ही कहता हूँ, निराहार नहीं। इन तीन सुचरितों का आहार क्या है? इन्द्रियसंयम ही इनका आहार है। भिक्षुओ! मैं इस इन्द्रियसंयम को भी साहार ही कहता हूँ, निराहार नहीं। इस इन्द्रियसंयम का आहार क्या है? स्मृतिसम्प्रजन्य इसका आहार है। भिक्षुओ! इस स्मृतिसम्प्रजन्य को भी मैं साहार ही कहता हूँ, अनाहार नहीं। इस स्मृतिसम्प्रजन्य का भी क्या आहार है? योनिशः मनस्कार इस स्मृतिसम्प्रजन्य का आहार है। भिक्षुओ! मैं इस योनिशः मनस्कार को भी साहार ही मानता हूँ, अनाहार नहीं। इस योनिशः मनस्कार का क्या आहार है? 'श्रद्धा' ही इसका आहार है। भिक्षुओ! मैं इस श्रद्धा को भी

६. ''इति खो, भिक्खवे, सप्पुरिससंसेवो परिपूरो सद्धम्मस्सवनं परिपूरेति, सद्धम्मस्सवनं परिपूरं सद्धं परिपूरेति, सद्धा परिपूरा योनिसो मनसिकारं परिपूरेति, योनिसो मनसिकारो परिपूरो सतिसम्पजञ्ञं परिपूरेति, सतिसम्पजञ्ञं परिपूरं इन्द्रियसंवरं परिपूरेति, इन्द्रियसंवरो परिपूरो तीणि सुचरितानि परिपूरेति, तीणि सुचरितानि परिपूरानि चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेन्ति, चत्तारो सतिपट्ठाना परिपूरा सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति, सत्त बोज्झङ्गा परिपूरा विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ति; एवमेतिस्सा विज्जाविमुत्तिया आहारो होति, एवं च पारिपूरि।

७. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, उपरिपब्बते थुल्लफुसितके देवे वस्सन्ते तं उदकं यथा-निन्नं पवत्तमानं पब्बतकन्दरपदरसाखा परिपूरेति, पब्बतकन्दरपदरसाखा परिपूरा कुसोब्भे परिपूरेन्ति, कुसोब्भा परिपूरा महासोब्भे परिपूरेन्ति, महासोब्भा परिपूरा कुन्नदियो परिपूरेन्ति, कुन्नदियो परिपूरा महानदियो परिपूरेन्ति, महानदियो परिपूरा महासमुद्दं [N.192,R.116] सागरं परिपूरेन्ति; एवमेतस्स महासमुद्दस्स सागरस्स आहारो होति, एवं च पारिपूरि।

''एवमेव खो, भिक्खवे, सप्पुरिससंसेवो परिपूरो सद्धम्मस्सवनं परिपूरेति, सद्धम्मस्सवनं परिपूरं सद्धं परिपूरेति, सद्धा परिपूरा योनिसो मनसिकारं परिपूरेति, योनिसो मनसिकारो परिपूरो सतिसम्पजञ्ञं परिपूरेति, सतिसम्पजञ्ञं परिपूरं इन्द्रियसंवरं परिपूरेति, इन्द्रियसंवरो परिपूरो तीणि सुचरितानि परिपूरेति, तीणि सुचरितानि परिपूरानि चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेन्ति, चत्तारो सतिपट्ठाना परिपूरा सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति, सत्त बोज्झङ्गा परिपूरा विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ति; एवमेतिस्सा विज्जाविमुत्तिया आहारो होति, एवं च पारिपूरी'' ति॥ ●

२. तण्हासुत्तं : १. ''पुरिमा, भिक्खवे, कोटि न पञ्ञायति भवतण्हाय—'इतो

साहार ही मानता हूँ, अनाहार नहीं। इस श्रद्धा का क्या आहार है? 'सद्धर्मश्रवण' इस श्रद्धा का आहार है। भिक्षुओ! मैं इस सद्धर्मश्रवण को भी साहार ही मानता हूँ, अनाहार नहीं। इस सद्धर्मश्रवण का क्या आहार है? सत्पुरुषों की सङ्गति ही इसका आहार है।

६. ''इस प्रकार भिक्षुओ! सत्पुरुषों की सङ्गति बढ़ती हुई सद्धर्मश्रवण को बढ़ाती है, सद्धर्मश्रवण बढ़ता हुआ श्रद्धा को बढ़ता है, श्रद्धा बढ़ती हुई योनिशः मनस्कार को बढ़ाती है, योनिशः मनस्कार बढ़ता हुआ स्मृतिसम्प्रजन्य को बढ़ाता है, स्मृतिसम्प्रजन्य बढ़ता हुआ इन्द्रिय-संयम को बढ़ाता है, इन्द्रियसंयम बढ़ता हुआ तीन सुचरितों को बढ़ाता है, तीन सुचरित बढ़ते हुए चार स्मृतिप्रस्थानों को बढ़ाते हैं, चार स्मृतिप्रस्थान बढ़ते हुए सात बोध्यङ्गों को बढ़ाते हैं, सात बोध्यङ्ग बढ़ते हुए विद्याविमुक्ति को बढ़ाते हैं। इस प्रकार विद्याविमुक्ति का यह आहार होता है तथा इसकी वृद्धि होती है।

७. ''जैसे, भिक्षुओ! किसी पर्वत पर घनघोर वर्षा होने पर ...पूर्ववत्... इस महासागर का आहार बनता रहता है और वह जल से भरा रहता है।

पुब्बे भवतण्हा नाहोसि, अथ पच्छा सम्भवी' ति। एवञ्चेतं, भिक्खवे, वुच्चति, अथ च पन पञ्ञायति—'इदप्पच्चया भवतण्हा' ति।

[B.349] २. ''भवतण्हं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो भवतण्हाय? 'अविज्जा' तिस्स वचनीयं। अविज्जं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो अविज्जाय? 'पञ्च नीवरणा' तिस्स वचनीयं। पञ्च नीवरणे पाहं, भिक्खवे, साहारे वदामि, नो अनाहारे। को चाहारो पञ्चन्नं नीवरणानं? 'तीणि दुच्चरितानी' तिस्स वचनीयं। तीणि पाहं, भिक्खवे, दुच्चरितानि साहारानि वदामि, नो अनाहारानि। को चाहारो तिण्णन्नं दुच्चरितानं? 'इन्द्रियअसंवरो' तिस्स वचनीयं। इन्द्रियअसंवरं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो इन्द्रियअसंवरस्स? 'असतासम्पजञ्ञं' [R.117] तिस्स वचनीयं। असतासम्पजञ्ञं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो असतासम्पजञ्ञस्स? 'अयोनिसो मनसिकारो' तिस्स वचनीयं। अयोनिसो [N.193] मनसिकारं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहरो अयोनिसो मनसिकारस्स? 'अस्सद्धियं' तिस्स वचनीयं। अस्सद्धियं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो अस्सद्धियस्स? 'अस्सद्धम्मस्सवनं' तिस्स वचनीयं। अस्सद्धम्म-स्सवनं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो अस्सद्धम्मस्सवनस्स? 'असप्पुरिससंसेवो' तिस्स वचनीयं।

३. ''इति खो, भिक्खवे, असप्पुरिससंसेवो परिपूरो अस्सद्धम्मस्सवनं परिपूरेति, अस्सद्धम्मस्सवनं परिपूरं अस्सद्धियं परिपूरेति, अस्सद्धियं परिपूरं अयोनिसो मनसिकारं परिपूरेति, अयोनिसो मनसिकारो परिपूरो असतासम्पजञ्ञं परिपूरेति, असतासम्पजञ्ञं परिपूरं इन्द्रियअसवरं परिपूरेति, इन्द्रियअसंवरो परिपूरो तीणि दुच्चरितानि परिपूरेति, तीणि दुच्चरितानि परिपूरानि पञ्च नीवरणे परिपूरेन्ति, पञ्च नीवरणा परिपूरा अविज्जं परिपूरेन्ति, अविज्जा परिपूरा भवतण्हं परिपूरेति; एवमेतिस्सा भवतण्हाय आहारो होति, एवं च पारिपूरि।

४. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, उपरिपब्बते थुल्लफुसितके देवे वस्सन्ते तं उदकं

''उसी प्रकार, भिक्षुओ! सत्पुरुषों की सङ्गति बढ़ती हुई सद्धर्मश्रवण को बढ़ाती है ... पूर्ववत्... इस प्रकार विद्याविमुक्ति का आहार होता है और उसकी वृद्धि भी होती है।'' (ख)●

२. तृष्णासूत्र : : तृष्णा एवं तृष्णाविमुक्ति का आहार

१. ''भिक्षुओ! भवतृष्णा के उत्पत्तिकाल का ऐसा सीमानिर्धारण नहीं हो पाया है—'इससे पूर्व भवतृष्णा नहीं थी या इसके बाद ही भवतृष्णा उत्पन्न हुई है'। अत: भवतृष्णाविषयक विचार ऐसे आरम्भ किया जाता है—'इसके कारण भवतृष्णा उत्पन्न हुई है।'

२. ''भिक्षुओ! भवतृष्णा को भी मैं साहार ही घोषित करता हूँ, अनाहार नहीं। इस भवतृष्णा का कौन आहार (उत्पादक कारण) है? 'अविद्या' को ही इसका मूल कारण मानना चाहिये।

यथानिन्नं पवत्तमानं पब्बतकन्दरपदरसाखा परिपूरेति, पब्बतकन्दरपदरसाखा परिपूरा कुसोब्भे परिपूरेन्ति, कुसोब्भा परिपूरा महासोब्भे परिपूरेन्ति, महासोब्भा परिपूरा कुन्नदियो [B.350] परिपूरेन्ति, कुन्नदियो परिपूरा महानदियो परिपूरेन्ति, महानदियो परिपूरा महासमुद्दं सागरं परिपूरेन्ति; एवमेतस्स महासमुद्दस्स सागरस्स आहारो होति, एवं च पारिपूरि।

''एवमेव खो, भिक्खवे, असप्पुरिससंसेवो परिपूरो अस्सद्धम्मस्सवनं परिपूरेति, अस्सद्धम्मस्सवनं परिपूरं अस्सद्धियं परिपूरेति, अस्सद्धियं परिपूरं अयोनिसो मनसिकारं परिपूरेति, अयोनिसो मनसिकारो परिपूरो असतासम्पजञ्ञं परिपूरेति, असता-[R.118] सम्पजञ्ञं परिपूरं इन्द्रियअसंवरं परिपूरेति, इन्द्रियअसंवरो परिपूरो तीणि दुच्चरितानि परिपूरेति, तीणि दुच्चरितानि परिपूरानि पञ्च नीवरणे परिपूरेन्ति, पञ्च नीवरणा परिपूरा अविज्जं परिपूरेन्ति, अविज्जा परिपूरा भवतण्हं परिपूरेति; एवमेतिस्सा भवतण्हाय आहारो होति, एवं च पारिपूरि।

५. ''विज्जाविमुत्तिं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो विज्जाविमुत्तिया? 'सत्त बोज्झङ्गा' तिस्स वचनीयं। सत्त पाहं, भिक्खवे, बोज्झङ्गे [N.194] साहारे वदामि, नो अनाहारे। को चाहारो सत्तन्नं बोज्झङ्गानं? 'चत्तारो सतिपट्ठाना' तिस्स वचनीयं। चत्तारो पाहं, भिक्खवे, सतिपट्ठाने साहारे वदामि, नो अनाहारे। को चाहारो चतुन्नं सतिपट्ठानानं? 'तीणि सुचरितानी' तिस्स वचनीयं। तीणि पाहं, भिक्खवे, सुचरितानि साहारानि वदामि, नो अनाहारानि। को चाहारो तिण्णन्नं सुचरितानं? 'इन्द्रियसंवरो' तिस्स वचनीयं। इन्द्रियसंवरं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो इन्द्रियसंवरस्स? 'सतिसम्पजञ्ञं' तिस्स वचनीयं। सतिसम्पजञ्ञं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो सतिसम्पजञ्ञस्स? 'योनिसो मनसिकारो' तिस्स वचनीयं। योनिसो मनसिकारं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो योनिसो मनसिकारस्स? 'सद्धा' तिस्स वचनीयं। सद्धं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो सद्धाय? 'सद्धम्मस्सवनं' तिस्स वचनीयं। सद्धम्मस्सवनं पाहं, भिक्खवे, साहारं वदामि, नो अनाहारं। को चाहारो सद्धम्मस्सवनस्स? 'सप्पुरिससंसेवो' तिस्स वचनीयं।

६. ''इति खो, भिक्खवे, सप्पुरिससंसेवो परिपूरो सद्धम्मस्सवनं परिपूरेति, सद्धम्मस्सवनं परिपूरं सद्धं परिपूरेति, सद्धा परिपूरा योनिसो मनसिकारं परिपूरेति, योनिसो मनसिकारो परिपूरो सतिसम्पजञ्ञं परिपूरेति, सतिसम्पजञ्ञं परिपूरं इन्द्रियसंवरं परिपूरेति, इन्द्रियसंवरो परिपूरो तीणि सुचरितानि परिपूरेति, तीणि सुचरितानि परिपूरानि [B.351]

भिक्षुओ! मैं इस अविद्या को भी साहार ही मानता हूँ, अनाहार नहीं। अविद्या का आहार हैं—पाँच नीवरण...पूर्वसूत्रवत्... ॥''

[इससे आगे इस समस्त सूत्र का विस्तार पूर्ववर्णित ***अविद्यासूत्र*** *के समान ही है।]*

चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेन्ति, चत्तारो सतिपट्ठाना परिपूरा सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति, सत्त [R.119] बोज्झङ्गा परिपूरा विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ति; एवमेतिस्सा विज्जाविमुत्तिया आहारो होति, एवं च पारिपूरि।

७. "सेय्यथापि, भिक्खवे, उपरिपब्बते थुल्लफुसितके देवे वस्सन्ते तं उदकं यथानिन्नं पवत्तमानं ...पे०... एवमेतस्स महासमुद्दस्स सागरस्स आहारो होति, एवं च पारिपूरि। एवमेव खो, भिक्खवे, सप्पुरिससंसेवो परिपूरो सद्धम्मस्सवनं परिपूरेति ...पे०... एवमेतिस्सा विज्जाविमुत्तिया आहारो होति, एवं च पारिपूरी" ति॥ ●

[N.195] **३. निट्ठङ्गतसुत्तं :** १. "ये केचि, भिक्खवे, मयि निट्ठं गता सब्बे ते दिट्ठिसम्पन्ना। तेसं दिट्ठिसम्पन्नानं पञ्चन्नं इध निट्ठा, पञ्चन्नं इध विहाय निट्ठा। कतमेसं पञ्चन्नं इध निट्ठा? सत्तक्खत्तुपरमस्स, कोलङ्कोलस्स, एकवीजिस्स, सकदागामिस्स, यो च दिट्ठेव धम्मे [R.120] अरहा—इमेसं पञ्चन्नं इध निट्ठा। कतमेसं पञ्चन्नं इध विहाय निट्ठा? अन्तरापरिनिब्बायिस्स, उपहच्चपरिनिब्बायिस्स, असङ्खारपरिनिब्बायिस्स, ससङ्खारपरिनिब्बायिस्स, उद्धंसोतस्स अकनिट्ठगामिनो—इमेसं पञ्चन्नं इध विहाय निट्ठा। ये केचि, भिक्खवे, मयि निट्ठं गता, सब्बे ते दिट्ठिसम्पन्ना। तेसं दिट्ठिसम्पन्नानं इमेसं पञ्चन्नं इध निट्ठा, इमेसं पञ्चन्नं इध विहाय निट्ठा" ति॥ ●

४. अवेच्चप्पसन्नसुत्तं : १. "ये केचि, भिक्खवे, मयि अवेच्चप्पसन्ना, सब्बे ते सोतापन्ना। तेसं सोतापन्नानं पञ्चन्नं इध निट्ठा, पञ्चन्नं इध विहाय निट्ठा। कतमेसं पञ्चन्नं इध निट्ठा? सत्तक्खत्तुपरमस्स, कोलङ्कोलस्स, एकवीजिस्स, सकदागामिस्स, यो च दिट्ठेव धम्मे अरहा—इमेसं पञ्चन्नं इध निट्ठा। कतमेसं पञ्चन्नं इध विहाय निट्ठा? अन्तरापरिनिब्बायिस्स, उपहच्चपरिनिब्बायिस्स, असङ्खारपरिनिब्बायिस्स, ससङ्खारपरिनिब्बायिस्स, उद्धंसोतस्स अकनिट्ठगामिनो—इमेसं पञ्चन्नं इध विहाय निट्ठा। ये केचि, भिक्खवे, मयि अवेच्चप्पसन्ना

---

३. निष्ठागतसूत्र :: दशविध साधकों की निष्ठा

१. भिक्षुओ! जिन (साधकों) की मुझमें निष्ठा (श्रद्धा, विश्वास) है वे सभी सम्यग्दृष्टिसम्पन्न हैं। उन दृष्टिसम्पन्नों में पाँच की यहाँ निष्ठा है तथा शेष पाँच की यहाँ से अतिरिक्त निष्ठा है। किन पाँच की? (१) सात जन्म तक यहाँ उत्पन्न होने वाले की, (२) एक कुल से दूसरे कुल में जन्म लेने वाले की, (३) एकबीजी (एक ही बार जन्म लेने वाले) की, (४) सकृदागामी की तथा (५) जो इसी जन्म में अर्हत्त्व प्राप्त कर चुका हो—इन पाँचों की यहाँ ही निष्ठा है। किन पाँच की यहाँ से अतिरिक्त निष्ठा है? (१) अन्तरापरिनिर्वायी की, (२) उपहत्यपरिनिर्वायी की, (३) असंस्कार-परिनिर्वायी की, (४) ससंस्कारपरिनिर्वायी की तथा (५) उर्ध्वस्रोता अकनिष्ठगामी की—इन पाँचों की यहाँ से अतिरिक्त निष्ठा है। भिक्षुओ! जितने भी साधक मुझमें निष्ठासम्पन्न हैं वे सभी दृष्टिसम्पन्न हैं। उन दृष्टिसम्पन्नों में इन पाँच की यहाँ ही निष्ठा है तथा इन पाँच की यहाँ से अतिरिक्त निष्ठा है।॥●

४. अवेत्यप्रसन्नसूत्र :: श्रद्धालु साधकों की दशविध निष्ठा

१. भिक्षुओ! जितने भी साधक मेरे प्रति श्रद्धालु हैं वे सभी स्रोतआपन्न हैं। उनमें से पाँच स्रोत

सब्बे ते सोतापन्ना। तेसं सोतापन्नानं इमेसं पञ्चन्नं इध निट्ठा, इमेसं पञ्चन्नं इध विहाय [B.352] निट्ठा'' ति॥ ●

५. पठमसुखसुत्तं : १. एकं समयं आयस्मा सारिपुत्तो मगधेसु विहरति नालकगामके। अथ खो सामण्डकानि परिब्बाजको येनायस्मा सारिपुत्तो तेनुप- [R.121] सङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मता सारिपुत्तेन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सामण्डकानि परिब्बाजको आयस्मन्तं सारिपुत्तं एतदवोच—

२. ''किं नु खो, आवुसो सारिपुत्त, सुखं, किं दुक्खं'' ति? [N.196]

''अभिनिब्बत्ति खो, आवुसो, दुक्खा, अनभिनिब्बत्ति सुखा। अभिनिब्बत्तिया, आवुसो, सति इदं दुक्खं पाटिकङ्खं—सीतं उण्हं जिघच्छा पिपासा उच्चारो पस्सावो अग्गिसम्फस्सो दण्डसम्फस्सो सत्थसम्फस्सो ञाती पि मित्ता पि सङ्गम्म समागम्म रोसेन्ति। अभिनिब्बत्तिया, आवुसो, सति इदं दुक्खं पाटिकङ्खं। अनभिनिब्बत्तिया, आवुसो, सति इदं सुखं पाटिकङ्खं—न सीतं न उण्हं न जिघच्छा न पिपासा न उच्चारो न पस्सावो न अग्गिसम्फस्सो न दण्डसम्फस्सो न सत्थसम्फस्सो ञाती पि मित्ता पि सङ्गम्म समागम्म न रोसेन्ति। अनभिनिब्बत्तिया, आवुसो, सति इदं सुखं पाटिकङ्खं'' ति॥ ●

६. दुतियसुखसुत्तं : १. एकं समयं आयस्मा सारिपुत्तो मगधेसु विहरति नालकगामके। अथ खो सामण्डकानि परिब्बाजको येनायस्मा सारिपुत्तो तेनुपसङ्कमि;

आपन्नों की मुझमें निष्ठा तथा पाँच की यहाँ से अतिरिक्त। किन पाँच की यहाँ निष्ठा है? सात जन्म तक...पूर्वसूत्रवत्... ॥'' ●

५. प्रथम सुखसूत्र : : अभिनिर्वृत्ति एवं अनभिनिर्वृत्ति में दश दुःख-सुख

१. एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र मगध के नालकग्राम में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब कोई सामण्डकानि नामक परिव्राजक आयुष्मान् सारिपुत्र के पास आये। आकर उसने आयुष्मान् सारिपुत्र से कुशल-प्रश्नानन्तर यह पूछा—

२. ''आयुष्मन् सारिपुत्र! सुख क्या है? और दुःख क्या है?''

''आयुष्मन्! जन्म ग्रहण करना दुःख है, तथा जन्म न ग्रहण करना सुख। आयुष्मन्! जन्म ग्रहण के बाद इन दुःखों की सम्भावनाएँ रहती हैं—शीत, उष्ण, भूख, प्यास, मल-मूत्र का त्याग, अग्नि का लगना, कहीं किसी कारण दण्डित होना, शस्त्र का आघात, सम्बन्धिजन एवं मित्रगणों की क्रियाओं से क्रोध। और आयुष्मन्! जन्म न ग्रहण करने के ये सुख हैं—न शीत,न उष्ण, न भूख, न प्यास, न मल-मूत्र का त्याग, न अग्नि-दण्ड-शस्त्र आदि के आघात का भय, न सम्बन्धिजनों एवं मित्रों की क्रियाओं से रोष। जन्म न ग्रहण करने से, आयुष्मन्! इन सुखों की सम्भावना है॥'' ●

६. द्वितीय सुखसूत्र : : धर्मविनय में दश दुःख एवं सुख

१. ...पूर्ववत्...आयुष्मान् सारिपुत्र से सामण्डकानि परिव्राजक ने यह पूछा—''आयुष्मन् सारिपुत्र! इस धर्मविनय में सुख क्या है और दुःख क्या है?'

उपसङ्कमित्वा आयस्मता सारिपुत्तेन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा [R.122] एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सामण्डकानि परिब्बाजको आयस्मन्तं सारिपुत्तं एतदवोच—

२. "किं नु खो, आवुसो सारिपुत्त, इमस्मिं धम्मविनये सुखं, किं दुक्खं" ति?

"अनभिरति, खो, आवुसो, इमस्मिं धम्मविनये दुक्खा, अभिरति सुखा। अनभिरतिया, आवुसो, सति इदं दुक्खं पाटिकङ्खं—गच्छन्तो पि सुखं सातं नाधिगच्छति, [B.353] ठितो पि... निसिन्नो पि... सयानो पि... गामगतो पि... अरञ्ञगतो पि... रुक्खमूलगतो पि... सुञ्ञागारगतो पि... अब्भोकासगतो पि... भिक्खुमज्झगतो पि सुखं सातं नाधिगच्छति। अनभिरतिया, आवुसो, सति इदं दुक्खं पाटिकङ्खं।

३. "अभिरतिया, आवुसो, सति इदं सुखं पाटिकङ्खं—गच्छन्तो पि सुखं सातं अधिगच्छति, ठितो पि .. निसिन्नो पि... सयानो पि... गामगतो पि... अरञ्ञगतो पि... रुक्खमूलगतो पि... सुञ्ञागारगतो पि... अब्भोकासगतो पि... भिक्खुमज्झगतो पि सुखं सातं अधिगच्छति। अभिरतिया, आवुसो, सति इदं सुखं पाटिकङ्खं" ति॥ ●

७. पठमनळकपानसुत्तं : १. एकं समयं भगवा कोसलेसु चारिकं चरमानो महता [N.197] भिक्खुसङ्घेन सद्धिं येन नळकपानं नाम कोसलानं निगमो तदवसरि। तत्र सुदं भगवा नळकपाने विहरति पलासवने। तेन खो पन समयेन भगवा तदहुपोसथे भिक्खुसङ्घपरिवुत्तो निसिन्नो होति। अथ खो भगवा बहुदेव रत्तिं भिक्खूनं धम्मिया कथाय

"इस धर्मविनय में अनभिरति (अरुचि) होना, आयुष्मन्! दुःख है, तथा; इस धर्मविनय में अभिरति होना ही सुख है। इस धर्मविनय में अनभिरति से इन दुःखों की सम्भावना है—वह चलता हुआ भी सुख एवं अनुकूलता का अनुभव नहीं करता, खड़ा हुआ भी...बैठा हुआ भी...सोता हुआ भी...ग्राम गया हुआ भी...अरण्य में गया हुआ भी...वृक्ष की छाया में बैठा हुआ भी...शून्यागार में गया हुआ भी...खुले मैदान में भी...भिक्षुओं के बीच में भी सुख एवं मनोनुकूलता अनुभव नहीं करता। आयुष्मन्! धर्मविनय में अनभिरति होने पर ऐसे ही दुःखों की सम्भावना रहती है।

"और, आयुष्मन्! इस धर्मविनय में अभिरति (रुचि) होना सुख है। तब यह सम्भावना की जा सकती है—वह चलता हुआ भी...खड़ा हुआ भी...बैठा हुआ भी...सोता हुआ भी...ग्राम गया हुआ भी...अरण्य में गया भी...वृक्ष की छाया में बैठा हुआ भी...एकान्त स्थान में गया हुआ भी...खुले मैदान में तथा भिक्षुओं के बीच में बैठा हुआ भी सुख एवं मनोनुकूलता ही अनुभव करता है। धर्मविनय में अभिरति के कारण, आयुष्मन्! इस सुख की सम्भावना है॥" ●

७. प्रथमनड़कपानसूत्र : : अश्रद्धालु के कुशल धर्मों की हानि

१. एक समय भगवान् कोशल देश में चारिका करते हुए विशाल भिक्षुसङ्घ के साथ कोशलवासियों के नलकपान नामक किसी निगम में पहुँचे। वहाँ भगवान् नलकपान के पलासवन में साधनाहेतु विराजे। वहाँ भगवान् उसी उपोसथ के दिन भिक्षुसङ्घ से परिवृत (घिरे हुए) विराजमान थे। भगवान् ने रात्रि में बहुत काल तक धार्मिक कथा से भिक्षुओं को सन्तुष्ट एवं

सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा सम्पहंसेत्वा तुण्हीभूतं भिक्खुसङ्घं अनुविलोकेत्वा आयस्मन्तं सारिपुत्तं आमन्तेसि—

२. ''विगतथीनमिद्धो खो, सारिपुत्त, भिक्खुसङ्घो। पटिभातु तं, सारिपुत्त, भिक्खूनं धम्मी कथा। पिट्ठि मे आगिलायति; तमहं आयमिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति [R.123] खो आयस्मा सारिपुत्तो भगवतो पच्चस्सोसि।

३. अथ खो भगवा चतुग्गुणं सङ्घाटिं पञ्ञापेत्वा दक्खिणेन पस्सेन सीहसेय्यं कप्पेसि पादे पादं अच्चाधाय सतो सम्पजानो उट्ठानसञ्ञं मनसि करित्वा। तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि—''आवुसो भिक्खवे'' ति। ''आवुसो'' ति खो ते भिक्खू आयस्मतो सारिपुत्तस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—

४. ''यस्स कस्सचि, आवुसो, सद्धा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, हिरी नत्थि... [B.354] ओत्तप्पं नत्थि... विरियं नत्थि... पञ्ञा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो वुद्धि। सेय्यथापि, आवुसो, काळपक्खे चन्दस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हायतेव वण्णेन हायति मण्डलेन हायति आभाय हायति आरोहपरिणाहेन; एवमेव खो, आवुसो, यस्स कस्सचि सद्धा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, हिरी नत्थि... ओत्तप्पं नत्थि... विरियं नत्थि... पञ्ञा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो वुद्धि।

५. '''अस्सद्धो पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, परिहानमेतं; 'अहिरिको पुरिस-

---

समुत्तेजित तथा सम्प्रहृष्ट करते हुए भिक्षुसङ्घ को चुपचाप एवं शान्त देखकर आयुष्मान् सारिपुत्र को यह आदेश दिया—

२. ''सारिपुत्र! इस समय भिक्षुसङ्घ आलस्यरहित दिखायी देता है, अतः अब तुम इनको धार्मिक कथा सुनाओ। मेरी पीठ दुःख रही है, अतः मैं विश्राम करूँगा।''

''अच्छा, भन्ते'' कहकर आयुष्मान् सारिपुत्र ने भगवान् का आदेश स्वीकार किया।

३. तब भगवान् अपनी सङ्घाटि को चतुर्गुण करके बिछाकर दक्षिण पार्श्व से सिंहशय्या आसन से पैर पर पैर रखकर स्मृति एवं सम्प्रजन्य के साथ उत्थानसंज्ञा की भावना चित्त में करते हुए लेट गये। तब आयुष्मान् सारिपुत्र ने ''आयुष्मन् भिक्षुओ!'' सम्बोधन वाक्य से भिक्षुओं को सम्बोधित किया। भिक्षुओं ने भी ''हाँ, आयुष्मन्!'' कहकर आयुष्मान् सारिपुत्र को उत्तर दिया। आयुष्मान् सारिपुत्र ने यह कहा—

४. ''आयुष्मानो! जिस किसी की कुशल धर्मों में श्रद्धा नहीं है, लज्जा नहीं है...पापभीरुता नहीं है...वीर्य नहीं है...कुशल धर्मों में प्रज्ञा नहीं है, उसकी सामने आने वाली रात्रि या दिन में कुशल धर्मों की हानि ही सम्भावित है, वृद्धि नहीं। आयुष्मानो! जैसे कृष्णपक्ष का चन्द्रमा आगे आने वाली रात्रि या दिन में वर्ण से, मण्डल से, आभा से एवं आरोह-परिणाह से क्षीण ही होता चला जाता है, उसी प्रकार जिस किसी की श्रद्धा कुशल धर्मों में नहीं है...लज्जा नहीं है...प्रज्ञा नहीं है उसकी ...पूर्ववत्... वृद्धि नहीं।

[N.198] पुग्गलो' ति, आवुसो, परिहानमेतं; 'अनोत्तप्पी पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, परिहानमेतं; 'कुसीतो पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, परिहानमेतं; 'दुप्पञ्ञो पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, परिहानमेतं; 'कोधनो पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, परिहानमेतं; 'उपनाही पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, परिहानमेतं; 'पापिच्छो पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, परिहानमेतं; 'पापमित्तो पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, परिहानमेतं; 'मिच्छादिट्ठिको पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, परिहानमेतं।

६. "यस्स कस्सचि, आवुसो, सद्धा अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, हिरी अत्थि... [R.124] ओत्तप्पं अत्थि... विरियं अत्थि... पञ्ञा अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो परिहानि। सेय्यथापि, आवुसो, जुण्हपक्खे चन्दस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वड्ढतेव वण्णेन वड्ढति मण्डलेन वड्ढति आभाय वड्ढति आरोहपरिणाहेन; एवमेव खो, आवुसो, यस्स कस्सचि सद्धा अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, हिरी अत्थि... ओत्तप्पं अत्थि... विरियं अत्थि... पञ्ञा अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो परिहानि।

[B.355] ७. "'सद्धो पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, अपरिहानमेतं; 'हिरीमा पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, अपरिहानमेतं; 'ओत्तप्पी पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, अपरिहानमेतं; 'आरद्धविरियो पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, अपरिहानमेतं; 'पञ्ञवा पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, अपरिहानमेतं; 'अक्कोधनो पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, अपरिहानमेतं; 'अप्पिच्छो पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, अपरिहानमेतं; 'कल्याणमित्तो पुरिसपुग्गलो' ति, आवुसो, अपरिहानमेतं; 'सम्मादिट्ठिको पुरिसपुग्गलो' ति आवुसो, अपरिहानमेतं" ति।

---

५. "आयुष्मानो ! कोई पुरुष यदि अश्रद्धालु है, तो यह उसकी हानि ही है; अह्रीक है तो यह भी उसकी हानि ही है, कोई पुरुष पापभीरु नहीं है—यह उसकी हानि ही है। आलसी है...दुष्प्रज्ञ है...क्रोधी है...उपनाही है...पापेच्छु है...पापमित्र है...मिथ्यादृष्टिक है—यह उसकी हानि ही है। (क)

६. (इसके विपरीत) आयुष्मानो ! जिसकी कुशल धर्मों में श्रद्धा है, लज्जा है...पापभीरुता है...वीर्य है...कुशल धर्मों में प्रज्ञा है उसकी आगे आने वाली रात्रि या दिन में कुशलधर्मों की वृद्धि ही सम्भावित है, हानि नहीं। जैसे, आयुष्मानो ! शुक्ल पक्ष का चन्द्रमा आगे आने वाली रात्रि या दिन में वर्ण से, मण्डल की आभा से, आरोह-परिणाह से बढ़ता ही है; इसी तरह, आयुष्मानो ! जिस किसी की कुशल धर्मों में श्रद्धा है, लज्जा है...पूर्ववत्...वृद्धि ही सम्भावित है, हानि नहीं।

७. "यह श्रद्धालु पुरुष है'—ऐसा जनप्रवाद उसके लिये हानिकर नहीं; यह लज्जावान् पुरुष है'—यह जनप्रवाद उसके लिये हानिकर नहीं; 'यह पापभीरु है'...'यह आरब्धवीर्य है...' 'यह प्रज्ञावान् है...' 'यह...अक्रोधी है....' 'यह अनुपनाही है...' 'यह अल्पेच्छ है...' 'यह कल्याणमित्र है...' 'यह सम्यग्दृष्टि है'—आयुष्मानो ! ऐसा जनप्रवाद उस पुरुष के लिये हानिकर नहीं।" (ख)

८. अथ खो भगवा पच्चुट्ठाय आयस्मन्तं सारिपुत्तं आमन्तेसि—"साधु साधु, सारिपुत्त! यस्स कस्सचि, सारिपुत्त, सद्धा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, हिरी नत्थि... ओत्तप्पं नत्थि... विरियं नत्थि... पञ्ञा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो वुद्धि। सेय्यथापि, सारिपुत्त, काळपक्खे चन्दस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हायतेव वण्णेन हायति मण्डलेन हायति आभाय हायति आरोहपरिणाहेन; एवमेव खो, सारिपुत्त, यस्स कस्सचि सद्धा नत्थि [N.199] कुसलेसु धम्मेसु ...पे०... पञ्ञा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो [R.125] वा ...पे०... नो वुद्धि।

९. "'अस्सद्धो पुरिसपुग्गलो' ति, सारिपुत्त, परिहानमेतं; अहिरिको... अनोत्तप्पी ...कुसीतो... दुप्पञ्ञो... कोधनो... उपनाही... पापिच्छो... पापमित्तो... 'मिच्छादिट्ठिको पुरिसपुग्गलो' ति, सारिपुत्त, परिहानमेतं।

१०. "यस्स कस्सचि, सारिपुत्त, सद्धा कुसलेसु धम्मेसु, हिरी अत्थि ओत्तप्पं अत्थि... विरियं अत्थि... पञ्ञा अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु नो परिहानि। सेय्यथापि, सारिपुत्त, जुण्हपक्खे चन्दस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वड्ढतेव वण्णेन वड्ढति मण्डलेन वड्ढति आभाय वड्ढति आरोहपरिणाहेन; एवमेव खो, सारिपुत्त, यस्स कस्सचि सद्धा अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, हिरी अत्थि... ओत्तप्पं अत्थि... विरियं अत्थि... पञ्ञा अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो परिहानि।

११. "'सद्धो पुरिसपुग्गलो' ति, सारिपुत्त, अपरिहानमेतं; हिरीमा... [B.356] ओत्तप्पी... आरद्धविरियो...पञ्ञवा...अक्कोधनो...अनुपनाही...अप्पिच्छो...कल्याणमित्तो... 'सम्मादिट्ठिको पुरिसपुग्गलो' ति, सारिपुत्त, अपरिहानमेतं" ति॥ ●

८. दुतियनळकपानसुत्तं : १. एकं समयं भगवा नळकपाने विहरति पलासवने। तेन खो पन समयेन भगवा तदहुपोसथे भिक्खुसङ्घपरिवुतो निसिन्नो होति। अथ खो भगवा बहुदेव रत्तिं भिक्खूनं धम्मिया कथाय सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा सम्पहंसेत्वा तुण्हीभूतं तुण्हीभूतं भिक्खुसङ्घं अनुविलोकेत्वा आयस्मन्तं सारिपुत्तं आमन्तेसि—

२. "विगतथीनमिद्धो खो, सारिपुत्त, भिक्खुसङ्घो। पटिभातु तं, सारिपुत्त, भिक्खूनं

---

८. तब भगवान् ने सिंहशय्या से उठकर आयुष्मान् सारिपुत्र को साधुवाद दिया और कहा— "साधु, सारिपुत्र! साधु; जिस किसी पुरुष की कुशलधर्मों में श्रद्धा नहीं है...पूर्ववत्...उस पुरुष के लिये हानिकर नहीं॥" ●

[९-१०-११ अनुबन्धों के लिये अनुपद में वर्णित सम्बद्ध सारिपुत्रवचन को ही दुहरा लें।]

८. द्वितीयनडकपानसूत्र : :

१, २, ३...पूर्ववत्...आयुष्मान् सारिपुत्र ने यह कहा—

[R.126] धम्मी कथा। पिट्ठि मे आगिलायति; तमहं आयमिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो आयस्मा सारिपुत्तो भगवतो पच्चस्सोसि।

[N.200] ३. अथ खो भगवा चतुग्गुणं सङ्घाटिं पञ्ञापेत्वा दक्खिणेन पस्सेन सीहसेय्यं कप्पेसि पादे पादं अच्चाधाय सतो सम्पजानो उट्ठानसञ्ञं मनसि करित्वा। तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि—''आवुसो, भिक्खवे'' ति! ''आवुसो'' ति खो ते भिक्खू आयस्मतो सारिपुत्तस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—

४. ''यस्स कस्सचि, आवुसो, सद्धा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, हिरी नत्थि... ओत्तप्पं नत्थि... विरियं नत्थि... पञ्ञा नत्थि... सोतावधानं नत्थि... धम्मधारणा नत्थि... अत्थूपपरिक्खा नत्थि... धम्मानुधम्मप्पटिपत्ति नत्थि... अप्पमादो नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो वुद्धि। सेय्यथापि, आवुसो, काळपक्खे चन्दस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हायतेव वण्णेन हायति मण्डलेन हायति आभाय हायति आरोहपरिणाहेन; एवमेव खो, आवुसो, यस्स कस्सचि सद्धा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, हिरी नत्थि... ओत्तप्पं नत्थि... विरियं नत्थि... पञ्ञा नत्थि... [B.357] सोतावधानं नत्थि...धम्मधारणा नत्थि...अत्थूपपरिक्खा नत्थि... धम्मानुधम्मप्पटिपत्ति नत्थि... अप्पमादो नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो वुद्धि।

५. ''यस्स कस्सचि, आवुसो, सद्धा अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, हिरी अत्थि... ओत्तप्पं अत्थि... विरियं अत्थि... पञ्ञा अत्थि... सोतावधानं अत्थि... धम्मधारणा अत्थि... अत्थूपपरिक्खा अत्थि... धम्मानुधम्मप्पटिपत्ति अत्थि... अप्पमादो अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, [R.127] तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो परिहानि। सेय्यथापि, आवुसो, जुण्हपक्खे चन्दस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वड्ढतेव वण्णेन वड्ढति मण्डलेन वड्ढति आभाय वड्ढति आरोहपरिणाहेन; एवमेव खो, आवुसो, यस्स कस्सचि सद्धा अत्थि कुसलेसु धम्मेसु ...पे०... अप्पमादो अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो परिहानी'' ति।

[N.201] ६. अथ खो भगवा पच्चुट्ठाय आयस्मन्तं सारिपुत्तं आमन्तेसि—''साधु साधु,

---

४. ''आयुष्मानो! जिस किसी की भी कुशलधर्मों में श्रद्धा नहीं है...प्रज्ञा नहीं है...धर्मश्रवण में सावधानी नहीं है...धर्मधारणा नहीं है...अर्थपरीक्षण नहीं है...धर्मानुसार धर्मज्ञान नहीं है...कुशलधर्मों में अप्रमाद नहीं है उसके कुशलधर्मों की, आगे आने वाली रात्रियों या दिनों में, हानि की ही सम्भावना है वृद्धि की नहीं। जैसे कृष्णपक्ष के चन्द्रमा के वर्ण की...वृद्धि की नहीं। (क)

५. ''और आयुष्मानो! जिस किसी की कुशल धर्मों में श्रद्धा है...पूर्ववत्...कुशल धर्मों में वृद्धि की ही सम्भावना है, हानि की नहीं।'' (ख)

सारिपुत्त! यस्स कस्सचि, सारिपुत्त, सद्धा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु हिरी नत्थि... ओत्तप्पं नत्थि... पञ्ञा नत्थि... विरियं नत्थि... सोतावधानं नत्थि... धम्मधारणा नत्थि... अत्थूपपरिक्खा नत्थि... धम्मानुधम्मप्पटिपत्ति नत्थि... अप्पमादो नत्थि कुसलेसु धम्मेसु तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो वुद्धि। सेय्यथापि, सारिपुत्त, काळपक्खे चन्दस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हायतेव वण्णेन हायति मण्डलेन हायति आभाय हायति आरोहपरिणाहेन; एवमेव खो, सारिपुत्त, यस्स कस्सचि सद्धा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु ...पे०... अप्पमादो नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो वुद्धि।

७. ''यस्स कस्सचि, सारिपुत्त, सद्धा अत्थि कुसलेसु धम्मेसु हिरी अत्थि... ओत्तप्पं अत्थि... विरियं अत्थि... पञ्ञा अत्थि... सोतावधानं अत्थि... धम्मधारणा अत्थि... अत्थूपपरिक्खा अत्थि... धम्मानुधम्मप्पटिपत्ति अत्थि... अप्पमादो अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो परिहानि। सेय्यथापि, सारिपुत्त, जुण्हपक्खे चन्दस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, [R.128,B.358] वड्ढतेव वण्णेन वड्ढति मण्डलेन वड्ढति आभाय वड्ढति आरोहपरिणाहेन; एवमेव खो, सारिपुत्त, यस्स कस्सचि सद्धा अत्थि कुसलेसु धम्मेसु ...पे०... अप्पमादो अत्थि कुसलेसु धम्मेसु, तस्स या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति, वुद्धियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो परिहानी'' *ति*॥ ●

९. पठमकथावत्थुसुत्तं : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्ता उपट्ठानसालायं सन्निसिन्ना सन्निपतिता अनेकविहितं तिरच्छानकथं अनुयुत्ता विहरन्ति, सेय्यथीदं—राजकथं चोरकथं महामत्तकथं सेनाकथं भयकथं युद्धकथं अन्नकथं पानकथं वत्थकथं सयनकथं मालाकथं गन्धकथं ञातिकथं यानकथं गामकथं [N.202] निगमकथं नगरकथं जनपदकथं इत्थिकथं सूरकथं विसिखाकथं कुम्भट्ठानकथं पुब्बपेतकथं नानत्तकथं लोकक्खायिकं समुद्दक्खायिकं इतिभवाभवकथं इति वा ति।

२. अथ खो भगवा सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येन उपट्ठानसाला तेनुप-

---

६. तब भगवान् ने (सिंहशय्या से) उठकर आयुष्मान् सारिपुत्र से कहा—''साधु, सारिपुत्र! साधु...पूर्ववत्...कुशलधर्मों में वृद्धि की ही सम्भावना है, हानि की नहीं॥'' ●

९. प्रथमकथावस्तुसूत्र : : दश कथावस्तु

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवनाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय बहुत से भिक्षु भोजनकर्म के बाद सभाभवन में एकत्र बैठे हुए नाना प्रकार की निरर्थक बातचीत कर रहे थे; जैसे—राजकथा, चौरकथा ..पूर्ववत्... अथवा भवाभवकथा।

सङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि— "काय नुत्थ, भिक्खवे, एतरहि कथाय सन्निसिन्ना सन्निपतिता, का च पन वो अन्तराकथा विप्पकता" ति?

"इध मयं, भन्ते, पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्ता उपट्ठानसालायं सन्निसिन्ना सन्निपतिता अनेकविहितं तिरच्छानकथं अनुयुत्ता विहराम, सेय्यथीदं—राजकथं चोरकथं ...पे० ... इतिभवाभवकथं इति वा" ति।

[R.129] ३. "न खो पनेतं, भिक्खवे, तुम्हाकं पतिरूपं कुलपुत्तानं सद्धाय अगारस्मा अनगारियं पब्बजितानं, यं तुम्हे अनेकविहितं तिरच्छानकथं अनुयुत्ता विहरेय्याथ, सेय्यथीदं—राजकथं चोरकथं महामत्तकथं सेनाकथं भयकथं युद्धकथं अन्नकथं पानकथं वत्थकथं सयनकथं मालाकथं गन्धकथं ञातिकथं यानकथं गामकथं निगमकथं नगरकथं जनपदकथं इत्थिकथं सूरकथं विसिखाकथं कुम्भट्ठानकथं पुब्बपेतकथं नानत्तकथं लोकक्खायिकं समुद्दक्खायिकं इतिभवाभवकथं इति वा ति।

[B.359] ४. "दसयिमानि, भिक्खवे, कथावत्थूनि। कतमानि दस? अप्पिच्छकथा, सन्तुट्ठिकथा, पविवेककथा, असंसग्गकथा, विरियारम्भकथा, सीलकथा, समाधिकथा, पञ्ञाकथा, विमुत्तिकथा, विमुत्तिञाणदस्सनकथा ति—इमानि खो, भिक्खवे, दस कथावत्थूनि।

"इमेसं चे तुम्हे, भिक्खवे, दसन्नं कथावत्थूनं उपादायुपादाय कथं कथेय्याथ, इमेसं पि चन्दिमसुरियानं एवंमहिद्धिकानं एवंमहानुभावानं तेजसा तेजं परियादियेय्याथ, को पन वादो अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं" ति!॥

१०. दुतियकथावत्थुसुत्तं : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने

---

२. तब भगवान् ने सायङ्काल दैवसिक साधना से निवृत्त होकर सभाभवन में आकर प्रज्ञप्त आसन पर विराजकर भिक्षुओं से पूछा—"भिक्षुओ! इस समय तुम लोग किस प्रसङ्ग पर बातचीत कर रहे थे?"

"यहाँ, भन्ते! हम लोग इस सभाभवन में बैठे नाना प्रकार की निरर्थक बातचीत ही कर रहे थे; जैसे—राजकथा, चौरकथा आदि।"

३. "भिक्षुओ! तुम जैसे योग्य कुलपुत्रों के लिये, जो श्रद्धापूर्वक घर को सदा के लिये छोड़कर प्रव्रजित हुए हो, उचित नहीं है कि तुम लोग अपना अमूल्य समय व्यर्थ की बातचीत में नष्ट करो। जैसे राजकथा, चौरकथा आदि।

४. "भिक्षुओ! (तुम्हारे संवाद के योग्य) ये दश कथावस्तुएँ हैं। कौन दश? (१) अल्पेच्छकथा, (२) सन्तुष्टिकथा, (३) प्रविवेक (एकान्तवास) कथा, (४) असंसर्गकथा, (५) वीर्यारम्भकथा, (६) शीलकथा, (७) समाधिकथा, (८) प्रज्ञाकथा, (९) विमुक्तिकथा एवं (१०) विमुक्तिज्ञान की साक्षात्कारकथा—भिक्षुओ! ये दश कथावस्तु होती हैं।

"भिक्षुओ! इन दश कथाओं में से प्रत्येक पर तुम लोगों को समय समय पर संवाद करना

अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू पच्छाभत्तं पिण्डपात-पटिक्कन्ता उपट्ठानसालायं सन्निसिन्ना सन्निपतिता अनेकविहितं तिरच्छानकथं [N.203] अनुयुत्ता विहरन्ति, सेय्यथीदं—राजकथं चोरकथं महामत्तकथं ...पे०... इतिभवाभवकथं इति वा ति।

२. "दसयिमानि, भिक्खवे, पासंसानि ठानानि। कतमानि दस? इध, भिक्खवे, भिक्खु अत्तना च अप्पिच्छो होति, अप्पिच्छकथं च भिक्खूनं कत्ता होति। 'अप्पिच्छो भिक्खु अप्पिच्छकथं च भिक्खूनं कत्ता' ति पासंसमेतं ठानं। [R.130]

३. "अत्तना च सन्तुट्ठो होति, सन्तुट्ठिकथं च भिक्खूनं कत्ता होति। 'सन्तुट्ठो भिक्खु सन्तुट्ठिकथं च भिक्खूनं कत्ता' ति पासंसमेतं ठानं।

४. "अत्तना च पविवित्तो होति, पविवेककथं च भिक्खूनं कत्ता होति। 'पविवित्तो भिक्खु पविवेककथं च भिक्खूनं कत्ता' ति पासंसमेतं ठानं।

५. "अत्तना च असंसट्ठो होति, असंसट्ठकथं च भिक्खूनं कत्ता होति। 'असंसट्ठो भिक्खु असंसट्ठकथं च भिक्खूनं कत्ता' ति पासंसमेतं ठानं।

६. "अत्तना च आरद्धविरियो होति, विरियारम्भकथं च भिक्खूनं कत्ता होति। 'आरद्धविरियो भिक्खु विरियारम्भकथं च भिक्खूनं कत्ता' ति पासंसमेतं ठानं।

चाहिये। जब इन तेजस्वी एवं प्रतापी चन्द्रमा, सूर्य आदि का तेज भी परस्परापेक्षया घटता बढ़ता रहता है, तब इन अन्यमतावलम्बी परिव्राजकों की तो बात ही क्या!॥" ●

१०. द्वितीय कथावस्तुसूत्र : : दश प्रशस्त स्थान

१. एक समय भगवान् ...पूर्वसूत्रवत्... भवाभवकथा आदि।

२. भिक्षुओ! ये दश प्रशंसायोग्य स्थान हैं। कौन से दश? यहाँ, भिक्षुआ! कोई भिक्षु स्वयं भी अल्पेच्छ होता है तथा अन्य भिक्षुओं से अल्पेच्छता की बातें करता रहता है। ऐसा भिक्षु 'अल्पेच्छ एवं अल्पेच्छता की बात करने वाला' कहलाता है। यह प्रथम प्रशंसनीय स्थान है। (१)

३. "स्वयं जो कुछ मिल जाय उससे सन्तुष्ट रहता है तथा अन्य भिक्षुओं से भी सन्तोष की कथा करता रहता है। ऐसा भिक्षु 'सन्तोषी एवं सन्तोष की बातें करने वाला' कहलाता है। यह द्वितीय प्रशंसास्थान है। (२)

४. "स्वयं एकान्तस्थान में साधना करता है, तथा अन्य भिक्षुओं से भी एकान्त की प्रशंसा करता है। ऐसा भिक्षु 'प्रविवेकी एवं प्रविवेककथाकर्ता' कहलाता है। यह तृतीय प्रशंसास्थान कहलाता है। (३)

५. "स्वयं सबसे पृथक् (असंसृष्ट) रहता है, तथा दूसरों से भी असंसर्ग की ही कथा करता है। ऐसा भिक्षु 'असंसृष्ट एवं असंसृष्टकथाकर्ता' कहलाता है। यह चतुर्थ प्रशंसास्थान कहलाता है। (४)

६. "स्वयं साधनाहेतु श्रम करता रहता है, तथा दूसरों से भी ऐसे श्रम की ही बातें करता है। ऐसा भिक्षु 'आरब्धवीर्य एवं वीर्यारम्भकथाकर्ता' कहलाता है। यह पञ्चम प्रशंसास्थान है। (५)

[B.360] ७. ''अत्तना च सीलसम्पन्नो होति, सीलसम्पदाकथं च भिक्खूनं कत्ता होति। 'सीलसम्पन्नो भिक्खु सीलसम्पदाकथं च भिक्खूनं कत्ता' ति पासंसमेतं ठानं।

८. ''अत्तना च समाधिसम्पन्नो होति, समाधिसम्पदाकथं च भिक्खूनं कत्ता होति। 'समाधिसम्पन्नो भिक्खु समाधिसम्पदाकथं च भिक्खूनं कत्ता' ति पासंसमेतं ठानं।

९. ''अत्तना च पञ्ञासम्पन्नो होति, पञ्ञासम्पदाकथं च भिक्खूनं कत्ता होति। 'पञ्ञासम्पन्नो भिक्खु पञ्ञासम्पदाकथं च भिक्खूनं कत्ता' ति पासंसमेतं ठानं।

१०. ''अत्तना च विमुत्तिसम्पन्नो होति, विमुत्तिसम्पदाकथं च भिक्खूनं कत्ता होति। 'विमुत्तिसम्पन्नो भिक्खु विमुत्तिसम्पदाकथं च भिक्खूनं कत्ता' ति पासंसमेतं ठानं।

[N.204] ११. ''अत्तना च विमुत्तिञाणदस्सनसम्पन्नो होति, विमुत्तिञाणदस्सनसम्पदाकथं च भिक्खूनं कत्ता होति। 'विमुत्तिञाणदस्सनसम्पन्नो भिक्खु विमुत्तिञाणदस्सनसम्पदाकथं च भिक्खूनं कत्ता' ति पासंसमेतं ठानं। इमानि खो, भिक्खवे, दस पासंसानि ठानानी'' ति॥

यमकवग्गो सत्तमो॥

तस्सुद्दानं

[R.131] अविज्जा तण्हा निट्ठा च, अवेच्च द्वे सुखानि च।
नळकपाने द्वे वुत्ता, कथावत्थूपरे दुवे ति॥

---

७. ''स्वयं सदाचारी रहता है, तथा दूसरों से भी सदाचार की ही बातें करता है। ऐसा भिक्षु 'शीलवान् एवं शीलसम्पदा कथाकर्ता' कहलाता है। यह षष्ठ प्रशंसास्थान है। (६)

८. ''स्वयं समाधिरत रहता है, तथा दूसरों से भी समाधि की ही बातें करता है। ऐसा भिक्षु 'समाधिसम्पन्न एवं समाधिसम्पदाकथाकर्ता' कहलाता है। यह सप्तम प्रशंसास्थान है। (७)

९. ''स्वयं प्रज्ञासम्पन्न रहता है तथा दूसरों से प्रज्ञासम्बद्ध बातें ही करता रहता है। ऐसा भिक्षु 'प्रज्ञासम्पन्न एवं प्रज्ञाकथाकर्ता' कहलाता है। यह अष्टम प्रशंसास्थान है। (८)

१०. ''स्वयं विमुक्तिसम्पन्न रहता है तथा दूसरों से भी विमुक्तिसम्बद्ध बातें ही करता है। ऐसा भिक्षु 'विमुक्तिसम्पन्न एवं विमुक्तिकथाकर्ता' कहलाता है। यह नवम प्रशंसास्थान है। (९)

११. ''स्वयं विमुक्तिज्ञानदर्शनसम्पन्न रहता है तथा दूसरों से भी विमुक्तिज्ञानदर्शन की ही बातें करता है। ऐसा भिक्षु 'विमुक्तिज्ञानदर्शनसम्पन्न तथा विमुक्तिज्ञानदर्शनकथाकर्ता' कहलाता है। यह दशम प्रशंसास्थान है।'' (१०)

यमकवर्ग सप्तम सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. अविद्यासूत्र, २. तृष्णासूत्र, ३. निष्ठागतसूत्र, ४. अवेत्यप्रसन्नसूत्र, ५. प्रथम सुखसूत्र, ६. द्वितीय सुखसूत्र, ७. प्रथम नळकपानसूत्र, ८. द्वितीय नळकपानसूत्र, ९. प्रथम कथावस्तुसूत्र एवं १०. द्वितीय कथावस्तुसूत्र॥

८. आकङ्खवग्गो

१. आकङ्खसुत्तं : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"भिक्खवो" ति। "भदन्ते" ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. "सम्पन्नसीला, भिक्खवे, विहरथ सम्पन्नपातिमोक्खा, पातिमोक्ख-[B.361] संवरसंवुता विहरथ आचारगोचरसम्पन्ना अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्साविनो, समादाय सिक्खथ सिक्खापदेसु।

३. "आकङ्खेय्य चे, भिक्खवे, भिक्खु 'सब्रह्मचारीनं पियो चस्सं मनापो च गरु च भावनीयो चा' ति, सीलेस्वेवस्स परिपूरकारी अज्झत्तं चेतोसमथमनुयुत्तो अनिराकतज्झानो विपस्सनाय समन्नागतो ब्रूहेता सुञ्ञागारानं।

४. "आकङ्खेय्य चे, भिक्खवे, भिक्खु 'लाभी अस्सं चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं' ति, सीलेस्वेवस्स परिपूरकारी अज्झत्तं चेतोसमथमनुयुत्तो अनिराकतज्झानो विपस्सनाय समन्नागतो ब्रूहेता सुञ्ञागारानं।

५. "आकङ्खेय्य चे, भिक्खवे, भिक्खु 'येसाहं परिभुञ्जामि चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं तेसं ते कारा महप्फला अस्सु महानिसंसा' ति, सीलेस्वेवस्स ...पे०... ब्रूहेता सुञ्ञागारानं। [N.205]

---

८. आकांक्षवर्ग

१. आकांक्षसूत्र : : दश आकांक्षाएँ

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने ...पूर्ववत्...। भगवान् ने यह देशना की—

२. "सदाचारी रहते हुए, भिक्षुओ! साधनारत रहो। प्रातिमोक्ष के नियमों का पालन करते रहो। आचार-व्यवहार से सम्पन्न रहो। साधारण से साधारण निन्द्य कर्म के आचरण में भय मानो। तथा मेरे कहे शिक्षापदों को ग्रहण कर उनका सतत अभ्यास करो।

३. भिक्षुओ! यदि कोई भिक्षु यह चाहता है—'मैं अपने साथियों का प्रिय बनूँ, अनुकूल बनूँ, उनसे गौरव तथा सम्मान प्राप्त करूँ', तो उसको शील-सदाचार नियमों की पूर्ति करनी चाहिये, आध्यात्मिक चित्तशान्ति एवं ध्यानभावना को शिथिल नहीं करना चाहिये, विपश्यनारत रहना चाहिये; साधनाहेतु शून्यागारों में वास की वृद्धि करनी चाहिये। (१)

४. "भिक्षुओ! यदि कोई भिक्षु यह चाहता है—'मैं चीवर, पिण्डपात आदि को अनायास प्राप्त करता रहूँ', तो उसको सदाचारनियमों की पूर्णता, आध्यात्मिक चित्तशान्ति ...पूर्ववत्... वृद्धि करनी चाहिये। (२)

५. ...पूर्ववत्... 'मैं जिनका दिया हुआ चीवर पिण्डपात आदि उपयोग में ला रहा हूँ, उनका यह दान अतिशय फलशाली हो' तो उसको सदाचारनियमों की पूर्णता ...पूर्ववत्...। (३)

६. ''आकङ्खेय्य चे, भिक्खवे, भिक्खु 'ये मे पेता ञाती सालोहिता कालङ्कता [R.132] पसन्नचित्ता अनुस्सरन्ति तेसं तं महप्फलं अस्स महानिसंसं' ति, सीलेस्वेवस्स ...पे०... ब्रूहेता सुञ्ञागारानं।

७. ''आकङ्खेय्य चे, भिक्खवे, भिक्खु 'सन्तुट्ठो अस्स इतरीतरचीवरपिण्डपात-सेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेना' ति, सीलेस्वेवस्स ...पे०.. ब्रूहेता सुञ्ञागारानं।

८. ''आकङ्खेय्य चे, भिक्खवे, भिक्खु 'खमो अस्सं सीतस्स उण्हस्स जिघच्छाय पिपासाय डंसमकवातातपसिरिंसपसम्फस्सानं, दुरुत्तानं दुरागतानं वचनपथानं उप्पन्नानं सारीरिकानं वेदनानं दुक्खानं तिब्बानं खरानं कटुकानं असातानं अमनापानं पाणहरानं अधिवासकजातिको अस्सं' ति, सीलेस्वेवस्स ...पे०... ब्रूहेता सुञ्ञागारानं।

९. ''आकङ्खेय्य चे, भिक्खवे, भिक्खु 'अरतिरतिसहो अस्सं, न च मं अरतिरति सहेय्य, उप्पन्नं अरतिरतिं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्यं' ति, सीलेस्वेवस्स ...पे०... ब्रूहेता सुञ्ञागारानं।

१०. ''आकङ्खेय्य चे, भिक्खवे, भिक्खु 'भयभेरवसहो अस्सं, न च मं भयभेरवो [B.362] सहेय्य, उप्पन्नं भयभेरवं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्यं' ति, सीलेस्वेवस्स ...पे०... ब्रूहेता सुञ्ञागारानं।

११. ''आकङ्खेय्य चे, भिक्खवे, भिक्खु 'चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी अस्सं अकिच्छलाभी अकसिरलाभी' ति, सीलेस्वेवस्स ...पे०... ब्रूहेता सुञ्ञागारानं।

---

६. ...पूर्ववत्... 'मेरे मृत पूर्वज या रक्तसम्बन्धी जो मेरा प्रेमपूर्वक स्मरण करते हैं उनको अतिशय पुण्यफल मिले' तो उसको सदाचार नियमों की पूर्णता ...पूर्ववत्... वृद्धि करनी चाहिये। (४)

७. ...पूर्ववत्... 'मैं जैसे-तैसे मिले चीवर, पिण्डपात आदि से ही सन्तुष्ट रहूँ' तो उसको सदाचारनियमों की पूर्णता ...पूर्ववत्... वृद्धि करनी चाहिये। (५)

८. ...पूर्ववत्... 'मैं शीत, उष्ण, भूख, प्यास, मच्छर, वायु, आतप, सर्प आदि के स्पर्श से सुरक्षित रहूँ दुर्वचनों का ...पूर्ववत्... सहनशील बनूँ' तो उसको सदाचारनियमों की पूर्णता ...पूर्ववत्... वृद्धि करनी चाहिये। (६)

९. ...पूर्ववत्... 'मैं अरति एवं रति को सहन करने वाला बनूँ, यदि मैं अरति एवं रति को सहन न कर सकूँ तो उत्पन्न हुई अरति एवं रति को दबा-दबाकर साधनारत रहूँ', तो उसको सदाचारनियमों की पूर्णता ...पूर्ववत्... वृद्धि करनी चाहिये। (७)

१०. ...पूर्ववत्... 'मैं साधना के समय होने वाले भीषण भय को सहन कर सकूँ', तो उसको सदाचारनियमों की पूर्णता ...पूर्ववत्... वृद्धि करनी चाहिये। (८)

११. ...पूर्ववत्... 'मैं आध्यात्मिक एवं इसी जन्म में सुख से अभ्यस्त होने वाले चारों ध्यानों को पा लूँ', तो उसको सदाचार नियमों की पूर्णता... वृद्धि करनी चाहिये। (९)

१२. "आकङ्खेय्य चे, भिक्खवे, भिक्खु 'आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति, [R.133] सीलेस्वेवस्स परिपूरकारी अज्झत्तं चेतोसमथमनुयुत्तो अनिराकतज्झानो विपस्सनाय समन्नागतो ब्रूहेता सुञ्ञागारानं।

१३. "'सम्पन्नसीला, भिक्खवे, विहरथ सम्पन्नपातिमोक्खा, पाति- [N.206] मोक्खसंवरसंवुता विहरथ आचारगोचरसम्पन्ना अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्साविनो, समादाय सिक्खथ सिक्खापदेसू' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं" ति॥ ●

२. कण्टकसुत्तं : १. एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागारसालायं सम्बहुलेहि अभिञ्ञातेहि अभिञ्ञातेहि थेरेहि सावकेहि सद्धिं—आयस्मता च चालेन, आयस्मता च उपचालेन, आयस्मता च कुक्कुटेन, आयस्मता च कळिम्भेन, आयस्मता च निकटेन, आयस्मता च कटिस्सहेन; अञ्ञेहि च अभिञ्ञातेहि अभिञ्ञातेहि थेरेहि सावकेहि सद्धिं।

२. तेन खो पन समयेन सम्बहुला अभिञ्ञाता अभिञ्ञाता लिच्छवी भद्रेहि भद्रेहि यानेहि परपुराय उच्चासद्दा महासद्दा महावनं अज्झोगाहन्ति भगवन्तं दस्सनाय। अथ खो तेसं आयस्मन्तानं एतदहोसि—"इमे खो सम्बहुला अभिञ्ञाता अभिञ्ञाता लिच्छवी [B.363] भद्रेहि भद्रेहि यानेहि परपुराय उच्चासद्दा महासद्दा महावनं अज्झोगाहन्ति भगवन्तं दस्सनाय।

---

१२. ...पूर्ववत्... 'मैं आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में जानकर साक्षात् कर प्राप्त कर साधना कर सकूँ', तो उसको सदाचारनियमों की पूर्णता करते हुए, आध्यात्मिक चित्तशान्ति को प्राप्त करते हुए, ध्यानों का निराकरण न करते हुए, विपश्यनायुक्त होते हुए एकान्तसाधना में वृद्धि करनी चाहिये। (१०)

१३. "भिक्षुओ! 'सदाचारी रहते हुए साधनारत रहो। प्रातिमोक्ष के नियमों का पालन करते रहो। आचार-व्यवहार से सम्पन्न रहो। साधारण निन्द्यकर्म के आचरण में भी भय मानो। तथा मेरे कहे शिक्षानियमों को ग्रहण करते हुए उनका सतत अभ्यास करो'—यह जो कहा था इसी उद्देश्य से कहा था॥" ●

२. कण्टकसूत्र : : धर्मों के दश कण्टक

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली के महावन की कूटागारशाला में, बहुत से प्रसिद्ध स्थविर भिक्षुओं के साथ, साधनाहेतु विराजमान थे। उनमें कुछ प्रमुख भिक्षु ये थे—आयुष्मान् चाल, आयुष्मान् उपचाल, आयुष्मान् कुक्कुट, आयुष्मान् कळिम्भ, आयुष्मान् निकट एवं आयुष्मान् कटिस्सह।

२. उस समय बहुत से प्रख्यात लिच्छवि अच्छे अच्छे रथों पर आरूढ़ (सवार) होकर नगर की ओर से भयङ्कर कोलाहल करते हुए, भगवान् के दर्शनहेतु महावन में प्रविष्ट हुए। यह देखकर उन स्थविर भिक्षुओं को यह विचार हुआ—"ये बहुत से प्रसिद्ध लिच्छवि रथों पर आरूढ़ होकर भयङ्कर कोलाहल करते हुए भगवान् के दर्शनहेतु महावन में प्रविष्ट हो गये हैं। भगवान् ने कोलाहल

[R.134] 'सद्दकण्टका खो पन झाना' वुत्ता भगवता। यन्नूनं मयं येन गोसिङ्गसालवनदायो तेनुपसङ्कमेय्याम। तत्थ मयं अप्पसद्दा अप्पाकिण्णा फासुं विहरेय्यामा'' ति। अथ खो ते आयस्मन्तो येन गोसिङ्गसालवनदायो तेनुपसङ्कमिंसु; तत्थ ते आयस्मन्तो अप्पसद्दा अप्पाकिण्णा फासुं विहरन्ति।

३. अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''कहं नु खो, भिक्खवे, चालो, कहं उपचालो, कहं कुक्कुटो, कहं कळिम्भो, कहं निकटो, कहं कटिस्सहो; कहं नु खो ते, भिक्खवे, थेरा सावका गता'' ति?

४. ''इध, भन्ते, तेसं आयस्मन्तानं एतदहोसि—'इमे खो सम्बहुला अभिञ्ञाता अभिञ्ञाता लिच्छवी भद्रेहि भद्रेहि यानेहि परपुराय उच्चासद्दा महासद्दा महावनं अज्झो-गाहन्ति भगवन्तं दस्सनाय... अप्पसद्दा अप्पाकिण्णा फासुं विहरेय्यामा' ति। अथ खो ते, [N.207] भन्ते, आयस्मन्तो येन गोसिङ्गसालवनदायो तेनुपसङ्कमिंसु। तत्थ ते आयस्मन्तो अप्पसद्दा अप्पाकिण्णा फासुं विहरन्ती'' ति।

५. ''साधु साधु, भिक्खवे, यथा ते महासावका सम्मा ब्याकरमाना ब्याकरेय्युं, 'सद्दकण्टका हि, भिक्खवे, झाना' वुत्ता मया।

६. ''दसयिमे, भिक्खवे, कण्टका। कतमे दस? पविवेकारामस्स सङ्गणिकारामता कण्टको, असुभनिमित्तानुयोगं अनुयुत्तस्स सुभनिमित्तानुयोगो कण्टको, इन्द्रियेसु गुत्तद्वारस्स विसूकदस्सनं कण्टको, ब्रह्मचरियस्स मातुगामूपचारो कण्टको, पठमस्स झानस्स सद्दो [R.135] कण्टको, दुतियस्स झानस्स वितक्कविचारा कण्टका, ततियस्स झानस्स पीति

को ध्यान का विघ्नकारक बताया है। तो क्यों न हम उतने समय तक समीपस्थ गोशृङ्ग सालवन-प्रदेश में साधनाहेतु चले जायँ। वहाँ हम नि:शब्द एकान्त में बैठकर सरलता से साधना कर पावेंगे।'' यह विचार कर वे स्थविर भिक्षु गोशृङ्ग सालवन में प्रविष्ट हुए तथा वहाँ अनुकूल स्थान में बैठकर सरलता से साधना करने लगे।

३. तब भगवान् ने अन्य भिक्षुओं से पूछा—''वे सब चाल, उपचाल, कुक्कुट आदि स्थविर भिक्षु कहाँ हैं?''

४. ''यहाँ, भन्ते! उन आयुष्मानों को यह विचार हुआ—'ये बहुत से प्रसिद्ध लिच्छवि रथों पर...साधना कर पावेंगे।' तब वे स्थविर भिक्षु गोशृङ्ग सालवन-प्रदेश में चले गये। जहाँ वे एकान्त में बैठकर साधनारत हैं।''

५. साधु, भिक्षुओ! साधु! उन भिक्षुओं ने साधना के विषय में यह बहुत उचित ही विचार किया है। मैंने कोलाहल को ध्यान का दोष बताया है।

६. ''भिक्षुओ! (साधना के) ये दश दोष (कण्टक) हैं। १. मनुष्यों की भीड़ (जमाव) एकान्त साधना का दोष है, २. अशुभ निमित्त साधक का शुभ निमित्त में ध्यान करना दोष है, ३. इन्द्रियसंयम में नृत्य, नाट्य आदि देखना दोष है, ४. ब्रह्मचर्यसाधना में नारी-दर्शन दोष है, ५. प्रथम ध्यान का शब्द (कोलाहल) दोष है, ६. द्वितीय ध्यान के वितर्क-विचार दोष हैं, ७. तृतीय ध्यान का

कण्टको, चतुत्थस्स झानस्स अस्सासपस्सासो कण्टको, सञ्ञावेदयितनिरोधसमापत्तिया सञ्ञा च वेदना च कण्टको रागो कण्टको दोसो कण्टको मोहो कण्टको।

७. ''अकण्टका, भिक्खवे, विहरथ। निक्कण्टका, भिक्खवे, विहरथ। [B.364] अकण्टकनिक्कण्टका, भिक्खवे, विहरथ। अकण्टका, भिक्खवे, अरहन्तो; निक्कण्टका, भिक्खवे, अरहन्तो; अकण्टकनिक्कण्टका, भिक्खवे, अरहन्तो'' ति॥ ●

३. इट्ठधम्मसुत्तं : १. ''दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा इट्ठा कन्ता मनापा दुल्लभा लोकस्मिं। कतमे दस? भोगा इट्ठा कन्ता मनापा दुल्लभा लोकस्मिं; वण्णो इट्ठो कन्तो मनापो दुल्लभो लोकस्मिं; आरोग्यं इट्ठं कन्तं मनापं दुल्लभं लोकस्मिं; सीलं इट्ठं कन्तं मनापं दुल्लभं लोकस्मिं; ब्रह्मचरियं इट्ठं कन्तं मनापं दुल्लभं लोकस्मिं; मित्ता इट्ठा कन्ता मनापा दुल्लभा लोकस्मिं; बाहुसच्चं इट्ठं कन्तं मनापं दुल्लभं लोकस्मिं; पञ्ञा इट्ठा कन्ता मनापा दुल्लभा लोकस्मिं; धम्मा इट्ठा कन्ता मनापा दुल्लभा लोकस्मिं; सग्गा इट्ठा कन्ता मनापा दुल्लभा लोकस्मिं।

२. ''इमेसं खो, भिक्खवे, दसन्नं धम्मानं इट्ठानं कन्तानं मनापानं दुल्लभानं [R.136] लोकस्मिं दस धम्मा परिपन्था—आलस्यं अनुट्ठानं भोगानं परिपन्थो, अमण्डना [N.208] अविभूसना वण्णस्स परिपन्थो, असप्पायकिरिया आरोग्यस्स परिपन्थो, पापमित्तता सीलानं परिपन्थो, इन्द्रियअसंवरो ब्रह्मचरियस्स परिपन्थो, विसंवादना मित्तानं परिपन्थो, असज्झाय-किरिया बाहुसच्चस्स परिपन्थो, असुस्सूसा अपरिपुच्छा पञ्ञाय परिपन्थो, अननुयोगो

प्रीति दोष है, ८. चतुर्थ ध्यान के श्वास-प्रश्वास दोष हैं, ९. संज्ञावेदयितनिरोधसमापत्ति के संज्ञा, वेदना एवं १०. राग द्वेष मोह दोष (कण्टक) हैं।

७. ''भिक्षुओ! दोषरहित होकर साधना करो, निर्दोष होकर साधना करो। अदोष निर्दोष होकर साधना करो। भिक्षुओ! अर्हत् (ज्ञानी) ही निर्दोष साधक हैं, भिक्षुओ! अर्हत् ही अदोष साधक हैं, भिक्षुओ! अर्हत् ही अदोष निर्दोष साधक हैं॥'' ●

४. इष्टधर्मसूत्र : : दश दुर्लभ धर्म

१. ''भिक्षुओ! इन दश धर्मों का सर्वथा इष्ट, प्रिय एवं मनोनुकूल होना लोक में दुर्लभ है। कौन से दश? (१) **कामभोग** सदा इष्ट, प्रिय एवं मनोनुकूल ही मिलते रहें—यह लोक में दुर्लभ हैं, (२) **शरीर का वर्ण**...(३) **शील**...,(४) **ब्रह्मचर्य** (धर्मसाधना)..., ५. **आरोग्य** (नीरोगता)..., ६. **मित्रजन**..., (७) **अधिक विद्वत्ता**..., **(८) प्रज्ञा**..., (९) **धर्म**..., तथा (१०) **स्वर्ग** सदा इष्ट प्रिय एवं मनोनुकूल ही मिले—यह लोक में दुर्लभ है।

२. भिक्षुओ! इन दश इष्ट, प्रिय, मनोनुकूल धर्मों की दुर्लभता में ये दश विरोधी दोष हैं। जैसे—(१) किसी कार्य में आलस्य करना एवं उसमें मन न लगना—कामभोगों का विरोधी दोष है। (२) शरीर को अलंकृत न करना—वर्ण का विरोधी दोष है। (३) पथ्य का सेवन न करना—आरोग्य का दोष है। (४) पापियों का संसर्ग करना—शील का दोष है। (५) इन्द्रियों में असंयम—ब्रह्मचर्य का दोष है। (६) वाद-विवाद एवं मतभेद—मित्रता का दोष है। (७) स्वाध्याय न

अपच्चवेक्खणा धम्मानं परिपन्थो, मिच्छापटिपत्ति सग्गानं परिपन्थो। इमेसं खो, भिक्खवे, दसन्नं इट्ठानं कन्तानं मनापानं दुल्लभानं लोकस्मिं इमे दस धम्मा परिपन्था।

३. "इमेसं खो, भिक्खवे, दसन्नं धम्मानं इट्ठानं कन्तानं मनापानं दुल्लभानं लोकस्मिं दस धम्मा आहारा—उट्ठानं अनालस्यं भोगानं आहारो, मण्डना विभूसना वण्णस्स आहारो, सप्पायकिरिया आरोग्यस्स आहारो, कल्याणमित्तता सीलानं आहारो, इन्द्रियसंवरो ब्रह्मचरियस्स आहारो, अविसंवादना मित्तानं आहारो, सज्झायकिरिया बाहुसच्चस्स आहारो, [B.365] सुस्सूसा परिपुच्छा पञ्ञाय आहारो, अनुयोगो पच्चवेक्खना धम्मानं आहारो, सम्मापटिपत्ति सग्गानं आहारो। इमेसं खो, भिक्खवे, दसन्नं धम्मानं इट्ठानं कन्तानं मनापानं दुल्लभानं लोकस्मिं इमे दस धम्मा आहारा" ति॥ ●

[R.137] **४. वड्ढिसुत्तं :** १. "दसहि, भिक्खवे, वड्ढीहि वड्ढमानो अरियसावको अरियाय वड्ढिया वड्ढति, सारादायी च होति वरादायी कायस्स। कतमेहि दसहि ? खेत्तवत्थूहि वड्ढति, धनधञ्ञेन वड्ढति, पुत्तदारेहि वड्ढति, दासकम्मकरपोरिसेहि वड्ढति, चतुप्पदेहि वड्ढति, सद्धाय वड्ढति, सीलेन वड्ढति, सुतेन वड्ढति, चागेन वड्ढति, पञ्ञाय वड्ढति—इमेहि खो, भिक्खवे,

---

करना—अधिक विद्वत्ता का विरोधी दोष है। (८) विद्वानों की सेवा न करना तथा उनसे धार्मिक प्रश्न (शङ्का-समाधान) न करना—प्रज्ञा का विरोधी दोष है। (९) साधना एवं विचार-विमर्श न करना—धर्मविरोधी दोष है। एवं (१०) मिथ्या धार्मिक क्रियाकलाप—स्वर्ग का विरोधी दोष है।

३. (इसके विपरीत) "भिक्षुओ! इन इष्ट, प्रिय एवं मनोनुकूल दश धर्मों की लोक में सुलभता के ये मूल कारण (आहार) हैं—१. आलस्यरहित होकर तदर्थ प्रयास करना—कामभोगों का वृद्धिकारण है। २. शरीर को स्वच्छ तथा अलंकृत रखना वर्ण का वृद्धिकारण है। ३. पथ्य सेवन करना नीरोगता का वृद्धिकारण है। ४. कल्याणमित्रों की सङ्गति शीलवृद्धि का मूल कारण है, ५. इन्द्रियसंयम ब्रह्मचर्य का वृद्धिकारण है। ६. विवाद न करना, एकमत रहना मित्रतावृद्धि का मूल कारण है। ७. स्वाध्याय विद्वत्ता का मूल कारण है। ८. विद्वानों की शुश्रूषा तथा उनसे परिप्रश्न प्रज्ञा का मूल कारण है। ९. साधना एवं निरन्तर उनकी प्रत्यवेक्षणा—धर्मों की वृद्धि का मूल कारण है। तथा १०. धार्मिक क्रियाकलापों को सम्यक् (शास्त्र-) विधि से सम्पन्न करना—स्वर्गप्राप्ति का मूल कारण है। भिक्षुओ! इन इष्ट प्रिय एवं मनोनुकूल दश धर्मों की सुलभता के ये (दश) मूल कारण हैं॥" ●

४. वृद्धिसूत्र : : दश वृद्धियाँ

१. "भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक इन दश वृद्धियों से बढ़ता हुआ आर्यवृद्धि से बढ़ता है, तत्त्व को प्राप्त कर लेता है, शरीर के लिये उत्तम (भोगों) को प्राप्त कर लेता है। किन दश वृद्धियों से ? (१) वह क्षेत्र की वृद्धि से बढ़ता है, (२) धन-धान्य की वृद्धि से बढ़ता है, (३) पुत्र-पौत्रों से बढ़ता है, (४) उसके पालतू चौपायों की वृद्धि होती है, (५) उसके दास-कर्मकरों की वृद्धि होती है, (६) श्रद्धा बढ़ती है, (७) शील बढ़ता है, (८) उसका श्रुत बढ़ता है, (९) उसका त्याग बढ़ता है, और (१०) उसकी प्रज्ञा बढ़ती है। भिक्षुओ! इन दश वृद्धियों से बढ़ता हुआ ही कोई आर्यश्रावक

दसहि वड्ढीहि वड्ढमानो अरियसावको अरियाय वड्ढिया वड्ढति, सारादायी च होति वरादायी कायस्सा ति।

''धनेन धञ्ञेन च योध वड्ढति, पुत्तेहि दारेहि चतुप्पदेहि च।
स भोगवा होति यसस्सि पूजितो, ञातीहि मित्तेहि अथो पि राजुभि॥
सद्धाय सीलेन च योध वड्ढति, पञ्ञाय चागेन सुतेन चूभयं। [N.209]
सो तादिसो सप्पुरिसो विचक्खणो, दिट्ठेव धम्मे उभयेन वड्ढती'' ति॥ •

५. मिगसालासुत्तं : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो आयस्मा आनन्दो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन मिगसालाय उपासिकाय निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। अथ खो मिगसाला उपासिका येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्ना खो मिगसाला उपासिका आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—

२. ''कथं कथं नामायं, भन्ते आनन्द, भगवता धम्मो देसितो अञ्ञेय्यो, यत्र हि नाम ब्रह्मचारी च अब्रह्मचारी च उभो समसमगतिका भविस्सन्ति अभिसम्परायं। [R.138] पिता मे, भन्ते, पुराणो ब्रह्मचारी होति आराचारी विरतो मेथुना गामधम्मा। सो कालङ्कतो भगवता ब्याकतो—'सकदागामिपत्तो तुसितं कायं उपपन्नो' ति। पितामहो मे, भन्ते, [B.366]

आर्यवृद्धि से बढ़ पाता है, तत्त्व को ग्रहण कर पाता है तथा शरीर के लिये भी उत्तम (भोग) को प्राप्त कर पाता है।

''जो यहाँ धन-धान्य से बढ़ता है, पुत्र, स्त्री एवं चौपाये पशुओं से बढ़ता है, वह लोक में ऐश्वर्यवान्, यशस्वी एवं सम्बन्धिजनों तथा मित्रों से और राजाओं से भी पूजित होता है॥

''इसी प्रकार, जो श्रद्धा, शील, प्रज्ञा, त्याग एवं श्रुत में वृद्धि प्राप्त करता है, ऐसा बुद्धिमान् चतुर सत्पुरुष इसी जन्म में ऐहलौकिक एवं पारलौकिक—इन उभयविध वृद्धियों को प्राप्त करता है॥'' •

५. मृगशालासूत्र : :

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। तब कभी प्रात:काल आयुष्मान् आनन्द व्यवस्थित होकर, पात्र चीवर लेकर मृगशाला उपासिका के आवास पर गये। जाकर वे प्रज्ञप्त आसन पर बैठे। तब मृगशाला उपासिका उनके सम्मुख आयी। आकर प्रणाम कर एक ओर बैठ गयी। एक ओर बैठी मृगशाला उपासिका ने आयुष्मान् आनन्द से यह जिज्ञासा प्रकट की—

२. ''भन्ते आनन्द! भगवान् भी कभी कभी कैसी धर्मदेशना कर देते हैं कि जिसमें धर्म के साधक, असाधक—दोनों को परलोक के लिये समानगतिक बता दिया करते हैं। (जैसे—) मेरा पुराण नामक पिता ब्रह्मचारी था, जो मैथुन ग्राम्यधर्म (व्यभिचार) से सदा विरत रहा। उसके मरने पर भगवान् ने बताया—'वह केवल सकृदागामिता प्राप्त कर अभी तुषित लोक में उत्पन्न हुआ है।

इसिदत्तो अब्रह्मचारी अहोसि सदारसन्तुट्ठो। सो पि कालङ्कतो भगवता ब्याकतो— 'सकदागामिपत्तो तुसितं कायं उपपन्नो' ति।

''कथं कथं नामायं, भन्ते, आनन्द, भगवता धम्मो देसितो अञ्ञेय्यो, यत्र हि नाम ब्रह्मचारी च अब्रह्मचारी च उभो समसमगतिका भविस्सन्ति अभिसम्परायं'' ति?

''एवं खो पनेतं, भगिनि, भगवता ब्याकतं'' ति।

३. अथ खो आयस्मा आनन्दो मिगसालाय उपासिकाय निवेसने पिण्डपातं गहेत्वा उट्ठायासना पक्कामि। अथ खो आयस्मा आनन्दो पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

[N.210] ४. ''इधाहं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन मिगसालाय उपासिकाय निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदिं। अथ खो, भन्ते, मिगसाला उपासिका येनाहं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्ना खो, भन्ते, मिगसाला उपासिका मं एतदवोच—'कथं कथं नामायं, भन्ते [R.139] आनन्द, भगवता धम्मो देसितो अञ्ञेय्यो, यत्र हि नाम ब्रह्मचारी च अब्रह्मचारी च उभो समसमगतिका भविस्सन्ति अभिसम्परायं। पिता मे, भन्ते, पुराणो ब्रह्मचारी अहोसि आराचारी विरतो मेथुना गामधम्मा। सो कालङ्कतो भगवता ब्याकतो सकदागामिपत्तो तुसितं कायं उपपन्नो ति। पितामहो मे, भन्ते इसिदत्तो अब्रह्मचारी अहोसि सदारसन्तुट्ठो। सो पि [B.367] कालङ्कतो भगवता ब्याकतो—सकदागामिपत्तो तुसितं कायं उपपन्नो ति। कथं कथं नामायं, भन्ते आनन्द, भगवता धम्मो देसितो अञ्ञेय्यो, यत्र हि नाम ब्रह्मचारी च अब्रह्मचारी च उभो समसमगतिका भविस्सन्ति अभिसम्परायं' ति? एवं वुत्ते अहं,भन्ते, मिगसालं उपासिकं एतदवोचं—'एवं खो पनेतं, भगिनि, भगवता ब्याकतं' '' ति।

५. ''का चानन्द, मिगसाला उपासिका बाला अब्यत्ता अम्मका अम्मकपञ्ञा, के च पुरिसपुग्गलपरोपरिये ञाणे?

उधर, भन्ते! मेरे दादा ऋषिदत्त गृहस्थधर्म का पालन करते हुए अपनी भार्या से ही सन्तुष्ट रहते थे। उनके विषय में भी भगवान् ने यही बताया—'वे भी सकृदागामिता प्राप्त कर तुषित लोक में जा पहुँचे हैं।'

''भन्ते! कैसे भगवान् ने ब्रह्मचारी एवं अब्रह्मचारी—दोनों की ही पारलौकिक गति समान बता दी, यह बात समझ में नहीं आयी!''

''भगिनि! ऐसी बात तो है; परन्तु भगवान् ने ऐसा ही व्याख्यान किया है।''

३. तब आयुष्मान् आनन्द मृगशाला उपासिका के घर में भिक्षा लेकर आसन से उठकर चले आये। और भोजनकर्म से निवृत्त होकर भगवान् के सम्मुख गये ...पूर्ववत्... भगवान् से यह निवेदन किया—

४. ''यहाँ, भन्ते! आज मैं प्रातःकाल ...पूर्ववत्... परन्तु भगवान् ने ऐसा ही व्याख्यान किया है।''

''दसयिमे, आनन्द, पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं। कतमे दस? इधानन्द, एकच्चो पुग्गलो दुस्सीलो होति। तं च चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं नप्पजानाति, यत्थस्स तं दुस्सील्यं अपरिसेसं निरुज्झति। तस्स सवनेन पि अकतं होति, बाहुसच्चेन पि अकतं होति, दिट्ठिया पि अप्पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं न लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा हानाय परेति, नो विसेसाय; हानगामीयेव होति, नो विसेसगामी।

६. ''इध पनानन्द, एकच्चो पुग्गलो दुस्सीलो होति। तं च चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं पजानाति यत्थस्स तं दुस्सील्यं अपरिसेसं निरुज्झति। तस्स सवनेन [R.140] पि कतं होति, बाहुसच्चेन पि कतं होति, दिट्ठिया पि पटिविद्धं होति, सामायिकं पि [N.211] विमुत्तिं लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा विसेसाय परेति, नो हानाय; विसेसगामी येव होति, नो हानगामी।

''तत्रानन्द, पमाणिका पमिणन्ति —'इमस्स पि तेव धम्मा, अपरस्स पि तेव धम्मा। कस्मा नेसं एको हीनो एको पणीतो' ति? तं हि तेसं, आनन्द, होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय।

''तत्रानन्द, य्वायं पुग्गलो दुस्सीलो होति। तं च चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं पजानाति यत्थस्स तं दुस्सील्यं अपरिसेसं निरुज्झति। तस्स सवनेन पि कतं होति, बाहुसच्चेन

---

५. ''आनन्द! कहाँ वह मन्दबुद्धि स्त्री जाति की उपासिका मृगशाला और कहाँ विद्वान् पुरुषों की समझ से भी बाहर का यह परमतत्त्व ज्ञान!

''आनन्द! लोक में ये दश प्रकार के पुद्गल होते हैं। कौन से दश?

''आनन्द! यहाँ कोई पुद्गल दुःशील होता है। वह न चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को यथार्थतः जानता है कि उसकी दुःशीलता का पूर्णतः निरोध हो सके, न उसने धर्मश्रवण किया है, न वह बहुश्रुत है, उसकी दृष्टि भी अन्तस्तल तक गम्भीरता से चिन्तन के योग्य नहीं है, वह सामायिक विमुक्ति को भी प्राप्त नहीं कर पाया है। ऐसा वह, देहपात के बाद मरणानन्तर, हान (नाश) की ओर जायगा, विशेष (उन्नति) की ओर नहीं। वह हानगामी ही होगा, विशेषगामी नहीं।

६. ''आनन्द! यहाँ कोई दूसरा पुद्गल, दुःशील होते हुए भी, चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को यथार्थतः जानता है, जिससे कि उसकी दुःशीलता का निरोध हो जाता है। उसने धर्मश्रवण भी किया है, वह बहुश्रुत भी है, उसकी दृष्टि भी गहरायी तक देखने वाली है, सामयिक विमुक्ति भी वह प्राप्त कर चुका है। वह इस देहपात के बाद मरणानन्तर, विशेष की ओर ही बढ़ेगा, हान की ओर नहीं। वह विशेषगामी ही होगा, हानगामी नहीं।

''वहाँ, आनन्द! तार्किक लोग यह तर्क कर सकते हैं—'इसके भी वे ही धर्म हैं और उसके भी वे ही धर्म हैं, तब इनमें एक हीन तथा दूसरा उत्तम कैसे हो गया!' परन्तु आनन्द! उनका यह तर्क उनके लिये ही बहुत काल तक अहितकर एवं दुःखप्रद होगा।

''वहाँ, आनन्द! जो पुद्गल दुःशील होता है; परन्तु वह चेतोविमुक्ति तथा प्रज्ञाविमुक्ति को यथार्थतः जानता है, उससे उसकी दुःशीलता का निरोध हो जाता है। उसको धर्मश्रवण भी प्राप्त है,

पि कतं होति, दिट्ठिया पि पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं लभति। अयं आनन्द, पुग्गलो अमुना पुरिमेन पुग्गलेन अभिक्कन्ततरो च पणीततरो च। तं किस्स हेतु? इमं हानन्द, पुग्गलं धम्मसोतो निब्बहति। तदन्तरं को जानेय्य, अञ्ञत्र तथागतेन! तस्मातिह, आनन्द, मा [B.368] पुग्गलेसु पमाणिका अहुवत्थ, मा पुग्गलेसु पमाणं गण्हित्थ। खञ्ञति हानन्द, पुग्गलेसु पमाणं गण्हन्तो। अहं वा, आनन्द, पुग्गलेसु पमाणं गण्हेय्यं यो वा पनस्स मादिसो।

[R.141] ७. ''इध पनानन्द, एकच्चो पुग्गलो सीलवा होति। तं च चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं नप्पजानाति यत्थस्स तं सीलं अपरिसेसं निरुज्झति। तस्स सवनेन पि अकतं होति, बाहुसच्चेन पि अकतं होति, दिट्ठिया पि अप्पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं न लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा हानाय परेति, नो विसेसाय; हानगामीयेव होति, नो विसेसगामी।

८. ''इध पनानन्द, एकच्चो पुग्गलो सीलवा होति। तं च चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं पजानाति यत्थस्स तं सीलं अपरिसेसं निरुज्झति। तस्स सवनेन पि कतं होति, बाहुसच्चेन पि कतं होति, दिट्ठिया पि पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा विसेसाय परेति, नो हानाय; विसेसगामीयेव होति, नो हानगामी। [N.212] ''तत्रानन्द, पमाणिका पमिणन्ति ...पे०... अहं वा, आनन्द, पुग्गलेसु पमाणं गण्हेय्यं यो वा पनस्स मादिसो।

९. ''इध पनानन्द, एकच्चो पुग्गलो तिब्बरागो होति। तं च चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं नप्पजानाति यत्थस्स सो रागो अपरिसेसो निरुज्झति। तस्स सवनेन पि अकतं होति, बाहुसच्चेन पि अकतं होति, दिट्ठिया पि अप्पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं न लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा हानाय परेति, नो विसेसाय; हानगामीयेव होति, नो विसेसगामी।

वह बहुश्रुत भी है, उसकी दृष्टि भी गहरायी तक देखने वाली है। वह सामयिक विमुक्ति भी प्राप्त कर चुका है। वह पुरुष उस पहले पुद्गल से अपेक्षाकृत स्वच्छ एवं उत्तम होता है। वह क्यों? वह इसलिये कि उसका धर्मस्रोत प्रवहमाण है (सूखा नहीं है)। इस भेद (अन्तर) को तथागत के अतिरिक्त कौन जानेगा! अत: आनन्द! ऐसे पुद्गलों के विषय में तर्क का आश्रय न लो। यहाँ तर्क का आश्रयण करने वाले अपने लिये ही गड्ढा (गर्त) खोद रहे हैं। आनन्द! ऐसे पुद्गलों के विषय में या तो मैं प्रमाण हूँ या मेरे जैसा विज्ञ कोई मेरा शिष्य। (क)

७. ''यहाँ, आनन्द! कोई पुद्गल शीलवान् होता है, परन्तु वह चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को यथार्थत: नहीं जानता। ...पूर्ववत्...। *(पञ्चम अनुबन्ध के समान विस्तार।)*

८. ''और, आनन्द! कोई पुद्गल शीलवान् होता है; परन्तु वह उस चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को भी यथार्थत: जानता है ...पूर्ववत्...। *(षष्ठ अनुबन्ध के समान विस्तार।)* (ख)

९. ''यहाँ, आनन्द! कोई पुद्गल तीव्र रागवाला होता है; परन्तु वह उस चेतोविमुक्ति तथा प्रज्ञाविमुक्ति को नहीं जानता ...पूर्ववत्...। *(पञ्चम अनुबन्ध के समान विस्तार)*

१०. ''इध पनानन्द, एकच्चो पुग्गलो तिब्बरागो होति। तं च चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं पजानाति यत्थस्स सो रागो अपरिसेसो निरुज्झति। तस्स सवनेन पि कतं होति, बाहुसच्चेन पि कतं होति, दिट्ठिया पि पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा विसेसाय परेति, नो हानाय; विसेसगामीयेव [R.142] होति, नो हानगामी।

''तत्रानन्द, पमाणिका पमिणन्ति ...पे०... अहं वा, आनन्द, पुग्गलेसु [B.369] पमाणं गण्हेय्यं यो वा पनस्स मादिसो।

११. ''इध पनानन्द, एकच्चो पुग्गलो कोधनो होति। तं च चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं नप्पजानाति यत्थस्स सो कोधो अपरिसेसो निरुज्झति। तस्स सवनेन पि अकतं होति, बाहुसच्चेन पि अकतं होति, दिट्ठिया पि अप्पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं न लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा हानाय परेति, नो विसेसाय; हानगामीयेव होति, नो विसेसगामी।

१२. ''इध पनानन्द, एकच्चो पुग्गलो कोधनो होति। तं च चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं पजानाति यत्थस्स सो कोधो अपरिसेसो निरुज्झति। तस्स सवनेन पि कतं होति, बाहुसच्चेन पि कतं होति, दिट्ठिया पि पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा विसेसाय परेति, नो हानाय; विसेसगामीयेव होति, नो हानगामी।

''तत्रानन्द, पमाणिका पमिणन्ति ...पे०... अहं वा, आनन्द, पुग्गलेसु पमाणं गण्हेय्यं यो वा पनस्स मादिसो।

१३. ''इध पनानन्द, एकच्चो पुग्गलो उद्धतो होति। तं च चेतोविमुत्तिं [N.213] पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं नप्पजानाति यत्थस्स तं उद्धच्चं अपरिसेसं निरुज्झति। तस्स सवनेन पि अकतं होति, बाहुसच्चेन पि अकतं होति, दिट्ठिया पि अपटिविद्धं होति, सामायिकं पि

---

१०. ''यहाँ, आनन्द! कोई पुद्गल तीव्र रागवाला तो होता है, परन्तु वह उस चेतोविमुक्ति, प्रज्ञाविमुक्ति को भी यथार्थतः जानता है, जहाँ वह राग अपरिशेष निरुद्ध हो जाता है ...पूर्ववत्...। *(षष्ठ अनुबन्ध के समान विस्तार।)* (ग)

११. ''यहाँ, आनन्द! कोई पुद्गल क्रोधी होता है, परन्तु वह उस चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को यथार्थतः नहीं जानता जहाँ उसका वह अशेष क्रोध निवृत्त हो जाय ...पूर्ववत्...। *(पञ्चम अनुबन्ध के समान विस्तार।)*

१२. ''यहाँ, आनन्द ! कोई पुद्गल क्रोधी होता है; परन्तु वह उस चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को भी यथार्थतः जानता है, जहाँ उसका अशेष क्रोध निवृत्त हो जाय ...पूर्ववत्...। *(षष्ठ अनुबन्ध के समान विस्तार।)* (घ)

१३. ''यहाँ, आनन्द! कोई पुद्गल उद्धत (अविनीत) होता है, परन्तु वह उस चेतोविमुक्ति

विमुत्तिं न लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा हानाय परेति, नो विसेसाय; हानगामीयेव होति, नो विसेसगामी।

१४. "इध पनानन्द, एकच्चो पुग्गलो उद्धतो होति। तं च चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं पजानाति यत्थस्स तं उद्धच्चं अपरिसेसं निरुज्झति। तस्स सवनेन पि कतं होति, [R.143] बाहुसच्चेन पि कतं होति, दिट्ठिया पि पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा विसेसाय परेति, नो हानाय; विसेसगामीयेव होति, नो हानगामी।

[B.370] "तत्रानन्द, पमाणिका पमिणन्ति—'इमस्स पि तेव धम्मा, अपरस्स पि तेव धम्मा। कस्मा नेसं एको हीनो एको पणीतो' ति? तं हि तेसं, आनन्द, होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय।

"तत्रानन्द, य्वायं पुग्गलो उद्धतो होति। तं च चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं यथाभूतं पजानाति यत्थस्स तं उद्धच्चं अपरिसेसं निरुज्झति। तस्स सवनेन पि कतं होति, बाहुसच्चेन पि कतं होति, दिट्ठिया पि पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं लभति। अयं आनन्द, पुग्गलो अमुना पुरिमेन पुग्गलेन अभिक्कन्ततरो च पणीततरो च। तं किस्स हेतु? इमं हानन्द, पुग्गलं धम्मसोतो निब्बहति। तदन्तरं को जानेय्य, अञ्ञत्र तथागतेन! तस्मातिह, आनन्द, मा पुग्गलेसु पमाणिका अहुवत्थ: मा पुग्गलेसु पमाणं गण्हित्थ। खञ्ञति हानन्द, पुग्गलेसु पमाणं गण्हन्तो। अहं वा, आनन्द, पुग्गलेसु पमाणं गण्हेय्यं यो वा पनस्स मादिसो।

"का चानन्द, मिगसाला उपासिका बाला अब्यत्ता अम्मका अम्मकपञ्ञा, के च पुरिसपुग्गलपरोपरिये ञाणे! इमे खो, आनन्द, दस पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं।

१५. "यथारूपेन, आनन्द, सीलेन पुराणो समन्नागतो अहोसि तथारूपेन सीलेन इसिदत्तो समन्नागतो अभविस्स, नयिध पुराणो इसिदत्तस्स गतिं पि अञ्ञस्स। यथारूपाय [N.214, R.144] चानन्द, पञ्ञाय इसिदत्तो समन्नागतो अहोसि तथारूपाय पञ्ञाय पुराणो

प्रज्ञाविमुक्ति को यथार्थत: नहीं जानता, जिससे उसका अशेष औद्धत्य निवृत्त हो जाय ...पूर्ववत्... *(पञ्चम अनुबन्ध के समान विस्तार।)*

१४. "यहाँ, आनन्द! कोई पुद्गल उद्धत होता है, परन्तु वह उस चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को भी यथार्थत: जानता है, जिससे उसका अशेष औद्धत्य निरस्त हो जाय। ...पूर्ववत्...। *(षष्ठ अनुबन्ध के समान विस्तार।)* (ङ)

"आनन्द! कहाँ वह मन्दबुद्धि, स्त्री जाति वाली मृगशाला उपासिका और कहाँ विद्वान् पुरुषों की समझ से भी बाहर का यह परम तत्त्वज्ञान!

१५. "आनन्द! जैसे शील से वह पुराण समन्वित था उसी शील से यदि ऋषिदत्त भी समन्वित होता तो पुराण ऋषिदत्त की गति को नहीं जान पाता। और, आनन्द! यदि ऋषिदत्त जैसी

समन्नागतो अभविस्स, नयिध इसिदत्तो पुराणस्स गतिं पि अञ्ञस्स। इति खो, आनन्द, इमे पुग्गला उभो एकङ्गहीना'' ति॥ ●

६. तयोधम्मसुत्तं : १. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मा लोके न संविज्जेय्युं, न तथागतो लोके उप्पज्जेय्य अरहं सम्मासम्बुद्धो, न तथागतप्पवेदितो धम्मविनयो लोके दिब्बेय्य। कतमे तयो? जाति च, जरा च, मरणं च—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मा लोके न संविज्जेय्युं, न तथागतो लोके उप्पज्जेय्य अरहं सम्मासम्बुद्धो, न तथागतप्पवेदितो धम्मविनयो लोके दिब्बेय्य। यस्मा च खो, भिक्खवे, इमे तयो धम्मा लोके संविज्जन्ति तस्मा तथागतो लोके उप्पज्जति अरहं सम्मासम्बुद्धो, तस्मा तथागतप्पवेदितो धम्मविनयो लोके दिब्बति।

२. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो जातिं पहातुं जरं पहातुं [B.371] मरणं पहातुं। कतमे तयो? रागं अप्पहाय, दोसं अप्पहाय, मोहं अप्पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे अप्पहाय अभब्बो जातिं पहातुं जरं पहातुं मरणं पहातुं।

३. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो रागं पहातुं दोसं पहातुं मोहं पहातुं। कतमे तयो? सक्कायदिट्ठिं अप्पहाय, विचिकिच्छं अप्पहाय, सीलब्बतपरामासं अप्प-हाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे अप्पहाय अभब्बो रागं पहातुं दोसं पहातुं मोहं पहातुं।

४. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो सक्कायदिट्ठिं पहातुं [R.145] विचिकिच्छं पहातुं सीलब्बतपरामासं पहातुं। कतमे तयो? अयोनिसो मनसिकारं अप्पहाय,

---

प्रज्ञा से समन्वित था उसी प्रज्ञा से यदि पुराण भी समन्वित होता तो ऋषिदत्त पुराण की गति को नहीं जान पाता। वस्तुतः, आनन्द ये दोनों ही पुद्गल साधना के एक एक अङ्ग से हीन थे॥'' ●

६. धर्मत्रयसूत्र : : धर्मत्रयत्याग के विना दश धर्मों का त्याग असम्भव

१. ''भिक्षुओ! यदि ये तीन धर्म संसार में न होते तो न तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध अवतरित होते और न उनके द्वारा धर्म ही लोक में इतना महत्त्व प्राप्त कर पाता। कौन से तीन धर्म? जाति (जन्म), जरा (बुढ़ापा) एवं मरण। भिक्षुओ! यदि ये तीन धर्म लोक में न होते तो न तथागत अवतरित होते और न उनके द्वारा उपदिष्ट धर्म ही लोक में इतना प्रसिद्ध होता। क्योंकि, भिक्षुओ! लोक में ये तीन धर्म हैं अतः तथागत भी यहाँ अवतरित होते हैं तथा उनके द्वारा उपदिष्ट धर्म भी इतना महत्त्व प्राप्त करता है।

२. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का त्याग किये विना जाति, जरा एवं मरण का प्रहाण नहीं हो सकता। कौन से तीन? राग, द्वेष एवं मोह—इन तीन धर्मों का त्याग किये विना जाति, जरा एवं मरण का प्रहाण असम्भव है।

३. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का त्याग किये विना भी जाति, जरा एवं मरण—इनका प्रहाण नहीं किया जा सकता। किन तीन का? १. सत्कायदृष्टि, २. विचिकित्सा एवं शीलव्रतपरामर्श—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का ह्रास किये विना राग, द्वेष एवं मोह का नाश असम्भव है।

४. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का नाश किये विना सत्कायदृष्टि, विचिकित्सा एवं शीलव्रत-

कुम्मग्गसेवनं अप्पहाय, चेतसो लीनत्तं अप्पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे अप्पहाय अभब्बो सक्कायदिट्ठिं पहातुं विचिकिच्छं पहातुं सीलब्बतपरामासं पहातुं।

५. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो अयोनिसो मनसिकारं पहातुं [N.215] कुम्मग्गसेवनं पहातुं चेतसो लीनत्तं पहातुं। कतमे तयो? मुट्ठसच्चं अप्पहाय, असम्पजञ्ञं अप्पहाय, चेतसो विक्खेपं अप्पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे अप्पहाय अभब्बो अयोनिसो मनसिकारं पहातुं कुम्मग्गसेवनं पहातुं चेतसो लीनत्तं पहातुं।

६. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो मुट्ठसच्चं पहातुं असम्पजञ्ञं पहातुं चेतसो विक्खेपं पहातुं। कतमे तयो? अरियानं अदस्सनकम्यतं अप्पहाय, अरियधम्मस्स असोतुकम्यतं अप्पहाय, उपारम्भचित्ततं अप्पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे अप्पहाय अभब्बो मुट्ठसच्चं पहातुं असम्पजञ्ञं पहातुं चेतसो विक्खेपं पहातुं।

७. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो अरियानं अदस्सनकम्यतं पहातुं अरियधम्मस्स असोतुकम्यतं पहातुं उपारम्भचित्ततं पहातुं। कतमे तयो? उद्धच्चं अप्पहाय, [B.372] असंवरं अप्पहाय, दुस्सीलं अप्पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे अप्पहाय अभब्बो अरियानं अदस्सनकम्यतं पहातुं अरियधम्मस्स असोतुकम्यतं पहातुं उपारम्भचित्ततं पहातुं।

[R.146] ८. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो उद्धच्चं पहातुं असंवरं पहातुं

परामर्श का नाश भी असम्भव है। किन तीन धर्मों का? अनुचित मनःसङ्कल्प, कुमार्ग का आश्रयण, तथा चित्त का सङ्कोच—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का त्याग किये विना सत्कायदृष्टि, विचिकित्सा एवं शीलव्रतपरामर्श का नाश भी असम्भव है।

५. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का नाश किये विना अनुचित मनःसङ्कल्प, कुमार्ग का आश्रयण तथा चित्त के सङ्कोच का नाश असम्भव है। कौन से तीन? लुप्तस्मृति, असम्प्रजन्य एवं चित्त का विक्षेप—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का त्याग किये विना अनुचित मनःसङ्कल्प, कुमार्ग का आश्रयण तथा चित्त के सङ्कोच का नाश असम्भव है।

६. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का नाश किये विना लुप्तस्मृति, असम्प्रजन्य एवं चित्त के विक्षेप का नाश नहीं किया जा सकता। कौन से तीन? आर्यजनों को न देखने की इच्छा, आर्यधर्मों को न सुनने की इच्छा एवं उपालम्भचित्तता—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का नाश किये विना लुप्तस्मृति, असम्प्रजन्य एवं चित्त के विक्षेप का नाश नहीं किया जा सकता।

७. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का नाश किये विना आर्यजनों को न देखने की इच्छा, आर्य-धर्मों को न सुनने की इच्छा एवं उपालम्भचित्तता का भी नाश नहीं किया जा सकता। कौन से तीन धर्मों का नाश? उद्धतता, इन्द्रियों का असंयम एवं दुःशीलता—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का नाश किये विना आर्यों को न देखने की इच्छा, आर्यधर्मों को न सुनने की इच्छा तथा उपालम्भचित्तता का नाश नहीं किया जा सकता।

८. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का नाश किये विना उद्धतता, इन्द्रियों का असंयम एवं

दुस्सील्यं पहातुं। कतमे तयो? अस्सद्धियं अप्पहाय, अवदञ्ञुतं अप्पहाय, कोसज्जं अप्पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे अप्पहाय अभब्बो उद्धच्चं पहातुं असंवरं पहातुं दुस्सील्यं पहातुं।

९. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो अस्सद्धियं पहातुं अवदञ्ञुतं पहातुं कोसज्जं पहातुं। कतमे तयो? अनादरियं अप्पहाय, दोवचस्सतं अप्पहाय, पापमित्ततं अप्पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे अप्पहाय अभब्बो अस्सद्धियं पहातुं अवदञ्ञुतं पहातुं कोसज्जं पहातुं।

१०. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो अनादरियं पहातुं दोवचस्सतं पहातुं पापमित्ततं पहातुं। कतमे तयो? अहिरिकं अप्पहाय, अनोत्तप्पं अप्पहाय, पमादं अप्पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे अप्पहाय अभब्बो अनादरियं पहातुं दोवचस्सतं पहातुं पापमित्ततं पहातुं।

११. ''अहिरिकोयं, भिक्खवे, अनोत्तापी पमत्तो होति। सो पमत्तो समानो अभब्बो अनादरियं पहातुं दोवचस्सतं पहातुं पापमित्ततं पहातुं। सो पापमित्तो समानो [N.216] अभब्बो अस्सद्धियं पहातुं अवदञ्ञुतं पहातुं कोसज्जं पहातुं। सो कुसीतो समानो अभब्बो उद्धच्चं पहातुं असंवरं पहातुं दुस्सील्यं पहातुं। सो दुस्सीलो समानो अभब्बो अरियानं अदस्सनकम्यतं पहातुं अरियधम्मस्स असोतुकम्यतं पहातुं उपारम्भचित्ततं पहातुं। सो उपारम्भचित्तो समानो अभब्बो मुट्ठस्सच्चं पहातुं असम्पजञ्ञं पहातुं चेतसो विक्खेपं [R.147]

दु:शीलता का नाश भी नहीं किया जा सकता। कौन से तीन धर्म? अश्रद्धा, अवदान्यता (अनुदारता) एवं कौसीद्य (आलस्य)—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का नाश किये विना उद्धतता, इन्द्रियों का असंयम एवं दुश्शीलता का भी नाश नहीं किया जा सकता।

९. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का नाश किये विना अश्रद्धा, अवदान्यता एवं कौसीद्य का भी प्रहाण नहीं किया जा सकता। कौन से तीन? अनादर, अनाज्ञाकारिता (अवज्ञा) एवं पापमित्रता। भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का त्याग किये विना अश्रद्धा, अवदान्यता एव कौसीद्य का प्रहाण असम्भव है।

१०. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का नाश किये विना, अनादर, अवज्ञा एवं पापमित्रता का नाश भी असम्भव है। कौन से तीन? निर्लज्जता, अपापभीरुता एवं प्रमाद—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का नाश किये विना अनादर, अवज्ञा एवं पापमित्रता का नाश भी असम्भव है।

११. क्योंकि, भिक्षुओ! निर्लज्ज पुरुष पापकर्म करने से न डरता हुआ प्रमत्त होकर साधना करता है। वह प्रमत्त होकर भी किसी का अनादर या अवज्ञा न करे तथा पापियों की सङ्गति छोड़ दे—यह सम्भव नहीं है। इस प्रकार वह पापियों की सङ्गति करता हुआ अश्रद्धा, अनुदारता एवं आलस्य को त्याग दे—यह भी सम्भव नहीं है। पुन: वह आलसी होता हुआ भी औद्धत्य, इन्द्रियों का असंयम एवं दुश्शीलता त्याग दे—यह भी सम्भव नहीं है। वह दुश्शील होता हुआ भी आर्यों के दर्शन की इच्छा, आर्यधर्मों के श्रवण की इच्छा, या उनकी निन्दा न करने का मन बनायगा—यह भी

पहातुं। सो विक्खित्तचित्तो समानो अभब्बो अयोनिसो मनसिकारं पहातुं कुम्मग्गसेवनं पहातुं विचिकिच्छं पहातुं सीलब्बतपरामासं पहातुं। सो विचिकिच्छो समानो अभब्बो रागं पहातुं [B.373] दोसं पहातुं मोहं पहातुं। सो रागं अप्पहाय दोसं अप्पहाय मोहं अप्पहाय अभब्बो जातिं पहातुं जरं पहातुं मरणं पहातुं॥

१२. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो जातिं पहातुं जरं पहातुं मरणं पहातुं। कतमे तयो? रागं पहाय, दोसं पहाय, मोहं पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे पहाय भब्बो जातिं पहातुं जरं पहातुं मरणं पहातुं।

१३. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो रागं पहातुं दोसं पहातुं मोहं पहातुं। कतमे तयो? सक्कायदिट्ठिं पहाय, विचिकिच्छं पहाय, सीलब्बतपरामासं पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे पहाय भब्बो रागं पहातुं दोसं पहातुं मोहं पहातुं।

१४. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो सक्कायदिट्ठिं पहातुं विचिकिच्छं पहातुं सीलब्बतपरामासं पहातुं। कतमे तयो? अयोनिसो मनसिकारं पहाय, कुम्मग्गसेवनं पहाय, चेतसो लीनत्तं पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे पहाय भब्बो सक्कायदिट्ठिं पहातुं विचिकिच्छं पहातुं सीलब्बतपरामासं पहातुं।

१५. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो अयोनिसो मनसिकारं पहातुं कुम्मग्ग-

---

सम्भव नहीं है। वह उन (आर्यजनों एवं आर्यधर्मों) की निन्दा करता हुआ अपनी लुप्तस्मृति का, असम्प्रजन्य का या चित्तविक्षेप का परिमार्जन कर सकेगा—यह भी सम्भव नहीं है। वह विक्षिप्तचित्त होता हुआ अनुचित मन:सङ्कल्प (अयोनिशो मनस्कार), कुमार्गगमन एवं चित्त के सङ्कोच को त्याग देगा—यह भी सम्भव नहीं है। इस प्रकार वह चित्त से सङ्कुचित होता हुआ सत्कायदृष्टि, विचिकित्सा एवं शीलव्रतपरामर्श को छोड़ देगा—यह भी सम्भव नहीं है। वह सर्वत्र सन्दिग्धदृष्टि होता हुआ राग, द्वेष एवं मोह का त्याग कर सकेगा—यह भी सम्भव नहीं है। तब वह इन राग, द्वेष एवं मोह को न छोड़ता हुआ भी जाति, जरा एवं मरण से मुक्त रह सकेगा—यह कथमपि सम्भव नहीं है। (क)

१२. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के त्याग से जाति, जरा एवं मरण का त्याग सम्भव है। कौन से तीन धर्मों के त्याग से? राग के त्याग से, द्वेष के त्याग से तथा मोह के त्याग से। भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के त्याग से जाति, जरा एवं मरण का प्रहाण सर्वथा सम्भव है।

१३. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से राग, द्वेष एवं मोह का प्रहाण किया जा सकता है। किन तीन धर्मों के प्रहाण से? सत्कायदृष्टि, विचिकित्सा एवं शीलव्रतपरामर्श के प्रहाण से। भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से राग, द्वेष एवं मोह का प्रहाण सम्भव है।

१४. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से सत्कायदृष्टि, विचिकित्सा एवं शीलव्रतपरामर्श का प्रहाण किया जा सकता है। किन तीन धर्मों के प्रहाण से? अनुचित मन:सङ्कल्प, कुमार्गगमन एवं चित्त के सङ्कोच के त्याग से। भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से सत्कायदृष्टि, विचिकित्सा एव शीलव्रतपरामर्श का प्रहाण किया जा सकता है।

सेवनं पहातुं चेतसो लीनत्तं पहातुं। कतमे तयो? मुट्ठसच्चं पहाय, असम्पजञ्ञं पहाय, चेतसो विक्खेपं पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे पहाय भब्बो अयोनिसो मनसिकारं पहातुं कुम्मग्गसेवनं पहातुं चेतसो लीनत्तं पहातुं।

१६. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो मुट्ठसच्चं पहातुं [N.217, R.148] असम्पजञ्ञं पहातुं चेतसो विक्खेपं पहातुं। कतमे तयो? अरियानं अदस्सनकम्यतं पहाय, अरियधम्मस्स असोतुकम्यतं पहाय, उपारम्भचित्ततं पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे पहाय भब्बो मुट्ठसच्चं पहातुं असम्पजञ्ञं पहातुं चेतसो विक्खेपं पहातुं।

१७. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो अरियानं अदस्सनकम्यतं पहातुं अरियधम्मस्स असोतुकम्यतं पहातुं उपारम्भचित्ततं पहातुं। कतमे तयो? उद्धच्चं [B.374] पहाय, असंवरं पहाय, दुस्सील्यं पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे पहाय भब्बो अरियानं अदस्सनकम्यतं पहातुं अरियधम्मस्स असोतुकम्यतं पहातुं उपारम्भचित्ततं पहातुं।

१८. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो उद्धच्चं पहातुं असंवरं पहातुं दुस्सीलं पहातुं। कतमे तयो? असद्धियं पहाय, अवदञ्ञुतं पहाय, कोसज्जं पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे पहाय भब्बो उद्धच्चं पहातुं असंवरं पहातुं दुस्सीलं पहातुं।

१९. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो असद्धियं पहातुं अवदञ्ञुतं पहातुं कोसज्जं पहातुं! कतमे तयो? अनादरियं पहाय, दोवचस्सतं पहाय, पापमित्ततं पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे पहाय भब्बो असद्धियं पहातुं अवदञ्ञुतं पहातुं कोसज्जं पहातुं।

---

१५. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से अनुचित मनःसङ्कल्प, कुमार्गगमन एवं चित्त के सङ्कोच का प्रहाण किया जा सकता है। कौन तीन? लुप्तस्मृतिता, असम्प्रजन्य तथा चित्तविक्षेप का त्याग। भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से अनुचित मनःसङ्कल्प, कुमार्गसेवन एवं चित्त के सङ्कोच का त्याग किया जा सकता है।

१६. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से लुप्तस्मृतिता, असम्प्रजन्य तथा चित्तविक्षेप का त्याग किया जा सकता है। कौन तीन? आर्यजनों के न देखने की इच्छा, आर्य धर्मों को न सुनने की इच्छा तथा उपालम्भचित्तता—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों का प्रहाण कर लुप्तस्मृतिता, असम्प्रजन्य एवं चित्तविक्षेप का प्रहाण किया जा सकता है।

१७. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से आर्यों के दर्शन के प्रति अनिच्छा, आर्यधर्मों के श्रवण के प्रति अनिच्छा तथा उपालम्भचित्तता का प्रहाण किया जा सकता है। किन तीन धर्मों के? उद्धतता, इन्द्रियों का असंयम तथा दुःशीलता—इन तीन धर्मों के त्याग से आर्यों के दर्शन के प्रति अनिच्छा—आदि का प्रहाण किया जा सकता है।

१८. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों को त्यागकर, औद्धत्य, इन्द्रियों के असंयम एवं दुःशीलता का त्याग किया जा सकता है। किन तीन धर्मों का? अश्रद्धा, अवदान्यता (अनुदारता) एवं कौसीद्य (आलस्य)—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से औद्धत्य, इन्द्रियों के असंयम तथा दुःशीलता का प्रहाण किया जा सकता है।

२०. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो अनादरियं पहातुं दोवचस्सतं पहातुं पापमित्ततं पहातुं। कतमे तयो ? अहिरिकं पहाय, अनोत्तप्पं पहाय, पमादं पहाय—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मे पहाय भब्बो अनादरियं पहातुं दोवचस्सतं पहातुं पापमित्ततं पहातुं।

२१. ''हिरीमा, भिक्खवे, ओत्तापी अप्पमत्तो होति। सो अप्पमत्तो समानो भब्बो अनादरियं पहातुं दोवचस्सतं पहातुं पापमित्ततं पहातुं। सो कल्याणमित्तो समानो भब्बो [R.149] अस्सद्धियं पहातुं अवदञ्ञुतं पहातुं कोसज्जं पहातुं। सो आरद्धविरियो समानो भब्बो उद्धच्चं पहातुं असंवरं पहातुं दुस्सील्यं पहातुं। सो सीलवा समानो भब्बो अरियानं [N.218] अदस्सनकम्यतं पहातुं अरियधम्मस्स असोतुकम्यतं पहातुं उपारम्भचित्ततं पहातुं। सो अनुपारम्भचित्तो समानो भब्बो मुट्ठसच्चं पहातुं असम्पजञ्ञं पहातुं चेतसो विक्खेपं पहातुं। सो अविक्खित्तचित्तो समानो भब्बो अयोनिसो मनसिकारं पहातुं कुम्मग्गसेवनं पहातुं चेतसो लीनत्तं पहातुं। सो अलीनचित्तो समानो भब्बो सक्कायदिट्ठिं पहातुं विचिकिच्छं पहातुं [B.375] सीलब्बतपरामासं पहातुं। सो अविचिकिच्छो समानो भब्बो रागं पहातुं दोसं पहातुं मोहं पहातुं। सो रागं पहाय दोसं पहाय मोहं पहाय भब्बो जातिं पहातुं जरं पहातुं मरणं पहातुं'' ति॥ ●

७. काकसुत्तं : १. ''दसहि, भिक्खवे, असद्धम्मेहि समन्नागतो काको। कतमेहि दसहि ? धंसी च, पगब्भो च, तिन्तिणो च, महग्घसो च, लुद्धो च, अकारुणिको च, दुब्बलो

---

१९. ''भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से अश्रद्धा, अवदान्यता एवं कौसीद्य का प्रहाण किया जा सकता है। किन तीन धर्मों के प्रहाण से ? अनादर, अवज्ञा एवं पापमित्रता—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से अश्रद्धा एवं अवदान्यता और पापमित्रता का प्रहाण किया जा सकता है।

२०. ''भिक्षुओ! इन तीनों धर्मों का प्रहाण कर अनादर, अवज्ञा एवं पापमित्रता का प्रहाण किया जा सकता है। किन तीन धर्मों के ? निर्लज्जता, अपापभीरुता, एवं प्रमाद—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण से अनादर, अवज्ञा एवं पापमित्रता का प्रहाण किया जा सकता है।

२१. ''भिक्षुओ! लज्जा के कारण कोई पुद्गल पापभीरु एवं अप्रमत्त (सावधान) हो जाता है। वह अप्रमत्त होता हुआ वह अनादर, अवज्ञा एवं पापमित्रता के प्रहाण में समर्थ हो सकता है। वह सबका कल्याणमित्र होता हुआ अश्रद्धा, अनुदारता एवं आलस्य का त्याग कर सकता है। वह उद्योग करता हुआ औद्धत्य, इन्द्रियों के असंयम एवं दुःशीलता को त्याग सकता है। वह शीलवान् होता हुआ आर्यों के दर्शन में अनिच्छा, आर्यधर्मों के श्रवण में अनिच्छा एवं उपालम्भचित्तता—इन धर्मों को त्याग सकता है। वह आर्यों को उपालम्भ न देता हुआ लुप्तस्मृतिता, असम्प्रजन्य एवं चित्तविक्षेप को त्याग सकता है। वह अविक्षिप्तचित्त होता हुआ अनुचित मनःसङ्कल्प, कुमार्गसेवन एवं चित्तसङ्कोच—इन धर्मों को त्याग सकता है। वह उदारचित्त होता हुआ सत्कायदृष्टि, विचिकित्सा एवं शीलव्रतपरामर्श का भी त्याग कर सकता है। वह अविचिकित्स होता हुआ राग, द्वेष एवं मोह का प्रहाण कर सकता है। तब वह राग, द्वेष एवं मोह का प्रहाण करता हुआ जाति, जरा एवं मरण के प्रहाण में भी समर्थ हो सकता है॥' ●

च, ओरविता च, मुट्ठस्सति च, नेचयिको च—इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि असद्धम्मेहि समन्नागतो काको। एवमेव खो, भिक्खवे, दसहि असद्धम्मेहि समन्नागतो पापभिक्खु। कतमेहि दसहि? धंसी च, पगब्भो च, तिन्तिणो च, महग्घसो च, लुद्धो च, अकारुणिको च, दुब्बलो च, ओरविता च, मुट्ठस्सति च, नेचयिको च—इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि असद्धम्मेहि समन्नागतो पापभिक्खू'' ति॥ ●

८. निगण्ठसुत्तं : १. ''दसहि, भिक्खवे, असद्धम्मेहि समन्नागता [R.150] निगण्ठा। कतमेहि दसहि? असद्धा, भिक्खवे, निगण्ठा; दुस्सीला, भिक्खवे, निगण्ठा; अहिरिका, भिक्खवे, निगण्ठा; अनोत्तप्पिनो, भिक्खवे, निगण्ठा; असप्पुरिससम्भत्तिनो, भिक्खवे, निगण्ठा; अत्तुक्कंसकपरवम्भका, भिक्खवे, निगण्ठा; सन्दिट्ठिपरामासा आधानग्गाही दुप्पटिनिस्सग्गिनो, भिक्खवे, निगण्ठा; कुहका, भिक्खवे, निगण्ठा; पापिच्छा, भिक्खवे, निगण्ठा; पापमित्ता, भिक्खवे, निगण्ठा—इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि असद्धम्मेहि समन्नागता निगण्ठा'' ति॥ ●

९. आघातवत्थुसुत्तं : १. ''दसयिमानि, भिक्खवे, आघातवत्थूनि। [N.219] कतमानि दस? 'अनत्थं मे अचरी' ति आघातं बन्धति; 'अनत्थं मे चरती' ति आघातं

---

७. काकसूत्र : : दश पापधर्मों से युक्त कौआ एवं भिक्षु

१. ''भिक्षुओ! कौआ (काक) इन दश असत् धर्मों से युक्त होता है। किन दश से? १. वह ध्वंसी (नष्ट-भ्रष्ट करने वाला) होता है, २. वह प्रगल्भ (चालाक) होता है, ३. वह तिन्तिण (लालची) होता है, ४. बहुत अधिक खाने वाला (पेटू) होता है, ५. लोभी होता है, ६. निर्दय होता है, ७. दुर्बल (डरपोक) होता है, ८. व्यर्थ चिल्लाता है, ९. विस्मरणशील होता है तथा १०. नैचयिक (परिग्रही) होता है। भिक्षुओ! कौआ इन दश असत् धर्मों से युक्त होता है। इसी प्रकार, भिक्षुओ! कोई पापभिक्षु भी दश असद्धर्मों से युक्त होता है। किन दश असत् धर्मों से? वह ध्वंसी ...पूर्ववत्... नैचयिक (परिग्रही) होता है। भिक्षुओ! कोई पापभिक्षु इन दश असद्धर्मों से युक्त होता है॥'' ●

८. निगण्ठसूत्र : : दश असद्धर्मों से युक्त निर्ग्रन्थ (जैन)

१. ''भिक्षुओ! ये निर्ग्रन्थ (जैन मतानुयायी) श्रमण दश असद्धर्मों से युक्त होते हैं। किन दश से? (१) ये निर्ग्रन्थ रत्नत्रय के प्रति अश्रद्धालु होते हैं, (२) ये दुःशील होते हैं, (३) ये लज्जारहित होते हैं, (४) ये पापभीरुता से रहित होते हैं, (५) ये असत्पुरुषों के साथी होते हैं, (६) ये अपनी बड़ाई तथा दूसरों की निन्दा करने वाले होते हैं (७) ये निरर्थक शीलव्रतों के भ्रम में पड़े रहते हैं, दुराग्राह, एवं अनुचित का त्याग बहुत कठिनता से करते है, (८) ये कृत्रिम आचरण वाले (ढोंगी) होते हैं, (९) ये पापेच्छु होते हैं तथा (१०) ये पापियों को मित्र बनाना अच्छा समझते हैं—भिक्षुओ! ये निर्ग्रन्थ इन दश धर्मों से युक्त होते हैं''॥ ●

९. आघातवस्तुसूत्र : : दश आघातवस्तुएँ

१. ''भिक्षुओ! ये दश द्वेषोत्पादक बातें हैं। कौन सी दश? (१) 'इसने मेरा अनर्थ किया'—इस कारण कोई द्वेष बाँध लेता है, (२) 'यह मेरा अनर्थ कर रहा है'—इस कारण कोई द्वेष बाँध

बन्धति; 'अनत्थं मे चरिस्सती' ति आघातं बन्धति; 'पियस्स मे मनापस्स अनत्थं अचरी' ति ...पे०... 'अनत्थं चरती' ति ...पे०... 'अनत्थं चरिस्सती' ति आघातं बन्धति, 'अप्पियस्स मे अमनापस्स अत्थं अचरी' ति ...पे०... 'अत्थं चरती' ति ...पे०... अत्थं चरिस्सती ति [B.376] आघातं बन्धति; अट्ठाने च कुप्पति—इमानि खो, भिक्खवे, दस आघातवत्थूनी'' ति॥ ●

१०. आघातपटिविनयसुत्तं : १. ''दसयिमे, भिक्खवे, आघातपटिविनया। कतमे दस? 'अनत्थं मे अचरि, तं कुतेत्थ लब्भा' ति आघातं पटिविनेति, 'अनत्थं मे चरति, तं [R.151] कुतेत्थ लब्भा' ति आघातं पटिविनेति, 'अनत्थं मे चरिस्सति, तं कुतेत्थ लब्भा' ति आघातं पटिविनेति, पियस्स मे मनापस्स अनत्थं अचरि ...पे०... चरति ...पे०... चरिस्सति, तं कुतेत्थ लब्भा ति आघातं पटिविनेति, अप्पियस्स मे अमनापस्स अत्थं अचरि ...पे०... अत्थं चरति ...पे०... अत्थं चरिस्सति, तं कुतेत्थ लब्भा ति आघातं पटिविनेति, अट्ठाने च न कुप्पति—इमे खो, भिक्खवे, दस आघातपटिविनया'' ति॥ ●

आकङ्खवग्गो अट्ठमो॥

तस्सुद्दानं

आकङ्खो कण्टको इट्ठा, वड्ढि च मिगसालाय।
तयो धम्मा च काको च, निगण्ठा द्वे च आघाता ति॥

लेता है; (३) 'यह मेरा अनर्थ करेगा'—इस कारण कोई द्वेष बाँध लेता है; (४) 'इसने मेरे प्रिय का अनर्थ किया'—इस कारण..., (५) 'यह मेरे प्रिय का अनर्थ करता है'—इस कारण..., (६) 'यह मेरे प्रिय का अनर्थ करेगा'—इस कारण...। (७) 'इसने मेरे अप्रिय (विरोधी) का हित किया'—इस कारण..., (८) 'यह मेरे विरोधी का हित करता है'—इस कारण..., (९) 'यह मेरे विरोधी का हित करेगा'—इस कारण कोई द्वेष बाँध लेता है तथा (१०) असमय में तथा प्रसङ्ग न होने पर भी क्रोध करता रहता है—भिक्षुओ! इन दश बातों से किसी के साथ द्वेष बँधता है॥'' ●

१०. आघातप्रतिविनयसूत्र : : द्वेश शामक दश वस्तुएँ

१. ''भिक्षुओ! ये दश बातें आघात (द्वेष) शामक होती हैं। कौन सी दश? (१) 'इसने मेरा अनर्थ किया—यह कैसे सम्भव है'—यह सोचकर द्वेष शान्त कर लेता है; (२) 'यह मेरा अनर्थ करता है—यह कैसे सम्भव है'—यह सोचकर...; (३) 'यह मेरा अनर्थ करेगा—यह कैसे सम्भव है'—यह सोचकर...; (४) 'इसने मेरे प्रिय का अनर्थ किया—यह कैसे सम्भव है'—यह सोचकर...; (५) 'यह मेरे प्रिय का अनर्थ करता है—यह कैसे सम्भव है'—यह सोचकर...; (६) 'यह मेरे प्रिय का अनर्थ करेगा—यह कैसे सम्भव है'—यह सोचकर...; (७) 'इसने मेरे अप्रिय का हित किया—यह कैसे सम्भव है'—यह सोचकर..., (८) 'यह मेरे अप्रिय का हित करता है—यह कैसे सम्भव है'—यह सोचकर...; (९) 'यह मेरे अप्रिय का हित करेगा—यह कैसे सम्भव है'—यह सोचकर द्वेष शान्त कर लेता है; तथा (१०) समय तथा प्रसङ्ग आने पर भी क्रोध नहीं करता—भिक्षुओ! ये दश वस्तुएँ द्वेषशामक होती हैं॥'' ●

९. थेरवग्गो

१. वाहनसुत्तं : १. एकं समयं भगवा चम्पायं विहरति गग्गराय पोक्खरणिया तीरे। अथ खो आयस्मा वाहनो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं [N.220] अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा वाहनो भगवन्तं एतदवोच—

२. ''कतीहि नु खो, भन्ते धम्मेहि तथागतो निस्सटो विसंयुत्तो विप्पमुत्तो विमरियादीकतेन चेतसा विहरती'' ति?

३. ''दसहि खो, वाहन, धम्मेहि तथागतो निस्सटो विसंयुत्तो विप्पमुत्तो [R.152] विमरियादीकतेन चेतसा विहरति। कतमेहि दसहि? रूपेन खो, वाहन, तथागतो निस्सटो विसंयुत्तो विप्पमुत्तो विमरियादीकतेन चेतसा विहरति, वेदनाय खो, वाहन ...पे०... [B.377] सञ्ञाय खो, वाहन,... सङ्खारेहि खो, वाहन... विञ्ञाणेन खो, वाहन... जातिया खो, वाहन... जराय खो, वाहन... मरणेन खो, वाहन... दुक्खेहि खो, वाहन... किलेसेहि खो, वाहन, तथागतो निस्सटो विसंयुत्तो विप्पमुत्तो विमरियादीकतेन चेतसा विहरति। सेय्यथापि, वाहन, उप्पलं वा पदुमं वा पुण्डरीकं वा उदके जातं उदके संवड्ढं उदका पच्चुग्गम्म ठितं अनुपलित्तं उदकेन; एवमेव खो, वाहन, इमेहि दसहि धम्मेहि तथागतो निस्सटो विसंयुत्तो विप्पमुत्तो विमरियादीकतेन चेतसा विहरती'' ति॥ ●

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. आकांक्षसूत्र, २. कण्टकसूत्र, ३. इष्टधर्मसूत्र, ४. वृद्धिसूत्र, ५. मृगशालासूत्र, ६. धर्मत्रय-सूत्र, ७. काकसूत्र, ८. निगण्ठसूत्र, ९. आघातवस्तुसूत्र एवं १०. आघातप्रतिविनयसूत्र॥ ●

९. स्थविर वर्ग

१. वाहनसूत्र : : तथागत की दश धर्मों से युक्त साधना

१. एक समय भगवान् चम्पानदी की गग्गरा नामक पुष्करिणी के तीर पर साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् वाहन भगवान् के सम्मुख आये ...पूर्ववत्... यह जिज्ञासा प्रकट की—

२. ''भन्ते! किन धर्मों से युक्त होकर तथागत लोक में किससे निःसृत (दूर) रहते हुए, कोई सम्पर्क न रखते हुए, विप्रमुक्त हुए, तथा विमर्यादीकृत (निःसीम) चित्त से साधनारत रहते हैं?''

३. ''वाहन! तथागत दश धर्मों से युक्त होकर लोक में ...पूर्ववत्... साधना करते हैं। किन दश धर्मों से? (१) तथागत रूप से ...पूर्ववत्... (२) वेदना से..., (३) संज्ञा से..., (४) संस्कारों से..., (५) विज्ञान से..., (६) जाति से..., (७) जरा से..., (८) मरण से..., (९) दुःखों से..., (१०) क्लेशों से निःसृत, वियुक्त एवं विप्रमुक्त रहते हुए विमर्यादीकृत चित्त से साधना करते हैं। वाहन! जैसे कोई उत्पल (नीलकमल), पद्म (श्वेत कमल), या पुण्डरीक (रक्तकमल) जल में

२. आनन्दसुत्तं : १. अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं आनन्दं भगवा एतदवोच—

२. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'अस्सद्धो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

३. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'दुस्सीलो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

४. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'अप्पस्सुतो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

५. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'दुब्बचो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं [R.153] वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

[N.221] ६. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'पापमित्तो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

७. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'कुसीतो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

८. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'मुट्ठस्सति समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

[B.378] ९. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'असन्तुट्ठो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

उत्पन्न होकर भी, बढ़ता हुआ भी जल से ऊपर उठकर जल से असम्पृक्त रहता है; इसी प्रकार, वाहन! इन दश धर्मों से मुक्त तथागत ...पूर्ववत्... चित्त से साधना करते हैं॥''

२. आनन्दसूत्र : : धर्मविनय में अवृद्धि एवं वृद्धिकारक दश धर्म

१. तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के पास आये ...पूर्ववत्... आयुष्मान् आनन्द को भगवान् ने यह उपदेश किया—

२. ''आनन्द! इस धर्मविनय में **अश्रद्धालु** रहता हुआ कोई भिक्षु वृद्धि या विरूढ़ि (उन्नति) पा लेगा—यह सम्भव नहीं है। (१)

३. ''आनन्द! **दुःशील** होकर भी कोई भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्...। (२)

४. ''आनन्द **अल्पश्रुत** होकर भी कोई भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्...। (३)

५. ''आनन्द! **दुर्वच** (अनाज्ञाकारी) हो कर भी कोई भिक्षु इस धर्म विनय में ...पूर्ववत्...। (४)

६. ''आनन्द! **पापियों के संसर्ग में रहने वाला** कोई भिक्षु इस ...पूर्ववत्...। (५)

७. ''आनन्द! साधना में **आलसी** होता हुआ भी कोई भिक्षु इस ...पूर्ववत्...। (६)

१०. "सो वतानन्द, भिक्खु 'पापिच्छो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

११. "सो वतानन्द, भिक्खु 'मिच्छादिट्ठिको समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

"सो वतानन्द, भिक्खु 'इमेहि दसहि धम्मेहि समन्नागतो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति॥

१२. "सो वतानन्द, भिक्खु 'सद्धो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति।

१३. "सो वतानन्द, भिक्खु 'सीलवा समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति।

१४. "सो वतानन्द, भिक्खु 'बहुस्सुतो सुतधरो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति।

१५. "सो वतानन्द, भिक्खु 'सुवचो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति।

१६. "सो वतानन्द, भिक्खु 'कल्याणमित्तो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति।

१७. "सो वतानन्द, भिक्खु 'आरद्धविरियो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति।

---

८. "आनन्द! साधना में **विस्मृति करने वाला** कोई भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्... । (७)

९. "आनन्द! **असन्तुष्ट** रहनेवाला कोई भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्... । (८)

१०. "आनन्द! **पापवासना रखने वाला** कोई भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्... । (९)

११. "आनन्द! **मिथ्यादृष्टि** कोई भिक्षु इस धर्मविनय में वृद्धि ...पूर्ववत्... । (१०)

"आनन्द! इन दश धर्मों से युक्त कोई भिक्षु इस धर्मविनय में वृद्धि या उन्नति प्राप्त कर सकेगा—यह सम्भव नहीं है॥ (क)

१२. "आनन्द! इस धर्मविनय में **श्रद्धालु** होता हुआ ही कोई भिक्षु वृद्धि या उन्नति प्राप्त कर ले—यह सम्भव है। (१)

१३. "आनन्द! कोई **शीलवान्** भिक्षु इस धर्मविनय में...पूर्ववत्... । (२)

१४. "आनन्द! कोई **बहुश्रुत** श्रुतधर एवं श्रुतसन्निचय भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्... । (३)

१५. "आनन्द! कोई **आज्ञाकारी (विनम्र)** भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्... । (४)

१६. "आनन्द! कोई **कल्याणमित्र** भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्... । (५)

१७. "आनन्द! कोई **उदयोगरत** भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्... । (६)

१८. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'उपट्ठितस्सति समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं [R.154] विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति।

[N.222] १९. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'सन्तुट्ठो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति।

२०. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'अपिच्छो समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति।

[B.379] २१. ''सो वतानन्द, भिक्खु 'समादिट्ठिको समानो इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति।

३. पुण्णियसुत्तं : १. अथ खो आयस्मा पुण्णियो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा पुण्णियो भगवन्तं एतदवोच—

२. ''को नु खो, भन्ते, हेतु को पच्चयो येन अप्पेकदा तथागतं धम्मदेसना पटिभाति अप्पेकदा नप्पटिभाती'' ति ?

३. ''सद्धो च, पुण्णिय, भिक्खु होति, नो च उपसङ्कमिता; नेव ताव तथागतं धम्मदेसना पटिभाति। यतो च खो, पुण्णिय, भिक्खु सद्धो च होति उपसङ्कमिता च, एवं तथागतं धम्मदेसना पटिभाति।

४. ''सद्धो च, पुण्णिय, भिक्खु होति उपसङ्कमिता च, नो च पयिरुपासिता

---

१८. ''आनन्द! कोई **स्मृतिमान्** भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्...। (७)

१९. ''आनन्द! **सन्तुष्ट** रहता हुआ कोई भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्...। (८)

२०. ''आनन्द! **अल्पेच्छ** रहता हुआ कोई भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्...। (९)

२१. ''आनन्द! **सम्यग्दृष्टि** रहता हुआ कोई भिक्षु इस धर्मविनय में ...पूर्ववत्...। (१०)

''आनन्द! कोई इन दश धर्मों से युक्त भिक्षु ही इस धर्मविनय में वृद्धि या उन्नति कर सकेगा—यह सम्भव है॥''

३. पुण्णियसूत्र : : भगवान् की धर्मदेशना

१. तब आयुष्मान् पुण्णिय जहाँ भगवान् विराजमान थे, वहाँ पहुँचे...भगवान् से यह जिज्ञासा प्रकट की—

२. ''भन्ते! इसमें क्या कारण है, क्या प्रत्यय है कि कभी भगवान् किसी को धर्मदेशना करना चाहते हैं, कभी नहीं?''

३. ''पुण्णिय! कोई भिक्षु श्रद्धालु होते हुए भी तथागत के सम्मुख नहीं आता, उसको भगवान् धर्मदेशना नहीं करते। परन्तु जो श्रद्धालु भी है तथा उनके सम्मुख भी आता है उसको ही भगवान् धर्मदेशना करते हैं। (१)

४. ''पुण्णिय! जो भिक्षु श्रद्धालु भी होता है, भगवान् के सम्मुख भी आता है, परन्तु उनकी

...पे०... पयिरुपासिता च, नो च परिपुच्छिता... परिपुच्छिता च, नो च ओहितसोतो धम्मं सुणाति... ओहितसोतो च धम्मं सुणाति, नो च सुत्वा धम्मं धारेति... सुत्वा च धम्मं धारेति, नो च धातानं धम्मानं अत्थं उपपरिक्खति... धातानं च धम्मानं अत्थं उपपरिक्खति नो च अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो होति... अत्थमञ्ञाय धम्म- [R.155] मञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति, नो च कल्याणवाचो होति कल्याणवाक्करणो पोरिया वाचाय समन्नागतो विस्सट्ठाय अनेलगळाय अत्थस्स विञ्ञापनिया... कल्याणवाचो च होति कल्याणवाक्करणो पोरिया वाचाय समन्नागतो विस्सट्ठाय अनेलगळाय अत्थस्स विञ्ञापनिया, नो च सन्दस्सको होति समादपको समुत्तेजको सम्पहंसको [N.223] सब्रह्मचारीनं, नेव ताव तथागतं धम्मदेसना पटिभाति।

५. ''यतो च खो, पुण्णिय, भिक्खु सद्धो च होति, उपसङ्कमिता च, पयिरुपासिता च, परिपुच्छिता च, ओहितसोतो च धम्मं सुणाति, सुत्वा च धम्मं धारेति, धातानं च धम्मानं अत्थं उपपरिक्खति, अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति, [B.380] कल्याणवाचो च होति कल्याणवाक्करणो पोरिया वाचाय समन्नागतो विस्सट्ठाय अनेल-गळाय अत्थस्स विञ्ञापनिया, सन्दस्सको च होति समादपको समुत्तेजको सम्पहंसको सब्रह्मचारीनं—एवं तथागतं धम्मदेसना पटिभाति। इमेहि खो, पुण्णिय, दसहि धम्मेहि समन्नागता एकन्तपटिभाना तथागतं धम्मदेसना होती'' ति॥ ●

४. व्याकरणसुत्तं : १. तत्र खो आयस्मा महामोग्गल्लानो भिक्खू आमन्तेसि—

पर्युपासना (सेवा) नहीं करता ...पूर्ववत्...पर्युपासना भी करता है, परन्तु प्रश्न नहीं करता...प्रश्न भी करता है परन्तु (तथागतदेशना को) ध्यान से सुनता नहीं है...ध्यान से सुनता भी है, परन्तु उस सुने हुए को धारण नहीं करता... सुनकर धर्म को धारण भी कर लेता है, परन्तु उसके अर्थज्ञान में सचेष्ट नहीं होता... अर्थज्ञान में भी सचेष्ट होता है, परन्तु अर्थ को जानकर भी, धर्म को जानकर भी तदनुसार आचरण नहीं करता... तदनुसार आचरण भी करता है, परन्तु कल्याणकारी वाणी नहीं बोलता... कल्याणमयी वाणी भी बोलता है, परन्तु वह साथियों के लिये सन्दर्शक समादपक नहीं होता। ऐसे भिक्षु को तथागत धर्मदेशना नहीं करते। (२-१०)

५. ''पुण्णिय! जो भिक्षु तथागत के प्रति श्रद्धालु भी होता है, सम्मुख भी आता है, सम्मुख आकर उनकी पर्युपासना भी करता है, प्रश्न भी करता है, मन लगाकर धर्मश्रवण करता है, सुनकर उसको धारण करता है, उसका अर्थज्ञान करता है, अर्थ जानकर धर्म जानकर तदनुसार आचरण करता है, तथा कल्याणवाक् होकर साथियों को मधुर वाणी में उपदेश करता है, तथा उनको धर्म के प्रति समुत्तेजित एवं सम्प्रहृष्ट करता है—ऐसे भिक्षु को तथागत धर्मदेशना करते हैं। (१-१०)

''पुण्णिय! तथागत इन दश धर्मों से युक्त भिक्षु को ही एकान्तज्ञानयुक्त धर्मदेशना करते हैं॥'' ●

४. व्याकरणसूत्र : : धर्मों का दशविध व्याकरण

१. वहाँ आयुष्मान् महामौद्गल्यायन ने भिक्षुओं को ...पूर्ववत्... यह कहा—

''आवुसो भिक्खवे'' ति। ''आवुसो'' ति खो ते भिक्खू आयस्मतो महामोग्गल्लानस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा महामोग्गल्लानो एतदवोच—

२. ''इधावुसो, भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं [R.156] करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो समनुयुञ्जति समनुग्गाहति समनुभासति। सो तथागतेन वा तथागतसावकेन वा झायिना समापत्तिकुसलेन परचित्त-कुसलेन परचित्तपरियायकुसलेन समनुयुञ्जियमानो समनुग्गाहियमानो समनुभासियमानो इरीणं आपज्जति विचिनं आपज्जति अनयं आपज्जति ब्यसनं आपज्जति अनयब्यसनं आपज्जति।

३. ''तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो एवं चेतसा चेतो परिच्च मनसि करोति—'किं नु खो अयमायस्मा [N.224] अञ्ञं ब्याकरोति—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति ?

४. ''तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो [B.381] परचित्तपरियायकुसलो एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानाति—'कोधनो खो अयमा-यस्मा; कोधपरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। कोधपरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'उपनाही खो पन अयमायस्मा; उपनाहपरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। उपनाह-परियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

---

२. ''यहाँ, आयुष्मानो ! कोई भिक्षु अपने ज्ञान का यों व्याख्यान करें—'मेरी भवपरम्परा क्षीण हो चुकी है, मेरी धर्मसाधना पूर्ण हो चुकी है, मेरा अब कोई कर्त्तव्य शेष नहीं है, अब मैं वर्तमान अवस्था पुन: प्राप्त नहीं करूँगा।' उसके इस ज्ञान की परीक्षा हेतु ध्यानी, साधनाकुशल, परचित्तकुशल, परचित्तज्ञानकुशल तथागत या तथागत का कोई शिष्य उससे प्रश्नोत्तर करता है, संवाद करता है, उसके कथन की वास्तविकता का परीक्षा करता है। तथागत या तथागत के शिष्य द्वारा इस प्रकार परीक्षित वह भिक्षु कष्ट में पड़ जाता है, समालोचित होता है, सचाई पर पहुँचा दिया जाता है, सङ्कट में पड़ जाता है तथा अनय एवं व्यसन को प्राप्त होता है।

३. ''तब ध्यानी साधनाकुशल एवं परचित्तज्ञानकुशल तथागत या तथागत का कोई शिष्य स्वचित्त से उस भिक्षु का चित्त जानकर यह मन में चिन्तन करता है—'क्या यह भिक्षु अपने जिस (उपर्युक्त) ज्ञान का इस प्रकार व्याख्यान कर रहा है, वह उचित है' ?

४. ''तब ...पूर्ववत्... उसके विषय में यह निश्चय करता है—'यह आयुष्मान् **क्रोधी** है, क्रोधयुक्त चित्त से प्राय: साधना करता है; परन्तु इस प्रकार क्रोधयुक्त कर्म करना तथागत के धर्मविनय में हानि कहलाता है। (१)

'यह आयुष्मान् **उपनाही** (द्वेषचित्त) है ...पूर्ववत्... । (२)

...'मक्खी खो पन अयमायस्मा; मक्खपरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। मक्खपरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'पळासी खो पन अयमायस्मा; पळासपरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। पळास-परियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'इस्सुकी खो पन अयमायस्मा; इस्सापरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। इस्सापरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'मच्छरी खो पन अयमायस्मा; मच्छेरपरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। मच्छेरपरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। [R.157]

...'सठो खो पन अयमायस्मा; साठेय्यपरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। साठेय्यपरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'मायावी खो पन अयमायस्मा; मायापरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। मायापरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'पापिच्छो खो पन अयमायस्मा; इच्छापरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। इच्छापरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। [N.225]

...'सति खो पन अयमायस्मा उत्तरि करणीये ओरमत्तकेन विसेसाधिगमेन [B.382] अन्तरा वोसानं आपन्नो। अन्तरा वोसानगमनं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं'।

५. ''सो वतावुसो, भिक्खु 'इमे दस धम्मे अप्पहाय इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। सो वतावुसो, भिक्खु 'इमे दस धम्मे पहाय इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जती'' ति॥

'यह आयुष्मान् **म्रक्षी** (दूसरे की उन्नति से चिढ़ने वाला) है ...पूर्ववत्...। (३)

'यह आयुष्मान् **प्रदाशी** (दूसरे के गुणों से जलन करने वाला) है ...पूर्ववत्...। (४)

'यह आयुष्मान् **ईर्ष्यालु** है ...पूर्ववत्...। (५)

'यह आयुष्मान् **मत्सरी** (मिथ्याभिमानी) है ...पूर्ववत्...। (६)

'यह आयुष्मान् **शठ** (दुष्ट) है ...पूर्ववत्...। (७)

'यह आयुष्मान् **मायावी** (धूर्त) है ...पूर्ववत्...। (८)

'यह आयुष्मान् **पापेच्छुक** है ...पूर्ववत्...। (९)

'यह आयुष्मान् साधना के प्रत्येक क्रम के मध्य में व्यवधान रखता हुआ ही आगे साधना आरम्भ करता आया है। साधना में यह व्यवधान रखना इस धर्मविनय में हानि माना गया है। (१०)

५. ''इस प्रकार, आयुष्मानो! वह भिक्षु साधना में इन दश धर्मों को छोड़े विना इस धर्मविनय में वृद्धि एवं उन्नति प्राप्त कर सकेगा—यह सम्भव नहीं है। अपितु इसके विपरीत, वह भिक्षु इन दश धर्मों को छोड़कर इस धर्मविनय में वृद्धि एवं उन्नति प्राप्त कर सकेगा—यही सम्भव है॥''

५. कत्थीसुत्तं : १. एकं समयं आयस्मा महाचुन्दो चेतीसु विहरति सहजातियं। तत्र खो आयस्मा महाचुन्दो भिक्खू आमन्तेसि—"आवुसो भिक्खवे" ति। "आवुसो" ति खो ते भिक्खू आयस्मतो महाचुन्दस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा महाचुन्दो एतदवोच—

२. "इधावुसो, भिक्खु कत्थी होति विकत्थी अधिगमेसु—'अहं पठमं झानं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं दुतियं झानं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं ततियं झानं [R.158] समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं चतुत्थं झानं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं आकासानञ्चायतनं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं विञ्ञाणञ्चायतनं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं आकिञ्चञ्ञायतनं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतनं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं सञ्ञावेदयित निरोधं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पी' ति।

३. "तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो समनुयुञ्जति समनुग्गाहति समनुभासति। सो तथागतेन वा तथागतसावकेन वा झायिना समापत्तिकुसलेन परचित्तकुसलेन परचित्तपरियायकुसलेन समनुयुञ्जियमानो समनुग्गाहियमानो समनुभासियमानो इरीणं आपज्जति विचिनं आपज्जति अनयं आपज्जति व्यसनं आपज्जति अनयब्यसनं आपज्जति।

[N.226,B.383] ४. "तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो एवं चेतसा चेतो परिच्च मनसि करोति—'किं नु खो अयमायस्मा कत्थी होति विकत्थी अधिगमेसु—अहं पठमं झानं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि ...पे०... अहं सञ्ञावेदयितनिरोधं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पी' ति।

५. "तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो

---

५. कत्थिसूत्र : : धर्म-व्याख्याता के दश धर्मों में कुछ कमी

१. एक समय आयुष्मान् महाचुन्द चेदि देश के सहजाति नगर के पास साधनाहेतु ठहरे हुए थे। वहाँ कभी आयुष्मान् महाचुन्द ने भिक्षुओं को ...पूर्ववत्... यह धर्मप्रवचन किया—

२. "यहाँ, आयुष्मानो! कोई भिक्षु अपनी अभ्यस्त धर्मसाधना की प्रशंसा में यह कहता है—'मैं प्रथम ध्यान की समाधि को प्राप्त भी करता हूँ, उससे उठता भी हूँ, द्वितीय ध्यान...तृतीय ध्यान...चतुर्थध्यान...आकाशानन्त्यायतन...विज्ञानानन्त्यायतन...आकिञ्चन्यायतन...नैवसंज्ञानासंज्ञायतन... संज्ञावेदयितनिरोध समाधि को प्राप्त भी करता हूँ, उससे उठता भी हूँ।'

३. "तब ध्यानी, प्राप्तिकुशल, परचित्तकुशल, परचित्तज्ञानकुशल तथागत या तथागतशिष्य उस भिक्षु के इस कथन पर उससे संवाद करता है, उसके कथन की सत्यता का ज्ञान करता है, उससे प्रश्नोत्तर करता है। तथागत या तथागतश्रावक द्वारा ऐसा किया जाने पर वह भिक्षु पकड़ में आ जाता है, उसकी आलोचना होती है, वह उनके द्वारा सचाई पर पहुँचा दिया जाता है, वह सङ्कट में घिर जाता है, यों वह अनय-व्यसन को प्राप्त होता है।

४. "तब ध्यानी, समापत्तिकुशल, परचित्तकुशल, परचित्तज्ञानकुशल तथागत या तथागत

परचित्तपरियायकुसलो एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानाति—'दीघरत्तं खो अयमायस्मा खण्डकारी छिद्दकारी सबलकारी कम्मासकारी न सन्ततकारी न सन्ततवुत्ति सीलेसु। दुस्सीलो खो अयमायस्मा। दुस्सील्यं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'अस्सद्धो खो पन अयमायस्मा; अस्सद्धियं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'अप्पसुतो खो पन अयमायस्मा अनाचारो; अप्पसच्चं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। [R.159]

...'दुब्बचो खो पन अयमायस्मा; दोवचस्सता खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'पापमित्तो खो पन अयमायस्मा; पापमित्तता खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'कुसीतो खो पन अयमायस्मा; कोसज्जं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'मुट्ठस्सति खो पन अयमायस्मा; मुट्ठसच्चं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

...'कुहको खो पन अयमायस्मा; कोहञ्ञं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

श्रावक इस भिक्षु के कथन पर चित्त से चित्त को जानकर चिन्तन करते हैं—'क्या इस भिक्षु का यह कथन सत्य है— ...पूर्ववत्... ?

५. तब तथागत या तथागत श्रावक, स्वचित्त से उसके चित्त को जानकर उसके विषय में निश्चय करते हैं—'अरे! यह साधक शील-पालन में छिद्रकारी, खण्डकारी, विभाजनकारी रहा है, इसने अपनी साधना में निरन्तरता नहीं रखी है। न शीलों का पालन ही निरन्तर किया है। यह आयुष्मान् तो **दुश्शील** है'। इस दुश्शीलता को तथागतविनय में हानिकारक ही बताया है। (१)

'यह आयुष्मान् **अश्रद्धालु** है,... अश्रद्धा को ...पूर्ववत्...। (२)

'यह आयुष्मान् **अल्पश्रुत** है, एवं आचाररहित है, आचाररहितता को, अल्पश्रुतता को... पूर्ववत्...। (३)

'यह आयुष्मान् **अनाज्ञाकारी** है, अनाज्ञाकारिता को ...पूर्ववत्...। (४)

'यह आयुष्मान् **पापमित्र** है, पापमित्रता को ...पूर्ववत्...। (५)

'यह आयुष्मान् **आलसी** है, आलस्य को ...पूर्ववत्...। (६)

'यह आयुष्मान् **लुप्तस्मृति** है, लुप्तस्मृति को ...पूर्ववत्....। (७)

'यह आयुष्मान् **कुहक** (मिथ्या अभिनेता, ढोंगी) है, इस कुहना (ढोंग) को ...पूर्ववत्...। (८)

...'दुब्भरो खो पन अयमायस्मा; दुब्भरता खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

[B.384] ...'दुप्पञ्ञो खो पन अयमायस्मा; दुप्पञ्ञता खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।

६. ''सेय्यथापि, आवुसो, सहायको सहायकं एवं वदेय्य—'यदा ते सम्म, धनेन [N.227] धनकरणीयं अस्स, याचेय्यासि मं धनं। दस्सामि ते धनं' ति। सो किञ्चिदेव धनकरणीये समुप्पन्ने सहायको सहायकं एवं वदेय्य—'अत्थो मे, सम्म, धनेन। देहि मे धनं' ति। सो एवं वदेय्य—'तेन हि, सम्म, इध खनाही' ति। सो तत्र खनन्तो नाधिगच्छेय्य। सो एवं वदेय्य—'अलिकं मं, सम्म, अवच; तुच्छकं मं, सम्म, अवच—इध खनाही' ति। सो [R.160] एवं वदेय्य—'नाहं तं, सम्म, अलिकं अवचं, तुच्छकं अवचं। तेन हि, सम्म, इध खनाही' ति। सो तत्र पि खनन्तो नाधिगच्छेय्य। सो एवं वदेय्य—'अलिकं मं, सम्म, अवच, तुच्छकं मं, सम्म, अवच—इध खनाही' ति। सो एवं वदेय्य—'नाहं तं, सम्म, अलिकं अवचं, तुच्छकं अवचं। अपि च अहमेव उम्मादं पापुणिं चेतसो विपरियायं' ति।

''एवमेव खो, आवुसो, भिक्खु कत्थी होति विकत्थी अधिगमेसु—'अहं पठमं झानं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं दुतियं झानं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं ततियं झानं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं चतुत्थं झानं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं आकासानञ्चायतनं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं विञ्ञाणञ्चायतनं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं नेवसञ्ञानाञ्ञायतनं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पि, अहं सञ्ञावेदयित-निरोधं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पी' ति।

''यह आयुष्मान् **दुर्भर** (कठिनता से पालन-पोषण के योग्य) है, दुर्भरता ...पूर्ववत्...। (९)

''यह आयुष्मान् **दुष्प्रज्ञ** है, दुष्प्रज्ञता को ...पूर्ववत्...। (१०)

६. जैसे, आयुष्मानो! कोई सहायक अपने किसी सहायक को यह कहे—'जब तुम्हें कुछ अतिरिक्त धन की आवश्यकता हो तो मुझसे माँग लेना। मैं तुमको (माँगा हुआ) धन दे दूँगा।' तब वह पहला सहायक उस सहायक से कभी धन की आवश्यकता पड़ने पर कहे—मित्र! आज मुझे धन की आवश्यकता है, अत: अपने कथनानुसार मुझको धन दो।' तब वह कहे—'ठीक है, मित्र! यहाँ खोद कर ले लो।' वह वहाँ भूमि को खोदे, परन्तु धन न मिले। तब वह कहे—'अरे! तुमने तो मुझसे असत्य एवं नि:सार बात कही, यहाँ खोदने पर भी मुझको कुछ नहीं मिला।' तब वह पुन: कहे— 'नहीं, मित्र! मैंने असत्य नहीं कहा, अब तुम यहाँ खोदो, यहाँ तुमको अवश्य मिल जायगा।' इस प्रकार तीन-चार बार कहने के बाद वह कह दे—'नहीं मित्र! मैं असत्य नहीं बोल रहा; हाँ, मुझे कुछ विस्मृति हो गयी है, मेरा चित्त भ्रान्त हो गया है, मैं वास्तविक स्थान को नहीं स्मरण कर पा रहा हूँ।'

''इसी प्रकार, आयुष्मानो! वह भिक्षु अपनी साधना की उपलब्धियों को बताता हुआ यह कहे—'मैंने प्रथम ध्यान ...पूर्ववत्... संज्ञावेदयितनिरोध की प्राप्ति भी कर ली है।' ...पूर्ववत्... ॥''

७. ''तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो समनुयुञ्जति समनुग्गाहति समनुभासति। सो तथागतेन वा तथागतसावकेन वा झायिना समापत्तिकुसलेन परचित्तकुसलेन परचित्तपरियायकुसलेन समनुयुञ्जियमानो समनुग्गाहियमानो समनुभासियमानो इरीणं आपज्जति विचिनं [B.385] आपज्जति अनयं आपज्जति ब्यसनं आपज्जति अनयब्यसनं आपज्जति।

८. ''तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो एवं चेतसा चेतो परिच्च मनसि करोति—'किं नु खो [N.228] अयमायस्मा कत्थी होति विकत्थी अधिगमेसु—अहं पठमं झानं समापज्जामि पि ...पे०... अहं सञ्ञावेदयितनिरोधं समापज्जामि पि वुट्ठहामि पी' ति।

८. ''तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो चेतसा चेतो परिच्च पजानाति—'दीघरत्तं खो अयमायस्मा [R.161] खण्डकारी छिद्दकारी सबलकारी कम्मासकारी, न सन्ततकारी न सन्ततवुत्ति सीलेसु। दुस्सीलो खो अयमायस्मा; दुस्सील्यं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'अस्सद्धो खो पन अयमायस्मा; अस्सद्धियं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'अप्प स्सुतो खो पन अयमायस्मा अनाचारो; अप्पसच्चं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'दुब्बचो खो पन अयमायस्मा; दोवचस्सता खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'पापमित्तो खो पन अयमायस्मा; पापमित्तता खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'कुसीतो खो पन अयमायस्मा; कोसज्जं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'मुट्ठस्सति खो पन अयमायस्मा; मुट्ठसच्चं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'कुहको खो पन अयमायस्मा; कोहञ्ञं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'दुब्भरो खो पन अयमायस्मा; दुब्भरता [B.336] खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'दुप्पञ्ञो खो पन अयमायस्मा; दुप्पञ्ञता खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं'।

१०. ''सो वतावुसो, भिक्खु 'इमे दस धम्मे अप्पहाय इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। सो वतावुसो, भिक्खु 'इमे दस धम्मे पहाय इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जती'' ति॥ ●

६. अधिमानसुत्तं : १. एकं समयं आयस्मा महाकस्सपो राजगहे [N.229]

---

७. *[इस शेष सूत्र का विस्तार अनुपद में वर्णित व्याकरण सूत्र के समान कर लें।]* ●

६. अधिमान सूत्र : : स्वसाधना का मिथ्याव्याख्याता

१. एक समय आयुष्मान् महाकाश्यप राजगृहस्थित वेणुवन में कलन्दकनिवाप में साधना कर रहे थे। उस समय आयुष्मान् महाकाश्यप ने भिक्षुओं को ...पूर्ववत्... यह धर्मप्रवचन किया—

विहरति वेळुवने कलन्दकनिवापे। तत्र खो आयस्मा महाकस्सपो भिक्खू आमन्तेसि— [R.162] "आवुसो भिक्खवे" ति। "आवुसो" ति खो ते भिक्खू आयस्मतो महाकस्सपस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा महाकस्सपो एतदवोच—

२. "इधावुसो, भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो समनुयुञ्जति समनुग्गाहति समनुभासति। सो तथागतेन वा तथागतसावकेन वा झायिना समापत्तिकुसलेन परचित्तकुसलेन परचित्तपरियायकुसलेन समनुयुञ्जियमानो समनुग्गाहियमानो समनुभासियमानो इरीणं आपज्जति विचिनं आपज्जति अनयं आपज्जति ब्यसनं आपज्जति अनयब्यसनं आपज्जति।

३. "तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो एवं चेतसा चेतो परिच्च मनसि करोति—'किं नु खो अयमायस्मा अञ्ञं ब्याकरोति—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति।

[B.387] ४. "तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानाति—'अधिमानिको खो अयमायस्मा अधिमानसच्चो, अप्पत्ते पत्तसञ्ञी, अकते कतसञ्ञी, अनधिगते अधिगतसञ्ञी। अधिमानेन अञ्ञं ब्याकरोति—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति।

५. "तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो एवं चेतसा चेतो परिच्च मनसि करोति—'किं नु खो अयमायस्मा निस्साय अधिमानिको अधिमानसच्चो, अप्पत्ते पत्तसञ्ञी, अकते कतसञ्ञी, अनधिगते

२-३. "आयुष्मानो! यहाँ कोई भिक्षु अपनी साधनाप्राप्ति का व्याख्यान इस प्रकार करता है ...पूर्ववत्... जानता हूँ।

४. "तब ध्यानी प्राप्तिकुशल, परचित्तकुशल, परचित्तज्ञानकुशल तथागत या कोई तथागत श्रावक उस भिक्षु के चित्त के चिन्तन को स्वचित्त से इस प्रकार जान लेता है—'यह आयुष्मान् व्यर्थ अहङ्कारी है, अपने अहङ्कार को सत्य समझ बैठा है। यह अप्राप्त को भी 'पा गया'—ऐसा समझता है, अकृत को 'कर चुका'—ऐसा समझता है, अज्ञात को भी 'जान गया'—ऐसा समझता है। यह वृथाभिमान के कारण ही अपनी उपलब्धि का यों व्याख्यान कर रहा है—'मेरी जन्मपरम्परा क्षीण हो चुकी है ...पूर्ववत्... मैं अब इस रूप में कभी नहीं आऊँगा।'

५. "तब वे ध्यानी ...पूर्ववत्... तथागत या तथागतश्रावक उस भिक्षु के चित्त को स्वचित्त से जानकर यह चिन्तन करते हैं—'यह आयुष्मान् किसका आश्रयण कर यह अहङ्कार कर रहा है ...पूर्ववत्... ?"

अधिगतसञ्ञी। अधिमानेन अञ्ञं ब्याकरोति—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, [R.163] कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति।

६. ''तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो [N.230] परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानाति—'बहुस्सुतो खो पन अयमायस्मा सुतधरो सुतसन्निचयो, ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याण सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा। तस्मा अयमायस्मा अधिमानिको अधिमानसच्चो, अप्पत्ते पत्तसञ्ञी अकते कतसञ्ञी, अनधिगते अधिगतसञ्ञी। अधिमानेन अञ्ञं ब्याकरोति—खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति।

७. ''तमेनं तथागतो वा तथागतसावको वा झायी समापत्तिकुसलो परचित्तकुसलो परचित्तपरियायकुसलो एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानाति—'अभिज्झालु खो पन अयमायस्मा; अभिज्झापरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। अभिज्झापरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।'ब्यापन्नो खो पन अयमायस्मा ब्यापाद- [B.388] परियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। ब्यापादपरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।'थीनमिद्धो खो पन अयमायस्मा थीनमिद्धपरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। थीनमिद्धपरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।'उद्धतो खो पन अयमायस्मा उद्धच्चपरियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। उद्धच्चपरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।'विचिकिच्छो खो पन अयमायस्मा विचिकिच्छा-परियुट्ठितेन चेतसा बहुलं विहरति। विचिकिच्छापरियुट्ठानं खो पन तथागतप्पेवदिते धम्मविनये परिहानमेतं।'कम्मारामो खो पन अयमायस्मा कम्मरतो कम्मारामतं अनुयुत्तो। कम्मारामता खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं।'भस्सारामो खो पन [R.164]

---

६. ''तब वे ध्यानी ...पूर्ववत्... तथागत या तथागतश्रावक स्वचित्त से उसके चित्त को जानकर, यह समझ पाते हैं—'यह आयुष्मान् बहुश्रुत होने का अभिमान कर रहा है तथा आदि अन्त तथा मध्य में भी कल्याणकारक धर्मों को...दृष्टि से सुप्रतिविद्ध होने का अभिमान कर रहा है; तभी अप्राप्त को प्राप्त ...पूर्ववत्... ऐसा जानता हूँ।

७. ''...पूर्ववत्... यह आयुष्मान् अभिध्यालु (लोभी) है...। (१)

''...पूर्ववत्... यह आयुष्मान् व्यापादचित्त है ...पूर्ववत्...। (२)

''...पूर्ववत्... यह आयुष्मान् आलसी है ...पूर्ववत्...। (३)

''...पूर्ववत्... यह आयुष्मान् उद्धत है ...पूर्ववत्...। (४)

''...पूर्ववत्... यह आयुष्मान् सन्दिग्धचित्त है ...पूर्ववत्...। (५)

''...पूर्ववत्... यह आयुष्मान् लौकिक कर्म में ही सुखानुभव करता है ...पूर्ववत्...। (६)

[N.231] अयमायस्मा भस्सरतो भस्सारामतं अनुयुत्तो। भस्सारामता खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'निद्दारामो खो पन अयमायस्मा निद्दारतो निद्दारामतं अनुयुत्तो। निद्दारामता खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'सङ्गणिकारामो खो पन अयमायस्मा सङ्गणिकरतो सङ्गणिकारामतं अनुयुत्तो। सङ्गणिकारामता खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं। 'सति खो पन अयमायस्मा उत्तरि करणीये ओरमत्तकेन विसेसाधिगमेन अन्तरा वोसानं आपन्नो। अन्तरा वोसानगमनं खो पन तथागतप्पवेदिते धम्मविनये परिहानमेतं'।

८. "सो वतावुसो, भिक्खु 'इमे दस धम्मे अप्पहाय इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं [B.389] विरूब्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। सो वतावुसो, भिक्खु 'इमे दस धम्मे पहाय इमस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सती' ति ठानमेतं विज्जती" ति॥ ●

७. **नप्पियसुत्तं** : १. तत्र खो भगवा कालङ्कतं भिक्खुं आरब्भ भिक्खू आमन्तेसि—"भिक्खवो" ति। "भदन्ते" ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. "इध, भिक्खवे, भिक्खु अधिकरणिको होति, अधिकरणसमथस्स न वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु अधिकरणिको होति अधिकरणसमथस्स न वण्णवादी, अयं पि धम्मो न पियताय न गरुताय न भावनाय न सामञ्ञाय न एकीभावाय संवत्तति।

'...पूर्ववत्... यह आयुष्मान् कलह में ही सुखानुभव करता है ...पूर्ववत्...। (७)

'...पूर्ववत्... यह आयुष्मान् निद्रा में ही सुखानुभव करता है....पूर्ववत्...। (८)

'...पूर्ववत्... यह आयुष्मान् जनसम्मर्द (भीड़) में ही सुखानुभव करता है ...पूर्ववत्...। (९)

' ...पूर्ववत्... यह आयुष्मान् साधना के प्रत्येक क्रम के मध्य में व्यवधान रखता हुआ ही आगे साधना कर रहा है। जबकि इस धर्मविनय के अन्तर्गत साधना में व्यवधान रखना हानि माना गया है। (१०)

८. आयुष्मानो! वह भिक्षु साधना में इन उपर्युक्त दश धर्मों को छोड़े विना इस धर्मविनय में वृद्धि या उन्नति प्राप्त कर सकेगा—यह सम्भव नहीं है। अपितु वह भिक्षु इन दश धर्मों के परित्याग से ही इस धर्मविनय में उन्नति एवं वृद्धि प्राप्त कर सकेगा—यही सम्भव है॥" ●

७. नप्रियसूत्र : : दश धर्मों का त्याग

१. वहाँ भगवान् ने किसी कालकृत (मृत) भिक्षु के प्रसङ्ग में भिक्षुओं को ...पूर्ववत्... यह उपदेश किया—

२. "यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु विवाद तो कर लेता है, परन्तु उस विवाद को शान्त करने की प्रशंसा नहीं करता। भिक्षुओ! उसका यह कार्य उसे लिये न प्रियता का, न गौरव का, न साधना का, न श्रमणभाव का न एकता का ही वर्धक होगा। (१)

३. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु न सिक्खाकामो होति, सिक्खाकामस्स [R.165] न वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु न सिक्खाकामो होति, सिक्खाकामस्स न वण्णवादी, अयं पि धम्मो न पियताय न गरुताय न भावनाय न सामञ्ञाय न एकीभावाय संवत्तति।

४. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु पापिच्छो होति, इच्छाविनयस्स न वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु पापिच्छो होति इच्छाविनयस्स न वण्णवादी, अयं पि धम्मो [N.232] न पियताय न गरुताय न भावनाय न सामञ्ञाय न एकीभावाय संवत्तति।

५. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु कोधनो होति, कोधविनयस्स न वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु कोधनो होति कोधविनयस्स न वण्णवादी, अयं पि धम्मो न पियताय न गरुताय न भावनाय न सामञ्ञाय न एकीभावाय संवत्तति।

६. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु मक्खी होति, मक्खविनयस्स न वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु मक्खी होति मक्खविनयस्स न वण्णवादी, अयं पि धम्मो न पियताय न गरुताय न भावनाय न सामञ्ञाय न एकीभावाय संवत्तति।

७. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सठो होति, साठेय्यविनयस्स न [B.390] वण्णवादी। यं पि, भिक्खबे, भिक्खु सठो होति साठेय्यविनयस्स न वण्णवादी, अयं पि धम्मो न पियताय न गरुताय न भावनाय न सामञ्ञाय न एकीभावाय संवत्तति।

८. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु मायावी होति, मायाविनयस्स न वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु मायावी होति मायाविनयस्स न वण्णवादी, अयं पि धम्मो न पियताय न गरुताय न भावनाय न सामञ्ञाय न एकीभावाय संवत्तति।

९. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु धम्मानं न निसामकजातिको होति, [R.166] धम्मनिसन्तिया न वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु धम्मानं न निसामकजातिको होति

---

३. ''पुनः भिक्षुओ! कोई भिक्षु न स्वयं धर्मशिक्षा की इच्छा करता है, न दूसरों से धर्मशिक्षा की प्रशंसा ही करता है, भिक्षुओ! उसका यह कार्य ...पूर्ववत्...। (२)

४. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं पापकर्मों की ही इच्छा करता है, न दूसरों से यह पापकर्म न करने की इच्छा की प्रशंसा ही करता है। भिक्षुओ! उसका यह कार्य..पूर्ववत्...। (३)

५. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं क्रोधी होता है साथ ही दूसरों से क्रोध न करने की प्रशंसा भी नहीं करता है। भिक्षुओ! उसका यह कार्य ...पूर्ववत्...। (४)

६. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं म्रक्षी होता है, साथ ही दूसरों से म्रक्ष न करने की प्रशंसा भी नहीं करता। भिक्षुओ! उसका यह कार्य ...पूर्ववत्....। (५)

७. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं शठ होता है, साथ ही दूसरों से शठता न करने की प्रशंसा भी नहीं करता। भिक्षुओ! उसका यह कार्य ...पूर्ववत्...। (६)

८. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं मायावी होता है, साथ ही दूसरों से माया (धूर्तता) न करने की प्रशंसा भी नहीं करता। भिक्षुओ! उसका यह कार्य ...पूर्ववत्...। (७)

धम्मनिसन्तिया न वण्णवादी, अयं पि धम्मो न पियताय न गरुताय न भावनाय न सामञ्ञाय न एकीभावाय संवत्तति।

१०. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु न पटिसल्लानो होति, पटिसल्लानस्स न वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु न पटिसल्लानो होति पटिसल्लानस्स न वण्णवादी, अयं पि धम्मो न पियताय न गरुताय न भावनाय न सामञ्ञाय न एकीभावाय संवत्तति।

११. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सब्रह्मचारीनं न पटिसन्थारको होति, पटि-
[N.233] सन्थारकस्स न वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु न पटिसन्थारको होति पटिसन्थारकस्स न वण्णवादी, अयं पि धम्मो न पियताय न गरुताय न भावनाय न सामञ्ञाय न एकीभावाय संवत्तति।

१२. ''एवरूपस्स, भिक्खवे, भिक्खुनो किञ्चा पि एवं इच्छा उप्पज्जेय्य—'अहो वत मं सब्रह्मचारी सक्करेय्युं गरुं करेय्युं मानेय्युं पूजेय्युं' ति, अथ खो नं सब्रह्मचारी न चेव सक्करोन्ति न गरुं करोन्ति न मानेन्ति न पूजेन्ति। तं किस्स हेतु? तथा हिस्स, भिक्खवे, विञ्ञू सब्रह्मचारी ते पापके अकुसले धम्मे अप्पहीने समनुपस्सन्ति।

१३. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, अस्सखळुङ्कस्स किञ्चा पि एवं इच्छा उप्पज्जेय्य—'अहो वत मं मनुस्सा आजानीयट्ठाने ठपेय्युं, आजानीयभोजनं च भोजेय्युं, आजानीय-
[B.391] परिमज्जनं च परिमज्जेय्युं' ति, अथ खो नं मनुस्सा न चेव आजानीयट्ठाने ठपेन्ति न
[R.167] च आजानीयभोजनं भोजेन्ति न च आजानीयपरिमज्जनं परिमज्जन्ति। तं किस्स हेतु? तथा हिस्स, भिक्खवे, विञ्ञू मनुस्सा तानि साठेय्यानि कूटेय्यानि जिम्हेय्यानि वङ्केय्यानि अप्पहीनानि समनुपस्सन्ति। एवमेव खो, भिक्खवे, एवरूपस्स भिक्खुनो किञ्चा

---

९. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं भी धर्मश्रवण का स्वभाव नहीं बनाता और दूसरों से भी तीव्र धर्मश्रवण की प्रशंसा नहीं करता। भिक्षुओ! उसका यह कार्य ...पूर्ववत्...। (८)

१०. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु न स्वयं एकान्त में बैठकर साधना करता है और न दूसरों से ही एकान्तसाधना की प्रशंसा करता है। भिक्षुओ! उसका यह कार्य भी ...पूर्ववत्...। (९)

११. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु न स्वयं अपने आगत साथियों का मैत्रीपूर्ण स्वागत करता है और न दूसरों से ऐसे मैत्रीपूर्ण स्वागत की प्रशंसा ही करता है। भिक्षुओ! उस भिक्षु का यह कार्य भी... पूर्ववत्... न एकतावर्धक ही होता है। (१०)

१२. भिक्षुओ! भले ही कभी ऐसे भिक्षु की कभी यह इच्छा जाग्रत् हो कि मेरे साथी मेरा सत्कार, गौरव, सम्मान एवं पूजा करें; परन्तु उसके साथी उसका कभी सत्कार, गौरव, मान या पूजा नहीं करते; क्योंकि वे उसमें अकुशल धर्म आज भी विद्यमान देखते हैं।

१३. ''भिक्षुओ! जैसे कोई हीन जाति में जन्मा अश्व भले ही यह चाहे—'क्या ही अच्छा हो कि मनुष्य मुझको श्रेष्ठ जाति के अश्व के समान ही स्थान दें, उसके समान ही भोजन दें, उसके ही समान मेरी भी सेवा करें'; तो भी मनुष्य न उसको उच्च जाति के अश्व के समान स्थान देते हैं, न भोजन और न कोई सेवा। वह क्यों? क्योंकि मनुष्य जानते हैं कि वह हीन जाति का अश्व है और

पि एवं इच्छा उप्पज्जेय्य—'अहो वत मं सब्रह्मचारी सक्करेय्युं गरुं करेय्युं मानेयुं पूजेय्युं' ति, अथ खो नं सब्रह्मचारी न चेव सक्करोन्ति न गरुं करोन्ति न मानेन्ति न पूजेन्ति। तं किस्स हेतु? तथा हिस्स, भिक्खवे, विञ्ञू सब्रह्मचारी ते पापके अकुसले धम्मे अप्पहीने समनुपस्सन्ति॥

१४. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खु न अधिकरणिको होति, अधिकरणसमथस्स वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु न अधिकरणिको होति अधिकरणसमथस्स वण्णवादी, अयं पि धम्मो पियताय गरुताय भावनाय सामञ्ञाय एकीभावाय संवत्तति।

१५. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सिक्खाकामो होति, सिक्खाकामस्स वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु सिक्खाकामो होति सिक्खाकामस्स वण्णवादी, अयं पि धम्मो पियताय गरुताय भावनाय सामञ्ञाय एकीभावाय संवत्तति।

१६. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु अप्पिच्छो होति, इच्छाविनयस्स [N.234] वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु अप्पिच्छो होति इच्छाविनयस्स वण्णवादी, अयं पि धम्मो ...पे०... एकीभावाय संवत्तति।

१७. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु अक्कोधनो होति, कोधविनयस्स वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु अक्कोधनो होति कोधविनयस्स वण्णवादी, अयं पि धम्मो ...पे०... एकीभावाय संवत्तति।

१८. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु अमक्खी होति, मक्खविनयस्स वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु अमक्खी होति मक्खविनयस्स वण्णवादी, अयं पि धम्मो ...पे०... एकीभावाय संवत्तति।

१९. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु अमायावी होति, मायाविनयस्स [R.168]

भिक्षुओ! वे उस अश्व की निम्नस्तर की क्रियाओं, चेष्टाओं तथा गतियों से परिचित रहते हैं; इसी प्रकार भिक्षुओ! भले ही वैसा भिक्षु यह चाहता रहे—'मेरे साथी मेरा सत्कार, गौरव, सम्मान एवं पूजा करें', परन्तु उसके साथी उसका न सत्कार करते हैं, न गौरव, न सम्मान और न पूजा; क्योंकि वे जानते हैं कि यह भिक्षु आज भी पापमय धर्मों से लिप्त है। (क)

१४. (परन्तु, इसके विपरीत), ''भिक्षुओ! जो भिक्षु (दूसरों से) विवाद नहीं करता तथा विवादशान्ति की प्रशंसा भी करता है, भिक्षुओ! ऐसे भिक्षु का यह धर्म (गुण) समाज में उसकी प्रियता, गुरुता, साधना, श्रामण्य एवं एकता का वर्धक होता है। (१)

१५. ''तथा, भिक्षुओ! जो भिक्षु स्वयं धर्मशिक्षा का इच्छुक रहता है तथा दूसरों से भी धर्मशिक्षा की प्रशंसा करता है। भिक्षुओ! भिक्षु का यह धर्म ...पूर्ववत्...। (२)

१६. पुनः, भिक्षुओ! स्वयं अल्पेच्छ (अल्प से सन्तुष्ट होने वाला) होता है, तथा दूसरों से भी अल्पेच्छता की प्रशंसा करता है। भिक्षुओ! ऐसे भिक्षु का यह धर्म ...पूर्ववत्...। (३)

१७. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं अक्रोधी होता है, दूसरों से भी अक्रोध की प्रशंसा करता है, ऐसे भिक्षु का यह धर्म ...पूर्ववत्...। (४)

वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु अमायावी होति मायाविनयस्स वण्णवादी, अयं पि धम्मो ...पे०... एकीभावाय संवत्तति।

[B.392] २०. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु अमायावी होति, मायाविनयस्स वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु अमायावी होति मायाविनयस्स वण्णवादी, अयं पि धम्मो ...पे०... एकीभावाय संवत्तति।

२१. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु धम्मानं निसामकजातिको होति, धम्मनिसन्तिया वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु धम्मानं निसामकजातिको होति धम्मनिसन्तिया वण्णवादी, अयं पि धम्मो ...पे०... एकीभावाय संवत्तति।

२२. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु पटिसल्लानो होति, पटिसल्लानस्स वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु पटिसल्लानो होति पटिसल्लानस्स वण्णवादी, अयं पि धम्मो ...पे०... एकीभावाय संवत्तति।

२३. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु सब्रह्मचारीनं पटिसन्थारको होति, पटिसन्थारकस्स वण्णवादी। यं पि, भिक्खवे, भिक्खु सब्रह्मचारीनं पटिसन्थारको होति पटिसन्थारकस्स वण्णवादी, अयं पि धम्मो पियताय गरुताय भावनाय सामञ्ञाय एकीभावाय संवत्तति।

२४. ''एवरूपस्स, भिक्खवे, भिक्खुनो किञ्चा पि न एवं इच्छा उपज्जेय्य—'अहो वत मं सब्रह्मचारी सक्करेय्युं गरुं करेय्युं मानेय्युं पूजेय्युं' ति, अथ खो नं सब्रह्मचारी [N.235] सक्करोन्ति गरुं करोन्ति मानेन्ति पूजेन्ति। तं किस्स हेतु? तथा हिस्स, भिक्खवे, विञ्ञू सब्रह्मचारी ते पापके अकुसले धम्मे पहीने समनुपस्सन्ति।

---

१८. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं अम्रक्षी (दूसरे के गुणों से न जलने वाला) होता है, ऐसे भिक्षु का यह धर्म ...पूर्ववत्...। (५)

१९. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं अशठ (शठतारहित) होता है, तथा दूसरों से भी अशठता की प्रशंसा करता है, ऐसे भिक्षु का यह धर्म ...पूर्ववत्...। (६)

२०. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं धूर्ततारहित (अमायावी) होता है तथा दूसरों से भी धूर्तता न करने की प्रशंसा करता है; ऐसे भिक्षु का यह धर्म ...पूर्ववत्...। (७)

२१. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं धर्मश्रवण स्वभाव वाला होता है तथा दूसरों से भी तीव्र धर्मश्रवण की प्रशंसा करता है; ऐसे भिक्षु का यह धर्म ...पूर्ववत्...। (८)

२२. ''पुन भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं एकान्त साधना का अभ्यासी होता है तथा दूसरों से भी एकान्तसाधना की प्रशंसा करता है। ऐसे भिक्षु का यह धर्म. ...पूर्ववत्...। (९)

२३. ''पुनः भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं साथियों का मैत्रीपूर्ण स्वागत करता रहता है, तथा दूसरों से इस मैत्रीपूर्ण स्वागत की प्रशंसा करता है; ऐसे भिक्षु का यह धर्म ...पूर्ववत्... एकता का वर्धक होता है। (१०)

२४. ''भिक्षुओ! ऐसे भिक्षु की भले ही स्वयं इच्छा न हो कि मेरे साथी मेरा स्वागत सत्कार

२५. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, भद्दस्स अस्साजानीयस्स किञ्चापि न एवं इच्छा उप्पज्जेय्य—'अहो वत मं मनुस्सा आजानीयट्ठाने ठपेय्युं, आजानीयभोजनं च भोजेय्युं, आजानीयपरिमज्जनं च परिमज्जेय्युं' ति, अथ खो नं मनुस्सा आजानीयट्ठाने च ठपेन्ति आजानीयभोजनं च भोजेन्ति आजानीयपरिमज्जनं च परिमज्जन्ति। तं किस्स हेतु? [R.169] तथा हिस्स, भिक्खवे, विञ्ञू मनुस्सा तानि साठेय्यानि कूटेय्यानि जिम्हेय्यानि वङ्केय्यानि पहीनानि समनुपस्सन्ति।

''एवमेव खो, भिक्खवे, एवरूपस्स भिक्खुनो किञ्चा पि न एवं इच्छा उप्पज्जेय्य—'अहो वत मं सब्रह्मचारी सक्करेय्युं गरुं करेय्युं मानेय्युं पूजेय्युं' ति, अथ खो नं सब्रह्मचारी सक्करोन्ति गरुं करोन्ति मानेन्ति पूजेन्ति। तं किस्स हेतु? तथा हिस्स, भिक्खवे, विञ्ञू सब्रह्मचारी ते पापके अकुसले धम्मे पहीने समनुपस्सन्ती'' ति॥ ●

८. अक्कोसकसुत्तं : १. ''यो सो, भिक्खवे, भिक्खु अक्कोसकपरिभासको अरियूपवादी सब्रह्मचारीनं ठानमेतं अवकासो यं सो दसन्नं ब्यसनानं अञ्ञतरं [B.393] ब्यसनं निगच्छेय्य। कतमेसं दसन्नं? अनधिगतं नाधिगच्छति, अधिगता परिहायति, सद्धम्मस्स न वोदायन्ति, सद्धम्मेसु वा अधिमानिको होति अनभिरतो वा ब्रह्मचरियं चरति, अञ्ञतरं वा सङ्किलिट्ठं आपत्तिं आपज्जति, गाळ्हं वा रोगातङ्कं फुसति, उम्मादं वा पापुणाति

करें, गौरव करें, सम्मान करें, पूजा करें; परन्तु दूसरे साथी उसका सत्कार, गौरव, सम्मान पूजा करते ही हैं। वह क्यों? वह इसलिये कि साथी भिक्षु जानते हैं कि इस भिक्षु के अकुशल पापमय धर्म अब प्रहीण हो चुके हैं।

२५. ''भिक्षुओ! जैसे किसी भद्र जाति के अश्व की यह इच्छा भले ही न हो कि लोग मुझको उच्च जाति का अश्व समझें, उसके जैसा ही भोजन करावें तथा उसके जैसी ही मेरी टहल-सेवा करें। तो भी लोग उसको उच्च जाति का अश्व ही समझते हैं, उसको वैसा ही भोजन देते हैं तथा उसकी वैसी टहल सेवा करते हैं। वह किसलिये? क्योंकि लोग उसकी उच्चस्तर की क्रियाओं, चेष्टाओं तथा गतियों (चालों) से सर्वथा परिचित रहते हैं।

''इसी प्रकार भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु भले ही यह न चाहे कि मेरे साथी मेरा सत्कार, गौरव, सम्मान एवं पूजा करें, तो भी उसके साथी उसका सत्कार, गौरव, सम्मान एवं पूजा करते ही हैं; क्योंकि वे जानते हैं कि इसके सभी पापमय अकुशल धर्म अब प्रहीण हो चुके हैं॥'' ●

८. आक्रोशक-परिभाषकसूत्र : : आर्यनिन्दक के दश सङ्कट

१. ''भिक्षुओ! जो भिक्षु दूसरों का अपमान करता है, दूसरों की निन्दा करता है, साथी आर्यजनों पर मिथ्या आरोप लगाता है, ऐसे भिक्षु के लिये यह बहुत सम्भव है कि वह इन दश में से किसी एक सङ्कट से घिर जाय। किन दश में से? (१) अप्राप्त को प्राप्त न कर पावे, (२) प्राप्त का नाश हो जाय, (३) सद्धर्म से शुद्ध न हो, (४) सद्धर्मपालन में वृथाभिमानी हो, (५) या अरुचि के साथ सद्धर्म का पालन करे, (६) किसी संक्लिष्ट (मलिन) आपत्ति (दोष) से ग्रस्त हो जाय, (७) गम्भीर रोग से ग्रस्त हो जाय, (८) उन्माद या चित्तविक्षेप (पागलपन) हो जाय, (९) सम्मूढ

चित्तक्खेपं, सम्मूळ्हो कालं करोति, कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु अक्कोसकपरिभासको अरियूपवादी सब्रह्मचारीनं, ठानमेतं अवकासो यं सो इमेसं दसन्नं ब्यसनानं अञ्ञतरं ब्यसनं निगच्छेय्या'' ति॥ ●

[N.236, R.170] **९. कोकालिकसुत्तं :** १. अथ खो कोकालिको भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो कोकालिको भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—

२. ''पापिच्छा, भन्ते, सारिपुत्तमोग्गल्लाना, पापिकानं इच्छानं वसं गता'' ति।

''मा हेवं, कोकालिक, मा हेवं, कोकालिक! पसादेहि, कोकालिक, सारिपुत्तमोग्गल्लानेसु चित्तं। पेसला सारिपुत्तमोग्गल्लाना'' ति।

३. दुतियं पि खो कोकालिको भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''किञ्चा पि मे, भन्ते, भगवा सद्धायिको पच्चयिको, अथ खो पापिच्छा व ...पे०... ।

४. ततियं पि खो कोकालिको भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''किञ्चा पि मे, भन्ते, भगवा सद्धायिको पच्चयिको, अथ खो पापिच्छा व सारिपुत्तमोग्गल्लाना, पापिकानं इच्छानं वसं गता'' ति।

[B.394] ''मा हेवं, कोकालिक, मा हेवं, कोकालिक! पसादेहि, कोकालिक, सारिपुत्त-मोग्गल्लानेसु चित्तं। पेसला सारिपुत्तमोग्गल्लाना'' ति।

(विस्मृतियुक्त) चित्त होकर मरणभाव को प्राप्त हो जाय या एवं (१०) मरणानन्तर दुर्गतियुक्त नरकयोनि में पहुँच जाय। भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु जो दूसरों को अपमानित करता है, निन्दा करता है, साथी आर्यजनों पर मिथ्या आरोप लगाता है, उसके लिये बहुत अधिक यही सम्भव है कि वह इन दश दुर्गतिस्थानों में से किसी एक को प्राप्त करे॥'' ●

९. कोकालिकसूत्र : : कोकालिक भिक्षु का नरकपात

१. तब कोकालिक भिक्षु भगवान् के समीप पहुँचा...भगवान् से यह कहने लगा—

२. ''भन्ते! सारिपुत्र और मौद्गल्यायन पापेच्छुक हैं। इनकी निरन्तर पापकर्म करने की इच्छा रहती है।''

''कोकालिक! ऐसा न कहो! कोकालिक! सारिपुत्र एवं मौद्गल्यायन में श्रद्धा रखो। वे दोनों सदाचारयुक्त (पेसल) हैं।''

३. दूसरी बार भी कोकालिक भिक्षु ने अपना कथन दुहरा दिया। वह बोला—''भन्ते! आप में मेरी श्रद्धा है, परन्तु इन पापेच्छु सारिपुत्र एवं मौद्गल्यायन में मेरी कोई श्रद्धा नहीं है; क्योंकि ये दोनों निरन्तर पापकर्म में प्रवृत्त रहते हैं।''

''नहीं, कोकालिक! ऐसा न कहो। सारिपुत्र-मौद्गल्यायन पर श्रद्धा करो; क्योंकि वे दोनों ही सदाचारणयुक्त हैं।''

४. (तीसरी बार भी कोकालिक भिक्षु ने अपनी बात दुहरायी) ...पूर्ववत्... ।

५. अथ खो कोकालिको भिक्खु उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि। अचिरपक्कन्तस्स च कोकालिकस्स भिक्खुनो सासपमत्तीहि पीळकाहि सब्बो कायो फुटो अहोसि। सासपमत्तियो हुत्वा मुग्गमत्तियो अहेसुं, मुग्गमत्तियो हुत्वा कलायमत्तियो अहेसुं, कलायमत्तियो हुत्वा कोलट्ठिमत्तियो अहेसुं, कोलट्ठिमत्तियो हुत्वा कोलमत्तियो अहेसुं, कोलमत्तियो हुत्वा आमलकमत्तियो अहेसुं, आमलकमत्तियो हुत्वा तिण्डुकमत्तियो अहेसुं, तिण्डुकमत्तियो हुत्वा, बेळुवसलाटुकमत्तियो अहेसुं, बेळुवसलाटुकमत्तियो हुत्वा बिल्लमत्तियो अहेसुं, बिल्लमत्तियो हुत्वा पभिज्जिंसु, पुब्बं [R.171] च लोहितं च पग्घरिंसु। सो सुदं कदलिपत्तेसु सेति मच्छो व विसगिलितो।

६. अथ खो तुरु पच्चेकब्रह्मा येन कोकालिको भिक्खु तेनुपसङ्कमि; [N.237] उपसङ्कमित्वा वेहासे ठत्वा कोकालिकं भिक्खुं एतदवोच—''पसादेहि, कोकालिक, सारिपुत्तमोग्गल्लानेसु चित्तं। पेसला सारिपुत्तमोग्गल्लाना'' ति।

''कोसि त्वं, आवुसो'' ति? ''अहं तुरु पच्चेकब्रह्मा'' ति।

''ननु त्वं, आवुसो, भगवता अनागामी ब्याकतो, अथ किञ्चरहि इधागतो? पस्स यावं च ते इदं अपरद्धं'' ति।

७. अथ खो तुरु पच्चेकब्रह्मा कोकालिकं भिक्खुं गाथाहि अज्झभासि—

''पुरिसस्स हि जातस्स, कुठारी जायते मुखे।
याय छिन्दति अत्तानं, बालो दुब्भासितं भणं॥

भगवान् ने तब भी यही कहा—''कोकालिक! ऐसा न कहो! ...पूर्ववत्... ।''

५. तब कोकालिक भिक्षु आसन से उठकर, भगवान् को प्रणाम प्रदक्षिणा कर चला गया। जाने के कुछ समय बाद ही कोकालिक भिक्षु के समस्त शरीर में सरसों के समान पिडिका (फुन्सियाँ) निकल आयीं। कुछ ही समय में वे सरसों से बढ़कर मूँग के बराबर हो गयीं। पुनः बढ़कर वे ही कलाय के बराबर हा गयीं, पुनः कुछ समय बाद वे बेर (बदर फल) के बीज के बराबर हो गयीं। तब बदरफल जितनी होने के बाद वे आँवले के बराबर हो गयीं; आँवले से बढ़कर तिन्दुक फल के समान हो गयीं; उससे बढ़कर बिल्वफल के समान हो गयीं, कुछ समय बाद उससे भी आकार में बढ़कर फूट गयीं। फूटने पर उनसे मैला और दुर्गन्धियुक्त रक्त एवं पूय (मवाद) बहने लगा। तब वह उन पिड़िकाओं से व्यथित होकर केले के पत्तों पर लेट कर तड़फड़ाने लगा, जैसे कोई जल से बाहर गिरी मछली तड़फड़ा रही हो।

६. तब तुरु (तुदु?) ब्रह्मा कोकालिक भिक्षु के पास गये तथा आकाश में ही स्थित रहकर उसको समझाने लगे—''कोकालिक! सारिपुत्र एवं मौद्गल्यायन के प्रति श्रद्धा रखो; क्योंकि वे सदाचारी हैं!'' ''आयुष्मन्! तुम कौन हो?'' ''मैं तुरु ब्रह्मा हूँ।''

''अरे! तुमको तो भगवान् ने अनागामी घोषित किया था, अब तुम यहाँ कैसे चले आये! देखो, तुम्हारा यह अपराधकर्म है।''

७. तब तुदु ब्रह्मा ने इस गाथाओं से कोकालिक भिक्षु को यह समझाया—

''यो निन्दियं पसंसति, तं वा निन्दति यो पसंससियो।
विचिनाति मुखेन सो कलिं, कलिना तेन सुखं न विन्दति॥
''अप्पमत्तको अयं कलि, यो अक्खेसु धनपराजयो।
सब्बस्सा पि सहा पि अत्तना, अयमेव महत्तरो कलि।
यो सुगतेसु मनं पदूसये॥
[B.395] ''सतं सहस्सान निरब्बुदानं, छत्तिंसति पञ्च च अब्बुदानि।
यमरियगरही निरयं उपेति, वाचं मनं च पणिधाय पापकं'' ति॥

[R.172] ८. अथ खो कोकालिको भिक्खू तेनेव आबाधेन कालमकासि। कालङ्कतो च कोकालिको भिक्खु पदुमं निरयं उपपज्जति सारिपुत्तमोग्गल्लानेसु चित्तं आघातेत्वा।

[N.238] ९. अथ खो ब्रह्मा सहम्पति अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णो केवलकप्पं जेतवनं ओभासेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठितो खो ब्रह्मा सहम्पति भगवन्तं एतदवोच—''कोकालिको, भन्ते, भिक्खु कालङ्कतो। कालङ्कतो च, भन्ते, कोकालिको भिक्खु पदुमं निरयं उपपन्नो सारिपुत्त-मोग्गल्लानेसु चित्तं आघातेत्वा'' ति। इदमवोच ब्रह्मा सहम्पति। इदं वत्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायि।

१०. अथ खो भगवा तस्सा रत्तिया अच्चयेन भिक्खू आमन्तेसि—''इमं, भिक्खवे,

---

''पुरुष को जन्म के साथ ही मुख में एक कुल्हाड़ी भी लगी आती है, जिसके सहारे से वह दूसरों को दुर्वचन बोलता हुआ अपना ही नाश करता रहता है॥

''जो किसी निन्दनीय की प्रशंसा करता है या किसी प्रशंसनीय की निन्दा करता है, वह मुख के माध्यम से अपने लिये पाप का ही संग्रह करता है॥

''मनुष्य का यह दौर्भाग्य तो बहुत छोटा है कि वह जूए में अपना सर्वस्व हार जाय; हाँ, उसका यह सबसे बड़ा दौर्भाग्य है कि यदि वह बुद्धों एवं बुद्धश्रावकों के प्रति अपना मन मैला करता है॥

''वह आर्यपुरुषों का निन्दक अपनी वाणी तथा मन को पाप में सम्पृक्त कर, सौ हजार निरर्बुद छत्तीस और पाँच अर्वुद वर्षों तक निरन्तर नरकवास कर वहाँ पचता (दुःख भोगता) रहता है।'' *(द्र०— संयुक्तनिकाय, भाग-१, पृष्ठ-२४४, बौ० भा० ग्र० मा० ४०)*

८. तब वह कोकालिक भिक्षु उसी रोग के प्रभाव से मृत्युभाव को प्राप्त कर गया। वह मृत कोकालिक भिक्षु सारिपुत्र एवं मौद्गल्यायन के प्रति द्वेषचित्त होने के कारण पद्मनामक निरय (नरक) में उत्पन्न हुआ॥

९. तदनन्तर दिव्यशरीर ब्रह्मा सहम्पति चाँदनी रात्रि में प्रायः प्रभासित जेतवन को अपनी दिव्य कान्ति से और भी अधिक प्रकाशित करते हुए भगवान् के सम्मुख आये। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर खड़े हो गये। एक ओर खड़े होकर वे भगवान् से यों निवेदन करने लगे—''भन्ते! कोकालिक भिक्षु मर गया है। वह मृत्यु को प्राप्त कर, सारिपुत्र एवं मौद्गल्यायन के प्रति

रत्तिं ब्रह्मा सहम्पति अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णो केवलकप्पं जेतवनं ओभासेत्वा येनाहं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठितो खो, भिक्खवे, ब्रह्मा सहम्पति मं एतदवोच—'कोकालिको, भन्ते, भिक्खु कालङ्कतो; कालङ्कतो च, भन्ते, कोकालिको भिक्खु पदुमं निरयं उपपन्नो सारिपुत्तमोग्गल्लानेसु चित्तं आघातेत्वा' ति। इदमवोच, भिक्खवे, ब्रह्मा सहम्पति। इदं वत्वा मं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायी'' ति।

११. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''कीव दीघं नु खो, भन्ते, पदुमे निरये आयुप्पमाणं'' ति?

''दीघं खो, भिक्खु, पदुमे निरये आयुप्पमाणं। न तं सुकरं सङ्खातुं—'एत्तकानि वस्सानी ति वा एत्तकानि वस्ससतानी ति वा एत्तकानि वस्ससहस्सानी ति वा [R.173] एत्तकानि वस्ससतसहस्सानी ति वा''' ति।

''सक्का पन, भन्ते, उपमं कातुं'' ति?

''सक्का, भिक्खू'' ति भगवा अवोच—''सेय्यथापि, भिक्खु, वीसतिखारिको कोसलको तिलवाहो, ततो पुरिसो वस्ससतस्स वस्ससतस्स अच्चयेन एकमेकं [B.396] तिलं उद्धरेय्य। खिप्पतरं खो सो, भिक्खु, वीसतिखारिको कोसलको तिलवाहो इमिना उपक्कमेन परिक्खयं परियादानं गच्छेय्य, न त्वेव एको अब्बुदो निरयो। सेय्यथापि, भिक्खु, वीसति अब्बुदा निरया, एवमेको निरब्बुदो निरयो। सेय्यथापि, भिक्खु, वीसति निरब्बुदा निरया, एवमेको अबबो निरयो। सेय्यथापि, भिक्खु, वीसति अबबा निरया, एवमेको अटटो

द्वेषभाव के कारण, पद्म नामक नरक में जा गिरा है।'' सहम्पति ब्रह्मा ने यह सूचित किया। तथा वह यह सूचना देकर, भगवान् को प्रणाम प्रदक्षिणा कर, वहीं अन्तर्हित हो गया।

१०. तब भगवान् ने उस रात्रि के बीतने पर, भिक्षुओं को यह बताया—''भिक्षुओ! विगत रात्रि में ब्रह्मा सहम्पति...'भन्ते! कोकालिक भिक्षु मरकर पद्म नामक निरय में जा गिरा है'—यह कहकर मुझको प्रणाम-प्रदक्षिणा कर वहीं अन्तर्हित हो गया।''

११. भगवान् के इस कथन को सुनकर किसी भिक्षु ने भगवान् से यह जिज्ञासा की—''भन्ते! पद्म निरय (में गिरे पापी) का कितना आयु:प्रमाण होता है?''

''भिक्षु! पद्म निरय में आयु:प्रमाण बहुत लम्बा होता है। उसको सौ वर्षों, हजार वर्षों या लाख वर्षों से नहीं मापा जा सकता।''

भन्ते! उसको किसी उपमा से समझाया जा सकता है?''

''हाँ, भिक्षु समझाया जा सकता है'—भगवान् बोले—''जैसे, भिक्षु! बीस खारी (धान्य का एक माप) समा जाने वाले कोई तिल का कोष्ठक हो। उसमें से किसी पुरुष द्वारा सौ सौ वर्ष के बाद, एक एक तिल निकाला जाय। इस प्रकार भिक्षु! वह बीस खारी की तिलराशि भी एक दिन समाप्त हो सकती है, परन्तु एक **अर्वुद निरय** का आयु:प्रमाण समाप्त नहीं होता। जैसे, भिक्षु! बीस अर्वुद निरय की आयु होती है उतनी आयु का एक **निरर्वुद निरय** होता है। इसी प्रकार बीस निरर्वुद निरय

[N.239] निरयो। सेय्यथापि, भिक्खु वीसति अटटा निरया, एवमेको अहहो निरयो। सेय्यथापि, भिक्खु वीसति अहहा निरया, एवमेको कुमुदो निरयो। सेय्यथापि, भिक्खु, वीसति कुमुदा निरया, एवमेको सोगन्धिको निरयो। सेय्यथापि, भिक्खु, वीसति सोगन्धिका निरया, एवमेको उप्पलको निरयो। सेय्यथापि, भिक्खु, वीसति उप्पलका निरया, एवमेको पुण्डरीको निरयो। सेय्यथापि, भिक्खु, वीसति पुण्डरीका निरया, एवमेको पदुमो निरयो। पदुमं खो पन, भिक्खु, निरयं कोकालिको भिक्खु उपपन्नो सारिपुत्तमोग्गल्लानेसु चित्तं आघातेत्वा'' ति।

इमदवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—

[R.174] ''पुरिसस्स हि जातस्स, कुठारी जायते मुखे।
याय छिन्दति अत्तानं, बालो दुब्भासितं भणं॥
''यो निन्दियं पसंसति, तं वा निन्दति यो पसंसियो।
विचिनाति मुखेन सो कलिं, कलिना तेन सुखं न विन्दति॥
''अप्पमत्तको अयं कलि, यो अक्खेसु धनपराजयो।
सब्बस्सा पि सहा पि अत्तना, अयमेव महत्तरो कलि।
यो सुगतेसु मनं पदूसये॥
''सतं सहस्सानं निरब्बुदानं, छत्तिंसति पञ्च च अब्बुदानि।
यमरियगरही निरयं उपेति, वाचं मनं च पणिधाय पापकं'' ति॥ ●

१०. खीणासवबलसुत्तं : १. अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं सारिपुत्तं भगवा एतदवोच—

की आयु के समान एक **अबब निरय** की आयु होती है। और जैसे भिक्षु बीस अबब निरयों की आयु होती है उतनी एक **अटट निरय** की आयु होगी। जैसे भिक्षु बीस अटट निरयों की आयु होती है उतनी ही एक **अहह निरय** की आयु होती है। और भिक्षु! जो बीस अहह निरयों की आयु होती है वह एक **कुमुद निरय** की आयु होती है। जो बीस कुमुद निरयों की आयु होती है वह एक **सौगन्धिक निरय** की आयु होती है। जो बीस सौगन्धिक निरयों की आयु होती है वह एक **उत्पलक निरय** की आयु होती है। जो बीस उत्पलक निरयों की आयु होती है वह एक **पुण्डरीक निरय** की आयु होती है। तथा जो बीस पुण्डक निरयों की आयु होती है वह एक **पद्म निरय** की मानी जाती है। भिक्षु! इस दीर्घतम आयुःप्रमाण वाले पद्म निरय में कोकालिक भिक्षु, सारिपुत्र एवं मौद्गल्यायन में द्वेषचित्त कर, जा गिरा है।''

भगवान् ने यह कहा। तथा इसी प्रकरण को सुगत ने इन गाथाओं से भी समझाया—

''पुरुष को जन्म के साथ ही मुख में एक कुल्हाड़ी (कुठारी) भी आती है. ...पूर्ववत्... नरकवास कर पचता (दुःख भोगता) रहता है॥'' ...पूर्ववत्...। ●

२. ''कति नु खो सारिपुत्त, खीणासवस्स भिक्खुनो बलानि, येहि [N.240,B.397] बलेहि समन्नागतो खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा''' ति?

३. ''दस, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो बलानि, येहि बलेहि समन्नागतो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति। कतमानि दस? इध, भन्ते, [R.175] खीणासवस्स भिक्खुनो अनिच्चतो सब्बे सङ्खारा यथाभूतं सम्मप्पञ्ञाय सुदिट्ठा होन्ति। यं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो अनिच्चतो सब्बे सङ्खारा यथाभूतं सम्मप्पञ्ञाय सुदिट्ठा होन्ति, इदं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो बलं होति, यं बलं आगम्म खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति।

४. ''पुन च परं, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो अङ्गारकासूपमा कामा यथाभूतं सम्मपञ्ञाय सुदिट्ठा होन्ति। यं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो अङ्गारकासूपमा कामा यथाभूतं सम्मप्पञ्ञाय सुदिट्ठा होन्ति, इदं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो बलं होति, यं बलं आगम्म खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति।

५. ''पुन च परं, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो विवेकनिन्नं चित्तं होति विवेकपोणं विवेकपब्भारं विवेकट्ठं नेक्खम्माभिरतं ब्यन्तीभूतं सब्बसो आसवट्ठानियेहि धम्मेहि। यं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो विवेकनिन्नं चित्तं होति विवेकपोणं विवेकपब्भारं विवेकट्ठं नेक्खम्माभिरतं ब्यन्तीभूतं सब्बसो आसवट्ठानियेहि धम्मेहि, इदं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो बलं होति, यं बलं आगम्म खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति।

---

१०. क्षीणाश्रवबलसूत्र : : क्षीणाश्रव भिक्षु के दश बल

१. तब आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् के सम्मुख गये...आयुष्मान् सारिपुत्र को भगवान् यों बोले—

२. ''सारिपुत्र! क्षीणाश्रव भिक्षु के कितने बल होते हैं, जिनके आश्रयण से वह भिक्षु अपने आश्रवों क्षयज्ञान कर लेता है?''

३. ''भन्ते! क्षीणाश्रव भिक्षु के दश बल होते हैं ...पूर्ववत्... कर लेता है। कौन से दश? यहाँ भन्ते! वह भिक्षु सभी संस्कारों की अनित्यता सम्यक्प्रज्ञा द्वारा भलीभाँति जान लेता है; क्योंकि वह इसके द्वारा ऐसा जान लेता है अत: यह इसका बल माना जाता है। भन्ते! यह उस भिक्षु का एक बल ही हुआ, जिसके आश्रयण से वह यथार्थत: जान पाता है कि मेरे आश्रव क्षीण हो गये हैं। (१)

४. ''पुन: भन्ते! उस क्षीणाश्रव भिक्षु के द्वारा कामभोग प्रदीप्त अङ्गार के तुल्य यथार्थत: (भलीभाँति) जान लिये जाते हैं।...यह भी, भन्ते! उस भिक्षु का एक बल ही हुआ कि वह इसके आश्रयण से यथार्थत: जान लेता है कि मेरे आश्रव क्षीण हो गये हैं। (२)

५. ''पुन:, भन्ते! क्षीणाश्रव भिक्षु का चित्त विवेक की ओर झुकता है तथा निष्कामता में रुचि रखता हुआ आश्रवस्थानीय धर्मों से दूर हो जाता है। भन्ते! उस भिक्षु का यह भी एक बल है, जिसके आश्रयण से वह क्षीणाश्रव भिक्षु जान लेता है कि मेरे आश्रव क्षीण हो गये हैं। (३)

६. "पुन च परं, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता होन्ति सुभाविता। यं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता होन्ति सुभाविता, इदं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो बलं होति, यं बलं आगम्म खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति।

७. "पुन च परं, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो चत्तारो सम्मप्पधाना भाविता होन्ति [N.241,B.398, R.176] सुभाविता ...पे०... चत्तारो इद्धिपादा भाविता होन्ति सुभाविता ...पे०... पञ्चिन्द्रियानि... पञ्च बलानि भावितानि होन्ति सुभावितानि... सत्त बोज्झङ्गा भाविता होन्ति सुभाविता... अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावितो होति सुभावितो। यं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावितो होति सुभावितो, इदं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो बलं होति, यं बलं आगम्म खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति।

"इमानि खो, भन्ते, दस खीणासवस्स भिक्खुनो बलानि, येहि बलेहि समन्नागतो खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा'" ति॥ ●

नवमो थेरवग्गो निट्ठितो॥

तस्सुद्दानं

वाहनानन्दो पुण्णियो, ब्याकरं कत्थिमानिको।
नप्पियक्कोसकोकालि, खीणासवबलेन चा ति॥ ●

---

६. "पुनः, भन्ते! उस क्षीणाश्रव भिक्षु को चारों स्मृतिप्रस्थान पूर्णतः अभ्यस्त हो चुके होते हैं। अतः भन्ते! यह चारों स्मृतिप्रस्थानों का अभ्यास भी उस भिक्षु का एक बल ही है, जिसके आश्रयण से वह जान पाता है कि मेरे आश्रव क्षीण हो गये हैं। (४)

७. "पुनः, भन्ते! उस क्षीणाश्रव भिक्षु को चारों सम्यक्प्रधान पूर्णतः अभ्यस्त हो चुके होते हैं ...पूर्ववत्... मेरे आश्रव क्षीण हो गये हैं। (५)

"...चारों ऋद्धिपाद ...पूर्ववत्...। (६) "...पाँचों इन्द्रियाँ ...पूर्ववत्...। (७)

"...पाँचों बल ...पूर्ववत्...। (८) "...सातों बोध्यङ्ग ...पूर्ववत्...। (९)

"...आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग ...पूर्ववत्...। (१०)

"भन्ते! क्षीणाश्रव भिक्षु के ये दश बल होते हैं, जिन बलों के आश्रयण से क्षीणाश्रव भिक्षु अपने आश्रवों के विषय में जान पाता है कि मेरे आश्रव क्षीण हो गये हैं॥" ●

स्थविरवर्ग नवम सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. वाहनसूत्र, २. आनन्दसूत्र, ३. पुण्णियसूत्र, ४. व्याकरणसूत्र, ५. कत्थिसूत्र, ६. अधिमानसूत्र, ७. अप्रिय सूत्र, ८. आक्रोशकपरिभाषकसूत्र, ९. कोकालिकभिक्षुसूत्र तथा १०. क्षीणाश्रवबलसूत्र॥ ●

१०. उपालिवग्गो

१. कामभोगीसुत्तं : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथ-पिण्डिकस्स आरामे। अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उप-सङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो अनाथपिण्डिकं गहपतिं भगवा एतदवोच—

२. "दसयिमे, गहपति, कामभोगी सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं। कतमे दस? इध, गहपति, एकच्चो कामभोगी अधम्मेन भोगे परियेसति साहसेन; अधम्मेन [R.177] भोगे परियेसित्वा साहसेन न अत्तानं सुखेति न पीणेति न संविभजति न पुञ्ञानि करोति।

३. "इध पन, गहपति, एकच्चो कामभोगी अधम्मेन भोगे [N.242,B.399] परियेसति साहसेन; अधम्मेन भोगे परियेसित्वा साहसेन अत्तानं सुखेति पीणेति, न संविभजति न पुञ्ञानि करोति।

४. "इध पन, गहपति, एकच्चो कामभोगी अधम्मेन भोगे परियेसति साहसेन; अधम्मेन भोगे परियेसित्वा साहसेन अत्तानं सुखेति पीणेति संविभजति पुञ्ञानि करोति।

५. "इध पन, गहपति, एकच्चो कामभोगी धम्माधम्मेन भोगे परियेसति साहसेन पि असाहसेन पि; धम्माधम्मेन भोगे परियेसित्वा साहसेन पि असाहसेन पि न अत्तानं सुखेति न पीणेति न संविभजति न पुञ्ञानि करोति।

---

१०. उपालिवर्ग

१. कामभोगिसूत्र : : दशविध कामभोगी

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। तब अनाथपिण्डिक गृहपति जहाँ भगवान् विराजमान थे, वहाँ पहुँचे। वहाँ पहुँचकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे गृहपति को भगवान् ने यह उपदेश किया—

२. "गृहपति! लोक में ये दश प्रकार के कामभोगी (इन्द्रिय सुख भोगने वाले) दिखायी देते हैं। कौन से दश? गृहपति! यहाँ कोई कामभोगी अपने कामभोगों को अधर्म से तथा हिंसा से खोजता है, अर्जित करता है। अधर्म तथा हिंसा से इन का अर्जन कर न वह स्वयं को सुखी या प्रसन्न कर सकता है, न उनका धार्मिक विभाजन कर पाता है और न उनसे कोई पुण्य कर्म ही कर पाता है। (१)

३. "गृहपति! यहाँ कोई कामभोगी कामभोगों का हिंसा तथा बल से अर्जन करता है। ऐसा करके वह स्वयं को तो सुखी कर लेता है, परन्तु वह न उनका कोई विभाजन ही कर पाता है और न उनसे कोई पुण्य ही कर पाता है। (२)

४. "गृहपति! यहाँ कोई कामभोगी कामभोगों का अधर्म से तथा हिंसाबल से अर्जन करता है। ऐसा करके वह स्वयं भी सुखी रहता है, प्रसन्न रहता है, विभाजन भी कर पाता है तथा पुण्य भी कर लेता है। (३)

६. ''इध पन, गहपति, एकच्चो कामभोगी धम्माधम्मेन भोगे परियेसति साहसेन पि असाहसेन पि; धम्माधम्मेन भोगे परियेसित्वा साहसेन पि असाहसेन पि अत्तानं सुखेति पीणेति, न संविभजति न पुञ्ञानि करोति।

७. ''इध पन, गहपति, एकच्चो कामभोगी धम्माधम्मेन भोगे परियेसति साहसेन पि असाहसेन पि; धम्माधम्मेन भोगे परियेसित्वा साहसेन पि असाहसेन पि अत्तानं सुखेति पीणेति संविभजति पुञ्ञानि करोति।

८. ''इध पन गहपति, एकच्चो कामभोगी धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेन; धम्मेन भोगे परियेसित्वा असाहसेन न अत्तानं सुखेति न पीणेति न संविभजति न पुञ्ञानि करोति।

९. ''इध पन, गहपति, एकच्चो कामभोगी धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेन; [R.178] धम्मेन भोगे परियेसित्वा असाहसेन अत्तानं सुखेति पीणेति, न संविभजति न पुञ्ञानि करोति।

१०. ''इध पन, गहपति, एकच्चो कामभोगी धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेन; धम्मेन भोगे परियेसित्वा असाहसेन अत्तानं सुखेति पीणेति संविभजति पुञ्ञानि करोति। ते [B.400] च भोगे गधितो मुच्छितो अज्झोपन्नो अनादीनवदस्सावी अनिस्सरणपञ्ञो परिभुञ्जति।

---

५. ''गृहपति! यहाँ कोई कामभोगी धर्म तथा अधर्म पूर्वक हिंसा तथा अहिंसा पूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है, वह इस प्रकार अर्जन कर न स्वयं को सुखी या प्रसन्न कर पाता है और न उनका सम्यक् विभाजन तथा न उनसे कोई पुण्य ही कर पाता है। (४)

६. ''यहाँ, गृहपति! कोई कामभोगी धर्म तथा अधर्मपूर्वक, हिंसा तथा अहिंसापूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है। ऐसा करता हुआ वह स्वयं को तो सुखी तथा प्रसन्न कर लेता है; परन्तु उसका कोई विभाजन या उससे कोई पुण्य नहीं पर पाता। (५)

७. ''यहाँ, गृहपति! कोई कामभोगी धर्म तथा अधर्मपूर्वक, हिंसा तथा अहिंसा पूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है। ऐसा करता हुआ वह स्वयं को भी सुखी कर लेता है, विभाजन भी कर लेता है; उससे पुण्य भी कर लेता है। (६)

८. ''यहाँ, गृहपति! कोई कामभोगी धर्मपूर्वक और अहिंसापूर्वक ही कामभोगों का अर्जन करता है। ऐसा करता हुआ वह न स्वयं को सुखी या प्रसन्न कर पाता है, न कोई विभाजन या पुण्य ही कर पाता है। (७)

९. ''यहाँ, गृहपति! कोई कामभोगी धर्म तथा अहिंसापूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है। ऐसा करता हुआ स्वयं को सुखी तथा प्रसन्न कर लेता है, परन्तु उसका कोई विभाजन या उससे कोई पुण्य नहीं कर पाता। (८)

१०. ''यहाँ, गृहपति! कोई कामभोगी यद्यपि अपने कामभोगों का अर्जन धर्म तथा अहिंसापूर्वक ही करता है। इनसे वह स्वयं को सुखी और उसका विभाजन एवं उनसे पुण्य भी कर

११. ''इध पन, गहपति, एकच्चो कामभोगी धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेन; धम्मेन भोगे परियेसित्वा असाहसेन अत्तानं सुखेति पीणेति संविभजति पुञ्ञानि [N.243] करोति। ते च भोगे अगधितो अमुच्छितो अनज्झोपन्नो आदीनवदस्सावी निस्सरणपञ्ञो परिभुञ्जति।

१२. ''तत्र, गहपति, य्वायं कामभोगी अधम्मेन भोगे परियेसति साहसेन, अधम्मेन भोगे परियेसित्वा साहसेन न अत्तानं सुखेति न पीणेति न संविभजति न पुञ्ञानि करोति, अयं, गहपति, कामभोगी तीहि ठानेहि गारय्हो। 'अधम्मेन भोगे परियेसति साहसेना' ति, इमिना पठमेन ठानेन गारय्हो। 'न अत्तानं सुखेति न पीणेती' ति, इमिना दुतियेन ठानेन गारय्हो। 'न संविभजति न पुञ्ञानि करोती' ति, इमिना ततियेन ठानेन गारय्हो। अयं, गहपति, कामभोगी इमेहि तीहि ठानेहि गारय्हो।

१३. ''तत्र, गहपति, य्वायं कामभोगी अधम्मेन भोगे परियेसति साहसेन, धम्मेन भोगे परियेसित्वा साहसेन अत्तानं सुखेति पीणेति न संविभजति न पुञ्ञानि करोति, अयं गहपति, कामभोगी द्वीहि ठानेहि गारय्हो एकेन ठानेन पासंसो। 'अधम्मेन भोगे परियेसति साहसेना' ति, इमिना पठमेन ठानेन गारय्हो। 'अत्तानं सुखेति पीणेती' ति, इमिना एकेन ठानेन पासंसो। 'न संविभजति न पुञ्ञानि करोती' ति इमिना दुतियेन ठानेन गारय्हो। अयं, गहपति, कामभोगी इमेहि द्वीहि ठानेहि गारय्हो, इमिना एकेन ठानेन पासंसो।

लेता है; परन्तु वह उन कामभोगों के उपभोग में लिपटा (आसक्त) हुआ, मुग्ध हुआ, उनमें कोई दोष न देखता हुआ उनसे निकलने का मन नहीं बनाता। (९)

११. ''यहाँ, गृहपति! कोई कामभोगी अपने कामभोगों का अर्जन धर्म एवं अहिंसापूर्वक करता है। ऐसा कर वह स्वयं को भी सुखी रहता है, विभाजन भी कर देता है, उससे पुण्य भी करता है तथा उन भोगों को वह अनासक्त होकर, अमूर्च्छित होकर, उनसे असहमत होता हुआ उनसे मुक्त होने का मन बनाता रहता है। (१०)

१२. ''यहाँ, गृहपति! प्रथम कामभोगी जो अधर्म एवं हिंसापूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है...वह तीन स्थानों से गर्हणीय (निन्दनीय) है—'अधर्म एवं हिंसा से वह कामभोगों से अर्जन करता है'—इस प्रथम स्थान से निन्दनीय है, 'न स्वयं को सुखी तथा प्रसन्न रखता है'—इस द्वितीय स्थान से और 'न विभाजन कर पाता है, न पुण्य'—इस तृतीय स्थान से भी वह निन्दनीय होता है। इस प्रकार, गृहपति! यह प्रथम कामभोगी तीन स्थानों से निन्दनीय है। (१)

१३. ''यहाँ, गृहपति! द्वितीय कामभोगी, जो अधर्म एवं हिंसापूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है...वह दो स्थानों से गर्हणीय है, तथा एक स्थान से प्रशंसनीय। 'अधर्म तथा हिंसा से कामभोगों का अर्जन करता है'—इस प्रथम स्थान से, तथा 'न इस अर्जित कामभोग का विभाजन कर सकता है'—न उससे कोई पुण्य'—इस द्वितीय स्थान से निन्दनीय है। परन्तु वह 'स्वयं को सुखी तथा प्रसन्न रख पाता है'—इस एक स्थान से प्रशंसनीय है। यह कामभोगी, गृहपति! दो स्थानों से निन्दनीय तथा एक स्थान से प्रशंसनीय कहलाता है। (२)

[R.179] १४. "तत्र, गहपति, य्वायं कामभोगी अधम्मेन भोगे परियेसति साहसेन, अधम्मेन भोगे परियेसित्वा साहसेन अत्तानं सुखेति पीणेति संविभजति पुञ्ञानि करोति, अयं, गहपति, कामभोगी एकेन ठानेन गारय्हो द्वीहि ठानेहि पासंसो। 'अधम्मेन भोगे [B.401] परियेसति साहसेना' ति, इमिना एकेन ठानेन गारय्हो। 'अत्तानं सुखेति पीणेती' ति, इमिना पठमेन ठानेन पासंसो। 'संविभजति पुञ्ञानि करोती' ति, इमिना दुतियेन ठानेन पासंसो। अयं, गहपति, कामभोगी इमिना एकेन ठानेन गारय्हो, इमेहि द्वीहि ठानेहि पासंसो।

१५. "तत्र, गहपति, य्वायं कामभोगी धम्माधम्मेन भोगे परियेसति साहसेन पि असाहसेन पि, धम्माधम्मेन भोगे परियेसित्वा साहसेन पि असाहसेन पि न अत्तानं सुखेति [N.244] न पीणेति न संविभजति न पुञ्ञानि करोति, अयं, गहपति, कामभोगी एकेन ठानेन पासंसो तीहि ठानेहि गारय्हो। 'धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेना' ति, इमिना एकेन ठानेन पासंसो। 'अधम्मेन भोगे परियेसति साहसेना' ति, इमिना पठमेन ठानेन गारय्हो। 'न अत्तानं सुखेति न पीणेती' ति, इमिना दुतियेन ठानेन गारय्हो। 'न संविभजति न पुञ्ञानि करोती' ति, इमिना ततियेन ठानेन गारय्हो। अयं, गहपति, कामभोगी इमिना एकेन ठानेन पासंसो, इमेहि तीहि ठानेहि गारय्हो।

१६. "तत्र, गहपति, य्वायं कामभोगी धम्माधम्मेन भोगे परियेसति साहसेन पि असाहसेन पि, धम्माधम्मेन भोगे परियेसित्वा साहसेन पि असाहसेन पि अत्तानं सुखेति पीणेति न संविभजति न पुञ्ञानि करोति, अयं, गहपति, कामभोगी द्वीहि ठानेहि पासंसो द्वीहि ठानेहि गारय्हो। 'धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेना' ति, इमिना पठमेन ठानेन

---

१४. "यहाँ, गृहपति! तृतीय कामभोगी, जो अधर्म एवं हिंसापूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है...वह कामभोगी एक स्थान से निन्दनीय तथा दो स्थानों से प्रशंसनीय होता है। 'अधर्म एवं हिंसा से कामभोगों का अर्जन करता है'—इस एक स्थान से निन्दनीय है तथा 'स्वयं को सुखी एवं प्रसन्न रखता है'—इस प्रथम स्थान से, और 'विभाजन तथा पुण्य कर पाता है'—इस द्वितीय स्थान से प्रशंसनीय होता है। इस प्रकार यह कामभोगी, गृहपति! एक स्थान से निन्दनीय तथा दो स्थानों से प्रशंसनीय कहलाता है। (३)

१५. "यहाँ, गृहपति! चतुर्थ कामभोगी, जो धर्म अधर्मपूर्वक, हिंसा अहिंसा पूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है...ऐसा कामभोगी एक स्थान से प्रशंसनीय है, तथा तीन स्थानों से निन्दनीय है। यह 'धर्मपूर्वक तथा अहिंसापूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है'—इस एक स्थान से प्रशंसनीय है। परन्तु वह 'अधर्म एवं हिंसा से भी कामभोगों का अर्जन करता है'—इस प्रथम स्थान से; 'न स्वयं को सुखी एवं प्रसन्न कर पाता है'—इस द्वितीय स्थान से; तथा 'न विभाजन कर पाता है, न पुण्य'—इस तृतीय स्थान से निन्दनीय है। इस प्रकार, गृहपति! यह कामभोगी एक स्थान से प्रशंसनीय तथा तीन स्थानों से निन्दनीय होता है। (४)

१६. "यहाँ, गृहपति! पञ्चम कामभोगी, जो धर्म अधर्म, हिंसा अहिंसा से कामभोगों का अर्जन करता है...गृहपति! यह कामभोगी दो स्थानों से प्रशंसनीय है, तथा दो स्थानों से निन्दनीय।

पासंसो। 'अधम्मेन भोगे परियेसति साहसेना' ति, इमिना पठमेन ठानेन गारय्हो। 'अत्तानं सुखेति पीणेती' ति, इमिना दुतियेन ठानेन पासंसो। 'न संविभजति न पुञ्ञानि करोती' ति, इमिना दुतियेन ठानेन गारय्हो। अयं गहपति, कामभोगी इमेहि द्वीहि ठानेहि पासंसो [R.180] इमेहि द्वीहि ठानेहि गारय्हो।

१७. ''तत्र, गहपति, य्वायं कामभोगी धम्माधम्मेन भोगे परियेसति साहसेन पि असाहसेन पि, धम्माधम्मेन भोगे परियेसित्वा साहसेन पि असाहसेन पि अत्तानं सुखेति पीणेति संविभजति पुञ्ञानि करोति, अयं, गहपति, कामभोगी तीहि ठानेहि पासंसो एकेन ठानेन गारय्हो। 'धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेना' ति, इमिना पठमेन ठानेन [B.402] पासंसो। 'अधम्मेन भोगे परियेसति साहसेना' ति, इमिना एकेन ठानेन गारय्हो। 'अत्तानं सुखेति पीणेती' ति, इमिना ततियेन ठानेन पासंसो। अयं, गहपति, कामभोगी इमेहि तीहि ठानेहि पासंसो, इमिना एकेन ठानेन गारय्हो।

१८. ''तत्र, गहपति, य्वायं कामभोगी धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेन, धम्मेन भोगे परियेसित्वा असाहसेन न अत्तानं सुखेति न पीणेति न संविभजति न पुञ्ञानि करोति, अयं, गहपति, कामभोगी एकेन ठानेन पासंसो द्वीहि ठानेहि गारय्हो। धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेना' ति, इमिना एकेन ठानेन पासंसो। 'न अत्तानं सुखेति न पीणेती' ति, [N.245] इमिना पठमेन ठानेन गारय्हो। 'न संविभजति न पुञ्ञानि करोती' ति, इमिना दुतियेन ठानेन गारय्हो। अयं, गहपति, कामभोगी इमिना एकेन ठानेन पासंसो इमेहि द्वीहि ठानेहि गारय्हो।

यह 'धर्म तथा अहिंसा से कामभोगों का अर्जन करता है'—इस प्रथम स्थान से, तथा 'स्वयं को सुखी तथा प्रसन्न रखता है'—इस द्वितीय स्थान से प्रशंसनीय होता है; परन्तु 'अधर्म तथा हिंसा से कामभोगों का अर्जन करता है'—इस प्रथम स्थान से, और 'न विभाजन कर पाता है, न पुण्य'—इस द्वितीय स्थान से निन्दनीय। इस प्रकार, गृहपति! यह कामभोगी दो स्थानों से प्रशंसनीय तथा दो स्थानों से निन्दनीय कहलाता है। (५)

१७. ''यहाँ, गृहपति! षष्ठ कामभोगी भी, जो धर्म अधर्म पूर्वक तथा हिंसा अहिंसा पूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है...गृहपति! यह कामभोगी तीन स्थानों से प्रशंसनीय तथा एक स्थान से निन्दनीय होता है। यह 'धर्म तथा अहिंसा से कामभोगों का अर्जन करता है'—इस प्रथम स्थान से प्रशंसनीय है; तथा 'अपने को सुखी एवं प्रसन्न रखता है'—इस द्वितीय स्थान से और 'विभाजन तथा उनसे पुण्य भी कर लेता है'—इस तृतीय स्थान से भी प्रशंसनीय है। परन्तु यह 'अधर्म तथा हिंसा से कामभोगों का अर्जन करता है'—इस एक स्थान से निन्दनीय है। इस प्रकार गृहपति! यह कामभोगी तीन स्थानों से प्रशंसनीय एवं एक स्थान से निन्दनीय होता है। (६)

१८. ''यहाँ, गृहपति! सप्तम कामभोगी, जो धर्म तथा अहिंसा से कामभोगों का अर्जन करता है।... गृहपति! यह कामभोगी एक स्थान से प्रशंसनीय है और दो स्थानों से निन्दनीय है। यह 'धर्म तथा अहिंसा से कामभोगों का अर्जन करता है'—इस एक स्थान से प्रशंसनीय है; परन्तु यह 'न स्वयं को सुखी रख सकता है, न प्रसन्न'—इस प्रथम स्थान से, तथा 'न कामभोगों का विभाजन

१९. ''तत्र, गहपति, य्वायं कामभोगी धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेन, धम्मेन भोगे परियेसित्वा असाहसेन अत्तानं सुखेति पीणेति न संविभजति न पुञ्ञानि करोति, अयं गहपति, कामभोगी द्वीहि ठानेहि पासंसो एकेन ठानेन गारय्हो। 'धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेना' ति, इमिना पठमेन ठानेन पासंसो। 'अत्तानं सुखेति पीणेती' ति, इमिना दुतियेन ठानेन पासंसो। 'न संविभजति न पुञ्ञानि करोती' ति इमिना एकेन ठानेन गारय्हो। अयं [R.181] गहपति, कामभोगी इमेहि द्वीहि ठानेहि पासंसो इमिना एकेन ठानेन गारय्हो।

२०. ''तत्र, गहपति, य्वायं कामभोगी धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेन, धम्मेन भोगे परियेसित्वा असाहसेन अत्तानं सुखेति पीणेति संविभजति पुञ्ञानि करोति, ते च भोगे गधितो मुच्छितो अज्झोपन्नो अनादीनवदस्सावी अनिस्सरणपञ्ञो परिभुञ्जति, अयं, गहपति, कामभोगी तीहि ठानेहि पासंसो एकेन ठानेन गारय्हो। 'धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेना' ति, इमिना पठमेन पासंसो। 'अत्तानं सुखेति पीणेती' ति, इमिना दुतियेन [B.403] ठानेन पासंसो। 'संविभजति पुञ्ञानि करोती' ति, इमिना ततियेन ठानेन पासंसो। 'ते च भोगे गधितो मुच्छितो अज्झोपन्नो अनादीनवदस्सावी अनिस्सरणपञ्ञो परिभुञ्जती' ति, इमिना एकेन ठानेन गारय्हो। अयं, गहपति, कामभोगी इमेहि तीहि ठानेहि पासंसो इमिना एकेन ठानेन गारय्हो।

२१. ''तत्र, गहपति, य्वायं कामभोगी धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेन, धम्मेन भोगे परियेसित्वा असाहसेन अत्तानं सुखेति पीणेति संविभजति पुञ्ञानि करोति, ते च भोगे

करता है, न इनसे कोई पुण्यकर्म'—इस द्वितीय स्थान से निन्दनीय होता है। इस प्रकार, गृहपति! यह कामभोगी एक स्थान से निन्दनीय तथा दो स्थानों से प्रशंसनीय होता है। (७)

१९. ''यहाँ, गृहपति! अष्टम कामभोगी धर्म एवं अहिंसा से कामभोगों का अर्जन करता है...गृहपति! यह कामभोगी दो स्थानों से प्रशंसनीय तथा एक स्थान से निन्दनीय होता है। यह 'धर्म एवं अहिंसा से कामभोगों का अर्जन करता है'—इस प्रथम स्थान से तथा 'स्वयं को सुखी रखता है'—इस द्वितीय स्थान से प्रशंसनीय होता है। और यह 'न विभाजन कर पाता है, न पुण्य'—इस एक स्थान से निन्दनीय कहलाता है। गृहपति! यह कामभोगी दो स्थानों से प्रशंसनीय तथा एक स्थान से निन्दनीय है।

२०. ''यहाँ, गृहपति! नवम कामभोगी धर्म तथा अहिंसापूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है...गृहपति यह कामभोगी तीन स्थानों से प्रशस्य परन्तु एक स्थान से निन्द्य है। गृहपति! यह कामभोगी 'धर्म तथा अहिंसा पूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है'—इस प्रथम स्थान से, तथा 'स्वयं को सुखी एवं प्रसन्न रखता है'—इस द्वितीय स्थान से, और 'विभाजन भी करता है, पुण्य भी करता है'—इस तृतीय स्थान से प्रशस्य है; परन्तु यह 'उन कामभोगों को आसक्त, मुग्ध और उनमें दोष देखे विना ही उपभोग में लाता है'—इस एक स्थान से निन्द्य है। इस प्रकार यह कामभोगी इन तीन स्थानों से प्रशस्य एवं एक स्थान से निन्द्य कहलाता है। (९)

२१. ''यहाँ, गृहपति! दशम कामभोगी धर्म तथा अहिंसा पूर्वक कामभोगों का अर्जन करता

अगधितो अमुच्छितो अनज्झोपन्नो आदीनवस्सावी निस्सरणपञ्ञो परिभुञ्जति, अयं, गहपति, कामभोगी चतूहि ठानेहि पासंसो। 'धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेना' ति, इमिना पठमेन ठानेन पासंसो। 'अत्तानं सुखेति पीणेती' ति, इमिना दुतियेन ठानेन पासंसो। [N.246] 'संविभजति पुञ्ञानि करोती' ति, इमिना ततियेन ठानेन पासंसो। 'ते च भोगे अगधितो अमुच्छितो अनज्झोपन्नो आदीनवस्सावी निस्सरणपञ्ञो परिभुञ्जती' ति, इमिना चतुत्थेन ठानेन पासंसो। अयं, गहपति, कामभोगी इमेहि चतूहि ठानेहि पासंसो।

२२. ''इमे खो, गहपति, दस कामभोगी सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं। इमेसं खो, गहपति, दसन्नं कामभोगीनं य्वायं कामभोगी धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेन, [R.182] धम्मेन भोगे परियेसित्वा असाहसेन अत्तानं सुखेति पीणेति संविभजति पुञ्ञानि करोति, ते च भोगे अगधितो अमुच्छितो अनज्झोपन्नो आदीनवदस्सावी निस्सरणपञ्ञो परिभुञ्जति, अयं इमेसं दसन्नं कामभोगीनं अग्गो च सेट्ठो च पामोक्खो च उत्तमो च पवरो च। सेय्यथापि, गहपति, गवा खीरं, खीरम्हा दधि, दधिम्हा नवनीतं, नवनीतम्हा सप्पि, सप्पिम्हा सप्पिमण्डो तत्थ अग्गमक्खायति; एवमेव खो, गहपति, इमेसं दसन्नं कामभोगीनं य्वायं कामभोगी धम्मेन भोगे परियेसति असाहसेन, धम्मेन भोगे परियेसित्वा असाहसेन अत्तानं [B.404] सुखेति पीणेति संविभजति पुञ्ञानि करोति, ते च भोगे अगधितो अमुच्छितो अनज्झोपन्नो आदीनवदस्सावी निस्सरणपञ्ञो परिभुञ्जति, अयं इमेसं दसन्नं कामभोगीनं अग्गो च सेट्ठो च पामोक्खो च उत्तमो च पवरो चा'' ति॥ ●

२. भयसुत्तं : १. अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उप-

---

है...गृहपति! यह कामभोगी चारों ही स्थानों से प्रशंसनीय है। यह 'धर्म तथा अहिंसा पूर्वक कामभोगों का अर्जन करता है'—इस प्रथम स्थान से, 'स्वयं को सुखी तथा प्रसन्न रखता है'—इस द्वितीय स्थान से, 'विभाजन एवं पुण्य भी कर लेता है'—इस तृतीय स्थान से, और 'उन भोगों का, उनमें लुब्ध, आसक्त एवं मुग्ध हुए विना उनमें दोष देखता हुआ, उपभोग करता है'—इस चतुर्थ स्थान से प्रशंसनीय है। इस प्रकार, गृहपति! यह कामभोगी चारों ही स्थानों से प्रशंसनीय कहलाता है।

२२. ''यहाँ, गृहपति! लोक में ये दश प्रकार के कामभोगी उपलब्ध होते हैं। इन में जो कामभोगी धर्मपूर्वक तथा अहिंसापूर्वक कामभोगों का अर्जन कर स्वयं को भी सुखी एवं प्रसन्न रखता है, उनका उचित विभाजन भी करता है, तथा उससे पुण्य भी करता है परन्तु वह उन कामभोगों में दोष देखता हुआ, उनमें अलुब्ध, अनासक्त एवं अमुग्ध होता हुआ ही उनका आसेवन (उपभोग) करता है। अत: यही कामभोगी इन दश कामभोगियों में श्रेष्ठ, उत्तम, अग्र, प्रमुख एवं प्रवर कहलाता है। गृहपति! जैसे गौ से दूध, दूध से दही, दही से मक्खन और मक्खन से घृत उत्तरोत्तर श्रेष्ठ (अग्र) कहलाते हैं; इसी प्रकार, गृहपति! इन दश कामभोगियों में दशम कामभोगी ही जो ...पूर्ववत्... आसेवन करता है वही अग्र, श्रेष्ठ, उत्तम, प्रमुख एवं प्रवर कहलाता है॥'' ●

सङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो अनाथपिण्डिकं गहपतिं भगवा एतदवोच—

२. ''यतो, खो, गहपति, अरियसावकस्स पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति, चतूहि च सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति, अरियो चस्स ञायो पञ्ञाय सुदिट्ठो होति सुप्पटिविद्धो, सो आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीण-तिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो। सोतापन्नोहमस्मि अविनि-पातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो' ति।

[N.247] ३. ''कतमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति? यं, गहपति, पाणातिपाती [R.183] पाणातिपातपच्चया दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति सम्परायिकं पि भयं वेरं पसवति चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदेति, पाणातिपाता पटिविरतो नेव दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति न सम्परायिकं पि भयं वेरं पसवति न चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदेति। पाणातिपाता पटिविरतस्स एवं तं भयं वेरं वूपसन्तं होति।

''यं, गहपति, अदिन्नादायी ...पे०... कामेसुमिच्छाचारी... मुसावादी... सुरामेरय-मज्जपमादट्ठायी सुरामेरयमज्जपमादट्ठानपच्चया दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति सम्परायिकं पि भयं वेरं पसवति चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदेति, सुरामेरय-मज्जपमादट्ठाना पटिविरतो नेव दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति न सम्परायिकं पि भयं वेरं [B.405] पसवति न चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदेति। सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतस्स एवं तं भयं वेरं वूपसन्तं होति। इमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति।

---

२. भयसूत्र : : दशधर्मयुक्त स्रोतआपन्न

१. तब अनाथपिण्डिक गृहपति भगवान् के सम्मुख गये। जाकर, उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे अनाथपिण्डिक गृहपति को भगवान् ने यह उपदेश किया—

२. ''गृहपति! जब किसी आर्यश्रावक के पाँच भय तथा वैर शान्त हो चुके होते हैं, और वह चार स्रोतआपत्ति अङ्गों से युक्त हो जाता है, तथा आर्य ज्ञान को भी जिसने प्रज्ञा द्वारा साक्षात् कर लिया है; वह यदि चाहे तो अपने विषय में यह घोषणा कर सकता है—'मेरा अब नरकपात असम्भव है, मैं पशु-पक्षी आदि हीनयोनियों में भी उत्पन्न नहीं होऊँगा, मेरा प्रेतयोनि में जाना भी असम्भव है, मैंने अपना अपाय या दुर्गति योनियों में जाना भी असम्भव बना दिया है। मैं स्रोतआपन्न हो चुका हूँ। मैं अब धर्म से च्युत नहीं हो सकता। मैं निश्चित सम्बोधिमार्गरूढ हो चुका हूँ।'

३. कौन से पाँच भय और वैर शान्त हो चुके होते हैं? यहाँ गृहपति! किसी प्राणातिपाती को प्राणातिपात के कारण, ऐहलौकिक तथा परलौकिक भय एवं वैर उत्पन्न होते रहते हैं तथा चैतसिक दुःख दौर्मनस्य का उत्पाद होता रहता है। (इसके विपरीत) प्राणातिपात से प्रतिविरत को न ऐहलौकिक और न पारलौकिक भय या वैर ही उत्पन्न होते हैं और न चैतसिक दुःख दौर्मनस्य का ही उत्पाद होता है। इस प्रकार प्राणातिपात से प्रतिविरत साधक के भय एवं वैर शान्त होते हैं। (१)

''गृहपति! इसी प्रकार किसी चौर को...व्यभिचारी को...असत्यभाषी को...सुरा मैरेय आदि

४. ''कतमेहि चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति? इध, गहपति, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा ...पे०... बुद्धो भगवा' ति; धम्मे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'स्वाक्खातो भगवता धम्मो सन्दिट्ठिको अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही' ति; सङ्घे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, उजुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, ञायप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, सामीचिप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, यदिदं चत्तारि पुरिसयुगानि अट्ठ पुरिसपुग्गला, एस भगवतो सावकसङ्घो आहुनेय्यो पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा' ति; अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति 'अखण्डेहि अच्छिद्देहि असबलेहि अकम्मासेहि [R.184] भुजिस्सेहि विञ्ञुप्पसत्थेहि अपरामट्ठेहि समाधिसंवत्तनिकेहि'। इमेहि चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति।

५. ''कतमो चस्स अरियो ञायो पञ्ञाय सुदिट्ठो होति सुप्पटिविद्धो? इध, गहपति, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'इति इमस्मिं सति इदं होति; [N.248] इमस्सुप्पादा इदं उप्पज्जति; इमस्मिं असति इदं न होति; इमस्स निरोधा इदं निरुज्झति, यदिदं—अविज्जापच्चया सङ्खारा, सङ्खारपच्चया विञ्ञाणं, विञ्ञाणपच्चया नामरूपं, नामरूपपच्चया सळायतनं, सळायतनपच्चया फस्सो, फस्सपच्चया वेदना, वेदनापच्चया तण्हा, तण्हापच्चया उपादानं, उपादानपच्चया भवो, भवपच्चया जाति, जातिपच्चया जरामरणं

मद्यपायी को ऐहलौकिक तथा पारलौकिक भय एवं बैर उत्पन्न होते रहते हैं और चैतसिक दुःख दौर्मनस्य उत्पन्न होते रहते हैं; परन्तु मद्यपानविरत को ...पूर्ववत्... न दुःख दौर्मनस्य ही पैदा होते हैं। इस प्रकार उसके भय एवं वैर शान्त हो जाते हैं। (२-३-४-५) (क)

४. ''और किन चार स्रोतआपत्ति अङ्गों से युक्त होता है? यहाँ, गृहपति! कोई आर्यश्रावक (१) भगवान् बुद्ध के प्रति इस दृढ़ श्रद्धा से युक्त होता है—'वे भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध ...पूर्ववत्... है'; (२) धर्म के प्रति यों दृढ़ श्रद्धायुक्त होता है—'यह धर्म भगवान् द्वारा स्वाख्यात, इसी जन्म में फलदायक ...पूर्ववत्... है'; सङ्घ के प्रति यों दृढ़ श्रद्धायुक्त होता है—'भगवान् का यह श्रावकसङ्घ अपनी साधना में सम्यक् मार्गारूढ़ है ...पूर्ववत्... लोक के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल है।' वह आर्यजनों को प्रिय शील (सदाचार) से युक्त होता है जो अखण्ड, अच्छिद्र, अविभक्त, उचित, विद्वज्जनों से प्रशस्त, अपरामृष्ट एवं समाधि की ओर ले जाने वाले हैं। वह इन चार स्रोतआपत्ति अङ्गों से युक्त होता है। (६-९) (ख)

५. ''और, गृहपति! किस ज्ञानपद्धति को प्रज्ञा द्वारा भलीभाँति साक्षात् कर लिया गया होता है? यहाँ, गृहपति! कोई आर्यश्रावक यह विचार करता है—'इसके रहने पर यह होता है, इसकी उत्पत्ति से यह उत्पन्न होता है; इसके न रहने पर यह नहीं रहता, इसके निरोध से यह निरुद्ध हो जाता है; जैसे—अविद्या के प्रत्यय (कारण) से संस्कार, संस्कारों के प्रत्यय से विज्ञान, विज्ञान के प्रत्यय से नाम एवं रूप, नाम-रूप के प्रत्यय से षडायतन, षडायतन के प्रत्यय से स्पर्श, स्पर्श के प्रत्यय

सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासा सम्भवन्ति, एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स समुदयो होति; अविज्जाय त्वेव असेसविरागनिरोधा सङ्खारनिरोधो ...पे०... एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स निरोधो होती' ति। अयं चस्स चरियो ञायो पञ्ञाय सुदिट्ठो होति सुप्पटिविद्धो।

"यतो खो, गहपति, अरियसावकस्स इमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि [B.406] होन्ति, इमेहि च चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति, अयं चस्स अरियो ञायो पञ्ञाय सुदिट्ठो होति सुप्पटिविद्धो, आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीण-निरयोम्हि खीणतिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो; सोतापन्नोह-मस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो''' ति॥ ●

[R.185] **३. किंदिट्ठिकसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथ-पिण्डिकस्स आरामे। अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति दिवा दिवस्स सावत्थिया निक्खमि भगवन्तं दस्सनाय। अथ खो अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स एतदहोसि—"अकालो खो ताव भगवन्तं दस्सनाय। पटिसल्लीनो भगवा। मनोभावनीयानं पि भिक्खूनं अकालो दस्सनाय। पटिसल्लीना मनोभावनीया भिक्खू। यन्नूनाहं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यं" ति।

२. अथ, खो अनाथपिण्डिको गहपति येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो

से वेदना, वेदना के प्रत्यय से तृष्णा, तृष्णा के प्रत्यय उपादान (परिग्रह), उपादान के प्रत्यय से भव, भव के प्रत्यय से जाति, जाति के प्रत्यय से जरा, मरण, शोक, परिदेव, दुःख-दौर्मनस्य एवं उपायास उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार इस समस्त दुःखस्कन्ध का समुदय (उत्पत्ति) होता है। तथा अविद्या से सर्वथा वैराग्य होने के कारण उसका पूर्ण निरोध हो जाने से संस्कारों का निरोध होता है ...पूर्ववत्... इस प्रकार इस समस्त दुःखस्कन्ध का निरोध हो जाता है।' यह आर्यज्ञान की पद्धति प्रज्ञा के द्वारा सम्यग्दृष्ट एवं सुप्रतिविद्ध कर ली गयी होती है। (१) (ग)

"क्योंकि, गृहपति! आर्यश्रावक के ये पाँच भय एवं वैर शान्त हुए रहते हैं; वह इन चार स्रोतआपत्ति अङ्गों से समन्वित रहता है ...पूर्ववत्... मैं निश्चित सम्बोधिमार्ग पर आरूढ़ हो चुका हूँ॥" ●

३. किन्दृष्टिकसूत्र : : आर्यविनय के दश अव्याकृत सिद्धान्त

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय अनाथपिण्डिक गृहपति दोपहर के समय भगवान् के दर्शन के निमित्त निकला। मार्ग में उसको विचार हुआ—"यह समय भगवान् के दर्शन का नहीं है; क्योंकि वे इस समय दैवसिक नित्यसाधना में रत होंगे। अन्य पूजनीय स्थविर भिक्षु भी इस समय दैवसिक नित्यसाधना में लगे होंगे, तो क्यों न मैं अन्य मतावलम्बी परिव्राजकों के आश्रम में चलूँ।"

२. तब अनाथपिण्डिक गृहपति किसी अन्य मतावलम्बी परिव्राजकों के आश्रम में पहुँचा।

तेनुपसङ्कमि। तेन खो पन समयेन अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका सङ्गम्म समागम्म उन्नादिनो उच्चासद्दमहासद्दा अनेकविहितं तिरच्छानकथं कथेन्ता निसिन्ना होन्ति। अद्दसंसु [N.249] खो ते अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका अनाथपिण्डिकं गहपतिं दूरतो व आगच्छन्तं। दिस्वान अञ्ञमञ्ञं सण्ठापेसुं—"अप्पसद्दा भोन्तो होन्तु, मा भोन्तो सद्दमकत्थ। अयं अनाथपिण्डिको गहपति आरामं आगच्छति समणस्स गोतमस्स सावको। यावता खो पन समणस्स गोतमस्स सावका गिही ओदातवसना सावत्थियं पटिवसन्ति, अयं तेसं अञ्ञतरो अनाथपिण्डिको गहपति। अप्पसद्दकामा खो पन ते आयस्मन्तो अप्पसद्दविनीता अप्पसद्दस्स वण्णवादिनो। अप्पेव नाम अप्पसद्दं परिसं विदित्वा उपसङ्कमितब्बं मञ्ञेय्या" ति। अथ खो ते अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका तुण्ही अहेसुं।

३. अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति येन ते अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा तेहि अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं सम्मोदि। [R.186] सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो अनाथपिण्डिकं गहपतिं ते अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एतदवोचुं— [B.407]

४. "वदेहि गहपति, किंदिट्ठिको समणो गोतमो" ति?

"न खो अहं, भन्ते, भगवतो सब्बं दिट्ठिं जानामी" ति।

"इति किर त्वं, गहपति, न समणस्स गोतमस्स सब्बं दिट्ठिं जानासि; वदेहि, गहपति, किंदिट्ठिका भिक्खू" ति?

"भिक्खूनं पि खो अहं, भन्ते, न सब्बं दिट्ठिं जानामी" ति।

उस समय उस आश्रम के परिव्राजक एकत्र होकर ऊँचे शब्दों में परस्पर लौकिक संवाद करते हुए कोलाहल कर रहे थे। इसी समय उन परिव्राजकों ने अनाथपिण्डिक गृहपति को अपने यहाँ आते हुए, दूर से ही, देखा। देखकर वे परस्पर कहने लगे—"कोलाहल न करो, धीरे बोलो, या चुप रहो; क्योंकि यह श्रमण गौतम का शिष्य अनाथपिण्डिक गृहपति यहीं आ रहा है। श्रावस्ती में जितने भी श्रमण गौतम के श्वेतवस्त्रधारी गृहस्थ उपासक हैं, इनमें यह गृहपति श्रेष्ठ है। ये स्वयं अल्प शब्द ही बोलना चाहते हैं, दूसरों से भी अल्पशब्द (धीरे बोलते) सुनना चाहते हैं तथा ये अल्प शब्द के ही प्रशंसक हैं। हमारी परिषद् को शान्त देखकर सम्भवत: ये यहाँ आने का मन बना लें।" तब वे अन्य मतावलम्बी परिव्राजक शान्त (चुप) हो गये।

३. तब अनाथपिण्डिक गृहपति उस आश्रम के परिव्राजकों के पास गये तथा उनसे कुशल मङ्गल प्रश्न कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उस गृहपति से उन परिव्राजकों ने यह प्रश्न किया—

४. "गृहपति! बताओ, आपके श्रमण गौतम किन सिद्धान्तों को मानते हैं?"

"भन्ते! मैं भगवान् के सब सिद्धान्तों को नहीं जानता।"

"गृहपति! यदि तुम श्रमण गौतम के सब सिद्धान्तों को नहीं जानते हो तो कोई बात नहीं! यही बताओ, गृहपति! कि आपके भिक्षु किन सिद्धान्तों को मानते हैं?"

"इति किर त्वं, गहपति, न समणस्स गोतमस्स सब्बं दिट्ठिं जानासि न पि भिक्खूनं सब्बं दिट्ठिं जानासि; वदेहि, गहपति, किंदिट्ठिकोसि तुवं" ति?

"एतं खो, भन्ते, अम्हेहि न दुक्करं ब्याकातुं यंदिट्ठिका मयं। इङ्घ ताव आयस्मन्तो यथासकानि दिट्ठिगतानि ब्याकरोन्तु, पच्छापेतं अम्हेहि न दुक्करं भविस्सति ब्याकातुं यंदिट्ठिका मयं" ति।

[N.250] ५. एवं वुत्ते अञ्ञतरो परिब्बाजको अनाथपिण्डिकं गहपतिं एतदवोच— "सस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं ति—एवंदिट्ठिको अहं, गहपती" ति।

अञ्ञतरो पि खो परिब्बाजको अनाथपिण्डिकं गहपतिं एतदवोच—"असस्सता लोका, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं ति—एवंदिट्ठिको अहं, गहपती" ति।

अञ्ञतरो पि खो परिब्बाजको अनाथपिण्डिकं गहपतिं एतदवोच—"अन्तवा लोको ...पे०... अनन्तवा लोको... तं जीवं तं सरीरं... अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं... होति तथागतो परं मरणा... न होति तथागतो परं मरणा... होति च न च होति तथागतो परं मरणा... नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं ति—एवंदिट्ठिको अहं, गहपती" ति।

६. एवं वुत्ते अनाथपिण्डिको गहपति ते परिब्बाजके एदवोच—"य्वायं, भन्ते, आयस्मा एवमाह—'सस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं ति—एवंदिट्ठिको अहं,

---

"भन्ते! मैं इन भिक्षुओं द्वारा सम्मत सब सिद्धान्तों को भी नहीं जानता।"

"अच्छा, यह भी कोई बात नहीं! कम से कम यही बताओ, गृहपति! तुम स्वयं किन सिद्धान्तों को मानते हो?"

"हाँ, भन्ते! अपने सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण करना मेरे लिये कठिन नहीं है; परन्तु पहले आप अपने स्वीकृत सिद्धान्त सुनावें; उनको सुनकर ही अपने स्वीकृत सिद्धान्त बताने में मुझको सरलता होगी।"

५. (गृहपति द्वारा) ऐसा कहे जाने पर कोई परिव्राजक अनाथपिण्डिक गृहपति से यह बोला—"गृहपति! मैं इस मत का मानने वाला हूँ—'यह लोक शाश्वत है—यही सत्य है, शेष सब व्यर्थ है'।"

किसी दूसरे परिव्राजक ने यह कहा—"गृहपति! मैं इस मत को मानता हूँ—'यह लोक अशाश्वत (अनित्य) है—यही बात सत्य है, शेष सब व्यर्थ है'।"

किसी अन्य परिव्राजक ने..."यह लोक अन्तवान् है...यह लोक अन्तवान् नहीं है...वही जीव वही शरीर है...जीव अन्य है, शरीर अन्य है...तथागत मरणानन्तर भी रहते हैं...तथागत मरणानन्तर नहीं रहते...तथागत मरणानन्तर रहते भी हैं, नहीं भी रहते...तथागत मरणानन्तर नहीं होते न तथागत मरणानन्तर नहीं होते—यही सत्य है, शेष सब व्यर्थ है'—मैं गृहपति! इस मत को मानता हूँ।"

६. (उन परिव्राजकों द्वारा) ऐसा कहे जाने पर अनाथपिण्डिक गृहपति ने उन परिव्राजकों को

गहपती' ति, इमस्स अयमायस्मतो दिट्ठि अत्तनो वा अयोनिसोमनसिकारहेतु [R.187] उप्पन्ना परतोघोसपच्चया वा। सा खो पनेसा दिट्ठि भूता सङ्खता चेतयिता पटिच्चसमुप्पन्ना। यं खो पन किञ्चि भूतं सङ्खतं चेतयितं पटिच्चसमुप्पन्नं तदनिच्चं। यदनिच्चं तं दुक्खं। यं दुक्खं तदेवेसो आयस्मा अल्लीनो, तदेवेसो आयस्मा अज्झुपगतो।

''यो पायं, भन्ते, आयस्मा एवमाह—'असस्सतो लोको, इदमेव सच्चं [B.408] मोघमञ्ञं ति—एवंदिट्ठिको अहं, गहपती' ति, इमस्सा पि अयमायस्मतो दिट्ठि अत्तनो वा अयोनिसोमनसिकारहेतु उप्पन्ना परतोघोसपच्चया वा। सा खो पनेसा दिट्ठि भूता सङ्खता चेतयिता पटिच्चसमुप्पन्ना। यं खो पन किञ्चि भूतं सङ्खतं चेतयितं पटिच्चसमुप्पन्नं तदनिच्चं। यदनिच्चं तं दुक्खं। यं दुक्खं तदेवेसो आयस्मा अल्लीनो, तदेवेसो आयस्मा अज्झुपगतो।

''यो पायं, भन्ते, आयस्मा एवमाह—'अन्तवा लोको ...पे०... अनन्तवा लोको... तं जीवं तं सरीरं... अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं... होति तथागतो परं मरणा... न होति तथागतो परं मरणा... होति च न च होति तथागतो परं मरणा... नेव होति न न होति तथागतो [N.251] परं मरणा, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं ति—एवंदिट्ठिको अहं, गहपती' ति, इमस्सा पि अयमायस्मतो दिट्ठि अत्तनो वा अयोनिसोमनसिकारहेतु उप्पन्ना परतोघोसपच्चया वा। सा खो पनेसा दिट्ठि भूता सङ्खता चेतयिता पटिच्चसमुप्पन्ना। यं खो पन किञ्चि भूतं सङ्खतं चेतयितं पटिच्चसमुप्पन्नं तदनिच्चं। यदनिच्चं तं दुक्खं। यं दुक्खं तदेवेसो आयस्मा अल्लीनो, तदेवेसो आयस्मा अज्झुपगतो'' ति।

७. एवं वुत्ते ते परिब्बाजका अनाथपिण्डिकं गहपतिं एतदवोचुं—''ब्याकतानि खो, गहपति, अम्हेहि सब्बेहेव यथासकानि दिट्ठिगतानि। वदेहि, गहपति, [R.188] किंदिट्ठिकोसि तुवं'' ति?

यह उत्तर दिया—''भन्ते! आप में से जो यह कह रहा था—'यह लोक शाश्वत है—यही सत्य है, अन्य सब व्यर्थ हैं', इस आयुष्मान् के ये विचार स्वयं के अनुचित मनःसङ्कल्प के कारण बने हैं, या दूसरों के कथन पर विश्वास करने के कारण! ये विचार भूत, संस्कृत, मनःकल्पित एवं प्रतीत्यसमुत्पन्न हैं। जो कुछ भी भूत (जात), संस्कृत, मनःसङ्कल्पित एवं प्रतीत्यसमुत्पन्न होता है वह अनित्य होता है और ऐसा अनित्य 'दुःख' ही होता है। जो दुःख है उसी में आप आसक्त हैं, उसी से आप सहमत हैं।

''और भन्ते! जिस आयुष्मान् ने यह कहा था—'यह लोक अशाश्वत है ...पूर्ववत्...।

''और, भन्ते! जिस आयुष्मान् ने यह कहा था—'यह लोक अन्तवान् है...यह लोक अन्तवान् नहीं है... वही जीव है वही शरीर है... जीव अन्य है, शरीर अन्य है...तथागत मृत्यु के बाद भी होते हैं... तथागत मृत्यु के बाद नहीं होते...तथागत मृत्यु के बाद होते भी हैं; नहीं भी होते...'तथागत मृत्यु के बाद नही होते, न नहीं होते, यही सत्य है, शेष सब व्यर्थ है' ...पूर्ववत्... उसी में आप आसक्त हैं उसी से आप सहमत हैं।''

"यं खो, भन्ते, किञ्चि भूतं सङ्खतं चेतयितं पटिच्चसमुप्पन्नं तदनिच्चं। यदनिच्चं तं दुक्खं। 'यं दुक्खं तं नेतं मम, नेसोहमस्मि, न मेसो अत्ता' ति—एवंदिट्ठिको अहं, भन्ते" ति।

"यं खो, गहपति, किञ्चि भूतं सङ्खतं चेतयितं पटिच्चसमुप्पन्नं तदनिच्चं। यदनिच्चं तं दुक्खं। यं दुक्खं तदेव त्वं, गहपति, अल्लीनो, तदेव, त्वं, गहपति, अज्झुपगतो" ति।

"यं खो, भन्ते, किञ्चि भूतं सङ्खतं चेतयितं पटिच्चसमुप्पन्नं तदनिच्चं। यदनिच्चं तं दुक्खं। 'यं दुक्खं तं नेतं मम, नेसोहमस्मि, न मेसो अत्ता' ति—एवमेतं यथाभूतं सम्मप्पञ्ञाय सुदिट्ठं। तस्स च उत्तरि निस्सरणं यथाभूतं पजानामी" ति।

८. एवं वुत्ते ते परिब्बाजका तुण्हीभूता मङ्कुभूता पत्तक्खन्धा अधोमुखा पज्झायन्ता [B.409] अप्पटिभाना निसीदिंसु। अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति ते परिब्बाजके तुण्हीभूते मङ्कुभूते पत्तक्खन्धे अधोमुखे पज्झायन्ते अप्पटिभाने विदित्वा उट्ठायासना येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो अनाथपिण्डिको गहपति यावतको अहोसि तेहि अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं कथासल्लापो तं सब्बं भगवतो आरोचेसि।

"साधु साधु, गहपति! एवं खो ते, गहपति, मोघपुरिसा कालेन कालं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेतब्बा" ति।

९. अथ खो भगवा अनाथपिण्डिकं गहपतिं धम्मिया कथाय सन्दस्सेसि समादपेसि

---

७. (गृहपति द्वारा) ऐसा उत्तर दिये जाने पर, उन परिव्राजकों ने अनाथपिण्डिक गृहपति से कहा—"गृहपति! हम सभी ने अपने-अपने मत तुम्हारे सम्मुख प्रस्तुत कर दिये। अब तुम भी अपने मत को स्पष्ट करो कि तुम किस मत को मानते हो?"

"भन्ते! 'जो कुछ भी जात है, संस्कृत (कृत्रिम) है, मन:सङ्कल्पित है, प्रतीत्य समुत्पन्न है, वह सब अनित्य है, जो अनित्य है वह दु:ख है, जो दु:ख है—उसके विषय में मैं यही सोच सकता हूँ कि यह मेरा नहीं है, न मैं यह हूँ, न यह मेरी आत्मा है'—यही मेरा मत है।"

"गृहपति! 'जो कुछ भी भूत, संस्कृत, मन:कल्पित एवं प्रतीत्यसमुत्पन्न है वह अनित्य है। जो अनित्य है वह दु:ख है'—ऐसा मानते हो, तब तो, गृहपति! तुम भी दु:ख में ही आसक्त हो, उसी से सहमत हो?"

"नहीं, भन्ते! मैं इस दु:ख से आगे यह भी मानता हूँ—'जो दु:ख है वह मेरा नहीं है, न मैं वह मैं हूँ, न वह मेरी आत्मा है'—ऐसा उस से निकलने का उपाय भी मैं जानता हूँ। (अत: आप की हमारी विचारधारा समान नहीं है।")

अनाथपिण्डिक गृहपति द्वारा ऐसा कहे जाने पर वे परिव्राजक चुप हो गये, सिर नीचा कर बैठे, अपने कन्धे नीचे झुका बैठे, बुझे हुए से हो गये और उनको गृहपति की बात का कोई उत्तर नहीं सूझा। तब गृहपति उन परिव्राजकों को उसी स्थिति में छोड़कर वहाँ से उठकर भगवान् के सम्मुख आये। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे अनाथपिण्डिक गृहपति ने उन परिव्राजकों के साथ हुआ संवाद भगवान् को अक्षरश: सुनाया।

समुत्तेजेमि सम्पहंसेसि। अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति भगवता धम्मिया [N.252] कथाय सन्दस्सितो समादपितो समुत्तेजितो सम्पहंसितो उट्ठायासना भगवन्तं [R.189] अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि।

१०. अथ खो भगवा अचिरपक्कन्ते अनाथपिण्डिके गहपतिम्हि भिक्खू आमन्तेसि—"यो पि सो, भिक्खवे, भिक्खु वस्ससतुपसम्पन्नो इमस्मिं धम्मविनये, सो पि एवमेव अञ्ञतित्थिये परिब्बाजके सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गण्हेय्य यथा तं अनाथपिण्डिकेन गहपतिना निग्गहिता" ति॥ ●

४. **वज्जियमाहितसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा चम्पायं विहरति गग्गराय पोक्खरणिया तीरे। अथ खो वज्जियमाहितो गहपति दिवा दिवस्स चम्पाय निक्खमि भगवन्तं दस्सनाय। अथ खो वज्जियमाहितस्स गहपतिस्स एतदहोसि—"अकालो खो ताव भगवन्तं दस्सनाय। पटिसल्लीनो भगवा। मनोभावनीयानं पि भिक्खूनं अकालो दस्सनाय। पटिसल्लीना मनोभावनीया पि भिक्खू। यन्नूनाहं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यं" ति।

२. अथ खो वज्जियमाहितो गहपति येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं [B.410] आरामो तेनुपसङ्कमि। तेन खो पन समयेन ते अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका सङ्गम्म समागम्म उन्नादिनो उच्चासद्दमहासद्दा अनेकविहितं तिरच्छानकथं कथेन्ता निसिन्ना होन्ति। अद्दसंसु खो ते अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका वज्जियमाहितं गहपतिं दूरतो व आगच्छन्तं। दिस्वान अञ्ञमञ्ञं सण्ठापेसुं—"अप्पसद्दा भोन्तो होन्तु। मा भोन्तो सद्दमकत्थ। अयं वज्जियमाहितो गहपति आगच्छति समणस्स गोतमस्स सावको। यावता खो पन समणस्स [R.190] गोतमस्स सावका गिही ओदातवसना चम्पायं पटिवसन्ति, अयं तेसं अञ्ञतरो वज्जिय-

---

(भगवान् ने कहा—) "साधु गृहपति! साधु! इसी प्रकार, गृहपति! उन मूर्खों को समय-समय पर धार्मिक सिद्धान्तों का आश्रयण कर निगृहीत किया करो।"

९. तब भगवान् ने अनाथपिण्डिक गृहपति को धार्मिक कथाओं से सन्दृष्ट, समुत्तेजित एवं समुत्साहित किया। तदनन्तर वह गृहपति भगवदुपदिष्ट धार्मिक कथाओं से सन्दृष्ट, समुत्तेजित एवं समुत्साहित होकर आसन से उठकर भगवान् को प्रणाम प्रदक्षिणा कर अपने घर चला गया।

१० तब भगवान् ने, अनाथपिण्डिक गृहपति के चले जाने के कुछ देर बाद, भिक्षुओं को बताया—"यदि मेरे इस धर्मविनय में सौ वर्ष का उपसम्पन्न भिक्षु हो, तो वह भी अन्यमतावलम्बी भिक्षुओं को धर्मसंवाद में इसी प्रकार पराजित करेगा जैसे अनाथपिण्डिक गृहपति ने अभी उन परिव्राजकों को किया॥" ●

४. वज्जियमाहितसूत्र : : परिव्राजकों से तपोविषयक संवाद

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) चम्पा (नदी) की गग्गरा पुष्करिणी के तट पर साधनाहेतु विराजमान थे। तब वज्जियमाहित गृहपति दोपहर के समय भगवान् के दर्शनहेतु घर से निकला। ...पूर्वसूत्रवत्...।

माहितो गहपति। अप्पसद्दकामा खो पन ते आयस्मन्तो अप्पसद्दविनीता अप्पसद्दस्स वण्ण-वादिनो। अप्पेव नाम अप्पसद्दं परिसं विदित्वा उपसङ्कमितब्बं मञ्ञेय्या'' ति। अथ खो ते अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका तुण्ही अहेसुं।

[N.253] ३. अथ खो वज्जियमाहितो गहपति येन ते अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा तेहि अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो वज्जिय-माहितं गहपतिं ते अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एतदवोचुं—''सच्चं किर, गहपति, समणो गोतमो सब्बं तपं गरहति, सब्बं तपस्सिं लूखाजीविं एकंसेन उपक्कोसति उपवदती'' ति?

''न खो, भन्ते, भगवा सब्बं तपं गरहति न पि सब्बं तपस्सिं लूखाजीविं एकंसेन उपक्कोसति उपवदति। गारय्हं खो, भन्ते, भगवा गरहति, पसंसितब्बं पसंसति। गारय्हं खो पन, भन्ते, भगवा गरहन्तो पसंसितब्बं पसंसन्तो विभज्जवादो भगवा। न सो भगवा एत्थ एकंसवादो'' ति।

४. एवं वुत्ते अञ्ञतरो परिब्बाजको वज्जियमाहितं गहपतिं एतदवोच—''आगमेहि त्वं, गहपति, यस्स त्वं समणस्स गोतमस्स वण्णं भासति, समणो गोतमो वेनयिको अप्पञ्ञत्तिको'' ति?

''एत्थ पाहं, भन्ते, आयस्मन्ते वक्खामि सहधम्मेन—'इदं कुसलं' ति, भन्ते, भगवता पञ्ञत्तं; 'इदं अकुसलं' ति, भन्ते, भगवता पञ्ञत्तं। इति कुसलाकुसलं भगवा पञ्ञापयमानो सपञ्ञत्तिको भगवा; न सो भगवा वेनयिको अप्पञ्ञत्तिको'' ति।

---

२. तब वज्जियमाहित गृहपति अन्यमतावलम्बी परिव्राजकों के किसी आश्रम में गया।... पूर्ववत्...। तब वे अन्य मतावलम्बी परिव्राजक चुप हो गये।

३. तब वज्जियमाहित गृहपति उन परिव्राजकों के पास पहुँचा। पहुँचकर उनसे कुशलक्षेम प्रश्न कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे वज्जिय माहित गृहपति से उन परिव्राजकों ने प्रश्न किया—''क्या गृहपति! आपके श्रमण गौतम सभी तपश्चर्याओं की निन्दा करते हैं, सभी रूक्षजीवी तपस्वियों को सर्वथा निन्दनीय समझते हैं?''

''नहीं, भन्ते! सभी तपों की निन्दा नहीं करते और न सभी रूक्षजीवी तपस्वियों की निन्दा करते हैं। वे तो केवल निन्दनीय की ही निन्दा करते हैं, तथा प्रशंसनीय की प्रशंसा करते हैं। इस प्रकार, भगवान् निन्दनीय की निन्दा कर तथा प्रशंसनीय की प्रशंसा कर विभज्यवाद का आश्रयण लेते हैं, न कि वे सभी की निन्दा ही करते हैं।''

४. गृहपति द्वारा ऐसा कहे जाने पर, एक परिव्राजक उस वज्जियमाहित गृहपति से बोला—''गृहपति! चुप भी रहो! जिन श्रमण गौतम की तुम इतनी प्रशंसा कर रहे हो वे तुम्हारे श्रमण गौतम केवल विनय के विशेषज्ञ हैं, वे प्रज्ञप्त करना भी जानते हैं क्या?''

''इस पर भी, भन्ते! मैं अपने धर्म के अनुसार यही कहूँगा—हमारे भगवान् ने यथाप्रसङ्ग 'यह कुशल है'—यह भी बताया है, 'यह अकुशल है'—यह भी बताया है; इस प्रकार कुशल एवं

५. एवं वुत्ते ते परिब्बाजका तुण्हीभूता मङ्कुभूता पत्तक्खन्धा अधोमुखा पज्झायन्ता अप्पटिभाना निसीदिंसु। अथ खो वज्जियमाहितो गहपति ते परिब्बाजके [B.411,R.191] तुण्हीभूते मङ्कुभूते पत्तक्खन्धे अधोमुखे पज्झायन्ते अप्पटिभाने विदित्वा उट्ठायासना येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो वज्जियमाहितो गहपति यावतको अहोसि तेहि अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं कथासल्लापो तं सब्बं भगवतो आरोचेसि।

६. "साधु साधु, गहपति! एवं खो ते, गहपति, मोघपुरिसा कालेन कालं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेतब्बा। नाहं, गहपति, सब्बं तपं तपितब्बं ति वदामि; न च पनाहं, [N.254] गहपति, सब्बं तपं न तपितब्बं ति वदामि; नाहं, गहपति, सब्बं समादानं समादितब्बं ति वदामि; न पनाहं, गहपति, सब्बं समादानं न समादितब्बं ति वदामि; नाहं, गहपति, सब्बं पधानं पदहितब्बं ति वदामि; न पनाहं, गहपति, सब्बं पधानं न पदहितब्बं ति वदामि; नाहं, गहपति, सब्बो पटिनिस्सग्गो पटिनिस्सज्जितब्बो ति वदामि। न पनाहं, गहपति, सब्बो पटिनिस्सग्गो न पटिनिस्सज्जितब्बो ति वदामि; नाहं, गहपति, सब्बा विमुत्ति विमुच्चितब्बा ति वदामि; न पनाहं, गहपति, सब्बा विमुत्ति न विमुच्चितब्बा ति वदामि।

"यं हि, गहपति, तपं तपतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ति, एवरूपं तपं न तपितब्बं ति वदामि। यं च ख्वास्स गहपति, तपं तपतो [R.192] अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, एवरूपं तपं तपितब्बं ति वदामि।

"यं हि, गहपति, समादानं समादियतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ति, एवरूपं समादानं न समादितब्बं ति वदामि। यं च ख्वास्स, गहपति, समादानं समादियतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, एवरूपं समादानं समादितब्बं ति वदामि।

अकुशल के विषय में यथार्थ जाननेवाले एवं बताने वाले भगवान् प्रज्ञप्तिक क्यों नहीं हैं! अत: हमारे भगवान् को 'वैनयिक अप्रज्ञप्तिक' नहीं कहा जा सकता।

५. (वज्जियमाहित गृहपति द्वारा) ऐसा कहे जाने पर वे सभी परिव्राजक चुप हो गये... पूर्वसूत्रवत्...।

६. "साधु, गृहपति! साधु! ...पूर्वसूत्रवत्...। गृहपति! न मैं सभी तपश्चर्याओं को आचरणीय एवं न सभी को अनाचरणीय कहता हूँ। गृहपति! मैं सभी समादानों (आचरणीय धर्मों) को न आचरणीय कहता हूँ; न अनाचरणीय सभी प्रधानों (प्रयत्नयोग्य कर्मों) को प्रयतनीय कहता हूँ, न अप्रयतनीय; न सभी त्यागों को त्याज्य कहता हूँ, न सभी को अत्याज्य। न सभी विमुक्तियों को विमोचनीय कहता हूँ, न सभी को अतिमोचनीय।

"गृहपति! जिस तप के करने से अकुशल धर्म बढ़ते हों, कुशल धर्म क्षीण होते हों,ऐसा तप नहीं करना चाहिये—मेरा इतना ही कहना है; परन्तु जिस तप के करने से अकुशल धर्म क्षीण होते हों, कुशल धर्म बढ़ते हों—ऐसा तप करना चाहिये—मेरा यह भी कहना है।

"यं हि, गहपति, पधानं पदहतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ति, एवरूपं पधानं न पदहितब्बं ति वदामि। यं च ख्वास्स, गहपति, पधानं पदहतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, एवरूपं पधानं पदहितब्बं ति वदामि।

[B.412] "यं हि, गहपति, पटिनिस्सग्गं पटिनिस्सज्जतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ति, एवरूपं पटिनिस्सग्गो न पटिनिस्सज्जितब्बो ति वदामि। यं च ख्वास्स, गहपति, पटिनिस्सग्गं पटिनिस्सज्जतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, एवरूपो पटिनिस्सग्गो पटिनिस्सज्जितब्बो ति वदामि।

"यं हि, गहपति, विमुत्तिं विमुच्चतो अकुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, कुसला धम्मा परिहायन्ति, एवरूपा विमुत्ति न विमुच्चितब्बा ति वदामि। यं च ख्वास्स, गहपति, विमुत्तिं [N.255] विमुच्चतो अकुसला धम्मा परिहायन्ति, कुसला धम्मा अभिवड्ढन्ति, एवरूपा विमुत्ति विमुच्चितब्बा ति वदामी" ति।

अथ खो वज्जियमाहितो गहपति भगवता धम्मिया कथाय सन्दस्सितो समादपितो समुत्तेजितो सम्पहंसितो उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि।

७. अथ खो भगवा अचिरपक्कन्ते वज्जियमाहिते गहपतिम्हि भिक्खू आमन्तेसि—"यो पि सो, भिक्खवे, भिक्खु दीघरत्तं अप्परजक्खो इमस्मिं धम्मविनये, सो पि एवमेव अञ्ञतित्थिये परिब्बाजके सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गण्हेय्य यथा तं वज्जियमाहितेन गहपतिना निग्गहिता" ति॥ ●

[R.193] **५. उत्तियसुत्तं** : १. अथ खो उत्तियो परिब्बाजको येन भगवा तेनुपसङ्कमि;

"गृहपति! जिस समादान (आचरण) के करने से अकुशल धर्म बढ़ते हों ...पूर्ववत्... कुशलधर्म बढ़ते हों—ऐसा समादान करना चाहिये—मेरा यही कहना है।

"गृहपति! जिस प्रधान के करने से अकुशल धर्म बढ़ते हों ...पूर्ववत्... कुशल धर्म बढ़ते हों—ऐसा प्रधान (प्रयत्न) ही करना चाहिये—मेरा यही कहना है।

"गृहपति! जिस प्रतिनिसर्ग (त्याग) के आचरण से अकुशल धर्म बढ़ते हैं ...पूर्ववत्...।

"गृहपति! जिस विमुक्ति की साधना से अकुशल धर्म बढ़ते हैं ...पूर्ववत्... ऐसी विमुक्ति का ही अभ्यास करना चाहिये—मेरा यही कहना है।"

तब वह वज्जियमाहित गृहपति भगवान् से धार्मिक कथा श्रवणानन्तर सन्दृष्ट, समुत्तेजित, सम्प्रहृष्ट होकर आसन से उठकर भगवान् को प्रणाम प्रदक्षिणा कर चला गया।

७. उस वज्जियमाहित गृहपति के जाने के कुछ समय बाद भगवान् ने भिक्षुओं को उस गृहपति के विषय में यह कहा—"भिक्षुओ! जो भी भिक्षु इस धर्मविनय में बहुत समय से अल्परजस्क (विकाररहित) हो चुका है, वह भी अन्य मतावलम्बी परिव्राजकों को धर्मानुसार इसी प्रकार निगृहीत करेगा जैसे अभी इस वज्जियमाहित गृहपति ने इन परिव्राजकों को निगृहीत किया है॥" ●

उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो उत्तियो परिब्बाजको भगवन्तं एतदवोच—

२. "किं नु खो, भो गोतम, सस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं" ति?

"अब्याकतं खो एतं, उत्तिय, मया—'सस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं'" ति।

"किं नु खो, भो गोतम, असस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं" ति?

"एतं पि खो, उत्तिय, अब्याकतं मया—'असस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं'" ति।

"किं नु खो, भो गोतम, अन्तवा लोको ...पे०... अनन्तवा लोको... तं जीवं तं सरीरं... अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं... होति तथागतो परं मरणा... न होति तथागतो परं [B.413] मरणा... होति च न च होति तथागतो परं मरणा... नेव होति न न होति तथागतो [N.256] परं मरणा, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं" ति?

"एतं पि खो, उत्तिय, अब्याकतं मया—'नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं'" ति।

"'किं नु खो, भो गोतम, सस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं' ति, इति पुट्ठो समानो 'अब्याकतं खो एतं, उत्तिय, मया—सस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं' ति वदेसि। 'किं पन, भो गोतम, असस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं' ति, इति पुट्ठो समानो—'एतं पि खो, उत्तिय, अब्याकतं मया असस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं'

---

५. उत्तिय सूत्र : : दश अव्याकृत धर्म

१. तब कोई उत्तिय परिव्राजक भगवान् के पास आया, आकर उनसे कुशल मङ्गल पूछकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उस उत्तिय परिव्राजक ने भगवान् से यह जिज्ञासा की—

"भो गौतम! 'क्या लोक शाश्वत है'—यही सत्य है, शेष सब व्यर्थ है?"

"उत्तिय! मैंने इस प्रश्न को अव्याकृत ही कहा है कि 'लोक शाश्वत है' यही सत्य है...।"

"भो गौतम! क्या 'लोक अशाश्वत है'—यही सत्य है, शेष सब मिथ्या है?"

"उत्तिय! इस प्रश्न को भी मैंने अव्याकृत ही कहा है। ...पूर्ववत्...।

"भो गौतम! क्या 'लोक अन्तवान् है'...'क्या लोक अन्तवान् नहीं है'...'क्या जीव और शरीर अभिन्न हैं'...'क्या जीव अन्य है, शरीर अन्य है' ...पूर्ववत्... 'क्या तथागत नहीं होते, न नहीं होते'—यही सत्य है, शेष मिथ्या है?"

"उत्तिय! मैंने इस प्रश्न को भी अव्याकृत ही कहा है— ...पूर्ववत्...।"

"भो गौतम! मैंने अभी आप से लोक एवं तथागत के विषयमें दश प्रश्न किये, इन सभी को आपने अव्याकृत कह दिया। *(ग्रन्थानुसार विस्तार कर लें।)* तब आपने व्याकृत क्या किया है?"

"उत्तिय! मैं भलीभाँति जानकर ही श्रावकों को धर्मोपदेश करता हूँ, कि जिससे प्राणियों की

ति वदेसि। 'किं नु खो, भो गोतम, अन्तवा लोको ...पे०... अनन्तवा लोको... तं जीवं तं सरीरं... अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं... होति तथागतो परं मरणा... न होति तथागतो परं मरणा... [R.194] होति च न च होति तथागतो परं मरणा... नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं ति, इति पुट्ठो समानो—'एतं पि खो, उत्तिय, अब्याकतं मया—'नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं' ति वदेसि। अथ किञ्चरहि भोता गोतमेन ब्याकतं'' ति?

''अभिञ्ञाय खो अहं, उत्तिय, सावकानं धम्मं देसेमि सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाया'' ति।

''यं पनेतं भवं गोतमो अभिञ्ञाय सावकानं धम्मं देसेसि सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, सब्बो वा तेन लोको नीयति उपड्ढो वा तिभागो वा'' ति? एवं वुत्ते भगवा तुण्ही अहोसि।

[B.414] ३. अथ खो आयस्मतो आनन्दस्स एतदहोसि—''मा हेवं खो उत्तियो परिब्बाजको पापकं दिट्ठिगतं पटिलभि—'सब्बसामुक्कंसिकं वत मे समणो गोतमो पञ्हं पुट्ठो संसादेति, नो विस्सज्जेति, न नून विसहती' ति। तदस्स उत्तियस्स परिब्बाजकस्स [N.257] दीघरत्तं अहिताय दुक्खाया'' ति।

४. अथ खो आयस्मा आनन्दो उत्तियं परिब्बाजकं एतदवोच—''तेनहावुसो उत्तिय, उपमं ते करिस्सामि। उपमाय मिधेकच्चे विञ्ञू पुरिसा भासितस्स अत्थं आजानन्ति। सेय्यथापि, आवुसो उत्तिय, रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं दळ्हुद्धापं दळ्हपाकारतोरणं एकं द्वारं। तत्रस्स दोवारिको पण्डितो ब्यत्तो मेधावी अञ्ञातानं निवारेता ञातानं पवेसेता। सो तस्स

चित्तशुद्धि हो सके, उनके शोक एवं परिदेव का समतिक्रमण हो सके, उनके दुःख एवं दौर्मनस्य नष्ट हो सकें, उनको धर्मसाधनापद्धति की प्राप्ति हो सके और निर्वाण का साक्षात्कार हो सके।''

''भो गौतम! आप जो श्रावकों को धर्मोपदेश करते हैं ...पूर्ववत्... निर्वाण का साक्षात्कार हो सके, क्या उसका समस्त लोक, या उसका आधा या तीसरा भाग भी अनुसरण कर पाता है?''

उत्तिय द्वारा ऐसा पूछे जाने पर भगवान् मौन ही रहे।

३. तब आयुष्मान् आनन्द के मन में यह विचार हुआ—''कहीं इस उत्तिय परिव्राजक को यह पापमय दृष्टि न उत्पन्न हो जाय—'सभी के लिये समुत्कर्षदायक प्रश्न को भी भगवान् टाल देते हैं, इसका उत्तर नहीं देते, या उत्तर देने में समर्थ नहीं होते'—यह पापमय दृष्टि इसके लिये बहुत अधिक दुःखदायी एवं अहितकर होगी।''

४. तब आयुष्मान् आनन्द ने उत्तिय को यह उत्तर दिया—''तो, आयुष्मन् उत्तिय! मैं तुमको एक उपमा देता हूँ; क्योंकि उपमा के सहारे से भी कभी कभी लोग बात को भलीभाँति समझ लेते हैं। आयुष्मन् उत्तिय! जैसे किसी राजा का कोई सीमान्तनगर हों, जिसकी नींव, प्राकार (चारों ओर

नगरस्स समन्ता अनुपरियायपथं अनुक्कमति। अनुपरियायपथं अनुक्कमानो न [R.195] पस्सेय्य पाकारसन्धिं वा पाकारविवरं वा, अन्तमसो बिळारनिक्खमनमत्तं पि। नो च ख्वास्स एवं ञाणं होति—'एत्तका पाणा इमं नगरं पविसन्ति वा निक्खमन्ति वा' ति। अथ ख्वास्स एवमेत्थ होति—'ये खो केचि ओळारिका पाणा इमं नगरं पविसन्ति वा निक्खमन्ति वा, सब्बे ते इमिना द्वारेन पविसन्ति वा निक्खमन्ति वा' ति।

"एवमेव खो, आवुसो उत्तिय, न तथागतस्स एवं उस्सुक्कं होति—'सब्बो वा तेन लोको नीयति, उपड्ढो वा, तिभागो वा' ति। अथ खो एवमेत्थ तथागतस्स होति—'ये खो केचि लोकम्हा नीयिंसु वा नीयन्ति वा नीयिस्सन्ति वा, सब्बे ते पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे, चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्ता, सत्त बोज्झङ्गे यथाभूतं भावेत्वा। एवमेते लोकम्हा नीयिंसु वा नीयन्ति वा नीयिस्सन्ति वा' ति। यदेव खो त्वं, आवुसो उत्तिय, भगवन्तं पञ्हं अपुच्छि तदेवेतं पञ्हं भगवन्तं अञ्ञेन परियायेन अपुच्छि। तस्मा ते तं भगवा न ब्याकासी" ति॥ ●

६. कोकनुदसुत्तं : १. "एकं समयं आयस्मा आनन्दो राजगहे विहरति तपोदारामे। अथ खो आयस्मा आनन्दो रत्तिया पच्चूससमयं पच्चुट्ठाय येन [B.415,R.196] तपोदा तेनुपसङ्कमि गत्तानि परिसिञ्चितुं। तपोदे गतानि परिसिञ्चित्वा पच्चुत्तरित्वा [N.258]

दीवार) एवं तोरण (बहिर्द्वार) दृढ़ता से निर्मित हो; जिसमें प्रवेश का एक ही द्वार हो। उसका द्वारपाल भी बुद्धिमान्, चतुर, मेधावी, अज्ञात पुरुषों को रोक देने वाला, ज्ञात, पुरुषों को ही प्रवेश देने वाला ही हो। वह उस नगर के चारों ओर घूमकर देख लेता है। ऐसे देखता हुआ वह जान लेता है कि इस दुर्ग में कोई छोटा या बड़ा छिद्र नहीं है, न कहीं ऐसी टूट-फूट है कि जहाँ से एक छोटी बिल्ली भी अन्तःप्रविष्ट हो सके। यद्यपि वह यह तो नहीं जानता कि इतने प्राणी इस नगर में प्रविष्ट हुए या इतने बाहर निकले; परन्तु वह इतने के लिये आश्वस्त रहता है—'इस नगर में जो भी छोटा या बड़ा प्राणी प्रविष्ट होगा वह इसी मार्ग से प्रविष्ट होगा या निकलेगा तो इसी मार्ग से निकलेगा।'

"इसी प्रकार, आयुष्मान् उत्तिय! तथागत को यह उत्सुकता तो नहीं होती कि समस्त संसार पूर्णतः उनके बताये मार्ग का अनुसरण करता है या उसका आधा या तिहाई भाग; परन्तु वे यह जानते हैं—'जो भी इस लोक से ले जाये गये या ले जाये जाते हैं या ले जाये जायँगे वे सब चित्त-क्लेशकारक तथा प्रज्ञादुर्बलकारक पाँच नीवरणों को त्याग कर, चार स्मृतिप्रस्थानों में सुप्रतिष्ठित-चित्त होकर तथा सात बोध्यङ्गों को पूर्णतः अभ्यस्त करके ही इस लोक से ले जाये गये, या ले जाये जाते हैं या ले जाये जायँगे।' आयुष्मन् उत्तिय! तुमने भगवान् से जो प्रश्न किया था उस के पूछने की तुम्हारी विधि अनुचित थी, इसीलिये भगवान् ने तुम्हारे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया॥" ●

६. कोकनदसूत्र : : दश अव्याकृत प्रश्न

१. एक समय आयुष्मान् आनन्द राजगृह के तपोदाराम में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब आयुष्मान् आनन्द रात्रि के अन्तिम प्रहर में स्नानहेतु तपोदाकुण्ड पर गये। वहाँ गात्रशुद्धि (स्नान) कर, कुण्ड से निकल कर शरीर को सुखाने हेतु एक वस्त्र पहने हुए खड़े थे। उसी समय कोकनद

एकचीवरो अट्ठासि गत्तानि पुब्बापयमानो। कोकनुदो पि खो परिब्बाजको रत्तिया पच्चूससमयं पच्चुट्ठाय येन तपोदा तेनुपसङ्कमि गत्तानि परिसिञ्चितुं। अद्दसा खो कोकनुदो परिब्बाजको आयस्मन्तं आनन्दं दूरतो व आगच्छन्तं। दिस्वान आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—

२. ''क्वेत्थ, आवुसो'' ति? ''अहमावुसो, भिक्खू'' ति।

''कतमेसं, आवुसो, भिक्खूनं'' ति?

''समणानं, आवुसो, सक्यपुत्तियानं'' ति।

''पुच्छेय्याम मयं आयस्मन्तं किञ्चिदेव देसं, सचे आयस्मा ओकासं करोति पञ्हस्स वेय्याकरणाया'' ति। ''पुच्छावुसो, सुत्वा वेदिस्सामा'' ति।

''किं नु खो, भो, 'सस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं ति—एवंदिट्ठि भवं''' ति?

''न खो अहं, आवुसो, एवंदिट्ठि—'सस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं''' ति।

''किं पन, भो, 'असस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं' ति—एवंदिट्ठि भवं'' ति?

''न खो अहं, आवुसो, एवंदिट्ठि—'असस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं''' ति।

''किं नु खो, भो, अन्तवा लोको ...पे०... अनन्तवा लोको... तं जीवं तं सरीरं... अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं... होति तथागतो परं मरणा... न होति तथागतो परं मरणा... [R.197] होति च न च होति तथागतो परं मरणा... नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं ति—एवंदिट्ठि भवं'' ति?

नामक कोई परिव्राजक भी स्वगात्र शुद्धि हेतु उस तपोदाकुण्ड पर आ रहा था। आते हुए उसने दूर से ही वहाँ खड़े हुए आयुष्मान् को देख लिया। उनको देखकर वह उनके पास आकर यह पूछने लगा—

२. ''आयुष्मन्! आप का परिचय?''

''आयुष्मन्! मैं एक भिक्षु हूँ।''

''तुम किस मत को मानने वाले भिक्षुओं में से हो?''

''आयुष्मन्! शाक्यपुत्रीय श्रमणों के।''

''आयुष्मन्! यदि आप अनुमति दें तो मैं आपसे कुछ प्रश्न करूँ, जिससे मैं आपका उत्तर पा सकूँ?''

''पूछो, आयुष्मन्! सुनकर ही कुछ कहने की स्थिति में होऊँगा।''

''क्या आयुष्मन्! आप इस मत को मानते हैं—'यही लोक शाश्वत है, शेष सब प्रपञ्च है'?''

''नहीं, आयुष्मन्! मैं इस मत को नहीं मानता।'' ...पूर्ववत्...।

[पूर्वसूत्रवत् विस्तार कर लें।]

"न खो अहं, आवुसो, एवंदिट्ठि—'नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं''' ति।

"तेन हि भवं न जानाति, न पस्सती" ति? [B.416]

[N.258] "न खो अहं, आवुसो, न जानामि न पस्सामि। जानामहं, आवुसो, पस्सामी" ति।

३. "''किं नु खो, भो, सस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं ति—एवंदिट्ठि भवं' ति, इति पुट्ठो समानो—'न खो अहं, आवुसो, एवंदिट्ठि—सस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं' ति वदेसि। 'किं पन, भो, असस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं ति—एवंदिट्ठि भवं' ति, इति पुट्ठो समानो—'न खो अहं, आवुसो, एवंदिट्ठि—असस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं' ति वदेसि। किं नु खो, भो, अन्तवा लोको ...पे०... अनन्तवा लोको ...तं जीवं तं सरीरं... अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं... होति तथागतो परं मरणा... न होति तथागतो परं मरणा... होति च न च होति तथागतो परं मरणा... नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं ति—एवंदिट्ठि भवं ति, इति पुट्ठो समानो—'न खो अहं, आवुसो, एवंदिट्ठि—नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं' ति वदेसि। 'तेन हि भवं न जानाति न पस्सती' ति, इति पुट्ठो समानो—'न खो अहं, आवुसो, न जानामि न पस्सामि। जानामहं, आवुसो, पस्सामी' ति वदेसि। यथा कथं पनावुसो, इमस्स भासितस्स अत्थो दट्ठब्बो" ति?

४. "''सस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं' ति खो, आवुसो, दिट्ठिगतमेतं। 'असस्सतो लोको, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं' ति खो, आवुसो, दिट्ठिगतमेतं। अन्तवा लोको ...पे०... अनन्तवा लोको... तं जीवं तं सरीरं... अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं... होति तथागतो परं मरणा... न होति तथागतो परं मरणा... होति च न च होति तथागतो परं मरणा... 'नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा, इदमेव सच्चं मोघमञ्ञं' ति, खो, आवुसो, [R.198] दिट्ठिगतमेतं।

"यावता, आवुसो, दिट्ठिगता यावता दिट्ठिट्ठानं दिट्ठिअधिट्ठानं दिट्ठिपरियुट्ठानं [B.417] दिट्ठिसमुट्ठानं दिट्ठिसमुग्घातो, तमहं जानामि तमहं पस्सामि। तमहं जानन्तो तमहं [N.260] पस्सन्तो क्याहं वक्खामि—'न जानामि न पस्सामी' ति? जानामहं, आवुसो, पस्सामी" ति।

"क्या आप, आयुष्मन्! इस विषय में कुछ जानते या समझते ही नहीं हैं?"

"आयुष्मन्! ऐसी बात नहीं है कि मैं इस विषय में कुछ जानता या समझता नहीं हूँ। अपितु मैं आयुष्मन्! जानता भी हूँ, समझता भी हूँ।

३. "तो, आयुष्मन्! अभी मैंने दश प्रश्न आप से पूछे ...पूर्ववत्... इन प्रश्नों का क्या उत्तर माना जाना चाहिये?"

४. "आयुष्मन्! ये सभी प्रश्न *[प्रश्नों का ग्रन्थानुसार विस्तार कर लें।]* दृष्टिगत (मिथ्यामत) हैं।

"को नामो आयस्मा, कथं च पनायस्मन्तं सब्रह्मचारी जानन्ती" ति?

"'आनन्दो' ति खो मे, आवुसो, नामं। 'आनन्दो' ति च पन मं सब्रह्मचारी जानन्ती" ति।

"महाचरियेन वत किर, भो, सद्धिं मन्तयमाना न जानिम्ह—'आयस्मा आनन्दो' ति। सचे हि मयं जानेय्याम—'अयं आयस्मा आनन्दो' ति, एत्तकं पि नो नप्पटिभासेय्य। खमतु च मे आयस्मा आनन्दो" ति॥ ●

७. आहुनेय्यसुत्तं : १. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि दसहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु सीलवा होति, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति आचारगोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु।

[R.199] २. "बहुस्सुतो होति सुतधरो सुतसन्निचयो। ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा।

३. "कल्याणमित्तो होति कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को।

"आयुष्मन्! जितने भी मिथ्यामत हैं, मिथ्यास्थान, मिथ्यासङ्कल्प, मिथ्यापूर्वसङ्कल्प, मिथ्याउत्पत्ति, मिथ्याआक्रामक मत हैं, उन सबको मैं जानता हूँ, समझता हूँ। उनको जानता समझता हुआ भी मैं कैसे कहूँ कि मैं नहीं जानता। आयुष्मन्! मैं इनको जानता भी हूँ, समझता भी हूँ।"

"आयुष्मन्! आप का क्या नाम है? आपके साथी आपको किस नाम से सम्बोधित करते हैं?"

"आयुष्मन्! मेरा नाम आनन्द है। मेरे साथी भी मुझको इसी नाम से सम्बोधित करते हैं।"

"अरे! हम महान् आचार्य से संवाद कर रहे हैं—हमें यह ज्ञात नहीं था। यदि हम यह जानते कि आप आयुष्मान् आनन्द हैं, तो इतनी लम्बी-चौड़ी बातें न करते। आप, आयुष्मन् आनन्द! मुझे क्षमा करें॥" ●

७. आहवनीयसूत्र : : दशविध गुणयुक्त भिक्षु

१. भिक्षुओ! दश धर्मों से भिक्षु उपहारयोग्य, आतिथ्ययोग्य, दानयोग्य, प्रणामयोग्य तथा लोक के लिये अद्वितीय पुण्यभूमि कहलाता है। किन दश धर्मों से? भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु शीलवान् होता है, प्रातिमोक्ष के नियमों का पालन करता हुआ साधना करता है, आचार व्यवहार से सम्पन्न, छोटे से छोटे निन्द्य कर्म के आचरण में भी भय माननेवाला, भगवान् द्वारा उपदिष्ट शिक्षापदों का अभ्यास करता है। (१)

२. "वह बहुश्रुत, श्रुतधर एवं श्रुतसन्निचय होता है, जो धर्म आदि, मध्य एवं अन्त में भी कल्याणकारक ही हैं। जो साधना में अग्रसर करने वाले ऐसे धर्मों से सुपरिचित हो, उनके अन्तस्तल तक पहुँचा हुआ हो। (२)

४. सम्मादिट्ठिको होति सम्मादस्सनेन समन्नागतो।

५. ''अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति; बहुधा पि हुत्वा एको होति; आविभावं, तिरोभावं; तिरोकुड्डं तिरोपाकारं तिरोपब्बतं असज्जमानो गच्छति, सेय्यथापि आकासे; पथविया पि उम्मुज्जनिमुज्जं करोति, सेय्यथापि [B.418] उदके; उदके पि अभिज्जमाने गच्छति, सेय्यथापि पथवियं; आकासे पि पल्लङ्केन [N.261] कमति, सेय्यथापि, पक्खी सकुणो; इमे पि चन्दिमसुरिये एवंमहिद्धिके एवंमहानुभावे पाणिना परामसति परिमज्जति, याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति।

६. ''दिब्बाय सोतधातुया विसुद्धाय अतिक्कन्तमानुसिकाय उभो सद्दे सुणाति दिब्बे च मानुसे च ये दूरे सन्तिके च।

७. ''परसत्तानं परपुग्गलानं चेतसा चेतो परिच्च पजानाति। सरागं वा चित्तं 'सरागं चित्तं' ति पजानाति; वीतरागं वा चित्तं 'वीतरागं चित्तं' ति पजानाति; सदोसं वा चित्तं ...पे०... वीतदोसं वा चित्तं ...पे०... समोहं वा चित्तं... वीतमोहं वा चित्तं... सङ्खित्तं वा चित्तं... विक्खित्तं वा चित्तं... महग्गतं वा चित्तं... अमहग्गतं वा चित्तं... सउत्तरं वा चित्तं... अनुत्तरं वा चित्तं... समाहितं वा चित्तं... असमाहितं वा चित्तं... विमुत्तं वा चित्तं... अविमुत्तं वा चित्तं 'अविमुत्तं चित्तं' ति पजानाति।

८. ''अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो तिस्सो पि जातियो चतस्सो पि जातियो पञ्च पि जातियो दस पि जातियो [R.200] वीसं पि जातियो तिंसं पि जातियो चत्तालीसं पि जातियो पञ्ञासं पि जातियो जातिसतं पि जातिसहस्सं पि जातिसतसहस्सं पि अनेके पि संवट्टकप्पे अनेके पि विवट्टकप्पे अनेके पि संवट्टविवट्टकप्पे—'अमुत्रासिं एवंनामो एवंगोत्तो एवंवण्णो एवमाहारो एवंसुखदुक्ख-पटिसंवेदी एवमायुपरियन्तो, सो ततो चुतो अमुत्र उदपादिं; तत्रापासिं एवंनामो एवंगोत्तो

---

३. ''जो कल्याणमित्र हो, कल्याणकर्मों से घुला मिला हो, कल्याणसहायक हो। (३)

४. ''सम्यग्दृष्टि एवं सम्यग्दृष्टि से युक्त हो। (४)

५. ''जो अनेक प्रकार के चमत्कारों का अनुभव करनेवाला हो; जैसे—एक होते हुए भी बहुत हो जाना या बहुत होकर एक हो जाना, आविर्भाव, तिरोभाव ...पूर्ववत्... ब्रह्मलोक तक अपने अधीन कर लेना। (५)

६. ''जो मानवदुर्लभ, विशुद्ध एवं दिव्य श्रोत्र धातु से उभयविध—दिव्य एवं मानव या दूर और पास के शब्दों को सुनता हो। (६)

७. ''जो अन्य प्राणियों तथा पुद्गलों के चित्त से स्वचित्त को सम्पृक्त कर उनके मन की बात जान लेता हो। जैसे सराग चित्त पुरुष को 'यह सराग चित्त है'—ऐसा जान लेता हो ...पूर्ववत्... 'अविमुक्तचित्त है'—ऐसा जान लेता हो। (७)

८. ''जो अपने अनेक पूर्वजन्मों की स्मरण रखता हो ...पूर्ववत्...। (८)

एवंवण्णो एवमाहारो एवंसुखदुक्खपटिसंवेदी एवमायुपरियन्तो, सो ततो चुतो इधूपपन्नो ति, इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति।

९. ''दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सति चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति—'इमे [B.419] वत खो भोन्तो सत्ता कायदुच्चरितेन समन्नागता वचीदुच्चरितेन समन्नागता मनो- [N.262] दुच्चरितेन समन्नागता अरियानं उपवादका मिच्छादिट्ठिका मिच्छादिट्ठिकम्म- समादाना, ते कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपन्ना; इमे वा पन भोन्तो सत्ता कायसुचरितेन समन्नागता वचीसुचरितेन समन्नागता मनोसुचरितेन समन्नागता अरियानं अनुपवादका सम्मादिट्ठिका सम्मादिट्ठिकम्मसमादाना, ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपन्ना' ति। इति दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सति चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति।

१०. ''आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं [R.201] अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

८. थेरसुत्तं : १. ''दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो थेरो भिक्खु यस्सं यस्सं दिसायं विहरति, फासुयेव विहरति। कतमेहि दसहि? थेरो होति रत्तञ्ञू चिरपब्बजितो, सीलवा होति ...पे०... समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु, बहुस्सुतो होति ...पे०... दिट्ठिया सुप्पटिविद्धो, उभयानि खो पनस्स पातिमोक्खानि वित्थारेन स्वागतानि होन्ति सुविभत्तानि सुप्पवत्तीनि सुविनिच्छितानि सुत्तसो अनुब्यञ्जनसो, अधिकरणसमुप्पादवूपसमकुसलो

---

९. ''जो मानवदुर्लभ दिव्य चक्षु से प्राणियों को इस संसार में च्युत होते तथा उत्पन्न होते देखता हो...हीन तथा उत्तम, सुवर्ण एवं दुर्वर्ण प्राणियों को देखता हो। (९)

१०. ''जो आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर साधना करता हो। (१०)

''भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त भिक्षु आहवनीय ...पूर्ववत्... इस लोक के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल है॥'' ●

८. स्थविरसूत्र : : दश अङ्गों से युक्त भिक्षु सरल साधक

१. ''भिक्षुओ! दश धर्मों से युक्त कोई स्थविर भिक्षु जिस दिशा में भी जाय वहाँ सरलता से ही साधना कर लेता है। किन दश धर्मों से युक्त? (१) जो स्थविर चिरप्रतिष्ठित एवं चिरप्रव्रजित होता है; (२) शीलवान् होता है...भगवदुपदिष्ट शिक्षापदों का अभ्यासी होता है; (३) उभयविध प्रातिमोक्ष के विषय में सुविज्ञ होता है; (४) वाद की उत्पत्ति एवं शान्ति के ज्ञान में कुशल होता है;

होति, धम्मकामो होति पियसमुदाहारो अभिधम्मे अभिविनये उळारपामोज्जो, सन्तुट्ठो होति इतरीतरचीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन, पासादिको होति अभिक्कन्तपटिक्कन्ते सुसंवुतो अन्तरघरे निसज्जाय, चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, आसवानं च खया [B.420] अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो थेरो भिक्खु यस्सं यस्सं [N.263] दिसायं विहरति, फासुयेव विहरती'' ति॥ ●

९. उपालिसुत्तं : १. अथ खो आयस्मा उपालि येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा उपालि भगवन्तं एतदवोच—''इच्छामहं, भन्ते, अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि [R.202] सेनासनानि पटिसेवितुं'' ति।

२. ''दुरभिसम्भवानि हि खो, उपालि, अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि। दुक्करं पविवेकं दुरभिरमं। एकत्ते हरन्ति मञ्ञे मनो वनानि समाधिं अलभमानस्स भिक्खुनो। यो खो, उपालि, एवं वदेय्य—'अहं समाधिं अलभमानो अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि पटिसेविस्सामी' ति, तस्सेतं पाटिकङ्खं—'संसीदिस्सति वा उप्लविस्सति वा' ति!

३. ''सेय्यथापि, उपालि, महाउदकरहदो। अथ आगच्छेय्य हत्थिनागो सत्तरतनो

---

(५) धर्मसाधनाका अतिशय इच्छुक रहता है, (६) प्रियभाषी तथा विनय एवं अभिधर्म के श्रवण में अत्यधिक प्रमोद का अनुभव करता है, (७) अनायास उपलब्ध चीवर, पिण्डपात आदि से सन्तुष्ट रहता है; (८) कहीं जाते आते समय शरीर के वस्त्र आदि सुव्यवस्थित रखता है, यहाँ तक कि घर में बैठे रहने के समय भी; (९) आधिचैतसिक चार ध्यानों का अनायास लाभ करता है; तथा (१०) आश्रवों के क्षय से अनाश्रवाचेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर साधना करता है। भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त स्थविर भिक्षु जिस दिशा में भी जाता है, वहाँ सरलता से ही साधना कर लेता है॥'' ●

८. उपालिसूत्र : :

१. तब आयुष्मान् उपालि भगवान् के सम्मुख आये। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उपालि ने भगवान् से यह निवेदन किया—''भन्ते! मैं एकान्त में शयनासन लगाने योग्य अरण्य या किसी दूर जङ्गल प्रदेश में जाना चाहता हूँ।''

२. ''उपालि! ये अरण्य एवं वन-जङ्गल के प्रदेश कठिनता से रहने योग्य होते हैं। एकान्तवास भी कठिनता से ही किया जा सकता है। मानो, समाधि प्राप्त न कर सकने वाले भिक्षु का मन इन एकान्त अरण्य एवं वन प्रदेशों द्वारा विचलित कर दिया जाता है। उपालि! जो भिक्षु इन एकान्त अरण्य-वनप्रदेशों में जाकर समाधि लगाने का प्रस्ताव करे तो उसके लिये यह सन्देह ही रहेगा कि वह डूब जायगा या धर्मसाधना पूर्ण कर लेगा!

वा अड्डट्ठरतनो वा। तस्स एवमस्स—'यन्नूनाहं इमं उदकरहदं ओगाहेत्वा कण्णसंधोविकं पि खिड्डं कीळेय्यं पिट्ठिसंधोविकं पि खिड्डं कीळित्वा न्हात्वा च पिवित्वा च पच्चुत्तरित्वा येन कामं पक्कमेय्यं' ति। सो तं उदकरहदं ओगाहेत्वा कण्णसंधोविकं पि खिड्डं कीळेय्य पिट्ठिसंधोविकं पि खिड्डं कीळेय्य; कण्णसंधोविकं पि खिड्डं कीळित्वा पिट्ठिसंधोविकं पि खिड्डं कीळित्वा न्हात्वा च पिवित्वा च पच्चुत्तरित्वा येन कामं पक्कमेय्य। तं किस्स हेतु? महा, उपालि, अत्तभावो गम्भीरे गाधं विन्दति।

''अथ आगच्छेय्य ससो वा बिळारो वा। तस्स एवमस्स—'को चाहं, को च हत्थिनागो! यन्नूनाहं इमं उदकरहदं ओगाहेत्वा कण्णसंधोविकं पि खिड्डं कीळेय्यं पिट्ठिसंधोविकं पि खिड्डं कीळेय्यं; कण्णसंधोविकं पि खिड्डं कीळित्वा पिट्ठिसंधोविकं पि [R.203,N.264] खिड्डं कीळित्वा न्हात्वा च पिवित्वा च पच्चुत्तरित्वा येन कामं पक्कमेय्यं' [B.421] ति। सो तं उदकरहदं सहसा अप्पटिसङ्खा पक्खन्धेय्य। तस्सेतं पाटिकङ्खं—'संसीदिस्सति वा उप्लविस्सति वा' ति। तं किस्स हेतु? परित्तो, उपालि, अत्तभावो गम्भीरे गाधं न विन्दति। एवमेव खो, उपालि, यो एवं वदेय्य—'अहं समाधिं अलभमानो अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि पटिसेविस्सामी' ति, तस्सेतं पाटिकङ्खं—'संसीदिस्सति वा उप्लविस्सति वा' ति!

४. ''सेय्यथापि, उपालि, दहरो कुमारो मन्दो उत्तानसेय्यको सकेन मुत्तकरीसेन कीळति। तं किं मञ्ञसि, उपालि, नन्वायं केवला परिपूरा बालखिड्डा'' ति? ''एवं, भन्ते''।

---

३. ''जैसें, उपालि! कोई गम्भीर सरोवर हो। वहाँ कोई विशालकाय सात या साढ़े सात रतन ऊँचा गजराज आवे। उसको यह विचार हो—'मैं इस सरोवर में कर्णसन्धोविक (पूरे मुख को जल में डुबा कर) एवं पृष्ठसन्धोविक (केवल पीठ जल में डुबाकर) गज क्रीड़ा करूँगा। ये दोनों ही क्रीडाएँ इच्छानुसार करता हुआ स्नान कर, जल पीकर पुनः यहाँ से लौट कर यथेच्छ चला जाऊँगा।' इस प्रकार यह सोचकर वह उस सरोवर में उतर कर उक्त दोनों क्रीड़ा करता हुआ, स्नान कर, जल पीकर पुनः वहाँ से लौटकर जिधर चाहे उधर चला जाय। वह क्यों? क्योंकि हाथी जैसा कोई महान् शरीर वाला ही ऐसे गम्भीर सरोवर की गहराई का तक पहुँच सकता है।

''तब वहाँ कोई खरगोश या विडाल आवे। उसको यह विचार हो—'कहाँ मैं और कहाँ वह तुच्छ गजराज! मैं भी इस सरोवर में कर्णसन्धोविक एवं पृष्ठसन्धोविक गजक्रीड़ाएँ करूँगा, ये क्रीडाएँ कर, स्नान कर, जल पीकर, यहाँ से निकल कर जिधर चाहूँगा, उधर चला जाऊँगा।' यह सोचकर वह विना कुछ सोचे-विचारे सीधे उसमें छलांग लगा दे। तब उसके सामने दो ही स्थितियाँ रहेंगी—वह वहाँ डूब है या उतरा भी सकता है। ऐसा क्यों? ऐसा इसलिये कि छोटा प्राणी ऐसे गम्भीर सरोवर की गहरायी नहीं पहचान सकता। ऐसा ही यह अरण्यसमाधि का प्रस्ताव है।

४. ''उपालि! जैसे कोई शिशु (दुधमुँहा बच्चा) सीधा लेटा हुआ अपने ही मल-मूत्र से लिपटा हुआ उसी में खेलता रहता है। तो क्या मानते हो, उपालि! यही क्रीड़ा उसके लिये प्रिय एवं सर्वोत्तम है? ''हाँ, भन्ते!''

''सो खो सो, उपालि, कुमारो अपरेन समयेन वुद्धिमन्वाय इन्द्रियानं परिपाकमन्वाय यानि कानिचि कुमारकानं कीळापनकानि भवन्ति, सेय्यथीदं—वङ्ककं घटिकं मोक्खचिकं चिङ्गुलकं पत्ताळ्हकं रथकं धनुकं, तेहि कीळति। तं किं मञ्ञसि, उपालि, नन्वायं खिड्डा पुरिमाय अभिक्कन्ततरा च पणीततरा वा'' ति?

''एवं, भन्ते''।

''स खो सो, उपालि, कुमारो अपरेन समयेन वुद्धिमन्वाय इन्द्रियानं परिपाकमन्वाय पञ्चहि कामगुणेहि समप्पितो समङ्गीभूतो परिचारेति चक्खुविञ्ञेय्येहि रूपेहि इट्ठेहि कन्तेहि मनापेहि पियरूपेहि कामूपसंहितेहि रजनीयेहि, सोतविञ्ञेय्येहि सद्देहि... [R.204] घानविञ्ञेय्येहि गन्धेहि... जिव्हाविञ्ञेय्येहि रसेहि... कायविञ्ञेय्येहि फोट्ठब्बेहि इट्ठेहि कन्तेहि मनापेहि पियरूपेहि कामूपसंहितेहि रजनीयेहि। तं कि मञ्ञसि, उपालि, नन्वायं खिड्डा पुरिमाहि खिड्डाहि अभिक्कन्ततरा च पणीततरा चा'' ति? ''एवं, भन्ते''।

५. ''इध खो पन वो, उपालि, तथागतो लोके उप्पज्जति अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा। सो इमं लोकं सदेवकं समारकं सब्रह्मकं सस्समणब्राह्मणिं पजं सदेवमनुस्सं [N.265] सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेति। सो धम्मं देसेति आदिकल्याणं मज्झेकल्याणं परियोसानकल्याणं सात्थं सब्यञ्जनं, केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेति।

६. ''तं धम्मं सुणाति गहपति वा गहपतिपुत्तो वा अञ्ञतरस्मिं वा कुले पच्चाजातो।

''उपालि! वही बालक, दूसरे समय, कुछ बड़ा होकर, इन्द्रियों में कुछ अधिक चेतनता पाकर, जो भी बच्चों के खिलौने हैं उनसे खेलता है; जैसे—वङ्कक (लकड़ी का घोड़ा), घटिक (छोटा घड़ा), मोक्खचिक (पहियों वाला खिलौना), चिङ्गुलक (पत्तों वाला खिलौना, जो हवा से उडता रहे) पत्राढक (छोटी तराजू) रथक (लकड़ी का रथ) या धनुक (छोटा धनुष्)। तो क्या मानते हो, उपालि! यह खिलौनों से खेलना पहले वाली क्रीड़ा से उसके लिये अधिक प्रिय एवं उत्तम है?'' ''हाँ, भन्ते!''

''उपालि वही बालक, दूसरे समय, कुछ और बड़ा होकर, इन्द्रियों के पूर्ण चेतन हो जाने पर, पाँचों कामगुणों से युक्त होकर, उनसे एकाकार होकर, इष्ट कान्त अनुकूल प्रिय, कामोपसम्पृक्त चक्षुर्विज्ञेय रूपों से; श्रोत्रविज्ञेय शब्दों से...घ्राणविज्ञेय गन्धों से...जिह्वाविज्ञेय रसों से...कायविज्ञेय स्प्रष्टव्यों से अपने को सन्तुष्ट करता है। तो क्या मानते हो, उपालि! यह क्रीड़ा पहले की क्रीड़ा से उसके लिये अधिक प्रिय एवं उत्तम है?'' ''हाँ, भन्ते!''

५. ''उपालि! पुनः यहाँ लोक में तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध अवतरित होते हैं, जो कि विद्या एवं चरण से सम्पन्न हैं ...पूर्ववत्... देवमनुष्यों के शास्ता बुद्ध भगवान् हैं। वे देवता एवं मार सहित इस लोक को...स्वयं जानकर साक्षात् कर उपदेश करते हैं। वे आदि अन्त और मध्य-सर्वत्र कल्याणकारक सार्थक धर्म का उपदेश करते हैं एवं सर्वथा परिशुद्ध धर्मसाधना-पद्धति का प्रचार करते हैं।

सो तं धम्मं सुत्वा तथागते सद्धं पटिलभति। सो तेन सद्धापटिलाभेन समन्नागतो इति पटि-
[B.422] सञ्चिक्खति—'सम्बाधो घरावासो रजापथो, अब्भोकासो पब्बज्जा। नयिदं सुकरं अगारं अज्झावसता एकन्तपरिपुण्णं एकन्तपरिसुद्धं सङ्खलिखितं ब्रह्मचरियं चरितुं। यन्नूनाहं केसमस्सुं ओहारेत्वा कासायानि वत्थानि अच्छादेत्वा अगारस्मा अनगारियं पब्बजेय्यं' ति।

७. "सो अपरेन समयेन अप्पं वा भोगक्खन्धं पहाय महन्तं वा भोगक्खन्धं पहाय अप्पं वा ञातिपरिवट्टं पहाय महन्तं वा ञातिपरिवट्टं पहाय केसमस्सुं ओहारेत्वा कासायानि वत्थानि अच्छादेत्वा अगारस्मा अनगारियं पब्बजति।

८. "सो एवं पब्बजितो समानो भिक्खूनं सिक्खासाजीवसमापन्नो पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो होति निहितदण्डो निहितसत्थो लज्जी दयापन्नो सब्बपाण-भूतहितानुकम्पी विहरति।

"अदिन्नादानं पहाय अदिन्नादाना पटिविरतो होति दिन्नादायी दिन्नपाटिकङ्खी; अथेनेन सुचिभूतेन अत्तना विहरति।

[R.205] "अब्रह्मचरियं पहाय ब्रह्मचारी होति आराचारी विरतो मेथुना गामधम्मा।

"मुसावादं पहाय मुसावादा पटिविरतो होति सच्चवादी सच्चसन्धो थेतो पच्चयिको अविसंवादको लोकस्स।

"पिसुणं वाचं पहाय पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति, इतो सुत्वा न अमुत्र

---

६. "किसी भी कुल में उत्पन्न गृहपति या गृहपतिपुत्र उस धर्म को सुनता है। उस धर्म को सुनकर वह तथागत में अपनी श्रद्धा प्रकट करता है। वह उस श्रद्धाप्रतिलाभ से युक्त होकर यह विचार करता है—'गृहस्थजीवन नाना बाधाओं तथा आपत्तियों से परिपूर्ण है। उधर प्रव्रज्या (लोकसंन्यास) सर्वथा स्वच्छन्द एवं खुला स्थान (अब्भोकासो) है। कोई गृहस्थ पुरुष इस सर्वथा परिशुद्ध और यन्त्र से चिक्कण किये श्वेत शङ्ख के समान निर्मल ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर सकता। अतः क्यों न मैं शिर, दाढ़ी एवं मूँछ (के बाल) मुँड़वा कर प्रव्रजित हो जाऊँ।'

७. "वह फिर दूसरे समय, कम या अधिक प्राप्त सभी सांसारिक भोगों का त्याग कर छोटे बड़े सभी सम्बन्धिजनों (नाते-रिश्तेदारों) को छोड़कर, दाढ़ी-मूँछ मुँड़वाकर, काषाय वस्त्र पहनकर, गृह त्याग कर प्रव्रजित हो जाता है।

८. "वह इस प्रकार प्रव्रजित होकर भिक्षुओं की शिक्षापद्धति को स्वीकार करता हुआ प्राणातिपात को छोड़कर उससे विरत हो जाता है। वह दण्ड एवं शस्त्र को एक ओर रखता हुआ, लज्जा एवं दया से युक्त होकर सब प्राणियों के प्रति हिताकांक्षा एवं अनुकम्पा करता हुआ साधना करता है।

'अदत्तादान (चौरी) को छोड़कर उससे विरत हो जाता है। वह दिये हुए को ही लेता है या लेना चाहता है। इस प्रकार वह शुद्धचित्त से साधना करता है।

"अब्रह्मचर्य (व्यभिचार) का त्यागकर उससे दूर रहने वाला (आराचारी) होकर मैथुन ग्राम्य धर्म से विरत हो जाता है।

अक्खाता इमेसं भेदाय, अमुत्र वा सुत्वा न इमेसं अक्खाता अमूसं भेदाय। इति भिन्नानं वा सन्धाता सहितानं वा अनुप्पदाता, समग्गारामो समग्गरतो समग्गनन्दी; समग्गकरणिं वाचं भासिता होति।

''फरुसं वाचं पहाय फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति। या सा वाचा नेला कण्णसुखा पेमनीया हदयङ्गमा पोरी बहुजनकन्ता बहुजनमनापा, तथारूपिं वाचं [N.266] भासिता होति।

''सम्फप्पलापं पहाय सम्फप्पलापा पटिविरतो होति कालवादी भूतवादी अत्थवादी धम्मवादी विनयवादी, निधानवतिं वाचं भासिता होति कालेन सापदेसं परियन्तवतिं अत्थसंहितं।

''सो बीजगामभूतगामसमारम्भा पटिविरतो होति। एकभत्तिको होति [B.423] रत्तूपरतो, विरतो विकालबोजना। नच्चगीतवादितविसूदकदस्सना पटिविरतो होति, माला-गन्धविलेपनधारणमण्डनविभूसनट्ठाना पटिविरतो होति, उच्चासयनमहासयना पटिविरतो होति, जातरूपरजतपटिग्गहणा पटिविरतो होति, आमकधञ्ञपटिग्गहणा पटिविरतो होति,

---

''असत्य भाषण (मृषावाद) का त्याग कर मृषावाद से विरत हो जाता है, सत्यवादी सत्य-सन्ध (विश्वसनीय), विश्वस्त, प्रात्ययिक (विश्वासी) एवं लोक का विश्वासस्थान बन जाता है।

''पिशुन (चुगलखोरी) वाणी का त्यागकर उससे विरत हो जाता है। वह इस पक्ष की बात सुनकर उस पक्ष को नहीं कहता, तथा उस पक्ष की बात सुनकर फूट डालने के लिये इस पक्ष को नहीं कहता। इस तरह वह पृथक् हुए लोगों को जोड़ने वाला तथा मिलकर रहनेवालों में अधिक दृढ़ता लाता है, सबको एक साथ रखने में वह सुखानुभव करता है, अत: वह ऐसी वाणी ही बोलता है कि सब सदा मिलकर रहें।

''कठोरवाणी का त्यागकर उससे विरत हो जाता है। वह ऐसी वाणी बोलता है जो निर्दोष (नेला) कर्णमधुर, स्नेहोत्पादक, मनोरम, सभ्य तथा अधिक जनों को प्रिय लगने वाली तथा अनुकूल हो।

''सम्प्रलाप (निरर्थक बातचीत=बकवाद) को त्यागकर उससे विरत हो जाता है। (इसके विपरीत) समयोचित, सत्य, सार्थक, धर्मपद एवं विनययुक्त, दूसरों को भी उचित लगने वाली वाणी ही बोलता है। या फिर समय एवं परिस्थिति के अनुकूल विषय-विभाजन कर सार्थक वाणी ही बोलता है।

''बीजसमूह या जीवसमूह के नाश की चर्चा छोड़कर उससे (सभी प्रकार के बीजों एवं नाश से) विरत रहता है। दिन में एक बार ही भोजन करता है और विकाल (मध्याह्न के बाद आदि) में भोजन से विरत रहता है। नृत्य, गीत, नाट्य एवं अश्लील प्रदर्शन से भी दूर रहता है। माला, गन्ध, विलेपन, धारण, मण्डन, विभूषण आदि शरीर को अलंकृत करनेवाले कार्यों से दूर रहता है। ऊँची या सजी हुई (अलंकृत) शय्या का उपभोग नहीं करता। सुवर्ण एवं रजत के स्पर्श से भी दूर रहता है, उनका उपयोग तो उससे सम्भव ही नहीं। कच्चा धान्य (अन्न) ग्रहण नहीं करता। कच्चे मांस के

आमकमंसपटिग्गहणा पटिविरतो होति, इत्थिकुमारिकपटिग्गहणा पटिविरतो होति, दासिदासपटिग्गहणा पटिविरतो होति, अजेळकपटिग्गहणा पटिविरतो होति, कुक्कुटसूकरपटिग्गहणा पटिविरतो होति, हत्थिगवस्सवळवपटिग्गहणा पटिविरतो होति, खेत्तवत्थुपटिग्गहणा पटिविरतो होति, दूतेय्यपहिणगमनानुयोगा पटिविरतो होति, कयविक्कया पटि- [R.206] विरतो होति, तुलाकूटकंसकूटमानकूटा पटिविरतो होति, उक्कोटनवञ्चननिकतिसाचियोगा पटिविरतो होति, छेदनवधबन्धनविपरामोसआलोपसहसाकारा पटिविरतो होति।

९. ''सो सन्तुट्ठो होति कायपरिहारिकेन चीवरेन कुच्छिपरिहारिकेन पिण्डपातेन। येन येनेव पक्कमति समादायेव पक्कमति। सेय्यथापि नाम पक्खी सकुणो येन येनेव डेति सपत्तभारो व डेति। एवमेव भिक्खु सन्तुट्ठो होति कायपरिहारिकेन चीवरेन कुच्छिपरिहारिकेन पिण्डपातेन। येन येनेव पक्कमति समादायेव पक्कमति। सो इमिना अरियेन सीलक्खन्धेन समन्नागतो अज्झत्तं अनवज्जसुखं पटिसंवेदेति।

१०. ''सो चक्खुना रूपं दिस्वा न निमित्तग्गाही होति नानुब्यञ्जनग्गाही। यत्वाधिकरणमेनं चक्खुन्द्रियं असंवुतं विहरन्तं अभिज्झादोमनस्सा पापका अकुसला धम्मा अन्वास्सवेय्युं, तस्स संवराय पटिपज्जति; रक्खति चक्खुन्द्रियं, चक्खुन्द्रिये संवरं आपज्जति। [N.267] सोतेन सद्दं सुत्वा... घानेन गन्धं घायित्वा... जिव्हाय रसं सायित्वा... कायेन फोट्ठब्बं फुसित्वा... मनसा धम्मं विञ्ञाय न निमित्तग्गाही होति नानुब्यञ्जनग्गाही।

ग्रहण से दूर रहता है। स्त्री या कुमारी का किसी भी प्रयोजन से ग्रहण नहीं करता। दास या दासी का भी किसी प्रयोजन से ग्रहण नहीं करता। भेड़, बकरी आदि का ग्रहण नहीं करता। मुर्गा या सूअर का प्रतिग्रहण नहीं करता। हाथी, घोड़ा, गाय या बैल का ग्रहण नहीं करता। खेत या गृहस्थोपयोगी वस्तुओं के ग्रहण से दूर रहता है। दूतकर्म के लिये किसी के यहाँ आने-जाने से दूर रहता है। तराजू-बटखरा आदि से धूर्तव्यापार नहीं करता। घूस (रिश्वत) लेने से, ठगने से और नकली सोना चाँदी बनाने से दूर रहता है। किसी के हाथ-पैर काटने से, मारने, बाँधने, लूटने और डाका डालने आदि कुकृत्यों से दूर (विरत) रहता है।

९. ''कोई भिक्षु ऐसा वैसा शरीररक्षक चीवर पाकर भी सन्तुष्ट रहता है, ऐसी वैसी पेट भरने वाली भिक्षा से ही सन्तुष्ट रहता है। वह जहाँ कहीं भी जाता है अपना पात्र चीवर साथ ही लेकर जाता है। जैसे कोई पक्षी जहाँ कहीं भी जाता है अपने पंखों के साथ ही जाता है; इसी प्रकार, भिक्षु अपने शरीर की रक्षा में उपयोगी चीवर से तथा पेट भरने योग्य भिक्षा से ही सन्तुष्ट रहता है। वह जहाँ भी जाता है, वहाँ अपने पात्र चीवर को साथ रखता है। वह इस आर्य शीलस्कन्ध से युक्त हुआ आध्यात्मिक निर्दुष्ट सुख का अनुभव करता है।

१०. ''वह चक्षु से रूप (विषय) को देखकर भी न उसके कारण से आकृष्ट होता है, न उसके आकार से ही कि कहीं यह मेरी अनिगृहीत चक्षुरिन्द्रिय के कारण अकुशल धर्मों का आवास न बन जाय। अत: वह ऐसे पापमय धर्मों से अपनी चक्षुरिन्द्रिय को बचाता है, उस पर निग्रह करता है। वह श्रोत्र से शब्द सुनकर भी... घ्राण से गन्ध सूँघकर भी... जिह्वा से रस चखकर भी... काया

यत्वाधिकरणमेनं मनिन्द्रियं असंवुतं विहरन्तं अभिज्झादोमनस्सा पापका अकुसला धम्मा अन्वास्सवेय्युं, तस्स संवराय पटिपज्जति; रक्खति मनिन्द्रियं, मनिन्द्रियं संवरं आपज्जति। सो इमिना अरियेन इन्द्रियसंवरेन समन्नागतो अज्झत्तं अब्यासेकसुखं पटिसंवेदेति।

११. ''सो अभिक्कन्ते पटिक्कन्ते सम्पजानकारी होति, आलोकिते [B.424] विलोकिते सम्पजानकारी होति, सम्मिञ्जिते पसारिते सम्पजानकारी होति, सङ्घाटिपत्त-चीवरधारणे सम्पजानकारी होति, असिते पीते खायिते सायिते सम्पजानकारी होति, उच्चारपस्सावकम्मे सम्पजानकारी होति, गते ठिते निसिन्ने सुत्ते जागरिते भासिते तुण्हीभावे सम्पजानकारी होति।

१२. ''सो इमिना च अरियेन सीलक्खन्धेन समन्नागतो, इमिना च अरियेन इन्द्रिय-संवरेन समन्नागतो, इमिना च अरियेन सतिसम्पजञ्ञेन समन्नागतो विवित्तं सेनासनं [R.207] भजति अरञ्ञं रुक्खमूलं पब्बतं कन्दरं गिरिगुहं सुसानं वनपत्थं अब्भोकासं पलालपुञ्जं। सो अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा।

१३. ''सो अभिज्झं लोके पहाय विगताभिज्झेन चेतसा विहरति, अभिज्झाय चित्तं परिसोधेति। ब्यापादपदोसं पहाय अब्यापन्नचित्तो विहरति सब्बपाणभूतहितानुकम्पी, ब्यापादपदोसा चित्तं परिसोधेति। थीनमिद्धं पहाय विगतथीनमिद्धो विहरति आलोकसञ्ञी

से स्पर्शयोग्य विषयों का स्पर्श करके भी...मन से मनोधर्मों को जानकर भी उनके कारणों से आकृष्ट नहीं होता, न उनके आकारों से ही आकृष्ट होता है कि कहीं ये मेरी अनिगृहीत मन इन्द्रिय के कारण अकुशल पापमय धर्मों का आवास न बन जाँय। अत: वह ऐसे पापमय धर्मों से अपनी मनइन्द्रिय को बचाता है, उस पर निग्रह करता है। वह इस श्रेष्ठ इन्द्रियसंयम से युक्त होता हुआ आध्यात्मिक अनासक्त सुख का अनुभव करता है।

११. ''वह आगे बढ़ने पर या पीछे हटने पर उस क्रिया की समीक्षा करता रहता है, आगे देखने या पीछे देखने की क्रिया की...बाहु पसारने या सङ्कुचित करने की क्रिया की...वस्त्र धारण क्रिया की... खाने, पीने, चखने की क्रिया की... मल-मूत्रादि की क्रिया की... चलते, ठहरते, बैठते, सोते हुए, जगते हुए, बोलते या चुप हुए—इन क्रियाओं की समीक्षा करता रहता है।

१२. ''इस प्रकार, वह इस आर्यशील से, इस इन्द्रियसंयम से, इस आर्य स्मृतिसम्प्रजन्य से युक्त होता हुआ एकान्त शयनासन का उपयोग करना चाहता हुआ अरण्य, वृक्षमूल, पर्वत, कन्दरा, गिरिगुफा, श्मशान, वनप्रदेश, खुला मैदान या तृणराशि को खोजता है। इसके बाद वह किसी मनोनुकूल अरण्यस्थ वृक्ष के नीचे या किसी शून्य गृह में पद्मासन लगाकर, शरीर को सीधा (सरल) कर, स्मृति को सम्मुख कर साधना आरम्भ करता है।

१३. ''वह सांसारिक लोभ का त्यागकर लोभरहित चित्त से साधना करता है, व्यापाद (द्वेष) का त्यागकर व्यापादरहित चित्त से सभी प्राणियों पर हित एवं अनुकम्पा करता हुआ द्वेष से चित्त को विरत कर लेता है। स्त्यानमृद्ध (आलस्य) का त्यागकर स्त्यानमृद्ध से रहित होकर साधना

सतो सम्पजानो, थीनमिद्धा चित्तं परिसोधेति। उद्धच्चकुक्कुच्चं पहाय अनुद्धतो विहरति अज्झत्तं वूपसन्तचित्तो, उद्धच्चकुक्कुच्चा चित्तं परिसोधेति। विचिकिच्छं पहाय तिण्ण-विचिकिच्छो विहरति अकथङ्कथी कुसलेसु धम्मेसु, विचिकिच्छाय चित्तं परिसोधेति।

१४. ''सो इमे पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे, विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। तं किं मञ्ञसि, उपालि, 'नन्वायं विहारो पुरिमेहि विहारेहि [N.268] अभिक्कन्ततरो च पणीततरो चा' '' ति? ''एवं, भन्ते''।

''इमं पि खो, उपालि, मम सावका अत्तनि धम्मं सम्पस्समाना अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि पटिसेवन्ति, नो च खो ताव अनुप्पत्तसदत्था विहरन्ति।

[B.425] १५. ''पुन च परं, उपालि, भिक्खु वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। तं किं मञ्ञसि, उपालि, 'नन्वायं विहारो पुरिमेहि विहारेहि अभिक्कन्ततरो च पणीततरो चा' '' ति? ''एवं, भन्ते''।

''इमं पि खो, उपालि, मम सावका अत्तनि धम्मं सम्पस्समाना अरञ्ञवनपत्थानि [R.208] पन्तानि सेनासनानि पटिसेवन्ति, नो च खो ताव अनुप्पत्तसदत्था विहरन्ति।

१६. ''पुन च परं, उपालि, भिक्खु पीतिया च विरागा ...पे०... ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। तं किं मञ्ञसि, उपालि, 'नन्वायं विहारो पुरिमेहि विहारेहि अभिक्कन्ततरो च पणीततरो चा' '' ति? ''एवं, भन्ते''।

''इमं पि खो, उपालि, मम सावका अत्तनि धम्मं सम्पस्समाना अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि पटिसेवन्ति, नो च खो ताव अनुप्पत्तसदत्था विहरन्ति।

करता हुआ स्मृति सम्प्रजन्य के सहारे से चित्त को आलस्य से मुक्त कर लेता है। औद्धत्य कौकृत्य का त्यागकर अनुद्धत (विनीत) रहता हुआ एवं चित्त को इस दोष से मुक्त कर लेता है। विचिकित्सा (सन्देह) को त्यागकर, विचिकित्सारहित होकर, कुशल धर्मों के विषय में असन्दिग्ध होकर, स्वचित्त को विचिकित्सा से दूर कर लेता है।

१४. ''इस प्रकार, वह इन पाँच नीवरणों का त्यागकर, प्रज्ञा द्वारा चित्तक्लेशों को दुर्बल कर, कामभोगों तथा अकुशल धर्मों से दूर रह कर, वितर्क विचार सहित विवेकजन्य प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान की साधना करता है। तो क्या मानते हो, उपालि! यह साधना पूर्वोक्त साधना से उत्तम नहीं है?'' ''हाँ, ऐसा ही है, भन्ते!''

''उपालि! मेरा श्रावक इस धर्म की स्वचित्त में प्रत्यवेक्षणा करते हुए ही एकान्त अरण्य या वनप्रदेशों में साधना करता है न कि अपने किसी अन्य सुखलाभ के प्रयोजन से।

१५. ''पुनः, उपालि! वह भिक्षु वितर्क, विचारों के शान्त होने से ...पूर्ववत्... द्वितीय ध्यान की साधना करता है। तो क्या मानते हो, उपालि! यह साधना ...पूर्ववत्... ।

१६. ''पुनः, उपालि! वह भिक्षु सुख दुःख के प्रहाण से ...पूर्ववत्... चतुर्थ ध्यान की साधना करता है। तो क्या मानते हो, उपालि! यह साधना ...पूर्ववत्... ।

१७. "पुन च परं, उपालि, भिक्खु सुखस्स च पहाना ...पे०... चतुत्थं झानं ...पे०... पुन च परं, उपालि, भिक्खु सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। तं किं मञ्ञसि, उपालि, 'नन्वायं विहारो पुरिमेहि विहारेहि अभिक्कन्ततरो च पणीततरो चा' " ति? "एवं, भन्ते"।

"इमं पि खो, उपालि, मम सावका अत्तनि धम्मं सम्पस्समाना अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि पटिसेवन्ति, नो च खो ताव अनुप्पत्तसदत्था विहरन्ति।

१८. "पुन च परं, उपालि, भिक्खु सब्बसो आकासानञ्चायतनं [N.269] समतिक्कम्म 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति ...पे०...।

"सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति ...पे०...।

"सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म 'सन्तमेतं पणीतमेतं' ति नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। तं किं मञ्ञसि, उपालि, 'नन्वायं विहारो [R.209] पुरिमेहि विहारेहि अभिक्कन्ततरो च पणीततरो चा' " ति? "एवं, भन्ते"।

"इमं पि खो, उपालि, मम सावका अत्तनि धम्मं सम्पस्समाना अरञ्ञ- [B.426] वनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि पटिसेवन्ति, नो च खो ताव अनुप्पत्तसदत्था विहरन्ति।

१९. "पुन च परं, उपालि, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति; पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति। तं किं मञ्ञसि, उपालि, 'नन्वायं विहारो पुरिमेहि विहारेहि अभिक्कन्ततरो च पणीततरो चा' " ति? "एवं, भन्ते"।

---

१७. "पुनः उपालि! वह भिक्षु सर्वशः रूपसंज्ञाओं का अतिक्रमण कर, प्रतिघसंज्ञाओं के नष्ट हो जाने से, नानात्वसंज्ञाओं को मन में न करने से 'आकाश अनन्त है' ऐसे आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। तो क्या मानते हो, उपालि! यह साधना ...पूर्ववत्...।

१८. "पुनः, उपालि! वह भिक्षु सर्वशः आकाशानन्त्यायतन का भी समतिक्रमण कर 'अनन्त विज्ञान है'—इस विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है ...पूर्ववत्...।

"...सर्वशः विज्ञानानन्त्यायन का भी समतिक्रमण कर 'कुछ नहीं है'—इस आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। ...पूर्ववत्...।

"...सर्वशः आकिञ्चन्यायतन का भी समतिक्रमण कर 'यह शान्त है, यह प्रणीत है'—ऐसे नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करता है। ...पूर्ववत्...।

१९. "पुनः इसके बाद, उपालि! वह भिक्षु सर्वशः नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का भी अतिक्रमण कर, संज्ञावेदयितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है। इस अवस्था में, प्रज्ञा द्वारा समीक्षा करने पर, इसके सभी आश्रव क्षीण हो जाते हैं। तो क्या मानते हो, उपालि! ...पूर्ववत्...।

"इमं पि खो, उपालि, मम सावका अत्तनि धम्मं सम्पस्समाना अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि पटिसेवन्ति, अनुप्पत्तसदत्था च विहरन्ति। इङ्घ त्वं, उपालि, सङ्घे विहराहि। सङ्घे ते विहरतो फासु भविस्सती" ति॥ ●

१०. अभब्बसुत्तं : १. "दसयिमे, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं। कतमे दस? रागं, दोसं, मोहं, कोधं, उपनाहं, मक्खं, पळासं, इस्सं, मच्छरियं, मानं—इमे खो भिक्खवे, दस धम्मे अप्पहाय अभब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं।

२. "दसयिमे, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं। कतमे दस? [N.270] रागं, दोसं, मोहं, कोधं, उपनाहं, मक्खं, पळासं, इस्सं, मच्छरियं, मानं—इमे खो भिक्खवे, दस धम्मे पहाय भब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं" ति॥ ●

उपालिवग्गो दसमो॥

तस्सुद्दानं

[R.210] कामभोगी भयं दिट्ठि, वज्जियमाहितुत्तिया।
कोकनुदो आहुनेय्यो, थेरो उपालि अभब्बो ति॥ ●

दुतियो पण्णासको समत्तो॥

"...अत: उपालि! (मेरी बात मानो तो) तुम सङ्घ (के मध्य) में रहते हुए ही साधना करो। सङ्घ में साधना करते रहने से तुम्हें सरलता प्रतीत होगी॥" ●

१०. अभव्यसूत्र : :दश धर्मों के त्याग के विना अर्हत्त्वप्राप्ति असम्भव

१. "भिक्षुओ! इन दश धर्मों के त्याग के विना अर्हत्त्वप्राप्ति असम्भव है। कौन से दश? राग, द्वेष, मोह, क्रोध, उपनाह, म्रक्ष, प्रदाश, ईर्ष्या, मात्सर्य एवं मान—इन दश धर्मों के त्याग के विना अर्हत्त्वप्राप्ति सम्भव नहीं है।

२. "और, भिक्षुओ! इन दश धर्मों के त्याग से अर्हत्त्वप्राप्ति सम्भव है। कौन से दश? राग, द्वेष, मोह, क्रोध ...पूर्ववत्... एवं मान। इन दश धर्मों के प्रहाण से अर्हत्त्व प्राप्त किया जा सकता है॥" ●

उपालिवर्ग दशम सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. कामभोगिसूत्र, २. भयसूत्र, ३. किन्दृष्टिकसूत्र, ४. वज्जियमाहितसूत्र, ५. उत्तियसूत्र, ६. कोकनदसूत्र, ७. आहवनीयसूत्र, ८. स्थविरसूत्र, ९. उपालिसूत्र एवं १०. अभव्यसूत्र॥ ●

द्वितीय पञ्चाशत्क समाप्त॥

११. समणसञ्ञावग्गो

ततियो पण्णासको

१. समणसञ्ञासुत्तं : १. ''तिस्सो इमा, भिक्खवे, समणसञ्ञा भाविता [B.427] बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति। कतमा तिस्सो ? वेवण्णियम्हि अज्झुपगतो, परपटिबद्धा मे जीविका, अञ्ञो मे आकप्पो करणीयो ति—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो समणसञ्ञा भाविता बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति।

२. ''कतमे सत्त? सन्ततकारी होति सन्ततवुत्ति सीलेसु, अनभिज्झालु होति, अब्यापज्झो होति, अनतिमानी होति, सिक्खाकामो होति, इदमत्थितस्स होति जीवितपरिक्खारेसु, आरद्धविरियो च विहरति। इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो [R.211] समणसञ्ञा भाविता बहुलीकता इमे सत्त धम्मे परिपूरेन्ती'' ति॥ ●

२. बोज्झङ्गसुत्तं : १. ''सत्तिमे, भिक्खवे, बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता तिस्सो विज्जा परिपूरेन्ति। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो, धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो, विरिय-सम्बोज्झङ्गो, पीतिसम्बोज्झङ्गो, पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो, समाधिसम्बोज्झङ्गो, उपेक्खा-सम्बोज्झङ्गो—इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता तिस्सो विज्जा [N.271] परिपूरेन्ति।

२. कतमा तिस्सो ? इध, भिक्खवे, भिक्खु अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति,

---

११. श्रमणसंज्ञावर्ग

तृतीय पञ्चाशत्क

१. श्रमणसंज्ञासूत्र : : तीन श्रमणसंज्ञाओं से सात धर्मों की पूर्ति

१. ''भिक्षुओ! ये तीन श्रमणसंज्ञाएँ, अभ्यस्त एवं वृद्धिङ्गत किये जाने पर, सात धर्मों को पूर्ण करती हैं। कौन सी तीन? (१) 'मैं कलङ्कित हो गया', (२) 'मेरी जीविका दूसरों पर आधृत है', (३) 'मुझे अपनी गतिविधि(=ईर्यापथ, चाल-ढाल) बदलनी चाहिये।' भिक्षुओ! ये तीन श्रमणसंज्ञाएँ अभ्यस्त एवं वृद्धिङ्गत किये जाने पर सात धर्मों को पूर्ण करती हैं।

२. ''कौन से सात धर्म? (१) वह शील का निरन्तर पालन करता है तथा उनमें निरन्तर अपनी वृत्ति बना लेता है, (२) वह लोभरहित, (३) द्वेषरहित, (४) अधिक मान न करने वाला, (५) शिक्षा (बुद्धोपदेश) सुनने का इच्छुक, (६) जीवन के साधनों में सन्तोष (इदमर्थिता) मानने वाला तथा (७) उद्योगी होकर साधनारत रहता है। भिक्षुओ! इस प्रकार ये तीन श्रमण संज्ञाएँ सात धर्मों को पूर्ण करती हैं॥'' ●

२. बोध्यङ्गसूत्र : : सात धर्मों से तीन विद्याओं की पूर्ति

१. ''भिक्षुओ! ये सात बोध्यङ्ग अभ्यस्त एवं वृद्धिङ्गत किये जाने पर तीन विद्याओं की पूर्ति होती हैं। कौन से सात बोध्यङ्ग? (१) स्मृतिसम्बोध्यङ्ग, (२) धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग, (३) वीर्य सम्बोध्यङ्ग, (४) प्रीतिसम्बोध्यङ्ग, (५) प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग, (६) समाधिसम्बोध्यङ्ग, (७)

सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो तिस्सो पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति। दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति। आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता इमा तिस्सो विज्जा परिपूरेन्ती'' ति॥ ●

३. मिच्छत्तसुत्तं : १. ''मिच्छत्तं, भिक्खवे, आगम्म विराधना होति, नो आराधना। [B.428] कथं च, भिक्खवे, मिच्छत्तं आगम्म विराधना होति, नो आराधना? मिच्छा-दिट्ठिकस्स, भिक्खवे, मिच्छासङ्कप्पो पहोति, मिच्छासङ्कप्पस्स मिच्छावाचा पहोति, [R.212] मिच्छावाचस्स मिच्छाकम्मन्तो पहोति, मिच्छाकम्मन्तस्स मिच्छाआजीवो पहोति, मिच्छाआजीवस्स मिच्छावायामो पहोति, मिच्छावायामस्स मिच्छासति पहोति, मिच्छा-सतिस्स मिच्छासमाधि पहोति, मिच्छासमाधिस्स मिच्छाञाणं पहोति, मिच्छाञाणिस्स मिच्छाविमुत्ति पहोति। एवं खो, भिक्खवे, मिच्छत्तं आगम्म विराधना होति, नो आराधना।

२. ''सम्मत्तं, भिक्खवे, आगम्म आराधना होति, नो विराधना। कथं च, भिक्खवे, सम्मत्तं आगम्म आराधना होति, नो विराधना? सम्मादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, सम्मासङ्कप्पो पहोति, सम्मासङ्कप्पस्स सम्मावाचा पहोति, सम्मावाचस्स सम्माकम्मन्तो पहोति, सम्मा-कम्मन्तस्स सम्माआजीवो पहोति, सम्माआजीवस्स सम्मावायामो पहोति, सम्मावायामस्स

उपेक्षासम्बोध्यङ्ग—भिक्षुओ! ये सात बोध्यङ्ग अभ्यस्त एवं वृद्धिङ्गत किये जाने पर तीन विद्याओं की पूर्ति करते हैं।

२. ''कौन सी तीन विद्याएँ? (१) यहाँ भिक्षुओ! कोई भिक्षु अपने विविध पूर्वजन्मों का ज्ञान रखता है ...पूर्ववत्...। (२) मानवदुर्लभ, विशुद्ध दिव्य चक्षु से ...पूर्ववत्... कर्मानुसार उत्पन्न विनष्ट होने वाले प्राणियों को जानता है। (३) आश्रवों के क्षय से ...पूर्ववत्... साक्षात् कर प्राप्त कर साधना करता है। भिक्षुओ! सात बोध्यङ्ग, अभ्यस्त एवं वृद्धिङ्गत किये जाने पर, तीन विद्याओं की पूर्ति करते हैं॥ ●

२. मिथ्यात्वसूत्र : : मिथ्यात्व से दश मिथ्याधर्मों की उत्पत्ति

१. ''भिक्षुओ! मिथ्यात्व (मिथ्यादृष्टि) के आश्रयण से विराधना (असमर्थता या प्रमाद) ही उद्भूत होती है, आराधना (उपासना) नहीं होती। कैसे, भिक्षुओ! मिथ्यात्व के आश्रय से...आराधना नहीं होती? भिक्षुओ! मिथ्यादृष्टि साधक को मिथ्यासङ्कल्प उत्पन्न होता है, मिथ्यासङ्कल्प को मिथ्यावाणी..., मिथ्यावाणी को मिथ्याकर्मान्त..., मिथ्याकर्मान्त को मिथ्याआजीव..., मिथ्या-आजीव को मिथ्याव्यायाम... मिथ्याव्यायाम को मिथ्यास्मृति..., मिथ्यास्मृति को मिथ्या-समाधि...,मिथ्यासमाधि को मिथ्याज्ञान..., मिथ्याज्ञान को मिथ्याविमुक्ति उत्पन्न होती है। इस प्रकार, भिक्षुओ! मिथ्यात्व का आश्रयण करने से साधक को विराधना ही उद्भूत होती है, आराधना नहीं।

२. (परन्तु) ''सम्यक्त्व (सम्यग्दृष्टि) के आश्रयण से आराधना उद्भूत होती है, विराधना नहीं। कैसे भिक्षुओ! सम्यक्त्व के आश्रयण से...विराधना नंहीं होती? भिक्षुओ! सम्यग्दृष्टि को

सम्मासति पहोति, सम्मासतिस्स सम्मासमाधि पहोति, सम्मासमाधिस्स सम्माञाणं पहोति, सम्माञाणिस्स सम्माविमुत्ति पहोति। एवं खो, भिक्खवे, सम्मत्तं आगम्म आराधना होति, नो विराधना'' ति॥ ●

४. बीजसुत्तं : १. ''मिच्छादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलस्स [N.272] मिच्छासङ्कप्पस्स मिच्छावाचस्स मिच्छाकम्मन्तस्स मिच्छाआजीवस्स मिच्छावायामस्स मिच्छासतिस्स मिच्छासमाधिस्स मिच्छाञाणिस्स मिच्छाविमुत्तिस्स यं च कायकम्मं यथादिट्ठि समत्तं समादिन्नं यं च वचीकम्मं... यं च मनोकम्मं यथादिट्ठि समत्तं समादिन्नं या च चेतना या च पत्थना यो च पणिधि ये च सङ्खारा, सब्बे ते धम्मा अनिट्ठाय अकन्ताय अमनापाय अहिताय दुक्खाय संवत्तन्ति। तं किस्स हेतु? दिट्ठि हिस्स, भिक्खवे, पापिका।

२. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, निम्बबीजं वा कोसातकिबीजं वा तित्तकलाबुबीजं वा अल्लाय पथविया निक्खित्तं यं चेव पथविरसं उपादियति यं च आपोरसं [R.213] उपादियति, सब्बं तं तित्तकत्ताय कटुकत्ताय असातत्ताय संवत्तति। तं किस्स हेतु? [B.429] बीजं हि, भिक्खवे, पापकं। एवमेव खो, भिक्खवे, मिच्छादिट्ठिकस्स पुरिसपुग्गलस्स मिच्छासङ्कप्पस्स मिच्छावाचस्स मिच्छाकम्मन्तस्स मिच्छाआजीवस्स मिच्छाविमुत्तिस्स यं चेव कायकम्मं यथादिट्ठि समत्तं समादिन्नं यं च वचीकम्मं... यं च मनोकम्मं यथादिट्ठि समत्तं समादिन्नं या च चेतना या च पत्थना यो च पणिधि ये च सङ्खारा, सब्बे ते धम्मा अनिट्ठाय अकन्ताय अमनापाय अहिताय दुक्खाय संवत्तन्ति। तं किस्स हेतु? दिट्ठि हिस्स, भिक्खवे, पापिका।

३. ''सम्मादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलस्स सम्मासङ्कप्पस्स सम्मावाचस्स

सम्यक्सङ्कल्प उद्भूत होता है, सम्यक्सङ्कल्प को सम्यग्वाणी ...पूर्ववत्... *(प्रतिलोमक्रम से विस्तार कर लें)* आराधना उद्भूत होती है, विराधना नहीं॥'' ●

४. बीजसूत्र : : **पापदृष्टि एवं सम्यग्दृष्टि**

१. ''भिक्षुओ! मिथ्यादृष्टिक पुरुषपुद्गल का, मिथ्यासङ्कल्प का, मिथ्यावाक् का, मिथ्याकर्मान्त का, मिथ्याआजीव का, मिथ्याव्यायाम का, मिथ्यास्मृति का, मिथ्यासमाधि का, मिथ्याज्ञानी का, मिथ्याविमुक्तिपुरुषपुद्गल का जो भी कायकर्म दृष्ट्यनुसार समाप्त या पूर्ण हुआ है; जो भी वाक्कर्म...जो भी मन:कर्म...जो भी चेतना...जो भी प्रार्थना...जो भी प्रणिधि (सङ्कल्प), जो भी संस्कार...वे सभी धर्म उसके लिये अनिष्ट, अप्रिय, प्रतिकूल, अहितकर एवं दु:खप्रद ही होते हैं। वह क्यों? वह इसलिये, भिक्षुओ! कि वह पापदृष्टि है।

२. जैसे, भिक्षुओ! कोई निम्ब या कोशातकी (लौकी या तुरई) का बीज, या कडुअे अलाबू (तुम्बी) का बीज आर्द्र पृथ्वी में डाल दिया जाय, वह जिस पृथ्वीरस को या जिस जल के रस को ग्रहण करेगा वह सब तिक्तता, कटुता या असातता (प्रतिकूलता) वाला ही होगा। वह क्यों? वह इसलिये कि उस का बीज ही पापमय (दु:खद) है; इसी प्रकार, भिक्षुओ! मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति पुरुष के जो भी कायकर्म ...पूर्ववत्... वह पापदृष्टि है।

सम्माकम्मन्तस्स सम्माआजीवस्स सम्मावायामस्स सम्मासतिस्स सम्मासमाधिस्स सम्मा-ञाणिस्स सम्माविमुत्तिस्स यं चेव कायकम्मं यथादिट्ठि समत्तं समादिन्नं यं च वचीकम्मं यथादिट्ठि समत्तं समादिन्नं यं च मनोकम्मं यथादिट्ठि समत्तं समादिन्नं या च चेतना या च पत्थना यो च पणिधि ये च सङ्खारा, सब्बे ते धम्मा इट्ठाय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय संवत्तन्ति। तं किस्स हेतु? दिट्ठि हिस्स, भिक्खवे, भद्दिका।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, उच्छुबीजं वा सालिबीजं वा मुद्दिकाबीजं वा अल्लाय पथविया निक्खित्तं यं चेव पथविरसं उपादियति यं च आपोरसं उपादियति, सब्बं तं [N.273] सातत्ताय मधुरत्ताय असेचनकत्ताय संवत्तति। तं किस्स हेतु? बीजं हि, भिक्खवे, भद्दकं। एवमेव खो, भिक्खवे, सम्मादिट्ठिकस्स ...पे०... सम्माविमुत्तिस्स यं चेव काय-[R.214] कम्मं यथादिट्ठि समत्तं समादिन्नं यं च वचीकम्मं... यं च मनोकम्मं यथादिट्ठि समत्तं समादिन्नं या च चेतना या च पत्थना यो च पणिधि ये च सङ्खारा, सब्बे ते धम्मा इट्ठाय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय संवत्तन्ति। तं किस्स हेतु? दिट्ठि हिस्स, भिक्खवे, भद्दिका" ति॥ ●

५. **विज्जासुत्तं** : १. "अविज्जा, भिक्खवे, पुब्बङ्गमा अकुसलानं धम्मानं समा-पत्तिया, अन्वदेव अहिरिकं अनोत्तप्पं। अविज्जागतस्स, भिक्खवे, अविद्दसुनो मिच्छादिट्ठि पहोति, मिच्छादिट्ठिकस्स मिच्छासङ्कप्पो पहोति, मिच्छासङ्कप्पस्स मिच्छावाचा पहोति, मिच्छावाचस्स मिच्छाकम्मन्तो पहोति, मिच्छाकम्मन्तस्स मिच्छाआजीवो पहोति, [B.430] मिच्छाआजीवस्स मिच्छावायामो पहोति, मिच्छावायामस्स मिच्छासति पहोति, मिच्छा-सतिस्स मिच्छासमाधि पहोति, मिच्छासमाधिस्स मिच्छाञाणं पहोति, मिच्छाञाणिस्स मिच्छाविमुत्ति पहोति।

२. "विज्जा, भिक्खवे, पुब्बङ्गमा कुसलानं धम्मानं समापत्तिया, अन्वदेव

---

३. "भिक्षुओ! सम्यग्दृष्टिक पुरुष को, सम्यक्सङ्कल्प...सम्यग्विमुक्तिक पुरुष को जो भी कायकर्म...जो भी संस्कार...वे सभी उसके लिये इष्ट, प्रिय, अनुकूल हितकर एवं सुखप्रद ही होंगे; क्योंकि उसकी दृष्टि भद्र (सम्यक्) है।

"जैसे, भिक्षुओ! इक्षु, शालि धान्य, मुद्रिका (द्राक्षा=अंगूर) का बीज आर्द्र पृथ्वी में डाल दिया जाय, वह जैसे पृथ्वीरस ...पूर्ववत्... उसका बीज भद्र है; इसी प्रकार, भिक्षुओ! जिस सम्यग्दृष्टि... सम्यग्विमुक्ति पुरुष का जो भी कायकर्म...वे सभी उसके लिये इष्ट, कान्त, अनुकूल, हितकर एवं सुखप्रद ही होंगे; क्योंकि उसकी दृष्टि भद्र (सम्यक्) है॥" ●

५. विद्यासूत्र : : अविद्या एवं विद्या के दश धर्म

१. "भिक्षुओ! अकुशल धर्मों की प्राप्ति में अविद्या पूर्वगामी रहती है, तथा निर्लज्जता एवं पाप से न डरना—ये दो धर्म भी उस (अविद्या) के अनुगामी (पीछे-पीछे लगे) रहते हैं। भिक्षुओ! ऐसे अविद्यासम्पन्न अविद्वान् को मिथ्यादृष्टि उद्भूत होती है, मिथ्यादृष्टि को मिथ्यासङ्कल्प ...पूर्ववत्... मिथ्याज्ञानी को मिथ्याविमुक्ति प्रादुर्भूत होती है। (क)

२. "भिक्षुओ! (इसके विपरीत) कुशलधर्मों की प्राप्ति में विद्या पूर्वगामी होती है। तथा

हिरोत्तप्पं। विज्जागतस्स, भिक्खवे, विद्दसुनो सम्मादिट्ठि पहोति, सम्मादिट्ठिकस्स सम्मासङ्कप्पो पहोति, सम्मासङ्कप्पस्स सम्मावाचा पहोति, सम्मावाचस्स सम्माकम्मन्तो पहोति, सम्माकम्मन्तस्स सम्माआजीवो पहोति, सम्माआजीवस्स सम्मावायामो पहोति, सम्मावायामस्स सम्मासति पहोति, सम्मासतिस्स सम्मासमाधि पहोति, सम्मासमाधिस्स सम्माञाणं पहोति, सम्माञाणिस्स सम्माविमुत्ति पहोती'' ति॥ ●

६. निज्जरसुत्तं : १. ''दसयिमानि, भिक्खवे, निज्जरवत्थूनि। कतमानि दस? सम्मादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, मिच्छादिट्ठि निज्जिण्णा होति; ये च मिच्छादिट्ठिपच्चया [R.215] अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निज्जिण्णा होन्ति; सम्मादिट्ठि- [N.274] पच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

२. ''सम्मासङ्कप्पस्स, भिक्खवे, मिच्छासङ्कप्पो निज्जिण्णो होति; ये च मिच्छा-सङ्कप्पपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निज्जिण्णा होन्ति; सम्मासङ्कप्पपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

३. ''सम्मावाचस्स, भिक्खवे, मिच्छावाचा निज्जिण्णा होति; ये च मिच्छावाचापच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निज्जिण्णा होन्ति; सम्मावाचापच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

४. ''सम्माकम्मन्तस्स, भिक्खवे, मिच्छाकम्मन्तो निज्जिण्णो होति; ये च मिच्छाकम्मन्तपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निज्जिण्णा होन्ति; सम्माकम्मन्तपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

५. ''सम्माआजीवस्स, भिक्खवे, मिच्छाआजीवो निज्जिण्णो होति; ये च [B.431]

लज्जा एवं पापभीरुता—ये दो धर्म उस (विद्या) के अनुगामी रहते हैं। भिक्षुओ! ऐसे विद्यासम्पन्न विद्वान् को सम्यग्दृष्टि उद्भूत होती है, सम्यग्दृष्टि को सम्यक्सङ्कल्प ...पूर्ववत्... सम्यग्ज्ञानी को सम्यग्विमुक्ति उद्भूत होती है॥'' ●

६. निर्जरसूत्र : : दश निर्जर वस्तुएँ

१. ''भिक्षुओ! ये दश निर्जर (निःशेषेण जीर्ण=ह्रासप्राप्त) वस्तुएँ होती हैं। कौन सी दश? भिक्षुओ! सम्यग्दृष्टि पुरुष की मिथ्यादृष्टि निर्जीर्ण हो जाती है। तथा मिथ्यादृष्टि से उद्भूत पापमय धर्म भी निर्जीर्ण हो जाते हैं। साथ ही, सम्यग्दृष्टि के कारण, अनेक कुशल धर्म भी उद्भूत होकर उसकी साधना में सहायक होने लगते हैं। (१)

२. ''भिक्षुओ! सम्यक्सङ्कल्प वाले पुरुष का मिथ्यासङ्कल्प निर्जीर्ण हो जाता है तथा मिथ्यासङ्कल्प से उद्भूत पापमय धर्म निर्जीर्ण हो जाते हैं। साथ ही सम्यक्सङ्कल्प के कारण अनेक कुशल धर्म भी उसकी साधना में सहायक होने लगते हैं। (२)

३. ''भिक्षुओ! सम्यग्वाक् पुरुष की मिथ्यावाक् निर्जीण हो जाती हैं। ...पूर्ववत्...। (३)

४. ''सम्यक्कर्मान्त पुरुष का मिथ्याकर्म निर्जीर्ण हो जाता है। ...पूर्ववत्...। (४)

५. ''सम्यगाजीवयुक्त पुरुष का मिथ्याआजीव निर्जीर्ण हो जाता है। ...पूर्ववत्...। (५)

मिच्छाआजीवपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निज्जिण्णा होन्ति; सम्माआजीवपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

६. "सम्मावायामस्स, भिक्खवे, मिच्छावायामो निज्जिण्णो होति; ये च मिच्छावायामपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निज्जिण्णा होन्ति; सम्मावायामपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

७. "सम्मासतिस्स, भिक्खवे, मिच्छासति निज्जिण्णो होति; ये च मिच्छासतिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निज्जिण्णा होन्ति; सम्मासतिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

८. "सम्मासमाधिस्स, भिक्खवे, मिच्छासमाधि निज्जिण्णा होति; ये च मिच्छासमाधिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निज्जिण्णा होन्ति; [R.216] सम्मासमाधिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

[N.275] ९. "सम्माञाणिस्स, भिक्खवे, मिच्छाञाणं निज्जिण्णं होति; ये च मिच्छाञाणपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निज्जिण्णा होन्ति; सम्माञाणपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

१०. "सम्माविमुत्तिस्स, भिक्खवे, मिच्छाविमुत्ति निज्जिण्णा होति; ये च मिच्छाविमुत्तिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निज्जिण्णा होन्ति; सम्माविमुत्तिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति। इमानि खो, भिक्खवे, दस निज्जरवत्थूनी" ति॥ ●

७. धोवनसुत्तं : १. "अत्थि, भिक्खवे, दक्खिणेसु जनपदेसु धोवनं नाम। तत्थ होति अन्नं पि पानं पि खज्जं पि भोज्जं पि लेय्यं पि पेय्यं पि नच्चं पि गीतं पि वादितं पि। अत्थेतं, भिक्खवे, धोवनं; 'नेत्तं नत्थी' ति वदामि। तं च खो एतं, भिक्खवे, धोवनं हीनं गम्मं

---

६. "सम्यग्व्यायामयुक्त पुरुष का मिथ्याव्यायाम निर्जीर्ण हो जाता है। ...पूर्ववत्...। (६)

७. "सम्यक्स्मृतियुक्त पुरुष की मिथ्यास्मृति निर्जीर्ण हो जाती है। ...पूर्ववत्...। (७)

८. "सम्यक्समाधियुक्त पुरुष की मिथ्यासमाधि निर्जीर्ण हो जाती है। ...पूर्ववत्...। (८)

९. "भिक्षुओ! सम्यग्ज्ञानी पुरुष का मिथ्याज्ञान निर्जीर्ण हो जाता है। ...पूर्ववत्...। तथा मिथ्याज्ञान के कारण उत्पन्न हुए धर्म भी निर्जीर्ण हो जाते हैं। साथ ही सम्यज्ञान के कारण उत्पन्न हुए अनेक कुशलधर्म उसकी साधनापूर्ति में सहायक होने लगते हैं। (९)

१०. "भिक्षुओ! सम्यग्विमुक्त पुरुष की मिथ्याविमुक्ति निर्जीर्ण हो जाती है। तथा मिथ्याविमुक्ति के कारण उद्भूत हुए धर्म भी निर्जीर्ण हो जाते हैं। साथ ही सम्यग्विमुक्ति के कारण उत्पन्न धर्म उसकी साधना की पूर्ति में सहायक होने लगते हैं॥" (१०) ●

७. धोवनसूत्र : : दशविध आर्य धोवन

१. "भिक्षुओ! दक्षिणस्थ जनपदों में एक स्नानपर्व मनाया जाता है। उस दिन विशेष खाद्य, भोज्य, लेह्य, पेय आदि अन्नपान और नृत्य, गीत एवं वादित्र (चतुर्विध वाद्य) भी होता है।

पोथुज्जनिकं अनरियं अनत्थसंहितं न निब्बिदाय न विरागाय च निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तति। [B.432]

२. "अहं च खो, भिक्खवे, अरियं धोवनं देसेस्सामि, यं धोवनं एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति, यं धोवनं आगम्म जातिधम्मा सत्ता जातिया परिमुच्चन्ति, जराधम्मा सत्ता जराय परिमुच्चन्ति, मरणधम्मा सत्ता मरणेन परिमुच्चन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासधम्मा सत्ता सोकपरिदेवदुक्ख-दोमनस्सुपायासेहि परिमुच्चन्ति। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

३. "कतमं च तं, भिक्खवे, अरियं धोवनं, यं धोवनं एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति, यं धोवनं आगम्म [R.217] जातिधम्मा सत्ता जातिया परिमुच्चन्ति, जराधम्मा सत्ता जराय परिमुच्चन्ति, मरणधम्मा सत्ता मरणेन परिमुच्चन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासधम्मा सत्ता सोकपरिदेव- [N.276] दुक्खदोमनस्सुपायासेहि परिमुच्चन्ति?

४. "सम्मादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, मिच्छादिट्ठि निद्धोता होति; ये च मिच्छा-दिट्ठिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निद्धोता होन्ति; सम्मादिट्ठिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

५. "सम्मासङ्कप्पस्स, भिक्खवे, मिच्छासङ्कप्पो निद्धोतो होति ...पे०... सम्मा-

---

भिक्षुओ! अवश्य ही यह स्नानपर्व है, 'यह नहीं है'—ऐसा मैं नहीं कहता। परन्तु, भिक्षुओ! यह धोवन (स्नानपर्व) वस्तुतः हीन, ग्राम्य, मूर्खों के योग्य, अनार्य, अनर्थयुक्त ही होता है; क्योंकि यह पर्व न निर्विदा (संसार के प्रति अरुचि), न वैराग्य, न निरोध, न उपशम, न अभिज्ञा, न सम्बोध तथा न निर्वाण के लिये ही कुछ उपयोगी (सहायक) है।

२. "भिक्षुओ! मैं तुमको एक श्रेष्ठ 'धोवन' बताऊँगा, जो धोवन एकान्ततः निर्विदा, वैराग्य ...पूर्ववत्... निर्वाण के लिये उपयोगी हो सकता है। जिसके आश्रयण से जातिमुग्ध प्राणी जाति से, जरामुग्ध प्राणी जरा से, मरणमुग्ध प्राणी मरण से मुक्त हो सकते हैं; या शोक, परिदेव, दुःख, दौर्मनस्ययुक्त प्राणी इनसे मुक्त हो सकते हैं। उसको मुझसे सुनो। मैं बता रहा हूँ।"

"आपकी जैसी आज्ञा है" कहकर भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। भगवान् ने यह देशना की—

३. "भिक्षुओ! यह श्रेष्ठ धोवन क्या होता है, जो एकान्ततः निर्विदा ...पूर्ववत्... दौर्मनस्य-युक्त प्राणी इनसे मुक्त हो सकते हैं?

४. "भिक्षुओ! सम्यग्दृष्टि वाले पुरुष की मिथ्यादृष्टि निःशेषेण (पूर्णतः) धुल जाती है। जिससे, मिथ्यादृष्टि के कारण उद्भूत हुए अनेक पापमय धर्म भी धुल जाते हैं। साथ ही सम्यग्दृष्टि के कारण उद्भूत अनेक कुशल धर्म भी उसकी साधना की पूर्ति में सहायक होते हैं।

५. "भिक्षुओ! सम्यक्सङ्कल्प वाले पुरुष के मिथ्यासङ्कल्प ...पूर्ववत्... मिथ्याज्ञान निःशेषेण

वाचस्स, भिक्खवे, मिच्छावाचा निद्धोता होति... सम्माकम्मन्तस्स, भिक्खवे, मिच्छा-कम्मन्तो निद्धोतो होति... सम्माआजीवस्स, भिक्खवे, मिच्छाआजीवो निद्धोतो होति... सम्मावायामस्स, भिक्खवे, मिच्छावायामो निद्धोतो होति... सम्मासतिस्स, भिक्खवे, मिच्छासति निद्धोता होति... सम्मासमाधिस्स, भिक्खवे, मिच्छासमाधि निद्धोतो होति... सम्माञाणिस्स, भिक्खवे, मिच्छाञाणं निद्धोतं होति ...पे०... ।

[B.433] ६. ''सम्माविमुत्तिस्स, भिक्खवे, मिच्छाविमुत्ति निद्धोता होति; ये च मिच्छा-विमुत्तिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निद्धोता होन्ति; सम्माविमुत्तिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति। इदं खो तं, भिक्खवे, अरियं धोवनं एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति, यं धोवनं आगम्म जातिधम्मा सत्ता जातिया परिमुच्चन्ति, जराधम्मा सत्ता जराय परिमुच्चन्ति, मरणधम्मा सत्ता मरणेन परिमुच्चन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सु-पायासधम्मा सत्ता सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासेहि परिमुच्चन्ती'' ति॥ ●

[R.218] **८. तिकिच्छकसुत्तं :** १. ''तिकिच्छका, भिक्खवे, विरेचनं देन्ति पित्तसमुट्ठानानं पि आबाधानं पटिघाताय, सेम्हसमुट्ठानानं पि आबाधानं पटिघाताय, वातसमुट्ठानानं पि आबाधानं पटिघाताय। अत्थेतं, भिक्खवे, विरेचनं; 'नेतं नत्थी' ति वदामि। तं च खो एतं, भिक्खवे, विरेचनं सम्पज्जति पि विपज्जति पि।

२. ''अहं च खो, भिक्खवे, अरियं विरेचनं देसेस्सामि, यं विरेचनं सम्पज्जतियेव [N.277] नो विपज्जति, यं विरेचनं आगम्म जातिधम्मा सत्ता जातिया परिमुच्चन्ति, जराधम्मा

धुल जाते हैं। जिससे मिथ्याज्ञान के उद्भूत अनेक पापमय धर्म भी धुल जाते हैं। साथ ही, सम्यग्ज्ञान के कारण उद्भूत हुए धर्म उसकी साधनापूर्ति में अनेक प्रकार से सहायक होते हैं।

६. ''भिक्षुओ! सम्यग्विमुक्त भिक्षु की मिथ्याविमुक्ति पूर्णतः धुल जाती है। और उस मिथ्याविमुक्ति के कारण उद्भूत हुए अनेक पापमय धर्म भी निःशेषतः धुल जाते हैं। तथा सम्यग्विमुक्ति के कारण उद्भूत धर्म उसकी साधना में अनेक प्रकार से सहायक होते हैं।

''भिक्षुओ! यह **आर्य धोवन** एकान्त निर्विदा, विराग, निरोध, उपशम, अभिज्ञा, सम्बोध एवं निर्वाण में सहायक होता है। जिसके आश्रयण से जातिमुग्ध प्राणी जाति से ...पूर्ववत्... दौर्मनस्ययुक्त प्राणी दौर्मनस्य से छुटकारा पा जाते हैं॥'' ●

८. चिकित्सकसूत्र : : आर्यविरेचन का व्याख्यान

१. ''भिक्षुओ! वैद्य (चिकित्सक) जन पैत्तिक (पित्तजन्य) रोगों के शमनहेतु, श्लैष्मिक (कफजन्य) रोगों के शमनहेतु, वातिक (वातजन्य) रोगों के शमनहेतु विविध विरेचन (उदरशुद्धि कारक औषध) देते रहते हैं। भिक्षुओ! यह विरेचन भी सहायक होता है; नहीं होता—ऐसा मैं नहीं कहता; परन्तु यह उपयोगी भी हो सकता है; नहीं भी हो सकता।

२. ''आज मैं तुम लोगों को इससे भी विशिष्ट एक आध्यात्मिक विरेचन बताता हूँ, जो विरेचन (साधना) में सहायक ही होगा, प्रतिकूल नहीं। जिस विरेचन के आश्रयण से जातिधर्ममुग्ध

सत्ता जराय परिमुच्चन्ति, मरणधम्मा सत्ता मरणेन परिमुच्चन्ति, सोकपरिदेवदुक्ख-दोमनस्सुपायासधम्मा सत्ता सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासेहि परिमुच्चन्ति। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

३. ''कतमं च तं, भिक्खवे, अरियं विरेचनं, यं विरेचनं सम्पज्जतियेव नो विपज्जति, यं विरेचनं आगम्म जातिधम्मा सत्ता जातिया परिमुच्चन्ति, जराधम्मा सत्ता जराय परिमुच्चन्ति, मरणधम्मा सत्ता मरणेन परिमुच्चन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासधम्मा सत्ता सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासेहि परिमुच्चन्ति ?

४. ''सम्मादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, मिच्छादिट्ठि विरित्ता होति; ये च मिच्छा-दिट्ठिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स विरित्ता होन्ति; सम्मादिट्ठिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

५. ''सम्मासङ्कप्पस्स, भिक्खवे, मिच्छासङ्कप्पो विरित्तो होति ...पे०... [B.434] सम्मावाचस्स, भिक्खवे, मिच्छावाचा विरित्ता होति... सम्माकम्मन्तस्स, भिक्खवे, मिच्छाकम्मन्तो विरित्तो होति... सम्माआजीवस्स, भिक्खवे, मिच्छाआजीवो विरित्तो होति... सम्मावायामस्स, भिक्खवे, मिच्छावायामो विरित्तो होति... सम्मासतिस्स, भिक्खवे, मिच्छासति विरित्ता होति... सम्मासमाधिस्स, भिक्खवे, मिच्छासमाधि विरित्तो [R.219] होति... सम्माञाणिस्स, भिक्खवे, मिच्छाञाणं विरित्तं होति ...पे०...।

६. ''सम्माविमुत्तिस्स, भिक्खवे, मिच्छाविमुत्ति विरित्ता होति; ये च मिच्छा-विमुत्तिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स विरित्ता होन्ति; सम्माविमुत्तिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति। इदं खो तं, भिक्खवे, अरियं विरेचनं यं विरेचनं सम्पज्जतियेव नो विपज्जति, यं विरेचनं आगम्म जातिधम्मा सत्ता जातिया परिमुच्चन्ति ...पे०... सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासेहि परिमुच्चन्ती'' ति॥ ●

प्राणी जातिधर्म से ...पूर्ववत्... दौर्मनस्ययुक्त प्राणी दौर्मनस्य से छुटकारा पा सकते हैं। उसको सुनो। मैं बताता हूँ।'' ...पूर्ववत्...। भगवान् ने कहा—

३. ''भिक्षुओ! यह आर्य विरेचन क्या होता है, जो सदा उपयोगी ही होता है, अनुपयोगी नहीं; जिसके आश्रयण से ...पूर्ववत्... छुटकारा पा जाते हैं ?

४. ''भिक्षुओ! सम्यग्दृष्टि पुरुष की मिथ्यादृष्टि विरिक्त हो (मन से निकल) जाती है ...पूर्ववत्...।

५. ''भिक्षुओ! सम्यक्सङ्कल्प पुरुष का मिथ्यासङ्कल्प विरिक्त हो (मन से निकल) जाता है ...पूर्ववत्...। *(सम्यग्वाक् से सम्यग्ज्ञानी तक विस्तार कर लें।)*

६. भिक्षुओ! सम्यग्विमुक्त पुरुष की मिथ्याविमुक्ति विरिक्त हो जाती है। अत: मिथ्याविमुक्ति के कारण उद्भूत हुए उसके अनेक पापमय धर्म भी विरिक्त हो जाते हैं ...पूर्ववत्...। शोक, परिदेव, दुःख, दौर्मनस्य से छुटकारा पा जाते हैं।'' ●

[N.278] **९. वमनसुत्तं :** १. "तिकिच्छका, भिक्खवे, वमनं देन्ति पित्तसमुट्ठानानं पि आबाधानं पटिघाताय, सेम्हसमुट्ठानानं पि आबाधानं पटिघाताय, वातसमुट्ठानानं पि आबाधानं पटिघाताय। अत्थेतं, भिक्खवे, वमनं; 'नेतं नत्थी' ति वदामि। तं च खो एतं, भिक्खवे, वमनं सम्पज्जति पि विपज्जति पि।

२. "अहं च खो, भिक्खवे, अरियं वमनं देसेस्सामि, यं वमनं सम्पज्जतियेव नो विपज्जति, यं वमनं आगम्म जातिधम्मा सत्ता जातिया परिमुच्चन्ति, जराधम्मा सत्ता जराय परिमुच्चन्ति, मरणधम्मा सत्ता मरणेन परिमुच्चन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासधम्मा सत्ता सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासेहि परिमुच्चन्ति। तं सुणाथ ...पे०... एतदवोच—

३. "कतमं च तं, भिक्खवे, अरियं वमनं, यं वमनं सम्पज्जतियेव नो विपज्जति, यं [R.220] वमनं आगम्म जातिधम्मा सत्ता जातिया परिमुच्चन्ति ...पे०... सोकपरिदेवदुक्ख-दोमनस्सुपायासधम्मा सत्ता सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासेहि परिमुच्चन्ति?

[B.435] ४. "सम्मादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, मिच्छादिट्ठि वन्ता होति; ये च मिच्छादिट्ठिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स वन्ता होन्ति; सम्मादिट्ठिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

५. "सम्मासङ्कप्पस्स, भिक्खवे, मिच्छासङ्कप्पो वन्तो होति ...पे०... सम्मा-वाचस्स, भिक्खवे, मिच्छावाचा वन्ता होति... सम्माकम्मन्तस्स, भिक्खवे, मिच्छा-कम्मन्तो वन्तो होति... सम्माआजीवस्स भिक्खवे, मिच्छाआजीवो वन्तो होति... सम्मा-वायामस्स, भिक्खवे, मिच्छावायामो वन्तो होति... सम्मासतिस्स, भिक्खवे, मिच्छासति वन्ता होति... सम्मासमाधिस्स, भिक्खवे, मिच्छासमाधि वन्तो होति... सम्माञाणिस्स, भिक्खवे, मिच्छाञाणं वन्तं होति ...पे०...।

६. "सम्माविमुत्तिस्स, भिक्खवे, मिच्छाविमुत्ति वन्ता होति; ये च मिच्छा-विमुत्तिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स वन्ता होन्ति; सम्मा-[N.279] विमुत्तिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति। इदं खो तं, भिक्खवे, अरियं वमनं यं वमनं सम्पज्जतियेव नो विपज्जति, यं वमनं आगम्म जातिधम्मा सत्ता जातिया परिमुच्चन्ति ...पे०... सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासेहि परिमुच्चन्ती" ति॥

१०. निद्धमनीयसुत्तं : १. "दसयिमे, भिक्खवे, निद्धमनीया धम्मा। कतमे दस?

---

९. वमनसूत्र : : दशविध वमन का उपदेश

"भिक्षुओ! वैद्यजन वात, पित्त, कफ से उद्भूत रोगों के शमन के लिये वमन (उल्टी कराना) का उपदेश कहते हैं। ...पूर्वसूत्रवत्... छुटकारा पा जाते हैं।" ●

[पूर्वसूत्र के समान ही 'विरेचन' के स्थान पर 'वमन' शब्द लगाकर विस्तार कर लें।]

१०. निर्धमनीयसूत्र : : दश निर्धमनीय धर्म

१. "भिक्षुओ! ये दश निर्धमनीय (बाहर निकाल देने योग्य) धर्म होते हैं। ...पूर्ववत्... ॥"●

सम्मादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, मिच्छादिट्ठि निद्धन्ता होति; ये च मिच्छादिट्ठिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निद्धन्ता होन्ति; सम्मादिट्ठिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति। [R.221]

२. ''सम्मासङ्कप्पस्स, भिक्खवे, मिच्छासङ्कप्पो निद्धन्तो होति ...पे०... सम्मावाचस्स भिक्खवे, मिच्छावाचा निद्धन्ता होति... सम्माकम्मन्तस्स, भिक्खवे, मिच्छाकम्मन्तो निद्धन्तो होति... सम्माआजीवस्स, भिक्खवे, मिच्छाआजीवो निद्धन्तो होति... सम्मावायामस्स, भिक्खवे, मिच्छावायामो निद्धन्तो होति... सम्मासतिस्स, भिक्खवे, मिच्छासति निद्धन्ता होति... सम्मासमाधिस्स, भिक्खवे, मिच्छासमाधि निद्धन्तो होति... सम्माञाणिस्स, भिक्खवे, मिच्छाञाणं निद्धन्तं होति ...।

३. ''सम्माविमुत्तिस्स, भिक्खवे, मिच्छाविमुत्ति निद्धन्ता होति; ये च [B.436] मिच्छाविमुत्तिपच्चया अनेके पापका अकुला धम्मा सम्भवन्ति ते चस्स निद्धन्ता होन्ति; सम्माविमुत्तिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति। इमे खो, भिक्खवे, दस निद्धमनीया धम्मा'' ति॥ ●

११. पठमअसेखसुत्तं : १. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—

२. '''असेखो असेखो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, भिक्खु असेखो होती'' ति?

३. ''इध, भिक्खु, भिक्खु असेखाय सम्मादिट्ठिया समन्नागतो होति, [N.280] असेखेन सम्मासङ्कप्पेन समन्नागतो होति, असेखाय सम्मावाचाय समन्नागतो होति, असखेन सम्माकम्मन्तेन समन्नागतो होति, असेखेन सम्माआजीवेन समन्नागतो होति, असेखेन सम्मावायामेन समन्नागतो होति, असेखाय सम्मासतिया समन्नागतो होति, असेखेन सम्मासमाधिना समन्नागतो होति, असेखेन सम्माञाणेन समन्नागतो होति, असेखाय सम्माविमुत्तिया समन्नागतो होति। एवं खो, भिक्खु, भिक्खु असेखो होती'' ति॥ ●

[पूर्वसूत्र के समान ही 'विरेचन' के स्थान पर 'निर्धमन' शब्द लगाकर विस्तार कर लें।]

११. प्रथम अशैक्ष्यसूत्र : : अशैक्ष्य भिक्षु का वर्णन

१. तब कोई भिक्षु जहाँ भगवान् विराजमान थे वहाँ आया। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उस भिक्षु ने भगवान् से यह जिज्ञासा प्रकट की—

२. ''भन्ते! 'अशैक्ष्य', 'अशैक्ष्य'—ऐसा धर्मप्रवचनों में बार बार कहा जाता है। कैसे कोई भिक्षु 'अशैक्ष्य' कहलाता है?''

३. ''भिक्षु! यहाँ कोई भिक्षु अशैक्ष्य (अर्हत्-योग्य) सम्यग्दृष्टि से युक्त होता है, अशैक्ष्य सम्यक्सङ्कल्प से...सम्यग्वाक् से...सम्यक्कर्मान्त से...सम्यगाजीव से...सम्यग्व्यायाम

[R.222] **१२. दुतियअसेखसुत्तं :** १. ''दसयिमे, भिक्खवे, असेखिया धम्मा। कतमे दस? असेखा सम्मादिट्ठि, असेखो सम्मासङ्कप्पो, असेखा सम्मावाचा, असेखो सम्माकम्मन्तो, असेखो सम्माआजीवो, असेखो सम्मावायामो, असेखा सम्मासति, असेखो सम्मासमाधि, असेखं सम्माञाणं, असेखा सम्माविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, दस असेखिया धम्मा'' ति॥ ●

समणसञ्ञावग्गो एकादसमो॥

तस्सुद्दानं

सञ्ञा बोज्झङ्गा मिच्छत्तं, बीजं विज्जाय निज्जरं।
धोवनं तिकिच्छा वमनं निद्धमनं द्वे असेखा ति॥ ●

१२. पच्चोरोहणिवग्गो

[B.437] **१. पठमअधम्मसुत्तं :** १. ''अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो अनत्थो च; धम्मो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा अनत्थं च, धम्मं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं।

से...सम्यक्स्मृति से...सम्यक्समाधि से...सम्यग्ज्ञान से...सम्यग्विमुक्ति से युक्त होता है। ऐसा भिक्षु, भिक्षु! 'अशैक्ष्य' कहलाता है।'' ●

१२. द्वितीय अशैक्ष्य सूत्र : : दश अशैक्ष्य धर्म

१. ''भिक्षुओ! ये दश अशैक्ष्य धर्म कहलाते हैं। कौन से दश? (१) अशैक्ष्य सम्यग्दृष्टि, (२) अशैक्ष्य सम्यक्सङ्कल्प, (३) अशैक्ष्य सम्यग्वाक्, (४) अशैक्ष्य सम्यक्कर्मान्त, (५) अशैक्ष्य सम्यगाजीव, (६) अशैक्ष्य सम्यग्व्यायाम, (७) अशैक्ष्य सम्यक्स्मृति, (८) अशैक्ष्य सम्यक्समाधि, (९) अशैक्ष्य सम्यग्ज्ञान एवं (१०) अशैक्ष्य सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! ये दश अशैक्ष्य धर्म होते हैं॥'' **श्रमणसंज्ञावर्ग एकादश सम्पन्न॥** ●

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. श्रमणसंज्ञासूत्र, २. बोध्यङ्गसूत्र, ३. मिथ्यात्वसूत्र, ४. बीजसूत्र, ५. विद्यासूत्र, ६. निर्जरसूत्र, ७. धोवनसूत्र, ८. चिकित्सकसूत्र, ९. वमनसूत्र, १०. निर्धमनीयसूत्र, ११. प्रथम अशैक्ष्यसूत्र, १२. द्वितीय अशैक्ष्यसूत्र॥ ●

१२. प्रत्यवरोहिणीवर्ग

१. प्रथम अधर्मसूत्र : : अधर्म, धर्म एवं अनर्थ, अर्थ का ज्ञान

१. ''भिक्षुओ! अधर्म एवं धर्म का ज्ञान तथा अनर्थ एवं अर्थ का ज्ञान रखना चाहिये। यह ज्ञान रखकर धर्म एवं अर्थ के अनुसार आचरण करना चाहिये।

२. ''कतमो च, भिक्खवे, अधम्मो च अनत्थो च? मिच्छादिट्ठि मिच्छासङ्कप्पो मिच्छावाचा, मिच्छाकम्मन्तो, मिच्छाआजीवो, मिच्छावायामो, मिच्छासति, [N.281] मिच्छासमाधि, मिच्छाञाणं, मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अधम्मो च अनत्थो च। [R.223]

३. ''कतमो च, भिक्खवे, धम्मो च अत्थो च? सम्मादिट्ठि, सम्मासङ्कप्पो, सम्मा-वाचा, सम्माकम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मावायामो, सम्मासति, सम्मासमाधि, सम्माञाणं, सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, धम्मो च अत्थो च।

४. '''अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो अनत्थो च; धम्मो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा अनत्थं च, धम्मं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं'' ति॥ ●

२. दुतियअधम्मसुत्तं : १. ''अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च; अनत्थो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं। कतमो च, भिक्खवे, अधम्मो, कतमो च धम्मो, कतमो च अनत्थो, कतमो च अत्थो?

२. ''मिच्छादिट्ठि, भिक्खवे, अधम्मो; सम्मादिट्ठि धम्मो; ये च मिच्छादिट्ठिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्मादिट्ठिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

३. ''मिच्छासङ्कप्पो, भिक्खवे, अधम्मो; सम्मासङ्कप्पो धम्मो; ये च [B.438]

---

२. ''यहाँ, भिक्षुओ! कौन 'अधर्म' कहलाता है तथा कौन अनर्थ? मिथ्यादृष्टि, मिथ्यासङ्कल्प, मिथ्यावाक्, मिथ्याकर्मान्त, मिथ्याआजीव, मिथ्यास्मृति, मिथ्यासमाधि, मिथ्याज्ञान एव मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! ये दश धर्म—'अधर्म' एवं 'अनर्थ' कहलाते हैं।

३. ''भिक्षुओ! और कौन 'धर्म' एवं कौन 'अर्थ' कहलाता है? सम्यग्दृष्टि, सम्यक्सङ्कल्प, सम्यग्वाक्, सम्यक्कर्मान्त, सम्यगाजीव, सम्यक्स्मृति, सम्यक्समाधि, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! ये दश धर्म—'धर्म' एवं 'अर्थ' कहलाते हैं।

४. ''भिक्षुओ! 'अधर्म एवं धर्म का तथा अनर्थ एवं अर्थ का ज्ञान रखना चाहिये। इन सबका ज्ञान रखकर धर्म के अनुसार, अर्थ के अनुसार आचरण करना चाहिये—यह जो कहा था, इसी अभिप्राय से कहा था॥'' ●

२. द्वितीय अधर्मसूत्र : : अधर्म एव धर्म का ज्ञान

१. ''भिक्षुओ! अधर्म को भी जानना चाहिये, धर्म को भी जानना चाहिये; अनर्थ को भी जानना चाहिये, अर्थ को भी जानना चाहिये। अधर्म को जानकर, धर्म को जानकर; अनर्थ को जानकर, और अर्थ को जानकर, धर्मानुसार एवं अर्थानुसार आचरण करना चाहिये। भिक्षुओ! यहाँ कौन 'अधर्म' है और कौन 'धर्म'? कौन 'अनर्थ' है और कौन 'अथ'?

२. ''भिक्षुओ! यहाँ मिथ्यादृष्टि अधर्म है और सम्यग्दृष्टि धर्म। मिथ्यादृष्टि के कारण अनेक

मिच्छासङ्कप्पपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्मासङ्कप्पपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

४. "मिच्छावाचा, भिक्खवे, अधम्मो; सम्मावाचा धम्मो; ये च मिच्छावाचा- [R.224] पच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्मावाचापच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

[N.282] ५. "मिच्छाकम्मन्तो, भिक्खवे, अधम्मो; सम्माकम्मन्तो धम्मो; ये च मिच्छाकम्मन्तपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्माकम्मन्तपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

६. "मिच्छाआजीवो, भिक्खवे, अधम्मो; सम्माआजीवो धम्मो; ये च मिच्छाआजीवपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्माआजीवपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

७. "मिच्छावायामो, भिक्खवे, अधम्मो; सम्मावायामो धम्मो; ये च मिच्छावायामपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्मावायामपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

८. "मिच्छासति, भिक्खवे, अधम्मो; सम्मासति धम्मो: ये च मिच्छासतिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्मासतिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

९. "मिच्छासमाधि, भिक्खवे, अधम्मो; सम्मासमाधि धम्मो; ये च मिच्छा-

---

पापमय अकुशल धर्म उत्पन्न होते हैं—यह 'अनर्थ' है, और सम्यग्दृष्टि के कारण अनेक कुशल धर्म साधना-पूर्ति में सहायक होते हैं—यह 'अर्थ' है। (१)

३. "मिथ्यासङ्कल्प, भिक्षुओ! 'अधर्म' है तथा सम्यक्सङ्कल्प 'धर्म'। मिथ्यासङ्कल्प के कारण अनेक पापमय अकुशल धर्म उत्पन्न होते हैं—यह 'अनर्थ' है तथा सम्यक्सङ्कल्प के कारण उद्भूत कुशलधर्म साधनपूर्ति में सहायक होते हैं—यह हुआ 'अर्थ'। (२)

४. "मिथ्यावाक्, भिक्षुओ! 'अधर्म' है, तथा सम्यग्वाक् 'धर्म'। मिथ्यावाक् के कारण ...पूर्ववत्... साधनापूर्ति में सहायक होते हैं—यह हुआ 'अर्थ'। (३)

५. "मिथ्याकर्मान्त, भिक्षुओ! 'अधर्म' है, तथा सम्यक्कर्मान्त 'धर्म'। मिथ्याकर्मान्त के कारण ...पूर्ववत्... साधनापूर्ति में सहायक होते हैं'—यह हुआ 'अर्थ'। (४)

६. "मिथ्याआजीव, भिक्षुओ! 'अधर्म' है, तथा सम्यगाजीव 'धर्म'। मिथ्याआजीव के कारण ...पूर्ववत्... साधनापूर्ति में सहायक होते हैं—यह हुआ 'अर्थ' (५)

७. "मिथ्याव्यायाम, भिक्षुओ! 'अधर्म' है, तथा सम्यग्व्यायाम 'धर्म'। मिथ्याव्यायाम के कारण ...पूर्ववत्... साधनापूर्ति में सहायक होते हैं—यह हुआ 'अर्थ'। (६)

८. "मिथ्यास्मृति, भिक्षुओ! 'अधर्म' है, तथा सम्यक्स्मृति 'धर्म'। मिथ्यास्मृति के कारण ...पूर्ववत्..साधनापूर्ति में सहायक होते हैं—यह हुआ 'अर्थ'। (७)

समाधिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्मासमाधिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

१०. ''मिच्छाञाणं, भिक्खवे, अधम्मो; सम्माञाणं धम्मो; ये च मिच्छाञाणपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्मा- [B.439] ञाणपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

११. ''मिच्छाविमुत्ति, भिक्खवे, अधम्मो; सम्माविमुत्ति धम्मो; ये च मिच्छाविमुत्तिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्माविमुत्तिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

१२. '''अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च; अनत्थो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं'' ति॥ ●

३. ततियअधम्मसुत्तं : १. ''अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च; अनत्थो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं'' ति। इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो [R.225] उट्ठायासना विहारं पाविसि।

२. अथ खो तेसं भिक्खूनं अचिरपक्कन्तस्स भगवतो एतदहोसि—''इदं खो नो, आवुसो, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं

---

९. ''मिथ्यासमाधि, भिक्षुओ! 'अधर्म' है, तथा सम्यक्समाधि 'धर्म'। मिथ्यासमाधि के कारण ...पूर्ववत्... साधनापूर्ति में सहायक होते हैं—यह हुआ 'अर्थ'। (८)

१०. ''मिथ्याज्ञान, भिक्षुओ! 'अधर्म' है, तथा सम्यग्ज्ञान 'धर्म'। मिथ्याज्ञान के कारण ...पूर्ववत्... साधनापूर्ति में सहायक होते हैं—यह हुआ 'अर्थ'। (९)

११. ''मिथ्याविमुक्ति, भिक्षुओ! 'अधर्म' है, तथा सम्यग्विमुक्ति 'धर्म'। मिथ्याविमुक्ति के कारण ...पूर्ववत्... साधनापूर्ति में सहायक होते हैं—यह हुआ 'अर्थ'।

१२. ''भिक्षुओ! 'अधर्म को भी जानना चाहिये, धर्म को भी; अनर्थ को भी जानना चाहिये, अर्थ को भी। इस प्रकार अधर्म एवं धर्म को तथा अनर्थ एवं अर्थ को जानकर धर्म एवं अर्थ के अनुसार आचरण करना चाहिये'—यह जो कहा था, वह इसी अभिप्राय से कहा था।'' ●

३. तृतीय अधर्मसूत्र : : दश अधर्मों धर्मों का तथा अनर्थों अर्थों का ज्ञान

१. ''भिक्षुओ! 'अधर्म' को जानना चाहिये, 'धर्म' को भी; 'अनर्थ' को भी जानना चाहिये 'अर्थ' को भी। 'अधर्म', 'धर्म' को जानकर; 'अनर्थ', 'अर्थ को जानकर धर्मानुसार एवं अर्थानुसार आचरण करना चाहिये' ''—यह भगवान् ने उपदेश किया। यह उपदेश कर भगवान् आसने से उठकर अपनी साधनाकुटी में चले गये।

२. तब भगवान् के वहाँ से पधारने के कुछ देर बाद, वहाँ बैठे भिक्षुओं को यह विचार हुआ—''आयुष्मानो! भगवान् यह सब संक्षेप में ही कहकर, विस्तार से इसका अर्थ विभाजन न

पविट्ठो—'अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च; अनत्थो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं' ति। को नु खो इमस्स भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजेय्या'' ति?

३. अथ खो तेसं भिक्खूनं एतदहोसि—''अयं खो आयस्मा आनन्दो सत्थु चेव संवण्णितो सम्भावितो च विञ्ञूनं सब्रह्मचारीनं। पहोति चायस्मा आनन्दो इमस्स भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजितुं। यन्नून मयं येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमेय्याम; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं एतमत्थं पटिपुच्छेय्याम। यथा नो आयस्मा आनन्दो ब्याकरिस्सति तथा नं धारेस्सामा'' ति।

[B.440] ४. अथ खो ते भिक्खू येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मता आनन्देन सद्धिं सम्मोदिंसु। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोचुं—

५. ''इदं खो नो, आवुसो आनन्द, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन [N.284] अत्थं अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं पविट्ठो—'अधम्मो च ...पे०... तथा पटिपज्जितब्बं' ति।

''तेसं नो, आवुसो, अम्हाकं अचिरपक्कन्तस्स भगवतो एतदहोसि—'इदं खो नो, [R.226] आवुसो, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं पविट्ठो—अधम्मो च ...पे०... तथा पटिपज्जितब्बं ति। को नु खो इमस्स भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजेय्या' ति?

''तेसं नो, आवुसो, अम्हाकं एतदहोसि—'अयं खो आयस्मा आनन्दो सत्थु चेव संवण्णितो सम्भावितो च विञ्ञूनं सब्रह्मचारीनं। पहोति चायस्मा आनन्दो इमस्स भगवता

कर आसन से उठकर अपनी साधना कुटी में चले गये—'अधर्म भी जानना चाहिये ...पूर्ववत्... अर्थानुसार आचरण करना चाहिये।' अब भगवदुपदिष्ट इस संक्षिप्त परन्तु विस्तार से अविभाजित इस कथन का कौन स्पष्टीकरण करे?''

३. तब उन भिक्षुओ! यह ध्यान में आया—''ये आयुष्मान् आनन्द शास्ता द्वारा भी प्रशंसित हैं तथा विज्ञ साथी भिक्षुओं द्वारा भी गौरवास्पद हैं। वे इसके विस्तृत अर्थ विभाजन में समर्थ हैं; तो क्यों न हम आयुष्मान् आनन्द के पास चलें और उनसे इस भगवदुपदिष्ट कथन का विस्तृत अर्थ सुनें। जैसा वे बतायेंगे वैसा हम धारण कर लेंगे।''

४. यह निश्चय कर वे भिक्षु आयुष्मान् आनन्द के पास गये तथा कुशल-मङ्गल के बाद उनको उपर्युक्त समस्त घटना सुनाकर उनसे यों बोले—

५. ''आयुष्मन् आनन्द! भगवान् 'अधर्म को, धर्म को, अनर्थ को अर्थ को ...पूर्ववत्...

सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजितुं। यन्नून मयं येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमेय्याम; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं एतमत्थं पटिपुच्छेय्याम। यथा नो आयस्मा आनन्दो ब्याकरिस्सति तथा नं धारेस्सामा' ति। विभजतु आयस्मा आनन्दो'' ति।

६. ''सेय्यथापि, आवुसो, पुरिसो सारत्थिको सारगवेसी सारपरियेसनं चरमानो महतो रुक्खस्स तिट्ठतो सारवतो अतिक्कम्मेव मूलं अतिक्कम्म खन्धं साखापलासे सारं परियेसितब्बं मञ्ञेय्य; एवंसम्पदमिदं आयस्मन्तानं सत्थरि सम्मुखीभूते तं भगवन्तं अतिसित्वा अम्हे एतमत्थं पटिपुच्छितब्बं मञ्ञथ। सो हावुसो, भगवा जानं जानाति पस्सं पस्सति, चक्खुभूतो ञाणभूतो धम्मभूतो ब्रह्मभूतो वत्ता पवत्ता अत्थस्स निन्नेता अमतस्स दाता धम्मस्सामी तथागतो। सो चेव पनेतस्स कालो अहोसि यं तुम्हे भगवन्तंयेव उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छेय्याथ। यथा वो भगवा ब्याकरेय्य तथा नं [B.441,R.227] धारेय्याथा'' ति।

७. ''अद्धावुसो आनन्द, भगवा जानं जानाति पस्सं पस्सति चक्खुभूतो ञाणभूतो धम्मभूतो ब्रह्मभूतो वत्ता पवत्ता अत्थस्स निन्नेता अमतस्स दाता धम्मस्सामी तथागतो। सो चेव पनेतस्स कालो अहोसि यं मयं भगवन्तंयेव उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छेय्याम, यथा नो भगवा ब्याकरेय्य तथा नं धारेय्याम। अपि चायस्मा आनन्दो सत्थु चेव [N.285] संवण्णितो सम्भावितो च विञ्ञूनं सब्रह्मचारीनं। पहोति चायस्मा आनन्दो इमस्स भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजितुं। विभजतायस्मा आनन्दो अगरुं कत्वा'' ति।

८. ''तेन हावुसो, सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एव-

---

आचरण करना चाहिये'—यह संक्षिप्त उद्देश कहकर तथा इसका विस्तार न कर अपनी साधना कुटी में चले गये। ...पूर्ववत्... आयुष्मन् आनन्द! आप हमको इसका विस्तृत अर्थ बतावें।''

६. ''आयुष्मानो! भगवान् के विद्यमान रहते हुए भी मुझसे इस भगवदुक्त उद्देश का विस्तृत अर्थ जानने की आपकी इच्छा ऐसी ही है जैसे कोई सार (दृढ़) काष्ठ चाहने वाला उसे खोजता हुआ कोई पुरुष (अरण्य में) खड़े हुए किसी विशाल वृक्ष के मूल की उपेक्षा कर उसके स्कन्ध या शाखा-पलाश में दृढ़ काष्ठ की खोज करे। आयुष्मानो! भगवान् तो सर्वज्ञ है। वे जानने योग्य जानते हैं, साक्षात्करणीय का साक्षात्कार कर लेते हैं। वे दिव्यचक्षु हैं, ज्ञानस्वरूप, धर्मस्वरूप एवं ब्रह्मस्वरूप हैं। वे वक्ता, कुशल व्याख्याता, अर्थ के निर्णायक, अमृत (निर्वाण) को देने वाले, धर्मस्वामी तथागत हैं। वही समय था, आयुष्मानो! अब आप लोग भगवान् के सम्मुख थे तभी आप लोगों को उनसे इस (उद्देश) के विस्तृत अर्थ की जिज्ञासा करनी चाहिये थी। तथा वे जैसा उपदेश करते, वैसा मन में धारण कर लेते।''

७. ''आयुष्मन् आनन्द! यद्यपि आप भगवान् के विषय में जैसा व्याख्यान कर रहे हैं, वे वैसे ही हैं। वह समय भी उचित था कि हम उनके सम्मुख रहते हुए उनसे ही पूछकर उसे धारण कर

मावुसो'' ति खो ते भिक्खू आयस्मतो आनन्दस्स पच्चस्सोसुं। अथायस्मा आनन्दो एतदवोच—

९. ''यं खो नो, आवुसो, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं पविट्ठो—'अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च; अनत्थो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं' ति। कतमो चावुसो, अधम्मो, कतमो च धम्मो, कतमो च अनत्थो कतमो च अत्थो ?

१०. ''मिच्छादिट्ठि, आवुसो, अधम्मो; सम्मादिट्ठि धम्मो; ये च मिच्छादिट्ठिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्मादिट्ठिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

११. ''मिच्छासङ्कप्पो, आवुसो, अधम्मो; सम्मासङ्कप्पो धम्मो... मिच्छावाचा, [R.228] आवुसो, अधम्मो, सम्मावाचा धम्मो... मिच्छाकम्मन्तो, आवुसो, अधम्मो, सम्माकम्मन्तो धम्मो...मिच्छाआजीवो, आवुसो, अधम्मो; सम्माआजीवो धम्मो...मिच्छा- [B.442] वायामो, आवुसो, अधम्मो; सम्मावायामो धम्मो... मिच्छासति, आवुसो, अधम्मो; सम्मासति धम्मो... मिच्छासमाधि, आवुसो, अधम्मो; सम्मासमाधि धम्मो... मिच्छाञाणं, आवुसो, अधम्मो; सम्माञाणं धम्मो... मिच्छाविमुत्ति, आवुसो, अधम्मो; सम्माविमुत्ति धम्मो; ये च मिच्छाविमुत्तिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्माविमुत्तिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

१२. ''यं खो नो, आवुसो, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं [N.286] अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं पविट्ठो—'अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो

लेते। परन्तु आयुष्मन् आनन्द! आप भी शास्ता द्वारा प्रशंसित एवं विज्ञ साथियों द्वारा सम्मानित हैं और आप इसका विस्तृत अर्थ करने में समर्थ हैं। अत: कृपया आप ही इसका विस्तार करें।''

८. ''तो, आयुष्मानो! सुनो! बताता हूँ, इसे भलीभाँति मन में बैठा लो।'' ...पूर्ववत्...। आयुष्मान् आनन्द बोले—

९. ''आयुष्मानो! भगवान् जो उक्त उद्देश—'अधर्म को, धर्म को, अनर्थ को, अर्थ को जानना चाहिये ...पूर्ववत्...' कहकर, आसन से उठकर गन्धकुटी में जाकर विराजे, उस (उद्देश) में—कौन अधर्म है ? कौन धर्म है ? कौन अनर्थ है ? कौन अर्थ है ?

१०. ''आयुष्मानो! मिथ्यादृष्टि को 'अधर्म' कहते हैं, सम्यग्दृष्टि को 'धर्म', तथा जो मिथ्यादृष्टि के कारण उद्भूत अनेक पापमय अकुशल धर्म हैं वे 'अनर्थ' हैं; और सम्यग्दृष्टि के कारण उद्भूत अनेक कुशल धर्म साधना की पूर्ति में सहायक होते हैं—यह 'अर्थ' है।

११. ''आयुष्मानो! मिथ्यासङ्कल्प ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति के कारण उद्भूत अनेक कुशलधर्म साधना की पूर्ति में सहायक होते हैं—यह 'अर्थ' है।

१२. ''आयुष्मानो! उस भगवदुक्त संक्षिप्त कथन का यही विस्तृत स्पष्टीकरण है। जैसा मैं

च ...पे०... तथा पटिपज्जितब्बं' ति, इमस्स खो अहं, आवुसो, भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स एवं वित्थारेन अत्थं आजानामि। आकङ्खमाना च पन तुम्हे, आवुसो, भगवन्तंयेव उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छेय्याथ। यथा वो नं भगवा ब्याकरोति तथा नं धारेय्याथा'' ति।

१३. ''एवमावुसो'' ति खो ते भिक्खू आयस्मतो आनन्दस्स भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा उट्ठायासना येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं—

१४. ''यं खो नो भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं पविट्ठो—'अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो ...पे०... तथा पटिज्जितब्बं' ति। तेसं नो, भन्ते, अम्हाकं अचिरपक्कन्तस्स भगवतो एतदहोसि—'इदं खो नो, आवुसो, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं [R.229] पविट्ठो—अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो ...पे०... तथा पटिपज्जितब्बं ति। को नु खो इमस्स भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजेय्या' ति?

''तेसं नो, भन्ते, अम्हाकं एतदहोसि—'अयं खो आयस्मा आनन्दो सत्थु [B.443] चेव संवण्णितो सम्भावितो च विञ्ञूनं सब्रह्मचारीनं। पहोति चायस्मा आनन्दो इमस्स भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजितुं। यन्नून मयं येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमेय्याम; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं एतमत्थं पटिपुच्छेय्याम। यथा नो आयस्मा आनन्दो ब्याकरिस्सति तथा नं धारेस्सामा' ति।

''अथ खो मयं, भन्ते येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमिम्हा; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं एतमत्थं अपुच्छिम्हा। तेसं नो, भन्ते, आयस्मता आनन्देन इमेहि आकारेहि इमेहि पदेहि इमेहि ब्यञ्जनेहि अत्थो सुविभत्तो'' ति।

१५. ''साधु साधु, भिक्खवे! पण्डितो, भिक्खवे, आनन्दो। महापञ्ञो, [N.287]

जानता था, वैसा मैंने बता दिया। यदि इसमें आप लोगों को कोई शङ्का या सन्देह हो तो भगवान् के सम्मुख जाकर, उनसे कुछ अधिक स्पष्टीकरण कराकर आप लोग अपना सन्देह मिटा लें। वे जैसा उपदेश करें वैसा ही धारण कर लें।''

१३. वे भिक्षु आयुष्मान् आनन्द से ''अच्छा, आयुष्मन्!''—यह कहकर, उनके भाषण का अभिनन्दन, अनुमोदन कर आसन से उठकर भगवान् के सम्मुख गये। वहाँ जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए उन भिक्षुओं ने भगवान् से यह निवेदन किया—

१४. ''भगवान् ने अभी (कुछ समय पूर्व) जो संक्षिप्त उपदेश ...पूर्ववत्... आयुष्मान् आनन्द ने इस प्रकार से, इन पदों से, इन वाक्यों से उस उपदेश का यह विस्तार किया है।''

१५. ''साधु, भिक्षुओ! साधु! आनन्द पण्डित है, भिक्षुओ! आनन्द महाप्राज्ञ है। यदि तुम

भिक्खवे, आनन्दो। यं चे पि तुम्हे, भिक्खवे, उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छेय्याथ, अहं पि चेतं एवमेव ब्याकरेय्यं यथा तं आनन्देन ब्याकतं। एसो चेव तस्स अत्थो एवं च नं धारेय्याथा'' ति॥ ●

४. अजितसुत्तं : १. अथ खो अजितो परिब्बाजको येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं [R.230] निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो अजितो परिब्बाजको भगवन्तं एतदवोच—

२. ''अम्हाकं, भो गोतम, पण्डितो नाम सब्रह्मचारी। तेन पञ्चमत्तानि चित्तट्ठान-सतानि चिन्तितानि, येहि अञ्ञतित्थिया उपारद्धा व जानन्ति उपारद्धस्मा'' ति।

[B.444] ३. अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''धारेथ नो तुम्हे, भिक्खवे, पण्डित-वत्थूनी'' ति?

''एतस्स, भगवा, कालो एतस्स, सुगत, कालो यं भगवा भासेय्य, भगवतो सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती'' ति।

''तेन हि, भिक्खवे, सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

४. ''इध, भिक्खवे, एकच्चो अधम्मिकेन वादेन अधम्मिकं वादं अभिनिग्गण्हाति अभिनिप्पीळेति, तेन च अधम्मिकं परिसं रञ्जेति। तेन सा अधम्मिका परिसा उच्चासद्दमहासद्दा होति—'पण्डितो वत, भो, पण्डितो वत, भो' ति।

मुझसे भी मेरे इस कथन के विस्तार की जिज्ञासा करते तो मैं भी तुमको ऐसा ही बताता, जैसा कि आनन्द ने तुमको बताया है। यही उसका अर्थ है। इसी प्रकार तुम लोग इसको अपने मन में बैठा लो॥'' ●

४. अजितसूत्र : : दश पण्डितवस्तुएँ

१. तब कोई अजित नामक परिव्राजक भगवान् के पास आया। आकर भगवान् से कुशल मङ्गल-प्रश्नानन्तर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस परिव्राजक ने भगवान् को यह बताया—

२. ''भो गौतम! हमारा एक पण्डित नाम का साथी है। उसने पाँच सौ चित्तस्थान निर्णीत किये हैं। उसके इस निर्णय से सभी अन्य मतावलम्बी श्रमण उपालब्ध (निन्दित) ही होते हैं।''

३. तब भगवान् ने भिक्षुओं को बुलाया और आदेश दिया—''भिक्षुओ! क्या तुम इन दश पण्डित वस्तुओं को अपने ध्यान में रखे हुए हो?''

''भन्ते! सुगत! इसका यही सुअवसर है कि आप हमें इनका उपदेश करें। आपसे सुनकर हम धारण कर लेंगे।''

''तो, भिक्षुओ! सुनो। सुनकर मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ।''

भिक्षुओं ने ''जो आज्ञा, भन्ते!'' कहकर भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की।

४. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अधार्मिक निर्णय से अधार्मिक वाद को निगृहीत करता है,

५. ''इध पन, भिक्खवे, एकच्चो अधम्मिकेन वादेन धम्मिकं वादं अभिनिग्गण्हाति अभिनिप्पीळेति, तेन च अधम्मिकं परिसं रञ्जेति। तेन सा अधम्मिका परिसा उच्चासद्दमहासद्दा होति—'पण्डितो वत, भो, पण्डितो वत, भो' ति।

६. ''इध पन, भिक्खवे, एकच्चो अधम्मिकेन वादेन धम्मिकं च वादं [N.288] अधम्मिकं च वादं अभिनिग्गण्हाति अभिनिप्पीळेति, तेन च अधम्मिकं परिसं रञ्जेति। तेन सा अधम्मिका परिसा उच्चासद्दमहासद्दा होति—'पण्डितो वत, भो, पण्डितो वत, भो' ति[१]।

७. ''अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च; अनत्थो च वेदितब्बो [R.231] अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं।

८. ''कतमो च, भिक्खवे, अधम्मो, कतमो च धम्मो, कतमो च अनत्थो, कतमो च अत्थो? मिच्छादिट्ठि, भिक्खवे, अधम्मो; सम्मादिट्ठि धम्मो; ये च मिच्छादिट्ठिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्मादिट्ठिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

९. ''मिच्छासङ्कप्पो, भिक्खवे, अधम्मो; सम्मासङ्कप्पो धम्मो... मिच्छावाचा,

---

निरस्त करता है तथा उससे अधार्मिक परिषद् को प्रसन्न करता है। इस तरह प्रसन्न हुई वह परिषद् कोलाहल करने लगती है—'यह न्यायकर्ता तो पण्डित है।'

५. ''और, भिक्षुओ! कोई (दूसरा) निर्णायक अपने अधार्मिक वचनों से धार्मिकवाद को निगृहीत करता है, निरस्त करता है और उस निर्णय से अधार्मिक परिषद् प्रसन्न होती है। प्रसन्न हुई वह परिषद् भी उसकी प्रशंसा में उच्च शब्दों में कहने लगती है—'यह न्यायकर्ता महान् पण्डित ज्ञात होता है।'

६. ''और, भिक्षुओ! कोई (तीसरा) निर्णायक अपने अधार्मिक वचनों से धार्मिक एवं अधार्मिक—दोनों ही वादों को विगृहीत एवं निरस्त करता है तथा उससे अधार्मिक परिषद् ...पूर्ववत्...।

७. (अत:) ''भिक्षुओ! अधर्म को भी जानना चाहिये, धर्म को भी जानना चाहिये; अनर्थ को भी जानना चाहिये और अर्थ को भी जानना चाहिये। (तब) धर्मानुसार एवं अर्थानुसार आचरण करना चाहिये।

८. ''यहाँ, भिक्षुओ! कौन 'अधर्म' है? कौन 'धर्म' है? कौन 'अनर्थ' है तथा कौन 'अर्थ' है। भिक्षुओ! यहाँ मिथ्यादृष्टि 'अधर्म' है, सम्यग्दृष्टि 'धर्म'; मिथ्यादृष्टि के कारण अनेक पापमय अकुशल धर्म 'अनर्थ' हैं, और सम्यग्दृष्टि से उद्भूत हुए अनेक कुशल धर्म साधना की पूर्ति में सहायक होते हैं, ये 'अर्थ' कहलाते हैं।

९. ''भिक्षुओ! मिथ्यासङ्कल्प 'अधर्म' है, सम्यक्सङ्कल्प 'धर्म'...मिथ्यावाक् 'अधर्म' है,

---

१. 'इध पन भिक्खवे एकच्चो धम्मिकेन वादेन अधम्मिकं वादं... वत भो ती' ति सी०, स्या० रो० पोत्थकेसु अधिको पाठो दिस्सति।

भिक्खवे, अधम्मो; सम्मावाचा धम्मो... मिच्छाकम्मन्तो, भिक्खवे, अधम्मो; सम्माकम्मन्तो [B.445] धम्मो... मिच्छाआजीवो, भिक्खवे, अधम्मो; सम्माआजीवो धम्मो... मिच्छा-वायामो, भिक्खवे, अधम्मो; सम्मावायामो धम्मो... मिच्छासति, भिक्खवे, अधम्मो; सम्मासति धम्मो... मिच्छासमाधि, भिक्खवे अधम्मो; सम्मासमाधि धम्मो... मिच्छाञाणं, भिक्खवे, अधम्मो; सम्माञाणं धम्मो।

१०. ''मिच्छाविमुत्ति, भिक्खवे, अधम्मो; सम्माविमुत्ति धम्मो; ये च मिच्छा-विमुत्तिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्माविमुत्ति-पच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

११. '' 'अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च; अनत्थो च वेदितब्बो अत्थो [R.232] च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं'' ति॥ ●

[N.289] **५. सङ्गारवसुत्तं :** १. अथ खो सङ्गारवो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सङ्गारवो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—''किं नु खो, भो गोतम, ओरिमं तीरं, किं पारिमं तीरं'' ति?

२. ''मिच्छादिट्ठि खो, ब्राह्मण, ओरिमं तीरं, सम्मादिट्ठि पारिमं तीरं; मिच्छासङ्कप्पो ओरिमं तीरं, सम्मासङ्कप्पो पारिमं तीरं; मिच्छावाचा ओरिमं तीरं, सम्मावाचा पारिमं तीरं;

सम्यग्वाक् 'धर्म'...मिथ्याकर्मान्त 'अधर्म' है, सम्यक्कर्मान्त 'धर्म'...मिथ्याआजीव, भिक्षुओ! 'अधर्म' है, सम्यगाजीव 'धर्म'..., मिथ्याव्यायाम 'अधर्म है', सम्यग्व्यायाम 'धर्म'...मिथ्यास्मृति 'अधर्म' है, सम्यक्स्मृति 'धर्म'...मिथ्यासमाधि 'अधर्म' है, सम्यक्समाधि 'धर्म'...मिथ्याज्ञान 'अधर्म' है, सम्यग्ज्ञान 'धर्म'...।

१०. ''मिथ्याविमुक्ति, भिक्षुओ! 'अधर्म' है, सम्यग्विमुक्ति 'धर्म'। मिथ्याविमुक्ति के कारण उद्भूत अनेक पापमय अकुशल धर्म 'अनर्थ' हैं; परन्तु जो सम्यग्विमुक्ति से उद्भूत अनेक कुशल धर्म साधनापूर्ति में सहायक होते हैं वे 'अर्थ' कहलाते हैं।

११. ''अत: 'भिक्षुओ! अधर्म को भी जानना चाहिये, धर्म को भी, अनर्थ को भी जानना चाहिये और अर्थ को भी। इस प्रकार, अधर्म एवं धर्म को जानकर, अनर्थ एवं अर्थ को जानकर धर्म एवं अर्थ के अनुसार आचरण करना चाहिये'—यह जो कहा था, इसी उद्देश्य से कहा था॥'' ●

५. सङ्गारवसूत्र : : भवसागर का यह तट एवं वह तट

१. तब सङ्गारव ब्राह्मण भगवान् के पास आया। आकर भगवान् से कुशल-मङ्गल प्रश्नानन्तर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उस ब्राह्मण ने भगवान् से जिज्ञासा की—''भो गौतम! यह 'इस ओर का किनारा' या 'उस ओर का किनारा' क्या कहलाता है?''

२. ''ब्राह्मण! मिथ्यादृष्टि 'इस ओर का किनारा' है तथा सम्यग्दृष्टि 'उस ओर का किनारा' है। मिथ्यासङ्कल्प इस ओर का किनारा है तथा सम्यक्सङ्कल्प उस ओर का किनारा। मिथ्यावाक्...

मिच्छाकम्मन्तो ओरिमं तीरं, सम्माकम्मन्तो पारिमं तीरं; मिच्छाआजीवो ओरिमं तीरं, सम्माआजीवो पारिमं तीरं; मिच्छावायामो ओरिमं तीरं, सम्मावायामो पारिमं तीरं; मिच्छासति ओरिमं तीरं, सम्मासति पारिमं तीरं; मिच्छासमाधि ओरिमं तीरं, सम्मासमाधि पारिमं तीरं; मिच्छाविमुत्ति ओरिमं तीरं, सम्माविमुत्ति पारिमं तीरं ति। इदं खो, ब्राह्मण, ओरिमं तीरं, इदं पारिमं तीरं ति।

''अप्पका ते मनुस्सेसु, ये जना पारगामिनो।
अथायं इतरा पजा, तीरमेवानुधावति॥ (ध०प० ८५)
''ये च खो सम्मदक्खाते, धम्मे धम्मानुवत्तिनो।
ते जना पारमेस्सन्ति, मच्चुधेय्यं सुदुत्तरं॥ (ध०प० ८६)
''कण्हं धम्मं विप्पहाय, सुक्कं भावेथ पण्डितो। [B.446]
ओका अनोकमागम्म, विवेके यत्थ दूरमं॥ (ध०प० ८७)
''तत्राभिरतिमिच्छेय्य, हित्वा कामं अकिञ्चनो।
परियोदपेय्य अत्तानं, चित्तक्लेसेहि पण्डितो॥ (ध०प० ८८)
''येसं सम्बोधियङ्गेसु, सम्मा चित्तं सुभावितं। [R.233]
आदानपटिनिस्सग्गे, अनुपादाय ये रता।
खीणासवा जुतिमन्तो, ते लोके परिनिब्बुता'' ति॥ (ध०प० ८९)●

६. ओरिमतीरसुत्तं : १. ''ओरिमं च, भिक्खवे, तीरं देसेस्सामि पारिमं च [N.290]

सम्यग्वाक्...। मिथ्याकर्मान्त...सम्यक्कर्मान्त...। मिथ्याआजीव...सम्यगाजीव...। मिथ्याव्यायाम... सम्यग्व्यायाम...। मिथ्यास्मृति....सम्यक्स्मृति...। मिथ्यासमाधि...सम्यक्समाधि...। मिथ्याज्ञान... एवं सम्यग्ज्ञान...। मिथ्याविमुक्ति इस ओर का तथा सम्यग्विमुक्ति उस ओर का किनारा है। इस प्रकार, ब्राह्मण! 'इस ओर का किनारा' तथा 'उस ओर का किनारा' कहलाता है।

''संसार में जन्म लेने वाले ऐसे बहुत कम लोग हैं जो (धर्मसाधन द्वारा) इस संसार से पार जा सके हों। अन्यथा दूसरे साधारण सांसारिकजन तो (इसी) तीर (किनारा=तट) पर ही दौड़ते रहते हैं। (ध० प०, ८५ गा०)

''परन्तु जो लोग भली प्रकार से भगवदुपदिष्ट धर्म का अनुगमन करते हैं, वे अत्यधिक कठिनता से पार जाने योग्य मृत्यु के राज्य से भी पार चले जायँगें॥ (ध० प०, ८६ गा०)

''बुद्धिमान् जन कृष्ण (पापमय) धर्म का परित्याग कर शुक्ल (पुण्यमय) धर्म का आचरण करे, वह गृहस्थ धर्म त्याग कर एकान्त (गृहविहीन) अवस्था (प्रव्रज्या) प्राप्त कर ले; क्योंकि गृहस्थ धर्म में रहते हुए एकान्तसाधना कठिन होती है॥ (ध० प०, ८७ गा०)

''वह बुद्धिमान् पुरुष कामनाओं का परित्याग कर, अकिञ्चन (सर्वत्यागी) बनकर उस (प्रव्रज्या) में रहने की इच्छा करे। तथा इस प्रकार स्वकीय चित्तक्लेशों (मनोविकारों) को दूर कर स्वयं को परिशुद्ध करे॥ (ध० प०, ८८ गा०)

''जिनका चित्त सम्बोध्यङ्गों में सम्यक् प्रकार से अभ्यस्त हो चुका है, जो सांसारिक लाभ

तीरं। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''कतमं च, भिक्खवे, ओरिमं तीरं, कतमं च पारिमं तीरं? मिच्छादिट्ठि ओरिमं तीरं, सम्मादिट्ठि पारिमं तीरं ...पे०... मिच्छाविमुत्ति ओरिमं तीरं, सम्माविमुत्ति पारिमं तीरं। इदं खो, भिक्खवे, ओरिमं तीरं, इदं पारिमं तीरं ति।

''अप्पका ते मनुस्सेसु, ये जना पारगामिनो।
अथायं इतरा पजा, तीरमेवानुधावति॥
''ये च खो सम्मदक्खाते, धम्मे धम्मानुवत्तिनो।
ते जना पारमेस्सन्ति, मच्चुधेय्यं सुदुत्तरं॥
''कण्हं धम्मं विप्पहाय, सुक्कं भावेथ पण्डितो।
ओका अनोकमागम्म, विवेके यत्थ दूरमं॥
''तत्राभिरतिमिच्छेय्य, हित्वा कामं अकिञ्चनो।
परियोदपेय्य अत्तानं, चित्तक्लेसेहि पण्डितो॥
''येसं सम्बोधियङ्गेसु, सम्मा चित्तं सुभावितं।
आदानपटिनिस्सग्गे, अनुपादाय ये रता।
खीणासवा जुतिमन्तो, ते लोके परिनिब्बुता'' ति॥

(ध०प०८५-८९) ●

[B.447] ७. **पठमपच्चोरोहणीसुत्तं** : १. तेन खो पन समयेन जाणुस्सोणि ब्राह्मणो [B.234] तदहुपोसथे सीसंन्हातो नवं खोमयुगं निवत्थो अल्लकुसमुट्ठिं आदाय भगवतो अविदूरे एकमन्तं ठितो होति। अद्दसा खो भगवा जाणुस्सोण ब्राह्मणं तदहुपोसथे सीसंन्हातं

ग्रहण करने में अनासक्त होकर परिग्रह के त्याग में ही रत हैं, जिनके चित्तविकार प्रहीण हो चुके हैं, ऐसे साधक मनुष्य ही यहाँ परिनिर्वाण प्राप्त कर पाये हैं॥'' (ध० प०, ८९ गा०) ●

६. ओरिमतीरसूत्र : : संसार के दोनों किनारों का वर्णन

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको (संसार के) इस किनारे या उस किनारे के विषय में बताऊँगा। उसे सुनकर मन में बैठा लो। बताता हूँ। ...पूर्ववत्... भगवान् ने यह उपदेश किया—

२. ''भिक्षुओ! कौन सा तीर इधर का कहलाता है, तथा कौन सा तीर उधर का? मिथ्यादृष्टि इधर का तीर तथा सम्यग्दृष्टि उधर का तीर कहलाता है ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति इधर का तीर एवं सम्यग्विमुक्ति उधर का तीर कहलाता है। भिक्षुओ! इस प्रकार, यह 'इधर का तीर' तथा यह 'उधर का तीर' कहलाता है॥

(गाथाओं का अनुवाद पूर्वसूत्रवत्)॥ ●

७. प्रथमप्रत्यवरोहिणीसूत्र : : दश त्याज्य धर्म

१. उस समय जानुश्रोणि ब्राह्मण उपोसथ के दिन शिर तक पूर्ण स्नान कर, नया रेशमी या सण

नवं खोमयुगं निवत्थं अल्लकुसमुट्ठिं आदाय एकमन्तं ठितं। दिस्वान जाणुस्सोणिं ब्राह्मणं एतदवोच—

२. "किं नु त्वं, ब्राह्मण, तदहुपोसथो सीसंन्हातो नवं खोमयुगं निवत्थो [N.291] अल्लकुसमुट्ठिं आदाय एकमन्तं ठितो? किं न्वज्ज ब्राह्मणकुलस्सा" ति?

"पच्चोरोहणी, भो गोतम, अज्ज ब्राह्मणकुलस्सा" ति।

"यथा कथं पन, ब्राह्मण, ब्राह्मणानं पच्चोरोहणी होती" ति?

"इध, भो गोतम, ब्राह्मणा तदहुपोसथे सीसंन्हाता नवं खोमयुगं निवत्था अल्लेन गोमयेन पथविं ओपुञ्जित्वा हरितेहि कुसेहि पत्थरित्वा अन्तरा च वेलं अन्तरा च अग्यागारं सेय्यं कप्पेन्ति। ते तं रत्तिं तिक्खत्तुं पच्चुट्ठाय पञ्जलिका अग्गिं नमस्सन्ति—'पच्चोरोहाम भवन्तं, पच्चोरोहाम भवन्तं' ति। बहुकेन च सप्पितेलनवनीतेन अग्गिं सन्तप्पेन्ति। तस्सा च रत्तिया अच्चयेन पणीतेन खादनीयेन भोजनीयेन ब्राह्मणे सन्तप्पेन्ति। एवं, भो गोतम, ब्राह्मणानं पच्चोरोहणी होती" ति।

"अञ्ञथा खो, ब्राह्मण, ब्राह्मणानं पच्चोरोहणी होति, अञ्ञथा च पन अरियस्स विनये पच्चोरोहणी होती" ति।

"यथा कथं पन, भो गोतम, अरियस्स विनये पच्चोरोहणी होति? साधु मे भवं गोतमो तथा धम्मं देसेतु यथा अरियस्स विनये पच्चोरोहणी होती" ति।

"तेन हि, ब्राह्मण, सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी" ति। [B.448] "एवं, भो" ति खो जाणुस्सोणि ब्राह्मणो भगवतो पच्चस्सोसि। भगवा एतदवोच—

का वस्त्र पहनकर, आर्द्र कुश मुट्ठी में लेकर भगवान् के समीप ही बैठा था। तब भगवान् ने जानुश्रोणि ब्राह्मण को उस अवस्था में देखकर पूछा—

२. "ब्राह्मण! आज उपोसथ के दिन ...पूर्ववत्... एक तरफ क्या बैठे हो? आज तुम्हारे घर (ब्राह्मणकुल) में कुछ विशेष है क्या?"

"भन्ते! आज हमारे ब्राह्मणकुल में प्रत्यवरोहिणी पर्व है।"

"ब्राह्मण! तुम लोगों में यह प्रत्यरोहणी पर्व कैसे मनाया जाता है?"

"भो गौतम! यहाँ ब्राह्मण लोग उपोसथ के दिन शिर से स्नान कर नये सन से बने वस्त्र पहनकर, आर्द्र गोमय (गोबर) से भूमि को लेपकर, उस पर हरे कुश बिछाकर, घर की सीमा और अग्न्यागार के मध्य अपना शयनासन लगाते हैं। वे रात्रि में तीन बार उठकर अग्नि को यह कहते हुए प्रणाम करते हैं—'हम आपका प्रत्यवरोहण करते हैं', 'हम आपका प्रत्यवरोहण करते हैं।' साथ ही बहुत सा घृत, तैल और नवनीत उसको समर्पित करते हैं। उस रात्रि के बीतने पर, उत्तम से उत्तम भोजन का दानकर ब्राह्मणों को सन्तृप्त करते हैं। इस प्रकार, भो गौतम! हमलोगों के घरों में यह प्रत्यवरोहिणी पर्व मनाया जाता है।"

"तब तो, ब्राह्मण! तुम्हारे घरों में यह पर्व दूसरे प्रकार से मनाया जाता है, तथा हमारे आर्यविनय में दूसरे प्रकार से।"

[R.235] ३. ''इध, ब्राह्मण, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'मिच्छादिट्ठिया खो पापको विपाको दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा' ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छादिट्ठिं पजहति; मिच्छादिट्ठिया पच्चोरोहति।

...मिच्छासङ्कप्पस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छासङ्कप्पं पजहति; मिच्छासङ्कप्पा पच्चोरोहति।

...मिच्छावाचाय खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छावाचं पजहति; मिच्छावाचाय पच्चोरोहति।

[N.292] ...मिच्छाकम्मन्तस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छाकम्मन्तं पजहति; मिच्छाकम्मन्ता पच्चोरोहति।

...मिच्छाआजीवस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छाआजीवं पजहति; मिच्छाआजीवा पच्चोरोहति।

...मिच्छावायामस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छावायामं पजहति; मिच्छावायामा पच्चोरोहति।

...मिच्छासतिया खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छासतिं पजहति; मिच्छासतिया पच्चोरोहति।

...मिच्छासमाधिस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छासमाधिं पजहति; मिच्छासमाधिम्हा पच्चोरोहति।

[B.449]...मिच्छाञाणस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छाञाणं पजहति; मिच्छाञाणम्हा पच्चोरोहति।

''इध, ब्राह्मण,... पटिसञ्चिक्खति—'मिच्छाविमुत्तिया खो पापको विपाको—दिट्ठे

''भो गौतम! आपके यहाँ यह पर्व कैस मनाया जाता है?''

''ब्राह्मण! सुनो! सुनकर मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ।''...भगवान् ने यह कहा—

३. ''यहाँ, ब्राह्मण! कोई आर्यश्रावक यह चिन्तन करता है—'मिथ्यादृष्टि का पापमय विपाक (फल) इसी जन्म में, तथा परलोक में भोगना पड़ता है।' अत: यह मिथ्यादृष्टि का त्याग कर देता है, मिथ्यादृष्टि से पीछे हट जाता है। (१)

''...मिथ्यासङ्कल्प का पापमय विपाक ...पूर्ववत्...। (२)

''...मिथ्यावाक् का पापमय विपाक ...पूर्ववत्...। (३)

''...मिथ्याकर्मान्त का पापमय विपाक ...पूर्वतव्...। (४)

''...मिथ्याआजीव का पापमय विपाक ...पूर्ववत्...। (५)

''...मिथ्याव्यायाम का पापमय विपाक ...पूर्ववत्... । (६)

''...मिथ्यास्मृति का पापमय विपाक ...पूर्ववत्...। (७)

''...मिथ्यासमाधि का पापमय विपाक ...पूर्ववत्...। (८)

''...मिथ्याज्ञान का पापमय विपाक ...पूर्ववत्...। (९)

चेव धम्मे अभिसम्परायं चा' ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छाविमुत्तिं पजहति; मिच्छाविमुत्तिया पच्चोरोहति। एवं खो, ब्राह्मण, अरियस्स विनये पच्चोरोहणी होती'' ति।

४. ''अञ्ञथा, भो गोतम, ब्राह्मणानं पच्चोरोहणी, अञ्ञथा च पन अरियस्स विनये पच्चोरोहणी होति। इमिस्सा च, भो गोतम, अरियस्स विनये पच्चोरोहणिया ब्राह्मणानं पच्चोरोहणी कलं नाग्घति सोळसिं। अभिक्कन्तं, भो गोतम ...पे०... [R.236] उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं'' ति॥ ●

८. दुतियपच्चोरोहणीसुत्तं : १. ''अरियं वो भिक्खवे, पच्चोरोहणिं [N.293] देसेस्सामि। तं सुणाथ... कतमा च, भिक्खवे, अरिया पच्चोरोहणी? इध, भिक्खवे, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'मिच्छादिट्ठिया खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा' ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छादिट्ठिं पजहति; मिच्छादिट्ठिया पच्चोरोहति। मिच्छासङ्कप्पस्स खो पापको विपाको... मिच्छावाचाय खो... मिच्छाकम्मन्तस्स खो... मिच्छाआजीवस्स खो... मिच्छावायामस्स खो... मिच्छासतिया खो... मिच्छासमाधिस्स खो... मिच्छाञाणस्स खो... मिच्छाविमुत्तिया खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छाविमुत्तिं पजहति; मिच्छाविमुत्तिया पच्चोरोहति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरिया पच्चोरोहणी'' ति॥ ●

९. पुब्बङ्गमसुत्तं : १. ''सुरियस्स, भिक्खवे, उदयतो एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—अरुणुग्गं। एवमेव खो, भिक्खवे, कुसलानं धम्मानं एतं पुब्बङ्गमं एतं

''...'मिथ्याविमुक्ति का पापमय विपाक (फल) इसी लोक में या परलोक में भोगना ही पड़ता है।' अत: वह मिथ्याविमुक्ति को त्याग देता है, मिथ्याविमुक्ति से पीछे हट जाता है। इस प्रकार, ब्राह्मण! हमारे आर्यविनय में यह प्रत्यवरोहणी पर्व मनाया जाता है।

४. ''भोग गौतम! ब्राह्मणों का यह प्रत्यवरोहिणी पर्व भिन्न प्रकार का है, और आर्यविनय में भिन्न प्रकार का। परन्तु ब्राह्मणों का प्रत्यवरोहणी पर्व आर्यविनय के इस प्रत्यवरोहिणी पर्व की सोलहवीं कला (भाग) से भी समानता नहीं कर पाता। बहुत उत्तम है, भो गौतम! ...पूर्ववत्... आज से आप मुझको मेरे प्राण रहने तक अपना शरणागत उपासक समझें॥'' ●

८. द्वितीय प्रत्यवरोहिणीसूत्र : : दश धर्मों से पीछे हटना

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको आर्यविनय की प्रत्यवरोहिणी की देशना करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह आर्य प्रत्यवरोहणी क्या है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक ऐसा चिन्तन करता है—'मिथ्यादृष्टि का पापमय परिणाम (फल) इसी जन्म में और परलोक में भी भोगना पड़ता है।' यह चिन्तन कर वह इस पापमय दृष्टि का त्याग कर देता है, इससे पीछे हट जाता है। मिथ्यासङ्कल्प का ...पूर्ववत्... 'मिथ्याविमुक्ति का पापमयफल...इससे पीछे हट जाता है। यह कहलाती है, भिक्षुओ! आर्य प्रत्यवरोहणी॥'' ●

९. पूर्वङ्गमसूत्र : : दश पूर्वङ्गम धर्म

१. ''भिक्षुओ! जैसे सूर्योदय से पूर्व अरुणोदय का होना अवश्यम्भावी है, वैसे ही भिक्षुओ!

पुब्बनिमित्तं, यदिदं—सम्मादिट्ठि। सम्मादिट्ठिकस्स, भिक्खवे, सम्मासङ्कप्पो पहोति, सम्मासङ्कप्पस्स सम्मावाचा पहोति, सम्मावाचस्स सम्माकम्मन्तो पहोति, सम्माकम्मन्तस्स [B.450] सम्माआजीवो पहोति, सम्माआजीवस्स सम्मावायामो पहोति, सम्मावायामस्स सम्मासति पहोति, सम्मासतिस्स सम्मासमाधि पहोति, सम्मासमाधिस्स सम्माञाणं पहोति, [R.237] सम्माञाणिस्स सम्माविमुत्ति पहोती'' ति॥ ●

१०. आसवक्खयसुत्तं : १. ''दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा भाविता बहुलीकता आसवानं खयाय संवत्तन्ति। कतमे दस? सम्मादिट्ठि, सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा, सम्माकम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मावायामो, सम्मासति, सम्मासमाधि, सम्माञाणं, सम्माविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, दस धम्मा भाविता बहुलीकता आसवानं खयाय संवत्तन्ती'' ति॥ ●

पच्चोरोहणिवग्गो बारसमो॥

तस्सुद्दानं

[N.294] तयो अधम्मा अजितो, सङ्गारवो च ओरिमं।
द्वे चेव पच्चोरोहणी, पुब्बङ्गमं आसवक्खयो ति॥ ●

कुशलधर्मों की उत्पत्ति से पूर्व सम्यग्दृष्टि का उत्पाद परम आवश्यक है। सम्यग्दृष्टि से ही सम्यक्सङ्कल्प, सम्यक्सङ्कल्प से सम्यग्वाक्, सम्यग्वाक् से सम्यक्कर्मान्त ...पूर्ववत्... सम्यग्ज्ञान से सम्यग्विमुक्ति उत्पन्न होती है॥'' ●

१०. आश्रवक्षयसूत्र : : आश्रवक्षयकारक दश धर्म

१. ''भिक्षुओ! अभ्यस्त एवं वृद्धिङ्गत किये हुए ये धर्म आश्रवक्षय के निमित्त बन जाते हैं। कौन से दश? (१) सम्यग्दृष्टि, (२) सम्यक्सङ्कल्प, (३) सम्यग्वाक् , (४) सम्यक्कर्मान्त, (५) सम्यगाजीव, (६) सम्यग्व्यायाम, (७) सम्यक्स्मृति, (८) सम्यक्समाधि, (९) सम्यग्ज्ञान एवं (१०) सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! ये दश धर्म, अभ्यस्त किये जाने पर, आश्रवक्षयकारक बन जाते हैं॥'' ●

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. प्रथम अधर्मसूत्र, २. द्वितीय अधर्मसूत्र, ३. तृतीय अधर्मसूत्र, ४. अजितसूत्र, ५. सङ्गारवसूत्र, ६. ओरिमतीरसूत्र, ७. प्रथम प्रत्यवरोहिणीसूत्र, ८. द्वितीय प्रत्यवरोहणीसूत्र, ९. पूर्वङ्गमसूत्र, एवं १०. आश्रवक्षयसूत्र॥ ●

१३. परिसुद्धवग्गो

१. **पठमसुत्तं** : १. "दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा परिसुद्धा परियोदाता, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे दस? सम्मादिट्ठि, सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा, सम्माकम्मन्तो, सम्मा-आजीवो, सम्मावायामो, सम्मासति, सम्मासमाधि, सम्माञाणं, सम्माविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, दस धम्मा परिसुद्धा परियोदाता, नाञ्ञत्र सुगतविनया" ति॥ ●

२. **दुतियसुत्तं** : १. "दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा अनुपन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे दस? सम्मादिट्ठि, ...पे०... सम्माविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, [R.238] दस धम्मा अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया" ति॥ ●

३. **ततियसुत्तं** : १. "दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा महप्फला महानिसंसा, [B.451] नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे दस? सम्मादिट्ठि, ...पे०... सम्माविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, दस धम्मा महप्फला महानिसंसा, नाञ्ञत्र सुगतविनया" ति॥ ●

४. **चतुत्थसुत्तं** : १. "दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा रागविनयपरियोसाना होन्ति दोसविनयपरियोसाना होन्ति मोहविनयपरियोसाना होन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे दस? सम्मादिट्ठि, ...पे०... सम्माविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, दस धम्मा [N.295] रागविनयपरियोसाना होन्ति दोसविनयपरियोसाना होन्ति मोहविनयपरियोसाना होन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया" ति॥ ●

---

१३. परिशुद्धवर्ग

१. प्रथमसूत्र : : **सौगत विनय में दश परिशुद्ध धर्म**

१. "भिक्षुओ! ये दश परिशुद्ध एवं पर्यवदात धर्म सौगत विनय से अन्यत्र कहीं नहीं मिलते। कौन से दश? सम्यग्दृष्टि, सम्यक्सङ्कल्प, सम्यग्वाक्, सम्यक्कर्मान्त, सम्यगाजीव, सम्यग्व्यायाम, सम्यक्स्मृति, सम्यक्समाधि, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! ये दश धर्म परिशुद्ध एवं पर्यवदात हैं और ये सौगतविनय से अन्यत्र कहीं नहीं मिलते॥" ●

२. द्वितीयसूत्र : : **सौगत विनय में दश उत्पन्न धर्म**

१. "भिक्षुओ! ये दश धर्म सौगत विनय में, अनुत्पन्न हुए भी, उत्पन्न हो जाते हैं। कौन से दश? सम्यग्दृष्टि...सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! ये दश धर्म पहले अनुत्पन्न होते हुए सौगतविनय की साधना करने से उत्पन्न हो जाते हैं॥" ●

३. तृतीयसूत्र : : **विशेष माहात्म्य वाले दश धर्म**

१. "भिक्षुओ! सौगतविनय में ये दश धर्म अतिशय फल एवं माहात्म्य वाले होते हैं। कौन से दश? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—...पूर्ववत्... ॥" ●

४. चतुर्थसूत्र : : **रागादिशामक दश धर्म**

१. "भिक्षुओ! सौगतविनय में ये दशधर्म राग, द्वेष एवं मोह का अन्त करके ही छोड़ते हैं। कौन से दश धर्म? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—ये दश धर्म, सौगतविनयानुसार साधना करने पर, राग, द्वेष, मोह का नाश करके ही छोड़ते हैं॥" ●

५. पञ्चमसुत्तं : १. "दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे दस? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, दस धम्मा एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया" ति॥ ●

६. छट्ठसुत्तं : १. "दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा भाविता बहुलीकता अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे दस? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—इमे खो, [R.239] भिक्खवे, दस धम्मा भाविता बहुलीकता अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया" ति॥ ●

७. सत्तमसुत्तं : १. "दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे दस? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, दस धम्मा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा, नाञ्ञत्र सुगतविनया" ति॥ ●

[B.452] **८. अट्ठमसुत्तं :** १. "दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा भाविता बहुलीकता रागविनयपरियोसाना होन्ति दोसविनयपरियोसाना होन्ति मोहविनयपरियोसाना होन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे दस? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, दस [N.296] धम्मा भाविता बहुलीकता रागविनयपरियोसाना होन्ति दोसविनयपरियोसाना होन्ति मोहविनयपरियोसाना होन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया" ति॥ ●

---

५. पञ्चमसूत्र : : वैराग्य आदि में उपयोगी दश धर्म

१. "भिक्षुओ! सौगतविनयानुसार साधना करने पर ये दश धर्म संसार के प्रति एकान्ततः अरुचि, वैराग्य, निरोध, उपशम, अभिज्ञा, सम्बोधि एवं निर्वाण तक पहुँचाने वाले होते हैं। कौन से दश? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! सौगतविनयानुसार साधना करने पर ये दश धर्म ...पूर्ववत्... ॥" ●

६. षष्ठसूत्र : : अनुत्पन्न दश धर्मों की उत्पत्ति

१. "भिक्षुओ! पहले अनुत्पन्न भी ये दशधर्म सौगत विनय में साधना करने से उत्पन्न हो जाते हैं। कौन से दश? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! ये दश धर्म पहले अनुत्पन्न हुए भी, सौगतविनयानुसार साधना करने पर, उत्पन्न हो जाते हैं॥" ●

७. सप्तमसूत्र : : अतिशय फलप्रद दश धर्म

१. "भिक्षुओ! ये दश धर्म, सौगतविनयानुसार साधना करने पर, अतिशय फलप्रद एवं माहात्म्य वाले होते हैं। कौन से दश? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! ये दश धर्म... पूर्ववत्... माहात्म्य वाले होते हैं॥" ●

८. अष्टमसूत्र : : रागादि के नाशक दश धर्म

१. "भिक्षुओ! ये दश धर्म, सौगतविनयानुसार, अभ्यस्त एवं वृद्धिङ्गत किये जाने पर, साधक

९. नवमसुत्तं : १. ''दसयिमे, भिक्खवे, धम्मा भाविता बहुलीकता एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे दस? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, दस धम्मा भाविता बहुलीकता एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया'' ति॥ ●

९. दसमसुत्तं : १. ''दसयिमे, भिक्खवे, मिच्छत्ता। कतमे दस? मिच्छा-[R.240] दिट्ठि, मिच्छासङ्कप्पो, मिच्छावाचा, मिच्छाकम्मन्तो, मिच्छाआजीवो, मिच्छावायामो, मिच्छासति, मिच्छासमाधि, मिच्छाञाणं, मिच्छाविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, दस मिच्छत्ता'' ति॥ ●

११. एकादसमसुत्तं : १. ''दसयिमे, भिक्खवे, सम्मत्ता। कतमे दस? सम्मादिट्ठि, सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा, सम्माकम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मावायामो, सम्मासति, सम्मासमाधि, सम्माञाणं, सम्माविमुत्ति—इमे खो, भिक्खवे, दस सम्मत्ता'' ति॥ ●

परिसुद्धवग्गो तेरसमो॥

के राग, द्वेष एवं मोह को विनष्ट कर देते हैं। कौन से दश? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति। ये दश धर्म ...पूर्ववत्... ।'' ●

९. नवमसूत्र : : वैराग्यादि के उत्प्रेरक दश धर्म

१. ''भिक्षुओ! सौगतविनयानुसार साधना करने से अभ्यस्त एवं वृद्धिङ्गत किये ये धर्म एकान्त निर्विदा, वैराग्य, निरोध, उपशम, अभिज्ञा, सम्बोधि, एवं निर्वाण की ओर उत्प्रेरक होते हैं। कौन से दश? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यविमुक्ति—भिक्षुओ! सौगतविनयानुसार ...पूर्ववत्... उत्प्रेरक होते हैं॥'' ●

१०. दशमसूत्र : : दश मिथ्यात्व

१. ''भिक्षुओ! ये दश मिथ्यात्व हैं। कौन से दश? मिथ्यादृष्टि, मिथ्यासङ्कल्प, मिथ्यावाक्, मिथ्याकर्मान्त, मिथ्याआजीव, मिथ्याव्यायाम, मिथ्यास्मृति, मिथ्यासमाधि, मिथ्याज्ञान एवं मिथ्याविमुक्ति। भिक्षुओ! ये दश मिथ्यात्व हैं॥'' ●

११. एकादशसूत्र : : दश सम्यक्त्व

१. ''भिक्षुओ! ये दश सम्यक्त्व कहलाते हैं। कौन से दश? सम्यग्दृष्टि, सम्यक्सङ्कल्प, सम्यग्वाक्, सम्यक्कर्मान्त, सम्यगाजीव, सम्यग्व्यायाम, सम्यक्स्मृति, सम्यक्समाधि, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! ये दश सम्यक्त्व कहलाते हैं॥'' ●

परिशुद्धिवर्ग त्रयोदश सम्पन्न॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. प्रथमसूत्र, २. द्वितीयसूत्र, ३. तृतीयसूत्र, ४. चतुर्थसूत्र, ५. पञ्चमसूत्र, ६. षष्ठसूत्र, ७. सप्तमसूत्र, ८. अष्टमसूत्र, ९. नवमसूत्र, १०. दशमसूत्र एवं ११. एकादशसूत्र॥ ●

१४. साधुवग्गो

१. साधुसुत्तं : [B.453] १. ''साधुं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि असाधुं च। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

[N.297] २. ''कतमं च, भिक्खवे, असाधु? मिच्छादिट्ठि, मिच्छासङ्कप्पो, मिच्छावाचा, मिच्छाकम्मन्तो, मिच्छाआजीवो, मिच्छावायामो, मिच्छासति, मिच्छासमाधि, मिच्छाञाणं, मिच्छाविमुत्ति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, असाधु। कतमं च, भिक्खवे, साधु? सम्मादिट्ठि, [R.241] सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा सम्माकम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मावायामो, सम्मासति, सम्मासमाधि, सम्माञाणं, सम्माविमुत्ति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, साधू'' ति॥ ●

२. अरियधम्मसुत्तं : १. ''अरियधम्मं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि अनरियधम्मं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, अनरियो धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अनरियो धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, अरियो धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियो धम्मो'' ति॥ ●

३. अकुसलसुत्तं : १. ''अकुसलं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि कुसलं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमं च, भिक्खवे, अकुसलं? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, अकुसलं। कतमं च, भिक्खवे, कुसलं? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, कुसलं'' ति॥ ●

---

१४. साधुवर्ग

१. साधुसूत्र : : 'साधु' एवं 'असाधु' का व्याख्यान

१. ''भिक्षुओ! अब मैं तुमको 'साधु' के विषय में बताऊँगा, 'असाधु' के विषय में भी। उसको तुम ध्यानपूर्वक सुनो, और मन में बैठा लो। बताता हूँ।'' ...पूर्ववत्...। भगवान् ने यह देशना की—

२. ''भिक्षुओ! असाधु कौन है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति। भिक्षुओ! ये 'असाधु' कहलाते हैं। और साधु कौन हैं? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति। भिक्षुओ! ये 'साधु' कहलाते हैं॥'' ●

२. आर्यधर्मसूत्र : : दश आर्य धर्म एवं दश अनार्य धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको दश आर्य धर्मों एवं दश अनार्य धर्मों की देशना करूँगा। उसको तुम ध्यान से सुन लो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! अनार्य धर्म कौन होता है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! ये अनार्य धर्म कहलाते हैं। और, भिक्षुओ! आर्यधर्म क्या है? सम्यग्दृष्टि... सम्यग्विमुक्ति। भिक्षुओ! ये आर्यधर्म कहलाते हैं।'' ●

३. अकुशलसूत्र : : दश अकुशल एवं दश कुशल

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको 'अकुशल' एवं 'कुशल' की देशना करूँगा। उसको सुनो और

४. अत्थसुत्तं : १. "अत्थं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि अनत्थं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, अनत्थो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अनत्थो। कतमो च, भिक्खवे, अत्थो? सम्मादिट्ठि ...पे०... [R.242] सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अत्थो" ति॥ ●

५. धम्मसुत्तं : १. "धम्मं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि अधम्मं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, अधम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—[B.454] अयं वुच्चति, भिक्खवे, अधम्मो। कतमो च, भिक्खवे, धम्मो? सम्मादिट्ठि [N.298] ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, धम्मो" ति॥ ●

६. सासवसुत्तं : १. "सासवं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि अनासवं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, सासवो धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छा-विमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सासवो धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, अनासवो धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अनासवो धम्मो" ति॥ ●

७. सावज्जसुत्तं : १. "सावज्जं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि अनवज्जं च। तं

...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! 'अकुशल' कौन होता है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'अकुशल' होता है। और, भिक्षुओ! 'कुशल' कौन होता है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'कुशल' कहलाता है॥" ●

४. अर्थसूत्र : : दश अनर्थ एवं अर्थ

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको 'अर्थ' एवं 'अनर्थ' की देशना करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! 'अनर्थ' कौन होता है? मिथ्यादृष्टि...मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'अनर्थ' कहलाता है। और, भिक्षुओ! 'अर्थ' क्या कहलाता है? सम्यग्दृष्टि...सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'अर्थ' कहलाता है॥" ●

५. धर्मसूत्र : : धर्म एवं अधर्म

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको 'धर्म' एवं 'अधर्म' का व्याख्यान करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह 'अधर्म' क्या होता है? मिथ्यादृष्टि...मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'अधर्म' कहलाता है। और, भिक्षुओ! 'धर्म' क्या कहलाता है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—यह 'धर्म' कहलाता है॥" ●

६. साश्रवसूत्र : : साश्रव एवं अनाश्रव धर्म

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको दश 'साश्रव' धर्मों की तथा दश 'अनाश्रव' धर्मों की देशना करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह 'साश्रव' धर्म कौन होता है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'साश्रव' धर्म कहलाता है। और भिक्षुओ! 'अनाश्रव' धर्म क्या कहलाता है? सम्यग्दृष्टि... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह अनाश्रव धर्म कहलाता है॥" ●

७. सावद्यसूत्र : : सदोष एवं निर्दोष धर्म

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको 'सावद्य' (सदोष) धर्म एवं निरवद्य (निर्दोष) धर्म की देशना

सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, सावज्जो धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सावज्जो धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, अनवज्जो धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अनवज्जो धम्मो'' ति॥ ●

[R.243] **८. तपनीयसुत्तं :** १. ''तपनीयं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि अतपनीयं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, तपनीयो धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, तपनीयो धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, अतपनीयो धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अतपनीयो धम्मो'' ति॥ ●

९. आचयगामिसुत्तं : १. ''आचयगामिं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि अपचयगामिं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, आचयगामी धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, आचयगामी धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, [N.299, B.455] अपचयगामी धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अपचयगामी धम्मो'' ति॥ ●

१०. दुक्खुद्रयसुत्तं : १. ''दुक्खुद्रयं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि सुखुद्रयं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, दुक्खुद्रयो धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०...

करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह सावद्य धर्म कौन होता है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह कहलाता है 'सावद्य' धर्म। और, भिक्षुओ! 'निरवद्य' धर्म कौन कहलाता है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'निरवद्य' धर्म कहलाता है॥'' ●

८. तपनीयसूत्र : : तपनीय एवं अतपनीय धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको 'तपनीय' (कष्टदायी) एवं 'अतपनीय' (सुखदायी) धर्म की देशना करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह 'तपनीय' धर्म कौन होता है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'तपनीय' धर्म होता है। और, भिक्षुओ! 'अतपनीय' धर्म कौन होता है? सम्यग्दृष्टि... सम्यविमुक्ति—भिक्षुओ! यह कहलाता है 'अतपनीय' धर्म॥'' ●

९. आचयगामिसूत्र : : आचयगामी एवं निचयगामी धर्म

१. भिक्षुओ! अब मैं तुमको 'आचयगामी' (चित्त के मिथ्याविकारों को संगृहीत करने वाले) धर्म एवं 'अपचयगामी' (जन्ममरण-निरोधक) धर्म की देशना करूँगा। उसे सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! कौन धर्म 'आचयगामी' होता है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह धर्म 'आचयगामी' होता है। और, भिक्षुओ! कौन धर्म अपचयगामी होता है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—यह अपचयगामी धर्म कहलाता है॥'' ●

१०. दुःखोद्रयसूत्र : : दुःखोद्रय एवं सुखोद्रय धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको दुःखोद्रय (दुःखकारण) तथा सुखोद्रय (सुखकारण) धर्मों की देशना करूँगा। उसे सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! दुःखोद्रय धर्म कौन-सा होता है? मिथ्यादृष्टि....

मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खुद्रयो धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, सुखुद्रयो धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सुखुद्रयो धम्मो'' ति॥

११. दुक्खविपाकसुत्तं : १. ''दुक्खविपाकं च वो, भिक्खवे, धम्मं [R.244] देसेस्सामि सुखविपाकं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, दुक्खविपाको धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खविपाको धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, सुखविपाको धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सुखविपाको धम्मो'' ति॥ ●

साधुवग्गो चुद्दसमो॥

१५. अरियवग्गो

१. अरियमग्गसुत्तं : १. ''अरियमग्गं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि अनरियमग्गं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, अनरियो मग्गो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अनरियो मग्गो। कतमो च, भिक्खवे, अरियो मग्गो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियो मग्गो'' ति॥ ●

मिथ्याविमुक्ति—यह धर्म, भिक्षुओ! दुःखोद्रय होता है। तथा, भिक्षुओ! सुखोद्रय धर्म कौन होता है? सम्यग्दृष्टि... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह सुखोद्रय धर्म होता है॥'' ●

११. दुःखविपाकसूत्र : : दुःखविपाक एवं सुखविपाक धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको दुःखविपाक (दुःखमयफलप्रद) धर्म की देशना करूँगा, साथ ही सुखविपाक (सुखमयफलप्रद) धर्म की भी। उसे सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! कौन धर्म दुःखविपाक होता है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह दुःखविपाक धर्म है। और, भिक्षुओ! सुखविपाक धर्म कौन है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह सुखविपाक धर्म है॥''

साधुवर्ग चतुर्दश सम्पन्न॥ ●

[इस वर्ग का उदान भी पालिपाठ में नहीं है। आगे भी सब वर्गों की यही स्थिति है।]

१५. आर्यवर्ग

१. आर्यमार्गसूत्र : : आर्यमार्ग एवं अनार्यमार्ग

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको 'आर्यमार्ग' एवं 'अनार्यमार्ग' धर्म की देशना करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! अनार्यमार्ग कौन सा होता है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! इसको 'अनार्यमार्ग' कहते हैं। और, भिक्षुओ! 'आर्यमार्ग' किसको कहते हैं? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह कहलाता है 'आर्यमार्ग'॥'' ●

[N.300] **२. कण्हमग्गसुत्तं :** १. ''कण्हमग्गं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि सुक्कमग्गं [R.245] च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, कण्हमग्गो? मिच्छादिट्ठि [B.456] ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, कण्हमग्गो। कतमो च, भिक्खवे, सुक्कमग्गो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सुक्कमग्गो'' ति॥ ●

३. सद्धम्मसुत्तं : १. ''सद्धम्मं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि असद्धम्मं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, असद्धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, असद्धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, सद्धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सद्धम्मो'' ति॥ ●

४. सप्पुरिसधम्मसुत्तं : १. ''सप्पुरिसधम्मं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि असप्पुरिसधम्मं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, असप्पुरिसधम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, असप्पुरिसधम्मो। कतमो च, भिक्खवे, सप्पुरिसधम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सप्पुरिसधम्मो'' ति॥ ●

५. उप्पादेतब्बसुत्तं : १. ''उप्पादेतब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि न

---

२. कृष्णमार्गसूत्र : : कृष्णमार्ग एवं शुक्लमार्ग

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको 'कृष्णमार्ग-धर्म' एवं 'शुक्लमार्ग-धर्म' की देशना करूँगा। उसे सुनो। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! कृष्णमार्ग कौन होता है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'कृष्णमार्ग' होता है। और, भिक्षुओ! 'शुक्लमार्ग' क्या होता है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! इसको कहते हैं—शुक्लमार्ग॥'' ●

३. सद्धर्मसूत्र : : सद्धर्म एवं असद्धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको 'सद्धर्म' एवं 'असद्धर्म' की देशना करूँगा। उसे सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! 'असद्धर्म' कौन सा होता है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह होता है 'असद्धर्म'। और, भिक्षुओ! 'सद्धर्म' कौन सा होता है? सम्यग्दृष्टि... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह कहलाता है 'सद्धर्म'॥'' ●

४. सत्पुरुषधर्मसूत्र : : सत्पुरुषधर्म एवं असत्पुरुष धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको 'सत्पुरुषधर्म' एवं 'असत्पुरुषधर्म' की देशना करूँगा। उसे सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह 'असत्पुरुषधर्म' कौन सा होता है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्या-विमुक्ति...भिक्षुओ! यह 'असत्पुरुषधर्म' कहलाता है। और, भिक्षुओ! 'सत्पुरुषधर्म' कौन कहलाता है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह कहलाता है 'सत्पुरुष-धर्म'॥'' ●

५. उत्पादयितव्यसूत्र : : उत्पादनीय एवं अनुत्पादनीय धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको 'उत्पादयितव्य' (उत्पन्न करने योग्य) धर्म एवं 'न उत्पादयितव्य'

उप्पादेतब्बं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, न उप्पादेतब्बो धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, न उप्पादेतब्बो धम्मो। कतमो च, [B.246] भिक्खवे, उप्पादेतब्बो धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, उप्पादेतब्बो धम्मो'' ति॥ ●

६. आसेवितब्बसुत्तं : १. ''आसेवितब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि न आसेवितब्बं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, न आसेवितब्बो धम्मो? [N.301] मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, न आसेवितब्बो धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, आसेवितब्बो धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, आसेवितब्बो धम्मो'' ति॥ ●

७. भावेतब्बसुत्तं : १. ''भावेतब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि न भावेतब्बं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, न भावेतब्बो धम्मो? मिच्छादिट्ठि [B.457] ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, न भावेतब्बो धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, भावेतब्बो धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, भावेतब्बो धम्मो'' ति॥ ●

८. बहुलीकातब्बसुत्तं : १. ''बहुलीकातब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि न

(न उत्पन्न करने योग्य) धर्म की देशना करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! कौन सा धर्म 'न उत्पादयितव्य' धर्म है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'न उत्पादयितव्य' धर्म है। और, भिक्षुओ! 'उत्पादयितव्य' धर्म कौन है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'उत्पादयितव्य' धर्म है॥'' ●

६. आसेवितव्यसूत्र : : आसेवनीय एवं अनासेवनीय धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको 'आसेवनीय' (आचरणीय) धर्म एवं 'अनासेवनीय' (अनाचरणीय) धर्म की देशना करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह 'अनासेवनीय' धर्म कौन है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह 'अनासेवनीय' धर्म है। और, भिक्षुओ! 'आसेवनीय' धर्म कौन है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—यह, भिक्षुओ! 'आसेवनीय' धर्म है॥'' ●

७. भावयितव्यसूत्र : :भावना करने योग्य तथा न भावना करने योग्य धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको भावना (साधनाभ्यास) करने योग्य तथा न भावना करने योग्य धर्म की देशना करूँगा। उसे सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! कौन सा धर्म न भावना करने योग्य है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह धर्म न भावना करने योग्य है। और, भिक्षुओ! कौन धर्म भावना करने योग्य है? सम्यग्दृष्टि...सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह धर्म भावना करने योग्य है॥'' ●

८. बहुलीकर्त्तव्यसूत्र : :वृद्धि करने योग्य तथा न वृद्धि करने योग्य धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको बहुलीकरण (वृद्धि) योग्य एवं न बहुलीकरणयोग्य धर्म की देशना

बहुलीकातब्बं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, न बहुलीकातब्बो धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, न बहुलीकातब्बो धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, बहुलीकातब्बो धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, बहुलीकातब्बो धम्मो'' ति॥ ●

[R.247] **९. अनुस्सरितब्बसुत्तं :** १. ''अनुस्सरितब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि न अनुस्सरितब्बं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, न अनुस्सरितब्बो धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, न अनुस्सरितब्बो धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, अनुस्सरितब्बो धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अनुस्सरितब्बो धम्मो'' ति॥ ●

[N.302] **१०. सच्छिकातब्बसुत्तं :** १. ''सच्छिकातब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि न सच्छिकातब्बं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, न सच्छिकातब्बो धम्मो? मिच्छादिट्ठि ...पे०... मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, न सच्छिकातब्बो धम्मो। कतमो च, भिक्खवे, सच्छिकातब्बो धम्मो? सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सच्छिकातब्बो धम्मो'' ति॥ ●

अरियवग्गो पन्नरसमो॥

ततियो पण्णासको समत्तो॥

करूँगा। उसे सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह न वृद्धियोग्य धर्म कौन है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह धर्म न वृद्धि करने योग्य है। और, भिक्षुओ! कौन धर्म वृद्धि करने योग्य है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! ये धर्म वृद्धि करने योग्य हैं॥'' ●

९. अनुस्मर्तव्यसूत्र : : स्मरणीय एवं अस्मरणीय धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको अनुस्मरणीय (स्मृतियोग्य) एवं न अनुस्मरणीय (न स्मृतियोग्य) धर्म की देशना करूँगा। उसे सुनो...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह न अनुस्मरणीय धर्म कौन है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह न अनुस्मरणीय धर्म है। और, भिक्षुओ! यह अनुस्मरणीय धर्म कौन है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—यह अनुस्मरणीय धर्म है॥'' ●

१०. साक्षात्करणीयसूत्र : : साक्षात्करणीय एवं असाक्षात्करणीय धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको साक्षात्करणीय धर्म एवं असाक्षात्करणीय धर्म की देशना करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह असाक्षात्करणीय धर्म कौन है? मिथ्यादृष्टि ...पूर्ववत्... मिथ्याविमुक्ति—भिक्षुओ! यह असाक्षात्करणीय धर्म है। और, भिक्षुओ! साक्षात्करणीय धर्म कौन है? सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यग्विमुक्ति—भिक्षुओ! यह साक्षात्करणीय धर्म है॥'' ●

आर्यवर्ग पञ्चदश सम्पन्न॥

तृतीय पञ्चाशत्क सम्पन्न॥ ●

१६. पुग्गलवग्गो

चतुत्थो पण्णासको

१. सेवितब्बसुत्तं : १. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो न [B.458] सेवितब्बो। कतमेहि दसहि? मिच्छादिट्ठिको होति, मिच्छासङ्कप्पो होति, मिच्छा- [R.248] वाचो होति, मिच्छाकम्मन्तो होति, मिच्छाआजीवो होति, मिच्छावायामो होति, मिच्छासति होति, मिच्छासमाधि होति, मिच्छाञाणी होति, मिच्छाविमुत्ति होति—इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो न सेवितब्बो।

२. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो सेवितब्बो। कतमेहि दसहि? सम्मादिट्ठिको होति, सम्मासङ्कप्पो होति, सम्मावाचो होति, सम्माकम्मन्तो होति, सम्माआजीवो होति, सम्मावायामो होति, सम्मासति होति, सम्मासमाधि होति, सम्माञाणी होति, सम्माविमुत्ति होति—इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो सेवितब्बो" ति॥ ●

२-१२. भजितब्बादिसुत्तानि : १. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो न भजितब्बो ...पे०... भजितब्बो ...पे०... न पयिरुपासितब्बो... पयिरुपासितब्बो ...पे०... न पुज्जो होति... पुज्जो होति ...पे०... न पासंसो होति... पासंसो होति ...पे०... अगारवो होति... सगारवो होति ...पे० ... अप्पतिस्सो होति... सप्पतिस्सो होति [N.303]

---

१६. पुद्गलवर्ग

चतुर्थ पञ्चाशत्क

१. सेवितव्यसूत्र : : **सेवनीय, असेवनीय पुद्गल**

१. "भिक्षुओ! दश धर्मों से युक्त पुद्गल का साथ (सङ्गति) नहीं करना चाहिये। किन दश धर्मों से युक्त? जो मिथ्यादृष्टि हो, मिथ्यासङ्कल्प हो, मिथ्यावाक् हो, मिथ्याकर्मान्त हो, मिथ्याआजीव हो, मिथ्याव्यायाम हो, मिथ्यास्मृति हो, मिथ्यासमाधि हो, मिथ्याज्ञानी हो एवं मिथ्याविमुक्त हो—भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त पुद्गल का साथ नहीं करना चाहिये।

२. (परन्तु) "भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त पुद्गल का साथ करना चाहिये। किन दश धर्मों से युक्त? जो सम्यग्दृष्टि, सम्यक्सङ्कल्प, सम्यग्वाक्, सम्यक्कर्मान्त, सम्यगाजीव, सम्यग्व्यायाम, सम्यक्स्मृति, सम्यक्समाधि, सम्यग्ज्ञानी एवं सम्यग्विमुक्त हो—इन दश धर्मों से युक्त पुद्गल का साथ अवश्य करना चाहिये॥" ●

२-१२. भजनीयादिसूत्र : : **सेवनीय असेवनीय आदि धर्मयुक्त पुद्गल**

१. "भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त पुद्गल की सेवा नहीं करनी चाहिये...करनी चाहिये... पूर्ववत्...उपासना नहीं करनी चाहिये...उपासना करनी चाहिये ...पूर्ववत्... वह पूज्य नहीं होता...वह पूज्य होता है ...पूर्ववत्... उसकी प्रशंसा नहीं होती...प्रशंसा होती है ...पूर्ववत्... गौरव (सम्मान) नहीं होता...गौरव होता है ...पूर्ववत्... विद्रोही हो जाता है...विद्रोही नहीं होता

...पे०... न आराधको होति... आराधको होति ...पे०... न विसुज्झति... विसुज्झति ...पे०... मानं नाधिभोति... मानं अधिभोति ...पे०... पञ्ञाय न वड्ढति... पञ्ञाय वड्ढति ...पे०...।
[B.249]

२. "बहुं अपुञ्ञं पसवति... बहुं पुञ्ञं पसवति। कतमेहि दसहि? सम्मादिट्ठिको होति, सम्मासङ्कप्पो होति, सम्मावाचो होति, सम्माकम्मन्तो होति, सम्माआजीवो होति, सम्मावायामो होति, सम्मासति होति, सम्मासमाधि होति, सम्माञाणी होति, सम्माविमुत्ति होति—इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो बहुं पुञ्ञं पसवती" ति॥ ●

पुग्गलवग्गो सोळसमो॥

१७. जाणुस्सोणिवग्गो

१. ब्राह्मणपच्चोरोहणीसुत्तं : १. तेन खो पन समयेन जाणुस्सोणि ब्राह्मणो तदहुपोसथे सीसंन्हातो नवं खोमयुगं निवत्थो अल्लकुसमुट्ठिं आदाय भगवतो अविदूरे एकमन्तं ठितो होति। अद्दसा खो भगवा जाणुस्सोणिं ब्राह्मणं तदहुपोसथे सीसंन्हातं नवं खोमयुगं निवत्थं अल्लकुसमुट्ठिं आदाय एकमन्तं ठितं। दिस्वान जाणुस्सोणिं ब्राह्मणं एतदवोच—

२. "किं नु त्वं, ब्राह्मण, तदहुपोसथे सीसंन्हातो नवं खोमयुगं निवत्थो अल्ल-कुसमुट्ठिं आदाय एकमन्तं ठितो? किं न्वज्ज ब्राह्मणकुलस्सा" ति?

...पूर्ववत्... आराधक नहीं होता...आराधक होता है ...पूर्ववत्... शुद्ध नहीं होता...शुद्ध होता है...सम्मान प्राप्त नहीं करता...सम्मान प्राप्त करता है ...पूर्ववत्... प्रज्ञावृद्धि नहीं होती...प्रज्ञावृद्धि होती है ...पूर्ववत्...।

२. "बहुत अपुण्य (पाप) का भागी होता है...बहुत पुण्य का भागी होता है। किन दश से? सम्यग्दृष्टि होता है, सम्यक्सङ्कल्प होता है, सम्यग्वाक्, सम्यक्कर्मान्त, सम्यगाजीव, सम्यग्व्यायाम, सम्यक्स्मृति, सम्यक्समाधि, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यग्विमुक्ति होता है—भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त पुद्गल बहुत पुण्य का भागी होता है॥" **पुद्गलवर्ग षोडश सम्पन्न॥** ●

१७. जानुश्रोणिवर्ग

१. ब्राह्मणप्रत्यवरोहिणीसूत्र : : दश पापधर्मों से संलग्न रहना

१-२. उस समय जानुश्रोणि ब्राह्मण उपोसथ के दिन...पूर्ववत्[१]...। भगवान् ने यह धर्मोपदेश किया—

---

१. द्र० पीछे-दशम निपात, १२ व०, ७ सू०।

"पच्चोरोहणी, भो गोतम, अज्ज ब्राह्मणकुलस्सा" ति।

"यथा कथं पन, ब्राह्मण, ब्राह्मणानं पच्चोरोहणी होति" ति? [R.250]

"इध, भो गोतम, ब्राह्मणा तदहुपोसथे सीसंन्हाता नवं खोमयुगं निवत्था अल्लेन गोमयेन पथविं ओपुञ्जित्वा हरितेहि कुसेहि पत्थरित्वा अन्तरा च वेलं अन्तरा च अग्यागारं सेय्यं कप्पेन्ति। ते तं रत्तिं तिक्खत्तुं पच्चुट्ठाय पञ्जलिका अग्गिं नमस्सन्ति—[N.304] 'पच्चोरोहाम भवन्तं, पच्चोरोहाम भवन्तं' ति। बहुकेन च सप्पितेलनवनीतेन अग्गिं सन्तप्पेन्ति। तस्सा च रत्तिया अच्चयेन पणीतेन खादनीयेन भोजनीयेन ब्राह्मणे सन्तप्पेन्ति। एवं, भो गोतम, ब्राह्मणानं पच्चोरोहणी होती" ति।

"अञ्ञथा खो, ब्राह्मण, ब्राह्मणानं पच्चोरोहणी होति, अञ्ञथा च पन अरियस्स विनये पच्चोरोहणी होती" ति।

"यथा कथं पन, भो गोतम, अरियस्स विनये पच्चोरोहणी होति? साधु मे [B.460] भवं गोतमो तथा धम्मं देसेतु यथा अरियस्स विनये पच्चोरोहणी होती" ति।

"तेन हि, ब्राह्मण, सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी" ति। "एवं, भो" ति खो जाणुस्सोणि ब्राह्मणो भगवतो पच्चस्सोसि। भगवा एतदवोच—

३. "इध, ब्राह्मण, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'पाणातिपातस्स खो पापको विपाको दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा' ति। सो इति पटिसङ्खाय पाणातिपातं पजहति; पाणातिपाता पच्चोरोहति।

...अदिन्नादानस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय अदिन्नादानं पजहति; अदिन्नादाना पच्चोरोहति।

...कामेसुमिच्छाचारस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय कामेसुमिच्छाचारं पजहति; कामेसुमिच्छाचारा पच्चोरोहति।

...मुसावादस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय मुसावादं पजहति; मुसावादा पच्चोरोहति। [R.251]

...पिसुणाय वाचाय खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय पिसुणं वाचं पजहति; पिसुणाय वाचाय पच्चोरोहति।

---

३. "ब्राह्मण! यहाँ कोई आर्यश्रावक यह चिन्तन करता है—'प्राणातिपात का पापमय फल इसी लोक या परलोक में भोगना ही पड़ता है।' वह यह चिन्तन करता हुआ प्राणातिपात को त्याग देता है, प्राणातिपात से पीछे हट (दूर हो) जाता है। (१)

"...अदत्तादान (चौरी) का पापमय फल ...पूर्ववत्...। (२)

"...कामभोगों में मिथ्याचार (व्यभिचार) का फल ...पूर्ववत्...। (३)

"...मृषावाद (असत्यभाषण) का पापमय फल ...पूर्ववत्...। (४)

"...पिशुनवाणी (चुगलखोरी) का पापमय फल ...पूर्ववत्...। (५)

[N.305] ...फरुसाय वाचाय खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय फरुसं वाचं पजहति; फरुसाय वाचाय पच्चोरोहति।

...सम्फप्पलापस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय सम्फप्पलापं पजहति; सम्फप्पलापा पच्चोरोहति।

[B.461] ...अभिज्झाय खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय अभिज्झं पजहति; अभिज्झाय पच्चोरोहति।

...ब्यापादस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो इति पटिसङ्खाय ब्यापादं पजहति; ब्यापादा पच्चोरोहति।

''इध, ब्राह्मण... पटिसञ्चिक्खति—'मिच्छादिट्ठिया खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा' ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छादिट्ठिं पजहति; मिच्छादिट्ठिया पच्चोरोहति। एवं खो, ब्राह्मण, अरियस्स विनये पच्चोरोहणी होती'' ति।

४. ''अञ्ञथा खो, भो गोतम, ब्राह्मणानं पच्चोरोहणी होति, अञ्ञथा च पन अरियस्स विनये पच्चोरोहणी होति। इमिस्सा, भो गोतम, अरियस्स विनये पच्चोरोहणिया ब्राह्मणानं पच्चोरोहणी कलं नाग्घति सोळसिं। अभिक्कन्तं, भो गोतम ...पे०... उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं'' ति॥

२. अरियपच्चोरोहणीसुत्तं : १. ''अरियं वो, भिक्खवे, पच्चोरोहणिं देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति।

''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खु भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

''...परुष (कठोर) वाणी का पापमय फल ...पूर्ववत्...। (६)

''...सम्प्रलाप (निरर्थक बातचीत) का पापमय फल ...पूर्ववत्...। (७)

''...अभिध्या (लोभ) का पापमय फल ...पूर्ववत्...। (८)

''...व्यापाद (द्वेष) का पापमय फल ...पूर्ववत्...। (९)

''यहाँ, ब्राह्मण! कोई आर्यश्रावक यह सोचता है—'मिथ्यादृष्टि का पापमय फल इस लोक में या परलोक में भोगना ही पड़ता है।' वह यह सोचकर मिथ्यादृष्टि से दूर (पीछे) हट जाता है, मिथ्यादृष्टि को त्याग देता है। ब्राह्मण! हमारे आर्यविनय में यह 'प्रत्यवरोहणी' कहलाती है।'' (१०)

४. ''भो गौतम! ब्राह्मणों के मत में अन्य प्रकार की प्रत्यवरोहणी होती है तथा आर्यविनय में यह अन्य प्रकार की होती है। भो गौतम! आर्यविनय की इस प्रत्यवरोहणी का सोलहवाँ अंश भी ब्राह्मणों की प्रत्यवरोहणी नहीं पा सकती। भो गौतम! आपका यह उपदेश बहुत ही उत्तम है...आज से आप मुझको, मेरे प्राण रहने तक, अपना शरणागत उपासक समझें॥''

२. आर्यप्रत्यवरोहणीसूत्र : : दश पापमय धर्मों से पीछे हटना

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको आर्यविनयसम्मत प्रत्यवरोहणी की देशना करूँगा। उसको सुनो, भलीभाँति मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ। ...पूर्ववत्...। भगवान् बोले—

२. "कतमा च, भिक्खवे, अरिया पच्चोरोहणी? इध, भिक्खवे, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'पाणातिपातस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे [R.252] अभिसम्परायं चा' ति। सो इति पटिसङ्खाय पाणातिपातं पजहति; पाणातिपाता पच्चोरोहति। ...अदिन्नादानस्स खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा ति। सो [N.306] इति पटिसङ्खाय अदिन्नादानं पजहति; अदिन्नादाना पच्चोरोहति।

...कामेसुमिच्छाचारस्स खो पापको विपाको ...पे०... कामेसुमिच्छाचारा पच्चोरोहति।

...मुसावादस्स खो पापको विपाको ...पे०... मुसावादा पच्चोरोहति। [B.462]

...पिसुणाय वाचाय खो पापको विपाको ...पे०... पिसुणाय वाचाय पच्चोरोहति।

...फरुसाय वाचाय खो पापको विपाको ...पे०... फरुसाय वाचाय पच्चोरोहति।

... सम्फप्पलापस्स खो पापको विपाको ...पे०... सम्फप्पलापा पच्चोरोहति।

... अभिज्झाय खो पापको विपाको ...पे०... अभिज्झाय पच्चोरोहति।

... ब्यापादस्स खो पापको विपाको ...पे०... ब्यापादा पच्चोरोहति।

"इध, भिक्खवे... पटिसञ्चिक्खति—'मिच्छादिट्ठिया खो पापको विपाको—दिट्ठे चेव धम्मे अभिसम्परायं चा' ति। सो इति पटिसङ्खाय मिच्छादिट्ठिं पजहति; मिच्छादिट्ठिया पच्चोरोहति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरिया पच्चोरोहणी" ति॥ ●

३. सङ्गारवसुत्तं : १. अथ खो सङ्गारवो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सङ्गारवो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—

२. "किं नु खो, भो गोतम, ओरिमं तीरं, किं पारिमं तीरं" ति?

"पाणातिपातो खो, ब्राह्मण, ओरिमं तीरं, पाणातिपाता वेरमणी पारिमं तीरं। अदिन्नादानं खो, ब्राह्मण, ओरिमं तीरं, अदिन्नादाना वेरमणी पारिमं तीरं। कामेसुमिच्छाचारो ओरिमं तीरं, कामेसुमिच्छाचारा वेरमणी पारिमं तीरं। मुसावादो ओरिमं तीरं, [N.307]

---

२. "भिक्षुओ! आर्यप्रत्यवरोहणी किसे कहते हैं ...पूर्वसूत्रवत्...। (विस्तार कर लें।) ●

३. सङ्गारवसूत्र : :भवसागर का यह किनारा और वह किनारा

१. कभी सङ्गारव ब्राह्मण भगवान् के पास आया, तथा उनसे कुशलमङ्गल पूछकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उस ब्राह्मण ने भगवान् से यह जिज्ञासा की—

२. "भो गौतम! 'इस पार का किनारा' क्या होता है और उस पार का किनारा' क्या होता है?"

"ब्राह्मण! प्राणातिपात इस पार का किनारा होता है और प्राणातिपातविरति उस पार का किनारा। अदत्तादान इस पार का किनारा और अदत्तादानविरति उस पार का किनारा। कामों में मिथ्याचार (व्यभिचार) इस पार का किनारा औ व्यभिचार से विरति उस पार का किनारा। मृषावाद

मुसावादा वेरमणी पारिमं तीरं। पिसुणा वाचा ओरिमं तीरं, पिसुणाय वाचाय वेरमणी पारिमं तीरं। फरुसा वाचा ओरिमं तीरं, फरुसाय वाचाय वेरमणी पारिमं तीरं। सम्फप्पलापो ओरिमं तीरं, सम्फप्पलापा वेरमणी पारिमं तीरं। अभिज्झा ओरिमं तीरं, अनभिज्झा पारिमं तीरं। ब्यापादो ओरिमं तीरं, अब्यापादो पारिमं तीरं। मिच्छादिट्ठि ओरिमं तीरं, सम्मादिट्ठि पारिमं तीरं। इदं खो, ब्राह्मण, ओरिमं तीरं, इदं पारिमं तीरं ति।

[B.463, R.253] ''अप्पका ते मनुस्सेसु, ये जना पारगामिनो।
अथायं इतरा पजा, तीरमेवानुधावति॥
''ये च खो सम्मदक्खाते, धम्मे धम्मानुवत्तिनो।
ते जना पारमेस्सन्ति, मच्चुधेय्यं सुदुत्तरं॥
''कण्हं धम्मं विप्पहाय, सुक्कं भावेथ पण्डितो।
ओका अनोकमागम्म, विवेके यत्थ दूरमं॥
''तत्राभिरतिमिच्छेय्य, हित्वा कामं अकिञ्चनो।
परियोदपेय्य अत्तानं, चित्तक्लेसेहि पण्डितो॥
''येसं सम्बोधियङ्गेसु, सम्मा चित्तं सुभावितं।
आदानपटिनिस्सग्गे, अनुपादाय ये रता।
खीणासवा जुतिमन्तो, ते लोके परिनिब्बुता'' ति॥

(ध०प० ८५-८९ गा०) ●

४. ओरिमसुत्तं : १. ''ओरिमं च, भिक्खवे, तीरं देसेस्सामि पारिमं च तीरं। तं सुणाथ ...पे०... कतमं च, भिक्खवे, ओरिमं तीरं, कतमं च पारिमं तीरं? पाणातिपातो, भिक्खवे, ओरिमं तीरं, पाणातिपाता वेरमणी पारिमं तीरं। अदिन्नादानं ओरिमं तीरं, अदिन्नादाना वेरमणी पारिमं तीरं। कामेसुमिच्छाचारो ओरिमं तीरं, कामेसुमिच्छाचारा वेरमणी पारिमं तीरं। मुसावादो ओरिमं तीरं, मुसावादा वेरमणी पारिमं तीरं। पिसुणा वाचा ओरिमं

इस पार का...और मृषावाद से विरति उस पार का किनारा। पिशुन वाक् इस पार का...और पिशुन वाक् से विरति उस पार का किनारा। परुष वाक् इस पार का ...और परुष वाक् से विरति उस पार का किनारा। सम्प्रलाप इस पार का...और सम्प्रलाप से विरति उस पार का किनारा। लोभ इस पार का किनारा और लोभ से विरति उस पार का किनारा। द्वेष इस पार का किनारा और द्वेष से विरति उस पार का किनारा। मिथ्यादृष्टि इस पार का किनारा और मिथ्यादृष्टि से विरति उस पार का किनारा। ब्राह्मण! ये इस पार या उस पार के किनारे कहलाते हैं॥ ●

[पाँचों गाथाओं का अनुवाद पीछे सङ्गारवसूत्र में हो चुका है, वहाँ देख लें॥]

४. अवरसूत्र : : अवर (इधर का) तीर, पार (उधर का) तीर

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको इधर के किनारे तथा उधर के किनारे के विषय में देशना करूँगा। उसे सुनो! ...पूर्ववत्...। ●

तीरं, पिसुणाय वाचाय वेरमणी पारिमं तीरं। फरुसा वाचा ओरिमं तीरं, फरुसाय वाचाय वेरमणी पारिमं तीरं। सम्फप्पलापो ओरिमं तीरं, सम्फप्पलापा वेरमणी पारिमं तीरं। अभिज्झा ओरिमं तीरं, अनभिज्झा पारिमं तीरं। ब्यापादो ओरिमं तीरं, अब्यापादो पारिमं तीरं। [N.308] मिच्छादिट्ठि ओरिमं तीरं, समादिट्ठि पारिमं तीरं। इदं खो, भिक्खवे, ओरिमं तीरं, इदं पारिमं तीरं ति।

''अप्पका ते मनुस्सेसु, ये जना पारगामिनो। [R.254]
अथायं इतरा पजा, तीरमेवानुधावति॥
''ये च खो सम्मदक्खाते, धम्मे धम्मानुवत्तिनो।
ते जना पारमेस्सन्ति, मच्चुधेय्यं सुदुत्तरं॥
''कण्हं धम्मं विप्पहाय, सुक्कं भावेथ पण्डितो। [B.464]
ओका अनोकमागम्म, विवेके यत्थ दूरमं॥
''तत्राभिरतिमिच्छेय्य, हित्वा कामं अकिञ्चनो।
परियोदपेय्य अत्तानं, चित्तक्लेसेहि पण्डितो॥
''येसं सम्बोधियङ्गेसु, सम्मा चित्तं सुभावितं।
आदानपटिनिस्सग्गे, अनुपादाय ये रता।
खीणासवा जुतिमन्तो, ते लोके परिनिब्बुता'' ति॥

(ध० प० ८५-८९ गा०) ●

५. पठमअधम्मसुत्तं : १. ''अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो अनत्थो च; धम्मो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा अनत्थं च, धम्मं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं।

२. ''कतमो च, भिक्खवे, अधम्मो च अनत्थो च? पाणातिपातो, अदिन्नादानं, कामेसुमिच्छाचारो, मुसावादो, पिसुणा वाचा, फरुसा वाचा, सम्फप्पलापो, अभिज्झा, ब्यापादो, मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अधम्मो च अनत्थो च।

३. ''कतमो च, भिक्खवे, धम्मो च अत्थो च? पाणातिपाता वेरमणी, अदिन्नादाना

[अनुपद में वर्णित पूर्वसूत्र के समान ही हिन्दी में विस्तार कर लें।]

५. प्रथम अधर्मसूत्र :: अधर्म, अनर्थ, धर्म एवं अर्थ का ज्ञान

१. ''भिक्षुओ! अधर्म और अनर्थ को जानना चाहिये। साथ ही, धर्म और अर्थ को भी जानना चाहिये। अधर्म, अनर्थ, धर्म एवं अर्थ—इन चारों को जानकर धर्मानुसार एवं अर्थानुसार आचरण करना चाहिये।

२. ''भिक्षुओ! अधर्म एवं अनर्थ कौन सा है? प्राणातिपात, अदत्तादान, व्यभिचार, असत्यभाषण, पिशुन वाक्, परुष वाक्, सम्प्रलाप, लोभ, द्वेष एवं मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! ये 'अधर्म' एवं 'अनर्थ' हैं।

वेरमणी, कामेसुमिच्छाचारा वेरमणी, मुसावादा वेरमणी, पिसुणाय वाचाय वेरमणी, फरुसाय वाचाय वेरमणी, सम्फप्पलापा वेरमणी, अनभिज्झा, अब्यापादो, सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, धम्मो च अत्थो च।

[N.309] ४. ''अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो अनत्थो च; धम्मो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा अनत्थं च, धम्मं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं'' ति॥ ●

६. दुतियअधम्मसुत्तं : १. ''अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च; अनत्थो [R.255] च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च विदित्वा अत्थं च [B.465] यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं'' ति। इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो उट्ठायासना विहारं पाविसि।

२. अथ खो तेसं भिक्खूनं अचिरपक्कन्तस्स भगवतो एतदहोसि—''इदं खो नो, आवुसो, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं पविट्ठो—'अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च; अनत्थो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं' ति। को नु खो इमस्स भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजेय्या'' ति?

३. अथ खो तेसं भिक्खूनं एतदहोसि—''अयं खो आयस्मा महाकच्चानो सत्थु चेव संवण्णितो, सम्भावितो च विञ्ञूनं सब्रह्मचारीनं। पहोति चायस्मा महाकच्चानो इमस्स

---

३. ''और, भिक्षुओ! 'धर्म' एवं 'अर्थ' क्या हैं? प्राणातिपातविरति, अदत्तादानविरति, व्यभिचारविरति, मृषावादविरति, पिशुनवाग्विरति, परुषवाग्विरति, सम्प्रलापविरति, अनभिध्या (अलोभ), अव्यापाद (द्वेषरहितता) एवं सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! ये 'धर्म' एवं 'अर्थ' कहलाते हैं।

४. ''अत: भिक्षुओ! 'अधर्म और अनर्थ को जानना चाहिये ...पूर्ववत्... आचरण करना चाहिये।' यह जो कहा था, वह इसी उदेश्य से कहा था॥'' ●

६. द्वितीय अधर्मसूत्र : : अधर्म, अनर्थ आदि का ज्ञान

१. ''भिक्षुओ! अधर्म को जानना चाहिये, अनर्थ को भी; धर्म को भी जानना चाहिये, अर्थ को भी। (इस प्रकार) अधर्म, धर्म को जानकर, अनर्थ एवं अर्थ को जानकर धर्मानुसार तथा अर्थानुसार आचरण करना चाहिये।'' भगवान् ने यह कहा। यह कहकर सुगत, आसन से उठकर, साधना-कुटी में पधार गये।

२. तब, भगवान् के वहाँ से पधारने के कुछ ही समय बाद, भिक्षुओं को यह विचार हुआ ...पूर्ववत्...।

३. तब उन भिक्षुओं को यह ध्यान में आया—''यह आयुष्मान् महाकात्यायन शास्ता द्वारा प्रशंसित ...पूर्ववत्...।

भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजितुं। यन्नून मयं येनायस्मा महाकच्चानो तेनुपसङ्कमेय्याम; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं महाकच्चानं एतमत्थं पुच्छेय्याम। यथा नो आयस्मा महाकच्चानो ब्याकरिस्सति तथा नं धारेस्सामा'' ति।

४. अथ खो ते भिक्खु येनायस्मा महाकच्चानो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मता महाकच्चानेन सद्धिं सम्मोदिंसु। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू आयस्मन्तं महाकच्चानं एतदवोचुं—

५. ''इदं खो नो, आवुसो कच्चान, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं पविट्ठो—'अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च; अनत्थो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च [N.310,R.256] विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं' ति।

''तेसं नो, आवुसो, अम्हाकं अचिरपक्कन्तस्स भगवतो एतदहोसि—'इदं खो नो,आवुसो, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं अविभाजित्वा उट्ठायासना विहारं पविट्ठो—अधम्मो च, भिक्खवे ...पे०... तथा पटिपज्जितब्बं ति। को नु खो [B.466] इमस्स भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजेय्या' ति ?

''तेसं नो, आवुसो, अम्हाकं एतदहोसि—'अयं खो आयस्मा महाकच्चनो सत्थु चेव संवण्णितो, सम्भावितो च विञ्ञूनं सब्रह्मचारीनं। पहोति चायस्मा महाकच्चानो इमस्स भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजितुं। यन्नून मयं येनायस्मा महाकच्चानो तेनुपसङ्कमेय्याम; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं महाकच्चानं एतमत्थं पटिपुच्छेय्याम। यथा नो आयस्मा महाकच्चानो ब्याकरिस्सति तथा नं धारेस्सामा' ति। विभजतु आयस्मा महाकच्चानो'' ति।

६. ''सेय्यथापि, आवुसो, पुरिसो सारत्थिको सारगवेसी सारपरियेसनं चरमानो महतो रुक्खस्स तिट्ठतो सारवतो अतिक्कम्मेव मूलं अतिक्कम्म खन्धं साखापलासे सारं परियेसितब्बं मञ्ञेय्य; एवंसम्पदमिदं आयस्मन्तानं सत्थरि सम्मुखीभूते तं भगवन्तं अतिसित्वा अम्हे एतमत्थं पटिपुच्छितब्बं मञ्ञथ। सो हावुसो, भगवा जानं जानाति पस्सं पस्सति चक्खुभूतो ञाणभूतो धम्मभूतो ब्रह्मभूतो वत्ता पवत्ता अत्थस्स निन्नेता अमतस्स दाता धम्मस्सामी तथागतो। सो चेव पनेतस्स कालो अहोसि यं तुम्हे भगवन्तंयेव [R.257] उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छेय्याथ। यथा वो भगवा ब्याकरेय्य तथा नं धारेय्याथा'' ति।

७. ''अद्धा, आवुसो कच्चान, भगवा जानं जानाति पस्सं पस्सति चक्खुभूतो

---

४. तब वे भिक्षु आयुष्मान् महाकात्यायन के पास पहुँचे ...पूर्ववत्...।

५. ''आयुष्मन् कात्यायन! भगवान् ने संक्षेप में यह उपदेश ...पूर्ववत्...।

६. आयुष्मानो! जैसे कोई दृढ़ काष्ठ से प्रयोजन रखने वाला अरण्य में जाकर ...पूर्ववत्...।

ञाणभूतो धम्मभूतो ब्रह्मभूतो वत्ता पवत्ता अत्थस्स निन्नेता अमतस्स दाता धम्मस्सामी तथागतो। सो चेव पनेतस्स कालो अहोसि यं मयं भगवन्तंयेव उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छेय्याम। यथा नो भगवा ब्याकरेय्य तथा नं धारेय्याम। अपि चायस्मा महाकच्चानो [N.311] सत्थु चेव संवण्णितो, सम्भावितो च विञ्ञूनं सब्रह्मचारीनं। पहोति चायस्मा महाकच्चानो इमस्स भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभाजितुं। विभजतायस्मा महाकच्चानो अगरुं करित्वा'' ति।

८. ''तेन हावुसो, सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, [B.467] आवुसो'' ति खो ते भिक्खू आयस्मतो महाकच्चानस्स पच्चस्सोसुं। अथायस्मा महाकच्चानो एतदवोच—

९. ''यं खो नो, आवुसो, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं पविट्ठो—'अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो ...पे०... तथा पटिपज्जितब्बं' ति। कतमो चावुसो, अधम्मो, कतमो च धम्मो; कतमो च अनत्थो, कतमो च अत्थो ?

१०. ''पाणातिपातो, आवुसो, अधम्मो; पाणातिपाता वेरमणी धम्मो; ये च पाणातिपातपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति,अयं अनत्थो; पाणातिपाता वेरमणीपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

[R.258] ११. ''अदिन्नादानं, आवुसो, अधम्मो; अदिन्नादाना वेरमणी धम्मो; ये च अदिन्नादानपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; अदिन्नादाना वेरमणीपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

१२. ''कामेसुमिच्छाचारो, आवुसो, अधम्मो; कामेसुमिच्छाचारा वेरमणी धम्मो; कामेसुमिच्छाचारपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; कामेसुमिच्छाचारा वेरमणीपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

१३. ''मुसावादो, आवुसो, अधम्मो; मुसावादा वेरमणी धम्मो; ये च मुसावादपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; मुसावादा वेरमणीपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

---

७. ''आयुष्मन् कात्यायन! यद्यपि भगवान् सर्वज्ञ हैं ...पूर्ववत्... भार न समझते हुए।

८. ''...आयुष्मान् महाकात्यायन यों बोले—

९. ''भगवान् ने यह जो संक्षेप में कहा था—भिक्षुओ! अधर्म को, धर्म को ...पूर्ववत्...।

१०. ''आयुष्मानो! प्राणातिपात अधर्म है, प्राणातिपातविरति धर्म।... (१)

११. ''आयुष्मानो! अदत्तादान अधर्म है, अदत्तादानविरति धर्म।...(२)

१२. ''आयुष्मानो! कामों में मिथ्याचार अधर्म है, कामों में मिथ्याचारविरति धर्म।...(३)

१४. ''पिसुणा वाचा, आवुसो, अधम्मो; पिसुणाय वाचाय वेरमणी धम्मो; ये च पिसुणवाचापच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; पिसुणाय वाचाय वेरमणीपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं [N.312] अत्थो।

१५. ''फरुसा वाचा, आवुसो, अधम्मो; फरुसाय वाचाय वेरमणी धम्मो; [B.468] ये च फरुसावाचापच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; फरुसाय वाचाय वेरमणीपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

१६. ''सम्फप्पलापो, आवुसो, अधम्मो; सम्फप्पलापा वेरमणी धम्मो; ये च सम्फप्पलापपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्फप्पलापा वेरमणीपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

१७. ''अभिज्झा, आवुसो, अधम्मो; अनभिज्झा धम्मो; ये च अभिज्झापच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; अनभिज्झापच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

१८. ''ब्यापादो, आवुसो, अधम्मो; अब्यापादो धम्मो; ये च ब्यापादपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; अब्यापादपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

१९. ''मिच्छादिट्ठि, आवुसो, अधम्मो; सम्मादिट्ठि धम्मो; ये च मिच्छादिट्ठिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्मादिट्ठिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

२०. '''यं खो नो, आवुसो, भगवा सङ्खित्तेन... अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो ...पे०... तथा पटिपज्जितब्बं' ति। इमस्स खो अहं, आवुसो, भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स एवं वित्थारेन अत्थं आजानामि। आकङ्खमाना च पन

---

१३. ''आयुष्मानो! मृषावाद अधर्म है, मृषावादविरति धर्म है।...(४)

१४. ''आयुष्मानो! पिशुनवाक् अधर्म है, पिशुनवाक् से विरति धर्म।...(५)

१५. ''आयुष्मानो! परुषवाक् अधर्म है, परुषवाक् से विरति धर्म।... (६)

१६. ''आयुष्मानो! सम्प्रलाप अधर्म है, सम्प्रलापविरति धर्म।...(७)

१७. ''आयुष्मानो! अभिध्या (लोभ) अधर्म है, अभिध्याविरति धर्म।...(८)

१८. ''आयुष्मानो! व्यापाद (द्वेष) अधर्म है, व्यापादविरति धर्म।...(९)

१९. ''आयुष्मानो! मिथ्यादृष्टि अधर्म है, सम्यग्दृष्टि धर्म। मिथ्यादृष्टि के कारण उद्भूत अनेक पापमय अकुशल धर्म अनर्थ हैं, तथा सम्यग्दृष्टि के कारण उद्भूत अनेक कुशल धर्म साधना की पूर्ति में सहायक होते हैं—यह अर्थ है। (१०)

तुम्हे, आवुसो, भगवन्तंयेव उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छेय्याथ। यथा नो भगवा ब्याकरोति तथा नं धारेय्याथा'' ति।

[N.313] ''एवमावुसो'' ति खो ते भिक्खू आयस्मतो महाकच्चानस्स भासितं अभिनन्दित्वा [B.469] अनुमोदित्वा उट्ठायासना येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं—

२१. ''यं खो नो, भन्ते, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं पविट्ठो—'अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो ...पे०... तथा पटिपज्जितब्बं' ति।

''तेसं नो, भन्ते, अम्हाकं अचिरपक्कन्तस्स भगवतो एतदहोसि—'इदं खो नो, आवुसो, भगवा सङ्खित्तेन उद्देसं उद्दिसित्वा वित्थारेन अत्थं अविभजित्वा उट्ठायासना विहारं पविट्ठो—'अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो ...पे०... तथा पटिपज्जितब्बं' ति। को नु खो इमस्स भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजेय्या' ति?

''तेसं नो, भन्ते, अम्हाकं एतदहोसि—'अयं खो आयस्मा महाकच्चानो सत्थु चेव संवण्णितो, सम्भावितो च विञ्ञूनं सब्रह्मचारीनं। पहोति चायस्मा महाकच्चानो इमस्स [R.260] भगवता सङ्खित्तेन उद्देसस्स उद्दिट्ठस्स वित्थारेन अत्थं अविभत्तस्स वित्थारेन अत्थं विभजितुं। यन्नून मयं येनायस्मा महाकच्चानो तेनुपसङ्कमेय्याम; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं महाकच्चानं एतमत्थं पटिपुच्छेय्याम। यथा नो आयस्मा महाकच्चानो ब्याकरिस्सति तथा नं धारेस्सामा' ति।

''अथ खो मयं, भन्ते, येनायस्मा महाकच्चानो तेनुपसङ्कमिम्हा; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं महाकच्चानं एतमत्थं अपुच्छिम्हा। तेसं नो, भन्ते, आयस्मता महाकच्चानेन इमेहि अक्खरेहि इमेहि पदेहि इमेहि ब्यञ्जनेहि अत्थो सुविभत्तो'' ति।

२२. ''साधु साधु, भिक्खवे! पण्डितो, भिक्खवे, महाकच्चानो। महापञ्ञो, भिक्खवे, महाकच्चानो। मं चे पि तुम्हे, भिक्खवे, उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छेय्याथ, अहं पि चेतं एवमेव ब्याकरेय्यं यथा तं महाकच्चानेन ब्याकतं। एसो चेव तस्स अत्थो। एवं च नं धारेय्याथा'' ति॥ ●

[N.314, B.470] **७. ततियअधम्मसुत्तं** : १. ''अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च;

---

२०. ''भगवान् के उस संक्षिप्त कथन का यही विस्तार है। यदि तुमको इसमें कुछ सन्देह है तो भगवान् के पास जाकर पूछ लो। वे जैसा उपदेश करें वैसे धारण कर लेना।''

२१. ''भन्ते! भगवान् ने हमको जो संक्षेप में उपदेशकर ...पूर्ववत्... इन पदों से, इन वाक्यों से आपके उपदेश का विस्तृत विभाजन किया है।''

अनत्थो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं।

२. "कतमो च, भिक्खवे, अधम्मो, कतमो च धम्मो; कतमो च अनत्थो, कतमो च अत्थो? पाणातिपातो, भिक्खवे, अधम्मो; पाणातिपाता वेरमणी धम्मो; ये च पाणातिपातपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; पाणातिपाता वेरमणीपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

३. "अदिन्नादानं, भिक्खवे, अधम्मो; अदिन्नादाना वेरमणी धम्मो... [R.261] कामेसुमिच्छाचारो, भिक्खवे अधम्मो; कामेसुमिच्छाचारा वेरमणी धम्मो... मुसावादो, भिक्खवे, अधम्मो; मुसावादा वेरमणी धम्मो... पिसुणा वाचा, भिक्खवे, अधम्मो; पिसुणाय वाचाय वेरमणी धम्मो... फरुसा वाचा, भिक्खवे, अधम्मो; फरुसाय वाचाय वेरमणी धम्मो ...सम्फप्पलापो, भिक्खवे, अधम्मो; सम्फप्पलापा वेरमणी धम्मो... अभिज्झा, भिक्खवे, अधम्मो; अनभिज्झा धम्मो... ब्यापादो, भिक्खवे, अधम्मो; अब्यापादो धम्मो ...।

४. "मिच्छादिट्ठि, भिक्खवे, अधम्मो; सम्मादिट्ठि धम्मो; ये च मिच्छादिट्ठिपच्चया अनेके पापका अकुसला धम्मा सम्भवन्ति, अयं अनत्थो; सम्मादिट्ठिपच्चया च अनेके कुसला धम्मा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, अयं अत्थो।

५. "'अधम्मो च, भिक्खवे, वेदितब्बो धम्मो च; अनत्थो च वेदितब्बो अत्थो च। अधम्मं च विदित्वा धम्मं च, अनत्थं च विदित्वा अत्थं च यथा धम्मो यथा अत्थो तथा पटिपज्जितब्बं' ति, इति यं तं वुत्तं, इदमेतं पटिच्च वुत्तं" ति॥ ●

---

२२. "साधु, भिक्षुओ! साधु! आयुष्मान् महाकात्यायन पण्डित है, महाप्राज्ञ है...मैं भी यही विस्तार करता जो महाकात्यायन ने किया है। यही इसका अर्थ है। इसको ही तुम धारण कर लो॥"

७. तृतीय अधर्मसूत्र : : अधर्म, धर्म आदि का ज्ञान

१. "भिक्षुओ! अधर्म को जानना चाहिये, धर्म को भी; अनर्थ को भी जानना चाहिये, अर्थ को भी। इस प्रकार धर्म और अधर्म को जानकर, अर्थ एवं अनर्थ को जानकर धर्मानुसार एवं अर्थानुसार आचरण करना चाहिये।

२. "भिक्षुओ! यहाँ कौन अधर्म है और कौन धर्म? कौन अनर्थ है और कौन अर्थ? भिक्षुओ! प्राणातिपात अधर्म है, प्राणातिपात से विरति धर्म। तथा प्राणातिपात के कारण उत्पन्न होने वाले अनेक पापमय अकुशल धर्म ही अनर्थ हैं; प्राणातिपातविरति से उत्पन्न कुशल धर्म साधना-पूर्ति में सहायक होते हैं, यही अर्थ है।

३. "अदत्तादान, भिक्षुओ! अधर्म है, अदत्तादानविरति धर्म। कामों में मिथ्याचार अधर्म है और कामों में मिथ्याचार से विरति धर्म है ...पूर्ववत्... अव्यापाद धर्म है।

४. "मिथ्यादृष्टि, भिक्षुओ! अधर्म है, सम्यग्दृष्टि धर्म है ...पूर्ववत्... उत्पन्न कुशल धर्म साधनापूर्ति में सहायक होते हैं—यही धर्म है।

८. कम्मनिदानसुत्तं : १. ''पाणातिपातं पाहं, भिक्खवे, तिविधं वदामि—लोभहेतुकं पि, दोसहेतुकं पि, मोहहेतुकं पि।

[N.315, B.471] २. ''अदिन्नादानं पाहं, भिक्खवे, तिविधं वदामि—लोभहेतुकं पि, दोसहेतुकं पि, मोहहेतुकं पि।

३. ''कामेसुमिच्छाचारं पाहं, भिक्खवे, तिविधं वदामि—लोभहेतुकं पि, दोसहेतुकं पि, मोहहेतुकं पि।

४. ''मुसावादं पाहं, भिक्खवे, तिविधं वदामि—लोभहेतुकं पि, दोसहेतुकं पि, मोहहेतुकं पि।

५. ''पिसुणवाचं पाहं, भिक्खवे, तिविधं वदामि—लोभहेतुकं पि, दोसहेतुकं पि, मोहहेतुकं पि।

६. ''फरुसवाचं पाहं, भिक्खवे, तिविधं वदामि—लोभहेतुकं पि, दोसहेतुकं पि, मोहहेतुकं पि।

७. ''सम्फप्पलापं पाहं, भिक्खवे, तिविधं वदामि—लोभहेतुकं पि, दोसहेतुकं पि, मोहहेतुकं पि।

[R.262] ८. ''अभिज्झं पाहं, भिक्खवे, तिविधं वदामि—लोभहेतुकं पि, दोसहेतुकं पि, मोहहेतुकं पि।

९. ''ब्यापादं पाहं, भिक्खवे, तिविधं वदामि—लोभहेतुकं पि, दोसहेतुकं पि, मोहहेतुकं पि।

१०. ''मिच्छादिट्ठिं पाहं, भिक्खवे, तिविधं वदामि—लोभहेतुकं पि, दोसहेतुकं पि,

---

५. ''भिक्षुओ! 'अधर्म को जानना चाहिये ...पूर्ववत्... आचरण करना चाहिये'—यह जो कहा था, इसी अभिप्राय से कहा था॥''

८. कर्मनिदानसूत्र : : त्रिविध प्राणातिपात आदि

१. ''भिक्षुओ! मैं प्राणातिपात (हिंसा) में तीन कारण मानता हूँ—वह लोभ हेतु से भी किया जाता है, द्वेषहेतु एवं मोहहेतु से भी किया जाता है।

२. ''अदत्तादान में भी, भिक्षुओ! मैं तीन कारण मानता हूँ— ...पूर्ववत्...।

३. ''कामभोगों में मिथ्याचार में भी, भिक्षुओ! मैं तीन कारण मानता हूँ— ...पूर्ववत्...।

४. ''मृषावाद में भी, भिक्षुओ! मैं तीन कारण मानता हूँ— ...पूर्ववत्...।

५. ''पिशुनवाक् में भी, भिक्षुओ! मैं तीन कारण मानता हूँ— ...पूर्ववत्...।

६. ''परुषवाक् में भी, भिक्षुओ! मैं तीन कारण मानता हूँ. ...पूर्ववत्...।

७. ''सम्प्रलाप में भी, भिक्षुओ! मैं तीन कारण मानता हूँ— ...पूर्ववत्...।

८. ''अभिध्या (लोभ) में भी, भिक्षुओ! मैं तीन कारण मानता हूँ— ...पूर्ववत्...।

९. ''व्यापाद (द्वेष) में भी, भिक्षुओ! मैं तीन कारण मानता हूँ— ...पूर्ववत्...।

१०. ''मिथ्यादृष्टि में भी, भिक्षुओ! मैं तीन कारण मानता हूँ—वह लोभहेतुक भी हो सकती

मोहहेतुकं पि। इति खो, भिक्खवे, लोभो कम्मनिदानसम्भवो, दोसो कम्मनिदानसम्भवो, मोहो कम्मनिदानसम्भवो। लोभक्खया कम्मनिदानसङ्ख्यो, दोसक्खया कम्मनिदानसङ्ख्यो, मोहक्खया कम्मनिदानसङ्ख्यो'' ति॥ ●

९. **परिक्कम्मनसुत्तं** : १. ''सपरिक्कमनो अयं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो अपरिक्कमनो। कथं च, भिक्खवे, सपरिक्कमनो अयं धम्मो, नायं धम्मो अपरिक्कमनो? पाणातिपातिस्स, भिक्खवे, पाणातिपाता वेरमणी परिक्कमनं होति। अदिन्नादायिस्स, भिक्खवे, अदिन्नादाना वेरमणी परिक्कमनं होति। कामेसुमिच्छाचारिस्स, भिक्खवे, कामेसु-मिच्छाचारा वेरमणी परिक्कमनं होति। मुसावादिस्स, भिक्खवे, मुसावादा वेरमणी [N.316] परिक्कमनं होति। पिसुणवाचस्स, भिक्खवे, पिसुणाय वाचाय वेरमणी परिक्कमनं [B.472] होति। फरुसवाचस्स, भिक्खवे, फरुसाय वाचाय वेरमणी परिक्कमनं होति। सम्फप्पला-पिस्स, भिक्खवे, सम्फप्पलापा वेरमणी परिक्कमनं होति। अभिज्झालुस्स, भिक्खवे, अनभिज्झा परिक्कमनं होति। ब्यापन्नचित्तस्स, भिक्खवे, अब्यापादो परिक्कमनं होति। मिच्छादिट्ठिस्स, भिक्खवे, सम्मादिट्ठि परिक्कमनं होति। एवं खो, भिक्खवे, सपरिक्कमनो अयं धम्मो, नायं धम्मो अपरिक्कमनो'' ति॥ ●

१०. **चुन्दसुत्तं** : १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा पावायं विहरति [R.263] चुन्दस्स कम्मारपुत्तस्स अम्बवने। अथ खो चुन्दो कम्मारपुत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो चुन्दं कम्मारपुत्तं भगवा एतदवोच—

है, द्वेष के कारण भी हो सकती है, या मोह के कारण भी वह हो सकती है। लोभ, द्वेष एवं मोह के क्षय के होने पर इन कारणों का क्षय हो पाता है॥'' ●

९. परिक्रमणसूत्र : : दश धर्मों का परिक्रमण (विरोधी धर्म)

१. भिक्षुओ! कोई भी धर्म परिक्रमण (विरोध) युक्त ही होता है, परिक्रमणरहित नहीं। कैसे, भिक्षुओ! कोई भी धर्म परिक्रमणयुक्त ही होता है, परिक्रमणरहित नहीं? भिक्षुओ! प्राणातिपात का विरोधी धर्म है प्राणातिपातविरति। अदत्तादान का विरोधी है अदत्तादानविरति। कायों में मिथ्याचार का विरोधी है कामों में मिथ्याचार से विरति। मृषावाद का है मृषावादविरति। पिशुनवाक् का पिशुनवाग्विरति। परुषवाक् का परुषवाग्विरति। सम्प्रलाप का सम्प्रलापविरति। अभिध्यालु का विरोधी अभिध्याविरति। व्यापन्नचित्त का विरोधी धर्म अव्यापाद होता है और मिथ्यादृष्टि का विरोधी धर्म सम्यग्दृष्टि होता है। इस प्रकार, भिक्षुओ! सभी धर्म सपरिक्रमण (विरोधसहित) होते हैं, अपरिक्रमण नहीं॥'' ●

१०. चुन्दसूत्र : : दशविध पवित्रता

१. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) पावा नगरी के चुन्द नामक कर्मारपुत्र (लुहार या सुनार) के आम्रवन में साधनाहेतु विराजमान थे। तब कभी चुन्द कर्मारपुत्र भगवान् के

२. ''कस्स नो त्वं, चुन्द, सोचेय्यानि रोचेसी'' ति?

''ब्राह्मणा, भन्ते, पच्छाभूमका कमण्डलुका सेवालमालिका अग्गिपरिचारका उदकोरोहका सोचेय्यानि पञ्ञापेन्ति; तेसाहं सोचेय्यानि रोचेमी'' ति।

''यथा कथं पन, चुन्द, ब्राह्मणा पच्छाभूमका कमण्डलुका सेवालमालिका अग्गिपरिचारिका उदकोरोहका सोचेय्यानि पञ्ञापेन्ती'' ति?

''इध, भन्ते, ब्राह्मणा पच्छाभूमका कमण्डलुका सेवालमालिका अग्गिपरिचारका उदकोरोहका। ते सावकं एवं समादपेन्ति—'एहि त्वं, अम्भो पुरिस, कालस्सेव उट्ठहन्तो व सयनम्हा पथविं आमसेय्यासि; नो चे पथविं आमसेय्यासि, अल्लानि गोमयानि आमसेय्यासि; नो चे अल्लानि गोमयानि आमसेय्यासि, हरितानि तिणानि आमसेय्यासि; नो चे हरितानि तिणानि आमसेय्यासि, अग्गिं परिचरेय्यासि; नो चे अग्गिं परिचरेय्यासि, [N.317] पञ्जलिको आदिच्चं नमस्सेय्यासि; नो चे पञ्जलिको आदिच्चं नमस्सेय्यासि, [B.473] सायततियकं उदकं ओरोहेय्यासी' ति। एवं खो, भन्ते, ब्राह्मणा पच्छाभूमका कमण्डलुका सेवालमालिका अग्गिपरिचारिका उदकोरोहका सोचेय्यानि पञ्ञापेन्ति; तेसाहं सोचेय्यानि रोचेमी'' ति।

''अञ्ञथा खो, चुन्द, ब्राह्मणा पच्छाभूमका कमण्डलुका सेवालमालिका अग्गिपरिचारका उदकोरोहका सोचेय्यानि पञ्ञापेन्ति, अञ्ञथा च पन अरियस्स विनये सोचेय्यं [R.264] होती'' ति।

''यथा कथं पन, भन्ते, अरियस्स विनये सोचेय्यं होति? साधु मे, भन्ते, भगवा तथा धम्मं देसेतु यथा अरियस्स विनये सोचेय्यं होती'' ति।

पास आया। आकर, भगवान् को प्रणाम कर, एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस चुन्द कर्मारपुत्र से भगवान् ने पूछा--

२. ''चुन्द! तुम किस (सम्प्रदाय) की शुद्धियों (पवित्रताओं) को स्वीकार करते हो?''

''भन्ते! कमण्डलु रखने वाले, शङ्ख (शैवाल) की माला पहनने वाले, अग्निपूजक तथा जल में अधिक स्नान करने वाले, पश्चिमदेशवासी ब्राह्मण जो पवित्रताएँ बताते हैं, उन पवित्रताओं को ही मैं भी स्वीकार करता हूँ।''

''चुन्द! वे...पश्चिमदेशवासी ब्राह्मण किन पवित्रताओं को बताते हैं, जिनको तुम भी स्वीकार करते हो?

''यहाँ, भन्ते! वे पश्चिमदेशवासी ब्राह्मण कमण्डलुधारक एवं शङ्खमालाधारी, अग्निपूजक एवं जल में अनेक बार स्नान करने वाले होते हैं। वे अपने शिष्यों को यही उपदेश करते हैं—''सत्पुरुष! प्रात:काल समय से उठकर, शय्या छोड़ते ही, भूमि का स्पर्श करना चाहिये, यदि वह सुविधा न मिले तो गीले गोबर (गोमय) का स्पर्श करना चाहिये, वह भी न मिले तो हरे घास का स्पर्श करना चाहिये, वह भी न मिले तो अग्नि का दर्शन करना चाहिये, उसकी भी सुविधा न मिले तो हाथ जोड़कर सूर्य को प्रणाम करना चाहिये, यदि वह भी सुविधा न मिले तो प्रात: मध्याह्न एवं

"तेन हि, चुन्द, सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो चुन्दो कम्मारपुत्तो भगवतो पच्चस्सोसि। भगवा एतदवोच—

३. "तिविधं खो, चुन्द, कायेन असोचेय्यं होति; चतुब्बिधं वाचाय असोचेय्यं होति; तिविधं मनसा असोचेय्यं होति।

४. "कथं च, चुन्द, तिविधं कायेन असोचेय्यं होति?

"इध, चुन्द, एकच्चो पाणातिपाती होति लुद्दो लोहितपाणि हतपहते निविट्ठो अदयापन्नो पाणभूतेसु।

"अदिन्नादायी होति। यं तं परस्स परवित्तूपकरणं गामगतं वा अरञ्ञगतं वा तं अदिन्नं थेय्यसङ्खातं आदाता होति।

"कामेसुमिच्छाचारी होति। या ता मातुरक्खिता पितुरक्खिता मातापितुरक्खिता भातुरक्खिता भगिनिरक्खिता ञातिरक्खिता गोत्तरक्खिता धम्मरक्खिता ससामिका सपरिदण्डा अन्तमसो मालागुळपरिक्खित्ता पि, तथारूपासु चारित्तं आपज्जिता होति। एवं खो, चुन्द, तिविधं कायेन असोचेय्यं होति।

सायंकाल—तीन बार (त्रिसन्ध्य) जल से स्नान करना चाहिये।' इस प्रकार, भन्ते! वे ...पूर्ववत्... पश्चिमदेशवासी ब्राह्मण ये शुद्धियाँ बताते हैं। इन शुद्धियों को ही मैं भी मानता हूँ।"

"चुन्द! वे...पश्चिमदेशवासी ब्राह्मण जो शुद्धियाँ बताते हैं, हमारे आर्यविनय में उनसे भिन्न प्रकार की शुद्धियाँ बतायी गयी हैं।"

"भन्ते! आपके आर्यविनय में कैसी शुद्धियाँ प्रज्ञापित हैं, अच्छा हो, भन्ते! आप उन शुद्धियों की देशना कर मुझको भी कृतार्थ करें?"

"तो, चुन्द! सुनो, सुनकर भलीभाँति मन में बैठा लो। बताता हूँ।...भगवान् ने यह देशना की—

३. "चुन्द! (हमारे आर्यविनय में) काया से त्रिविध अशुद्धि होती है, वाक् से चतुर्विध एवं मन से त्रिविध—(इस प्रकार दशविध) अशुद्धियाँ बतायी गयी हैं।

४. "चुन्द! काया से त्रिविध अशुद्धि कौन-सी होती है?

(क) यहाँ चुन्द! कोई पुरुष रुद्ररूप वाला, रक्तरञ्जित हाथोंवाला, लोगों को लूटने-मारने या उपहत करनेवाला तथा प्राणियों पर निर्दय होता हुआ हिंसक (प्राणातिपाती) होता है। (१)

(ख) "यहाँ चुन्द! कोई पुरुष न दिये हुए को बलपूर्वक लेने वाला (चौर या डाकू) होता है, जो कि ग्राम या नगर में या अरण्य में दूसरों से विना दिया धन लेता रहता है, जिसे 'चौरी' कहा जाता है। (२)

(ग) "यहाँ, चुन्द! कोई पुरुष कामभोगों में अनाचारी (व्यभिचारी) होता है। जो न मातृरक्षित, न पितृरक्षित, न मातृपितृरक्षित, न भ्रातृरक्षित, न भगिनिरक्षित, न ज्ञातिरक्षित, न गोत्ररक्षित, न धर्मरक्षित, न पतिव्रता, न रक्षा (पहरे) में रहने वाली, न जिसका विवाहसम्बन्ध किसी अन्य से निश्चित हो चुका है, ऐसी स्त्री को ही छोड़ता है। वह उनसे भी व्यभिचार करने का साहस कर बैठता है। (३)

५. "कथं च, चुन्द, चतुब्बिधं वाचाय असोचेय्यं होति? इध, चुन्द, एकच्चो [N.318] मुसावादी होति। सभग्गतो वा परिसग्गतो वा ञातिमज्झगतो वा पूगमज्झगतो वा [B.474] राजकुलमज्झगतो वा अभिनीतो सक्खिपुट्ठो—'एहम्भो पुरिस, यं जानासि तं वदेही' ति, सो अजानं वा आह 'जानामी' ति, जानं वा आह 'न जानामी' ति; अपस्सं वा [R.265] आह 'पस्सामी' ति, पस्सं वा आह 'न पस्सामी' ति। इति अत्तहेतु वा परहेतु वा आमिसकिञ्चिक्खहेतु वा सम्पजानमुसा भासिता होति।

"पिसुणवाचो होति—इतो सुत्वा अमुत्र अक्खाता इमेसं भेदाय, अमुत्र वा सुत्वा इमेसं अक्खाता अमूसं भेदाय। इति समग्गानं वा भेत्ता, भिन्नानं वा अनुप्पदाता, वग्गारामो वग्गरतो वग्गनन्दी वग्गकरणिं वाचं भासिता होति।

"फरुसवाचो होति—या सा वाचा अण्डका कक्कसा परकटुका पराभिसज्जनी कोधसामन्ता असमादिसंवत्तनिका, तथारूपिं वाचं भासिता होति।

"सम्फप्पलापी होति अकालवादी अभूतवादी अनत्थवादी अधम्मवादी अविनयवादी; अनिधानवतिं वाचं भासिता होति अकालेन अनपदेसं अपरियन्तवतिं अनत्थसंहितं। एवं खो, चुन्द, चतुब्बिधं वाचाय असोचेय्यं होति।

इस प्रकार, चुन्द! काया से त्रिविध अशुद्धि बतायी है। (क)

५. और, चुन्द! वाणी से चतुर्विध अशुद्धि कौन सी होती हैं?

(क) 'चुन्द! यहाँ कोई मृषावादी (असत्यभाषी) होता है। यह सभा या परिषद् में बैठा हुआ, ज्ञातियों के मध्य बैठा हुआ, किसी समूह में बैठा हुआ, राजकुल में बैठा हुआ हो, वहाँ साक्षी के रूप में उससे पूछा जाय—'आप इस विषय में जो जानते हैं, वह कहें?' तब वह अज्ञात के विषय में भी कह दे—'जानता हूँ', या ज्ञात के विषय में कह दे—'नहीं जानता हूँ', न देखे हुए के विषय में कह दे—'देखा है', या देखे हुए के विषय में कह दे—'नहीं देखा है।' इस प्रकार, वह अपने लिये या दूसरों के लिये या किसी भोजन या चीवर आदि के तुच्छ लोभवश जानबूझकर असत्य बोलता है। (४)

(ख)"...पिशुनवाक् (चुगलखोर) होता है। इधर की सुनकर उधर कहने वाला, उनमें फूट डालने के लिये, उधर की सुनकर इधर कहने वाला, उनमें फूट डालने के लिये। इस प्रकार, वह मिले हुए समूह में भेद (फूट) डालने वाला, फूटे हुए (भिन्न) समूह में और अधिक फूट डाल देने वाला, गुटबाजी (वर्ग) में सुख मानने वाला, उसी में लगा हुआ, उसी (फूट डालने) से आनन्दित होता हुआ फूट डालने वाली बातें बोलता है। (५)

(ग) "...परुषवाक् (कठोर वाणी या अपशब्द) बोलने वाला होता है। ऐसी वाणी—जो क्रोध दिलाने वाली (अण्डका=चण्डका) हो, कर्कश (कर्णकटु) हो, दूसरे को चुभने वाली हो, क्रोधपूर्ण हो, चित्त को चञ्चल कर देनेवाली हो, ऐसी वाणी बोलता है। (६)

(घ) "...सम्प्रलापी (निरर्थक बातें या बकवाद करनेवाला) होता है, असमय की (अप्रासङ्गिक), न हुई, अनर्थ, अधर्म एवं अविनय को बढ़ावा देने वाली या व्यङ्ग्ययुक्त (द्व्यर्थक) वाणी बोलता है। (७)

६. ''कथं च, चुन्द, तिविधं मनसा असोचेय्यं होति? इध, चुन्द, एकच्चो अभिज्झालु होति। यं तं परस्स परवित्तूपकरणं तं अभिज्झिता होति—'अहो वत यं परस्स तं ममस्सा' ति।

''ब्यापन्नचित्तो होति पदुट्ठमनसङ्कप्पो—'इमे सत्ता हञ्ञन्तु वा बज्झन्तु वा उच्छिज्जन्तु वा विनस्सन्तु वा मा वा अहेसुं'' ति।

''मिच्छादिट्ठिको होति विपरीतदस्सनो—'नत्थि दिन्नं, नत्थि यिट्ठं, नत्थि हुतं, नत्थि सुकटदुक्कटानं कम्मानं फलं विपाको, नत्थि अयं लोको, नत्थि परो लोको, नत्थि माता, नत्थि पिता, नत्थि सत्ता ओपपातिका, नत्थि लोके समणब्राह्मणा सम्मग्गता सम्मापटिपन्ना ये इमं च लोकं परं च लोकं सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती' ति। एवं खो, चुन्द, मनसा तिविधं असोचेय्यं होति।

७. ''इमे खो, चुन्द, दस अकुसलकम्मपथा। इमेहि खो, [N.319, B.475, R.266] चुन्द, दसहि अकुसलेहि कम्मपथेहि समन्नागतो कालस्सेव उट्ठहन्तो व सयनम्हा पथविं चे पि आमसति, असुचियेव होति; नो चे पि पथविं आमसति, असुचियेव होति।

''अल्लानि चे पि गोमयानि आमसति, असुचियेव होति; नो चे पि अल्लानि गोमयानि आमसति, असुचियेव होति।

''हरितानि चे पि तिणानि आमसति, असुचियेव होति; नो चे पि हरितानि तिणानि आमसति, असुचियेव होति।

''इस प्रकार यह वाणी की अशुद्धि चतुर्विध होती है। (७) (ख)

६. ''और, चुन्द मन की अशुद्धि तीन प्रकार से कैसे होती है?

(क) ''यहाँ, चुन्द! कोई पुरुष अभिध्यालु (लोभी) होता है। वह सदा यही सोचता रहता है—'जो कुछ भी दूसरों के पास धनादि है वह सब मेरे पास आ जाय।' (८)

(ख) चुन्द! कोई पुरुष द्वेषचित्त होता है, निरन्तर अपने मन में सबके प्रति ऐसे द्वेषमय विचार लिये रहता है—'ये प्राणी मारे जायँ, इनको कारावास हो जायँ, ये नष्ट हो जायँ या ये लुप्त हो जायँ। (९)

(ग) ''कोई पुरुष मिथ्यादृष्टिक होता है, जिसकी यह विपरीत दृष्टि होती है—'न कुछ दिया गया होता है, न कुछ यज्ञ किया हुआ, न कोई सुकृत दुष्कृत कर्मों का फल या परिणाम होता है, न यह लोक है, न परलोक है, न कोई माता है न पिता, न कोई पारलौकिक अयोनिज प्राणी हैं, न लोक में कोई श्रमण या ब्राह्मण ऐसे सम्यग्गत, सम्यक्प्रतिपन्न हैं जो इस लोक या परलोक को स्वयं जानकर, साक्षात् कर धर्मोपदेश करते हों।' (१०)

इस प्रकार, चुन्द! यह त्रिविध मानसिक अशुद्धि होती है। (ग)

७. ''चुन्द! ये दश अकुशल कर्मपथ हैं। चुन्द! इनसे युक्त पुरुष प्रात:काल समय से उठकर पृथ्वी को स्पर्श करके भी अशुद्ध ही रहता है, या पृथ्वी को न स्पर्श करे तब भी अशुद्ध ही रहता है।

''गीले गोबर का स्पर्श करे तब भी और न करे तब भी अशुद्ध ही रहता है।

"अग्गिं चे पि परिचरति, असुचियेव होति, नो चे पि अग्गिं परिचरति, असुचियेव होति।

"पञ्जलिको चे पि आदिच्चं नमस्सति, असुचियेव होति; नो चे पि पञ्जलिको आदिच्चं नमस्सति, असुचियेव होति।

"सायततियकं चे पि उदकं ओरोहति, असुचियेव होति; नो चे पि सायततियकं उदकं ओरोहति, असुचियेव होति। तं किस्स हेतु? इमे, चुन्द, दस अकुसलकम्मपथा असुचियेव होन्ति असुचिकरणा च।

"इमेसं पन, चुन्द, दसन्नं अकुसलानं कम्मपथानं समन्नागमनहेतु निरयो पञ्ञायति, तिरच्छानयोनि पञ्ञायति, पेत्तिविसयो पञ्ञायति, या वा पनञ्ञा पि काचि दुग्गतियो॥

८. "तिविधं खो, चुन्द, कायेन सोचेय्यं होति; चतुब्बिधं वाचाय सोचेय्यं होति; तिविधं मनसा सोचेय्यं होति।

९. "कथं, च चुन्द, तिविधं कायेन सोचेय्यं होति? इध, चुन्द, एकच्चो पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो होति निहितदण्डो निहितसत्थो, लज्जी दयापन्नो, सब्बपाण-भूतहितानुकम्पी विहरति।

[B.476] "अदिन्नादानं पहाय, अदिन्नादाना पटिविरतो होति। यं तं परस्स परवित्तूपकरणं गामगतं वा अरञ्ञगतं वा, न तं अदिन्नं थेय्यसङ्खातं आदाता होति।

"कामेसुमिच्छाचारं पहाय, कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति या ता मातुरक्खिता

"हरे घास का स्पर्श करे तब भी और न करे तब भी अशुद्ध ही रहता है।

"अग्नि का दर्शन करे तब भी, और न करे तब भी अशुद्ध ही रहता है।

"हाथ जोड़कर सूर्य को प्रणाम करे तब भी, और न करे तब भी अशुद्ध ही रहता है।

"प्रतिदिन तीन बार जल-स्नान करे तब भी, और न करे तब भी अशुद्ध ही रहता है; क्योंकि वह दश अकुशल कर्मपथों से सम्पृक्त है।

"चुन्द! इन (उपर्युक्त) दश अशुद्ध अकुशल कर्मपथों से युक्त होने के कारण उस पुरुष का नरकपात ही होना है, पशुयोनि में ही गमन होना है, उसको मरणानन्तर प्रेत ही बनना है, या उसके भाग्य में ऐसी ही कोई अन्य दुर्गति लिखी होती है।

८. (इसके विपरीत) "चुन्द! काया से परिशुद्धि त्रिविध होती है, वाणी से चतुर्विध एवं मन से त्रिविध परिशुद्धि होती है।

९. "चुन्द! काया से त्रिविध परिशुद्धि कौन होती है?

(क) "चुन्द! यहाँ कोई पुरुष अपने दण्ड या शस्त्र भूमि पर फेंककर, लज्जा एवं दयायुक्त होता हुआ सब प्राणियों के हित का सङ्कल्प करता हुआ प्राणातिपात से विरत हो जाता है। (१)

(ख) "...दूसरे का न दिया हुआ लेना त्यागकर अदत्तादान से दूर हो जाता है। दूसरे का जो कुछ धनादि है, वह भले ही ग्राम में हो या अरण्य में जो भी न दिया हुआ है, जिसका लेना 'चौरी' कहलाता है, उसको ग्रहण नहीं करता। (२)

पितुरक्खिता मातापितुरक्खिता भातुरक्खिता भगिनिरक्खिता ञातिरक्खिता गोत्तरक्खिता धम्मरक्खिता ससामिका सपरिदण्डा अन्तमसो मालागुळपरिक्खित्ता पि, [N.320,R.267] तथारूपासु न चारित्तं आपज्जिता होति। एवं खो, चुन्द, तिविधं कायेन सोचेय्यं होति।

१०. "कथं च, चुन्द, चतुब्बिधं वाचाय सोचेय्यं होति? इध, चुन्द, एकच्चो मुसावादं पहाय मुसावादा पटिविरतो होति। समग्गतो वा परिसग्गतो वा ञातिमज्झगतो वा पूगमज्झगतो वा राजकुलमज्झगतो वा अभिनीतो सक्खिपुट्ठो—'एहम्भो पुरिस, यं जानासि तं वदेही' ति, सो अजानं वा आह 'न जानामी' ति, जानं वा आह 'जानामी' ति, अपस्सं वा आह 'न पस्सामी' ति, पस्सं वा आह 'पस्सामी' ति। इति अत्तहेतु वा परहेतु वा आमिस-किञ्चिक्खहेतु वा न सम्पजानमुसा भासिता होति।

"पिसुणं वाचं पहाय पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति—न इतो सुत्वा अमुत्र अक्खाता इमेसं भेदाय, न अमुत्र वा सुत्वा इमेसं अक्खाता अमूसं भेदाय। इति भिन्नानं वा सन्धाता सहितानं वा अनुप्पदाता समग्गारामो समग्गरतो समग्गनन्दी समग्गकरणिं वाचं भासिता होति।

"फरुसं वाचं पहाय फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति। या सा वाचा नेला कण्ण-सुखा पेमनीया हदयङ्गमा पोरी बहुजनकन्ता बहुजनमनापा, तथारूपिं वाचं भासिता होति।

"सम्फप्पलापं पहाय सम्फप्पलापा पटिविरतो होति कालवादी भूतवादी अत्थवादी धम्मवादी विनयवादी; निधानवतिं वाचं भासिता होति कालेन सापदेसं परियन्तवतिं अत्थ-संहितं। एवं खो, चुन्द, चतुब्बिधं वाचाय सोचेय्यं होति।

(ग) "...कामों में मिथ्याचार (व्यभिचार) का त्याग कर उस अनाचार से दूर हो जाता है। (लोक में) जो भी नारी जाति है, फिर भले ही वह मातृरक्षित ...पूर्ववत्... दूसरे किसी से निश्चित हो चुका है—इनमें से किसी का भी चरित्रहनन नहीं करता। (३) (क)

"इस प्रकार, चुन्द! यह काया से त्रिविध परिशुद्धि कहलाती है।

१०. "चुन्द! वाणी से चतुर्विध परिशुद्धि कैसे मानी जाती है?

(क) "चुन्द! यहाँ कोई पुरुष मृषावाद का त्याग कर मृषावाद से दूर हो जाता है। वह पुरुष सभा या परिषद् में ...पूर्ववत्... वह अज्ञात के विषय में कहता है—'नहीं जानता', ज्ञात के विषय में ही कहता है—'जानता हूँ'; न देखे के विषय में कहता है—'नहीं देखा', और देखे के विषय में ही कहता है—'देखा है'। इस प्रकार वह न स्वयं के लिये या पर के लिये या किसी चीवर या पिण्डपात आदि के लोभ से या जानबूझकर असत्य नहीं बोलता। (४)

(ख) "चुन्द! यहाँ कोई पुरुष पिशुन वाक् का त्यागकर उससे विरत हो जाता है। वह न इधर की बात उधर या उधर की बात इधर कहता है। वह दोनों पक्षों को मिलाये रखने में ही आनन्द मानता है, प्रसन्न होता है। दोनों पक्ष मिले रहें—ऐसी ही वाणी बोलता है। (५)

(ग) "चुन्द! यहाँ कोई परुष वाक् का त्याग कर उससे विरत हो जाता है। वह ऐसी वाणी ही बोलता है, जो निर्दोष, श्रुतिमधुर, मनोहर, सर्वजनप्रिय तथा सबके अनुकूल हो। (६)

[B.477] ११. ''कथं च, चुन्द, तिविधं मनसा सोचेय्यं होति? इध, चुन्द, एकच्चो अनभिज्झालु होति। यं तं परस्स परवित्तूपकरणं तं अनभिज्झित्ता होति—'अहो वत यं परस्स तं ममस्सा' ति।

''अब्यापन्नचित्तो होति अप्पदुट्ठमनसङ्कप्पो—'इमे सत्ता अवेरा होन्तु अब्यापज्झा, अनीघा सुखी अत्तानं परिहरन्तू' ति।

[R.268] ''सम्मादिट्ठिको होति अविपरीतदस्सनो—'अत्थि दिन्नं, अत्थि यिट्ठं, अत्थि हुतं, अत्थि सुकटदुक्कटानं कम्मानं फलं विपाको, अत्थि अयं लोको, अत्थि परो लोको, अत्थि माता, अत्थि पिता, अत्थि सत्ता ओपपातिका, अत्थि लोके समणब्राह्मणा सम्मग्गता [N.321] सम्मापटिपन्ना ये इमं च परं च लोकं सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती' ति। एवं खो, चुन्द, तिविधं मनसा सोचेय्यं होति।

१२. ''इमे खो, चुन्द, दस कुसलकम्मपथा। इमेहि खो, चुन्द, दसहि कुसलेहि कम्मपथेहि समन्नागतो कालस्सेव उट्ठहन्तो व सयनम्हा पथविं चे पि आमसति, सुचियेव होति; नो चे पि पथविं आमसति, सुचियेव होति।

''अल्लानि चे पि गोमयानि आमसति, सुचियेव होति; नो चे पि अल्लानि गोमयानि आमसति, सुचियेव होति।

''हरितानि चे पि तिणानि आमसति, सुचियेव होति; नो चे पि हरितानि तिणानि आमसति, सुचियेव होति।

(घ) ''चुन्द! यहाँ कोई पुरुष सम्प्रलाप का त्यागकर उससे विरत हो जाता है। वह सामयिक, प्रासङ्गिक, सार्थक धर्म और विनय की बोधक वाणी ही बोलता है। (७)

''इस प्रकार, चुन्द! वाणी की चतुर्विध परिशुद्धि मानी जाती है। (ख)

११. और, चुन्द! मन की त्रिविध परिशुद्धि कैसे मानी जाती है?

(क) ''यहाँ, चुन्द! कोई पुरुष निर्लोभ होता है। वह दूसरे के धन पर अपनी लोभदृष्टि नहीं गड़ाता कि वह सब मेरा हो जाय। (८)

(ख) ''यहाँ चुन्द! कोई पुरुष द्वेषरहितचित्त होता है। वह सबके प्रति यही भावना रखता है—'सब प्राणी परस्पर निर्वैर, निर्द्वेष, निष्पाप रहते हुए अपने को सुखी रखें। (९)

(ग) ''यहाँ, चुन्द! कोई पुरुष सम्यग्दृष्टि तथा अनुकूल मत वाला होता है—'दान का, यज्ञ का, सुकृत-दुष्कृत कर्मों का फल होता है, यह लोक एवं परलोक भी है, माता-पिता भी हैं, अयोनिज प्राणी भी हैं, ऐसे सम्यग्दृष्टिसम्पन्न श्रमण ब्राह्मण भी हैं जो स्वयं जानकर, साक्षात् कर दूसरों को धर्मोपदेश करते हैं। (१०) (ग)

१२. ''चुन्द! ये दश कुशल कर्मपथ हैं। इन दश कुशलकर्मपथों से युक्त पुरुष प्रात:काल समय से उठकर, शय्या त्याग कर पृथ्वी का स्पर्श करे या न करे, शुद्ध ही रहता है।

''...गीले गोबर का स्पर्श करे या न करे, शुद्ध ही रहता है।

''...हरित तृण का स्पर्श करे या न करे, शुद्ध ही रहता है।

"अग्गिं चे पि परिचरति, सुचियेव होति; नो चे पि अग्गिं परिचरति, सुचियेव होति।

"पञ्जलिको चे पि आदिच्चं नमस्सति, सुचियेव होति; नो चे पि पञ्जलिको आदिच्चं नमस्सति, सुचियेव होति।

"सायततियकं चे पि उदकं ओरोहति, सुचियेव होति; नो चे पि सायततियकं उदकं ओरोहति, सुचियेव होति। तं किस्स हेतु? इमे, चुन्द, दस कुसलकम्मपथा सुचियेव होन्ति सुचिकरणा च।

"इमेसं पन, चुन्द, दसन्नं कुसलानं कम्मपथानं समन्नागमनहेतु देवा [B.478] पञ्ञायन्ति, मनुस्सा पञ्ञायन्ति, या वा पनञ्ञा पि काचि सुगतियो" ति।

१३. एवं वुत्ते चुन्दो कम्मारपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—"अभिक्कन्तं, भन्ते ...पे०... उपासकं मं, भन्ते, भगवा धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥ ●

११. जाणुस्सोणिसुत्तं : १. अथ खो जाणुस्सोणि ब्राह्मणो येन भगवा [R.269] तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो जाणुस्सोणि ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—

२. "मयमस्सु, भो गोतम, ब्राह्मणा नाम। दानानि देम, सद्धानि करोम—[N.322] 'इदं दानं पेतानं ञातिसालोहितानं उपकप्पतु, इदं दानं पेता ञातिसालोहिता परिभुञ्जन्तू' ति। कच्चि तं, भो गोतम, दानं पेतानं ञातिसालोहितानं उपकप्पति; कच्चि ते पेता ञातिसालोहिता तं दानं परिभुञ्जन्ती" ति?

"ठाने खो, ब्राह्मण, उपकप्पति, नो अट्ठाने" ति।

"...अग्नि की परिचर्या करे या न करे, शुद्ध ही रहता है।

"...हाथ जोड़कर, सूर्य को प्रणाम करे या न करे, शुद्ध ही रहता है।

"...दिन में तीन बार स्नान करे या न करे, शुद्ध ही रहता है।

"चुन्द! इन दश कुशलपथों से युक्त पुरुष को देवत्वलाभ हो सकता है, मनुष्यत्वलाभ हो सकता है। या फिर कोई अन्य सुगति भी मिल सकती है।"

१३. ऐसा कहे जाने पर चुन्द कर्मारपुत्र बोला—"भन्ते! आपने बहुत उचित कहा, बहुत ही अच्छा कहा। ...पूर्ववत्... आज से आप मुझको, मेरे प्राण रहने तक, अपना शरणागत उपासक मानें॥" ●

११. जानुश्रोणिसूत्र : : दान, अदान के उचित स्थान

१. तब कोई जानुश्रोणि नामक ब्राह्मण भगवान् के पास आया। आकर भगवान् से कुशल मङ्गल पूछकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस जानुश्रोणि ब्राह्मण ने भगवान् से अपनी यह जिज्ञासा प्रकट की—

२. "भो गौतम! हम ब्राह्मण है। हम लोग यह सङ्कल्प कर अपने मृत सम्बन्धिजनों को दान करते हैं—'यह दान हमारे मृत रक्तसम्बद्ध ज्ञातिजनों के उपयोग में आवे।' भो गौतम! क्या वह दान हमारे प्रेतजनों के उपयोग में आता है? क्या वे प्रेतजन उस दान का उपभोग कर पाते हैं?"

''कतमं पन, भो गोतम, ठानं, कतमं अट्ठानं'' ति?

३. ''इध, ब्राह्मण, एकच्चो पाणातिपाती होति, अदिन्नादायी होति, कामेसुमिच्छाचारी होति, मुसावादी होति, पिसुणवाचो होति, फरुसवाची होति, सम्फप्पलापी होति, अभिज्झालु होति, ब्यापन्नचित्तो होति, मिच्छादिट्ठिको होति। सो कायस्स भेदा परं मरणा निरयं उपपज्जति। यो नेरयिकानं सत्तानं आहारो, तेन सो तत्थ यापेति, तेन सो तत्थ तिट्ठति। इदं पि खो, ब्राह्मण, अट्ठानं यत्थ ठितस्स तं दानं न उपकप्पति।

४. ''इध पन, ब्राह्मण, एकच्चो पाणातिपाती ...पे०... मिच्छादिट्ठिको होति। सो कायस्स भेदा परं मरणा तिरच्छानयोनिं उपपज्जति। यो तिरच्छानयोनिकानं सत्तानं आहारो, [B.479] तेन सो तत्थ यापेति, तेन सो तत्थ तिट्ठति। इदं पि खो, ब्राह्मण, अट्ठानं यत्थ ठितस्स तं दानं न उपकप्पति।

५. ''इध पन, ब्राह्मण, एकच्चो पाणातिपाता पटिविरतो होति, अदिन्नादाना पटिविरतो होति, कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति, मुसावादा पटिविरतो होति, पिसुणाय [R.270] वाचाय पटिविरतो होति, फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति, सम्फप्पलापा पटिविरतो होति, अनभिज्झालु होति, अब्यापन्नचित्तो होति, सम्मादिट्ठिको होति। सो कायस्स भेदा परं मरणा मनुस्सानं सहब्यतं उपपज्जति। यो मनुस्सानं आहारो, तेन सो तत्थ यापेति, तेन सो तत्थ तिट्ठति। इदं पि खो, ब्राह्मण, अट्ठानं यत्थ ठितस्स तं दानं न उपकप्पति।

६. ''इध पन, ब्राह्मण, एकच्चो पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सम्मा-

---

''ब्राह्मण! किसी स्थान पर यह उपयोग में आता है, किसी स्थान पर नहीं।''

''भन्ते! वह 'स्थान' कौन है? तथा 'अस्थान' कौन है?

३. ''यहाँ, ब्राह्मण! कोई पुरुष प्राणातिपाती होता है, अदत्तादायी (चौर) होता है, व्यभिचारी होता है, मृषावादी होता है, पिशुनवाक् होता है, परुषवाक् होता है, सम्प्रलापी होता है, लोभी होता है, द्वेषी होता है, मिथ्यादृष्टि होता है। वह देहपात के बाद मरणानन्तर, इन पापकर्मों के फलस्वरूप नरकयोनि में जा गिरता है। वह वहाँ नरकवासियों के योग्य आहार से अपना जीवनयापन करता है, उसी के सहारे वह वहाँ स्थिर रहता है। ब्राह्मण! यह भी एक 'अस्थान' है जहाँ तुम्हारा यह दान उस प्राणी के उपयोग में नहीं आता।

४. ''यहाँ, ब्राह्मण! कोई प्राणातिपाती ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि होता है। वह मरणानन्तर तिरश्चीन (पशु) योनि में जा गिरता है...। ब्राह्मण! यह भी एक 'अस्थान' है, जहाँ तुम्हारा यह दान उस प्राणी के उपयोग में नहीं आता।

५. ''यहाँ, ब्राह्मण! कोई पुरुष प्राणातिपात, चौरी, व्यभिचार, असत्यभाषण, चुगलखोरी, कठोरवाणी, सम्प्रलाप, लोभ एवं द्वेष से विरत रहता है और वह सम्यग्दृष्टि होता है। वह इस देहपात के बाद, मरणानन्तर मनुष्यों का मैत्रीभाव (साथ) प्राप्त करता है। यहाँ भी जो मनुष्यों का आहार है, उसी से वह अपना जीवनयापन करता है, उसी के सहारे से वह वहाँ स्थिर रहता है। यहाँ भी, ब्राह्मण! तुम्हारे इस दान का कोई उपयोग नहीं हो पाता, अतः यह भी 'अस्थान' ही है।

दिट्ठिको होति। सो कायस्स भेदा परं मरणा देवानं सहब्यतं उपपज्जति। यो देवानं [N.323] आहारो, तेन सो तत्थ यापेति, तेन सो तत्थ तिट्ठति। इदं पि, ब्राह्मण, अट्ठानं यत्थ ठितस्स तं दानं उपकप्पति।

७. ''इध पन, ब्राह्मण, एकच्चो पाणातिपाती होति ...पे०... मिच्छादिट्ठिको होति। सो कायस्स भेदा परं मरणा पेत्तिविसयं उपपज्जति। यो पेत्तिवेसयिकानं सत्तानं आहारो, तेन सो तत्थ यापेति, तेन सो तत्थ तिट्ठति, यं वा पनस्स इतो अनुप्पवेच्छन्ति मित्तामच्चा वा ञातिसालोहिता वा, तेन सो तत्थ यापेति, तेन सो तत्थ तिट्ठति। इदं खो, ब्राह्मण, ठानं यत्थ ठितस्स तं दानं उपकप्पती'' ति।

८. ''सचे पन, भो गोतम, सो पेतो ञातिसालोहितो तं ठानं अनुपपन्नो होति, को तं दानं परिभुञ्जती'' ति?

''अञ्ञे पिस्स, ब्राह्मण, पेता ञातिसालोहिता तं ठानं उपपन्ना होन्ति, ते तं दानं परिभुञ्जन्ती'' ति।

९. ''सचे पन, भो गोतम, सो चेव पेतो ञातिसालोहितो तं ठानं अनुपपन्नो होति अञ्ञे पिस्स ञातिसालोहिता पेता तं ठानं अनुपपन्ना होन्ति, को तं दानं परिभुञ्जती'' [B.480] ति?

''अट्ठानं खो एतं, ब्राह्मण, अनवकासो यं तं ठानं विवित्तं अस्स इमिना दीघेन अद्धुना यदिदं पेतेहि ञातिसालोहितेहि। अपि च, ब्राह्मण, दायको पि अनिप्फलो'' [R.271] ति।

---

६. ''यहाँ, ब्राह्मण! कोई पुरुष प्राणातिपात ...पूर्ववत्... द्वेष से विरत होता है, तथा सम्यग्दृष्टि होता है। वह, इस देहपात के बाद, मरणानन्तर, देवताओं का साथ पाता है। वहाँ वह देवताओं के आहार से अपना जीवनयापन करता है। वहाँ भी, ब्राह्मण! तुम्हारे इस दान का कोई उपयोग नहीं हो पाता, अत: वह भी 'अस्थान' ही है।

७. यहाँ, ब्राह्मण! कोई पुरुष प्राणातिपाती होता है...मिथ्यादृष्टिक होता है। वह...मरणानन्तर प्रेतलोक में उत्पन्न हो, तो वह वहाँ प्रेतलोक के आहार से ही अपना जीवनयापन करता है। या जो उसके साथ के सम्बन्धी या मित्र आदि वहाँ पहुँचाते हैं, उससे जीवनयापन करता है। ब्राह्मण! यह एक स्थान है, जहाँ तुम्हारे द्वारा प्रदत्त दान का उपयोग हो पाता है।''

८. ''भन्ते! यदि उस समय उस लोक में हमारा कोई सम्बन्धिजन उत्पन्न ही न हुआ हो तो उस दान का उपभोग कौन करेगा?''

''ब्राह्मण! दूसरे भी तुम्हारे सम्बन्धिजन वहाँ उत्पन्न हुए हों तो वे उसका उपभोग करेंगे।''

९. ''भो गौतम! यदि हमारा वह रक्तसम्बद्ध प्रेत वहाँ उत्पन्न न हुआ हो तथा हमारा कोई परम्परागत प्रेत भी वहाँ उत्पन्न न हुआ हो तो उस दान का फल कौन भोगेगा?''

''ब्राह्मण! यह असम्भव है कि इतने लम्बे मार्ग में कोई स्थान रक्तसम्बद्ध प्रेतजनों से सर्वथा रिक्त ही हो। और ब्राह्मण! दाता का दान निष्फल नहीं हुआ करता।'' (क)

''अट्ठाने पि भवं गोतमो परिकप्पं वदती'' ति ?

१०. ''अट्ठाने पि खो अहं, ब्राह्मण, परिकप्पं वदामि। इध, ब्राह्मण, एकच्चो पाणातिपाती होति, अदिन्नादायी होति, कामसुमिच्छाचारी होति, मुसावादी होति, पिसुणवाचो होति, फरुसवाचो होति, सम्फप्पलापी होति, अभिज्झालु होति, ब्यापन्नचित्तो होति, मिच्छादिट्ठिको होति; सो दाता होति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं। सो कायस्स भेदा परं मरणा हत्थीनं सहब्यतं उपपज्जति। सो तत्थ लाभी होति अन्नस्स पानस्स मालानानालङ्कारस्स।

[N.324] ''यं खो, ब्राह्मण, इध पाणातिपाती अदिन्नादायी कामेसुमिच्छाचारी मुसावादी पिसुणवाचो फरुसवाचो सम्फप्पलापी अभिज्झालु ब्यापन्नचित्तो मिच्छादिट्ठिको, तेन सो कायस्स भेदा परं मरणा हत्थीनं सहब्यतं उपपज्जति। यं च खो सो दाता होति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं, तेन सो तत्थ लाभी होति अन्नस्स पानस्स मालानानालङ्कारस्स।

११. ''इध पन, ब्राह्मण, एकच्चो पाणातिपाती होति ...पे०... मिच्छादिट्ठिको होति। सो दाता होति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं। सो कायस्स भेदा परं मरणा अस्सानं सहब्यतं उपपज्जति ...पे०... गुन्नं सहब्यतं उपपज्जति ...पे०... कुक्कुरानं सहब्यतं उपपज्जति। सो तत्थ लाभी होति अन्नस्स पानस्स मालानानालङ्कारस्स।

[B.481, R.272] ''यं खो, ब्राह्मण, इध पाणातिपाती ...पे०... मिच्छादिट्ठिको, तेन सो कायस्स भेदा परं परं मरणा कुक्कुरानं सहब्यतं उपपज्जति। यं च खो सो दाता होति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं, तेन सो तत्थ लाभी होति अन्नस्स पानस्स मालानानालङ्कारस्स।

''भो गौतम! क्या आप अस्थान में भी यही निर्णय देते हैं ?

१०. ''हाँ, अस्थान में भी मेरा यही निर्णय है। यहाँ, ब्राह्मण! कोई प्राणातिपाती होता है... पूर्ववत्...मिथ्यादृष्टि होता है। वह यदि किसी श्रमण या ब्राह्मण को अन्न, पान, वस्त्र, यान, माला, गन्ध, विलेपन या शय्या, प्रकाशयुक्त आवास दान करता है। वह मरणानन्तर, हाथियों के साथ उत्पन्न होता है। वहाँ, वह अन्न, पान एवं माला तथा नाना अलङ्कार प्राप्त करता है।

''ब्राह्मण! वह क्योंकि प्राणातिपाती ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि था इसके फलस्वरूप वह, मरणानन्तर, हाथियों की योनि में उत्पन्न होता है, परन्तु उसने श्रमण ब्राह्मणों को जो उस जन्म में दान किया था, उसके फलस्वरूप उसको इस हस्तिजन्म में वह अन्न, पान, माला, अलङ्कार का लाभ होता है।

११. ''यहाँ, ब्राह्मण! कोई प्राणातिपाती... मिथ्यादृष्टि होता है। ...पूर्ववत्... इसके फलस्वरूप, मरणानन्तर, वह अश्वों के साथ ...पूर्ववत्... गौओं के साथ...कुत्तों के साथ उत्पन्न होता है, वहाँ भी वह अन्न पान आदि का लाभी होता है।

१२. "इध पन, ब्राह्मण, एकच्चो पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सम्मादिट्ठिको होति। सो दाता होति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं। सो कायस्स भेदा परं मरणा मनुस्सानं सहब्यतं उपपज्जति। सो तत्थ लाभी होति मानुसकानं पञ्चन्नं कामगुणानं।

"यं खो, ब्राह्मण, इध पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सम्मादिट्ठिको, तेन सो कायस्स भेदा परं मरणा मनुस्सानं सहब्यतं उपपज्जति। यं च खो सो दाता होति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं, तेन सो तत्थ लाभी होति मानुसकानं पञ्चन्नं कामगुणानं।

१३. "इध, पन, ब्राह्मण, एकच्चो पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सम्मादिट्ठिको होति। सो दाता होति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं। सो कायस्स भेदा परं मरणा देवानं सहब्यतं [N.325] उपपज्जति। सो तत्थ लाभी होति दिब्बानं पञ्चन्नं कामगुणानं। [R.273]

"यं खो, ब्राह्मण, इध पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सम्मादिट्ठिको, तेन सो कायस्स भेदा परं मरणा देवानं सहब्यतं उपपज्जति। यं च खो सो दाता होति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं, तेन सो तत्थ लाभी होति दिब्बानं पञ्चन्नं कामगुणानं। अपि च, ब्राह्मण, दायको पि अनिप्फलो" ति।

१४. "अच्छरियं, भो गोतम, अब्भुतं, भो गोतम! यावञ्चिदं, भो गोतम, [B.482] अलमेव दानानि दातुं, अलं सद्धानि कातुं, यत्र हि नाम दायको पि अनिप्फलो" ति।

"ब्राह्मण! यद्यपि वह प्राणातिपाती...मिथ्यादृष्टि होने के कारण इस योनि में उत्पन्न हुआ; परन्तु उस जन्म में श्रमण ब्राह्मणों को दान करने के कारण इस योनि में भी वह अन्न, पान आदि का लाभी होता है।

१२. (परन्तु) "ब्राह्मण! कोई पुरुष प्राणातिपात से विरत होता है...सम्यग्दृष्टि होता है। तथा श्रमण ब्राह्मणों को अन्न, पान, वस्त्र आदि का दान करता है; तो वह मरणानन्तर, मनुष्यों के साथ उन अन्न पानादि पदार्थों का लाभी होता है।

"ब्राह्मण! वह पुरुष प्राणातिपात आदि से विरत होने के फलस्वरूप इस मनुष्य योनि में आया, तथा उस दान के फलस्वरूप यहाँ भी अन्नपान आदि पञ्च कामगुणों का लाभी हुआ।

१३. "यहाँ, ब्राह्मण! कोई पुरुष प्राणातिपात से प्रतिविरत होता है...सम्यग्दृष्टि होता है। वह श्रमण ब्राह्मणों को अन्न, पान, वस्त्र, यान, शय्या एवं प्रकाशयुक्त आवास का दान भी करता है। वह इन द्विविध कर्मों के प्रभाव से, मरणानन्तर, देवताओं के साथ उत्पन्न होता है और वहाँ दिव्य पाँचों गुणों का उपभोग करता है।

"इस प्रकार, ब्राह्मण! दाता का दान निष्फल नहीं हुआ करता।"

१४. "आश्चर्य है, भो गौतम! आश्चर्य है! तब तो हम दान में अधिकता लायँगे। श्राद्ध करेंगे। जबकि आपके कथनानुसार दाता के द्वारा किया हुआ दान व्यर्थ नहीं जाया करता।"

"एवमेतं, ब्राह्मण, दायको पि हि, ब्राह्मण, अनिप्फलो" ति।

"अभिक्कन्तं, भो गोतम, अभिक्कन्तं, भो गोतम ...पे०... उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥ ●

जाणुस्सोणिवग्गो सत्तरसमो॥

१८. साधुवग्गो

१. साधुसुत्तं : १. "साधुं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि असाधुं च। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो [R.274] पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. "कतमं च, भिक्खवे, असाधु? पाणातिपातो, अदिन्नादानं, कामेसुमिच्छाचारो, मुसावादो, पिसुणा वाचा, फरुसा वाचा, सम्फप्पलापो, अभिज्झा, ब्यापादो, मिच्छादिट्ठि—इदं वुच्चति, भिक्खवे, असाधु।

३. "कतमं च, भिक्खवे, साधु? पाणातिपाता वेरमणी, अदिन्नादाना वेरमणी, कामेसुमिच्छाचारा वेरमणी, मुसावादा वेरमणी, पिसुणाय वाचाय वेरमणी, फरुसाय वाचाय [N.326] वेरमणी, सम्फप्पलापा वेरमणी, अनभिज्झा, अब्यापादो, सम्मादिट्ठि—इदं वुच्चति, भिक्खवे, साधू" ति॥ ●

"बात तो सत्य ही है, ब्राह्मण! दाता द्वारा किया दान निष्फल नहीं होता।"

"भो गौतम! आपने बहुत उचित कहा, बहुत ही उचित कहा ...पूर्ववत्...। आप गौतम, आज से, मेरे प्राण रहने तक, मुझको अपना शरणागत उपासक समझें॥" ●

जानुश्रोणिवर्ग सप्तदश सम्पन्न॥

साधुवर्ग

१. साधुसूत्र : : दश असाधु एवं साधु धर्म

१. भिक्षुओ! मैं तुमको असाधु धर्मों एवं साधु धर्मों की देशना करूँगा। उसको सुनो, भलीभाँति मन में बैठा लो। बताता हूँ। ...पूर्ववत्...। भगवान् बोले—

२. "भिक्षुओ! असाधु (धर्म) कौन होते हैं? प्राणातिपात, अदत्तादान, कामभोगों में मिथ्याचार, मृषावाद, पिशुनवाक्, परुषवाक्, सम्प्रलाप, अभिध्या (लोभ), व्यापाद, मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! ये असाधु धर्म है।

३. "और, भिक्षुओ! साधु धर्म कौन हैं? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—ये, भिक्षुओ! साधु धर्म कहलाते हैं॥" ●

२. अरियधम्मसुत्तं : १. "अरियधम्मं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि अनरियधम्मं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, अनरियो धम्मो?

२. "कतमो च, भिक्खवे, अरियो धम्मो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियो धम्मो" ति॥ ●

३. कुसलसुत्तं : १. "कुसलं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि अकुसलं च। [B.483] तं सुणाथ ...पे०... कतमं च, भिक्खवे, अकुसलं? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—इदं वुच्चति, भिक्खवे, अकुसलं।

२. "कतमं च, भिक्खवे, कुसलं? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... [R.275] सम्मादिट्ठि—इदं वुच्चति, भिक्खवे, कुसलं" ति॥ ●

४. अत्थसुत्तं : १. "अत्थं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि अनत्थं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, अनत्थो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अनत्थो।

२. "कतमो च, भिक्खवे, अत्थो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... धम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अत्थो" ति॥ ●

५. धम्मसुत्तं : १. "धम्मं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि अधम्मं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, अधम्मो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अधम्मो।

---

२. आर्यधर्मसूत्र : : आर्यधर्म एवं अनार्यधर्म

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको आर्यधर्म एवं अनार्यधर्म की देशना करूँगा। उसको सुनो ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! 'अनार्यधर्म' कौन सा होता है? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—यह, भिक्षुओ! 'अनार्यधर्म' कहलाता है।

२. "और, भिक्षुओ! आर्यधर्म कौन सा होता है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह 'आर्यधर्म' होता है॥" ●

३. कुशलधर्मसूत्र : : कुशलधर्म एवं अकुशलधर्म

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको कुशल एवं अकुशलधर्म की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! अकुशल धर्म कौन होता है? प्राणातिपात...मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह धर्म अकुशल होता है।

२. "भिक्षुओ! कुशलधर्म कौन होता है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह कुशलधर्म होता है॥" ●

४. अर्थसूत्र : : अर्थ एवं अनर्थ का व्याख्यान

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको अर्थ एवं अनर्थ की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! 'अनर्थ' कौन कहलाता है? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह 'अनर्थ' कहलाता है।

२. "भिक्षुओ! 'अर्थ' कौन कहलाता है? प्राणातिपात से विरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह 'अर्थ' कहलाता है॥" ●

[N.327] २. ''कतमो च, भिक्खवे, धम्मो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, धम्मो'' ति॥

६. आसवसुत्तं : १. ''सासवं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि अनासवं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, सासवो धम्मो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सासवो धम्मो।

२. ''कतमो च, भिक्खवे, अनासवो धम्मो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... [R.276] सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अनासवो धम्मो'' ति॥

७. वज्जसुत्तं : १. ''सावज्जं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि अनवज्जं च। तं [B.484] सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, सावज्जो धम्मो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सावज्जो धम्मो।

२. ''कतमो च, भिक्खवे, अनवज्जो धम्मो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अनवज्जो धम्मो'' ति॥

८. तपनीयसुत्तं : १. ''तपनीयं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि अतपनीयं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, तपनीयो धम्मो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, तपनीयो धम्मो।

---

५. धर्मसूत्र : : धर्म एवं अधर्म का व्याख्यान

१. भिक्षुओ! मैं तुमको धर्म एवं अधर्म की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यहाँ 'अधर्म' कौन होता है? प्राणातिपात....मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह 'अधर्म' कहलाता है।

२. ''पुनः, भिक्षुओ! 'धर्म' कौन होता है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह 'धर्म' कहलाता है।''

६. आश्रवसूत्र : : साश्रव एवं अनाधव धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको साश्रव एवं अनाश्रव धर्म का व्याख्यान करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! साश्रव धर्म कौन हैं? प्राणातिपात...मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! ये साश्रव धर्म कहलाते हैं।

२. ''भिक्षुओ! अनाश्रव धर्म कौन होता है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! ये अनाश्रव धर्म कहलाते हैं।''

७. वद्यसूत्र : : सावद्य एवं निरवद्य धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको सावद्य (सदोष) एवं निरवद्य (निर्दोष) धर्म की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! सावद्य धर्म कौन कहलाता है? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह सावद्य धर्म है।

२. ''भिक्षुओ! निरवद्य धर्म कौन कहलाता है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह निरवद्य धर्म कहलाता है॥''

८. तपनीयसूत्र : : तपनीय एवं अतपनीय धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको तपनीय (कष्टप्रद) एवं अतपनीय (सुखप्रद) धर्मों की देशना

२. "कतमो च, भिक्खवे, अतपनीयो धम्मो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अतपनीयो धम्मो" ति॥ ●

९. आचयगामिसुत्तं : १. "आचयगामिं च वो, भिक्खवे, धम्मं [N.328] देसेस्सामि अपचयगामिं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, आचयगामी धम्मो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, आचयगामी धम्मो।

२. "कतमो च, भिक्खवे, अपचयगामी धम्मो? पाणातिपाता वेरमणी [R.277] ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अपचयगामी धम्मो" ति॥ ●

१०. दुक्खुद्रयसुत्तं : १. "दुक्खुद्रयं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि सुखुद्रयं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, दुक्खुद्रयो धम्मो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खुद्रयो धम्मो।

२. "कतमो च, भिक्खवे, सुखुद्रयो धम्मो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सुखुद्रयो धम्मो" ति॥ ●

११. विपाकसुत्तं : १. "दुक्खविपाकं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि [B.485] सुखविपाकं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, दुक्खविपाको धम्मो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खविपाको धम्मो।

करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यहाँ 'तपनीय' धर्म कौन होता है? प्राणातिपात...मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह कहलाता है तपनीय धर्म॥

२. भिक्षुओ! कौन 'अतपनीय' धर्म कहलाता है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह कहलाता है 'अतपनीय धर्म'॥" ●

९. आचयगामिसूत्र : : आचयगामी एवं अपचयगामी धर्म

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको आचय (संग्रह) गामी धर्म एवं अपचय (निरोध) गामी धर्म की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यहाँ आचयगामी धर्म कौन होता है? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह कहलाता है—आचयगामी धर्म।

२. "और, भिक्षुओ! अपचयगामी धर्म कौन होता है? प्राणातिपातविरति...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह कहलाता है अपचयगामी धर्म॥" ●

१०. दुःखोद्रयसूत्र : : दुःखोद्रय एवं सुखोद्रय धर्म

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको (साधना में) दुःखोद्रय (दुःखवर्धक) धर्म एवं सुखोद्रय (सुखवर्धक) धर्मों की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यहाँ दुःखोद्रय धर्म कौन होता है? प्राणातिपात...मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! ये दुःखोद्रय धर्म कहलाता है।

२. "भिक्षुओ! और कौन सुखोद्रय धर्म कहलाता है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—यह, भिक्षुओ! सुखोद्रय धर्म कहलाता है"॥ ●

११. विपाकसूत्र : : दुःखविपाक एवं सुखविपाक धर्म

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको दुःखविपाक धर्म एवं सुखविपाक धर्म की देशना करूँगा।

२. ''कतमो च, भिक्खवे, सुखविपाको धम्मो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सुखविपाको धम्मो'' ति॥ ●

साधुवग्गो अट्ठारसमो॥

१९. अरियमग्गवग्गो

१. अरियमग्गसुत्तं : १. ''अरियमग्गं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि अनरियमग्गं [N.329,R.278] च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, अनरियो मग्गो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अनरियो मग्गो।

२. ''कतमो च, भिक्खवे, अरियो मग्गो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियो मग्गो'' ति॥ ●

२. कण्हमग्गसुत्तं : १. ''कण्हमग्गं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि सुक्कमग्गं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, कण्हो मग्गो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, कण्हो मग्गो।

२. ''कतमो च, भिक्खवे, सुक्को मग्गो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सुक्को मग्गो'' ति॥ ●

...पूर्ववत्...भिक्षुओ! दुःखविपाक धर्म कौन है? प्राणातिपात...मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह दुःखविपाक धर्म कहलाता है।

२. ''भिक्षुओ! और सुखविपाक धर्म कौन होता है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह सुखविपाक धर्म कहलाता है॥'' ●

साधुवर्ग अष्टादश सम्पन्न॥

१९. आर्यमार्गवर्ग

१. आर्यमार्गसूत्र : : आर्यमार्ग एवं अनार्यमार्ग

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको आर्यमार्ग एवं अनार्यमार्ग की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यहाँ अनार्यमार्ग कौन सा है? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह अनार्यमार्ग कहलाता है।

२. और, भिक्षुओ! यह आर्यमार्ग क्या है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—यह, भिक्षुओ! आर्यमार्ग कहलाता है॥'' ●

२. कृष्णमार्गसूत्र : : कृष्णमार्ग एवं शुक्लमार्ग

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको कृष्णमार्ग एवं शुक्लमार्ग की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...।

३. सद्धम्मसुत्तं : १. "सद्धम्मं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि असद्धम्मं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, असद्धम्मो ? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि— अयं वुच्चति, भिक्खवे. असद्धम्मो।

२. "कतमो च, भिक्खवे, सद्धम्मो ? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... [B.486] सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सद्धम्मो" ति॥ ●

४. सप्पुरिसधम्मसुत्तं : १. "सप्पुरिसधम्मं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि असप्पुरिस-धम्मं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, असप्पुरिसधम्मो ? [R.279] पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, असप्पुरिसधम्मो।

२. "कतमो च, भिक्खवे, सप्पुरिसधम्मो ? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... [N.330] सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सप्पुरिसधम्मो" ति॥ ●

५. उप्पादेतब्बधम्मसुत्तं : १. "उप्पादेतब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि न उप्पादेतब्बं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, न उप्पादेब्बो धम्मो ? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, न उप्पादेतब्बो धम्मो।

२. "कतमो च, भिक्खवे, उप्पादेतब्बो धम्मो ? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, उप्पादेतब्बो धम्मो" ति॥ ●

"ब्यापादेतब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि अब्यापादेतब्बं च। तं सुणाथ

भिक्षुओ! यह कृष्णमार्ग क्या होता है ? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—यह, भिक्षुओ! कृष्णमार्ग कहलाता है।

२. "और, भिक्षुओ! शुक्लमार्ग क्या कहलाता है ? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—यह शुक्लमार्ग कहलाता है॥" ●

३. सद्धर्मसूत्र : : सद्धर्म और असद्धर्म

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको सद्धर्म एवं असद्धर्म की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्... भिक्षुओ! यह असद्धर्म कौन है ? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—यह भिक्षुओ! असद्धर्म कहलाता है।

२. "पुनः, भिक्षुओ! सद्धर्म क्या कहलाता है ? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—यह भिक्षुओ! सद्धर्म कहलाता है॥" ●

४. सत्पुरुषधर्मसूत्र : : सत्पुरुषधर्म एवं असत्पुरुष धर्म

१. "भिक्षुओ! मैं तुमको सत्पुरुषधर्म एवं असत्पुरुषधर्म की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह असत्पुरुषधर्म कौन होता है ? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—यह, भिक्षुओ! असत्पुरुषधर्म है।

२. पुनः, भिक्षुओ! सत्पुरुष धर्म कौन-सा है ? प्राणातिपात से विरति. ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—यह, भिक्षुओ! सत्पुरुषधर्म है॥" ●

५. उत्पादयितव्यधर्मसूत्र : : उत्पादनीय एवं अनुत्पादनीय धर्म

१. भिक्षुओ! मैं तुमको उत्पादनीय एवं अनुत्पादनीय धर्मों की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...।

...पे०... कतमो च, भिक्खवे, अब्यापादेतब्बो धम्मो ? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि— अयं वुच्चति, भिक्खवे, अब्यापादेतब्बो धम्मो।

''कतमो च, भिक्खवे, ब्यापादेतब्बो धम्मो ? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, ब्यापादेतब्बो धम्मो'' ति॥ ●

६. आसेवितब्बधम्मसुत्तं : १. ''आसेवितब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि नासेवितब्बं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, नासेवितब्बो धम्मो ? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, नासेवितब्बो धम्मो।

[B.487] २. ''कतमो च, भिक्खवे, आसेवितब्बो धम्मो ? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, आसेवितब्बो धम्मो'' ति॥ ●

[N.331,R.280] **७. भावेतब्बधम्मसुत्तं** : १. ''भावेतब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि न भावेतब्बं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, न भावेतब्बो धम्मो ? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, न भावेतब्बो धम्मो।

२. ''कतमो च, भिक्खवे, भावेतब्बो धम्मो ? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, भावेतब्बो धम्मो'' ति॥ ●

भिक्षुओ! यहाँ अनुत्पादनीय धर्म कौन है ? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह अनुत्पादनीय धर्म है।

२. और, भिक्षुओ! उत्पादनीय धर्म कौन है ? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह उत्पादनीय धर्म है॥'' ●

''भिक्षुओ![१] मैं तुमको व्यापादयितव्य धर्म एवं अव्यापादयितव्य धर्म की देशना करूँगा।... यह अव्यापादयितव्य धर्म कौन है? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह अव्यापादयितव्य धर्म कहलाता है।

''पुनः, भिक्षुओ! व्यापादयितव्य धर्म कौन है ? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह व्यापादयितव्य धर्म कहलाता है[१]॥'' ●

६. आसेवितव्यधर्मसूत्र : : आसेवितव्य एवं अनासेवितव्य धर्मसूत्र

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको आसेवितव्य धर्म एवं अनासेवितव्य धर्म की देशना करूँगा।... पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह अनासेवनीय धर्म कौन है ? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—यह भिक्षुओ! अनासेवनीय धर्म कहलाता है। यह आसेवनीय धर्म क्या है? प्राणातिपातविरति... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह कहलाता है आसेवनीय धर्म॥'' ●

७. भावयितव्यधर्मसूत्र : : न साधना करने एवं साधना करने योग्य धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको न साधना करने योग्य धर्म तथा साधना करने योग्य धर्म की देशना करता हूँ. ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! न साधना करने योग्य धर्म कौन-सा है ? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—यह धर्म, भिक्षुओ! न साधनायोग्य है।

१-१. यह पाठ सी०, स्या०, रो० संस्करणों में नहीं है।

८. बहुलीकातब्बसुत्तं : १. ''बहुलीकातब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि न बहुलीकातब्बं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, न बहुलीकातब्बो धम्मो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, न बहुलीकातब्बो धम्मो।

२. ''कतमो च, भिक्खवे, बहुलीकातब्बो धम्मो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, बहुलीकातब्बो धम्मो'' ति॥ ●

९. अनुस्सरितब्बसुत्तं : १. ''अनुस्सरितब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि नानुस्सरितब्बं च। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च, भिक्खवे, नानुस्सरितब्बो धम्मो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, नानुस्सरितब्बो धम्मो।

२. ''कतमो च, भिक्खवे, अनुस्सरितब्बो धम्मो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अनुस्सरितब्बो धम्मो'' ति॥ ●

१०. सच्छिकातब्बसुत्तं : १. ''सच्छिकातब्बं च वो, भिक्खवे, धम्मं देसेस्सामि न सच्छिकातब्बं च। तं सुणाथ ...पे०...। कतमो च, भिक्खवे, न सच्छिकातब्बो [R.281] धम्मो? पाणातिपातो ...पे०... मिच्छादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, न [N.332,B.488] सच्छिकातब्बो धम्मो।

२. ''कतमो च, भिक्खवे, सच्छिकातब्बो धम्मो? पाणातिपाता वेरमणी ...पे०... सम्मादिट्ठि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सच्छिकातब्बो धम्मो'' ति॥ ●

अरियमग्गवग्गो ऊनवीसतिमो॥

''पुनः, भिक्षुओ! साधना करने योग्य धर्म कौन है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह धर्म साधना करने योग्य है॥'' ●

८. बहुलीकर्तव्यसूत्र : : अभ्यसनीय एवं अनभ्यसनीय धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको अभ्यास करने योग्य धर्म एवं न अभ्यास करने योग्य धर्म की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यहाँ अभ्यास न करने योग्य धर्म कौन है? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह धर्म अनभ्यसनीय है।

२. ''तथा भिक्षुओ! यहाँ अभ्यास करने योग्य धर्म कौन सा है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—यह धर्म, भिक्षुओ! अभ्यसनीय है॥'' ●

९. अनुस्मर्तव्यसूत्र : : अनुस्मरणीय एवं अननुस्मरणीय धर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको अनुस्मरणीय धर्म एवं न अनुस्मरणीय धर्मों की देशना करता हूँ। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यहाँ न अनुस्मरणीय धर्म कौन सा है? प्राणातिपात ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि—यह धर्म न अनुस्मरणीय है।

२. पुनः भिक्षुओ! अनुस्मरणीय धर्म कौन है? प्राणातिपातविरति ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि—यह धर्म, भिक्षुओ! अनुस्मरणीय है॥'' ●

१०. साक्षात्कर्तव्यसूत्र : : साक्षात्करणीय एवं असाक्षात्करणीय धर्म

१. भिक्षुओ! मैं तुमको साक्षात्करणीय धर्म एवं असाक्षात्करणीय धर्म की देशना करता हूँ।

२०. अपरपुग्गलवग्गो

१-१२. नसेवितब्बादिसुत्तानि : १. ''दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो न सेवितब्बो। कतमेहि दसहि? पाणातिपाती होति, अदिन्नादायी होति, कामेसुमिच्छाचारी होति, मुसावादी होति, पिसुणवाचो होति, फरुसवाचो होति, सम्फप्पलापी होति, अभिज्झालु होति, ब्यापन्नचित्तो होति, मिच्छादिट्ठिको होति—इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो न सेवितब्बो।

''दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो सेवितब्बो। कतमेहि दसहि? पाणातिपाता पटिविरतो होति, अदिन्नादाना पटिविरतो होति, कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो [R.282] होति, मुसावादा पटिविरतो होति, पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति, फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति, सम्फप्पलापा पटिविरतो होति, अनभिज्झालु होति, अब्यापन्नचित्तो होति, सम्मादिट्ठिको होति—इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो सेवितब्बो''॥ ●

२-११. ''दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो न भजितब्बो ...पे०... भजितब्बो... न पयिरुपासितब्बो... पयिरुपासितब्बो... न पुज्जो होति... पुज्जो होति...

...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यहाँ नसाक्षात्करणीय धर्म कौन है? प्राणातिपात...मिथ्यादृष्टि—भिक्षुओ! यह धर्म न साक्षात्करणीय है।

२. ''पुन:, भिक्षुओ! यहाँ साक्षात्करणीय धर्म कौन है? प्राणातिपातविरति...सम्यग्दृष्टि—भिक्षुओ! यह धर्म साक्षात्करणीय है।'' **आर्यमार्गवर्ग एकोनविंश सम्पन्न॥** ●

२०. अपरपुद्गलवर्ग

१-१०. न सेवितव्यादिसूत्र : : न सेवितव्य एवं सेवितव्य आदि धर्मयुक्त पुद्गल

१. ''भिक्षुओ! दश धर्मों से युक्त पुद्गल का साथ नहीं करना चाहिये। किन दश धर्मों से? जो पुद्गल प्राणातिपाती हो, अदत्तादायी हो, कामों में मिथ्याचारी हो, मृषावादी हो, पिशुनवाक् हो, परुषवाक् हो, सम्प्रलापी हो, अभिध्यालु हो, द्वेषचित्त हो, तथा मिथ्यादृष्टिक हो। इन दश धर्मों से युक्त पुद्गल का साथ नहीं करना चाहिये।

''परन्तु, भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त पुद्गल का साथ करना चाहिये। किन दश धर्मों से? जो प्राणातिपात से विरत हो... अदत्तादान से...कामों में मिथ्याचार से...मृषावाद से...पिशुनवाक् से...परुषवाक् से...सम्प्रलाप से...अभिध्या से, व्यापाद से...मिथ्यादृष्टि से विरत हो, ऐसे पुद्गल का साथ करना चाहिये॥'' ●

२.११. ''भिक्षुओ! दश धर्मों से युक्त पुद्गल की सेवा नहीं करनी चाहिये ...पूर्ववत्... सेवा करनी चाहिये...; उपासना नहीं करनी चाहिये... उपासना नहीं करनी चाहिये...; जो पूज्य न हो...

न पासंसो होति... पासंसो होति... अगारवो होति... गारवो होति... अप्पतिस्सो होति... सप्पतिस्सो होति... न आराधको होति... आराधको होति... न विसुज्झति... विसुज्झति... मानं नाधिभोति... मानं अधिभोति... पञ्ञाय न वड्ढति... पञ्ञाय वड्ढति [N.333,B.489] ...पे०... पुग्गलो सेवितब्बो"॥ ●

१२. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो बहुं अपुञ्ञं पसवति... बहुं पुञ्ञं पसवति। कतमेहि दसहि? पाणातिपाता पटिविरतो होति, अदिन्नादाना पटिविरतो होति, कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो, होति, मुसावादा पटिविरतो होति, पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति, फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति, सम्फप्पलापा पटिविरतो होति, अन-भिज्झालु होति, अब्यापन्नचित्तो होति, सम्मादिट्ठिको होति—इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो पुग्गलो बहुं पुञ्ञं पसवती" ति॥ ●

अपरपुग्गलवग्गो वीसतिमो॥

चतुत्थो पण्णासको समत्तो॥

२१. करजकायवग्गो

१. **पठमनिरयसग्गसुत्तं** : १. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं

जो पूज्य हो...; जो प्रशंसित न हो...जो प्रशंसित हो..., जो सम्मानित न हो..., जो सम्मानित हो, जो विद्रोही न हो...जो विद्रोही हो..., जो आराधक न हो...जो आराधक हो..., जो शुद्ध न हो...जो शुद्ध हो..., जो मानी न हो....जो मानी हो..., जो प्रज्ञा से वृद्ध न हो...जो प्रज्ञा से वृद्ध हो ...पूर्ववत्... पुद्गल का साथ करना चाहिये।

१२. "भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त पुरुष बहुत पाप का भागी होता है...पुण्य का भागी होता है। किन दश से? जो प्राणातिपात से विरत होता है, अदत्तादान से...कामों में मिथ्याचार से...मृषावाद से...पिशुन वाक् से...परुष वाक् से...सम्प्रलाप से...अभिध्या से...व्यापाद से विरत हो और जो सम्यग्दृष्टि हो—भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त पुद्गल बहुत पुण्य का भागी होता है॥"●

अपरपुद्गलवर्ग विंश सम्पन्न॥

चतुर्थ पञ्चाशत्क सम्पन्न॥

२१. करजकाय वर्ग

१. प्रथम निरयसूत्र : : स्पष्टतः नरकगामी और स्वर्गगामी पुद्गल

१. "भिक्षुओ! दश धर्मों से युक्त पुरुष ऐसा ही होता है, जैसे कोई सीधे नरक में ले जाकर पटक दिया गया हो। किन दश धर्मों से?

[B.490,R.283] निक्खित्तो एवं निरये। कतमेहि दसहि? इध, भिक्खवे, एकच्चो पाणातिपाती होति लुद्दो लोहितपाणि हतपहते निविट्ठो अदयापन्नो सब्बपाणभूतेसु।

२. ''अदिन्नादायी होति। यं तं परस्स परिवित्तूपकरणं गामगतं वा अरञ्ञगतं वा, तं अदिन्नं थेय्यसङ्खातं आदाता होति।

३. ''कामेसुमिच्छाचारी होति। या ता मातुरक्खिता पितुरक्खिता मातापितुरक्खिता भातुरक्खिता भगिनिरक्खिता ञातिरक्खिता गोत्तरक्खिता धम्मरक्खिता ससामिका सपरिदण्डा अन्तमसो मालागुळपरिक्खित्ता पि, तथारूपासु चारित्तं आपज्जिता होति।

४. ''मुसावादी होति। सभग्गतो वा परिसग्गतो वा ञातिमज्झगतो वा पूगमज्झगतो वा राजकुलमज्झगतो वा अभिनीतो सक्खिपुट्ठो—'एहम्भो पुरिस, यं जानासि तं वदेही' ति, सो अजानं वा आह 'जानामी' ति, जानं वा आह 'न जानामी' ति, अपस्सं वा आह 'पस्सामी' ति, पस्सं वा आह 'न पस्सामी' ति। इति अत्तहेतु वा परहेतु वा [N.334] आमिसकिञ्चिक्खहेतु वा सम्पजानमुसा भासिता होति।

५. ''पिसुणवाचो होति—इतो सुत्वा अमुत्र अक्खाता इमेसं भेदाय, अमुत्र वा सुत्वा इमेसं अक्खाता अमूसं भेदाय। इति समग्गानं वा भेत्ता भिन्नानं वा अनुप्पदाता वग्गारामो वग्गरतो वग्गनन्दी, वग्गकरणिं वाचं भासिता होति।

''यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुरुष प्राणापाती हो, रुद्ररूप हो, प्रतिक्षण जिसके हाथ रक्तरञ्जित रहते हो, जो मार-पीट में प्रतिपल अपना मन लगाये रखता हो तथा सब प्राणियों के प्रति निर्दय हो।

२. ''जो अदत्तादायी (चौर) हो। ग्राम में या अरण्य में गये किसी दूसरे पुरुष के न दिये धन को लेने का ऐसा मन बनाता हो, जिसे 'चौरी' कहा जाता है।

३. ''जो कामभोगों में अनाचारी (व्यभिचारी) हो, यहाँ तक कि मातृरक्षित, पितृरक्षित, मातृ-पितृरक्षित, भ्रातृरक्षित, भगिनिरक्षित, ज्ञातिरक्षित, गोत्ररक्षित, धर्मरक्षित, पतिवाली, रक्षा में रहने वाली, किसी से विवाह-बन्धन में बँधने के लिये वचनबद्ध—ऐसी स्त्रियों पर भी जो अपनी कामवासनायुक्त दृष्टि रखता हो।

४. ''जो मृषावादी (असत्यभाषी) हो। जो सभा या परिषद् में बैठकर, सम्बन्धिजनों में बैठकर, समूह में बैठकर, राजदरबार में बैठकर, साक्षी के रूप में बुलाये जाने पर असत्य बोले। उससे वहाँ पूछा जाय—'अरे पुरुष! तुम इस विषय में जो कुछ भी जानते हो वह बताओ।' तब वह न जानते हुए भी कह दे—'हाँ, जानता हूँ', या जानता हुआ भी कह दे—'मैं नहीं जाता।' देखने पर भी कह दे—'मैंने नहीं देखा।' या न देखने पर भी कह दे—'मैंने देखा है'। इस प्रकार वह अपने लिये, या दूसरों के लिये अन्न, पान, चीवर आदि तुच्छ बातों के लिये जान बूझकर असत्य भाषण करता है।

५. जो पिशुनवाक् (चुगलखोर) होता है। यहाँ की सुनकर वहाँ कहता है, इनमें भेद (फूट) डालने के लिये; या वहाँ की बात सुनकर यहाँ कहता है, उनमें भेद कराने के लिये। इस प्रकार वह मिले हुए लोगों में फूट डाल देता है, तथा फूटे हुए लोगों को अपनी क्रियाओं से और अधिक

६. "फरुसवाचो होति—या सा वाचा अण्डका कक्कसा परकटुका पराभिसज्जनी कोधसामन्ता असमाधिसंवत्तनिका, तथारूपिं वाचं भासिता होति।

७. "सम्फप्पलाभी होति अकालवादी अभूतवादी अनत्थवादी [B.491] अधम्मवादी अविनयवादी, अनिधानवतिं वाचं भासिता होति अकालेन अनपदेसं अपरियन्तवतिं अनत्थसंहितं।

८. "अभिज्झालु होति। यं तं परस्स परवित्तूपकरणं तं अभिज्झिता [R.284] होति—'अहो वत यं परस्स तं मम अस्सा' ति।

९. "ब्यापन्नचित्तो होति पदुट्ठमनसङ्कप्पो—'इमे सत्ता हञ्ञन्तु वा बज्झन्तु वा उच्छिज्जन्तु वा विनस्सन्तु वा मा वा अहेसुं' ति।

१०. "मिच्छादिट्ठिको होति विपरीतदस्सनो—'नत्थि दिन्नं, नत्थि यिट्ठं, नत्थि हुतं, नत्थि सुकतदुक्कटानं कम्मानं फलं विपाको, नत्थि अयं लोको, नत्थि परो लोको, नत्थि माता, नत्थि पिता, नत्थि सत्ता ओपपातिका, नत्थि लोके समणब्राह्मणा सम्मग्गता सम्मापटिपन्ना ये इमं च लोकं परं च लोकं सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती' ति। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो यथाभत्तं निक्खित्तो एवं निरये॥

उत्तेजित करता है, (क्योंकि) उसको फूट डालने में या फूटे हुए लोगों को देखकर ही आनन्द मिलता है। अतएव वह फूट डालने वाली बात ही करता रहता है।

६. "जो परुषवाक् (कर्कशवाणी बोलने वाला) होता है। ऐसी वाणी जो उग्र हो, क्रोधमय हो, कर्कश (कठोर) हो, और दूसरों को कर्णकटु लगे, दूसरों को उत्तेजना या क्रोध दिलाने वाली हो, क्रोध से भरी हो, चित्त को अस्थिर कर देने वाली हो—ऐसी वाणी बोलने वाला हो।

७. "जो सम्प्रलापी (व्यर्थ बोलने वाला) होता है। यह अप्रसाङ्गिक एवं असमय की बात बोलता है, असत्यवादी एवं अनर्थवादी होता है। अधर्मवादी एवं अविनयवादी (अनुशासनविहीन) होता है। यह गुप्त (व्यङ्ग्य या द्व्यर्थक) बातें बोलता है, अव्यावहारिक एवं बेसिर पैर की बातें बोलता है।

८. "जो लोभी होता है, जिसके मन में निरन्तर यही इच्छा रहती है कि दूसरों का सभी धन आदि उसी का हो जाय।

९. "जो द्वेषचित्त होता है। वह अपने द्वेषमय चित्त के कारण सदा यही सोचता रहता है—'ये सभी प्राणी मर जायँ, बन्ध जायँ, छिन्न भिन्न हो जायँ, या नष्ट हो जायँ, या ये न रहें'।

१०. "जो मिथ्यादृष्टि होता है, उसकी यह विपरीत मान्यता होती है—'न दान का, न हवन का, न यज्ञ का, न सुकृत दुष्कृत का कोई फल होता है। न यह लोक है, न परलोक है, न यहाँ कोई श्रमणब्राह्मण सम्यग्दृष्टि या सम्यङ्मार्गारूढ़ हैं जो इस लोक एवं परलोक को स्वयं जानकर, साक्षात् कर दूसरों को धर्मोपदेश कर सकें।'

"भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त पुरुष जैसे आया था वैसे ही पुनः नरक में फेंक दिया जाता है॥ (क)

११. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे। कतमेहि दसहि? इध, भिक्खवे, एकच्चो पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो होति निहितदण्डो निहितसत्थो लज्जी दयापन्नो, सब्बपाणभूतहितानुकम्पी विहरति।

[N.335] १२. "अदिन्नादानं पहाय अदिन्नादाना पटिविरतो होति। यं तं परस्स परवित्तूपकरणं गामगतं वा अरञ्ञगतं वा, न तं अदिन्नं थेय्यसङ्खातं आदाता होति।

१३. "कामेसुमिच्छाचारं पहाय कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति। या ता मातुरक्खिता ...पे०... अन्तमसो मालागुळपरिक्खित्ता पि, तथारूपासु न चारित्तं आपज्जिता होति।

१४. "मुसावादं पहाय मुसावादा पटिविरतो होति। सभग्गतो वा परिसग्गतो वा ञातिमज्झगतो वा पूगमज्झगतो वा राजकुलमज्झगतो वा अभिनीतो सक्खिपुट्ठो—'एहम्भो पुरिस, यं जानासि तं वदेही' ति, सो अजानं वा आह 'न जानामी' ति, जानं वा आह 'जानामी' ति, अपस्सं वा आह 'न पस्सामी' ति, पस्सं वा आह 'पस्सामी' ति। इति [R.285] अत्तहेतु वा परहेतु वा आमिसकिञ्चिक्खहेतु वा न सम्पजानमुसा भासिता होति।

१५. "पिसुणवाचं पहाय पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति—न इतो सुत्वा [B.492] अमुत्र अक्खाता इमेसं भेदाय, अमुत्र वा सुत्वा इमेसं अक्खाता अमूसं भेदाय। इति भिन्नानं वा सन्धाता सहितानं वा अनुप्पदाता समग्गारामो समग्गरतो समग्गनन्दी, समग्गकरणिं वाचं भासिता होति।

१६. "फरुसवाचं पहाय फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति। या सा वाचा नेला कण्णसुखा पेमनीया हदयङ्गमा पोरी बहुजनकन्ता बहुजनमनापा, तथारूपिं वाचं भासिता होति।

---

११. (परन्तु) "भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त पुरुष जैसे आया था वैसे ही पुनः स्वर्गसुख भोगने के लिये जा पहुँचता है। किन दश धर्मों से?

"यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुरुष प्राणातिपात को त्याग देता है वह दण्ड एवं शस्त्र को दूर रखकर, लज्जासम्पन्न होकर मन में सब प्राणियों के प्रति दया रखता हुआ उस प्राणातिपात से सदा के लिये दूर रहता हुआ साधना करता है।

१२. "वह अदत्तादान का त्यागकर अदत्तादान (चौरी) से दूर हो जाता है। 'ग्राम या अरण्य में जो भी दूसरे का न दिया धन है, वह उसका हो जाय'—इसी इच्छा को 'चौरी' कहते हैं।

१३. "जो कामभोगों में अनाचार (व्यभिचार) करना छोड़कर उससे सदा दूर रहता है। वह मातृरक्षित ...पूर्ववत्... किसी परस्त्री पर वासनामय दृष्टि नहीं डालता।

१४. "जो मृषावाद (असत्यभाषण) का त्याग कर उससे सदा दूर रहता है। सभा में ...पूर्ववत्... तुच्छ बात के लिये असत्यभाषण नहीं करता।

१५. "जो पिशुनवाक् (चुगलखोरी) का त्यागकर उससे सदा दूर रहता है। न इधर की सुनकर ...पूर्ववत्... एकताकारक वाणी बोलता है।

१७. "सम्फप्पलापं पहाय सम्फप्पलापा पटिविरतो होति कालवादी भूतवादी, अत्थवादी धम्मवादी विनयवादी, निधानवतिं वाचं भासिता होति कालेन सापदेसं परियन्तवतिं अत्थसंहितं।

१८. "अनभिज्झालु होति। यं तं परस्स परवित्तूपकरणं तं अनभिज्झिता होति—'अहो वत यं परस्स तं मम अस्सा' ति।

१९. "अब्यापन्नचित्तो होति अप्पदुट्ठमनसङ्कप्पो—'इमे सत्ता अवेरा होन्तु अब्यापज्झा अनीघा, सुखी अत्तानं परिहरन्तू' ति।

२०. "सम्मादिट्ठिको होति अविपरीतदस्सनो—'अत्थि दिन्नं, अत्थि यिट्ठं, अत्थि हुतं, अत्थि सुकटदुक्कटानं कम्मानं फलं विपाको, अत्थि अयं लोको, अत्थि परो लोको, अत्थि माता, अत्थि पिता, अत्थि सत्ता ओपपातिका, अत्थि लोके समणब्राह्मणा सम्मग्गता सम्मापटिपन्ना ये इमं च लोकं परं च लोकं सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती' ति। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे" [N.336] ति॥ ●

२. दुतियनिरयसग्गसुत्तं : १. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये। कतमेहि दसहि? इध, भिक्खवे, एकच्चो पाणातिपाती होति लुद्दो लोहितपाणि हतपहते निविट्ठो अदयापन्नो सब्बपाणभूतेसु।

२. "अदिन्नादायी होति... कामेसुमिच्छाचारी होति... मुसावादी होति... [R.286] पिसुणवाचो होति... फरुसवाचो होति... सम्फप्पलापी होति... अभिज्झालु होति... [B.493] ब्यापन्नचित्तो होति... मिच्छादिट्ठिको होति विपरीतदस्सनो—'नत्थि दिन्नं ...पे०... सयं

---

१६. "जो परुष वाक् (कठोर वाणी) का त्यागकर उससे सदा दूर रहता है। वह निर्दोष... पूर्ववत्...बहुजनप्रिय वाणी ही बोलता है।

१७. "जो सम्प्रलाप (निरर्थक बातचीत) का त्याग कर उससे सदा दूर रहता है, वह समय पर, प्रसङ्ग की ...पूर्ववत्... सार्थक बात करता है।

१८. "जो लोभरहित होता है, दूसरे के धन पर लोभ दृष्टि नहीं रखता।

१९. "जो दूसरों के प्रति द्वेषभाव त्यागकर निर्द्वेष चित्त से व्यवहार करता है। तथा सबके प्रति 'ये सुखी रहें'—ऐसी भावना रखता है।

२०. "जो सम्यग्दृष्टि होकर दार्शनिक विषयों पर अपना यह अनुकूल मत रखता है—'दान, यज्ञ, हवन एवं सुकृत-दुष्कृत का फल होता है; लोक, परलोक, माता-पिता, अयोनिज देव, सम्यक्प्रतिपन्न श्रमण ब्राह्मणों द्वारा उचित धर्मोपदेश—सब कुछ सत्य है।'

"इस प्रकार, भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त साधक, देहपातानन्तर, सीधे स्वर्गसुख भोगने के लिये चला जाता है॥" ●

२. द्वितीय निरयस्वर्गसूत्र : : दशविध निरयगामी एवं स्वर्गगामी साधक

[इस समस्त सूत्र का हिन्दीकरण अनुपद में वर्णित पूर्वसूत्र के समान है।]

अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती' ति। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो यथाभूतं निक्खित्तो एवं निरये॥

३. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे। कतमेहि दसहि? इध, भिक्खवे, एकच्चो पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो होति निहितदण्डो निहितसत्थो लज्जी दयापन्नो, सब्बपाणाभूतहितानुकम्पी विहरति।

४. "अदिन्नादानं पहाय अदिन्नादाना पटिविरतो होति... कामेसुमिच्छाचारं पहाय कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति... मुसावादं पहाय मुसावादा पटिविरतो होति... पिसुणं वाचं पहाय पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति... फरुसं वाचं पहाय फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति... सम्पप्पलापं पहाय सम्फप्पलापा पटिविरतो होति... अनभिज्झालु होति... अब्यापन्नचित्तो होति... सम्मादिट्ठिको होति अविपरीतदस्सनो—'अत्थि दिन्नं ...पे०... ये इमं च लोकं परं च लोकं सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती' ति। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे" ति॥ ●

३. मातुगामसुत्तं : १. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो यथाभतं [N.337] निक्खित्तो एवं निरये। कतमेहि दसहि? पाणातिपाती होति ...पे०... अदिन्नादायी [R.287] होति... कामेसुमिच्छाचारी होति... मुसावादी होति... पिसुणवाचो होति... फरुसवाचो होति... सम्फप्पलापी होति... अभिज्झालु होति... ब्यापन्नचित्तो होति... मिच्छादिट्ठिको होति ...। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये।

२. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे। कतमेहि दसहि? पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... अदिन्नादाना पटिविरतो होति... [B.494] कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति... मुसावादा पटिविरतो होति... पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति... फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति... सम्फप्पलापा पटिविरतो

---

३. मातृग्रामसूत्र : : दश धर्मों से युक्त नरक-स्वर्ग में जानेवाली नारियाँ

१. "इन दश धर्मों से युक्त कोई भी नारी, जैसे आती है वैसे ही पुनः नरक में चली जाती है। किन दश धर्मों से? (जो) प्राणातिपाती होती है ...पूर्ववत्... अदत्तादायी...कामभोगों में अनाचारी... मृषावादी... पिशुणवाक्... परुषवाक्... सम्प्रलापी... अभिध्यालु... व्यापन्नचित्त... मिथ्यादृष्टिक होती है... नरक में ही चली जाती है।

२. "इन दश धर्मों से युक्त नारी जैसे आती है वैसे ही पुनः स्वर्ग में दिव्य सुख भोगने चली जाती है। किन दश धर्मों से? प्राणातिपात से विरत ...पूर्ववत्... अदत्तादान से विरत...कामभोगों में मिथ्याचार से विरत...मृषावाद से विरत...पिशुनवाक् से विरत...परुष वाक् से विरत...सम्प्रलाप से विरत...लोभ से विरत...द्वेष से विरत...सम्यग्दृष्टि होती है। इन दश...स्वर्गसुख भोगने के लिये पुनः चली जाती है॥" ●

होति... अनभिज्झालु होति... अब्यापन्नचित्तो होति... सम्मादिट्ठिको होति ...। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो यथाभत्तं निक्खित्तो एवं सग्गे'' ति॥ ●

४. उपासिकासुत्तं : १. ''दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागता उपासिका यथाभतं निक्खित्ता एवं निरये। कतमेहि दसहि? पाणातिपातिनी होति ...पे०... मिच्छादिट्ठिका होति ...। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागता उपासिका यथाभत्तं निक्खित्ता एवं निरये।

२. ''दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागता उपासिका यथाभतं निक्खित्ता एवं सग्गे। कतमेहि दसहि? पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सम्मादिट्ठिका होति ...। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागता उपासिका यथाभतं निक्खित्ता एवं सग्गे''॥

५. विसारदसुत्तं : १. ''दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागता उपासिका अविसारदा अगारं अज्झावसति। कतमेहि दसहि? पाणातिपातिनी होति... [R.288] अदिन्नादायी होति... कामेसुमिच्छाचारिनी होति... मुसावादिनी होति... पिसुणवाचा होति... फरुसवाचा होति... सम्फप्पलापिनी होति... अभिज्झालुनी होति... ब्यापन्नचित्ता [N.338] होति... मिच्छादिट्ठिका होति ...। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागता उपासिका अविसारदा अगारं अज्झावसति।

२. ''दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागता उपासिका विसारदा अगारं अज्झावसति। कतमेहि दसहि? पाणातिपाता पटिविरता होति... अदिन्नादाना पटिविरता होति... कामेसुमिच्छाचारा पटिविरता होति... मुसावादा पटिविरता होति... पिसुणाय वाचाय पटिविरता होति... फरुसाय वाचाय पटिविरता होति... सम्फप्पलापा पटिविरता होति... अनभिज्झालुनी होति... अब्यापन्नचित्ता होति... सम्मादिट्ठिका होति ...। इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागता उपासिका विसारदा अगारं अज्झावसती'' ति॥ ●

६. संसप्पनीयसुत्तं : १. ''संसप्पनीयपरियायं वो, भिक्खवे, धम्म- [B.495]

---

४. उपासिकासूत्र : : **दशधर्मयुक्त नरक-स्वर्गगामी उपासिकाएँ**

१२. ...पूर्ववत्... ॥ ●

[इस सूत्र का अनुवाद भी 'उपासिका' शब्द लगाकर पूर्वसूत्रवत् कर लें।]

५. विशारदसूत्र : : **दशधर्मयुक्त उपासिका**

१. ''कोई उपासिका यदि दश धर्मों से युक्त नहीं है तो वह अपने घर का कार्य अदक्षतापूर्वक ही चला पाती है। किन दश धर्मों से? जो प्राणातिपाती हो ...पूर्ववत्... मिथ्यादृष्टि हो तो वह अदक्षतापूर्वक ही अपना घर चला पाती है।

२. ''और, कोई उपासिका इन दश धर्मों से युक्त हो तो वह अपने घर का कार्य दक्षतापूर्वक चला ले जाती है। किन दश धर्मों से? जो प्राणातिपातविरत हो ...पूर्ववत्... सम्यग्दृष्टि वाली हो— इन दश धर्मों से युक्त उपासिका अपने घर का कार्य उचितरूप से (दक्षतापूर्वक) चला पाती है॥''●

परियायं देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''कतमो च, भिक्खवे, संसप्पनीयपरियायो धम्मपरियायो? कम्मस्सका, भिक्खवे, सत्ता कम्मदायादा कम्मयोनी कम्मबन्धू कम्मपटिसरणा, यं कम्मं करोन्ति—कल्याणं वा पापकं वा—तस्स दायादा भवन्ति।

[R.289] ३. ''इध, भिक्खवे, एकच्चो पाणातिपाती होति लुद्दो लोहितपाणि हतपहते निविट्ठो, अदयापन्नो सब्बपाणभूतेसु। सो संसप्पति कायेन, संसप्पति वाचाय, संसप्पति मनसा। तस्स जिम्हं कायकम्मं होति, जिम्हं वचीकम्मं, जिम्हं मनोकम्मं, जिम्हा गति, जिम्हुपपत्ति।

''जिम्हगतिकस्स खो पनाहं, भिक्खवे, जिम्हुपपत्तिकस्स द्विन्नं गतीनं अञ्ञतरं गतिं वदामि—ये वा एकन्तदुक्खा निरया या वा संसप्पजातिका तिरच्छानयोनि। कतमा च सा, भिक्खवे, संसप्पजातिका तिरच्छानयोनि? अहि विच्छिका सतपदी नकुला बिळारा मूसिका [N.339] उलूका, ये वा पनञ्ञे पि केचि तिरच्छानयोनिका सत्ता मनुस्से दिस्वा संसप्पन्ति। इति खो, भिक्खवे, भूता भूतस्स उपपत्ति होति। यं करोति तेन उपज्जति। उपपन्नमेनं फस्सा फुसन्ति। एवमहं, भिक्खवे, 'कम्मदायादा सत्ता' ति वदामि।

४. ''इध पन, भिक्खवे, एकच्चो अदिन्नादायी होति ...पे०... कामेसुमिच्छाचारी

---

६. संसर्पणीयसूत्र : : संसर्पण (वङ्क चलन=रेंगने) योग्य कर्म

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको सर्प आदि रेंगने (पेट के बल सरकने) वाले जीवों की योनि में उत्पादक धर्मों की देशना करूँगा। उसको तुम ध्यानपूर्वक सुनकर मन में बैठा लो।''...पूर्ववत्...। भगवान् ने यह देशना आरम्भ की—

२. ''भिक्षुओ! इन रेंगने वाले जीवों के उत्पादक धर्म कौन से हैं? भिक्षुओ! सभी प्राणी स्वकृत कर्म के स्वामी हैं, कर्म के उत्तराधिकारी हैं, कर्म के प्रभाव से विविध योनियों में जाते आते रहते हैं, कर्म ही इनका बन्धु एवं सहायक हैं। ये जीव जो कर्म करते हैं—भले ही वह पापमय हो या पुण्यमय, उनको भोगना ही पड़ता है।

३. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई प्राणातिपाती होता है, रुद्रस्वभाव, रक्तरञ्जित हाथों वाला, दिन-रात प्राणियों को मारने काटने में संलग्न एवं किसी पर कोई दया भाव न दिखाने वाला होता है। वह काया से, वाणी से और मन से रेंगता है। उसके कायकर्म, वाक्कर्म, मनःकर्म, उसके चाल-चलन तथा उसकी उत्पत्ति—सब कुछ टेढे बाँके ही होते हैं।

''इस वक्रगतिवाले तथा वक्रजन्मवाले की, भिक्षुओ! मैं दो प्रकार की गतियों में से कोई एक गति बताता हूँ—या तो वे १. एकान्ततः दीर्घकाल तक नरक में पड़े रहते हैं जो सर्वथा दुःखमय है, या २. वे किसी रेंगनेवाली (तिरश्चीन) योनि में उत्पन्न होते हैं। भिक्षुओ! ये रेंगने वाली जाति कौन सी हैं? जैसे—सर्प, विच्छु, शतपदी (कनखजूरा), नेवला, बिल्ली, चूहा, उल्लू, या ऐसे ही कोई दूसरे रेंगने वाले प्राणी, जो मनुष्य को देखते ही रेंगकर दूर भाग जाते हैं। इस प्रकार, भिक्षुओ! यह प्रारब्ध

होति... मुसावादी होति... पिसुणवाचो होति... फरुसवाचो होति... सम्फप्पलापी होति... अभिज्झालु होति... ब्यापन्नचित्तो होति... मिच्छादिट्ठिको होति विपरीतदस्सनो—'नत्थि दिन्नं ...पे०... सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती' ति। सो संसप्पति कायेन, संसप्पति वाचाय, संसप्पति मनसा। तस्स जिम्हं कायकम्मं होति, जिम्हं वचीकम्मं, जिम्हं मनोकम्मं, जिम्हा गति, जिम्हुपपत्ति। [R.290]

''जिम्हगतिकस्स खो पनाहं, भिक्खवे, जिम्हुपपत्तिकस्स द्विन्नं गतीनं अञ्ञतरं गतिं वदामि—ये वा एकन्तदुक्खा निरया या वा संसप्पजातिका तिरच्छानयोनि। कतमा च सा, भिक्खवे, संसप्पजातिका तिरच्छानयोनि ? अहि विच्छिका सतपदी नकुला बिळारा [B.496] मूसिका उलूका, ये वा पनञ्ञे पि केचि तिरच्छानयोनिका सत्ता मनुस्से दिस्वा संसप्पन्ति। इति खो, भिक्खवे, भूता भूतस्स उपपत्ति होति, यं करोति तेन उपपज्जति। उपपन्नमेनं फस्सा फुसन्ति। एवमहं, भिक्खवे, 'कम्मदायादा सत्ता' ति वदामि। कम्मस्सका, भिक्खवे, सत्ता कम्मदायादा कम्मयोनी कम्मबन्धू कम्मपटिसरणा, यं कम्मं करोन्ति—कल्याणं वा पापकं वा—तस्स दायादा भवन्ति।

५. ''इध, भिक्खवे, एकच्चो पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो होति निहितदण्डो निहितसत्थो, लज्जी दयापन्नो सब्बपाणभूतहितानुकम्पी विहरति। सो न संसप्पति कायेन, न संसप्पति वाचाय, न संसप्पति मनसा। तस्स उजु कायकम्मं होति, उजु वचीकम्मं, उजु मनोकम्मं, उजु गति, उजुपपत्ति।

''उजुगतिस्स खो पनाहं, भिक्खवे, उजुपपत्तिकस्स द्विन्नं गतीनं अञ्ञतरं गतिं वदामि—ये वा एकन्तसुखा सग्गा यानि वा पन तानि उच्चाकुलानि खत्तियमहासालकुलानि वा ब्राह्मणमहासालकुलानि वा गहपतिमहासालकुलानि वा अड्ढानि महद्धनानि महाभोगानि पहूतजातरूपरजतानि पहूतवित्तूपकरणानि पहूतधनधञ्ञानि। इति खो, भिक्खवे, भूता

कर्म से प्राणी की उत्पत्ति होती है। वह जैसा करता है, वैसी ही उसकी उत्पत्ति होती है। उत्पन्न हुए इसको उन कर्मों का स्पर्श होता है। अत: भिक्षुओ! मैं, 'प्राणी कर्माधीन हैं'—ऐसा कहता हूँ।

४. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई अदत्तादायी (चौर) होता है ...पूर्ववत्... उसके उत्तराधिकारी होते हैं। (क)

५. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई प्राणातिपात का त्याग कर उससे वह सर्वथा दूर हो जाता है। वह दण्ड व शस्त्र भी छोड़ देता है। ...पूर्ववत्...। वह न काया से, न वाक् से, न वाणी से, न मन से रेंगता है। उसका कायकर्म, वाक्कर्म, मन:कर्म, उसका चाल-चलन, उसकी उत्पत्ति—सभी कुछ सरल एवं सीधे होते हैं।

''ऐसे सरलगति वाले, सरल उत्पत्ति वाले प्राणी की, भिक्षुओ! मैं इन दो गतियों में से एक गति बताता हूँ—या तो वे १. एकान्त: सुखमय स्वर्गलोक में पहुँचते हैं, या फिर, उच्चकुल में उत्पन्न होते हैं; जैसे—क्षत्रिय, ब्राह्मण एवं गृहपति महासार कुल में जो कि वैभव-ऐश्वर्यसम्पन्न, धन वाले,

[N.340] भूतस्स उपपत्ति होति। यं करोति तेन उपपज्जति। उपपन्नमेनं फस्सा फुसन्ति। एवमहं, भिक्खवे, 'कम्मदायादा सत्ता' ति वदामि।

६. "इध पन, भिक्खवे, एकच्चो अदिन्नादानं पहाय अदिन्नादाना पटिविरतो होति ...पे०... कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति... मुसावादं पहाय मुसावादा पटिविरतो होति... [R.291] पिसुणं वाचं पहाय पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति... फरुसं वाचं पहाय फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति... सम्फप्पलापं पहाय सम्फप्पलापा पटिविरतो होति... अनभिज्झालु होति... अब्यापन्नचित्तो होति... सम्मादिट्ठिको होति अविपरीतदस्सनो— 'अत्थि दिन्नं ...पे०... ये इमं च लोकं परं च लोकं सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती' ति। सो न संसप्पति कायेन, न संसप्पति वाचाय, न संसप्पति मनसा। तस्स उजु कायकम्मं होति, उजु वचीकम्मं, उजु मनोकम्मं, उजुगति, उजुपपत्ति।

[B.497] "उजुगतिकस्स खो पन अहं, भिक्खवे, उजुपपत्तिकस्स द्विन्नं गतीनं अञ्ञतरं गतिं वदामि—ये वा एकन्तसुखा सग्गा यानि वा पन तानि उच्चाकुलानि खत्तियमहासालकुलानि वा ब्राह्मणमहासालकुलानि वा गहपतिमहासालकुलानि वा अड्ढानि महद्धनानि महाभोगानि पहूतजातरूपरजतानि पहूतवित्तूपकरणानि पहूतधनधञ्ञानि। इति खो भिक्खवे, भूता भूतस्स उपपत्ति होति। यं करोति तेन उपपज्जति। उपपन्नमेनं फस्सा फुसन्ति। एवमहं, भिक्खवे, 'कम्मदायादा सत्ता' ति वदामि।

"कम्मस्सका, भिक्खवे, सत्ता कम्मदायादा कम्मयोनी कम्मबन्धू कम्मपटिसरणा, यं कम्मं करोन्ति—कल्याणं वा पापकं वा—तस्स दायादा भवन्ति। अयं खो सो, भिक्खवे, संसप्पनीयपरियायो धम्मपरियायो" ति॥ ●

[R.292] **७. पठमसञ्चेतनिकसुत्तं :** १. "नाहं, भिक्खवे, सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं [N.341] उपचितानं अप्पटिसंवेदित्वा ब्यन्तीभावं ञ्रदामि। तं च खो दिट्ठेव धम्मे उपपज्जं वा

भोगसम्पन्न, अतिशय सुवर्ण रजत तथ धन-धान्य से युक्त होते हैं। इस प्रकार, भिक्षुओ! प्रारब्ध कर्म से प्राणी की उत्पत्ति कही जाती है। वह जो करता है उसके प्रभाव से वैसा ही उत्पन्न होता है। इस उत्पन्न को उन कर्मों का स्पर्श होता है। अत: भिक्षुओ! 'प्राणी कर्माधीन हैं'—ऐसा कहता हूँ।

६. "यहाँ, भिक्षुओ! अदत्तादान को त्यागकर उससे सदा के लिये दूर हो जाता है। ...पूर्ववत्... 'प्राणी कर्माधीन हैं'—ऐसा कहता हूँ।

"भिक्षुओ! सभी प्राणी स्वकृत कर्म के स्वामी हैं, ...पूर्ववत्... कर्म ही इनके बन्धु एवं सहायक हैं। ये जीव जो कर्म करते हैं, भले ही वे कर्म पापमय हों या पुण्यमय—वह उनको भोगना ही पड़ता है। भिक्षुओ! यह सूत्र संसर्पणीय धर्मपर्याय कहलाता है॥" ●

७. प्रथम सञ्चैतनिकसूत्र : : कृतकर्मों के फलभोग विना दुःखों का अन्त नहीं

१. "भिक्षुओ! मैं स्वयं जानबूझकर किये गये सञ्चित कर्मों का, भोग के विना, नाश नहीं

अपरे वा परियाये। न त्वेवाहं, भिक्खवे, सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं उपचितानं अप्पटि-संवेदित्वा दुक्खस्सन्तकिरियं वदामि।

२. "तत्र, भिक्खवे, तिविधा कायकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति; चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति; तिविधा मनोकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति।

३. "कथं च, भिक्खवे, तिविधा कायकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो पाणातिपाती होति लुद्दो लोहितपाणि हतपहते निविट्ठो अदयापन्नो सब्बपाणभूतेसु।

"अदिन्नादायी होति। यं तं परस्स परवित्तूपकरणं गामगतं वा अरञ्ञगतं वा, तं अदिन्नं थेय्यसङ्खातं आदाता होति। [B.498]

"कामेसुमिच्छाचारी होति। या ता मातुरक्खिता ...पे०... अन्तमसो मालागुळ-परिक्खित्ता पि, तथारूपासु चारित्तं आपज्जिता होति। एवं खो, भिक्खवे, तिविधा काय-कम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति।

४. "कथं च, भिक्खवे, चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति [R.293] अकुसल-सञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो मुसावादी होति। सभग्गतो वा परिसग्गतो वा ञातिमज्झगतो वा पूगमज्झगतो वा राजकुलमज्झगतो वा अभिनीतो सक्खिपुट्ठो 'एहम्भो पुरिस, यं जानासि तं वदेही' ति, सो अजानं वा आह 'जानामी' ति, जानं वा आह 'न जानामी' ति, अपस्सं वा आह 'पस्सामी' ति, पस्सं वा आह 'न पस्सामी' ति, इति अत्तहेतु वा परहेतु वा आमिसकिञ्चिक्खहेतु वा सम्पजानमुसा भासिता होति।

मानता। वह भोग इस जन्म में भी हो सकता है, या अन्य जन्म में भी; परन्तु भिक्षुओ! मैं स्वयंकृत सञ्चित कर्मों के भोग के विना इन सांसारिक दुःखों का अन्त भी नहीं मानता।

२. "वहाँ, भिक्षुओ! अकुशलधर्म के कारण कृत कायकर्म की मार्गभ्रष्टता तीन प्रकार से दुःखवर्धक एवं दुःखमय विपाक वाली बनती है। वाक्कर्म की मार्गभ्रष्टता चार प्रकार से तथा मानसिक कर्म की मार्गभ्रष्टता तीन प्रकार से दुःखवर्धक एवं दुःखमय फल देने वाली होती है।

३. "कैसे, भिक्षुओ! वह...कायकर्म की मार्गभ्रष्टता तीन प्रकार से दुःखवर्धक...होती है? (१) कोई प्राणातिपाती है ...पूर्ववत्...। (२) कोई अदत्तादायी होता है...। (३) कोई कामभोगों में अनाचारी (व्यभिचारी) होता है ...पूर्ववत्...।

४. "कैसे, भिक्षुओ!... वाक्कर्म की मार्गभ्रष्टता चार प्रकार से दुःखवर्धक...होती है? (१) वह मृषावादी होता है ...पूर्ववत्...। (२) पिशुनवाक् होता है...। (३) परुषवाक् होता है...। (४) सम्प्रलापी होती है ...पूर्ववत्...।

''पिसुणवाचो होति—इतो सुत्वा अमुत्र अक्खाता इमेसं भेदाय, अमुत्र वा सुत्वा इमेसं अक्खाता अमूसं भेदाय। इति समग्गानं वा भेत्ता भिन्नानं वा अनुप्पदाता वग्गारामो वग्गरतो वग्गनन्दी, वग्गकरणिं वाचं भासिता होति।

[N.342] ''फरुसवाचो होति। या सा वाचा अण्डका कक्कसा परकटुका पराभिसज्जनी कोधसामन्ता असमाधिसंवत्तनिका, तथारूपिं वाचं भासिता होति।

''सम्फप्पलापी होति अकालवादी अभूतवादी अनत्थवादी अधम्मवादी अविनय-वादी, अनिधानवतिं वाचं भासिता होति अकालेन अनपदेसं अपरियन्तवतिं अनत्थसंहितं। एवं खो, भिक्खवे, चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति।

५. ''कथं च, भिक्खवे, तिविधा मनोकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो अभिज्झालु होति। यं तं परस्स परवित्तूपकरणं, तं अभिज्झिता होति—'अहो वत, यं परस्स तं मम अस्सा' ति।

[B.499] ''ब्यापन्नचित्तो होति पदुट्ठमनसङ्कप्पो—'इमे सत्ता हञ्ञन्तु वा बज्झन्तु वा उच्छिज्जन्तु वा विनस्सन्तु वा मा वा अहेसुं' ति। मिच्छादिट्ठिको होति विपरीतदस्सनो—[R.294] 'नत्थि दिन्नं...पे०...ये इमं च लोकं परं च लोकं सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती' ति। एवं खो, भिक्खवो, तिविधा मनोकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति।

६. ''तिविधकायकम्मन्तसन्दोसब्यापत्तिअकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा, भिक्खवे, सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ति; चतुब्बिध-वचीकम्मन्तसन्दोसब्यापत्तिअकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा, भिक्खवे, सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ति; तिविधमनोकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति-अकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा, भिक्खवे, सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ति।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, अपण्णको मणि उद्धंखित्तो येन येनेव पतिट्ठति सुप्पति-ट्ठितंयेव पतिट्ठाति; एवमेव खो, भिक्खवे, तिविधकायकम्मन्तसन्दोसब्यापत्तिअकुसल-

---

५. ''कैसे, भिक्षुओ! अकुशल धर्म के कारण उद्भूत मनःकर्म की मार्गभ्रष्टता तीन प्रकार से दुःखवर्धक...होती है? (१) कोई अभिध्यालु होता है ...पूर्ववत्...। (२) कोई व्यापन्नचित्त होता है ...पूर्ववत्...। (३) कोई मिथ्यादृष्टि होता है ...पूर्ववत्...।

६. ''भिक्षुओ! इस त्रिविध कायकर्म की मार्गभ्रष्टता के कारण...चतुर्विध वाक्कर्म...मनःकर्म की मार्गभ्रष्टता के कारण प्राणी इस देहपात के बाद, मरणानन्तर, अपायभूत दुर्गतिमय नरक में जा गिरता है।

''जैसे, भिक्षुओ! कोई निर्दोष मणिरत्न ऊपर आकाश में फेंका जाने पर पुनः भूमि पर सीधा

सञ्चेतनिकाहेतु वा सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं [N.343] उपपज्जन्ति; चतुब्बिधवचीकम्मन्तसन्दोसब्यापत्तिअकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ति; तिविधमनोकम्मन्तसन्दोस-ब्यापत्तिअकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ती ति॥

७. "नाहं, भिक्खवे सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं उपचितानं अप्पटिसंवेदित्वा ब्यन्तीभावं वदामि, तं च खो दिट्ठेव धम्मे उपपज्जं वा अपरे वा परियाये। न त्वेवाहं, भिक्खवे, सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं उपचितानं अप्पटिसंवेदित्वा दुक्खस्सन्तकिरियं वदामि।

८. "तत्र, भिक्खवे, तिविधा कायकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति; चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुख-विपाका होति; तिविधा मनोकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुख-[R.295] विपाका होति।

९. "कथं च, भिक्खवे, तिविधा कायकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका [B.500] सुखुद्रया सुखविपाका होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो होति निहितदण्डो निहितसत्थो लज्जी दयापन्नो, सब्बपाणभूतहितानुकम्पी विहरति ...पे०... ।

"अदिन्नादानं पहाय अदिन्नादाना पटिविरतो होति। यं तं परस्स परवित्तूपकरणं गामगतं वा अरञ्ञगतं वा, न तं अदिन्नं थेय्यसङ्खातं आदाता होति।

"कामेसुमिच्छाचारं पहाय कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति। या ता मातुरक्खिता

ही आकर गिरता है; इसी प्रकार, भिक्षुओ! त्रिविध कायकर्म...चतुर्विध वाक्कर्म...त्रिविध मन:कर्म के कारण प्राणी, मरणानन्तर अपायभूत दुर्गतिमय नरक में ही जा गिरता है। (क)

७. "भिक्षुओ! मैं जानते बूझते किये गये कर्मों का, भोग किये विना, नाश नहीं मानता। उसका फल इसी जन्म या अगले जन्म में भोगना ही पड़ता है। इसीलिये मैं, इन जानते बूझते किये कर्मों के भोग के विना, दु:खों का अन्त नहीं मानता।

८. "वहाँ, भिक्षुओ! कुशलधर्मों से उद्भूत त्रिविध कायकर्मसमापत्ति सुखवर्धक एवं सुखमय फलप्रद होती है,...चतुर्विध वाक्कर्मसमापत्ति...,त्रिविध मन:कर्मसमापत्ति सुखवर्धक एवं सुखमय फल देने वाली होती है।

९. "कैसे, भिक्षुओ! कुशल धर्मों से उद्भूत त्रिविध कायकर्मसमापत्ति सुखवर्धक एवं सुखमय फल देने वाली होती है? यहाँ भिक्षुओ! कोई प्राणी (१) प्राणातिपात का त्याग कर उससे सदा के लिये दूर हो जाता है...(२) अदत्तादान को त्यागकर उससे सदा के लिये त्याग कर दूर हो जाता है...(३) कामभोगों में अनाचार त्यागकर उससे सदा के लिये दूर हो जाता है। ...पूर्ववत्...।

...पे०... अन्तमसो मालागुळपरिक्खित्ता पि, तथारूपासु न चारित्तं आपज्जिता होति। एवं खो, भिक्खवे, तिविधा कायकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति।

१०. "कथं च, भिक्खवे, चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो मुसावादं पहाय मुसावादा पटिविरतो होति। सभग्गतो वा परिसग्गतो वा ञातिमज्झगतो वा पूगमज्झगतो वा राजकुलमज्झगतो वा अभिनीतो सक्खिपुट्ठो 'एहम्भो पुरिस, यं जानासि तं वदेही' ति, सो अजानं वा आह 'न जानामी' ति, जानं वा आह 'जानामी' ति, अपस्सं वा आह 'न पस्सामी' ति, पस्सं वा आह [N.344] 'पस्सामी' ति, इति अत्तहेतु वा परहेतु वा आमिसकिञ्चिक्खहेतु वा न सम्पजान-मुसा भासिता होति।

"पिसुणं वाचं पहाय पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति—न इतो सुत्वा अमुत्र अक्खाता इमेसं भेदाय, अमुत्र वा सुत्वा न इमेसं अक्खाता अमूसं भेदाय। इति भिन्नानं वा [R.296] सन्धाता सहितानं वा अनुप्पदाता समग्गारामो समग्गरतो समग्गनन्दी, समग्गकरणिं वाचं भासिता होति।

"फरुसं वाचं पहाय फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति। या सा वाचा नेला कण्ण-सुखा पेमनीया हदयङ्गमा पोरी बहुजनकन्ता बहुजनमनापा, तथारूपिं वाचं भासिता होति।

"सम्फप्पलापं पहाय सम्फप्पलापा पटिविरतो होति कालवादी भूतवादी अत्थवादी [B.501] धम्मवादी विनयवादी, निधानवतिं वाचं भासिता होति कालेन सापदेसं परियन्तवतिं अत्थसंहितं। एवं खो, भिक्खवे, चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति।

११. "कथं च, भिक्खवे, तिविधा मनोकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो अनभिज्झालु होति। यं तं परस्स परवित्तूपकरणं तं अनभिज्झिता होति—'अहो वत यं परस्स तं ममस्सा' ति।

"अब्यापन्नचित्तो होति अप्पदुट्ठमनसङ्कप्पो—'इमे सत्ता अवेरा होन्तु अब्यापज्झा अनीघा, सुखी अत्तानं परिहरन्तू' ति।

"सम्मादिट्ठिको होति अविपरीतदस्सनो—'अत्थि दिन्नं, अत्थि यिट्ठं ...पे०... ये इमं

---

१०. "कैसे, भिक्षुओ! कुशलधर्मों से उद्भूत चतुर्विध वाक्कर्मसमापत्ति सुखवर्धक एवं सुखमय फलप्रद होती है? (१) मृषावाद का त्यागकर ...पूर्ववत्..., (२) पिशुन वाक् का त्यागकर ...पूर्ववत्... (३) परुष वाक् का त्यागकर ...पूर्ववत्... (४) सम्प्रलाप का त्याग कर उससे सदा के लिये दूर हो जाता है ...पूर्ववत्...।

११. कैसे, भिक्षुओ! कुशल धर्मों से उद्भूत त्रिविध मन:कर्मसमापत्ति सुखवर्धक एवं सुखमय फलप्रद होती है? (१) लोभ का सर्वथा त्यागकर ...पूर्ववत्...। (२) द्वेष का सर्वथा परित्याग कर अद्वेषमय मन:सङ्कल्प वाला होकर ...पूर्ववत्... (३) सम्यग्दृष्टि वाला होकर यह अनुकूल मत

च लोकं परं च लोकं सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती' ति। एवं खो, भिक्खवे, तिविधा मनोकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति।

१२. "तिविधकायकम्मन्तसम्पत्तिकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा, भिक्खवे, सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति; चतुब्बिधवचीकम्मन्तसम्पत्ति-कुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा, भिक्खवे, सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उप-पज्जन्ति; तिविधमनोकम्मन्तसम्पत्तिकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा, भिक्खवे, सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, अपण्णको मणि उद्धंखित्तो येन येनेव पतिट्ठाति [N.345] सुप्पतिट्ठितंयेव पतिट्ठाति; एवमेव खो, भिक्खवे, तिविधकायकम्मन्तसम्पत्तिकुसलसञ्चेत-निकाहेतु वा सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति; चतुब्बि- [R.297] धवचीकम्मन्तसम्पत्तिकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति; तिविधमनोकम्मन्तसम्पत्तिकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति। नाहं, भिक्खवे, सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं उपचितानं अप्पटिसंवेदित्वा ब्यन्तीभावं वदामि। तं च खो दिट्ठेव धम्मे उपपज्जं वा अपरे वा परियाये। न त्वेवाहं, भिक्खवे, सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं उपचितानं अप्पटिसंवेदित्वा दुक्खस्सन्तकिरियं वदामी" ति॥ ●

८. **दुतियसञ्चेतनिकसुत्तं** : १. "नाहं, भिक्खवे, सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं उपचितानं अप्पटिसंवेदित्वा ब्यन्तीभावं वदामि, तं च खो दिट्ठेव धम्मे उपपज्जं वा [B.502] अपरे वा परियाये। न त्वेवाहं, भिक्खवे, सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं उपचितानं अप्पटि-संवेदित्वा दुक्खस्सन्तकिरियं वदामि।

रखता है— ...पूर्ववत्...। इस प्रकार, भिक्षुओ! प्राणी की यह त्रिविध मनःकर्म-समापत्ति सुखवर्धक एवं सुखमय फल देने वाली होती है।

१२. कुशल धर्मों से उद्भूत त्रिविध कायकर्मसमापत्ति के कारण प्राणी, इस देहपात के बाद, मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न होता है; चतुर्विध वाक्कर्मसमापत्ति के कारण ...पूर्ववत्... त्रिविध मनःकर्मसमापत्ति कारण, प्राणी, इस देहपात के बाद, मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न होते हैं।

"जैसे, भिक्षुओ! कोई निर्दोष मणिरत्न, ऊपर आकाश में फेंका जाने पर, पुनः नीचे भूमि पर सुप्रतिष्ठित ही गिरता है; वैसे ही, भिक्षुओ! कुशल धर्मों से उद्भूत त्रिविध कायकर्मसमापत्ति के कारण ...पूर्ववत्... चतुर्विध वाक्कर्मसमापत्ति के कारण... त्रिविध मनःकर्मसमापत्ति के कारण प्राणी, इस देहपात के बाद, मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में ही उत्पन्न होते हैं। अतः मैं, भिक्षुओ! जानते बूझते किये हुए कर्मों को भोगे विना दुःखों का अन्त नहीं होता—ऐसा कहता हूँ॥"

८. द्वितीय सञ्चैतनिकसूत्र : : कृत कर्मों के फलभोग विना दुःखों का अन्त नहीं

१. 'भिक्षुओ! मैं जानते-बूझते किये हुए कर्मों को भोगे विना उनका अन्त नहीं मानता; भले

२. ''तत्र, भिक्खवे, तिविधा कायकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति; चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति; तिविधा मनोकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति।

३. ''कथं च, भिक्खवे, तिविधा कायकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, तिविधा कायकम्मन्त-सन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति।

४. ''कथं च, भिक्खवे, चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसल-[R.298] सञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, चतुब्बिधा कायकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति।

[N.346] ५. ''कथं च, भिक्खवे, तिविधा मनोकम्मन्तसन्दोसब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, तिविधा मनोकम्मन्तसन्दोस-ब्यापत्ति अकुसलसञ्चेतनिका दुक्खुद्रया दुक्खविपाका होति।

६. ''तिविधकायकम्मन्तसन्दोसब्यापत्तिअकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा, भिक्खवे, सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ति; चतुब्बिध-वचीकम्मन्त-सन्दोस ...पे०... तिविधमनोकम्मन्तसन्दोसब्यापत्तिअकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा, भिक्खवे, सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ति॥

७. ''नाहं, भिक्खवे सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं उपचितानं अप्पटिसंवेदित्वा [B.503] ब्यन्तीभावं वदामि, तं च खो दिट्ठेव धम्मे उपपज्जं वा अपरे वा परियाये। न त्वेवाहं, भिक्खवे, सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं उपचितानं अप्पटिसंवेदित्वा दुक्खस्सन्तकिरियं वदामि।

८. ''तत्र खो, भिक्खवे, तिविधा कायकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति; चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुख-विपाका होति; तिविधा मनोकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति।

९. ''कथं च, भिक्खवे, चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, तिविधा कायकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति।

१०. ''कथं च, भिक्खवे, चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, चतुब्बिधा वचीकम्मन्तसम्पत्ति [R.299] कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति।

ही वे इस जन्म में ही भोगे जायँ, या किसी अन्य जन्म में। इसी प्रकार, भिक्षुओ! 'इन कर्मों को भोगे विना दुःखों का अन्त नहीं होता'—ऐसा मैं मानता हूँ। ...पूर्ववत्...।'' ●

११. "कथं च, भिक्खवे, तिविधा मनोकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, तिविधा मनोकम्मन्तसम्पत्ति कुसलसञ्चेतनिका सुखुद्रया सुखविपाका होति।

१२. "तिविधकायकम्मन्तसम्पत्तिकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा, भिक्खवे, [N.347] सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति; चतुब्बिधवचीकम्मन्तसम्पत्ति ...पे०... तिविधमनोकम्मन्तसम्पत्तिकुसलसञ्चेतनिकाहेतु वा, भिक्खवे, सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति ...पे०... ॥ ●

९. करजकायसुत्तं : १. "नाहं, भिक्खवे, सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं उपचितानं अप्पटिसंवेदित्वा ब्यन्तीभावं वदामि, तं च खो दिट्ठेव धम्मे उपपज्जं वा अपरे वा परियाये। न त्वेवाहं, भिक्खवे, सञ्चेतनिकानं कम्मानं कतानं उपचितानं अप्पटिसंवेदित्वा दुक्खस्सन्तकिरियं वदामि।

२. "स खो सो, भिक्खवे, अरियसावको एवं विगताभिज्झो विगतब्यापादो असम्मूळ्हो सम्पजानो पटिस्सतो मेत्तासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति [B.504] तथा दुतियं तथा ततियं तथा चतुत्थं। इति उद्धमधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय सब्बावन्तं लोकं मेत्तासहगतेन चेतसा विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन फरित्वा विहरति।

"सो एवं पजानाति—'पुब्बे खो मे इदं चित्तं परित्तं अहोसि अभावितं, एतरहि पन मे इदं चित्तं अप्पमाणं सुभावितं। यं खो पन किञ्चि पमाणकतं कम्मं, न तं तत्रावसिस्सति न तं तत्रावतिट्ठती' ति। [R.300]

"तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, दहरतग्गं चे सो अयं कुमारो मेत्तं चेतोविमुत्तिं भावेय्य, अपि नु खो पापकम्मं करेय्या" ति? "नो हेतं, भन्ते"।

[पूर्वसूत्र के समान ही इस सूत्र का भी विस्तार कर लें।]

९. करजकायसूत्र : : चतुर्विध ब्रह्मविहार से दुःखों का अन्त

१. "भिक्षुओ! मैं जानते-बूझते किये हुए कर्मों का फल भोगे विना उनका अन्त नहीं मानता। भले ही वे इस जन्म में भोगे जायँ या किसी आगामी जन्म में। और न मैं इन कर्मों को भोगे विना दुःखों का ही अन्त मानता हूँ।

२. "भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक निर्लोभ, निर्द्वेष एवं असम्मुग्ध चित्त से स्मृति-सम्प्रजन्यपूर्वक मैत्रीसहगतचित्त से एक दिशा को व्याप्त कर साधना करता है, पुनः दूसरी, तीसरी एवं चौथी दिशा को व्याप्त कर साधना करता है। इस प्रकार, वह ऊपर, नीचे, सर्वत्र, सर्वरूप में समस्त लोक को महद्गत, अप्रमाण एवं वैररहित या द्वेषरहित मैत्रीसहगतचित्त से व्याप्त कर साधना करता है।

"तब वह (अन्त में) यह समझ जाता है—'पहले मेरा यह चित्त अल्प अभ्यस्त तथा

"अकरोन्तं खो पन पापकम्मं अपि नु खो दुक्खं फुसेय्या" ति ?

"नो हेतं, भन्ते। अकरोन्तं हि, भन्ते, पापकम्मं कुतो दुक्खं फुसिस्सती" ति !

३. "भावेतब्बा खो पनायं, भिक्खवे, मेत्ताचेतोविमुत्ति इत्थिया वा पुरिसेन वा। [N.348] इत्थिया वा, भिक्खवे, पुरिसस्स वा नायं कायो आदाय गमनीयो। चित्तन्तरो अयं, भिक्खवे, मच्चो। सो एवं पजानाति—'यं खो मे इदं किञ्चि पुब्बे इमिना करजकायेन पापकम्मं कतं, सब्बं तं इध वेदनीयं; न तं अनुगं भविस्सती' ति। एवं भाविता खो, भिक्खवे, मेत्ता चेतोविमुत्तिं अनागामिताय संवत्तति, इध पञ्ञस्स भिक्खुनो उत्तरि विमुत्तिं अप्पटिविज्झतो।

४. "करुणासहगतेन चेतसा... मुदितासहगतेन चेतसा... उपेक्खासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति तथा दुतियं तथा ततियं तथा चतुत्थं। इति उद्धमधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय सब्बावन्तं लोकं उपेक्खासहगतेन चेतसा विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन फरित्वा विहरति।

"सो एवं पजानाति—'पुब्बे खो मे इदं चित्तं परित्तं अहोसि अभावितं, एतरहि पन मे इदं चित्तं अप्पमाणं सुभावितं। यं खो पन किञ्चि पमाणकतं कम्मं, न तं तत्रावसिस्सति [R.301] न तं तत्रावतिट्ठती' ति।

[B.305] "तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, दहरतग्गे चे सो अयं कुमारो उपेक्खं चेतोविमुत्तिं भावेय्य, अपि नु खो पापकम्मं करेय्या" ति ? "नो हेतं, भन्ते"।

"अकरोन्तं खो पन पापकम्मं अपि नु खो दुक्खं फुसेय्या" ति ?

असमाहित था, अब मेरा वही चित्त असीम साधना से पूर्ण है। वहाँ कोई सीमित धर्म अवशिष्ट नहीं है।

"क्या मानते हो, भिक्षुओ ! यदि वह कुमार अपनी युवावस्था के आरम्भकाल से ही इस मैत्रीचित्त की भावना करता तब क्या उससे कोई पापकर्म होते ?"

"नहीं होते, भन्ते !"

"जब वह पापकर्म ही नहीं करता, तब क्या उसको किसी दुःख का स्पर्श होता ?"

"नहीं, भन्ते ! जब उसने कोई पाप कर्म किया ही नहीं, तब दुःख का स्पर्श कैसे होगा !"

३. "भिक्षुओ ! किसी भी स्त्री या पुरुष को मैत्रीचेतोविमुक्ति की भावना करनी चाहिये। भिक्षुओ ! स्त्री या पुरुष अपना यह शरीर साथ लेकर नहीं जायँगें। भिक्षुओ ! यह मर्त्य (प्राणी) चित्तसहगत होता है। वह यह जानता है—'मैंने अपने इस मलिन (गन्दे) शरीर से जो भी कर्म किया है, उसको मुझे यहीं भोगना पड़ेगा। अन्यथा वह मेरा पीछा करेगा।' अतः, भिक्षुओ ! इस मैत्री चेतोविमुक्ति की इस प्रकार भावना (अभ्यास) करने पर वह प्राणी अनागामिता की ओर बढ़ता है। इस शरीर में ममत्व रखनेवाला अपनी उत्तर विमुक्ति की ओर नहीं बढ़ सकता।

४. "करुणासहगतचित्त से... मुदितासहगतचित्त से... उपेक्षासहगतचित्त से एक दिशा को व्याप्त कर साधना करता है। इस प्रकार, ऊपर, नीचे ...पूर्ववत्...।

"नो हेतं, भन्ते। अकरोन्तं हि, भन्ते, पापकम्मं कुतो दुक्खं फुसिस्सती" ति!

५. "भावेतब्बा खो पनायं, भिक्खवे, उपेक्खाचेतोविमुत्ति इत्थिया वा पुरिसेन वा। इत्थिया वा, भिक्खवे, पुरिसस्स वा नायं कायो आदाय गमनीयो। चित्तन्तरो अयं, भिक्खवे, मच्चो। सो एवं पजानाति—'यं खो मे इदं किञ्चि पुब्बे इमिना करजकायेन पापकम्मं कतं, सब्बं तं इध वेदनीयं; न तं अनुगं भविस्सती' ति। एवं भाविता खो, भिक्खवे, उपेक्खाचेतोविमुत्तिं अनागामिताय संवत्तति, इध पञ्ञस्स भिक्खुनो उत्तरि विमुत्तिं अप्पटिविज्झतो" ति॥ ●

१०. अधम्मचरियासुत्तं : १. अथ खो अञ्ञतरो ब्राह्मणो येन भगवा [N.349] तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—

२. "को नु खो, भो गोतम, हेतु को पच्चयो येनमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ती" ति?

"अधम्मचरियाविसमचरियाहेतु खो, ब्राह्मण, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ती" ति।

"को पन, भो गोतम, हेतु को पच्चयो येनमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ती" ति?

"धम्मचरियासमचरियाहेतु खो, ब्राह्मण, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ती" ति। [R.302]

"न खो अहं इमस्स भोतो गोतमस्स सङ्खित्तेन भासितस्स वित्थारेन अत्थं

---

५. " ...पूर्ववत्... इस प्रकार अभ्यस्त की गयी यह उपेक्षाचेतोविमुक्ति साधक को अनागामिता की ओर बढ़ाती है। इस मलिन शरीर में ममत्व रखने वाला भिक्षु अपनी उत्तरोत्तर विमुक्ति की ओर आगे नहीं बढ़ सकता॥" ●

१०. अधर्मचर्यासूत्र : : नरक या स्वर्ग की प्राप्ति का मुख्य कारण

१. तब कोई ब्राह्मण भगवान् के पास आया। आकर कुशल-मङ्गल प्रश्नानन्तर एक ओर बैठे हुए उसने भगवान् से यह जिज्ञासा की—

२. "भो गौतम! यहाँ किसी प्राणी का, देहपात के बाद मरणानन्तर, अपायभूत दुर्गतिमय नरक में पतन हो जाता है—इसमें क्या कारण और क्या प्रत्यय है?"

"ब्राह्मण! उसकी अधर्ममय एवं पापमय जीवनचर्या ही कारण एवं प्रत्यय है कि उसका मरणानन्तर अपायभूत, दुर्गतिमय नरक में पतन हो जाता है।"

"पुनः, भो गौतम! यहाँ किसी प्राणी का देहपात के बाद, मरणानन्तर, दिव्य सुखमय स्वर्ग में गमन होता है—इसमें क्या हेतु और क्या प्रत्यय है?"

"ब्राह्मण! उसकी धर्ममय एवं पुण्यमय जीवनचर्या ही कारण एवं प्रत्यय है कि उसका मरणानन्तर दिव्य सुखमय स्वर्ग में गमन होता है।"

आजानामि। साधु मे भवं गोतमो तथा धम्मं देसेतु यथाहं इमस्स भोतो गोतमस्स सङ्खित्तेन भासितस्स वित्थारेन अत्थं आजानेय्यं'' ति।

[B.506] ''तेन हि, ब्राह्मण, सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भो'' ति खो सो ब्राह्मणो भगवतो पच्चस्सोसि। भगवा एतदवोच—

३. ''तिविधा खो, ब्राह्मण, कायेन अधम्मचरियाविसमचरिया होति; चतुब्बिधा वाचाय अधम्मचरियाविसमचरिया होति; तिविधा मनसा अधम्मचरियाविसमचरिया होति।

४. ''कथं च, ब्राह्मण, कायेन तिविधा अधम्मचरियाविसमचरिया होति ...पे०... एवं खो, ब्राह्मण, चतुब्बिधा कायेन अधम्मचरियाविसमचरिया होति।

५. ''कथं च, ब्राह्मण, चतुब्बिधा वाचाय अधम्मचरियाविसमचरिया होति ...पे०... एवं खो, ब्राह्मण, चतुब्बिधा वाचाय अधम्मचरियाविसमचरिया होति।

[N.350] ६. ''कथं च, ब्राह्मण, तिविधा मनसा अधम्मचरियाविसमचरिया होति ...पे०... एवं खो, ब्राह्मण, तिविधा मनसा अधम्मचरियाविसमचरिया होति। एवं अधम्मचरियाविसमचरियाहेतु खो, ब्राह्मण, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जन्ति॥

७. ''तिविधा ब्राह्मण, कायेन धम्मचरियासमचरिया होति; चतुब्बिधा वाचाय धम्मचरियासमचरिया होति; तिविधा मनसा धम्मचरियासमचरिया होति।

८. ''कथं च, ब्राह्मण, तिविधा कायेन धम्मचरियाविसमचरिया होति ...पे०... [R.303] एवं खो, ब्राह्मण, तिविधा कायेन धम्मचरियासमचरिया होति।

९. ''कथं च, ब्राह्मण, चतुब्बिधा वाचाय धम्मचरियासमचरिया होति ...पे०... एवं खो, ब्राह्मण, चतुब्बिधा वाचाय धम्मचरियासमचरिया होति।

''भो गौतम! मैं आपकी इस संक्षिप्त देशना का विस्तृत अर्थ नहीं समझ सका हूँ। अच्छा हो, भो गौतम! कि आप अपने इस कथन का विस्तृत अर्थ मुझको समझा दें।''

''तो ब्राह्मण! सुनो, मैं तुमको समझाता हूँ। समझकर इसको मन में धारण कर लो।''... पूर्ववत्...। भगवान् ने उसको समझाया—

३. ''ब्राह्मण! किसी की यह अधर्ममय जीवनचर्या काया से तीन प्रकार की होती है; वाणी से चार प्रकार की तथा मन से तीन प्रकार की होती है।

४. ''कैसे, ब्राह्मण! यह अधर्मचर्या काया से तीन प्रकार की होती है? ...पूर्ववत्...।

५. ''कैसे, ब्राह्मण! यह अधर्मचर्या वाणी से चार प्रकार की होती है? ...पूर्ववत्...।

६. ''कैसे, ब्राह्मण! यह अधर्मचर्या मन से तीन प्रकार की होती है? ...पूर्ववत्...। (क)

७. ''इसी प्रकार, ब्राह्मण! इस काया से तीन प्रकार की, वाणी से चार प्रकार की और मन से तीन प्रकार की धर्ममय जीवनचर्या भी होती है।

८. ''कैसे, ब्राह्मण! काया से त्रिविध धार्मिक जीवनचर्या होती है? ...पूर्ववत्...।

१०. "कथं च, ब्राह्मण, तिविधा मनसा धम्मचरियासमचरिया होति ...पे०... एवं खो, ब्राह्मण, तिविधा मनसा धम्मचरियासमचरिया होति। एवं धम्मचरियासमचरियाहेतु खो, ब्राह्मण, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ती" ति।

११. "अभिक्कन्तं, भो गोतम, अभिक्कन्तं, भो गोतम ...पे०... उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥ ●

करजकायवग्गो एकवीसतिमो॥

२२. सामञ्ञवग्गो

१. सतिसम्पजञ्ञसुत्तं : १. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो [B.507] यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये। कतमेहि दसहि? पाणातिपाती होति, अदिन्नादायी होति, कामेसुमिच्छाचारी होति, मुसावादी होति, पिसुणवाचो होति, फरुसवाचो होति, सम्फप्पलापी होति, अभिज्झालु होति, ब्यापन्नचित्तो होति, मिच्छादिट्ठिको होति—इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये।

"दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं [N.351, R.304] सग्गे। कतमेहि दसहि? पाणातिपाता पटिविरतो होति, अदिन्नादाना पटिविरतो होति,

---

९. "कैसे, ब्राह्मण! वाणी से चतुर्विध धार्मिक जीवनचर्या होती है? ...पूर्ववत्...।

१०. "कैसे, ब्राह्मण! मन से त्रिविध धार्मिक जीवनचर्या होती है ...पूर्ववत्...। इस प्रकार, ब्राह्मण! कुछ प्राणी, अपनी धर्ममय जीवनचर्या के कारण, देहपात के बाद मरणानन्तर, दिव्य सुख भोगने के लिये स्वर्ग में उत्पन्न होते हैं॥" (ख) ●

करजकायवर्ग एकविंश सम्पन्न॥

२२. श्रामण्यवर्ग

१. "भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त प्राणी जैसे आया था वैसे ही पुन: नरक में जा गिरता है। किन दश धर्मों से? जो प्राणातिपाती होता है, अदत्तादायी होता है, कामभोगों में अनाचारी होता है, मृषावादी होता है, पिशुनवाक् होता है, परुषवाक् होता है, सम्प्रलापी होता है, अभिध्यालु होता है, द्वेषमय चित्तवाला होता है, मिथ्यादृष्टि होता है—भिक्षुओ! इन दश धर्मों से लिप्त प्राणी जैसे आया था वैसे ही पुन: नरक में जा गिरता है।

(इसके विपरीत) "भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त होने के कारण कोई प्राणी दिव्य सुख भोगने के लिये पुन: स्वर्ग में ही पहुँच जाता है। किन दश धर्मों से? जो प्राणातिपात से विरत रहता

कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति, मुसावादा पटिविरतो होति, पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति, फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति, सम्फप्पलापा पटिविरतो होति, अनभिज्झालु होति, अब्यापन्नचित्तो होति, सम्मादिट्ठिको होति—इमेहि खो, भिक्खवे, दसहि धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे'' ति॥ ●

२. ''वीसतिया, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये। कतमेहि वीसतिया? अत्तना च पाणातिपाती होति, परं च पाणातिपाते समादपेति; अत्तना च अदिन्नादायी होति, परं च अदिन्नादाने समादपेति; अत्तना च कामेसुमिच्छाचारी होति, परं च कामेसुमिच्छाचारे समादपेति; अत्तना च मुसावादी होति, परं च मुसावादे समादपेति; अत्तना च पिसुणवाचो होति, परं च पिसुणाय वाचाय समादपेति; अत्तना च फरुसवाचो होति, परं च फरुसाय वाचाय समादपेति; अत्तना च सम्फप्पलापी होति, परं च सम्फप्पलापे समादपेति; अत्तना च अभिज्झालु होति, परं च अभिज्झाय समादपेति; अत्तना च ब्यापन्नचित्तो होति, परं च ब्यापादे समादपेति; अत्तना च मिच्छादिट्ठिको होति, परं च मिच्छादिट्ठिया समादपेति—इमेहि खो, भिक्खवे, वीसतिया धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये।

''वीसतिया, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे। कतमेहि वीसतिया? अत्तना च पाणातिपाता पटिविरतो होति, परं च पाणातिपाता वेरमणिया [B.508] समादपेति; अत्तना च अदिन्नादाना पटिविरतो होति, परं च अदिन्नादाना वेरमणिया समादपेति; अत्तना च कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति, परं च कामेसुमिच्छाचारा वेरमणिया समादपेति; अत्तना च मुसावादा पटिविरतो होति, परं च मुसावादा वेरमणिया समादपेति; अत्तना च पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति, परं च पिसुणाय वाचाय

है, अदत्तादान से विरत रहता है, कामभोगों में अनाचार से विरत रहता है, मृषावाद से विरत रहता है, पिशुनवाक् से विरत रहता है, परुषवाक् से विरत रहता है, सम्प्रलाप से विरत रहता है, अनभिध्यालु होता है, अव्यापन्न (अद्विष्ट) चित्तवाला तथा सम्यग्दृष्टि होता है—भिक्षुओ! इन दश धर्मों से युक्त प्राणी दिव्यसुखमय स्वर्ग में ही उत्पन्न होता है॥ ●

२. ''भिक्षुओ! बीस धर्मों से युक्त पुरुष जैसे आया था वैसे ही पुनः नरक में जा गिरता है। किन बीस धर्मों से? (क) जो स्वयं प्राणातिपाती होता है, तथा (ख) दूसरों को प्राणातिपात हेतु प्रेरित करता है। *(इसी प्रकार सब अदत्तादान आदि धर्मों का विस्तार कर लें।)* इन बीस धर्मों से युक्त पुरुष जैसे आया था वैसे ही पुनः नरक में चला जाता है।

''पुनः, भिक्षुओ! इन बीस धर्मों से युक्त पुरुष दिव्य सुख भोगने हेतु पुनः स्वर्ग में पहुँच जाता है। किन बीस धर्मों से युक्त? जो स्वयं प्राणातिपात से विरत रहता है तथा दूसरों को प्राणातिपात से विरत रहने हेतु प्रेरित करता है। *(इसी प्रकार शेष धर्मों का विस्तार कर लें।)* इस प्रकार, इन बीस धर्मों से युक्त भिक्षु दिव्य सुख भोगने हेतु पुनः स्वर्ग में पहुँच जाता है॥'' ●

वेरमणिया समादपेति; अत्तना च फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति, परं च [R.305] फरुसाय वाचाय वेरमणिया समादपेति; अत्तना च सम्फप्पलापा पटिविरतो होति, परं च सम्फप्पलापा वेरमणिया समादपेति; अत्तना च अनभिज्झालु होति, परं च अनभिज्झाय समादपेति; अत्तना च अब्यापन्नचित्तो होति, परं च अब्यापादे समादपेति; अत्तना [N.353] च सम्मादिट्ठिको होति, परं च सम्मादिट्ठिया समादपेति—इमेहि खो, भिक्खवे, वीसतिया धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे'' ति॥ ●

३. ''तिंसाय, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये। कतमेहि तिंसाय? अत्तना च पाणातिपाती होति, परं च पाणातिपाते समादपेति, पाणातिपाते च समनुञ्ञो होति; अत्तना च अदिन्नादायी होति, परं च अदिन्नादाने समादपेति, अदिन्नादाने च समनुञ्ञो होति; अत्तना च कामेसुमिच्छाचारी होति, परं च कामेसुमिच्छाचारे समादपेति, कामेसुमिच्छाचारे च समनुञ्ञो होति; अत्तना च मुसावादी होति, परं च मुसावादे समादपेति, मुसावादे च समनुञ्ञो होति; अत्तना च पिसुणवाचो होति, परं च पिसुणाय वाचाय समादपेति, पिसुणाय वाचाय च समनुञ्ञो होति; अत्तना च फरुसवाचो होति, परं च फरुसाय वाचाय समादपेति, फरुसाय वाचाय च समनुञ्ञो होति; अत्तना च सम्फप्पलापी होति, परं च सम्फप्पलापे समादपेति, सम्फप्पलापे च समनुञ्ञो होति; अत्तना च अभिज्झालु होति, परं च अभिज्झाय समादपेति, अभिज्झाय च समनुञ्ञो होति; अत्तना च ब्यापन्नचित्तो होति, परं च ब्यापादे समादपेति, ब्यापादे च समनुञ्ञो होति; अत्तना च मिच्छादिट्ठिको होति, परं च मिच्छादिट्ठिया समादपेति, मिच्छादिट्ठिया [B.509] च समनुञ्ञो होति—इमेहि खो, भिक्खवे, तिंसाय धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये।

''तिंसाय, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे। कतमेहि तिंसाय? अत्तना च पाणातिपाता पटिविरतो होति, परं च पाणातिपाता वेरमणिया [R.306] समादपेति, पाणातिपाता वेरमणिया च समनुञ्ञो होति; अत्तना च अदिन्नादाना पटिविरतो

---

३. ''भिक्षुओ! इन तीस धर्मों से युक्त पुरुष जैसे आया था वैसे ही नरक में जा गिरता है। किन तीस धर्मों से? (क) जो स्वयं प्राणातिपाती होता है, (ख) दूसरों को प्राणातिपात हेतु प्रोत्साहित करता है, (ग) तथा जो प्राणातिपात का समर्थन करता है। *(इसी प्रकार अदत्तादान आदि सब धर्मों का विस्तार कर लें।)* इन तीस धर्मों से युक्त पुरुष जैसे आया था वैसे ही नरक में जा गिरता है।

''परन्तु, भिक्षुओ! इन तीस धर्मों से युक्त पुरुष पुनः दिव्य सुख भोगने हेतु स्वर्ग में जा पहुँचता है। कौन से तीस धर्म? (क) जो स्वयं प्राणातिपातविरत होता है, (ख) दूसरों को प्राणातिपात से विरत रहने हेतु प्रेरित करता है, (ग) तथा प्राणातिपातविरति का समर्थन करता है। *(इसी प्रकार अदत्तादानविरति आदि शेष धर्मों का विस्तार कर लें।)* इन तीस धर्मों से युक्त पुरुष दिव्य सुख भोगने हेतु पुनः स्वर्ग में जा पहुँचता है॥'' ●

होति, परं च अदिन्नादाना वेरमणिया समादपेति, अदिन्नादाना वेरमणिया च समनुञ्ञो होति; अत्तना च कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति, परं च कामेसुमिच्छाचारा वेरमणिया समादपेति, कामेसुमिच्छाचारा वेरमणिया च समनुञ्ञो होति; अत्तना च मुसावादा पटिविरतो होति, परं च मुसावादा वेरमणिया समादपेति, मुसावादा च समनुञ्ञो होति; [N.353] अत्तना च पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति, परं च पिसुणाय वाचाय वेरमणिया समादपेति, पिसुणाय वाचाय वेरमणिया च समनुञ्ञो होति; अत्तना च फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति, परं च फरुसाय वाचाय वेरमणिया समादपेति, फरुसाय वाचाय वेरमणिया च समनुञ्ञो होति; अत्तना च सम्फप्पलापा पटिविरतो होति, परं च सम्फप्पलापा वेरमणिया समादपेति, सम्फप्पलापा वेरमणिया च समनुञ्ञो होति; अत्तना च अनभिज्झालु होति, परं च अनभिज्झाय समादपेति, अनभिज्झाय च समनुञ्ञो होति; अत्तना च अब्यापन्नचित्तो होति, परं च अब्यापादे समादपेति, अब्यापादे च समनुञ्ञो होति; अत्तना च सम्मादिट्ठिको होति, परं च सम्मादिट्ठिया समादपेति, सम्मादिट्ठिया च समनुञ्ञो होति—इमेहि खो, भिक्खवे, तिंसाय धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे'' ति ॥ ●

४. ''चत्तारीसाय, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये। कतमेहि चत्तारीसाय? अत्तना च पाणातिपाती होति, परं च पाणातिपाते समादपेति, पाणातिपाते च समनुञ्ञो होति, पाणातिपातस्स च वण्णं भासति; अत्तना च अदिन्नादायी होति, परं च अदिन्नादाने समादपेति, अदिन्नादाने च समनुञ्ञो होति, अदिन्नादानस्स च [B.510] वण्णं भासति; अत्तना च कामेसुमिच्छाचारी होति, परं च कामेसुमिच्छाचारे [R.307] समादपेति, कामेसुमिच्छाचारे च समनुञ्ञो होति, कामेसुमिच्छाचारस्स च वण्णं भासति; अत्तना च मुसावादी होति, परं च मुसावादे समादपेति, मुसावादे च समनुञ्ञो होति, मुसावादस्स च वण्णं भासति; अत्तना च पिसुणवाचो होति, परं च पिसुणाय वाचाय समादपेति, पिसुणाय वाचाय च समनुञ्ञो होति, पिसुणाय वाचाय च वण्णं भासति; अत्तना च फरुसवाचो होति, परं च फरुसाय वाचाय समादपेति, फरुसाय वाचाय च समनुञ्ञो होति, फरुसाय वाचाय च वण्णं भासति; अत्तना च सम्फप्पलापी होति, परं च सम्फप्पलापे समादपेति, सम्फप्पलापे च समनुञ्ञो होति, सम्फप्पलापस्स च वण्णं भासति; अत्तना च अभिज्झालु होति, परं च अभिज्झाय समादपेति, अभिज्झाय च

---

४. ''भिक्षुओ! इन चालीस धर्मों से युक्त पुरुष जैसे आया था वैसे ही नरक में जा गिरता है। किन चालीस धर्मों से? (क) जो स्वयं प्राणातिपाती होता है, (ख) दूसरों को भी प्राणातिपात के लिये प्रेरित करता है, (ग) प्राणातिपात का समर्थन करता है, तथा (घ) प्राणातिपात की प्रशंसा करता है। *(इसी प्रकार अदत्तादान आदि शेष धर्मों का विस्तार कर लें।)* इन चालीस धर्मों से युक्त पुरुष जैसे आया था, वैसे ही पुनः नरक में जा गिरता है।

समनुञ्ञो होति, अभिज्झाय च वण्णं भासति; अत्तना च ब्यापन्नचित्तो होति, परं च ब्यापादे समादपेति, ब्यापादे च समनुञ्ञो होति, ब्यापादस्स च वण्णं भासति; अत्तना च [N.354] मिच्छादिट्ठिको होति, परं च मिच्छादिट्ठिया समादपेति, मिच्छादिट्ठिया च समनुञ्ञो होति, मिच्छादिट्ठिया च वण्णं भासति—इमेहि खो, भिक्खवे, चत्तारीसाय धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये।

"चत्तारीसाय, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे। कतमेहि चत्तारीसाय? अत्तना च पाणातिपाता पटिविरतो होति, परं च पाणातिपाता वेरमणिया समादपेति, पाणातिपाता वेरमणिया च समनुञ्ञो होति, पाणातिपाता वेरमणिया च वण्णं भासति; अत्तना च अदिन्नादाना पटिविरतो होति, परं च अदिन्नादाना वेरमणिया समादपेति, अदिन्नादाना वेरमणिया च समनुञ्ञो होति, अदिन्नादाना वेरमणिया च वण्णं भासति; अत्तना च कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति, परं च कामेसुमिच्छाचारा वेरमणिया समादपेति, कामेसुमिच्छाचारा वेरमणिया च समनुञ्ञो होति, कामेसुमिच्छाचारा वेरमणिया च वण्णं भासति; अत्तना च मुसावादा पटिविरतो होति, परं च मुसावादा वेरमणिया समादपेति, मुसावादा वेरमणिया च समनुञ्ञो होति, मुसावादा वेरमणिया च वण्णं भासति; अत्तना च पिसुणाय वाचाय पटिविरतो होति, परं च पिसुणाय वाचाय [B.511,R.308] वेरमणिया समादपेति, पिसुणाय वाचाय वेरमणिया च समनुञ्ञो होति, पिसुणाय वाचाय वेरमणिया च वण्णं भासति; अत्तना च फरुसाय वाचाय पटिविरतो होति, परं च फरुसाय वाचाय वेरमणिया समादपेति, फरुसाय वाचाय वेरमणिया च समनुञ्ञो होति, फरुसाय वाचाय वेरमणिया च वण्णं भासति; अत्तना च सम्फप्पलापा पटिविरतो होति, परं च सम्फप्पलापा वेरमणिया समादपेति, सम्फप्पलापा वेरमणिया च समनुञ्ञो होति, सम्फप्पलापा वेरमणिया च वण्णं भासति; अत्तना च अनभिज्झालु होति, परं च अनभिज्झाय समादपेति, अनभिज्झाय च समनुञ्ञो होति, अनभिज्झाय च वण्णं भासति; अत्तना च अब्यापन्नचित्तो होति, परं च अब्यापादे समादपेति, अब्यापादे च समनुञ्ञो होति, अब्यापादस्स च वण्णं भासति; अत्तना च सम्मादिट्ठिको होति, परं च सम्मादिट्ठिया समादपेति, सम्मादिट्ठिया च समनुञ्ञो होति, सम्मादिट्ठिया च वण्णं भासति—इमेहि खो, भिक्खवे, चत्तारीसाय धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे" ति॥ ●

"परन्तु, भिक्षुओ! इन चालीस धर्मों से युक्त पुरुष दिव्य सुख भोगने हेतु पुनः स्वर्ग में ही जा पहुँचता है। किन चालीस धर्मों से? (क) जो स्वयं प्राणातिपात से विरत रहता है, (ख) दूसरों को प्राणातिपात से विरत रहने की प्रेरणा देता है, (ग) प्राणातिपातविरति का समर्थन करता है, तथा (घ) प्राणातिपातविरति की प्रशंसा करता है। *(इसी प्रकार अदत्तादान आदि धर्मों का भी विस्तार कर लें।)* भिक्षुओ! इन चालीस धर्मों से युक्त पुरुष दिव्य सुख भोगने हेतु पुनः स्वर्ग में पहुँच जाता है।"

●

[N.355] ५-८. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो खतं उपहतं अत्तानं परिहरति ...पे०... अक्खतं अनुपहतं अत्तानं परिहरति ...पे०... वीसतिया, भिक्खवे ...पे०... तिंसाय, भिक्खवे ...पे०... चत्तारीसाय, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो खतं उपहतं अत्तानं परिहरति ...पे०..."॥ ●

९-१२. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो इधेकच्चो कायस्स भेदा परं मरणा [R.309] अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति ...पे०... इधेकच्चो कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जति। वीसतिया, भिक्खवे ...पे०... तिंसाय, भिक्खवे, ...पे०... चत्तारीसाय, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो इधेकच्चो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति ...पे०... इधेकच्चो कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जति"॥ ●

१३-१६. "दसहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो बालो वेदितब्बो ...पे०... पण्डितो वेदितब्बो ...पे०... वीसतिया, भिक्खवे ...पे०... तिंसाय, भिक्खवे ...पे०... चत्तारीसाय, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो बालो वेदितब्बो ...पे०... पण्डितो [B.512] वेदितब्बो ...पे०... इमेहि खो, भिक्खवे, चत्तारीसाय धम्मेहि समन्नागतो पण्डितो वेदितब्बो" ति॥ ●

सामञ्ञवग्गो बावीसतिमो॥

५-८. "दश धर्मों से युक्त पुरुष क्षत, उपहत अपने को संभालता है ...पूर्ववत्... अक्षत, अनुपहत अपने को संभालता है ...पूर्ववत्... बीस धर्मों से, भिक्षुओ! ...पूर्ववत्... तीस धर्मों से युक्त, भिक्षुओ! ...पूर्ववत्...चालीस धर्मों से युक्त, भिक्षुओ! क्षत, उपहत अपने को संभालता है ...पूर्ववत्... ॥" ●

९-१२. "भिक्षुओ! दश धर्मों से युक्त कोई पुरुष, देहपात के बाद मरणानन्तर, अपायमय, दुर्गतियुक्त नरक में उत्पन्न होता है ...पूर्ववत्... कोई पुरुष, देहपात के बाद, मरणानन्तर, स्वर्ग में उत्पन्न होता है ...पूर्ववत्... बीस धर्मों से युक्त, भिक्षुओ! ...पूर्ववत्... तीस धर्मों से युक्त, भिक्षुओ ...पूर्ववत्... चालीस धर्मों से युक्त, भिक्षुओ! मरणानन्तर नरक में उत्पन्न होता है ...पूर्ववत्... कोई मरणानन्तर स्वर्ग में उत्पन्न होता है"॥ ●

१३-१६. "भिक्षुओ! दश धर्मों से युक्त पुरुष को ...पूर्ववत्... मूर्ख समझना चाहिये। ...पण्डित समझना चाहिये। ...पूर्ववत्... बीस धर्मों से युक्त पुरुष को ...पूर्ववत्... तीस धर्मों से युक्त पुरुष को ...पूर्ववत्... चालीस धर्मों से युक्त पुरुष को मूर्ख समझना चाहिये...पण्डित समझना चाहिये ...पूर्ववत्... इन चालीस धर्मों से युक्त पुरुष को, भिक्षुओ! पण्डित समझना चाहिये॥"●

श्रामण्य वर्ग बाईसवाँ सम्पन्न॥

२३. रागपेय्यालं

१. "रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय दस धम्मा भावेतब्बा। कतमे दस? असुभसञ्ञा, मरणसञ्ञा, आहारे पटिकूलसञ्ञा, सब्बलोके अनभिरतिसञ्ञा, अनिच्चसञ्ञा, अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, दुक्खे अनत्तसञ्ञा, पहानसञ्ञा, विरागसञ्ञा, निरोधसञ्ञा—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे दस धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

२. "रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय दस धम्मा भावेतब्बा। कतमे दस? [R.310] अनिच्चसञ्ञा, अनत्तसञ्ञा, आहारे पटिकूलसञ्ञा, सब्बलोके अनभिरतिसञ्ञा, अट्ठिकसञ्ञा, पुळुवकसञ्ञा, विनीलकसञ्ञा, विपुब्बकसञ्ञा, विच्छिद्दकसञ्ञा, [N.356] उद्धुमातकसञ्ञा—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे दस धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

३. "रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय दस धम्मा भावेतब्बा। कतमे दस? सम्मादिट्ठि, सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा, सम्माकम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मावायामो, सम्मासति, सम्मासमाधि, सम्माञाणं, सम्माविमुत्ति—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे दस धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

४-३०. "रागस्स, भिक्खवे, परिञ्ञाय ...पे०... परिक्खयाय... पहानाय... खयाय... वयाय... विरागाय... निरोधाय... चागाय... पटिनिस्सग्गाय ...पे०... इमे दस धम्मा भावेतब्बा॥ ●

---

२३. रागपेय्याल

१. "भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये दश धर्मों की भावना करनी चाहिये। कौन से दश? अशुभसंज्ञा, मरणसंज्ञा, आहार में प्रतिकूलसंज्ञा, समस्तलोक में अनभिरतिसंज्ञा, अनित्यसंज्ञा, अनित्य में दुःखसंज्ञा, दुःख में अनात्मसंज्ञा, प्रहाणसंज्ञा, विरागसंज्ञा एवं निरोधसंज्ञा—भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये इन दश धर्मों की भावना करनी चाहिये॥" ●

२. "भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये दश धर्मों की भावना करनी चाहिये। किन दश धर्मों की? अनित्यसंज्ञा, अनात्मसंज्ञा, आहार में प्रतिकूलसंज्ञा, समस्त लोक में अनभिरतिसंज्ञा, अस्थिकसंज्ञा, पुड्डवक (कीट) संज्ञा, विनीलकसंज्ञा, विपूयकसंज्ञा, विच्छिद्रकसंज्ञा, उद्धूमातकसंज्ञा—भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये इन दश धर्मों की भावना करनी चाहिये।" ●

३. राग के अभिज्ञान के लिये, भिक्षुओ! दश धर्मों की भावना करनी चाहिये। किन दश धर्मों की? सम्यग्दृष्टि, सम्यक्सङ्कल्प, सम्यग्वाक्, सम्यक्कर्म, सम्यगाजीव, सम्यग्व्यायाम, सम्यक्स्मृति, सम्यक्समाधि, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यग्विमुक्ति—राग के अभिज्ञान के लिये, भिक्षुओ! इन दश धर्मों की भावना करनी चाहिये॥" ●

४-३०. "भिक्षुओ! राग की परिज्ञा के लिये ...पूर्ववत्... परिक्षय के लिये...प्रहाण के लिये...क्षय के लिये...व्यय के लिये...विराग के लिये...निरोध के लिये...त्याग के लिये...प्रतिनिसर्ग के लिये ...पूर्ववत्... इन दश धर्मों की भावना करनी चाहिये॥" ●

[B.513] **३१-५१०.** ''दोसस्स ...पे०... मोहस्स... कोधस्स... उपनाहस्स... मक्खस्स... पळासस्स... इस्साय... मच्छरियस्स... मायाय .... साठेय्यस्स... थम्भस्स... सारम्भस्स... मानस्स... अतिमानस्स... मदस्स... पमादस्स अभिञ्ञाय... परिञ्ञाय... परिक्खयाय... पहानाय... खयाय... वयाय... विरागाय... निरोधाय... चागाय... पटिनिस्सग्गाय ...पे०... इमे दस धम्मा भावेतब्बा'' ति॥

दसकनिपातपालि निट्ठिता॥

३१-५१०. भिक्षुओ! द्वेष के ...पूर्ववत्... .मोह के...क्रोध के...उपनाह के...म्रक्ष के...प्रदाश के... ईर्ष्या के...मात्सर्य के...माया के...शठता के....स्तम्भ के...सारम्भ के...मान के...अतिमान के...मद के...प्रमाद के अभिज्ञान के लिये, परिज्ञान के लिये...परिक्षय के लिये...प्रहाण के लिये...क्षय के लिये...व्यय के लिये...विराग के लिये...निरोध के लिये...त्याग के लिये...प्रतिनिसर्ग के लिये ... पूर्ववत्... इन दश धर्मों की भावना करनी चाहिये॥''

दशकनिपातपालि सम्पन्न॥

११. एकादसकनिपातो

१. निस्सयवग्गो

१. **किमत्थियसुत्तं** :१. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा [N.357, B.515, R.311] सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

२. "किमत्थियानि, भन्ते, कुसलानि सीलानि किमानिसंसानी" ति?

"अविप्पटिसारत्थानि खो, आनन्द, कुसलानि सीलानि अविप्पटिसारानिसंसानी" ति।

३. "अविप्पटिसारो पन, भन्ते, किमत्थियो किमानिसंसो"?

"अविप्पटिसारो खो, आनन्द, पामोज्जत्थो पामोज्जानिसंसो"।

४. "पामोज्जं पन, भन्ते, किमत्थियं किमानिसंसं"?

"पामोज्जं खो, आनन्द, पीतत्थं पीतानिसंसं"।

५. "पीति पन, भन्ते, किमत्थिया किमानिसंसा"?

---

११. एकादशक निपात

१. निश्रयवर्ग

१. किमर्थीयसूत्र : : शीलादि धर्मों का प्रयोजन एवं माहात्म्य

१. ऐसा मैंने सुना है एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय कभी आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सम्मुख आये।...भगवान् से यह जिज्ञासा की—

२. "भन्ते! कुशल शीलों की साधना किसलिये की जाती है तथा उनका क्या महत्त्व है?

"मानसिक खेदनिवृत्ति के लिये, आनन्द! कुशल शीलधर्मों का पालन किया जाता है। मानसिक खेदनिवृत्ति करना ही उनका माहात्म्य है।"

३. "भन्ते! खेदनिवृत्ति की भावना क्यों की जाती है? तथा इसका क्या माहात्म्य है?"

"आनन्द! मानसिक खेद की निवृत्ति की भावना चित्त के प्रमोद हेतु की जाती है तथा चित्तप्रमोद ही इसका माहात्म्य है।"

४. "भन्ते! चित्तप्रमोद की भावना क्यों की जाती है? तथा इसका माहात्म्य क्या है?"

"आनन्द! चित्तप्रमोद की भावना प्रीति के लिये की जाती है तथा प्रीति ही इसका माहात्म्य है।"

५. "भन्ते! प्रीति की भावना किसलिये की जाती है? तथा इसका क्या माहात्म्य है?

"पीति खो, आनन्द, पस्सद्धत्था पस्सद्धानिसंसा"।

६. "पस्सद्धि पन, भन्ते, किमत्थिया किमानिसंसा"?

"पस्सद्धि खो, आनन्द, सुखत्था सुखानिसंसा"।

७. "सुखं पन, भन्ते, किमत्थियं किमानिसंसं"?

"सुखं खो, आनन्द, समाधत्थं समाधानिसंसं"।

[B.516] ८. "समाधि पन, भन्ते, किमत्थियो किमानिसंसो"?

"समाधि खो, आनन्द, यथाभूतञाणदस्सनत्थो यथाभूतञाणदस्सनासिंसो"।

९. "यथाभूतञाणदस्सनं पन, भन्ते, किमत्थियं किमानिसंसं"?

[N.358] "यथाभूतञाणदस्सनं खो, आनन्द, निब्बिदत्थं निब्बिदानिसंसं"।

१०. "निब्बिदा, पन, भन्ते, किमत्थिया किमानिसंसा"?

[R.312] "निब्बिदा खो, आनन्द, विरागत्था विरागनिसंसा।

११. "विरागो पन, भन्ते, किमत्थियो किमानिसंसो"?

"विरागो खो, आनन्द, विमुत्तिञाणदस्सनत्थो विमुत्तिञाणदस्सनानिसंसो।

"आनन्द! प्रीति की भावना प्रश्रब्धि की प्राप्ति हेतु की जाती है तथा प्रश्रब्धि ही इसका माहात्म्य है।"

६. "भन्ते! पुनः प्रश्रब्धि की भावना क्यों की जाती है? तथा इसका माहात्म्य क्या है?"

"आनन्द! प्रश्रब्धि की भावना सुख के लिये की जाती है तथा सुख ही इसका माहात्म्य है।"

७. "भन्ते! सुख की भावना क्यों की जाती है? और इसका माहात्म्य क्या है?"

"आनन्द! सुख की भावना समाधि के लिये की जाती है तथा समाधि ही इसका माहात्म्य है।"

८. "भन्ते! समाधि की भावना क्यों की जाती है? तथा इसका माहात्म्य क्या है?"

"आनन्द! समाधि की भावना यथाभूतज्ञानदर्शन हेतु की जाती है, तथा यह यथाभूत ज्ञानदर्शन ही इस समाधि का माहात्म्य है।"

९. "और, भन्ते! यथाभूत ज्ञानदर्शन की भावना क्यों की जाती है? तथा इसका माहात्म्य क्या है?

"आनन्द! यह यथाभूतज्ञानदर्शन की भावना संसार के निर्वेद के लिये की जाती है, तथा यह निर्वेद ही इसका माहात्म्य है।"

१०. "और, भन्ते! निर्वेद की भावना क्यों की जाती है तथा इसका क्या माहात्म्य होता है?"

"आनन्द! निर्वेद की भावना संसार से वैराग्य प्राप्ति के लिये की जाती है, अतः वैराग्य ही इसका माहात्म्य है।"

११. "भन्ते! वैराग्य की भावना किसलिये की जाती है, तथा इसका क्या माहात्म्य है?"

१२. ''इति खो, आनन्द, कुसलानि सीलानि अविप्पटिसारत्थानि अविप्पटिसारानिसंसानि, अविप्पटिसारो पामोज्जत्थो पामोज्जानिसंसो, पामोज्जं पीतत्थं पीतानिसंसं, पीति पस्सद्धत्था पस्सद्धानिसंसा, पस्सद्धि सुखत्था सुखानिसंसा, सुखं समाधत्थं समाधानिसंसं, समाधि यथाभूतञाणदस्सनत्थो यथाभूतञाणदस्सनानिसंसो, यथाभूतञाणदस्सनं निब्बिदत्थं निब्बिदानिसंसं, निब्बिदा विरागत्था विरागानिसंसा, विरागो विमुत्तिञाणदस्सनत्थो विमुत्तिञाणदस्सनानिसंसो। इति खो, आनन्द, कुसलानि सीलानि अनुपुब्बेन अग्गाय परेन्ती'' ति॥ ●

२. चेतनाकरणीयसुत्तं : १. ''सीलवतो, भिक्खवे, सीलसम्पन्नस्स न चेतनाय करणीयं—'अविप्पटिसारो मे उप्पज्जतू' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं सीलवतो सीलसम्पन्नस्स अविप्पटिसारो उप्पज्जति।

२. ''अविप्पटिसारिस्स, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'पामोज्जं मे उप्पज्जतू' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं अविप्पटिसारिस्स पामोज्जं उप्पज्जति।

३. ''पमुदितस्स, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'पीति मे उप्पज्जतू' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं पमुदितस्स पीति उप्पज्जति।

४. ''पीतिमनस्स, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'कायो मे पस्सम्भतू' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति।

५. ''पस्सद्धकायस्स, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'सुखं [N.359, B.517] वेदियामी' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं पस्सद्धकायो सुखं वेदियति।

''आनन्द! वैराग्य की भावना विमुक्तिज्ञानदर्शन के लिये की जाती है, अतः यह विमुक्तिज्ञानदर्शन ही इसका माहात्म्य है।

''इस प्रकार, आनन्द! कुशलशील की भावना मानसिक खेदनिवृत्ति हेतु की जाती है, अतः यह खेदनिवृत्ति ही इसका माहात्म्य है ...पूर्ववत्... विराग की भावना विमुक्तिज्ञानदर्शन हेतु की जाती है तथा यह दर्शन ही इसका माहात्म्य है। इस प्रकार, आनन्द! ये कुशलशील क्रमशः साधना के आगे वाले धर्मों के बढ़ाने में प्रेरणा देते हैं॥'' ●

२. चेतनाकरणीयसूत्र : : शील-साधक को अन्य धर्मों की चिन्ता अनावश्यक

१. ''भिक्षुओ! शीलवान् एवं शीलसम्पन्न भिक्षु को यह विचार न करना चाहिये—'मुझमें मानसिक खेदनिवृत्ति उत्पन्न हो'; क्योंकि भिक्षुओ! यह उस शीलवान् शीलसम्पन्न भिक्षु की धर्मता (स्वभाव) बन जाती है कि उसको शीलसम्पन्नता के कारण यह मानसिक खेदनिवृत्ति उद्भूत होगी ही।''

२. ''इसी प्रकार मानसिक खेदनिवृत्त भिक्षु को यह विचार नहीं करना चाहिये—'मुझमें प्रमोद उत्पन्न हो; क्योंकि यह प्रमोद उसकी धर्मतावश उसको उत्पन्न होगा ही।'

३. ''भिक्षुओ! प्रमुदितमना भिक्षु को यह चिन्तन नहीं करना चाहिये—'मुझको प्रीति उत्पन्न हो'; ...पूर्ववत्...।

६. ''सुखिनो, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'चित्तं मे समाधियतू' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं सुखिनो चित्तं समाधियति। [B.313]

७. ''समाहितस्स, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'यथाभूतं जानामि पस्सामी' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं समाहितो यथाभूतं जानाति पस्सति।

८. ''यथाभूतं, भिक्खवे, जानतो पस्सतो न चेतनाय करणीयं—'निब्बिन्दामी' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं यथाभूतं जानं पस्सं निब्बिन्दति।

९. ''निब्बिन्नस्स, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'विरज्जामी' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं निब्बिन्नो विरज्जति।

१०. ''विरत्तस्स, भिक्खवे, न चेतनाय करणीयं—'विमुत्तिञाणदस्सनं सच्छिकरोमी' ति। धम्मता एसा, भिक्खवे, यं विरत्तो विमुत्तिञाणदस्सनं सच्छिकरोति।

११. ''इति खो, भिक्खवे, विरागो विमुत्तिञाणदस्सनत्थो विमुत्तिञाणदस्सनानिसंसो, निब्बिदा विरागत्था विरागानिसंसा, यथाभूतञाणदस्सनं निब्बिदत्थं निब्बिदानिसंसं, समाधि यथाभूतञाणदस्सनत्थो यथाभूतञाणदस्सनानिसंसो, सुखं समाधत्थं समाधानिसंसं, पस्सद्धि सुखत्था सुखानिसंसा, पीति पस्सद्धत्था पस्सद्धानिसंसा, पामोज्जं पीतत्थं पीतानिसंसं, अविप्पटिसारो पामोज्जत्थो पामोज्जानिसंसो, कुसलानि सीलानि अविप्पटिसारत्थानि अविप्पटिसारानिसंसानि। इति खो, भिक्खवे, धम्मा धम्मे अभिसन्देन्ति, धम्मा धम्मे परिपूरेन्ति अपारा पारं गमनाया'' ति॥ ●

---

४. ''और, भिक्षुओ! प्रीतिमना भिक्षु को....'मुझको कायप्रश्रब्धि उत्पन्न हो', ...पूर्ववत्...।

५. और, भिक्षुओ! प्रश्रब्धकाय भिक्षु को...'मैं सुख का अनुभव करूँ', ...पूर्ववत्...।

६. ''और, भिक्षुओ! सुखप्राप्त भिक्षु को....'मेरा चित्त समाहित हो'; ...पूर्ववत्...।

७. ''और, भिक्षुओ! समाहितचित्त भिक्षु को...'मैं यथाभूत ज्ञान को जान लूँ, देख लूँ';.. पूर्ववत्...।

८. ''और भिक्षुओ! यथाभूत ज्ञान के ज्ञाता एवं द्रष्टा को....'मैं निर्वेद प्राप्त करूँ'; ...पूर्ववत्...।

९. और भिक्षुओ! ऐसे निर्वेदप्राप्त को....'मैं वैराग्य प्राप्त करूँ'; ...पूर्ववत्...।

१०. ''और, भिक्षुओ! विरक्त (वैराग्य सम्पन्न) भिक्षु को...'मैं विमुक्तिज्ञान को साक्षात् कर लूँ'; ...पूर्ववत्...।

११. ''इस प्रकार, भिक्षुओ! विराग विमुक्तिज्ञानदर्शन के लिये अभ्यस्त किया जाता है; यही इसका माहात्म्य है; निर्वेद विराग के लिये...; यथाभूत ज्ञानदर्शन निर्विदा के लिये...समाधि यथाभूत ज्ञानदर्शन के लिये..., सुख समाधि के लिये..., कायप्रश्रब्धि सुख के लिये..., प्रीति प्रश्रब्धि के लिये..., प्रामोदय प्रीति के लिये...अविप्रतिसार प्रामोदय के लिये..., अविप्रतिसार प्राप्ति के लिये कुशलशील का पालन किया जाता है। अविप्रतिसार ही इसका माहात्म्य है। इस प्रकार, भिक्षुओ! पूर्वधर्म ही अग्रिम धर्मों को अभिष्यन्द करते हैं (परिणाम देते हैं); धर्म ही धर्मों को पूर्ण करते हैं। जिसके फलस्वरूप साधक इस पार (भवसागर) से उस पार (निर्वाण) तक पहुँच जाता है॥'' ●

३. पठमउपनिसासुत्तं : १. ''दुस्सीलस्स, भिक्खवे, सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो। अविप्पटिसारे असति अविप्पटिसारविपन्नस्स हतूपनिसं [N.360] होति पामोज्जं। पामोज्जे असति पामोज्जविपन्नस्स हतूपनिसा होति पीति। पीतिया असति पीतिविपन्नस्स हतूपनिसा होति पस्सद्धि। पस्सद्धिया असति पस्सद्धि- [B.518,R.314] विपन्नस्स हतूपनिसं होति सुखं। सुखे असति सुखविपन्नस्स हतूपनिसो होति सम्मासमाधि। सम्मासमाधिम्हि असति सम्मासमाधिविपन्नस्स हतूपनिसं होति यथाभूतञाणदस्सनं। यथा-भूतञाणदस्सने असति यथाभूतञाणदस्सनविपन्नस्स हतूपनिसा होति निब्बिदा। निब्बिदाय असति निब्बिदाविपन्नस्स हतूपनिसो होति विरागो। विरागे असति विरागविपन्नस्स हतूपनिसं होति विमुत्तिञाणदस्सनं।

''सेय्यथापि,भिक्खवे, रुक्खो साखापलासविपन्नो। तस्स पपटिका पि न पारिपूरिं गच्छति, तचो पि ...फेग्गु पि... सारो पि न पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, दुस्सीलस्स सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो, अविप्पटिसारे असति अविप्पटिसारविपन्नस्स हतूपनिसं होति पामोज्जं ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं॥

२. ''सीलवतो, भिक्खवे, सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो, अविप्पटिसारे सति अविप्पटिसारसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति पामोज्जं, पामोज्जे सति पामोज्जसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति पीति; पीतिया सति पीतिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति पस्सद्धि, पस्सद्धिया सति पस्सद्धिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति सुखं, सुखे सति सुखसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति सम्मासमाधि, सम्मासमाधिम्हि सति सम्मासमाधि-सम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति यथाभूतञाणदस्सनं, यथाभूतञाणदस्सने सति यथाभूत-ञाणदस्सनसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति निब्बिदा, निब्बिदाय सति निब्बिदासम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति विरागो, विरागे सति विरागसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति विमुत्ति-ञाणदस्सनं।

---

३. प्रथम उपनिषत्सूत्र : : अधर्मों के रहने पर अधर्मता

१. ''भिक्षुओ! दुःशील या विनष्टशील साधक को अविप्रतिसार (चित्तखेदनिवृत्ति) की आशा (सम्भवना) नहीं करनी चाहिये। इस अविप्रतिसार के न रहने पर अविप्रतिसाररहित साधक को प्रामोद्य नहीं मिल सकता। प्रामोद्यरहित साधक को प्रीति एवं प्रीतिरहित साधक को प्रश्रब्धि अधिगत नहीं हो सकती। प्रश्रब्धिरहित को सुख, तथा सुखरहित को समाधि, समाधिरहित को यथाभूत ज्ञानदर्शन असम्भव है। इस यथाभूत ज्ञानदर्शन के न होने पर निर्वेद, तथा निर्वेद के विना वैराग्य और वैराग्य के विना विमुक्तिज्ञानदर्शन की, साधक के लिये, असम्भावना ही बनी रहती है।

''जैसे, भिक्षुओ! कोई शाखापत्ररहित वृक्ष हो, ऐसे वृक्ष की प्रपटिका (पपड़ी), त्वचा आदि का रहना भी असम्भव होता है; वैसे ही दुःशील शीलरहित साधक को अविप्रतिसार मिलना असम्भव है ...पूर्ववत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन की असम्भावना बनी रहती है। (क)

२. ''(परन्तु) भिक्षुओ! शीलसम्पन्न भिक्षु को अविप्रतिसार होना सम्भव है। इसी प्रकार,

"सेय्यथापि, भिक्खवे, रुक्खो साखापलाससम्पन्नो। तस्स पपटिका पि पारिपूरिं गच्छति, तचो पि .. फेग्गु पि... सारो पि पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, सीलवतो [N.361] सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो, अविप्पटिसारे सति अविप्पटिसारसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति ...पे० ... विमुत्तिञाणदस्सनं" ति॥ ●

४. दुतियउपनिसासुत्तं : १. तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि— [B.519, R.315] "आवुसो भिक्खवे" ति। "आवुसो" ति खो ते भिक्खू आयस्मतो सारिपुत्तस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—

२. "दुस्सीलस्स, आवुसो, सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो, अविप्पटिसारे असति अविप्पटिसारविपन्नस्स हतूपनिसं होति पामोज्जं, पामोज्जे असति पामोज्जविपन्नस्स हतूपनिसा होति पीति, पीतिया असति पीतिविपन्नस्स हतूपनिसा होति पस्सद्धि, पस्सद्धिया असति पस्सद्धिविपन्नस्स हतूपनिसं होति सुखं, सुखे असति सुख-विपन्नस्स हतूपनिसो होति सम्मासमाधि, सम्मासमाधिम्हि असति सम्मासमाधिविपन्नस्स हतूपनिसं होति यथाभूतञाणदस्सनं, यथाभूतञाणदस्सने असति यथाभूतञाणदस्सन-विपन्नस्स हतूपनिसा होति निब्बिदा, निब्बिदाय असति निब्बिदाविपन्नस्स हतूपनिसो होति विरागो, विरागे असति विरागविपन्नस्स हतूपनिसं होति विमुत्तिञाणदस्सनं।

"सेय्यथापि, आवुसो, रुक्खो साखापलासविपन्नो। तस्स पपटिका पि न पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि... सारो पि न पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, आवुसो, दुस्सीलस्स सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो, अविप्पटिसारे असति अविप्पटिसारविपन्नस्स हतूपनिसं होति पामोज्जं ...पे० ... विमुत्तिञाणदस्सनं॥

३. "सीलवतो, आवुसो सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो, अविप्पटिसारे सति अविप्पटिसारसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति पामोज्जं, पामोज्जे सति पामोज्जसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति पीति, पीतिया सति पीतिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना

अविप्रतिसार के होने पर उससे प्रमोद, प्रमोद से प्रीति ...पूर्ववत्... विराग से विमुक्तिज्ञानदर्शन की उत्पत्ति सम्भव है।

"जैसे, भिक्षुओ! शाखापलाशयुक्त कोई वृक्ष हो, तब उसके प्रपटिका, त्वचा आदि सब कुछ सम्भव है, उसी प्रकार शीलसम्पन्न साधक को ...पूर्ववत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन भी सम्भव है॥" (ख) ●

४. द्वितीय उपनिषत्सूत्र : : अधर्मों के रहने पर अधर्मों की ही सम्भावना

१. वहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को "आयुष्मन् भिक्षुओ!"—कहकर सम्बोधित किया ...पूर्ववत्... और आयुष्मान् सारिपुत्र यह बोले—

२. "आयुष्मानो! दुःशील या शीलरहित साधक को अविप्रतिसार की सम्भावना नहीं रहती... पूर्वसूत्रवत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन भी सम्भव है॥" ●

होति पस्सद्धि, पस्सद्धिया सति पस्सद्धिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति सुखं, सुखे सति सुखसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति सम्मासमाधि, सम्मासमाधिम्हि सति सम्मासमाधि-सम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति यथाभूतञाणदस्सनं, यथाभूतञाणदस्सने सति [N.362] यथाभूतञाणदस्सनसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति निब्बिदा, निब्बिदाय सति, निब्बिदा-सम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति विरागो, विरागे सति विरागसम्पन्नस्स [B.520,R.316] उपनिससम्पन्नं होति विमुत्तिञाणदस्सनं।

''सेय्यथापि, आवुसो, रुक्खो साखापलाससम्पन्नो। तस्स पपटिका पि पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि... सारो पि पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, आवुसो, सीलवतो सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो, अविप्पटिसारे सति अविप्पटि-सारसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति पामोज्जं ...पे० ... विमुत्तिञाणदस्सनं'' ति॥ ●

५. ततियउपनिसासुत्तं : १. तत्र खो आयस्मा आनन्दो भिक्खू आमन्तेसि ...पे०... एतदवोच—''दुस्सीलस्स, आवुसो, सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो, अविप्पटिसारे असति अविप्पटिसारविपन्नस्स हतूपनिसं होति पामोज्जं, पामोज्जे असति पामोज्जविपन्नस्स हतूपनिसा होति पीति, पीतिया असति पीतिविपन्नस्स हतूपनिसा होति पस्सद्धि, पस्सद्धिया असति पस्सद्धिविपन्नस्स हतूपनिसं होति सुखं, सुखे असति सुख-विपन्नस्स हतूपनिसो होति सम्मासमाधि, सम्मासमाधिम्हि असति सम्मासमाधिविपन्नस्स हतूपनिसं होति यथाभूतञाणदस्सनं, यथाभूतञाणदस्सने असति यथाभूतञाणदस्सन-विपन्नस्स हतूपनिसा होति निब्बिदा, निब्बिदाय असति निब्बिदाविपन्नस्स हतूपनिसो होति विरागो, विरागे असति विरागविपन्नस्स हतूपनिसं होति विमुत्तिञाणदस्सनं।

''सेय्यथापि, आवुसो, रुक्खो साखापलासविपन्नो। तस्स पपटिका पि न पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि... सारो पि न पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, आवुसो, दुस्सीलस्स सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति अविप्पटिसारो, अविप्पटिसारे असति अविप्पटिसारविपन्नस्स हतूपनिसं होति पामोज्जं ...पे० ... विमुत्तिञाणदस्सनं॥

२. ''सीलवतो, आवुसो, सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो, अविप्पटिसारे सति अविप्पटिसारसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति पामोज्जं, [N.363, R.317] पामोज्जे सति पामोज्जसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति पीति, पीतिया सति पीतिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति पस्सद्धि, पस्सद्धिया सति पस्सद्धिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति

[अनुपद में पठित पूर्वसूत्र के समान ही इस सूत्र का भी अनुवाद समझ लें ।]

५. तृतीय उपनिषत्सूत्र : : अधर्मों के रहने पर अधर्मों की ही सम्भावना

१. वहाँ आयुष्मान् आनन्द ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया ...पूर्ववत्... आयुष्मान् आनन्द भिक्षुओं को यह बोले—''आयुष्मानो! दु:शील या शीलरहित साधक को अविप्रतिसार की सम्भावना नहीं रहती ...पूर्वसूत्रवत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन भी सम्भव है॥'' ●

[B.521] सुखं, सुखे सति सुखसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति सम्मासमाधि, सम्मासमाधिम्हि सति सम्मासमाधिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति यथाभूतञाणदस्सनं, यथाभूतञाणदस्सने सति यथाभूतञाणदस्सनसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्ना होति निब्बिदा, निब्बिदाय सति निब्बिदायसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति विरागो, विरागे सति विरागसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति विमुत्तिञाणदस्सनं।

"सेय्यथापि, आवुसो, रुक्खो साखापलाससम्पन्नो। तस्स पपटिका पि पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि... सारो पि पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, आवुसो, सीलवतो सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति अविप्पटिसारो, अविप्पटिसारे सति अविप्पटिसारसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति पामोज्जं ...पे० ... विमुत्तिञाणदस्सनं" ति॥ ●

६. ब्यसनसुत्तं : १. "यो सो, भिक्खवे, भिक्खु अक्कोसको परिभासको अरियूपवादो सब्रह्मचारीनं, ठानमेतं अवकासो यं सो एकादसन्नं ब्यसनानं अञ्ञतरं ब्यसनं निगच्छेय्य। कतमेसं एकादसन्नं? अनधिगतं नाधिगच्छति, अधिगता परिहायति, सद्धम्मस्स न वोदायन्ति, सद्धम्मेसु वा अधिमानिको होति, अनभिरतो वा ब्रह्मचरियं चरति, अञ्ञतरं वा सङ्किलिट्ठं आपत्तिं आपज्जति, सिक्खं वा पच्चक्खाय हीनायावत्तति, गाळ्हं वा रोगातङ्कं फुसति, उम्मादं वा पापुणाति चित्तक्खेपं वा, सम्मूळ्हो कालं करोति, कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति—यो सो, भिक्खवे, भिक्खु अक्कोसको परिभासको अरियूपवादो सब्रह्मचारीनं, ठानमेतं अवकासो यं सो इमेसं एकादसन्नं ब्यसनानं अञ्ञतरं ब्यसनं निगच्छेय्य।

२. "यो सो, भिक्खवे, भिक्खु अक्कोसको परिभासको अरियूपवादो सब्रह्मचारीनं, [N.364, R.522] अट्ठानमेतं अनवकासो यं सो एकादसन्नं ब्यसनानं अञ्ञतरं ब्यसनं न

[अनुपद में वर्णित पूर्वसूत्र (सं० ३) के समान ही इसका भी विस्तार है।]

६. व्यसनसूत्र : : आर्य निन्दक का सङ्कटग्रस्त ही होना सम्भव

१. "भिक्षुओ! जो भिक्षु आक्रोशक (अपमानकर्त्ता) तथा परिभाषक (निन्दक) होता है तथा अपने ज्येष्ठ साथियों पर धार्मिक मिथ्या आरोप लगाता है, उसके लिये यही सम्भव है कि वह इन ग्यारह (११) सङ्कटों में से किसी एक सङ्कट से घिर जाय। किन ग्यारह में से? (१) वह अप्राप्त को प्राप्त नहीं कर पाता, (२) प्राप्त को खो बैठता है, (३) सद्धर्म को भूल जाता है, (४) सद्धर्म-पालन का अभिमान करता है, (५) अरुचियुक्त होकर साधना करता है, (६) किसी मलिन आपत्ति से युक्त हो जाता है, (७) धर्मशिक्षा का त्याग कर पुन: गृहस्थ धर्म में जा मिलता है, (८) किसी गम्भीर रोग से ग्रस्त हो जाता है, (९) पागल या विक्षिप्तचित्त हो जाता है, (१०) मुग्ध होकर मृत्यु प्राप्त करता है, या फिर (११) मरणानन्तर अपायभूत दुर्गतिमय नरक में जा गिरता है—भिक्षुओ! वैसा भिक्षु इन ग्यारह कष्टों में से किसी एक से अवश्य घिर जाय—यही सम्भव है।

२. "भिक्षुओ! जो भिक्षु दूसरों का अपमान करता है, उनकी निन्दा करता है, अपने से बड़े धर्मभाइयों पर निरर्गल आरोप लगाता है, इसके लिये यह सम्भव नहीं है वह ग्यारह सङ्कटों में से

निगच्छेय्य। कतमेसं एकादसन्नं? अनधिगतं नाधिगच्छति, अधिगता परिहायति, सद्धम्मस्स न वोदायन्ति, सद्धम्मेसु वा अधिमानिको होति, अनभिरतो वा ब्रह्मचरियं चरति, [R.318] अञ्ञतरं वा सङ्किलिट्ठं आपत्तिं आपज्जति, सिक्खं वा पच्चक्खाय हीनायावत्तति, गाळ्हं वा रोगातङ्कं फुसति, उम्मादं वा पापुणाति चित्तक्खेपं वा, सम्मूळ्हो कालं करोति, कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति—यो सो, भिक्खवे, भिक्खु अक्कोसको परिभासको अरियूपवादो सब्रह्मचारीनं, अट्ठानमेतं अनवकासो यं सो इमेसं एकादसन्नं ब्यसनानं अञ्ञतरं ब्यसनं न निगच्छेय्या'' ति॥ ●

७. सञ्ञासुत्तं : १. अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

२. ''सिया नु खो, भन्ते, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स, न तेजस्मिं तेजोसञ्ञी अस्स, न वायस्मिं वायोसञ्ञी अस्स, न आकासानञ्चायतने आकासानञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न विञ्ञाणञ्चायतने विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न आकिञ्चञ्ञायतने आकिञ्चञ्ञायतन-सञ्ञी अस्स, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न इधलोके इधलोकसञ्ञी अस्स, न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स, यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा ति?

३. ''सिया, आनन्द, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स, न तेजस्मिं तेजोसञ्ञी अस्स, न

किसी एक से न घिरे। किन ग्यारह में से? ...पूर्ववत्... दुर्गतिमय नरक में जा गिरता है—भिक्षुओ! ऐसे भिक्षु के लिये यह सम्भव ही नहीं है वह इन ग्यारह सङ्कटों में से किसी एक से भी न घिरे॥'' ●

७. संज्ञासूत्र : : संज्ञाभावना की विशेषता

१. तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सम्मुख गये ...पूर्ववत्... आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यह जिज्ञासा प्रकट की—

२. ''भन्ते! क्या किसी साधक द्वारा समाधि के किसी ऐसे प्रकार की भी साधना सम्भव है, जिसका अभ्यास करने पर उस साधक को न पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा रह जाय, न जल में जलसंज्ञा रह जाय, न तेज में तेज:संज्ञा रह जाय, न वायु में वायुसंज्ञा रह जाय, न आकाशानन्त्यायतन में आकाशानन्त्यायतनसंज्ञा रह जाय, न विज्ञानानन्त्यायतन में विज्ञानानन्त्यायतनसंज्ञा रह जाय, न नैवसंज्ञानासंज्ञायतनसंज्ञा रह जाय, न इस लोक में इहलोकसंज्ञा रह जाय, न परलोक में परलोकसंज्ञा रह जाय; जो भी यहाँ देखा सुना हो, स्मृत या विज्ञात हो, प्राप्त या खोजा गया हो, मन से चिन्तित हो—इन सभी में कोई संज्ञा न रह जाय; यद्यपि, इतने पर भी वह संज्ञावान् रहे?''

३. ''हाँ, आनन्द! साधक द्वारा समाधि के किसी ऐसे प्रकार की भी साधना सम्भव है,

[N.365] वायस्मिं वायोसञ्ञी अस्स, न अकासानञ्चायतन आकासानञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न विञ्ञाणञ्चायतने विञ्ञाणञ्चयतनसञ्ञी अस्स, न आकिञ्चञ्ञायतने आकिञ्चञ्ञा-
[B.523] यतनसञ्ञी अस्स, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञी अस्स,
[R.319] न इधलोके इधलोकसञ्ञी अस्स, न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स, यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा'' ति।

४. ''यथा कथं पन, भन्ते, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स... सञ्ञी च पन अस्सा'' ति?

५. ''इधानन्द, भिक्खु एवंसञ्ञी होति—'एतं सन्तं एतं पणीतं, यदिदं सब्ब-सङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। एवं खो, आनन्द, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स... सञ्ञी च पन अस्सा'' ति।

६. अथ खो आयस्मा आनन्दो भगवतो भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा उट्ठा-
[R.320] यासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा येनायस्मा सारिपुत्तो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मता सारिपुत्तेन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो आयस्मन्तं सारिपुत्तं एतदवोच—
[B.524] ७. ''सिया नु खो, आवुसो सारिपुत्त, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... सञ्ञी च पन अस्सा'' ति?

जिसका अभ्यास करने पर साधक को न पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा रह जाय ...पूर्ववत्... यद्यपि तब भी वह संज्ञावान् रहे।''

४. ''भन्ते! वह किस प्रकार की समाधिभावना है, जिसका अभ्यास करने पर उस साधक को न पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा रह जाय ...पूर्ववत्... यद्यपि तब भी वह संज्ञावान् रहे?''

५. ''आनन्द! यहाँ (वैसी साधना करते समय) जो साधक ऐसी संज्ञा (चिन्तन) वाला हो—'यही शान्त है, यही उत्तम है कि सब संस्कारों का शमन हो जाय, सभी मानसिक विकारों (उपाधियों) को त्याग दिया जाय; जिसको तृष्णाक्षय, वैराग्य, निरोध या निर्वाण कहते हैं।' आनन्द! ऐसे भिक्षु को वह समाधिप्रकार अभ्यस्त हो जाता है, जिसके कारण, उसकी पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा नहीं रहती ...पूर्ववत्... यद्यपि वह तब भी संज्ञावान् रहता है।'' (क)

६. तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के भाषण का अभिनन्दन, अनुमोदन कर, भगवान् को प्रणाम-प्रदक्षिणा कर आयुष्मान् सारिपुत्र के पास गये। जाकर आयुष्मान् सारिपुत्र से कुशल मङ्गल प्रश्न कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् आनन्द ने आयुष्मान् सारिपुत्र से यह पूछा—

७. ''क्या आयुष्मन् सारिपुत्र! ऐसा भी कोई समाधिप्रकार है, जिसका अभ्यास करते समय पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा न रह जाय ...पूर्ववत्... यद्यपि वह संज्ञावान् रहे?''

८. ''सिया, आवुसो आनन्द, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... सञ्ञी च पन अस्सा'' ति।

९. ''यथा कथं पनावुसो सारिपुत्त, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... सञ्ञी च पन अस्सा'' ति? [N.366]

१०. ''इध, आवुसो आनन्द, भिक्खु एवंसञ्ञी होति—'एतं सन्तं एतं पणीतं, यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। एवं खो, आवुसो आनन्द, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स... सञ्ञी च पन अस्सा'' ति।

११. ''अच्छरियं, आवुसो, अब्भुतं, आवुसो! यत्र हि नाम सत्थु चेव सावकस्स च अत्थेन अत्थो ब्यञ्जनेन ब्यञ्जनं संसन्दिस्सति समेस्सति न विग्गय्हिस्सति, यदिदं अग्गपदस्मिं! इदानाहं, आवुसो, भगवन्तं उपसङ्कमित्वा एतमत्थं अपुच्छिं। भगवा [R.321] पि मे एतेहि अक्खरेहि एतेहि पदेहि एतेहि ब्यञ्जनेहि एतमत्थं ब्याकासि, सेय्यथापि आयस्मा सारिपुत्तो। अच्छरियं, आवुसो, अब्भुतं, आवुसो, यत्र हि नाम सत्थु चेव सावकस्स च अत्थेन अत्थो ब्यञ्जनेन ब्यञ्जनं संसन्दिस्सति समेस्सति न विग्गय्हिस्सति, यदिदं अग्गपदस्मिं'' ति॥ ●

८. मनसिकारसुत्तं : १. अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

---

८. ''हाँ, आयुष्मन् आनन्द! ऐसा समाधि प्रकार भी है, जिसका ...पूर्ववत्... संज्ञावान् रहे।''

९. ''कैसे आयुष्मन् सारिपुत्र! उस भिक्षु को इस समाधिविशेष का लाभ हो सकता है, ...पूर्ववत्... वह संज्ञावान् रहे?''

१०. ''आयुष्मन् आनन्द! यहाँ (वैसी साधना करते समय) जो साधक ऐसी संज्ञावाला होता है—'यही शान्त है, यही उत्तम है कि सभी संस्कारों का शमन हो जाय, सभी मानसिक विकारों (उपाधियों) को त्याग दिया जाय; जिसको तृष्णाक्षय, वैराग्य, निरोध या निर्वाण कहते हैं।' आनन्द! ऐसे भिक्षु को वह समाधि अभ्यस्त हो जाती है, जिसके कारण, उसकी पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा नहीं रह जाती ...पूर्ववत्... यद्यपि वह तब भी संज्ञावान् रहता है।'' (ख)

११. ''आश्चर्य है, आयुष्मन्! अद्भुत है आयुष्मन्! कि जहाँ शास्ता और उसके शिष्य की व्याख्यान-पद्धति में अर्थ से अर्थ का, शब्द से शब्द का इतना साम्य है कि कहीं कुछ भी अन्तर नहीं ज्ञात होता। आयुष्मन्! अभी मैंने भगवान् के सम्मुख जाकर भी यही जिज्ञासा की थी। उनने भी मेरे इस प्रश्न का उन ही अक्षरों में, उन ही पदों में, उन ही वाक्यों में वही उत्तर दिया जो आपने दिया है। अत: मैं आश्चर्य कर रहा हूँ, इसको अद्भुत मान रहा हूँ कि शास्ता और शिष्य के व्याख्यान में अर्थ से अर्थ का, व्यञ्जन से व्यञ्जन का इतना मेल एवं साम्य है कि कहीं एक अक्षर का भी अन्तर नहीं है॥'' ●

[B.525] २. ''सिया नु खो, भन्ते, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा न चक्खुं मनसि करेय्य, न रूपं मनसि करेय्य, न सोतं मनसि करेय्य, न सद्दं मनसि करेय्य, न घानं मनसि करेय्य, न गन्धं मनसि करेय्य, न जिव्हं मनसि करेय्य, न रसं मनसि करेय्य, न कायं मनसि करेय्य, न फोट्ठब्बं मनसि करेय्य, न पथविं मनसि करेय्य, न आपं मनसि करेय्य, न तेजं मनसि करेय्य, न वायं मनसि करेय्य, न आकासानञ्चायतनं मनसि करेय्य, न विञ्ञाणञ्चायतनं मनसि करेय्य, न आकिञ्चञ्ञायतनं मनसि करेय्य, न नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतनं मनसि करेय्य, न इधलोकं मनसि करेय्य, न परलोकं मनसि करेय्य, यं पिदं [N.367] दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, तं पि न मनसि करेय्य; मनसि च पन करेय्या'' ति?

३. ''सिया, आनन्द, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा न चक्खुं मनसि [R.322] करेय्य... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, तं पि न मनसि करेय्य; मनसि च पन करेय्या'' ति।

४. ''यथा कथं पन, भन्ते, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा न चक्खुं मनसि करेय्य... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, तं पि न मनसि करेय्य; मनसि च पन करेय्या'' ति?

५. ''इधानन्द, भिक्खु एवं मनसि करोति—'एतं सन्तं एतं पणीतं, यदिदं सब्ब-सङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। एवं खो, आनन्द, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा न चक्खुं मनसि करेय्य, न रूपं

---

८. मनसिकारसूत्र : : उत्तम मनस्कार

१. तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सम्मुख गये। जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यह पिपृच्छा की—

२. ''भन्ते! क्या कोई भिक्षु ऐसे किसी समाधिप्रकार का भी लाभ कर सकता है जहाँ (वैसी साधना करते समय) न चक्षु को मन में आने दे, न रूप को; न श्रोत्र, न शब्द, न घ्राण, न गन्ध, न जिह्वा, न रस, न काय और न उसके स्प्रष्टव्य विषय को; न पृथ्वी, न जल, न तेज, न वायु को; न आकाशानन्त्यायतन को, न विज्ञानानन्त्यायतन को, न आकिञ्चन्यायतन को, न नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को मन में आने दे; न इस लोक को, न परलोक को मन में करे; जो देखा सुना है, स्मृत या विज्ञात है, प्राप्त या खोजा गया है उसको भी मन में न आने दे; न मन से विचारे हुए को मन में आने दे; पुनरपि मन में कुछ आता रहे?''

३. ''हाँ, आनन्द! कोई भिक्षु ऐसा समाधिप्रकार भी प्राप्त कर सकता है जहाँ ...पूर्ववत्... मन में कुछ आता रहे।''

४. ''भन्ते! वह कौन सा समाधिप्रकार है, जहाँ ...पूर्ववत्... मन में कुछ आता रहे?''

५. ''यहाँ, आनन्द! कोई भिक्षु अपने मन में यह चिन्तन करता है—'यही शान्त है, यही उत्तम है कि सब संस्कारों का शमन हो जाय, सभी मानसिक विकारों (उपाधियों) को त्याग दिया

मनसि करेय्य ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं [B.326] मनसा, तं पि न मनसि करेय्य; मनसि च पन करेय्या'' ति॥

९. सद्धसुत्तं : १. एकं समयं भगवा नातिके विहरति गिञ्जकावसथे। [R.323] अथ खो आयस्मा सद्धो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं सद्धं भगवा एतदवोच—

२. ''आजानीयझायितं खो, सद्ध, झाय; मा खळुङ्कझायितं। कथं च, सद्ध, खळुङ्कझायितं होति? अस्सखळुङ्को हि, सद्ध, दोणिया बद्धो 'यवसं यवसं' ति झायति। तं किस्स हेतु? न हि, सद्ध, अस्सखळुङ्कस्स दोणिया बद्धस्स एवं होति—'किं नु खो मं अज्ज अस्सदम्मसारथि कारणं कारेस्सति, किमस्साहं पटिकरोमी' ति। सो दोणिया बद्धो 'यवसं यवसं' ति झायति। एवमेव खो, सद्ध, इधेकच्चो पुरिसखळुङ्को अरञ्ञगतो पि [N.368] रुक्खमूलगतो पि सुञ्ञागारगतो पि कामरागपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति कामरागपरेतेन, उप्पन्नस्स च कामरागस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति। सो कामरागंयेव अन्तरं कत्वा झायति पज्झायति निज्झायति अवज्झायति, ब्यापादपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति... थीन-मिद्धपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति... उद्धच्चकुक्कुच्चपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति... विचि-किच्छापरियुट्ठितेन चेतसा विहरति विचिकिच्छापरेतेन, उप्पन्नाय च विचिकिच्छाय निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति। सो विचिकिच्छंयेव अन्तरं कत्वा झायति पज्झायति [R.324]

जाय; जिस (त्याग) को तृष्णाक्षय, विराग, निरोध, निर्वाण कहते हैं। आनन्द! ऐसे ही भिक्षु को वह समाधिप्रकार प्राप्त हुआ रहता है जिससे न चक्षु, न रूप मन में आये ...पूर्ववत्... पुनरपि मन में कुछ आता रहे॥''

९. श्रद्धसूत्र : : ध्यान की श्रेष्ठता

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) नातिका के गृञ्जकावसथ में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् श्रद्ध भगवान् के सम्मुख आया। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् श्रद्ध को भगवान् ने यह उपदेश किया—

''श्रद्ध! तुमको श्रेष्ठ अश्व के ध्यान के समान ही ध्यान करना चाहिये, न कि हीनजातिक अश्व के ध्यान के समान। श्रद्ध! यह हीनजाति के अश्व का ध्यान क्या होता है? श्रद्ध! यह हीनजातिक अश्व केवल 'घास', 'घास'—यही ध्यान करता है। वह स्थान पर बँधा हुआ यह कभी नहीं सोचता कि कल अश्वशिक्षक उसके साथ क्या व्यवहार करेगा, और उसका वह कैसे और क्या उत्तर देगा। वह केवल खाने के लिये घास का ही ध्यान करता है। इसी प्रकार, यहाँ कोई हीनकर्मा पुरुष अरण्य में, वृक्ष के नीचे, या शून्य गृह में जाकर भी कामरागयुक्त से ही साधना में लगता है। वह कामराग से प्रेरित उत्पन्न कामराग का निःसरण यथार्थतः नहीं जानता। वह कामराग को ही मध्य में रखकर ध्यान करता है, कभी शोकाकुल रहता है, पुनः ध्यान लगाता है, ध्यान से विरत होता है। व्यापादप्रेरित चित्त से ध्यान लगता है,..., स्त्यानमृद्धप्रेरित चित्त से ध्यान लगाता है... औद्धत्य-कौकृत्यचित्त से ध्यान लगाता है... विचिकित्साप्रेरित चित्त से ध्यान लगाता है, परन्तु उस प्रकार

निज्झायति अवज्झायति। सो पथविं पि निस्साय झायति, आपं पि निस्साय झायति, तेजं पि निस्साय झायति, वायं पि निस्साय झायति, आकासानञ्चायतनं पि निस्साय झायति, विञ्ञाणञ्चायतनं पि निस्साय झायति, आकिञ्चञ्ञायतनं पि निस्साय झायति, नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतनं पि निस्साय झायति, इधलोकं पि निस्साय झायति, परलोकं पि निस्साय झायति, यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, तं पि निस्साय झायति। एवं खो, सद्ध, पुरिसखळुङ्कझायितं होति।

[B.527] ३. ''कथं च, सद्ध, आजानीयझायितं होति? भद्रो हि, सद्ध, अस्साजानीयो दोणिया बद्धो न 'यवसं यवसं' ति झायति। भद्रो हि, सद्ध, अस्साजानीयो यथा इणं यथा बन्धं यथा जानिं यथा कलिं एवं पतोदस्स अज्झोहरणं समनुपस्सति। एवमेव खो, सद्ध, भद्रो पुरिसाजानीयो अरञ्ञगतो पि रुक्खमूलगतो पि सुञ्ञागारगतो पि न कामरागपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति न कामरागपरेतेन, उप्पन्नस्स च कामरागस्स निस्सरणं यथाभूतं पजानाति, न ब्यापादपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति... न थीनमिद्धपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति... न उद्धच्चकुक्कुच्चपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति... न विचिकिच्छापरियुट्ठितेन चेतसा विहरति न विचिकिच्छापरेतेन, उप्पन्नाय च विचिकिच्छाय निस्सरणं यथाभूतं पजानाति। सो नेव पथविं [N.369] निस्साय झायति, न आपं निस्साय झायति, न तेजं निस्साय झायति, न वायं निस्साय झायति, न आकासानञ्चायतनं निस्साय झायति, न विञ्ञाणञ्चायतनं निस्साय झायति, न आकिञ्चञ्ञायतनं निस्साय झायति, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं निस्साय झायति, [R.325] न इधलोकं निस्साय झायति, न परलोकं निस्साय झायति, यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, तं पि निस्साय न झायति; झायति च पन। एवं

उत्पन्न विचिकित्सा का नि:सरण यथार्थत: नहीं जानता। वह तो विचिकित्सा को मध्य में कर ध्यान लगाता है, ...पूर्ववत्...। वह पृथ्वी का आलम्बन कर ध्यान लगाता है, जल का आलम्बन कर ध्यान लगाता है, तेज का आलम्बन कर ध्यान लगाता है, वायु का आलम्बन कर ध्यान लगाता है, आकाशानन्त्यायतन का...विज्ञानानन्त्यायतन का... आकिञ्चन्यायतन का...नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का...इस लोक का...परलोक का आलम्बन कर ध्यान लगाता है, या जो कुछ देखा, सुना, स्मृत, विज्ञात, प्राप्त, गवेषित या मन से अनुचिन्तित है उसका आलम्बन कर ध्यान लगाता है। उस हीनकर्मा मनुष्य का ऐसा ध्यान होता है।

३. ''श्रेष्ठ जाति के अश्व का कैसा ध्यान होता है? श्रद्ध! वह श्रेष्ठ जाति का अश्व स्थान पर बँधा हुआ घास का ध्यान नहीं करता; अपितु वह वहाँ यही चिन्तन करता है—'कल यह अश्वशिक्षक मेरे साथ क्या व्यवहार करेगा, और मैं उसका क्या उत्तर दूँगा। वह स्थान पर बँधा हुआ भी केवल घास का ध्यान नहीं करता। श्रद्ध! वह उत्तम जाति का अश्व अपने ऋण, बन्धन, हानि, कष्ट एवं चाबुक के आघात से छुटकारा पाने का भी विचार करता रहता है। इसी तरह श्रद्ध! कोई उत्तम कर्मवाला पुरुष अरण्य में, किसी वृक्ष के नीचे या शून्य आवास में जाकर कामरागप्रेरित चित्त से साधना नहीं करता। वह उस कामराग का निस्सरण भलीभाँति जानता है। वह न पृथ्वी का

झायिं च पन, सद्ध, भद्रं पुरिसाजानीयं सइन्दा देवा सब्रह्मका सपजापतिका आरका व नमस्सन्ति—

'नमो ते पुरिसाजञ्ञ, नमो ते पुरिसुत्तम।
यस्स ते नाभिजानाम, यं पि निस्साय झायसी' " ति॥

४. एवं वुत्ते आयस्मा सद्धो भगवन्तं एतदवोच—"कथं झायी पन, भन्ते, भद्रो पुरिसाजानीयो सो नेव पथविं निस्साय झायति, न आपं निस्साय झायति, न तेजं निस्साय झायति, न वायं निस्साय झायति, न आकासानञ्चायतनं निस्साय झायति, न विञ्ञाणञ्चायतनं निस्साय झायति, न आकिञ्चञ्ञायतनं निस्साय झायति, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं निस्साय झायति, न इधलोकं निस्साय झायति, न परलोकं निस्साय झायति, यं पिदं दिट्ठं सुतं [B.528] मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, तं पि निस्साय न झायति; झायति च पन? कथं झायिं च पन, भन्ते, भद्रं पुरिसाजानीयं सइन्दा देवा सब्रह्मका सपजापतिका आरका व नमस्सन्ति—

'नमो ते पुरिसाजञ्ञ, नमो ते पुरिसुत्तम।
यस्स ते नाभिजानाम, यं पि निस्साय झायसी' " ति॥

५. "इध, सद्ध, भद्रस्स पुरिसाजानीयस्स पथवियं पथविसञ्ञा विभूता होति, आपस्मिं आपोसञ्ञा विभूता होति, तेजस्मिं तेजोसञ्ञा विभूता होति, वायस्मिं वायोसञ्ञा विभूता होति, आकासानञ्चायतने आकासानञ्चायतनसञ्ञा विभूता होति, विञ्ञाणञ्चायतने विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञा विभूता होति, आकिञ्चञ्ञायतने आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञा [R.326] विभूता होति, नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञा विभूता होति, इधलोके इधलोकसञ्ञा विभूता होति, परलोके परलोकसञ्ञा विभूता होति, यं पिदं दिट्ठं [N.370]

आलम्बन कर ध्यान करता है ...पूर्ववत्... न मन से अनुचिन्तित का ध्यान करता है, परन्तु फिर भी वह ध्यान करता है। ऐसे ध्यानी साधक को इन्द्रसहित, ब्रह्मासहित, प्रजापतिसहित सभी देवता भी दूर या समीप से इस प्रकार प्रणाम करते हैं—

"हे पुरुषोत्तम! हे पुरुषश्रेष्ठ! आप को प्रणाम है; क्योंकि हम नहीं जानते हैं कि आप किस के आलम्बन से ध्यान करते हैं।"

४. (भगवान् द्वारा ऐसी देशना किये जाने पर) आयुष्मान् श्रद्ध ने भगवान् से पुनः निवेदन किया—"भन्ते! कैसे वह ध्यानी उत्तमकर्म वाला पुरुष पृथ्वी का आलम्बन किये विना भी ध्यान भावना कर लेता है..पूर्ववत्... सभी देवता भी यही कहकर उस को प्रणाम करते हैं—

'हे पुरुषोत्तम ...पूर्ववत्... किसके आलम्बन से ध्यान करते हैं!'

५. "यहाँ, श्रद्ध! उस उत्तम जाति के पुरुष की पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा, जल में जलसंज्ञा, तेज में तेजःसंज्ञा ...पूर्ववत्... मन से अनुविचरित की मन से अनुविचरित संज्ञा विभूत (स्पष्ट) हो चुकी है। अतएव ऐसे ध्यानी पुरुष को ...पूर्ववत्... यह कहकर प्रणाम करते हैं—

सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, तत्रा पि सञ्ञा विभूता होति। एवं झायी खो, सद्ध भद्रो पुरिसाजानीयो नेव पथविं निस्साय झायति ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, तं पि निस्साय न झायति; झायति च पन। एवं झायिं च पन, सद्ध, भद्रं पुरिसाजानीयं सइन्दा देवा सब्रह्मका सपजापतिका आरका व नमस्सन्ति—

'नमो ते पुरिसाजञ्ञ, नमो ते पुरिसुत्तम।
यस्स ते नाभिजानाम, यं पि निस्साय झायसी' '' ति॥ ●

१०. मोरनिवापसुत्तं : १. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति मोरनिवापे परिब्बाजकारामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''भिक्खवे'' ति। ''भदन्ते'' ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''तीहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अच्चन्तनिट्ठो होति अच्चन्त-
[B.529] योगक्खेमी अच्चन्तब्रह्मचारी अच्चन्तपरियोसानो सेट्ठो देवमनुस्सानं। कतमेहि
[R.327] तीहि? असेखेन सीलक्खन्धेन, असेखेन समाधिक्खन्धेन, असेखेन पञ्ञा-
क्खन्धेन—इमेहि, खो, भिक्खवे, तीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अच्चन्तनिट्ठो होति अच्चन्तयोगक्खेमी अच्चन्तब्रह्मचारी अच्चन्तपरियोसानो सेट्ठो देवमनुस्सानं।

३. ''अपरेहि पि, भिक्खवे, तीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अच्चन्तनिट्ठो होति अच्चन्तयोगक्खेमी अच्चन्तब्रह्मचारी अच्चन्तपरियोसानो सेट्ठो देवमनुस्सानं। कतमेहि तीहि? इद्धिपाटिहारियेन, आदेसनापाटिहारियेन, अनुसासनीपाटिहारियेन—इमेहि खो, भिक्खवे, तीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अच्चन्तनिट्ठो होति, अच्चन्तयोगक्खेमी अच्चन्त-ब्रह्मचारी अच्चन्तपरियोसानो सेट्ठो देवमनुस्सानं।

'हे पुरुषोत्तम! हे पुरुषश्रेष्ठ! आपको प्रणाम हैं; क्योंकि हम भी नहीं जानते कि आप किसका आलम्बन कर ध्यानमग्न रहते हैं!'॥'' ●

१०. मयूरनिवापसूत्र : : एकादश धर्मों से युक्त पुरुष सर्वश्रेष्ठ

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) राजगृह के मयूरनिवाप नामक किसी परिव्राजकाश्रम में साधनाहेतु विराजमान थे। ...पूर्ववत्... भगवान् ने भिक्षुओं को यह उपदेश किया—

२. ''भिक्षुओ! तीन धर्मों से युक्त भिक्षु ही अत्यन्त निष्ठावान्, अत्यन्त योगक्षेमवाला, अत्यन्त धर्मसाधक एवं अत्यन्त सीमा तक पहुँचा हुआ तथा देवमनुष्यों में श्रेष्ठ कहलाता है। किन तीन धर्मों से? (१) अशैक्ष्य शीलस्कन्ध से, (२) अशैक्ष्य समाधिस्कन्ध से तथा (३) अशैक्ष्य प्रज्ञास्कन्ध से—इन तीन धर्मों से युक्त भिक्षु अत्यन्त ...पूर्ववत्... कहलाता है। (३)

३. ''पुनः, भिक्षुओ! इन तीन धर्मों (गुणों) से युक्त ...पूर्ववत्... कहलाता है। किन तीन धर्मों से? १. ऋद्धिप्रातिहार्य से, २. आदेशना (भविष्य वचन) प्रातिहार्य से एवं ३. अनुशासन (विनय) प्रातिहार्य से—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों से युक्त भिक्षु अत्यन्त निष्ठावान् ...पूर्ववत्... कहलाता है। (३)

४. ''अपरेहि पि, भिक्खवे, तीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अच्चन्तनिट्ठो होति अच्चन्तयोगक्खेमी अच्चन्तब्रह्मचारी अच्चन्तपरियोसानो सेट्ठो देवमनुस्सानं। कतमेहि तीहि? सम्मादिट्ठिया, सम्माञाणेन, सम्माविमुत्तिया—इमेहि खो, भिक्खवे, तीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अच्चन्तनिट्ठो होति अच्चन्तयोगक्खेमी अच्चन्तब्रह्मचारी [N.371] अच्चन्तपरियोसानो सेट्ठो देवमनुस्सानं।

५. ''द्वीहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अच्चन्तनिट्ठो होति अच्चन्तयोगक्खेमी अच्चन्तब्रह्मचारी अच्चन्तपरियोसानो सेट्ठो देवमनुस्सानं। कतमेहि द्वीहि? विज्जाय, चरणेन—इमेहि खो, भिक्खवे, द्वीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अच्चन्तनिट्ठो होति अच्चन्तयोगक्खेमी अच्चन्तब्रह्मचारी अच्चन्तपरियोसानो सेट्ठो देवमनुस्सानं। ब्रह्मुना पेसा, भिक्खवे, सनङ्कुमारेन गाथा भासिता—

'खत्तियो सेट्ठो जनेतस्मिं, ये गोत्तपटिसारिनो।
विज्जाचरणसम्पन्नो, सो सेट्ठो देवमानुसे' '' ति॥

''सा खो पनेसा, भिक्खवे, सनङ्कुमारेन गाथा भासिता सुभासिता, नो दुब्भासिता; अत्थसंहिता, नो अनत्थसंहिता; अनुमता मया। अहं पि, भिक्खवे, एवं वदामि—[R.328]

'खत्तियो सेट्ठो जनेतस्मिं, ये गोत्तपटिसारिनो। [B.530]
विज्जाचरणसम्पन्नो, सो सेट्ठो देवमानुसे' '' ति॥

निस्सयवग्गो पठमो॥

---

४. ''पुनः, भिक्षुओ! इन तीन धर्मों से युक्त ...पूर्ववत्... कहलाता है। किन तीन धर्मों से? (१) सम्यग्दृष्टि, (२) सम्यग्ज्ञान एवं (३) सम्यग्विमुक्ति से—भिक्षुओ! इन तीन धर्मों से युक्त भिक्षु ...पूर्ववत्... कहलाता है। (३)

५. ''पुनः, भिक्षुओ! इन दो धर्मों से युक्त ...पूर्ववत्... कहलाता है। किन दो धर्मों से? (१) विद्या एवं (२) चरण (आचरण) से—इन दो धर्मों से युक्त, भिक्षुओ! भिक्षु अत्यन्त निष्ठावान्, अत्यन्त योगक्षेम वाला, अत्यन्त धर्मसाधक एवं अत्यन्त सीमा तक पहुँचा हुआ और देव-मनुष्यों में श्रेष्ठ कहलाता है। भिक्षुओ! सनत्कुमार ब्रह्मा ने भी ऐसे भिक्षु की प्रशंसा में यह गाथा कही थी—

''गोत्र को आधार मानकर चलने वाले समाज में क्षत्रिय ही श्रेष्ठ हैं। परन्तु देवता और मनुष्यों में, वस्तुतः, वही श्रेष्ठ है, जो विद्या और आचरण से श्रेष्ठ है (फिर भले ही वह किसी भी जाति का क्यों न हो!)।

''भिक्षुओ! उन सनत्कुमार ब्रह्मा द्वारा कही हुई यह गाथा सुभाषित (उचित) ही है, दुर्भाषित (अनुचित) नहीं; सार्थक ही है, निरर्थक नहीं। मैं भी इसका समर्थन करता हूँ; क्योंकि भिक्षुओ! मेरा भी यही मानना है—

'गोत्र को आधार मानकर चलने वाले समाज में क्षत्रिय ही श्रेष्ठ है। परन्तु देवता और मनुष्यों में वस्तुतः वही श्रेष्ठ है, जो विद्या और आचरण से श्रेष्ठ है। फिर भले ही वह किसी भी जाति का क्यों न हो।'॥''

निश्रयवर्ग प्रथम सम्पन्न॥

तस्सुद्दानं

किमत्थिया चेतना तयो, उपनिसा ब्यसनेन च।
द्वे सञ्ञा मनसिकारो, सद्धो मोरनिवापकं ति॥

२. अनुस्सतिवग्गो

१. पठममहानामसुत्तं : १. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं निग्रोधारामे। तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति— ''निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती'' ति। अस्सोसि खो महानामो [N.372] सक्को—''सम्बहुला किर भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति—'निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती' '' ति।

२. अथ खो महानामो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो को महानामो सक्को भगवन्तं एतदवोच—''सुतं मेतं, भन्ते—'सम्बहुला किर भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति— निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती' ति। तेसं नो, भन्ते, नानाविहारेहि विहरतं केनस्स विहारेन विहातब्बं'' ति?

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. किमर्थीयसूत्र, २. चेतनाकरणीयसूत्र, ३. प्रथम उपनिषत्सूत्र, ४. द्वितीय उपनिषत्सूत्र, ५. तृतीय उपनिषत्सूत्र, ६. व्यसनसूत्र, ७. संज्ञासूत्र, ८. मनसिकारसूत्र, ९. श्रद्धसूत्र एवं १०. मयूरनिवापसूत्र॥

२. अनुस्मृतिवर्ग

९. प्रथम महानामसूत्र : : आराधक के एकादश धर्म

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्य प्रदेश की कपिलवस्तु नगरी के न्यग्रोधाराम में साधना हेतु विराजमान थे। उस समय बहुत से भिक्षु इस उद्देश्य से चीवरकर्म कर रहे थे—''त्रैमास्यव्रत की पूर्णता के बाद, भगवान् नया चीवर धारण कर (धर्मोपदेश हेतु) चारिका आरम्भ करेंगे।'' महानामशाक्य ने भी यह बात सुनी कि त्रैमास्यव्रत की पूर्णता के बाद, भगवान् नया चीवर धारण कर चारिका आरम्भ करेंगे।

२. तब महानाम शाक्य भगवान् के पास आया, आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे महानाम शाक्य ने भगवान् से यह निवेदन किया—

''भन्ते! मैंने सुना है कि बहुत से भिक्षु इस उद्देश्य से चीवर कर्म कर रहे हैं—'त्रैमास्यव्रत की

३. "साधु साधु, महानाम! एतं खो, महानाम, तुम्हाकं पतिरूपं कुल- [R.329] पुत्तानं, यं तुम्हे तथागतं उपसङ्कमित्वा पुच्छेय्याथ—'तेसं नो, भन्ते, नानाविहारेहि विहरतं केनस्स विहारेन विहातब्बं' " ति? सद्धो खो, महानाम, आराधको होति, नो अस्सद्धो; आरद्धविरियो आराधको होति, नो कुसीतो; उपट्ठितस्सति आराधको होति, नो [B.531] मुट्ठस्सति; समाहितो आराधको होति, नो असमाहितो; पञ्ञवा आराधको होति, नो दुप्पञ्ञो। इमेसु खो त्वं, महानाम, पञ्चसु धम्मेसु पतिट्ठाय छ धम्मे उत्तरि भावेय्यासि।

४. "इध त्वं, महानाम, तथागतं अनुस्सरेय्यासि—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको तथागतं अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति तथागतं आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्ध-कायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं वुच्चति, महानाम, अरियसावको

सम्पन्नता के बाद, भगवान् नया चीवर पहनकर चारिका आरम्भ करेंगे।' उस समय, भन्ते! हम लोगों को, जो कि विविध पद्धतियों से साधना करते हैं, किस पद्धति से साधना करनी चाहिये?"

३. "साधु, महानाम! साधु! तुम जैसे कुलपुत्रों के लिये यही उचित है कि तुम तथागत के पास आकर इस विषय में स्पष्ट आदेश प्राप्त कर लो कि उस समय तुमको किस विधि से साधना करनी चाहिये? (१) महानाम! आराधक को श्रद्धालु ही होना चाहिये, अश्रद्धालु नहीं; (२) उद्योगी ही होना चाहिये, आलसी नहीं, (३) स्मृतिमान् ही होना चाहिये, विस्मरणशील नहीं; (४) समाधिरत ही रहना चाहिये, समाधिविहीन नहीं, (५) प्रज्ञावान् ही रहना चाहिये, प्रज्ञाविहीन नहीं। महानाम! तुमको इन पाँच धर्मों में सुप्रतिष्ठित रह कर इन आगे वर्णित छह धर्मों की भावना करनी चाहिये।

४. "महानाम! यहाँ तुमको तथागत का इस प्रकार अनुस्मरण (बार-बार स्मरण) करना चाहिये—'वे भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध विद्या एवं आचरण से सम्पन्न हैं, सुगत (शोभन गतिवाले या सुवक्ता) हैं, लोकविद् एवं अलौकिक हैं, पुरुषों को सन्मार्ग पर चलाने के लिये चाबुक (धर्मदण्ड) धारी सारथि के सदृश हैं, देवमनुष्यों के शास्ता हैं, ज्ञानी हैं, भगवान् (षड्विध ऐश्वर्यसम्पन्न) हैं।' महानाम! जिस समय वह आर्यश्रावक भगवान् का अनुस्मरण करता है उस समय उसका चित्त न रागपर्युत्थित होता है, न द्वेषपर्युत्थित, न मोहपर्युत्थित; अपितु वह (चित्त) सरलतायुक्त ही रहता है। ऐसा सरलचित्त आर्यश्रावक, अर्थज्ञान, धर्मज्ञान एवं धर्मसहित प्रमोद को प्राप्त कर लेता है। उस प्रमुदित को प्रीति, और प्रीतियुक्त का काय प्रश्रब्ध हो जाता है। तब वह प्रश्रब्धकाय आर्यश्रावक सुख का अनुभव करता है और ऐसे सुखानुभव से उसका चित्त समाहित होने लगता है। महानाम! ऐसा आर्यश्रावक विषमताप्राप्त प्राणियों से समता के साथ तथा द्वेषमय

विसमगताय पजाय समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो विहरति, धम्मसोतसमापन्नो बुद्धानुस्सतिं भावेति।

[N.373] ५. ''पुन च परं त्वं, महानाम, धम्मं अनुस्सरेय्यासि—'स्वाक्खातो भगवता धम्मो सन्दिट्ठिको अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही' ति। [R.330] यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको धम्मं अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति धम्मं आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्धकायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं वुच्चति, महानाम, अरियसावको विसमगताय पजाय समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो विहरति, धम्मसोतसमापन्नो धम्मानुस्सतिं भावेति।

६. ''पुन च परं त्वं, महानाम, सङ्घं अनुस्सरेय्यासि—'सुप्पटिपन्नो भगवतो धम्मो सावकसङ्घो, उजुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, ञायप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, [B.532] सामीचिप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, यदिदं चत्तारि पुरिसयुगानि अट्ठ पुरिसपुग्गला, एस भगवतो सावकसङ्घो, आहुनेय्यो पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलि-करणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा' ति। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको सङ्घं अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति सङ्घं आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्ध-कायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं वुच्चति, महानाम, अरियसावको विसमगताय पजाय समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो विहरति, धम्म-सोतसमापन्नो सङ्घानुस्सतिं भावेति।

प्राणियों के साथ द्वेषरहित चित्त से व्यवहार करने वाला होकर धर्मस्रोत का अनुगमन करता हुआ बुद्धानुस्मृति की भावना करनेवाला कहलाता है।

५. ''पुनः, महानाम! तुमको धर्म का यों अनुस्मरण करना चाहिये—''भगवान् का धर्मोपदेश स्वाख्यात...विद्वानों द्वारा स्वयं वेदितव्य है।' महानाम! जिस समय आर्यश्रावक धर्म का अनुस्मरण करता है, उस समय ...पूर्ववत्... धर्मस्रोत का अनुगमन करता (प्रवाहपतित) हुआ वह धर्मानु-स्मृति की भावना करने वाला कहलाता है।

६. ''पुनः, महानाम! तुम सङ्घ का अनुस्मरण इस प्रकार करो—'भगवान् का श्रावकसङ्घ भलीभाँति मार्गारूढ़ है ...पूर्ववत्... लोक के लिये अद्वितीय पुण्यस्थली है।' महानाम! जिस समय

७. "पुन च परं त्वं, महानाम, अत्तनो सीलानि अनुस्सरेय्यासि अखण्डानि अच्छिद्दानि असबलानि अकम्मासानि भुजिस्सानि विञ्ञुप्पसत्थानि अपरामट्ठानि समाधि-संवत्तनिकानि। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको सीलं अनुस्सरति, नेवस्स [N.374] तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरि- [R.331] युट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति सीलं आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्ध-कायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं वुच्चति, महानाम, अरियसावको विसमगताय पजाय समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो विहरति, धम्मसोतसमापन्नो सीलानुस्सतिं भावेति।

८. "पुन च परं त्वं, महानाम, अत्तनो चागं अनुस्सरेय्यासि—'लाभा वत मे, सुलद्धं वत मे, योहं मच्छेरमलपरियुट्ठिताय पजाय विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसामि मुत्तचागो पयतपाणि वोस्सग्गरतो याचयोगो दानसंविभागरतो' ति। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको चागं अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये राग- [B.333] परियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति चागं आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्धकायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं वुच्चति, महानाम, अरियसावको विसमगताय पजाय समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो विहरति, धम्मसोतसमापन्नो चागानुस्सतिं भावेति।

आर्यश्रावक सङ्घ का अनुस्मरण करता है..पूर्ववत्... धर्मस्रोत में प्रवाहपतित होकर वह सङ्घानुस्मृति की भावना करनेवाला कहा जाता है।

७. "पुनः, महानाम! तुम अपने शील का इस प्रकार अनुस्मरण करो–'ये शील अखण्ड, अच्छिद्र, विभाजनरहित, एकरूप, स्वतन्त्र, विद्वत्प्रशंसित, अपरामृष्ट तथा समाधि की ओर बढ़ाने वाले हैं।' महानाम! जिस समय कोई आर्यश्रावक अपने शील का अनुस्मरण करता है, उस समय ...पूर्ववत्... धर्मस्रोत में प्रवाहपतित होकर शीलानुस्मृति की भावना करने वाला कहा जाता है।

८. "पुनः, महानाम! तुमको अपने त्याग का इस प्रकार अनुस्मरण करना चाहिये—'मेरे लिये यह लाभ की बात है, मैंने बहुत कुछ अच्छा प्राप्त कर लिया है कि इस मात्सर्यमलयुक्त प्रजा में मात्सर्य–मलरहित चित्तसे घर का कार्य मुक्तहस्त होकर उत्साह के साथ त्यागभावनायुक्त मन से याचकों की इच्छानुसार दान देने में लगा हुआ हूँ।' महानाम! जिस समय आर्यश्रावक अपने त्याग का अनुस्मरण करता है उस समय ...पूर्ववत्... धर्मस्रोत में प्रवाहपतित होकर वह त्यागानुस्मृति की भावना करनेवाला कहा जाता है।

९. ''पुन च परं त्वं, महानाम, देवता अनुस्सरेय्यासि—'सन्ति देवा चातुम्महाराजिका, सन्ति देवा तावतिंसा, सन्ति देवा यामा, सन्ति देवा तुसिता, सन्ति देवा निम्मानरतिनो, सन्ति देवा परनिम्मितवसवत्तिनो, सन्ति देवा ब्रह्मकायिका, सन्ति देवा ततुत्तरि। यथारूपाय सद्धाय समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थूपपन्ना, मय्हं पि [R.332] तथारूपा सद्धा संविज्जति। यथारूपेन सीलेन समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थूपपन्ना, मय्हं पि तथारूपं सीलं संविज्जति। यथारूपेन सुतेन समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थूपपन्ना, मय्हं पि तथारूपं सुतं संविज्जति। यथारूपेन चागेन समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थूपपन्ना, मय्हं पि तथारूपो चागो संविज्जति। यथारूपाय पञ्ञाय समन्ना- [N.375] गता ता देवता इतो चुता तत्थूपपन्ना, मय्हं पि तथारूपा पञ्ञा संविज्जती' ति। यस्मिं, महानाम समये अरियसावको अत्तनो च तासं च देवतानं सद्धं च सीलं च सुतं च चागं च पञ्ञं च अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति देवता आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्धकायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं वुच्चति, महानाम, अरियसावको विसमगताय पजाय समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो [B.534] विहरति, धम्मसोतसमापन्नो देवतानुस्सतिं भावेती'' ति॥ ●

२. दुतियमहानामसुत्तं : १. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं निग्रोधारामे। तेन खो पन समयेन महानामो सक्को गिलाना वुट्ठितो होति अचिरवुट्ठितो गेलञ्ञा। तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति—''निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती'' ति। अस्सोसि खो महानामो सक्को—

---

९. ''पुनः, महानाम! तुमको इन देवताओं का अनुस्मरण इस प्रकार करना चाहिये—'चातुर्महाराजिक देव हैं, त्रायस्त्रिंश देव हैं, याम देव हैं, तुषित देव हैं, निर्माणरतिदेव हैं, परनिर्मितवशवर्ती देव हैं, ब्रह्मकायिक देव हैं, अपितु इनसे ऊपर भी कुछ देव हैं। जैसी श्रद्धा से युक्त होकर वे देवता यहाँ से च्युत होकर उस लोक में उत्पन्न हुए हैं, मुझमें भी वैसी श्रद्धा है; जैसे शील से... जैसे त्याग से...जैसे धर्मश्रवण से युक्त होकर वे देवता यहाँ से च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए हैं वैसा धर्मश्रवण मुझमें भी है; जैसी प्रज्ञा से युक्त होकर वे यहाँ से च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए हैं वैसी प्रज्ञा मुझमें भी है।' जिस समय, महानाम! आर्यश्रावक अपने शील, श्रद्धा, त्याग, धर्मश्रवण एवं प्रज्ञा का अनुस्मरण करता है, उस समय ...पूर्ववत्... धर्मस्रोत में प्रवाहपतित होकर वह देवतानुस्मृति की भावना करनेवाला कहा जाता है॥'' ●

२. द्वितीय महानामसूत्र : : आराधक के एकादश धर्म

१. एक समय भगवान् बुद्ध शाक्य प्रदेश की कपिलवस्तु नगरी के न्यग्रोधाराम में साधना हेतु

''सम्बहुला किर भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति—'निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती' '' ति।

२. अथ खो महानामो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो महानामो सक्को भगवन्तं [R.333] एतदवोच—''सुतं मेतं, भन्ते—'सम्बहुला किर भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति—निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती' ति। तेसं नो, भन्ते, नानाविहारेहि विहरतं केनस्स विहारेन विहातब्बं'' ति?

३. ''साधु साधु, महानाम! एतं खो, महानाम, तुम्हाकं पतिरूपं कुलपुत्तानं, यं तुम्हे तथागतं उपसङ्कमित्वा पुच्छेय्याथ—'तेसं नो, भन्ते, नानाविहारेहि विहरतं केनस्स [N.376] विहारेन विहातब्बं' ति? सद्धो खो, महानाम, आराधको होति, नो अस्सद्धो; आरद्धविरियो आराधको होति, नो कुसीतो; उपट्ठितस्सति आराधको होति, नो मुट्ठस्सति; समाहितो आराधको होति, नो असमाहितो; पञ्ञवा आराधको होति, नो दुप्पञ्ञो। इमेसु खो त्वं, महानाम, पञ्चसु धम्मेसु पतिट्ठाय छ धम्मे उत्तरि भावेय्यासि।

४. ''इध त्वं, महानाम, तथागतं अनुस्सरेय्यासि—'इति पि सो भगवा ...पे०... सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको तथागतं अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति तथागतं आरब्भ। [B.535] उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्धकायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। इमं खो त्वं, महानाम, बुद्धानुस्सतिं गच्छन्तो पि भावेय्यासि, ठितो पि भावेय्यासि, निसिन्नो पि भावेय्यासि, सयानो पि भावेय्यासि, कम्मन्तं अधिट्ठहन्तो पि भावेय्यासि, पुत्तसम्बाधसयनं अज्झावसन्तो पि भावेय्यासि।

५. ''पुन च परं त्वं, महानाम, धम्मं अनुस्सरेय्यासि ...पे०... सङ्घं [R.334] अनुस्सरेय्यासि ...पे०... अत्तनो सीलानि अनुस्सरेय्यासि ...पे०... अत्तनो चागं

विराजमान थे। उस समय, किसी रोग से पीड़ित महानाम शावय, कुछ ही समय पूर्व रोग से मुक्त होकर स्वस्थ हुआ था। उस समय महानाम शाक्य ने सुना— ...पूर्ववत्...।

२. तब महानाम शाक्य भगवान् के पास गया ...पूर्ववत्...।

३. ''साधु, महानाम! साधु! यह तुम जैसे कुलपुत्रों के लिये उचित ही है कि ...पूर्ववत्...।

४. ''यहाँ तुम, महानाम! तथागत का इस प्रकार अनुस्मरण करो—...पूर्ववत्...।

५. ''पुनः, महानाम, तुम धर्म का इस प्रकार अनुस्मरण करो ...पूर्ववत्...। इस प्रकार, महानाम! तुमको इस देवतानुस्मृति की चलते समय भी...खड़े हुए भी, बैठे हुए भी, लेटे हुए भी,

अनुस्सरेय्यासि ...पे०... देवता अनुस्सरेय्यासि—'सन्ति देवा चातुम्महाराजिका ...पे०... सन्ति देवा ततुत्तरि। यथारूपाय सद्धाय समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थूपपन्ना, मय्हं पि तथारूपा सद्धा संविज्जति। यथारूपेन सीलेन... सुतेन... चागेन... पञ्ञाय समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थूपपन्ना, मय्हं पि तथारूपा पञ्ञा संविज्जती' ति। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको अत्तनो च तासं च देवतानं सद्धं च सीलं च सुतं च चागं च पञ्ञं च अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति देवता आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति [N.377] धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्धकायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। इमं खो त्वं, महानाम, देवतानुस्सतिं गच्छन्तो पि भावेय्यासि, ठितो पि भावेय्यासि, निसिन्नो पि भावेय्यासि, सयानो पि भावेय्यासि, कम्मन्तं अधिट्ठहन्तो पि भावेय्यासि, पुत्तसम्बाधसयनं अज्झावसन्तो पि भावेय्यासी'' ति॥ ●

३. **नन्दियसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं निग्रोधारामे। तेन खो पन समयेन भगवा सावत्थियं वस्सावासं उपगन्तुकामो होति। अस्सोसि खो नन्दियो सक्को—''भगवा किर सावत्थियं वस्सावासं उपगन्तुकामो'' ति। [B.336] अथ खो नन्दियस्स सक्कस्स एतदहोसि—''यन्नूनाहं पि सावत्थियं वस्सावासं [R.335] उपगच्छेय्यं। तत्थ कम्मन्तं चेव अधिट्ठहिस्सामि, भगवन्तं च लच्छामि कालेन कालं दस्सनाया'' ति।

२. अथ खो भगवा सावत्थियं वस्सावासं उपगच्छि। नन्दियो पि खो सक्को सावत्थियं वस्सावासं उपगच्छि। तत्थ कम्मन्तं चेव अधिट्ठासि, भगवन्तं च लभि कालेन

किसी काम को करते हुए भी, पुत्र पौत्रों की भीड़ में फँसे रहते हुए भी, भावना करते रहना चाहिये॥'' ●

३. नन्दियसूत्र : : एकादश धर्मों का पालन

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्य प्रदेश की कपिलवस्तु के न्यग्रोधाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय भगवान् श्रावस्ती में वर्षावास करना चाहते थे। नन्दिय शाक्य ने भी जब यह सुना कि भगवान् श्रावस्ती में वर्षावास करना चाहते हैं, तब उसको यह विचार आया—''क्यों न मैं भी श्रावस्ती में (भगवान् के वर्षावास के समय) चलूँ, जिसके फलस्वरूप वहाँ मैं अपने गृहस्थ के अन्य कार्य भी करता रहूँगा और साथ ही साथ मुझे, समय समय पर, भगवान् के दर्शन भी होते रहेंगे।''

२. तब भगवान् श्रावस्ती में वर्षावासहेतु पधारे। नन्दियशाक्य भी उसी समय श्रावस्ती में वर्षावासहेतु चला आया। वहाँ वह अपने वैयक्तिक कार्य भी और साथ ही समय-समय पर भगवान्

कालं दस्सनाय। तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति— ''निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती'' ति। अस्सोसि खो नन्दियो सक्को—'सम्बहुला किर भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति—''निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती' '' ति।

३. अथ खो नन्दियो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो नन्दियो सक्को भगवन्तं एतदवोच— ''सुतं मेतं, भन्ते—'सम्बहुला किर भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति—''निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती' ति। तेसं नो, भन्ते, नानाविहारेहि विहरतं केनस्स विहारेन विहातब्बं'' ति?

४. ''साधु, साधु नन्दिय! एतं खो, नन्दिय, तुम्हाकं पतिरूपं कुलपुत्तानं, यं तुम्हे तथागतं उपसङ्कमित्वा पुच्छेय्याथ—'तेसं नो, भन्ते, नानाविहारेहि विहरतं केनस्स [N.378] विहारेन विहातब्बं' ति? सद्धो खो, नन्दिय, आराधको होति, नो अस्सद्धो; सीलवा आराधको होति, नो दुस्सीलो; आरद्धविरियो आराधको होति, नो कुसीतो; उपट्ठितस्सति आराधको होति, नो मुट्ठस्सति; समाहितो आराधको होति, नो असमाहितो; पञ्ञवा आराधको होति, नो दुप्पञ्ञो। इमेसु खो ते, नन्दिय, छसु धम्मेसु पतिट्ठाय पञ्चसु धम्मेसु अज्झत्तं सति उपट्ठापेतब्बा।

५. ''इध त्वं, नन्दिय, तथागतं अनुस्सरेय्यासि—'इति पि सो भगवा अरहं [R.336] सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि, सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। इति खो ते, नन्दिय, तथागतं आरब्भ अज्झत्तं सति [B.537] उपट्ठापेतब्बा।

के दर्शन भी करता रहा। उस समय (कभी) बहुत से भिक्षु इस उद्देश्य से चीवरकर्म कर रहे थे— 'इस त्रैमास्य व्रत की सम्पन्नता के बाद भगवान् नये चीवर धारण कर चारिका हेतु आगे पधारेंगे।' नन्दिय शाक्य ने भी यह बात सुनी।

३. तब नन्दिय शाक्य भगवान् के पास आया, आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया।...यह जिज्ञासा प्रकट की—''भन्ते! मैंने सुना है—'बहुत से भिक्षु इस उद्देश्य से चीवरकर्म में संलग्न हैं कि भगवान् इस त्रैमास्य व्रत की पूर्णता के बाद नया चीवर धारण कर चारिका हेतु आगे पधारेंगे। उस समय हम लोगों को किस साधनापद्धति का आश्रयण कर साधना करनी चाहिये?''

४. ''साधु, नन्दिय! साधु! तुम जैसे योग्य कुलपुत्रों द्वारा ऐसा पूछा जाना उपयुक्त ही है— ... पूर्ववत्...। नन्दिय! आराधक को श्रद्धालु होना चाहिये...शीलवान् होना चाहिये...साधना में उद्योगी होना चाहिये...स्मृतिमान् होना चाहिये...समाधिनिष्ठ रहना चाहिये...प्रज्ञावान् होना चाहिये, दुष्प्रज्ञ नहीं। नन्दिय! इन छह धर्मों में प्रतिष्ठित रहकर आराधक को इन पाँच धर्मों में भी अपनी स्मृति बनाये रखना चाहिये। (१-६)

६. "पुन च परं त्वं, नन्दिय, धम्मं अनुस्सरेय्यासि—'स्वाक्खातो भगवता धम्मो सन्दिट्ठिको अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही' ति। इति खो ते, नन्दिय, धम्मं आरब्भ अज्झत्तं सति उपट्ठापेतब्बा।

७. "पुन च परं त्वं, नन्दिय, कल्याणमित्ते अनुस्सरेय्यासि—'लाभा वत मे, सुलद्धं वत मे, यस्स मे कल्याणमित्ता अनुकम्पका अत्थकामा ओवादका अनुसासका' ति। इति खो ते, नन्दिय, कल्याणमित्ते आरब्भ अज्झत्तं सति उपट्ठापेतब्बा।

८. "पुन च परं त्वं, नन्दिय, अत्तनो चागं अनुस्सरेय्यासि—'लाभा वत मे, सुलद्धं वत मे, योहं मच्छेरमलपरियुट्ठिताय पजाय विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसामि मुत्तचागो पयतपाणि वोस्सग्गरतो याचयोगो दानसंविभागरतो' ति। इति खो ते, नन्दिय, चागं आरब्भ अज्झत्तं सति उपट्ठापेतब्बा।

९. "पुन च परं त्वं, नन्दिय, देवता अनुस्सरेय्यासि—'या देवता अतिक्कम्मेव [N.379] कबळीकाराहारभक्खानं देवतानं सहब्यतं अञ्ञतरं मनोमयं कायं उपपन्ना, ता करणीयं अत्तनो न समनुपस्सन्ति कतस्स वा पतिचयं। सेय्यथापि, नन्दिय, भिक्खु असमय-विमुत्तो करणीयं अत्तनो न समनुपस्सति कतस्स वा पतिचयं; एवमेव खो, नन्दिय, या ता देवता अतिक्कम्मेव कबळीकाराहारभक्खानं देवतानं सहब्यतं अञ्ञतरं मनोमयं कायं [R.337] उपपन्ना, ता करणीयं अत्तनो न समनुपस्सन्ति कतस्स वा पतिचयं। इति खो ते, नन्दिय, देवता आरब्भ अज्झत्तं सति उपट्ठापेतब्बा।

१०. "इमेहि खो, नन्दिय, एकादसहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको पजहतेव पापके अकुसले धम्मे, न उपादियति। सेय्यथापि, नन्दिय, कुम्भो निकुज्जो वमतेव उदकं, नो

---

५. "यहाँ, नन्दिय! तुमको तथागत का अनुस्मरण करना चाहिये— ...पूर्ववत्...। (७)

६. "पुनः, नन्दिय! तुमको धर्म का अनुस्मरण करना चाहिये— ...पूर्ववत्...। (८)

७. "पुनः, नन्दिय! तुमको कल्याणमित्रों (सङ्घ) का अनुस्मरण करना चाहिये... पूर्ववत्...। (९)

८. "पुनः, नन्दिय! तुमको अपने त्याग का अनुस्मरण करना चाहिये ...पूर्ववत्...। (१०)

९. "पुनः, नन्दिय! तुमको उन देवताओं का अनुस्मरण करना चाहिये जो ग्रास-ग्रास कर खाने वाले देवताओं के साथ का अतिक्रमण कर किसी ऐसे मनोमय देवता की काया में उत्पन्न हो, जो न अपना कोई नवीन कार्य देखते हैं, न किये हुए का संग्रह ही करते हैं। नन्दिय! जैसे कोई अस्वाधीन भिक्षु न अपना कर्त्तव्य सोचता है और न अपने किये का संग्रह ही करता है; वैसे ही वे देवता जो ग्रास...न किये हुए का संग्रह ही करते हैं। इस प्रकार, नन्दिय! इन देवताओं के विषय में अपनी आध्यात्मिक स्मृति बनाये रखनी चाहिये। (११)

१०. "नन्दिय! इस प्रकार इन एकादश धर्मों से युक्त आर्यश्रावक अपने पापमय अकुशल धर्मों का त्याग ही करता है, उनका ग्रहण नहीं करता। जैसे, नन्दिय! उलटे (ओंधे) घड़े से जल

वन्तं पच्चावमति; सेय्यथापि वा पन, नन्दिय, सुक्खे तिणदाये अग्गि मुत्तो डहञ्जेव गच्छति, नो दड्ढं पच्चुदावत्तति; एवमेव खो, नन्दिय, इमेहि एकादसहि धम्मेहि समन्नागतो [B.538] अरियसावको पजहतेव पापके अकुसले धम्मे, न उपादियती'' ति। ●

४. सुभूतिसुत्तं : १. अथ खो आयस्मा सुभूति सद्धेन भिक्खुना सद्धिं येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसीन्नं खो आयस्मन्तं सुभूतिं भगवा एतदवोच—

२. ''को नामायं, सुभूति, भिक्खू'' ति?

''सद्धो नामायं, भन्ते, भिक्खु, सुदत्तस्स उपासकस्स पुत्तो, सद्धा अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो'' ति।

''कच्चि पनायं, सुभूति, सद्धो भिक्खु सुदत्तस्स उपासकस्स पुत्तो सद्धा अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो सन्दिस्सति सद्धापदानेसू'' ति?

''एतस्स, भगवा, कालो; एतस्स, सुगत, कालो, यं भगवा सद्धस्स सद्धापदानानि भासेय्य। इदानाहं जानिस्सामि यदि वा अयं भिक्खु सन्दिस्सति सद्धापदानेसु यदि वा नो'' ति।

''तेन हि, सुभूति, सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी'' ति। [N.380] ''एवं, भन्ते'' ति खो आयस्मा सुभूति भगवतो पच्चस्सोसि। भगवा एतदवोच—

३. ''इध, सुभूति, भिक्खु सीलवा होति, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति [R.338] आचारगोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु। यं

गिरता ही है, उसमें संगृहीत नहीं होता; या जैसे शुष्क तृणराशि में एक ओर से अग्नि लगा दी जाय तो वह तृणराशि जलती ही जायगी, बुझेगी नहीं; उसी प्रकार, नन्दिय! इन एकादश (ग्यारह) धर्मों से युक्त आर्यश्रावक पापमय धर्मों से मुक्त ही होता जायगा, उनका संग्रह नहीं करेगा॥'' ●

४. सुभूतिसूत्र : : एकादश धर्मयुक्त भिक्षु का जीवन

१. तब आयुष्मान् सुभूति श्रद्ध भिक्षु के भगवान् के दर्शनार्थ आये। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् सुभूति से भगवान् ने पूछा—

२. ''सुभूति! इस भिक्षु का क्या नाम है?''

''भन्ते! इसका नाम है श्रद्ध! यह सुदत्त उपासक का पुत्र श्रद्ध भिक्षु है। यह गृहत्याग कर प्रव्रजित हुआ था।

''क्या सुभूति! यह सुदत्त उपासक का पुत्र श्रद्ध गृहत्याग कर प्रव्रजित होकर अपने जीवन में श्रद्धा के लक्षण एकत्र किये हुए है?''

''भन्ते! यह उचित अवसर है कि आप श्रद्धा के लक्षणों की देशना करें, जिससे मैं जान सकूँ कि इसमें वे श्रद्धा के कितने लक्षण दिखायी देते हैं, या कितने नहीं दिखायी देते।''

''तो, सुभूति! सुनो! मैं तुमको श्रद्धा के लक्षण समझाता हूँ। इनको सुनकर मन में बैठा लो। बताता हूँ।'' ...पूर्ववत्...। भगवान् बोले—

३. ''यहाँ, सुभूति! कोई भिक्षु शीलवान् होता है, प्रातिमोक्षनियमों का पालन करता हुआ

पि, सुभूति, भिक्खु सीलवा होति ...पे०... समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु, इदं पि, सुभूति, सद्धस्स सद्धापदानं होति।

४. "पुन च परं, सुभूति, भिक्खु बहुस्सुतो होति सुतधरो सुतसन्निचयो; ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं [B.539] ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा। यं पि, सुभूति, भिक्खु बहुस्सुतो होति ...पे०... दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा, इदं पि, सुभूति, सद्धस्स सद्धापदानं होति।

५. "पुन च परं, सुभूति, भिक्खु कल्याणमित्तो होति कल्याणसहायो कल्याण-सम्पवङ्को। यं पि, सुभूति, भिक्खु कल्याणमित्तो होति कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को, इदं पि, सुभूति, सद्धस्स सद्धापदानं होति।

६. "पुन च परं, सुभूति, भिक्खु सुवचो होति सोवचस्सकरणेहि धम्मेहि समन्ना-गतो खमो पदक्खिणग्गाही अनुसासनिं। यं पि, सुभूति, भिक्खु, सुवचो होति सोवचस्स-करणेहि धम्मेहि समन्नागतो खमो पदक्खिणग्गाही अनुसासनिं, इदं पि, सुभूति, सद्धस्स सद्धापदानं होति।

७. "पुन च परं, सुभूति, भिक्खु यानि तानि सब्रह्मचारीनं उच्चावचानि किङ्करणी-यानि तत्र दक्खो होति अनलसो तत्रुपायाय वीमंसाय समन्नागतो अलं कातुं अलं संविधातुं। यं पि, सुभूति, भिक्खु यानि तानि सब्रह्मचारीनं उच्चावचानि किङ्करणीयानि तत्र दक्खो होति अनलसो तत्रुपायाय वीमंसाय समन्नागतो अलं कातुं अलं संविधतुं, इदं पि, सुभूति, सद्धस्स सद्धापदानं होति।

अपने को संयत रखता है। आचार-व्यवहार से सम्पन्न रहता है। छोटे से छोटे निन्द्य कर्मों के आचरण में भी भय मानता है। तथा भगवदुपदिष्ट शिक्षापदों को ग्रहण कर उनका सम्यक् अभ्यास करता है। इस शील का आचरण भी, सुभूति! उसके श्रद्धामय जीवन का एक लक्षण है। (१)

४. 'पुनः, सुभूति! कोई भिक्षु बहुश्रुत होता है, श्रुतधर (सुने हुए को धारण करने वाला) एवं श्रुतसन्निचय (सुने हुए का संग्रह करने वाला) होता है। जो आदि, अन्त एवं मध्य-सर्वत्र ही कल्याणकारी धर्म अर्थ एवं व्यञ्जन से परिपूर्ण एवं परिपूर्ण धर्मसाधना के बोधक हैं—ऐसे धर्मों का वह बहुश्रुत, धारण करने वाला, परिचित तथा उनके पालन में पूर्ण सावधानी रखनेवाला है। यह बहुश्रुत होना भी, सुभूति! श्रद्धामय जीवन का एक लक्षण है। (२)

५. "पुनः, सुभूति! उस भिक्षु के कल्याणकारक मित्र, कल्याणकारी सहायक एवं कल्याण-कारी साथी होते हैं। भिक्षु! यह कल्याणमित्रता भी उसके श्रद्धामय जीवन का एक लक्षण है। (३)

६. पुनः, सुभूति! कोई भिक्षु नम्र होता है, विनययुक्त धर्मों से सम्पन्न होता है, तथा शास्ता एवं स्थविरों द्वारा विहित अनुशासन को मानने में समर्थ होता है। ऐसा विनय भी, सुभूति! श्रद्धालु की श्रद्धा का एक लक्षण है। (४)

७. "पुनः, सुभूति! वह भिक्षु अपने साथियों के द्वारा बताये गये छोटे-बड़े कार्यों को पूर्ण

८. "पुन च परं, सुभूति, भिक्खु धम्मकामो होति पियसमुदाहारो अभिधम्मे [R.339] अभिविनये उळारपामोज्जो। यं पि, सुभूति, भिक्खु धम्मकामो होति पियसमुदाहारो [N.381] अभिधम्मे अभिविनये उळारपमोज्जो, इदं पि, सुभूति, सद्धस्स सद्धापदानं होति।

९. "पुन च परं, सुभूति, भिक्खु आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु। यं पि, सुभूति, भिक्खु आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु, इदं पि, सुभूति, सद्धस्स सद्धापदानं होति।

१०. "पुन च परं, सुभूति, भिक्खु चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुख-विहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। यं पि,सुभूति, भिक्खु [B.540] चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी अकसिरलाभी, इदं पि, सुभूति, सद्धस्स सद्धापदानं होति।

११. "पुन च परं, सुभूति, भिक्खु अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो तिस्सो पि जातियो चतस्सो पि जातियो पञ्च पि जातियो दस पि जातियो वीसं पि जातियो तिंसं पि जातियो चत्तारीसं पि जातियो पञ्ञासं पि जातियो जातिसतं पि जातिसहस्सं पि जातिसतसहस्सं पि अनेके पि संवट्टकप्पे अनेके पि विवट्टकप्पे अनेके पि संवट्टविवट्टकप्पे—'अमुत्रासिं एवंनामो एवंगोत्तो एवंवण्णो एवमाहारो एवंसुखदुक्खप्पटिसंवेदी, सो ततो चुतो इधूपपन्नो' ति। इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति। यं पि, सुभूति, भिक्खु अनेकविहितं पुब्बेनिवासं [R.340] अनुस्सरति ...इदं पि, सुभूति, सद्धस्स सद्धापदानं होति।

करने में कुशल होता है, उत्साही रहता है, उनके उचित समाधान में आलस्य नहीं प्रकट करता। यह उत्साहसम्पन्न रहना भी, सुभूति! उसके श्रद्धामय जीवन का एक लक्षण है। (५)

८. "पुनः, सुभूति! वह भिक्षु धर्मसाधना या धर्मश्रवण का सतत इच्छुक रहता है, अभिधर्म एवं विनय के प्रति उदार एवं प्रमोदयुक्त रहता है। इस प्रकार का कार्य भी उसके श्रद्धामय जीवन का एक लक्षण है। (६)

९. "पुनः, सुभूति! वह भिक्षु अपने अकुशल धर्मों के प्रहाण में सतत उद्योगरत रहता है। वह कुशल धर्मों की प्राप्ति में उत्साहपूर्वक अपनी समस्त शक्ति लगा देता है। उस भिक्षु का, सुभूति! इस प्रकार उद्योगगरत रहना भी उसके श्रद्धामय जीवन का एक लक्षण है। (७)

१०. "पुनः, सुभूति! वह भिक्षु इस जीवन को सुखमय बनाने वाले आध्यात्मिक चारों ध्यानों को, विना कठिनाई से प्राप्त करने वाला होता है, पूर्णलाभी होता है। इन ध्यानों का ऐसा लाभ भी उसके श्रद्धालु जीवन का एक लक्षण होता है। (८)

११. "पुनः, सुभूति! वह भिक्षु अपने अनेक पूर्वजन्मों का स्मरण करने वाला होता है,

१२. "पुन च परं, सुभूति, भिक्खु दिब्बेन चक्खना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सति चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति—'इमे वत भोन्तो सत्ता कायदुच्चरितेन समन्नागता वचीदुच्चरितेन समन्नागता [N.382] मनोदुच्चरितेन समन्नागता अरियानं उपवादका मिच्छादिट्ठिका मिच्छादिट्ठिकम्म-समादाना, ते कायरस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपन्ना' ति। इति दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सति चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति। यं पि, सुभूति, भिक्खु दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति, इदं पि, सुभूति, सद्धस्स सद्धापदानं होति।

[B.541] १३. "पुन च परं, सुभूति, भिक्खु आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। यं पि, सुभूति, भिक्खु आसवानं खया ...पे० ... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति, इदं पि, सुभूति, सद्धस्स सद्धापदानं होती" ति।

१४. एवं वुत्ते आयस्मा सुभूति भगवन्तं एतदवोच—"यानिमानि, भन्ते, भगवता सद्धस्स सद्धापदानानि भासितानि, संविज्जन्ति तानि इमस्स भिक्खुनो, अयं च भिक्खु एतेसु सन्दिस्सति।

"अयं, भन्ते, भिक्खु सीलवा होति, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति आचार-[R.341] गोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु।

"अयं, भन्ते, भिक्खु बहुस्सुतो होति सुतधरो सुतसन्निचयो; ये ते धम्मा आदि-कल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं

जैसे—एक जन्म, दो जन्म ...पूर्ववत्...। यह पूर्वजन्म स्मरण की, सुभूति! उस भिक्षु के श्रद्धालु जीवन का एक लक्षण होता है। (९)

१२. "पुनः, सुभूति! कोई भिक्षु मानव दुर्लभ एवं विशुद्ध दिव्य चक्षु से इस लोक में जन्म लेते या नष्ट (मृत) होते हुए प्राणियों को देखने का सामर्थ्य रखता है ...पूर्ववत्...। सुभूति! इस प्रकार इन प्राणियों का लोक में इस प्रकार आना-जाना देखना भी उसके श्रद्धालु जीवन का एक लक्षण है। (१०)

१३. "पुनः, सुभूति! वह भिक्षु आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जीवन में जानकर, साक्षात् कर प्राप्त कर, साधना करता है। सुभूति! यह आश्रवों का क्षय भी उसके श्रद्धालु जीवन का एक लक्षण है॥" (११)

१४. (भगवान् द्वारा ऐसा उपदेश किये जाने पर) आयुष्मान् सुभूति ने भगवान् से यह निवेदन किया—"भन्ते! आपने इन जितने भी श्रद्धालक्षणों का उपदेश किया है, ये सभी लक्षण इस भिक्षु में है। यह भिक्षु इन लक्षणों की साधना में पूर्ण रुचि रखता है।

"भन्ते! यह भिक्षु शीलवान् है ...पूर्ववत्...।

"भन्ते! यह भिक्षु बहुश्रुत है ...पूर्ववत्...।

ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा।

"अयं, भन्ते, भिक्खु कल्याणमित्तो होति कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को।

"अयं भन्ते, भिक्खु सुवचो होति ...पे०... अनुसासनिं।

"अयं, भन्ते, भिक्खु यानि तानि सब्रह्मचारीनं उच्चावचानि किङ्करणीयानि तत्थ दक्खो होति अनलसो तत्रुपायाय वीमंसाय समन्नागतो अलं कातुं अलं संविधातुं। [N.383]

"अयं, भन्ते, भिक्खु धम्मकामो होति पियसमुदाहारो अभिधम्मे अभिविनये उळारपामोज्जो।

"अयं, भन्ते, भिक्खु आरद्धविरियो विहरति ...पे०... थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु।

"अयं, भन्ते, भिक्खु चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी।

"अयं, भन्ते, भिक्खु अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—[B.542] एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति।

"अयं, भन्ते, भिक्खु दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति।

"अयं, भन्ते, भिक्खु आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। यानिमानि, भन्ते, भगवता सद्धस्स सद्धापदानानि भासितानि, संविज्जन्ति तानि इमस्स भिक्खुनो, अयं च भिक्खु एतेसु सन्दिस्सती" ति।

"भन्ते! यह भिक्षु कल्याणमित्र है ...पूर्ववत्...।

"भन्ते! यह भिक्षु नम्र है, विनयी है ...पूर्ववत्...।

"भन्ते! यह भिक्षु साथियों के छोटे-बड़े कार्यों को पूर्ण करने में कुशल है ...पूर्ववत्...।

"भन्ते! यह भिक्षु धर्मसाधना एवं धर्मश्रवण में निरन्तर इच्छा रखता है ...पूर्ववत्...।

"भन्ते! यह भिक्षु अपने अकुशल धर्मों के प्रहाण में सतत उद्योगरत रहता है ...पूर्ववत्...।

"भन्ते! यह भिक्षु इसी जन्म में सुखप्रदाता चारों ध्यानों का लाभी है ...पूर्ववत्...।

"भन्ते! यह भिक्षु अपने अनेक पूर्वजन्मों का स्मरण रखने वाला है. ...पूर्ववत्...।

"भन्ते! यह मानवदुर्लभ दिव्य चक्षु से दूसरे सत्त्वों के जन्म-मरण को भी देखता है ...पूर्ववत्...।

"भन्ते! यह भिक्षु आश्रवों के क्षय से...साक्षात् कर साधना करता है ...पूर्ववत्...।

"इस प्रकार, भन्ते! आपने जितने भी श्रद्धालक्षणों का प्रवचन किया है, वे सभी लक्षण इस भिक्षु में सङ्घटित हैं तथा यह इनमें रुचि रखता है।"

१५. "साधु, साधु, सुभूति! तेन हि त्वं, सुभूति, इमिना च सद्धेन भिक्खुना सद्धिं विहरेय्यासि। यदा च त्वं, सुभूति, आकङ्खेय्यासि तथागतं दस्सनाय, इमिना सद्धेन भिक्खुना सद्धिं उपसङ्कमेय्यासि तथागतं दस्सनाया" ति॥ ●

[R.342] **५. मेत्तासुत्तं** : १. "मेत्ताय, भिक्खवे, चेतोविमुत्तिया आसेविताय भाविताय बहुलीकताय यानीकताय वत्थुकताय अनुट्ठिताय परिचिताय सुसमारद्धाय एकादसानिसंसा पाटिकङ्खा। कतमे एकादस? सुखं सुपति, सुखं पटिबुज्झति, न पापकं सुपिनं पस्सति, मनुस्सानं पियो होति, अमनुस्सानं पियो होति, देवता रक्खन्ति, नास्स अग्गि वा विसं वा सत्थं वा कमति, तुवटं चित्तं समाधियति, मुखवण्णो विप्पसीदति, असम्मूळ्हो कालं [N.344] करोति, उत्तरि अप्पटिविज्झन्तो ब्रह्मलोकूपगो होति। मेत्ताय, भिक्खवे, चेतोविमुत्तिया आसेविताय भाविताय बहुलीकताय यानीकताय वत्थुकताय अनुट्ठिताय परिचिताय सुसमारद्धाय इमे एकादसानिसंसा पाटिकङ्खा" ति॥ ●

६. अट्ठकनागरसुत्तं : १. एकं समयं आयस्मा आनन्दो वेसालियं विहरति बेलुवगामके। तेन खो पन समयेन दसमो गहपति अट्ठकनागरो पाटलिपुत्तं अनुप्पत्तो होति [B.543] केनचिदेव करणीयेन। अथ खो दसमो गहपति अट्ठकनागरो येन कुक्कुटारामो येन अञ्ञतरो भिक्खु तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा तं भिक्खुं एतदवोच—

---

१५. "साधु, सुभूति! साधु! तो सुभूति! तुम इस श्रद्ध भिक्षु को साथ रखकर साधना कर सकते हो। और, सुभूति! जब भी तथागत के दर्शन की तुम्हारी इच्छा हो तुम इस श्रद्ध भिक्षु के साथ तथागत के दर्शन हेतु आ सकते हो॥" ●

५. मैत्रीसूत्र : : मैत्रीभावना-अभ्यास के एकादश लाभ

१. "भिक्षुओ! मैत्री भावना की संगति से, साधना से, अभ्यास से, मार्गारूढ होने से, उपयोग में लाने से, इससे विरत न होने से, परिचय से, इसके भलीभाँति आरम्भ से, एकादश (ग्यारह) लाभ होते हैं। कौन से ग्यारह?

१. वह सुख से सोता है, २. वह सुख से जागता है, ३. पापमय स्वप्न नहीं देखता, ४. मनुष्यों का प्रिय होता है, ५. अमनुष्यों (देवताओं, भूत-प्रेतों) का प्रिय होता है, ६. देवता इसकी रक्षा करते हैं, ७. इसको अग्नि, विष या शस्त्र का कोई भय (या प्रभाव) नहीं होता, ८. इसका मन शीघ्रचिन्ती होता है, ९. इसकी मुखाकृति सदा प्रसन्न दिखायी देती है, १०. यह असम्मुग्ध (चेतनायुक्त) रहता हुआ ही मरणभाव को प्राप्त करता है, तथा ११. और अधिक ऊपर जाने में समर्थ न होता हुआ भी ब्रह्मलोक में तो पहुँच ही जाता है। भिक्षुओ! मैत्री भावना की सङ्गति, साधना से ...पूर्ववत्... इन एकादश धर्मों का लाभ होता है। ●

६. अष्टकनागरसूत्र[१] : :

१. एक समय आयुष्मान् आनन्द वैशाली के वेलुवग्राम में साधना हेतु ठहरे हुए थे। उस

---

१. यह सूत्र **मज्झिमनिकाय** (बौ. भा. ग्रन्थमाला-२४) के मज्झिमपण्णासक (पृष्ठ ४८५) में भी पढ़ा गया है। वहाँ भी देखने का कष्ट करें।—सम्पादक।

२. ''कहं नु खो, भन्ते, आयस्मा आनन्दो एतरहि विहरति? दस्सनकामा हि मयं, भन्ते, आयस्मन्तं आनन्दं'' ति।

''एसो, गहपति, आयस्मा आनन्दो वेसालियं विहरति बेलुवगामके'' ति।

३. अथ खो दसमो गहपति अट्ठकनागरो पाटलिपुत्ते तं करणीयं तीरेत्वा येन बेसाली वेलुवगामको येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो दसमो गहपति अट्ठकनागरो [R.343] आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—''अत्थि नु खो, भन्ते आनन्द, तेन भगवता जानता पस्सता अरहता सम्मासम्बुद्धेन एकधम्मो सम्मदक्खातो, यत्थ भिक्खुनो अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो अविमुत्तं वा चित्तं विमुच्चति, अपरिक्खीणा वा आसवा परिक्खयं गच्छन्ति, अननुप्पत्तं वा अनुत्तरं योगक्खेमं अनुपापुणाती'' ति?

''अत्थि खो, गहपति, तेन भगवता जानता पस्सता अरहता सम्मासम्बुद्धेन एकधम्मो सम्मदक्खातो, यत्थ भिक्खुनो अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो अविमुत्तं वा चित्तं विमुच्चति, अपरिक्खीणा वा आसवा परिक्खयं गच्छन्ति, अननुप्पत्तं वा अनुत्तरं योगक्खेमं अनुपापुणाती'' ति।

४. ''कतमो पन, भन्ते आनन्द, तेन भगवता जानता पस्सता अरहता [N.385] सम्मासम्बुद्धेन एकधम्मो सम्मदक्खातो, यत्थ भिक्खुनो अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो अविमुत्तं वा चित्तं विमुच्चति, अपरिक्खीणा वा आसवा परिक्खयं गच्छन्ति, अननुप्पत्तं वा अनुत्तरं योगक्खेमं अनुपापुणाती'' ति?

समय दशम गृहपति अष्टकनागर किसी कार्यविशेष से पाटलिपुत्र आया हुआ था। तब उस दशम गृहपति ने कुक्कुटाराम में जाकर किसी गृहपति से पूछा—

२. ''भन्ते! आयुष्मान् आनन्द इस समय साधनाहेतु कहाँ विराजमान हैं, मैं उनका दर्शन करना चाहता हूँ?''

''गृहपति! आयुष्मान् आनन्द वैशाली के कुक्कुटाराम में साधना कर रहे हैं।''

३. तब वह दशम गृहपति अष्टकनागर, पाटलिपुत्र में अपना कार्य सम्पन्न कर, वैशाली के कुक्कुटाराम में आयुष्मान् आनन्द के पास पहुँचा। पहुँचकर उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उस दशम गृहपति अष्टकनागर ने आयुष्मान् आनन्द से यह पूछा—''भन्ते आनन्द! उन सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, ज्ञानी सम्यक्सम्बुद्ध ने कोई एक धर्म ऐसे भलीभाँति व्याख्यात किया है जिसकी साधना से सावधान एवं उद्योगरत कोई भिक्षु अपने अविमुक्त चित्त को विमुक्त कर ले, या उसके अपरिक्षीण आश्रव क्षीण हो जायँ, या वह अप्राप्त एवं अद्वितीय योगक्षेम प्राप्त कर ले?''

''हाँ, गृहपति! उन सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, ज्ञानी सम्यक्सम्बुद्ध ने अवश्य ऐसे एक धर्म का व्याख्यान किया है, जिसकी साधना से, भिक्षु ...पूर्ववत्... योगक्षेम प्राप्त कर सकता है।

४. ''भन्ते आनन्द! उन सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, ज्ञानी, सम्यक्सम्बुद्ध ने किस ऐसे एक धर्म का व्याख्यान किया है, जहाँ भिक्षु ...पूर्ववत्... अनुपम योगक्षेम प्राप्त कर सकता है?''

५. ''इध, गहपति, भिक्खु विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो इति पटिसञ्चिक्खति—'इदं पि खो पठमं झानं अभिसङ्खतं अभिसञ्चेतयितं'। 'यं खो पन किञ्चि अभिसङ्खतं अभिसञ्चेतयितं, तदनिच्चं निरोधधम्मं' ति पजानाति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति; नो चे आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी [B.544] अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। अयं पि खो, गहपति, तेन भगवता जानता पस्सता अरहता सम्मासम्बुद्धेन एकधम्मो सम्मदक्खातो, यत्थ भिक्खुनो अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो अविमुत्तं वा चित्तं विमुच्चति, अपरिक्खीणा वा आसवा परिक्खयं गच्छन्ति, अननुप्पत्तं वा अनुत्तरं योगक्खेमं अनुपापुणाति।

[R.344] ६. ''पुन च परं, गहपति, भिक्खु वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं ...पे०... ततियं झानं ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो इति पटिसञ्चिक्खति—'इदं पि खो चतुत्थं झानं अभिसङ्खतं अभिसञ्चेतयितं'। 'यं खो पन किञ्चि अभिसङ्खतं अभिसञ्चेतयितं, तदनिच्चं निरोधधम्मं' ति पजानाति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति; नो चे आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। अयं पि खो, गहपति, तेन भगवता जानता पस्सता अरहता सम्मासम्बुद्धेन एकधम्मो सम्मदक्खातो, यत्थ भिक्खुनो अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो [N.386] अविमुत्तं वा चित्तं विमुच्चति, अपरिक्खीणा वा आसवा परिक्खयं गच्छन्ति, अननुप्पत्तं वा अनुत्तरं योगक्खेमं अनुपापुणाति।

---

५. ''यहाँ, गृहपति! कोई भिक्षु सब कामभोगों का त्यागकर, अकुशल धर्मों से दूर रहकर, वितर्क विचार सहित विवेकजन्य प्रीतिसुखमय **प्रथम ध्यान** को प्राप्त कर साधना करता है। वह यह विचार करता है—'यह प्रथम ध्यान भी अभिसंस्कृत (संस्कारों से उत्पन्न) एवं मनःकल्पित है।' और वह 'जो कुछ भी संस्कारों से उत्पन्न या मनःकल्पित है वह अनित्य एवं निरोधस्वभाव है'—ऐसा जानता है। वह उस साधना में स्थित रहकर अपने आश्रवों का क्षय प्राप्त कर लेता है। यदि किसी कारणवश समस्त आश्रवों का क्षय प्राप्त नहीं कर पाया, तब भी वह उसी धर्मराग एवं धर्मसुख के प्रभाव से पाँचों अवरभागीय संयोजनों के परिक्षय से औपपातिक (अयोनिज) देवों में उत्पन्न होता है, और वहाँ से अनागामी होकर वहीं परिनिवृत्त हो जाता है। गृहपति! यह एक धर्म उन सर्वज्ञ सर्वदर्शी ...पूर्ववत्... अनुपम योगक्षेम प्राप्त कर सकता है। (१)

६. ''पुनः, गृहपति! वह भिक्षु अपने उन वितर्क विचारों के शान्त होने से आध्यात्मिक सुख, चित्त की एकाग्रता, वितर्क विचाररहित, समाधिजन्य प्रीतिसुखमय **द्वितीय ध्यान...तृतीय ध्यान...**

७. "पुन च परं, गहपति, भिक्खु मेत्तासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति तथा दुतियं तथा ततियं तथा चतुत्थं। इति उद्धमधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय सब्बावन्तं लोकं मेत्तासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन फरित्वा विहरति। सो इति पटिसञ्चिक्खति—'अयं पि खो मेत्ताचेतोविमुत्ति अभिसङ्खता अभिसञ्चेतयिता'। 'यं खो पन किञ्चि अभिसङ्खतं अभिसञ्चेतयितं, तदनिच्चं निरोधधम्मं' ति पजानाति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति; नो चे आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। अयं पि खो, गहपति, तेन भगवता जानता ...पे०... अननुप्पत्तं वा अनुत्तरं योगक्खेमं अनुपापुणाति। [R.345]

८. "पुन च परं, गहपति, भिक्खु करुणासहगतेन चेतसा ...पे०... मुदितासहगतेन चेतसा ...पे०... उपेक्खासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति तथा दुतियं [B.545] तथा ततियं तथा चतुत्थं। इति उद्धमधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय सब्बावन्तं लोकं उपेक्खासहगतेन चेतसा विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन फरित्वा विहरति। सो इति पटिसञ्चिक्खति—'अयं पि खो उपेक्खाचेतोविमुत्ति अभिसङ्खता अभिसञ्चेतयिता'। 'यं खो पन किञ्चि अभिसङ्खतं अभिसञ्चेतयितं तदनिच्चं निरोधधम्मं' ति पजानाति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति; नो चे आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। अयं पि खो, गहपति, तेन भगवता जानता ...पे०... अननुप्पत्तं वा अनुत्तरं योगक्खेमं अनुपापुणाति।

९. "पुन च परं, गहपति, भिक्खु सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। सो इति पटिसञ्चिक्खति—'अयं पि खो आकासानञ्चा- [N.387]

चतुर्थ ध्यान प्राप्त कर साधना करता है। तब वह यह विचार करता है—'यह चतुर्थ ध्यान भी अभिसंस्कृत एव मनःकल्पित है।' ...पूर्ववत्... अनुपम योगक्षेम प्राप्त करता है। (२-३-४)

७. "पुनः, गृहपति! वह भिक्षु मैत्रीसहगतचित्त से...व्याप्त कर साधना करता है। तब उसको यह विचार होता है—'यह मैत्रीसहगत चित्तविमुक्ति भी अभिसंस्कृत एवं मनःकल्पित है।' ...पूर्ववत्... अनुपम योगक्षेम प्राप्त करता है। (५)

८. "पुनः, गृहपति! वह भिक्षु करुणासहगत चित्त से...'यह करुणासहगत चित्त-विमुक्ति भी अभिसंस्कृत एवं मनःकल्पित है।' ...पूर्ववत्... अनुपमयोगक्षेम प्राप्त करता है।...मुदितासहगत चित्त से... पूर्ववत्... उपेक्षासहगत चित्त से ...पूर्ववत्... अनुपमयोग क्षेम प्राप्त करता है। (६-८)

९. "पुनः, गृहपति! वह भिक्षु रूपसंज्ञाओं का सर्वथा अतिक्रमण कर और प्रतिघसंज्ञाओं के अस्त हो जाने से, नानात्वसंज्ञाओं को मन में न लाने से 'आकाश अनन्त है' इस आकाशानन्त्यायतन

यतनसमापत्ति अभिसङ्खता अभिसञ्चेतयिता'। 'यं खो पन किञ्चि अभिसङ्खतं अभिसञ्चेतयितं तदनिच्चं निरोधधम्मं' ति पजानाति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति; नो चे [R.346] आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। अयं पि खो, गहपति, तेन भगवता जानता ...पे०... अननुप्पत्तं वा अनुत्तरं योगक्खेमं अनुपापुणाति।

१०. ''पुन च परं, गहपति, भिक्खु सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति ...पे०... सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। सो इति पटिसञ्चिक्खति—'अयं पि खो आकिञ्चञ्ञायतनसमापत्ति अभिसङ्खता अभिसञ्चेतयिता'। 'यं खो पन किञ्चि अभिसङ्खतं अभिसञ्चेतयितं तदनिच्चं निरोधधम्मं' ति पजानाति। सो तत्थ ठितो आसवानं खयं पापुणाति; नो चे आसवानं खयं पापुणाति, तेनेव धम्मरागेन ताय धम्मनन्दिया पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। अयं पि खो, गहपति, तेन भगवता जानता [B.546] ...पे०... अननुप्पत्तं वा अनुत्तरं योगक्खेमं अनुपापुणाती'' ति।

११. एवं वुत्ते दसमो गहपति अट्ठकनागरो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—''सेय्यथापि, भन्ते आनन्द, पुरिसो एकं निधिमुखं गवेसन्तो सकिदेव एकादस निधिमुखानि अधिगच्छेय्य; एवमेव खो अहं, भन्ते, एकं अमतद्वारं गवेसन्तो सकिदेव एकादस अमतद्वारानि अलत्थं सेवनाय। सेय्यथापि, भन्ते, पुरिसस्स अगारं एकादसद्वारं। सो तस्मिं [R.347] अगारे आदित्ते एकमेकेन पि द्वारेन सक्कुणेय्य अत्तानं सोत्थिं कातुं; एवमेव खो अहं,

---

संज्ञा की साधना करता है। तब वह विचार करता है—'यह आकाशानन्त्यायतन संज्ञा भी अभिसंस्कृत है ...पूर्ववत्... अनुपम योगक्षेम प्राप्त करता है। (९)

१०. ''पुनः, गृहपति! वह भिक्षु उस आकाशानन्त्यायन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर 'विज्ञान अनन्त है'—इस विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है ...पूर्ववत्... । ...विज्ञानानन्त्यायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर 'कुछ भी नहीं है'—इस आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। तब वह विचार करता है— ...पूर्ववत्... अनुपम योगक्षेम को प्राप्त करता है।'' (१०-११)

११. आयुष्मान् आनन्द द्वारा ऐसा धर्मोपदेश किये जाने पर, दशम गृहपति अष्टकनागर आयुष्मान् आनन्द से यह बोला—''जैसे, भन्ते आनन्द! कोई पुरुष एक निधि (खजाना) की खोज में निकले और वह एक ही स्थान पर एक साथ ग्यारह खजाने प्राप्त कर ले; इसी प्रकार, भन्ते! मैं एक अमृतद्वार की गवेषणाहेतु निकला था; परन्तु मैंने आप से ये एकादश साधनाप्रकार प्राप्त कर लिये, जिनसे मैं किसी भी एक के माध्यम से साधना कर सकूँ। जैसे, भन्ते! कोई पुरुष एकादश द्वार वाले किसी भवन में रहता हो। वहाँ उस भवन में अग्नि लग जाने पर वह पुरुष उन एकादश द्वारों

भन्ते, इमेसं एकादसन्नं अमतद्वारानं एकमेकेन पि अमतद्वारेन सक्कुणिस्सामि अत्तानं सोत्थिं कातुं। इमे हि नाम, भन्ते, अञ्ञतित्थिया आचरियस्स आचरियधनं परिये-[N.388] सिस्सन्ति। किं पनाहं आयस्मतो आनन्दस्स पूजं न करिस्सामी" ति!

१२. अथ खो दसमो गहपति अट्ठकनागरो वेसालिकं च पाटलिपुत्तकं च भिक्खुसङ्घं सन्निपातापेत्वा पणीतेन खादनीयेन भोजनीयेन सहत्था सन्तप्पेसि सम्पवारेसि। एकमेकं च भिक्खुं पच्चेकं दुस्सयुगेन अच्छादेसि, आयस्मन्तं च आनन्दं तिचीवरेन। आयस्मतो आनन्दस्स पञ्चसतं विहारं कारापेसी ति॥ ●

७. गोपालसुत्तं : १. "एकादसहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतो गोपालको अभब्बो गोगणं परिहरितुं फातिं कातुं। कतमेहि एकादसहि? इध, भिक्खवे, गोपालको न रूपञ्ञू होति, न लक्खणकुसलो होति, न आसाटिकं हारेता होति, न वणं पटिच्छादेता होति, न धूमं कत्ता होति, न तित्थं जानाति, न पीतं जानाति, न वीथिं जानाति, न गोचरकुसलो

में से किसी एक द्वार के माध्यम से उस द्वार से बाहर निकल कर स्वयं को सुरक्षित कर सकता है; उसी प्रकार, भन्ते! मैं इन एकादश अमृत-द्वारों (साधनापद्धतियों) में से किसी एक अमृत-द्वार के माध्यम से भी अपना हित कर सकता हूँ। भन्ते! अब मेरा एक निवेदन है—ये अन्यमतावलम्बी साधक भी किसी आचार्य से किसी अनुपम विद्या की अधिगति के (उस ऋण से मुक्त होने के) लिये उसको गुरुदक्षिणा के रूप कुछ धन देते हैं, तो क्या मैं आपकी पूजा नहीं कर पाऊँगा!"

१२. तब उस दशम गृहपति अष्टकनागर ने वैशाली एवं पाटलिपुत्र—दोनों नगरों के भिक्षुसङ्घ को एकत्र कर, उनको उत्तम एवं रुचिकर भोजन अपने हाथ से परोसते हुए पूर्ण तृप्त किया। उन समस्त भिक्षुओं में प्रत्येक को दो-दो दुशाले भेंट किये तथा आयुष्मान् आनन्द को तीन चीवर (सङ्घाटि, उत्तरासङ्ग एवं अन्तर्वासक) उपहारस्वरूप दिये। साथ ही उनके नाम पर (भिक्षुओं के लिये साधनाहेतु) पाँच सौ साधना-कुटियाँ (विहार) बनवायीं॥ ●

७. गोपालसूत्र[1] **: : एकादश धर्मयुक्त गोपाल गोरक्षा में समर्थ**

१. "भिक्षुओ! कोई भी गोपालक, इन ग्यारह दोषों (अनुचित बातों) के रहते हुए, अपनी गौओं की रक्षा करने में समर्थ नहीं हो पाता, उनको सुख नहीं पहुँचा सकता। कौन सी ग्यारह बातें? (१) जो गोपालक न गायों के रूप (वर्ण) को पहचानता है, (२) न उनके लक्षण (चिह्न) पहचानता है, (३) न गौओं को काटने वाली काली मक्खी को हटाना जानता है, (४) न गौओं के व्रण (घाव) को ठीक करना जानता है, (५) न (मच्छर-मक्खी भगाने के लिये) धूँआ करना जानता है, (६) न उनका जल पीने योग्य स्थान जानता है, (७) न गायों के पीये हुए जल के विषय में जानता है कि वे पूरा जल पी चुकीं या प्यासी ही रह गयीं, (८) न वह उनके घरों की गलियों के विषय में ही जानता है कि वह किस गली के किस घर की रहने वाली हैं, (९) न उनके चारागाह के विषय में ही जानता है कि कहाँ घास ठीक है या कहाँ नहीं, (१०) जो पूरा दूध निकाल लेता

---

१. यह सूत्र **मज्झिमनिकाय** के **मूलपण्णासक** (सू० सं०-३३) में भी पठित है। कृपया वहाँ भी देखें। —सम्पादक।

होति, अनवसेसदोही च होति, ये ते उसभा गोपितरो गोपरिणायका ते न अतिरेकपूजाय [B.547] पूजेता होति। इमेहि खो, भिक्खवे, एकादसहि अङ्गेहि समन्नागतो गोपालको अभब्बो गोगणं परिहरितुं फातिं कातुं।

२. "एवमेव खो, भिक्खवे, एकादसहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो एकस्मिं धम्मविनये वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जितुं। कतमेहि एकादसहि? इध, [R.348] भिक्खवे, भिक्खु न रूपञ्ञू होति, न लक्खणकुसलो होति, न आसाटिकं हारेता होति, न वणं पटिच्छादेता होति, न धूमं कत्ता होति, न तित्थं जानाति, न पीतं जानाति, न वीथिं जानाति, न गोचरकुसलो होति, अनवसेसदोही च होति, ये ते भिक्खू थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बजिता सङ्घपितरो सङ्घपरिणायका ते न अतिरेकपूजाय पूजेता होति।

३. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु न रूपञ्ञू होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु यं किञ्चि रूपं 'चत्तारि महाभूतानि, चतुन्नं च महाभूतानं उपादायरूपं' ति यथाभूतं नप्पजानाति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु न रूपञ्ञू होति।

[N.389] ४. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु न लक्खणकुसलो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु 'कम्मलक्खणो बालो, कम्मलक्खणो पण्डितो' ति यथाभूतं नप्पजानाति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु न लक्खणकुसलो होति।

५. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु न आसाटिकं हारेता होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु उप्पन्नं कामवितक्कं अधिवासेति नप्पजहति न विनोदेति न ब्यन्तीकरोति न अनभावं गमेति, उप्पन्नं ब्यापादवितक्कं ...उप्पन्नं विहिंसावितक्कं ...उप्पन्नुप्पन्ने पापके अकुसले धम्मे

है (बछड़ों के लिये छोड़ता ही नहीं), तथा (११) जो गोवंशवृद्धिकारक साँड़ों को सम्मान और स्नेह नहीं देता। भिक्षुओ! इन एकादश धर्मों से युक्त कोई गोपालक अपनी गौओं की रक्षा करने में समर्थ नहीं हो सकता।

२. "इसी प्रकार, भिक्षुओ! इन ग्यारह धर्मों से युक्त कोई भिक्षु इस धर्मविनय में वृद्धि, उन्नति या विपुलता नहीं पा सकता। किन ग्यारह धर्मों से? जो रूपज्ञ नहीं होता, जो चिह्न को पहचानने में कुशल नहीं होता..., ...पूर्ववत्... सङ्घ में साधनारत एवं दीर्घकाल से प्रव्रजित, सङ्घ के प्रतिष्ठापक एवं उन्नायक स्थविर भिक्षुओं के प्रति श्रद्धा नहीं रखता, उनका सम्मान नहीं करता।

३. "भिक्षुओ! कौन भिक्षु 'रूप के विषय में ज्ञाता' नहीं होता? भिक्षुओ! जो भिक्षु समीचीनता से यह नहीं जानता कि यह समग्र रूपसमूह चार महाभूतमात्र है, या यह इन चारों के निमित्त से ही उत्पन्न हुआ है—भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु 'रूप के विषय में अज्ञ' कहलाता है। (१)

४. "भिक्षुओ! कौन भिक्षु 'लक्षण के विषय में अज्ञ' होता है? भिक्षुओ! जो भिक्षु भलीभाँति यह नहीं जानता कि किस कर्म के लक्षण से 'बाल' (अज्ञ) रह जाता है, किस कर्म के लक्षण को जानकर 'पण्डित' कहलाता है—ऐसा भिक्षु 'कर्म के लक्षण जानने में अचतुर' कहलाता है। (२)

५. "भिक्षुओ! कौन भिक्षु उस गोपालक के समान 'मक्खियाँ उड़ाने में अकुशल' होता है? भिक्षुओ! जो भिक्षु उत्पन्न कामवितर्कों (भोगवासना) को ...व्यापादवितर्कों को... विहिंसावितर्कों

अधिवासेति नप्पजहति न विनोदेति न ब्यन्तीकरोति न अनभावं गमेति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु न आसाटिकं हारेता होति।

६. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु न वणं पटिच्छादेता होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु चक्खुना रूपं दिस्वा निमित्तग्गाही होति अनुब्यञ्जनग्गाही; यत्वाधिकरणमेनं चक्खुन्द्रियं असंवुतं विहरन्तं अभिज्झादोमनस्सा पापका अकुसला धम्मा अन्वास्सवेय्युं, तस्स संवराय न पटिपज्जति; न रक्खति चक्खुन्द्रियं, चक्खुन्द्रिये संवरं नापज्जति। सोतेन सद्दं सुत्वा ...घानेन गन्धं घायित्वा ...जिव्हाय रसं सायित्वा ...कायेन फोट्ठब्बं फुसित्वा [R.349] ...मनसा धम्मं विञ्ञाय निमित्तग्गाही होति अनुब्यञ्जनग्गाही; यत्वाधिकरणमेनं [B.548] मनिन्द्रियं असंवुतं विहरन्तं अभिज्झादोमनस्सा पापका अकुसला धम्मा अन्वास्सवेय्युं, तस्स संवराय न पटिपज्जति; न रक्खति मनिन्द्रियं, मनिन्द्रिये संवरं नापज्जति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु न वणं पटिच्छादेता होति।

७. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु न धूमं कत्ता होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु न यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं वित्थारेन परेसं देसेता होति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु न धूमं कत्ता होति।

८. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु न तित्थं जानाति? इध, भिक्खवे, भिक्खु ये ते भिक्खू बहुस्सुता आगतागमा धम्मधरा विनयधरा मातिकाधरा, ते कालेन कालं उपसङ्कमित्वा न परिपुच्छति न परिपञ्हति—'इदं, भन्ते, कथं, इमस्स को अत्थो' ति? तस्स

को उत्पन्न कर लेता है, उनको छोड़ता नहीं, अपने चित्त से दूर नहीं हटाता—ऐसा भिक्षु 'मक्खियाँ उड़ाने में अकुशल' कहलाता है। (३)

६. ''भिक्षुओ! कौन भिक्षु 'व्रण का रोपण न करने वाला' होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु चक्षु से रूप को देखकर उसके निमित्त (अनुकूलता या प्रतिकूलता) को ग्रहण कर लेता है, उसे स्वीकार कर लेता है। जिस विषय में उसकी चक्षुरिन्द्रिय को संयत न रखने पर लोभ और दौर्मनस्य रूप अकुशल धर्म चित्त में घर कर लेते हैं, उन पर संयम नहीं कर पाता, चक्षुरिन्द्रिय को निगृहीत नहीं कर पाता। श्रोत्र से शब्द सुनकर उसके निमित्त ...पूर्ववत्... घ्राण से गन्ध सूँघकर उसके निमित्त...जिह्वा से रस का स्वाद लेकर उसके निमित्त...काय से स्प्रष्टव्य विषय का स्पर्श कर उसके निमित्त...मन से धर्मों को जानकर उसके निमित्त...मन इन्द्रिय पर संवर (संयम) नहीं कर पाता। भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु 'व्रणरोपयिता' नहीं कहलाता। (४)

७. ''भिक्षुओ! कौन भिक्षु धूआँ करनेवाला नहीं होता? भिक्षुओ! जो भिक्षु गुरु से सुने-समझे धर्म का दूसरों को विस्तार से उपदेश करने में समर्थ नहीं है, वह भिक्षु 'धूआँ न करने वाला' कहलाता है। (५)

८. ''भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु तीर्थ का ज्ञाता नहीं होता? भिक्षुओं जो भिक्षु अन्य बहुश्रुत, शास्त्रज्ञ, धर्म मातृका एवं विनय के व्याख्याताओं के पास जाकर समय-समय पर इनके विषय में प्रश्नोत्तर नहीं करता, उन से यह जानने का प्रयास नहीं करता—'भन्ते! यह कैसे है? इसका क्या

ते आयस्मन्तो अविवटं चेव न विवरन्ति, अनुत्तानीकतं च न उत्तानीकरोन्ति, अनेक-विहितेसु च कङ्खाठानियेसु धम्मेसु कङ्खं न पटिविनोदेन्ति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु न तित्थं जानाति।

[N.390] ९. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु न पीतं जानाति? इध, भिक्खवे, भिक्खु तथागतप्पवेदिते धम्मविनये देसियमाने न लभति अत्थवेदं, न लभति धम्मवेदं, न लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु न पीतं जानाति।

१०. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु न वीथिं जानाति? इध, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं यथाभूतं नप्पजानाति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु न वीथिं जानाति।

[R.350] ११. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु न गोचरकुसलो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो सतिपट्ठाने यथाभूतं नप्पजानाति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु न गोचरकुसलो होति।

१२. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अनवसेसदोही होति? इध, भिक्खवे, भिक्खुं सद्धा गहपतिका अभिहट्ठुं पवारेन्ति चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्ज-परिक्खारेहि। तत्र भिक्खु मत्तं न जानाति पटिग्गहणाय। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अनवसेसदोही होति।

[B.549] १३. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु ये ते भिक्खू थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बजिता सङ्घपितरो सङ्घपरिणायका, ते न अतिरेकपूजाय पूजेता होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु

अर्थ है?—ऐसे भिक्षु के, भिक्षुओ! सन्दिग्ध विषय स्पष्ट नहीं हो पाते, उलझे हुए अर्थ सुलझ नहीं पाते, अनेक सन्दिग्ध स्थलों पर उसके शङ्का-सन्देह निवृत्त नहीं हो पाते। भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु 'तीर्थ का ज्ञाता' नहीं होता। (६)

९. ''कौन भिक्षु, भिक्षुओ! पान (धर्मामृतपान) के विषय में भलीभाँति नहीं जानता? जो भिक्षु तथागत के उपदेशकाल में बोले हुए वचन का अर्थ नहीं समझ पाता, उसका निष्कर्ष नहीं समझ पाता, उससे प्राप्त होने वाला प्रमोद (हर्ष) ग्रहण नहीं कर पाता—ऐसा भिक्षु, भिक्षुओ! 'पान की वास्तविकता के विषय में अज्ञ' कहलाता है। (७)

१०. ''भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु 'वीथि (मार्ग) के विषय में अज्ञ' होता है? भिक्षुओ! जो भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग के विषय में भलीभाँति नहीं जानता वह भिक्षु 'वीथि के विषय में अज्ञ' कहलाता है। (८)

११. ''भिक्षुओ! कौन भिक्षु 'गोचरकुशल' नहीं होता? जो भिक्षु चार स्मृतिप्रस्थानों के विषय में पूर्णतः अनभिज्ञ होता है, वह 'गोचरकुशल' नहीं कहलाता। (९)

१२. भिक्षुओ! कौन भिक्षु 'अनवशेषदोही' (पूरा दूध निकाल लेने वाला) होता है? भिक्षुओ! यहाँ जो भिक्षु गृहस्थों के घर जाकर वहाँ से अधिक से अधिक उनका दिया हुआ भिक्षान्न, वस्त्र, औषध आदि लेने का प्रयास करता है, वह 'अनवशेषदोही' कहलाता है। (१०)

१३. ''भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु 'स्थविरों की अतिरेकपूजा न करने वाला' होता है?

ये ते भिक्खू थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बजिता सङ्घपितरो सङ्घपरिणायका, तेसु न मेत्तं कायकम्मं पच्चुपट्ठापेति आवि चेव रहो च, न मेत्तं वचीकम्मं... न मेत्तं मनोकम्मं पच्चुपट्ठापेति आवि चेव रहो च। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु ये ते भिक्खू थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बजिता सङ्घपितरो सङ्घपरिणायका, न ते अतिरेकपूजाय पूजेता होति।

''इमेहि खो, भिक्खवे, एकादसहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो इमस्मिं धम्मविनये वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जितुं।

१४. ''एकादसहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतो गोपालको भब्बो गोगणं परिहरितुं फातिं कातुं। कतमेहि एकादसहि? इध, भिक्खवे, गोपालको रूपञ्ञू होति, लक्खण-कुसलो होति, आसाटिकं हारेता होति, वणं पटिच्छादेता होति, धूमं कत्ता होति, तित्थं जानाति, पीतं जानाति, वीथिं जानाति, गोचरकुसलो होति, सावसेसदोही च होति, [N.391] ये ते उसभा गोपितरो गोपरिणायका ते अतिरेकपूजाय पूजेता होति—इमेहि खो, भिक्खवे, एकादसहि अङ्गेहि समन्नागतो गोपालको भब्बो गोगणं परिहरितुं फातिं कातुं।

१५. ''एवमेव खो, भिक्खवे, एकादसहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो इमस्मिं धम्मविनये वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जितुं। कतमेहि एकादसहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु रूपञ्ञू होति, लक्खणकुसलो होति, आसाटिकं हारेता होति, वणं [R.351] पटिच्छादेता होति, धूमं कत्ता होति, तित्थं जानाति, पीतं जानाति, वीथिं जानाति, गोचरकुसलो होति, सावसेसदोही च होति, ये ते भिक्खू थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बजिता सङ्घपितरो सङ्घपरिणायका ते अतिरेकपूजाय पूजेता होति।

भिक्षुओ! जो भिक्षु उन स्थविर भिक्षुओं को अतिरेकपूजा से पूजित नहीं करता, जो उससे पूर्व प्रव्रजित हुए हैं, उससे वृद्ध हैं, सुविज्ञ हैं, सङ्घ के वृद्धिकारक उन्नतिकारक अतएव पितृसम हैं, उनके प्रति काय वाक् एवं मन से मैत्रीभावना प्रकट नहीं करता—ऐसा भिक्षु 'स्थविरों का अतिरेकपूजक' नहीं कहलाता। (११)

''भिक्षुओ! ये एकादश धर्म जिस भिक्षु में नहीं होते वह भिक्षु इस धर्मविनय में वृद्धि, उन्नति या विपुलता नहीं प्राप्त कर पाता॥ (क)

१४. (परन्तु) ''भिक्षुओ! इन एकादश धर्मों से युक्त कोई गोपालक ही अपने गोसमूह की सर्वथा रक्षा करने में समर्थ हो सकता है। किन एकादश धर्मों से युक्त? भिक्षुओ! जो गोपालक १. गौओं का रूप, २. लक्षण, ३. मक्खियाँ उड़ाना, ४. व्रण की चिकित्सा, ५. धूआँ करना जानता है, ६. जलस्थान का ज्ञाता, ७. गौओं के जलपान की स्थिति का ज्ञाता, ८. गोचर (घास चरने) का ज्ञाता, ९. वीथिज्ञान में कुशल, १०. सावशेषदोही, एवं ११. गोवंशवृद्धिकारक वृषभों (सांड़ों) का सम्मानकारक होता है।

१५. ''उसी प्रकार, भिक्षुओ! इन एकादश धर्मों से युक्त भिक्षु इस धर्मविनय में वृद्धि, उन्नति एवं विपुलता प्राप्त कर सकता है। किन एकादश धर्मों से? भिक्षुओ! जो भिक्षु १. रूपज्ञ होता है, २. लक्षणज्ञ होता है, ३. मक्खियाँ उड़ानेवाला होता है, ४. व्रण का चिकित्सक होता है, ५. धूआँ करने

१६. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खू रूपञ्ञू होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु यं किञ्चि रूपं चत्तारि महाभूतानि, चतुन्नं च महाभूतानं उपादायरूपं ति यथाभूतं पजानाति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु रूपञ्ञू होति।

[B.550] १७. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु लक्खणकुसलो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु 'कम्मलक्खणो बालो, कम्मलक्खणो पण्डितो' ति यथाभूतं पजानाति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु लक्खणकुसलो होति।

१८. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु आसाटिकं हारेता होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु उप्पन्नं कामवितक्कं नाधिवासेति पजहति विनोदेति ब्यन्तीकरोति अनभावं गमेति, उप्पन्नं ब्यापादवितक्कं... उप्पन्नं विहिंसावितक्कं... उप्पन्नुप्पन्ने पापके अकुसले धम्मे नाधिवासेति पजहति विनोदेति ब्यन्तीकरोति अनभावं गमेति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु आसाटिकं हारेता होति।

१९. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु वणं पटिच्छादेता होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु चक्खुना रूपं दिस्वा न निमित्तग्गाही होति नानुब्यञ्जनग्गाही; यत्वाधिकरणमेनं चक्खुन्द्रियं असंवुतं विहरन्तं अभिज्झादोमनस्सा पापका अकुसला धम्मा अन्वास्सवेय्युं, तस्स संवराय पटिपज्जति; रक्खति चक्खुन्द्रियं, चक्खुन्द्रिये संवरं आपज्जति। सोतेन सद्दं सुत्वा... घानेन [N.392] गन्धं घायित्वा... जिव्हाय रसं सायित्वा... कायेन फोट्ठब्बं फुसित्वा... मनसा धम्मं विञ्ञाय न निमित्तग्गाही होति नानुब्यञ्जनग्गाही; यत्वाधिकरणमेनं मनिन्द्रियं असंवुतं

वाला होता है, ६. तीर्थ को जानता है, ७. पान की स्थिति को जानता है, ८. वीथि को जानता है, ९. गोचरकुशल होता है, १०. सावशेषदोही होता है, तथा ११. पितृसमान स्थविर भिक्षुओं का विशेष सम्मान करता है।

१६. ''कैसे भिक्षुओ! कोई भिक्षु **रूपज्ञ** होता है? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु सभी रूपों को चार महाभूतों से उत्पन्न तथा उनसे उनका निर्माण मात्र समझता है, वह भिक्षु 'रूपज्ञ' होता है। (१)

१७. ''कैसे, भिक्षुओ! वह भिक्षु **लक्षणकुशल** होता है? जो भिक्षु यह भलीभाँति जानता है—'किन कर्मलक्षणों से 'बाल' (मूर्ख) कहलाता है, और किन कर्मलक्षणों से 'पण्डित'। ऐसा भिक्षु 'लक्षणकुशल' कहलाता है। (२)

१८. ''कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु **मक्खियों को उड़ाने में समर्थ** होता है? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु उत्पन्न कामवितर्क... उत्पन्न व्यापादवितर्क... उत्पन्न विहिंसावितर्क... या क्रमशः उत्पन्न होते हुए अकुशल धर्मों को स्वीकार नहीं करता, समीप नहीं आने देता, तथा समीप आये अकुशल धर्मों को नष्ट कर देता है। भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु 'मक्खियों को उड़ाने में समर्थ' कहलाता है। (३)

१९. ''भिक्षुओ! कौन भिक्षु **व्रणरोपक** कहलाता है? जो, भिक्षुओ! भिक्षु चक्षु के रूप में देखकर उसके निमित्त (अनुकूलता, प्रतिकूलता) को ग्रहण नहीं करता, जिसके विषय में अपनी चक्षुरिन्द्रिय पर संयम रखते हुए लोभ और द्वेषरूपी धर्म चित्त में प्रविष्ट नहीं होता, उन पर वह संयम रखता है, चक्षुरिन्द्रिय को उनसे बचाता है, चक्षुरिन्द्रिय को निगृहीत रखता है। श्रोत्र से शब्द

विहरन्तं अभिज्झादोमनस्सा पापका अकुसला धम्मा अन्वास्सवेय्युं, तस्स संवराय [R.352] पटिपज्जति; रक्खति मनिन्द्रियं, मनिन्द्रिये संवरं आपज्जति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु वणं पटिच्छादेता होति।

२०. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु धूमं कत्ता होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं वित्थारेन परेसं देसेता होति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु धूमं कत्ता होति।

२१. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु तित्थं जानाति? इध, भिक्खवे, भिक्खु ये ते भिक्खू बहुस्सुता आगतागमा धम्मधरा विनयधरा मातिकाधरा, ते कालेन कालं उपसङ्कमित्वा परिपुच्छति परिपञ्हति— 'इदं, भन्ते, कथं, इमस्स को अत्थो' ति? तस्स ते आयस्मन्तो अविवटं चेव विवरन्ति, अनुत्तानीकतं च उत्तानीकरोन्ति, अनेकविहितेसु च कङ्खाठानियेसु धम्मेसु कङ्खं पटिविनोदेन्ति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु तित्थं जानाति।

२२. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु पीतं जानाति? इध, भिक्खवे, भिक्खु तथागतप्पवेदिते धम्मविनये देसियमाने लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पीतं जानाति।

२३. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु वीथिं जानाति? इध, भिक्खवे, भिक्खु [B.551] अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं यथाभूतं पजानाति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु वीथिं जानाति।

सुनकर...घ्राण से गन्ध सूँघकर...जिह्वा से रस चख कर...काया से स्प्रष्टव्य विषय का स्पर्श कर...मन से धर्मों को जानकर उसके निमित्त...मन इन्द्रिय को निगृहीत रखता है—ऐसा भिक्षु 'व्रणरोपक' कहलाता है। (४)

२०. "भिक्षुओ! कौन भिक्षु **धूएँ का करने वाला** होता है? भिक्षुओ! जो भिक्षु गुरु से यथाश्रुत धर्म का दूसरों को विस्तार से उपदेश करता है—वह 'धूएँ का करने वाला' कहलाता है। (५)

२१. "भिक्षुओ! कौन भिक्षु **तीर्थ को जानने वाला** कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु बुद्धोपदिष्ट धर्मविनय में बहुश्रुत, शास्त्रज्ञ, धर्मधर, विनयधर एवं मातृकाधर भिक्षुओं से समय समय पर धर्मविषयक प्रश्न पूछता रहता है—'भन्ते यह कैसे है?' या 'इसका क्या अर्थ है?' इसके इन प्रश्नों का वे भिक्षु उचित उत्तर देते हैं, नाना प्रकार से उस अस्पष्ट धर्म को स्पष्ट करते हैं, विस्तृत करते हैं, सन्देहास्पद धार्मिक विषयों में सन्देह का निराकरण करते हैं—ऐसा भिक्षु 'तीर्थज्ञ' कहलाता है। (६)

२२. "कैसे, भिक्षुओ! वह भिक्षु **पीत जल (धर्मामृतपान) का ज्ञाता** होता है? भिक्षुओ! जो भिक्षु तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म को अर्थ के साथ विस्तारपूर्वक जानता है—वह इस 'धर्मामृतपान का ज्ञाता' कहलाता है। (७)

२३. "भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु **वीथि (मार्ग) का ज्ञाता** कहलाता है? भिक्षुओ! जो भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग का यथार्थ ज्ञाता होता है वही 'वीथिज्ञ' कहलाता है। (८)

२४. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु गोचरकुसलो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो सतिपट्ठाने यथाभूतं पजानाति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु गोचरकुसलो होति।

२५. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सावसेसदोही होति? इध, भिक्खवे, भिक्खुं सद्धा गहपतिका अभिहट्ठुं पवारेन्ति चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्ज- [R.353] परिक्खारेहि। तत्र भिक्खु मेत्तं जानाति पटिग्गहणाय। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सावसेसदोही होति।

[N.393] २६. "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु ये ते भिक्खू थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बजिता सङ्घपितरो सङ्घपरिणायका, ते अतिरेकपूजाय पूजेता होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु ये ते थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बचिता सङ्घपितरो सङ्घपितरो सङ्घपरिणायका, तेसु मेत्तं कायकम्मं पच्चुपट्ठापेति आवि चेव रहो च, मेत्तं वचीकम्मं... मेत्तं मनोकम्मं पच्चुपट्ठापेति आवि चेव रहो च। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु ये ते भिक्खू थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बचिता सङ्घपितरो सङ्घपरिणायका, ते अतिरेकपूजाय पूजेता होति।

"इमेहि खो, भिक्खवे, एकादसहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो इमस्मिं धम्मविनये वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जितुं" ति॥ ●

८. पठमसमाधिसुत्तं : १. अथ खो सम्बहुला भिक्खू येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं—

२. "सिया नु खो, भन्ते, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं

---

२४. "भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु **गोचरकुशल** होता है? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु चार स्मृति-प्रस्थानों को यथार्थतः जानता है, वही गोचरकुशल कहलाता है। (९)

२५. "भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु **सावशेषदोही** होता है? भिक्षुओ! जो भिक्षु इस धर्मविनय में श्रद्धालु गृहपतियों से चीवर, पिण्डपात, शयनासन, भैषज्यपरिष्कार आदि लेते समय उनके लेने की मात्रा जानता है (अधिक नहीं लेता)—ऐसा भिक्षु 'सावशेषदोही' कहलाता है। (१०)

२६. "भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु **स्थविर भिक्षुओं की अतिरेक पूजा करने वाला** कहलाता है? भिक्षुओ! जो भिक्षु बहुत पहले प्रव्रजित, सङ्घ के पितृभूत, उन्नायक स्थविर भिक्षुओं का विशेष सम्मान, पूजा-सत्कार करता है, तथा जो उनके प्रति काय वाक् एवं मनःकर्म से समूह या एकान्त में मैत्रीभावयुक्त रहता है, उन सङ्घोन्नायकों का वह 'अतिरेकपूजक' कहलाता है। (११)

"भिक्षुओ! इन ग्यारह धर्मों से युक्त भिक्षु ही इस धर्मविनय में वृद्धि, उन्नति एवं विपुलता प्राप्त कर सकता है॥" ●

८. प्रथम समाधिसूत्र : : विशिष्ट समाधिभावना

१. कभी बहुत से भिक्षु भगवान् के दर्शनार्थ उनके सम्मुख गये। जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए उन भिक्षुओं ने भगवान् से यह पूछा—

पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स, न तेजस्मिं तेजोसञ्ञी अस्स, न वायस्मिं वायोसञ्ञी अस्स, न आकासनञ्चायतने आकासानञ्चायतनसञ्ञी अस्स, [B.552] न विञ्ञाणञ्चायतने विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न आकिञ्चञ्ञायतने आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न इधलोके इधलोकसञ्ञी अस्स, न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स, यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा'' ति?

३. ''सिया, भिक्खवे, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं [R.354] अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स, सञ्ञी च पन अस्सा'' ति।

४. ''यथा कथं पन, भन्ते, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुत्तं मुत्तं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं [N.394] अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा ति''?

५. ''इध, भिक्खवे, भिक्खु एवंसञ्ञी होति—'एतं सन्तं एतं पणीतं, यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। एवं खो, भिक्खवे, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स, न तेजस्मिं तेजोसञ्ञी अस्स, न वायस्मिं वायोसञ्ञी अस्स, न आकासानञ्चायतने आकासानञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न विञ्ञाणञ्चायतने विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न आकिञ्चञ्ञायतने आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न इधलोके इधलोकसञ्ञी अस्स, न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स, यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा'' ति॥ ●

९. दुतियसमाधिसुत्तं : १. तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''भिक्खवो'' ति। ''भदन्ते'' ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''सिया नु खो भिक्खवे, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा [B.553] नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स ...पे०... न [R.355]

---

२. ''भन्ते! क्या किसी साधक द्वारा इस प्रकार की साधना भी सम्भव है, जिसकी भावना करने पर साधक को न पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा रहे ...पूर्ववत्...॥ ●

[पूर्वपठित निश्रयवर्ग के संज्ञासूत्र के आधार पर विस्तार कर लें]

९. द्वितीय समाधिसूत्र : : विशिष्ट समाधिभावना

१. कभी बहुत से भिक्षु भगवान् के दर्शनार्थ उनके सम्मुख गये। वहाँ जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उन भिक्षुओं से भगवान् ने पूछा—

आकिञ्चञ्ञायतने आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न इधलोके इधलोकसञ्ञी अस्स, न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स, यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा" ति?

३. "भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा भगवन्नेत्तिका भगवम्पटिसरणा। साधु वत, भन्ते, भगवन्तंयेव पटिभातु एतस्स भासितस्स अत्थो। भगवतो सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती" ति।

४. "तेन हि, भिक्खवे, सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

[N.395] ५. "सिया, भिक्खवे, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा" ति।

६. "यथा कथं पन, भन्ते, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा" ति?

७. "इध, भिक्खवे, भिक्खु एवंसञ्ञी होति—'एतं सन्तं एतं पणीतं, यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। एवं [R.356] खो, भिक्खवे, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा" ति॥ ●

१०. ततियसमाधिसुत्तं : १. अथ खो सम्बहुला भिक्खू येनायस्मा सारिपुत्तो

---

२. "भिक्षुओ! क्या किसी भिक्षु द्वारा ऐसा समाधि-लाभ भी सम्भव है कि जिसकी साधना करते समय उसको पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा न रहे ...पूर्ववत्... तथापि उसको संज्ञा रहे?"

३. "भन्ते! हमारा धर्मज्ञान आप पर ही आधृत है, आप ही हमारे मार्गदर्शक हैं, आप ही हमारे लिये शरणस्थल हैं। आपके श्रीमुख से निकला हुआ इसका उत्तर ही हमारे लिये धारणीय होगा।"

४. "तो भिक्षुओ! सुनो। भली प्रकार मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ। ...पूर्ववत्...।

५. "भिक्षुओ! किसी भिक्षु को ऐसा समाधि-लाभ भी सम्भव है कि जिसकी साधना करते समय पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा न रहे ...पूर्ववत्... तथापि संज्ञा रहे॥ ●

[पूर्वसूत्रवत् विस्तार कर लें।]

१०. तृतीय समाधिसूत्र : : विशिष्ट समाधिभावना

१. तब बहुत से भिक्षु, जहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र साधनारत थे, वहाँ गये। जाकर, कुशल-

तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मता सारिपुत्तेन सद्धिं सम्मोदिंसु। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू [B.554] आयस्मन्तं सारिपुत्तं एतदवोचुं—

२. ''सिया नु खो, आवुसो सारिपुत्त, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा'' ति?

३. ''सिया, आवुसो, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा'' ति।

४. ''यथा कथं पन, आवुसो सारिपुत्त, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभी यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं [N.396] परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा'' ति?

५. ''इध, आवुसो, भिक्खु एवंसञ्ञी होति—'एतं सन्तं एतं पणीतं, [R.357] यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। एवं खो, आवुसो, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा'' ति॥ ●

११. चतुत्थसमाधिसुत्तं : १. तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि— ''सिया नु खो, आवुसो, भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स, न तेजस्मिं तेजोसञ्ञी अस्स, न वायस्मिं वायोसञ्ञी अस्स, न आकासानञ्चायतने आकासानञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न विञ्ञाणञ्चायतने विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न इध लोके इधलोकसञ्ञी अस्स, न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स, यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा'' ति?

मङ्गल प्रश्नानन्तर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उन भिक्षुओं ने आयुष्मान् सारिपुत्र से यह जिज्ञासा की— ...पूर्ववत्... ॥'' ●

[पूर्वसूत्रवत् ही इस सूत्र का भी विस्तार है।]

११ चतुर्थ समाधिसूत्र :: विशिष्ट समाधि का लाभ

१. वहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं से पूछा—''क्या, आयुष्मानो! किसी भिक्षु को ऐसी समाधि का लाभ भी सम्भावित है कि जिसकी साधना के समय उसको पृथ्वी में पृथ्वीसंज्ञा न रहे ...पूर्ववत्... फिर भी वह संज्ञी बना रहे?''

[B.555] २. "दूरतो पि खो मयं, आवुसो, आगच्छेय्याम आयस्मतो सारिपुत्तस्स सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थमञ्ञातुं। साधु वतायस्मन्तंयेव सारिपुत्तं पटिभातु एतस्स भासितस्स अत्थो। आयस्मतो सारिपुत्तस्स सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती" ति।

[R.358] ३. "तेनहावुसो, सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति। "एवमावुसो" ति खो ते भिक्खू आयस्मतो सारिपुत्तस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—

४. "सिया, आवुसो भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं [N.397] पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा" ति।

५. "यथा कथं पनावुसो, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स ...पे०... यं पिदं दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा" ति?

६. "इध, आवुसो, भिक्खु एवंसञ्ञी होति—'एतं सन्तं एतं पणीतं, यदिदं सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं' ति। एवं खो, आवुसो, सिया भिक्खुनो तथारूपो समाधिपटिलाभो यथा नेव पथवियं पथविसञ्ञी अस्स, न आपस्मिं आपोसञ्ञी अस्स, न तेजस्मिं तेजोसञ्ञी अस्स, न वायस्मिं वायोसञ्ञी अस्स, न आकासानञ्चायतने आकासानञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न विञ्ञाणञ्चतायतने विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञी अस्स, न आकिञ्चञ्ञायतने आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतने नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसञ्ञी अस्स, न इधलोके इधलोकसञ्ञी अस्स, न परलोके परलोकसञ्ञी अस्स, यं पिदं दिट्ठं सुतं मुत्तं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा तत्रा पि न सञ्ञी अस्स; सञ्ञी च पन अस्सा" ति॥ ●

अनुस्सतिवग्गो दुतियो॥

तस्सुद्दानं

[B.556] द्वे वुत्ता महानामेन, नन्दियेन सुभूतिना।
मेत्ता अट्ठको गोपालो, चत्तारो च समाधिना ति॥ ●

---

२. "आयुष्मन्! हम तो स्वयं, बहुत दूर से, इसी प्रसङ्ग का अर्थ समझने के लिये आयुष्मान् के पास आये हैं। अच्छा हो कि आप आयुष्मान् ही इसका विस्तृत अर्थ हम लोगों को समझावें। आप से सुनकर हम सब भिक्षु भी वैसा ही धारण कर लेंगे।"

३. "तो, आयुष्मानो! सुनो। सुनकर भलीभाँति मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ। ...पूर्ववत्... ॥" ●

[पूर्वसूत्र के समान ही इसका भी विस्तार है।]

अनुस्मृतिवर्ग द्वितीय सम्पन्न॥

३. सामञ्ञवग्गो

१-८. "एकादसहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतो गोपालको अभब्बो [R.359] गोगणं परिहरितुं फातिं कातुं। कतमेहि एकादसहि? इध, भिक्खवे, गोपालको न [N.398] रूपञ्ञू होति, न लक्खणकुसलो होति, न आसाटिकं हारेता होति, न वणं पटिच्छादेता होति, न धूमं कत्ता होति, न तित्थं जानाति, न पीतं जानाति, न वीथिं जानाति, न गोचर-कुसलो होति, अनवसेसदोही च होति, ये ते उसभा गोपितरो गोपरिणायका ते न अतिरेक-पूजाय पूजेता होति—इमेहि खो, भिक्खवे, एकादसहि अङ्गेहि समन्नागतो गोपालको अभब्बो गोगणं परिहरितुं फातिं कातुं।

"एवमेव खो, भिक्खवे, एकादसहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो चक्खुस्मिं अनिच्चानुपस्सी विहरितुं ...पे०... अभब्बो चक्खुस्मिं दुक्खानुपस्सी विहरितुं... अभब्बो चक्खुस्मिं अनत्तानुपस्सी विहरितुं... अभब्बो चक्खुस्मिं खयानुपस्सी विहरितुं... अभब्बो चक्खुस्मिं वयानुपस्सी विहरितुं... अभब्बो चक्खुस्मिं विरागानुपस्सी विहरितुं... अभब्बो चक्खुस्मिं निरोधानुपस्सी विहरितुं... अभब्बो चक्खुस्मिं पटिनिस्सग्गानुपस्सी विहरितुं"॥

९-४८. सोतस्मिं... घानस्मिं... जिव्हाय... कायस्मिं... मनस्मिं ...॥

४९-९६. रूपेसु... सद्देसु... गन्धेसु... रसेसु... फोट्ठब्बेसु... धम्मेसु ...॥

९७-१४४. चक्खुविञ्ञाणे... सोतविञ्ञाणे... घानविञ्ञाणे... जिव्हाविञ्ञाणे... कायविञ्ञाणे... मनोविञ्ञाणे॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. प्रथम महानामसूत्र, २. द्वितीय महानामसूत्र, ३. नन्दियसूत्र, ४. सुभूतिसूत्र, ५. मैत्रीसूत्र, ६. अष्टकनागरसूत्र, ७. गोपालसूत्र, ८. प्रथम समाधिसूत्र, ९. द्वितीय समाधिसूत्र, १०. तृतीय समाधिसूत्र एवं ११. चतुर्थ समाधिसूत्र॥

३. श्रामण्यवर्ग

१-८. "भिक्षुओ! इन एकादश धर्मों (अङ्गों) से युक्त कोई गोपाल गोगण की रक्षा करने में समर्थ नहीं हो सकता। किन एकादश धर्मों से? ...पूर्ववत्...।

[पूर्वपठित गोपालसूत्र के समान विस्तार कर लें।]

"इसी प्रकार, भिक्षुओ! एकादश धर्मों से युक्त भिक्षु भी चक्षु में अनित्यानुपश्यना नहीं कर पाता, ...पूर्ववत्... चक्षु में दुःखानुपश्यना नहीं कर पाता...चक्षु में अनात्मानुपश्यना नहीं कर पाता... क्षयानुपश्यना... व्ययानुपश्यना... विरागानुपश्यना... निरोधानुपश्यना... प्रतिनिसर्गानुपश्यना नहीं कर पाता।"

९-४८. श्रोत्र में... घ्राण में...जिह्वा में... काया में... मन में॥

४९-९६. रूपों में... शब्दों में... गन्धों में... रसों में... स्प्रष्टव्यों में... धर्मों में...॥

१४५-१९२. चक्खुसम्फस्से... सोतसम्फस्से... घानसम्फस्से... जिव्हासम्फस्से ...कायसम्फस्से... मनोसम्फस्से ... ॥

[B.357] १९३-२४०. चक्खुसम्फस्सजाय वेदनाय... सोतसम्फस्सजाय वेदनाय... घानसम्फस्सजाय वेदनाय... जिव्हासम्फस्सजाय वेदनाय... कायसम्फस्सजाय वेदनाय... मनोसम्फस्सजाय वेदनाय ... ॥

२४१-२८८. रूपसञ्ञाय... सद्दसञ्ञाय... गन्धसञ्ञाय... रससञ्ञाय... [R.360] फोट्ठब्बसञ्ञाय... धम्मसञ्ञाय ॥

२८९-३३६. रूपसञ्चेतनाय... सद्दसञ्चेतनाय... गन्धसञ्चेतनाय... रससञ्चेतनाय... फोट्ठब्बसञ्चेतनाय... धम्मसञ्चेतनाय ... ॥

[N.399] ३३७-३८४. रूपतण्हाय... सद्दतण्हाय... गन्धतण्हाय... रसतण्हाय... फोट्ठब्बतण्हाय... धम्मतण्हाय... ॥

३८५-४३२. रूपवितक्के... सद्दवितक्के... गन्धवितक्के... रसवितक्के... फोट्ठब्बवितक्के... धम्मवितक्के... ॥

४३३-४८०. रूपविचारे... सद्दविचारे... गन्धविचारे... रसविचारे... फोट्ठब्बविचारे... धम्मविचारे अनिच्चानुपस्सी विहरितुं... दुक्खानुपस्सी विहरितुं... अनत्तानुपस्सी विहरितं... खयानुपस्सी विहरितुं... वयानुपस्सी विहरितुं... विरागानुपस्सी विहरितुं... निरोधानुपस्सी विहरितुं... पटिनिस्सग्गानुपस्सी विहरितुं ...पे०... ॥ ●

९७-१४४. चक्षुर्विज्ञान में...श्रोत्रविज्ञान में...घ्राणविज्ञान में...जिह्वाविज्ञान में...कायविज्ञान में... मनोविज्ञान में ॥

१४५-१९२. चक्षुःसंस्पर्श में...श्रोत्रसंस्पर्श में...घ्राणसंस्पर्श में...जिह्वासंस्पर्श में...। कायसंस्पर्श में...मनःसंस्पर्श में... ॥

१९३-२४०. चक्षुःसंस्पर्शज वेदना में...श्रोत्रसंस्पर्शज वेदना में...घ्राणसंस्पर्शज वेदना में...जिह्वासंस्पर्शज वेदना में...कायसंस्पर्शजवेदना में...मनःसंस्पर्शजवेदना में... ॥

२४१-२८८. रूपसंज्ञा में...शब्दसंज्ञा में..., गन्धसंज्ञा में....रससंज्ञा में...स्प्रष्टव्यसंज्ञा में...धर्मसंज्ञा में... ॥

२८९-३३६. रूपसञ्चेतना में...शब्दसञ्चेतना में...गन्धसञ्चेतना में...रससञ्चेतना में... स्प्रष्टव्यसञ्चेतना में...धर्मसञ्चेतना में... ॥

२३७-३८४. रूपतृष्णा में...शब्दतृष्णा में...गन्धतृष्णा में...रसतृष्णा में...स्प्रष्टव्यतृष्णा में...धर्मतृष्णा में... ॥

३८५-४३२. रूपवितर्क में...शब्दवितर्क में...गन्धवितर्क में...रसवितर्क में...स्प्रष्टव्यवितर्क में... धर्मवितर्क में... ॥

४३३-४८०. रूपविचार में...शब्दविचार में....गन्धविचार में...रसविचार में...स्प्रष्टव्यविचार

४. रागपेय्यालं

१. ''रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय एकादस धम्मा भावेतब्बा। कतमे एकादस? पठमं झानं, दुतियं झानं, ततियं झानं, चतुत्थं झानं, मेत्ताचेतोविमुत्ति, करुणाचेतोविमुत्ति, मुदिताचेतोविमुत्ति, उपेक्खाचेतोविमुत्ति, आकासानञ्चायतनं, विञ्ञाणञ्चायतनं, आकिञ्चञ्ञायतनं—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे एकादस धम्मा भावेतब्बा'' ति॥

२-१०. ''रागस्स, भिक्खवे, परिञ्ञाय... परिक्खयाय... पहानाय... खयाय... वयाय... विरागाय... निरोधाय... चागाय... पटिनिस्सग्गाय... इमे एकादस धम्मा भावेतब्बा'' ति।

११-१७०. ''दोसस्स ...पे०... मोहस्स... कोधस्स... [B.558, R.361] उपनाहस्स... मक्खस्स... पळासस्स... इस्साय... मच्छरियस्स... मायाय... साठेय्यस्स... धम्मस्स... सारम्भस्स... मानस्स... अतिमानस्स... मदस्स... पमादस्स अभिञ्ञाय ...पे०... परिञ्ञाय... परिक्खयाय... पहानाय... खयाय... वयाय... विरागाय... निरोधाय... चागाय... पटिनिस्सग्गाय ...पे०... इमे एकादस धम्मा भावेतब्बा'' ति॥

इदमवोच भगवा। अत्तमना ते भिक्खू भगवतो भासितं अभिनन्दुं ति॥ ●

रागपेय्यालं निट्ठितं॥

में... धर्मविचार में अनित्यानुपश्यी नहीं हो पाता....दुःखानुपश्यी... अनात्मानुपश्यी... क्षयानुपश्यी... व्ययानुपश्यी... विरागानुपश्यी... निरोधानुपश्यी... प्रतिनिसर्गानुपश्यी नहीं हो पाता ...पूर्ववत्... ॥●

४. रागपेय्याल

१. ''भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये एकादश धर्मों की भावना करनी चाहिये। किन एकादश धर्मों की? १. प्रथम ध्यान, २. द्वितीय ध्यान, ३. तृतीय ध्यान, ४. चतुर्थ ध्यान, ५. मैत्रीचेतोविमुक्ति, ६. करुणाचेतोविमुक्ति, ७. मुदिताचेताविमुक्ति, ८. उपेक्षाचेतोविमुक्ति, ९. आकाशानन्त्यायतन, १० विज्ञानानन्त्यायतन एवं ११. आकिञ्चन्यायतन—भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये इन एकादश धर्मों की भावना करनी चाहिये॥''

२-१०. ''राग के परिज्ञान के लिये...परिक्षय के लिये...प्रहाण के लिये...क्षय के लिये...व्यय के लिये...विराग के लिये...निरोध के लिये...त्याग के लिये...प्रतिनिसर्ग के लिये...इन एकादश धर्मों की भावना करनी चाहिये॥''

११-१७०. ''द्वेष के...मोह के...क्रोध के...उपनाह (शत्रुता=वैर) के...म्रक्ष के...प्रदाश के... ईर्ष्या के...मात्सर्य के...माया के...शाठ्य के...स्तम्भ के...सारम्भ (उत्तेजना) के...मान के...अतिमान के... मद के...प्रमाद के अभिज्ञान के लिये ...पूर्ववत्... परिज्ञा के लिये...परिक्षय के लिये...प्रहाण के लिये...क्षय के लिये...व्यय के लिये...विराग के लिये...निरोध के लिये...त्याग के लिये...प्रतिनिसर्ग के लिये ...पूर्ववत्... इन एकादश धर्मों की भावना करनी चाहिये।''

[N.400] नव सुत्तसहस्सानि, भिय्यो पञ्चसतानि च।
सत्तपञ्ञास सुत्तन्ता, अङ्गुत्तरसमायुता ति॥

एकादसकनिपातो निट्ठितो॥

॥ अङ्गुत्तरनिकायपालि निट्ठिता॥

भगवान् ने यह देशना की। इससे सन्तुष्ट उन भिक्षुओं ने भगवान् के भाषण का अभिनन्दन किया॥

रागपेय्याल सम्पन्न॥

अङ्गोत्तरनिकाय में पठित समस्त सूत्रों की संख्या—९५५७ (नौ हजार पाँच सौ सत्तावन) है॥

एकादश निपात सम्पन्न॥

॥ अङ्गोत्तरनिकायपालि सम्पूर्ण॥

दसबलसेलप्पभवा, निब्बाणमहासमुद्दपरियन्ता।
अट्ठङ्गमग्गसलिला, जिनवचननदी चिरं वहतु॥

[‘बुद्ध’ रूप महान् पर्वत से निःसृत, ‘निर्वाण’ रूप महासमुद्र तक जाने वाली, ‘अष्टाङ्गिक मार्ग’ रूप जल से पूर्ण यह ‘बुद्धवाणी’ रूप गङ्गा सदा बहती रहे।]

बौद्धभारती, वाराणसी

द्वारा प्रकाशित एवं

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

द्वारा अनूदित एवं सम्पादित
ग्रन्थों की सूची

तत्त्वसंग्रह (कमलशीलकृत पञ्जिका सहित) (भाग १-२)
प्रमाणवार्त्तिक (मनोरथनन्दिवृत्ति सहित)
परमार्थचिन्तन (सिद्धार्थमहाभिनिष्क्रमण नाटक)-
अभिधर्मकोष [भाष्य एवं स्फुटार्था व्याख्या सहित](भाग १-२)
वादन्याय, सम्बन्धपरीक्षा (शान्तरक्षितकृत एवं प्रभाचन्द्रकृत व्याख्या सहित) (प्रेस में)
पालि व्याकरण (बालावतार) [हिन्दी अनुवाद सहित] अजिल्द एवं सजिल्द
न्यायदर्शन (वात्स्यायनभाष्य एवं हिन्दी अनुवाद सहित)
विसुद्धिमग्ग (हिन्दी अनुवाद सहित) [भाग १-२]
मिलिन्दपञ्हपालि (हिन्दी अनुवाद सहित)
अभिधानप्पदीपिका (पालि शब्दकोष) एवं
एकक्खरकोश (पालि शब्दकोष)
पालिसद्दनिदस्सिका (पालि-संस्कृत-हिन्दीकोष)-
मध्यमकशास्त्र (प्रसन्नपदाटीका हिन्दीभावानुवाद सहित)
पातिमोक्खसुत्त (भिक्खुपातिमोक्ख)
न्यायबिन्दुप्रकरण (विनीतदेव एवं धर्मोत्तर टीका) [हिन्दी अनुवांद सहित]
महायानसूत्रालङ्कार (हिन्दीभावानुवाद सहित)
तत्त्वोपप्लवसिंह (चार्वाकदर्शन) (श्री जयराशिभट्ट कृत)
बोधिचर्यावतार (पञ्जिका व्याख्या, हिन्दी अनुवाद सहित)
मज्झिमनिकायपालि (हिन्दी अनुवाद सहित)(१ से ५ भाग) [३ जिल्दों में]
अपोहवाद (बौद्ध दार्शनिकों का एक प्रमुख वाद)
सच्चसंगहो (भगवान् बुद्ध के उपदेशों का संग्रह)
आगमशास्त्र (हिन्दी अनुवाद, माण्डूक्य कारिकाएँ, भट्टाचार्य की टीका)
विग्रहव्यावर्तनी (हिन्दी-अंग्रेजी अनुवाद सहित)
सिद्धार्थचरितकाव्य (संस्कृत-हिन्दी व्याख्या सहित)
मध्यान्तविभागशास्त्र (हिन्दी अनुवाद सहित)
सुहल्लेख (आर्य नागार्जुन का पत्र)(हिन्दी अनुवाद सहित)
दीघनिकायपालि (हिन्दी अनुवाद सहित)(१ से ३ भाग)

महावग्गपालि (हिन्दी अनुवाद सहित)

न्यायभाष्य (प्रसन्नपदा व्याख्या सहित)

षड्दर्शनसूत्रसंग्रह (छह दर्शनों के समस्त सूत्रों का संग्रह)

संयुत्तनिकायपालि (हिन्दी अनुवाद सहित)(१ से ४ भाग)

धम्मपदपालि (संस्कृत-हिन्दी अनुवाद सहित)

अङ्गुत्तरनिकायपालि (हिन्दी अनुवाद सहित)(१ से ४ भाग)

गुह्यसमाजतन्त्र (वज्रयान बौद्धतन्त्र)

※ **दीपवंस** (मूल पालि एवं हिन्दी अनुवाद सहित)

※ **महावंस** (मूल पालि एवं हिन्दी अनुवाद सहित)

※ **धम्मपद अट्ठकथा** (मूल पालि एवं हिन्दी अनुवाद सहित)[१ से ४ भाग]

✿

प्राप्तिस्थान : **बौद्धभारती**, पोस्ट बॉक्स नं : १०४९, वाराणसी-२२१ ००१.
फोन / फैक्स : (०५४२) २१००९४
E-mail : bauddhabhrti@satyam.net.in

बौद्धभारती

बौद्धभारतीग्रन्थमाला में प्रकाशित

पालि-साहित्य के महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ

1. **पालिव्याकरण** (बालावतार) [हिन्दी अनुवाद सहित] 150/-
2. **मिलिन्दपञ्हपालि** (हिन्दी अनुवाद, विस्तृत भूमिका सहित) 350/-
3. **अभिधानप्पदीपिका** (हिन्दी-संस्कृत अर्थ सहित) पालिशब्दकोष प्रेस में
4. **विसुद्धिमग्ग** (हिन्दी अनुवाद एवं विस्तृत भूमिका) 1-2 भाग 400/-
5. **पातिमोक्खसुत्त** (भिक्षु प्रातिमोक्ष) (हिन्दी अनुवाद सहित) 30/-
6. **मज्झिमनिकायपालि** (सुत्तपिटक) (हिन्दी अनुवाद सहित) (सम्पूर्ण, 3 जिल्दों में) 1-5 भाग 1100/-
7. **दीघनिकायपालि** (सुत्तपिटक) (हिन्दी अनुवाद सहित) सम्पूर्ण, 1-3 भाग 650/-
8. **महावग्गपालि** (विनयपिटक) (हिन्दी अनुवाद सहित) सम्पूर्ण 500/-
9. **संयुत्तनिकायपालि** (सुत्तपिटक) (हिन्दी अनुवाद सहित) सम्पूर्ण, 1-4 भाग 2000/-
10. **धम्मपदपालि** (सुत्तपिटक) (हिन्दी-संस्कृत अनुवाद, विस्तृत भूमिका एवं अनेक परिशिष्ट) सम्पूर्ण 200/-
11. **अङ्गुत्तरनिकायपालि** (सुत्तपिटक) (हिन्दी अनुवाद, बृहद् भूमिका सहित) सम्पूर्ण, 1-4 भाग 2250/-

बौद्धभारती

पो. बाक्स नं. 1049, वाराणसी-221 001

E-mail : bauddhabhrti@satyam.net.in